विषयसूची

सूरसागर

दशम स्कंद

(क्रमशः)

ग्रीष्मलीला

राग टोड़ी ॥२३६८॥ **सखियों के साथ यमुनाविहार**

सुनि कहियौ अब न्हान चलौंगी।
तब अपनौ मन भायौ कीजै, जब मोकौ हरिसंग मिलौंगी॥
यहै बात मन मैं गहि राखी, मैं जानति कबहूँ बिसरौंगी।
बड़ी बार मोकौ भई आऐ, न्हान चलति की बहुरि लरौंगी॥
गहि गहि बाहँ सबनि करि ठाढ़ी, कैसेहूँ घर तैं निसरौंगी।
'सूर' राधिका कहति सखिनि सौं, बहुरि आइ घरकाज करौंगी॥
॥ १७५० ॥

राग मारू ॥ २३६९ ॥

राधिकासंग मिलि गोपनारी।
चलीं हिलि मिलि सबै, रहसि बिहँसति तरुनि, परसपर कौतूहल करत भारी॥
मध्य ब्रजनागरी, रूप-रस-आगरी, घोषउज्जागरी, स्यामप्यारी।
बदनद्युति इंदु री, दसन-छबि-कुंद री, काम-तनु-दुंद री करनहारी॥
अंग अंग सुभग अति, चलति गजराजगति, कृष्न सौ एक मति जमुन जाही।
कोउ निकसि जाति, कोउ ठठकि ठाढी रहति, कोउ कहति संग मिलि चलहु नाही॥
जुवति आनँद भरी, भई जुरिकै खरी, नई झरहरी सुठि बैस थोरी।
'सूर' प्रभु सुनि स्रवन, तहाँ कीन्हों गवन, तरुनि मन रवन सब ब्रजकिसोरी॥
॥ १७५१ ॥

राग नट नारायन ॥ २३७० ॥

गई ब्रजनारि जमुनातीर।
संग राजति कुँवरि राधा, भई शोभाभीर॥
देखि लहरि तरंग हरषी, रहत नहिं मन धीर।
स्नान कौ वै भईं आतुर, सुभग जल गंभीर॥
कोउ गई जल पैठि तरुनी, और ठाढी तीर।
तिनहि लई बुलाइ राधा, करति सुख-तनु-कीर॥
एक एकहिं धरति भुज भरि, एक छिरकति नीर।
'सूर' राधा हसति ठाढ़ी, भीजि छबि तनु-चीर॥ १७५२ ॥

राग जैतश्री ॥ २३७१ ॥

राधा जल विहरत सखियनि सँग।
ग्रीवप्रजंत नीर मैं ठाढी, छिरकति जल अपनैं अपनैं रँग ॥
मुख भरि नीर परसपर डारतिं, सोभा अतिहिं अनूप बढी तब।
मनहु चंदगन सुधा गडूषनि, डारति हैं आनंद भरे सब ॥
आइं निकसि जानु कटि लौं सब, अंजुरिनि तैं लै लै जल डारतिं।
मानहु 'सूर' कनकबल्ली जुरि, अमृतबुंद पवनमिस झारतिं ॥
॥ १७५३ ॥

राग नट ॥ २३७२ ॥

जमुनाजल विहरति ब्रजनारी।
तट ठाढ़े देखत नँदनंदन, मधुर मुरलि कर धारी ॥
मोर मुकुट, स्रवननि मनि कुंडल, जलजमाल उर भ्राजत।
सुंदर सुभग स्याम तन नव घन, बिच बगपाँति बिराजत ॥
उर बनमाल सुमन बहु भाँतिनि, सेत, लाल, सित, पीत।
मनहु सुरसरी तट बैठे सुक, बरन बरन तजि भीत ॥
पीतांबर कटि तट छुद्रावलि, बाजति परम रसाल।
'सूरदास' मनु कनकभूमि ढिग, बोलत रुचिर मराल ॥ १७५४ ॥

राग विहागरौ ॥ २३७३ ॥

नटवरबेष काछे स्याम।
पदकमल नख-इंदु-सोभा, ध्यान पूरनकाम ॥
जानु जंघ सुघटनि करभा, नहीं रंभातूल।
पीत पट काछनी मानहु, जलजकेसर झूल ॥
कनक छुद्रावली पंगति, नाभि कटि कै भीर।
मनहु हंस-रसाल-पंगति, रहे हैं ह्लदतीर ॥
झलक रोमावलीसोभा, ग्रीव मोतिनि हार।
मनहु गंगाबीच जमुना, चली मिलि वय धार ॥
बाहु दंड बिसाल तट दोउ, अंगचंदन रैनु।
तीरतरु बनमाल की छवि, ब्रजजुवति सुखदैनु ॥
चिबुक पर अधरनि, दसनदुति बिंब बीजु लजाइ।
नासिका सुक, नैन खंजन, कहत कवि सरमाइ ॥
स्रवन कुंडल कोटि-रवि-छवि, भृकुटि कामकोदंड।
'सूर' प्रभु हैं नीप कै तर, सीस धरे सिखंड ॥ १७५५ ॥

राग पूरबी ॥ २३७४ ॥

उपमा धीरज तज्यौ निरखि छवि।
कोटि मदन अपनौ बल हार्‌यौ, कुंडल किरनि छप्यौ रवि ॥
खंजन, कंज, मधुप, बिधु, तड़ि, घन दीन रहत कहुँवै दबि।
हरिपटतर दै हमहि लजावत, सकुच नाहिं खोटे कवि ॥
अरुन अधर, दसननि दुति निरखत, विद्रुम सिखर लजाने।
सूर स्याम आछौ बपु काछे, पटतर मेटि बिराने ॥१७५६॥

राग गौरी ॥ २३७५ ॥

उपमा हरितनु देखि लजानी।
कोउ जल मैं, कोउ बननि रही दुरि, कोउ कोउ गगन समानी ॥
मुख निरखत ससि गयौ अंबर कौ, तडित दसनछबि हेरि।
मीन कमल, कर, चरन, नयन डर, जल मैं कियौ बसेरि ॥
भुजा देखि अहिराज लजाने, बिवरनि पैठे धाइ।
कटि निरखत केहरि डर मान्यौ, बन बन रहे दुराइ ॥
गारी देहिं कबिनि कै बरनत, श्रीअँग पटतर देत।
'सूरदास' हमकौं सरमावत, नाउँ हमारौ लेत ॥१७५७॥

राग कान्हरौ ॥ २३७६ ॥

बनी मोतिनि की माल मनोहर।
सोभित स्याम-सुभग-उर-ऊपर, मनु गिरि तैं सुरसरी धँसी धर ॥
तट भुज दंड, भौंर भृगु रेखा, चंदनचित्र तरंग जु सुंदर।
मनि की किरन मीन, कुंडलछबि मकर, मिलन आए त्यागे सर ॥
जग्यपवीत बिचित्र 'सूर' सुनि, मध्य-धार-धारा जु बनी बर।
संख चक्र गदा पद्म पानि मनु कमल कूल हंसनि कीन्हे घर ॥१७५८॥

राग नट नारायन ॥ २३७७ ॥

राधा निरखि भूली अंग।
नंद-नंदन-रूप पर, गति मति भई तनु पंग ॥
इत सकुच अति सखिनि की, उत होति अपनी हानि।
ज्ञान करि अनुमान कीन्हौ, अबहि लैहैं जानि ॥
चतुर सखियनि परखि लीन्ही, समुझि भई गँवारि।
सबै मिलि इत न्हान लागी, ताहि दियौ बिसारि ॥
नागरी मुख स्याम निरखति, कबहु सखियनि हेरि।
'सूर' राधा लखति नाही. इन दई अवढेरि ॥ १७५९ ॥

राग कान्हरौ ॥ २३७८ ॥

जब जान्यौ ये न्हाति सबै।
हरि-प्रति-अंग-अंग की सोभा, अँखियनि मग ह्वै लेउँ अबै ॥
कमलकोस मैं आनि दुराऊँ, बहुरि दरस धौं होइ कबै।
यह मन करि जुवतिनि तन हेरति, इनसौ करियै गोप तबै ॥
कबहुँक कहै तजौ मरजादा, सकुचति है पुनि नही फबै।
'सूरदास' तबही मन मानै, सगहि रैहौ जाइ जबै ॥ १७६० ॥

राग गौरी ॥ २३७९ ॥

चितै राधा रति-नागर-ओर।
नैन-बदन-छबि यौं उपचति, मनु ससि अनुराग चकोर ॥
सारस रस अचवन कौं मानौ, फिरत मधुप जुग जोर।
पान करत कहुँ तृप्ति न मानत, पलकनि देत अकोर ॥
जियौ मनोरथ मानि सफल ज्यौं, रजनि गए पुनि भोर।
'सूर' परस्पर प्रीति निरंतर, दंपति हैं चितचोर ॥ १७६१ ॥

राग कल्यान ॥२३८० ॥

यह कछु भोरेंहि भाइ भई।
निरखत वदन नंदनदन कौ, और हुती मु गई ॥
हिरदै जामि प्रेम अकुर जड, सप्त पताल गई।
सो द्रुम पसरि सिखर अंबर लौं, सब जग छाइ लई ॥
वचन सुपत्र, मुकुल अवलोकनि, गुननिधि पुहुप भई।
परसि परम अनुराग सींचि मुख, लगी प्रमोद जई ॥
मन के सकल मनोरथ पूरन, सौंभरि भार नई।
सूरदास फल गिरिधर नागर, मिलि रसरीति ठई ॥ १७६२ ॥

राग रामकली ॥ २३८१ ॥

चितवनि रोकैं हूँ न रही।
स्याम सुदर-सिंधु-सनमुख, सरिता उमँगि वही ॥
प्रेम-सलिल-प्रवाह भँवरनि, मिति न कबहुँ लही।
लोभ-लहर-कटाच्छ, घूँघट-पट-करार ढही ॥
थके पल पथ, नाव धीरज परति नहिन गही।
मिली 'सूर' सुभाव स्यामहिं, फेरिहू न चही ॥ १७६३ ॥

राग जैतश्री ॥ २३८२ ॥

देखौ री राधा उत अँटकी।
चितै रही इक टक हरि ही तन, ना जानियै कौन अँग लटकी ॥
काल्हि हमैं कैसैं निदरति ही, मेरैं चित वह टरति न खटकी।
न्हात रही कैसैं सँग मिलिकै, चित चचल विरहा की चटकी ॥
बात कहत तुलसी मुख मेलै, नैनसैन दै दै मुँह मटकी।
'सूर' स्याम कैं रूप भुलानी, राधा कैं सुधि रही न घट की ॥१७६४॥

राग विलावल ॥ २३८३ ॥

चितै रही राधा हरि कौं मुख।
भृकुटि विकट, विसाल नैन लखि, मनहिं भयौ रतिपति दुख ॥
उतहिं स्याम इकटक प्यारीछवि, अंग अंग अवलोकत।
रीझि रहे इत हरि, उत राधा, अरसपरस दोउ नोकत ॥
सखिनि कह्यौ वृषभानुसुता सौं, देखे कुँवर कन्हाई।
'सूर' स्याम येई हैं, व्रज मैं जिनकी होति वड़ाई ॥१७६५॥

राग रामकली ॥ २३८४ ॥

हमहिं कह्यौ हो स्याम दिखावहु।
देखहु दरस नैन भरि नीकैं, पुनि पुनि दरस न पावहु ॥
वहुत लालसा करति रही तुम, वै तुम कारन आए।
पूरी साध मिली तुम उनकौं, यातैं हमहिं भुलाए ॥
नीकैं सगुन आजु ह्याँ आई, भयौ तुम्हारौ काज।
सुनहु 'सूर' हमकौ कछु दैहौ, तुमहिं मिले व्रजराज ॥१७६६।

राग रामकली ॥ २३८५ ॥

राधा कह्यौ आजु इन जानी।
वार-वार मैं हरितन चितई, तवही ते मुसुकानी ॥

काल्हि कही मै इनसौ वैसैं, अब तौ बात न ठानी।
यह चतुरई परी मोही पर, मन मन अतिहिं लजानी॥
मेरी बात गई इन आगै, अबहिं करति बिनु पानी।
'सूरदास' प्रभु कहा कहौ मै, अब तुम हाथ बिकानी॥ १७६७ ॥

राग बिलावल ॥ २३८६ ॥

मैं अतिही यह पोच करी।
ये मेरी मरजादा लैहै, ता दिन बहुत लरी॥
सुंदर स्याम कमल-दल-लोचन, तुम अब होहु सहाइ।
ऐसी बात कहौ इन आगै, मेरी पति जनि जाइ॥
तब इक बुद्धि रची मनही मन, अति आनंद हुलास।
'सूर' स्याम राधा-आधा-तन, कीन्हौ बुद्धिप्रकास॥ १७६८ ॥

राग गूजरी ॥ २३८७ ॥

राधा चलहु भवनहि जाहिं।
कबहि की हम जमुन आईं, कहहिं अरु पछिताहिं॥
कियौ दरसन स्याम कौ तुम, चलौगी की नाहिं।
बहुरि मिलिहौ चीन्हि राखहु, कहत, सब मुसुकाहिं॥
हम चली घर तुमहुँ आवहु, सोच भयौ मन माहिं।
'सूर' राधा सहित गोपी, चलीं ब्रज समुहाहि॥ १७६९ ॥

राग बिलावल ॥ २३८८ ॥

कहि राधा हरि कैसे हैं।
तेरैं मन भाए की नाहीं, की सुंदर की, नैसे है॥
की पुनि हमहि दुराव करौगी, की कैहौ वे जैसे है।
की हम तुमसों कहति रही ज्यौं साँच कहौ की तैसे है॥
नटवरबेप काछनी काछे, अगनि रति-पति-सै से है।
'सूर' स्याम तुम नीकै देखे, हम जानत हरि ऐसे है॥ १७७० ॥

राग बिलावल ॥ २३८९ ॥

राधा मन मैं यहै बिचारति।
ये सब मेरै ख्याल परी है, अबही बातनि लै निरुवारति॥
मोहूँ तै ये चतुर कहावति, ये मनही मन मोकौं नारति।
ऐसे वचन कहौगी इन सौ, चतुराई इनकौ मै भारति॥
जाकै नंद-नँदन सिर समरथ, बार-बार तन-मन-धन वारति।
सूर स्याम कै गर्ब राधिका, सूधै काहूँ तन न निहारति॥ १७७१ ॥

राग सूही ॥ २३९० ॥

राधा हरि कै गर्व गहीली।
मंद मंद गति मत मतंग ज्यौं, अंग अंग सुख पुंज-भरीली॥
पग द्वै चलति ठठकि रहै ठाढ़ी, मौन धरे हरि कै रस गीली।
धरनी नख चरननि कुरवारति, सौतिनि-भाग-सुहाग-डहीली॥
नैकु नहीं पिय तै कहुँ बिछुरति, तातै नाहिन कामदहीली।
'सूर' सखी बूझै यह कैही, आजु भई यह भेट पहीली॥ १७७२ ॥

राग आसावरी ॥ २३९१ ॥

क्यौं राधा फिरि मौन धरयौ री।
जैसै तउआ अंध भँवावर, तैसैहिं तै यह मौन करयौ री ॥
बात नही मुख तै कहि आवति, की तेरौ मन स्याम हरयौ री।
जानि नहीं पहिचानि न कबहूँ, देखत ही चित तिनहिं हरयौ री ॥
साँची बात कहौ तुम हमसौं, कहा सोच सो जियहिं परयौ री।
'सूर' स्यामतन देखि रही कह, लोचन इकटक तै न टरयौ री ॥ १७७३ ॥

राग धनाश्री ॥ २३९२ ॥

कहा कहति तुम बात अलेखे।
मोसौं कहति स्याम तुम देखे, तुम नीकै करि देखे ॥
कैसौ बरन, वेष है कैसौ, कैसौ अग त्रिभग।
मो आगै वह भेद कहौ धौं, कैसौ है तनु-रग ॥
मै देखे की नाही देखे, तुम तो बार हजार।
'सूर' स्याम है अखियनि देखति, जाकौ वार न पार ॥ १७७४ ॥

राग कान्हरौ ॥ २३९३ ॥

हम देखे इहि भाँति कन्हाई।
सीस सिखंड अलक बिथुरे मुख, कुंडल स्रवन सुहाई ॥
कुटिल भृकुटि, लोचन अनियारे, सुभग नासिका राजत।
अरुन अधर दसनावलि की दुति, दाडिमकन तन लाजत ॥
ग्रीव हार मुकुता, बनमाला, बाहुदंड गजसुंड।
रोमावली सुभग बगपंगति, जाति नाभिह्रद कुंड ॥
कटि पट पीत, मेखला कंचन, सुभग जंघ, जुग जानु।
चरनकमल नख चंद नही सम, ऐसे 'सूर' सुजानु ॥ १७७५ ॥

राग बिलावल ॥ २३९४ ॥

बने बिसाल कमल दल नैन।
ताहू मैं अति चारु बिलोकनि, गूढ भाव सूचति सखि सैन ॥
बदन-सरोज-निकट कुंचित कच, मनहुँ मधुप आए मधु लैन।
तिलक तरुन ससि कहत कछुक हँसि, बोलत मधुर मनोहर बैन ॥
मदन नृपति की देस महा मद, बुधि बल बसि न सकत उर चैन।
'सूरदास' प्रभु दूत दिनहिं दिन, पठवत चरित चुनौती दैन ॥ १७७६ ॥

राग देवगंधार ॥ २३९५ ॥

मोहन बदन बिलोकत अखियनि उपजत है अनुराग।
तरनि ताप तलफत चकोर गति पिवत पियूष पराग ॥
लोचन नलिन नए राजत रति पूरन मधुकर भाग।
मानहु अलि आनंद मिले मकरंद पिवत रितु फाग ॥
भँवरि भाग भृकुटी पर कुमकुम चंदन बिंदु बिभाग।
चातक सोम सक्रधनु घन मैं निरखत मन बैराग ॥
कुंचित केस मयूर चंद्रिका मंडल सुमन सुपाग।
मानहु मदन धनुष सर लीन्हे बरषत है बन बाग ॥

अधर बिंब तै अरुन मनोहर मोहन मुरली-राग।
मानहु सुधापयोधि घेरि घन ब्रज पर बरषन लाग ॥
कुंडल मकर कपोलनि झलकत स्रम सीकर के दाग।
मानहु मीन मकर मिलि क्रीडत सोभित सरदतडाग ॥
नासा तिल प्रसून पदवी पर चिवुक चारु चित खाग।
दाडिम दसन मद गति मुमुकनि मोहत सुर नर नाग ॥
श्री गुपाल रस रूप भरो है, 'सूर' सनेह सुहाग।
ऐसो सोभा सिधु विलोकति इन अँखियनि के भाग ॥ १७७७ ॥

राग धनाश्री ॥ २३९६ ॥

हम देखे इहि भाँति गुपाल।
छद कपट कछु जानति नाहिन, मूधी है ब्रज की सब बाल ॥
झूठी को साँची नहि भाषै, साँची झूठी कबहु न होइ।
साँची की झूठी करि डारै, यह सोई जानै धनि जोइ ॥
इतननि मै दुराव कछु नाही, नाही भेदाभेद विचार।
'सूरदास' जे झूठी मिलवै, तिनकी गति जानै करतार ॥ १७७८ ॥

राग आसावरी ॥ २३९७ ॥

झूठी बात न होति भलाई।
चोर जुवार मग बरु कहियै, झूठे कौ नहि कोउ पतियाई ॥
साँची को झूठी करि डारै, पचनि मे मरजादा जाई।
बोलि उठी इक सखी बीचही, तै कह जानै लाज बड़ाई ॥
यामैं कछु नफा है उनकौ, जातै मन ऐसीयै भाई।
'सूर' सुभाउ परचौ ऐसोई, को जानै री बुद्धि पराई ॥ १७७९ ॥

राग धनाश्री ॥ २३९८ ॥

ऐसे हम देखे नँदनंदन।
स्याम सुभग तनु, पीत वसन, जनु, नीलजलद पर तड़ित सुछंदन ॥
मंद मंद मुरली-रव-गरजनि, सुधा दृष्टि बरषति आनंदन।
विविध-सुमन-वनमाला उर, मनु सुरपतिधनुष नये ही छंदन ॥
मुक्तावली मनहुँ बगपगति, सुभग अग चरचित छवि चदन।
'सूरदास' प्रभु नीप-तरोवर-तर, ठाढ़ सुर-नर-मुनि वदन ॥ १७८० ॥

राग देवगधार ॥ २३९९ ॥

तुमकौ कैसे स्याम लगे।
न्हात रही जल मै सब तरुनी, तब तुव नैना कहाँ खगे ॥
अंग अंग अवलोकन कीन्हौ, कौन अग पर रहे पगे।
भूल्यौ न्हान, ज्ञान तनु भूल्यौ, नदसुवन उत तै न डगे ॥
जानति नही कहूँ नहि देखे मिलि, गई ऐसै मनहूँ सगे।
'सूर' स्याम ऐसे तुम देखे, मै जाननि दुख दूरि भगे ॥ १७८१ ॥

राग गौरी ॥ २४०० ॥

तुम देखे मैं नही पत्यानी।
मै जानति मेरी गति सबही, यहै साँच अपनै मन आनी ॥

जो तुम अंग अंग अवलोक्यौ, धन्य धन्य मुख अस्तुति गानी ।
मै तौ एक अंग अवलोकति, दोऊ नैन गए भरि पानी ।।
कुंडलझलक कपोलनि आभा, मैं तो इतनेहि माँझ विकानी ।
इकटक रही नैन दोउ रूँधे, 'सूर' स्याम कौ नहिं पहिचानी ।। १७८२ ।।

राग नट ।। २४०१ ।।

अँखियाँ जानि अजान भई ।
एक अग अवलोकत हरि कौ, और न कहूँ गई ।।
यौ भूली ज्यौ चोर भरै घर, निधि नहि जाइ लई ।
फेरत पलटत भोर भयौ, कछु लई न छाँड़ि दई ।।
पहिलै रति करिकै आरति करि, ताही रँग रँगई ।
'सूर' सु कत हठि दोप लगावति, पल पल पीर नई ।। १७८३ ।।

राग सारग ।। २४०२ ।।

विधना चूक परी मै जानी ।
आजु गुविदहिं देखि देखि हौ, यहै समुझि पछितानी ।।
रचि पचि, सोचि, सँवारि सकल अँग, चतुर चतुरई ठानी ।
दृष्टि न दई रोम-रोमनि-प्रति, इतनिहिं कला नसानी ।।
कहा करौ, अति सुख, द्वै नैना, उमँगि चलत पल पानी ।
'सूर' सुमेरु समाइ कहाँ लौ, वुधि वासनी पुरानी ।। १७८४ ।।

राग धनाश्री ।। २४०३ ।।

द्वै लोचन तुम्हरै द्वै मेरै ।
तुम प्रति अग विलोकन कीन्हौ, मैं भई मगन एक अँग हेरै ।।
अपनौ अपनौ भाग्य सखी री, तुम तनमय मै कहूँ न नेरै ।
जो वुनियै सोई पुनि लुनियै, और नही त्रिभुवन-भटभेरै ।।
स्यामरूप अवगाह सिंधु तै, पार होत चढि डोगनि केरै ।
'सूरदास' तैसै ये लोचन, कृपाजहाज विना क्यौ पेरै ।। १७८५ ।।

राग आसावरी ।। २४०४ ।।

पावै कौन लिखै विनु भाल ।
काहू कौ पट रुम नहिं भावत, कोउ भोजन कहँ फिरत विहाल ।।
तुम देख्यौ हरि-अग-माधुरी, मै नहि देख्यौ कौन गुपाल ।
जैसै रक तनक धन पावै, ताही मैं वह होत निहाल ।।
तुमहिं मोहिं इतनौ अतर है, धन्य धन्य व्रज की तुम वाल ।
'सूरदास' प्रभु की तुम सगिनि, तुमहि मिले यह दरस गुपाल ।। १७८६ ।।

राग कल्यान ।। २४०५ ।।

सुनहु सखी राधा की वानी ।
हमकौ धन्य कहति आपुन धिक यह निर्मल अति जानी ।।
आपुन रक भई हरि धन कौ, हमहिं कहति धनवत ।
यह पूरी, हम निपट अधूरी, हम असंत, यह संत ।।
धिक धिक हम, धिक वुद्धि हमारी, धन्य राधिका नारि ।
'सूर' स्याम कौ इहिं पहिचान्यौ, हम भईं अंत गँवारि ।। १७८७ ।।

राग गौड़ मलार ॥ २४०६ ॥

धन्य राधा धन्य बुद्धि हेरी ।
धन्य माता धन्य पिता, धनि भगति तुव, धिग हमहिं नहीं सम दासि तेरी ॥
धन्य तुव ज्ञान, धनि ध्यान, धनि परमान, नहीं जानति आन ब्रह्मरूपी ।
धन्य अनुराग, धनि भाग, धनि सौभाग्य धन्य जोवन रूप अति अनूपी ॥
हम विमुख, तुम सुमुखि कृष्न प्यारी, सदा निगम मुख सहस अस्तुति बखानैं ।
'सूर' स्यामास्याम नवल जोरी अटल, तुमहिं बिनु कान्ह धीरज न आनैं ॥
॥ १७८८ ॥

राग बिहागरौ ॥ २४०७ ॥

जैसे कहे स्याम हैं तैसे ।
कृष्न-रूप अवलोकन कौं सखि, नैन होहिं जौ ऐसे ॥
तैं जु कहति लोचन भरि आए, स्याम कियौ तहँ ठौर ।
पुन्य थली तिहिं जानि बिराजे, बात नहीं कछु और ॥
तेरै नैन बास हरि कीन्हौ, राधा आधा जानि ।
'सूर' स्याम नटवरबपु काछे, निकसे इहिं मग आनि ॥ १७८९ ॥

राग कान्हरौ ॥ २४०८ ॥

अचानक आइ गए तहँ स्याम ।
कृष्नकथा सब कहति परस्पर, राधासंग मिली ब्रजबाम ॥
मुरली अधर धरे नटवरबपु, कटि कछनी पर वारौं काम ।
सुभग मोर चंद्रिका सीस पर, आइ गए पूरन सुखधाम ॥
तरु-तमाल-तर तरुन कन्हाई, दूरि करन जुवतिनि तनुताम ।
'सूर' स्याम बंसीधुनि पूरत, राधा राधा लै लै नाम ॥ १७९० ॥

राग बिलावल ॥ २४०९ ॥

थकित भईं राधा ब्रजनारि ।
जो मन ध्यान करति तेइ अंतरजामी ये बनवारि ॥
रतनजटित पग सुभग पाँवरी, नूपुर परम रसाल ।
मानहुँ चरन-कमल-दल-लोभी, बैठे बाल मराल ॥
जुगल जंघ मरकत-मनि-रंभा, बिपरित भाँति सँवारे ।
कटि काछनी कनक छुद्रावलि, पहिरे नंददुलारे ॥
हृदय बिसाल माल मोतिनि बिच, कौस्तुभ मनि अति भ्राजत ।
मानहु नभ निर्मल तारागन, ता मधि चंद्र बिराजत ॥
दुहुँ कर मुरली अधरनि धारे, मोहन राग बजावत ।
चमकत दसन, मटकि नासापुट, लटकि नैन मुख गावत ॥
कुंडल झलक कपोलनि मानहुँ, मीन सुधारस क्रीडत ।
भ्रकुटी धनुष, नैनखंजन मनु, उडत नहीं मन व्रीडत ॥
देखि रूप ब्रजनारि थकित भईं, कीट मुकुट सिर सोहत ।
ऐसे 'सूर' स्याम सोभानिधि, गोपीजनमन मोहत ॥ १७९१ ॥

राग कल्यान ॥ २४१० ॥

जब तैं निरखे चारु कपोल ।
तब तैं लोक-लाज-सुधि बिसरी, दै राखे मन ओल ॥

निकसे आइ अचानक तिरछे, पहिरे पीत निचोल।
रतनजटित सिर मुकुट विराजत, मनिमय कुंडल लोल ॥
कहा करौ वारिज मुख ऊपर, विथके पटपद जोल।
'सूर' स्याम करि ये उतकरषा, वस कीन्हो विनु मोल ॥ १७६२ ॥

राग पूरवी ॥ २४११ ॥

चारु चितौनि सु चचल डोल।
कहि न जाति मन मै अति भावति, कछु जु एक उपजति गति गोल ॥
मुरली मधुर वजावत गावत, चलत करज अरु कुडल लोल।
सव छवि मिलि प्रतिविव विराजत, इंद्रनील-मनि-मुकुर कपोल ॥
कुंचित केस सुगंध सुवसि मनु, उडि आए मधुपति के टोल।
'सूर' सुभ्रुव, नासिका मनोहर, अनुमानत अनुराग अमोल ॥ १७९३ ॥

राग विभास ॥ २४१२ ॥

गोकुल गाउ रसीले पिय कौ। मोहन देखि मिटत दुख जिय कौ ॥
मोर-मुकुट कुडल वनमाला। या छवि सौ ठाढे नद-लाला ॥
कर मुरली पीतावर सोहै। चितवत ही सवकौ मन मोहै ॥
मन मोहियौ इन साँवरै हो, चकित सो डोलत फिरो।
और कछु न सुहाइ तन मन, वैठि उठि गिरि गिरि परो ॥
मदनवान सुमार लागे, जाइ परि न कछू कही।
और कछू उपाइ नाही, स्याम वैद वुलावही ॥
मैं तो तजी लाज गुरुजन की। अव मोहि सुधि न परै या तन की ॥
लोग कहै यह भई है वौरी। सुत पति छाँडि फिरति वन दौरी ॥
छाँडि सुरति सम्हार जिय की, कृष्नछवि हिरदै वसी।
मदन मोहन देखि धाई, वैसियै कुजनि धँसी ॥
कुजधाम किसोर ठाढे, केसरि खौरि वनाइ कै।
चद्रिका पर प्रान वारौ, वलि गई या भाइ कै ॥
इन नैननि वाँध्यौ प्रन भारी। निरखत रहै सदा गिरिधारी ॥
काहू को कह्यौ मन नहि आन्यौ। कमलनैन नैननि पहिचान्यौ ॥
निरखि नदकिसोर सखि री, कोटि किरनिप्रकासु री।
कालिदी कै तीर ठाढे, स्रवन सुनियत वाँसुरी ॥
वाँसुरी वस किये सुरनर, सुनत पातक नासु री।
'सूर' के प्रभु यहै विनती, सदा चरननि वासु री ॥ १७९४ ॥

राग गौरी ॥ २४१३ ॥

नदनँदन वृदावनचद।
जदुकुल नभ, तिथि द्वितिय देवकी, प्रगटे त्रिभुवन वद ॥
जठर कुहू तै विहरि वारुनी दिसि मधुपुरी सुछद।
वसुद्यौ सभु सीस धरि आन्यौ, गोकुल-आनँद-कद ॥
व्रज प्राची, राकातिथि जसुमति, सरस सरद रितु नद।
उडगन सकल सखा सकर्पन, तम-कुल-दनुज निकद ॥
गोपी-जन-चकोर-चित वाँध्यौ, निमि निवारि पल द्वंद।
'सूर' सुदेस कला पोडस, परिपूरन परमानद ॥ १७९५ ॥

राग गौरी ॥ २४१४ ॥

देखि सखी हरि कौ मुख चारु।
मनहुँ छिडाइ लियौ नँदनंदन, वा ससि कौ सतसारु ॥
रूप तिलक, कच कुटिल, किरनिछवि कुंडल-कल-बिस्तारु।
पत्रावलि परिवेष, सुमन सगि मिल्यौ मनहुँ उड दारु ॥
नैन चकोर विहंग 'सूर' मुनि, पिवत न पावत पारु।
अब अबर ऐसौ लागत है, जैसौ जूठौ थारु ॥ १७९६ ॥

राग कान्हरौ ॥ २४१५ ॥

देखि री हरि के चंचल तारे।
कमल मीन कौ कहँ एती छवि, खजन हू न जात अनुहारे ॥
वह लखि निमिष नवत मुरली पर, कर मुख नैन भए इकचारे।
मनु जलरुह तजि वैर मिलत बिधु, करत नाद वाहन चुचुकारे ॥
उपमा एक अनूपम उपजति, कुंचित अलक मनोहर भारे।
बिहरत बिझुकि जानि रथ तै मृग, जनु ससकि ससि लगर सारे ॥
हरि-प्रति-अंग विलोकि मानि रुचि, ब्रजबनितानि प्रानधन वारे।
'सूर' स्याममुख निरखि मगन भई, यह विचारि चित अनत न टारे ॥ १७९७ ॥

राग सोरठ ॥ २४१६ ॥

हरिमुख निरखत नैन भुलाने।
ये मधुकर रुचि-पंकज-लोभी, ताही तै न उडाने ॥
कुंडल मकर कपोलनि कै ढिग, जनु रवि नैनि बिहाने।
भ्रुव सुदर, नैननि गति निरखत, खंजन मीन लजाने ॥
अरुन अधर, दुज कोटि बज्रदुति, ससि घन रूप समाने।
कुंचित अलक, सिलीमुख मिलि मनु लै मकरद उड़ाने ॥
तिलक ललाट, कंठ मुकुतावलि, भूषन मनिमय साने।
'सूर' स्याम रसनिधि नागर के क्यौं गुन जात बखाने ॥ १७९८ ॥

राग केदारौ ॥ २४१७ ॥

देखि री नवल नंदकिसोर।
लकुट सौं लपटाइ ठाढ़े, जुवति जन-मन-चोर ॥
चारु लोचन, हँसि बिलोकनि, देखि कै चित भोर।
मोहिनी मोहन लगावत, लटकि मुकुटझकोर ॥
स्रवन धुनि सुनि नाद पोहत, करत हिरदै पोर।
'सूर' अंग त्रिभंग सुंदर, छवि निरखि तृन तोर ॥ १७९९ ॥

राग कान्हरौ ॥ २४१८ ॥

ब्रजवनिता देखति नँदनदन।
नव-घन-नील-बरन, ता ऊपर खौरि कियौ तनु चंदन ॥
कनकबरन तन पीत पिछौरी, उर भ्राजति वनमाल।
निर्मल-गगन-स्वेत-बादर पर, मनौ दामिनी जाल ॥
मुक्तामाल बिपुल बगपगति, उडत एक भई जोति।
सूर स्याम-छवि निरखत जुवती, हरष परस्पर होति ॥ १८०० ॥

राग सूही ॥ २४१९ ॥

प्रात समय आवत हरि राजत।
रतनजटित कुंडल सखि स्रवननि, तिनकी किरनि सूरतनु लाजत ॥
सातैं रासि मेलि द्वादस मैं, कटि मेखला अलंकृत साजत।
पृथ्वी-मथी-पिता सो लै कर, मुख समीप मुरलीधुनि बाजत ॥
जलधितात तिहिं नाम कंठ के, तिनके पंख मुकुट सिर भ्राजत।
'सूरदास' कहै सुनहु गूढ़ हरि, भगतनि भजत, अभगतनि भाजत ॥ १८०१ ॥

राग नट ॥ २४२० ॥

हरितन मोहिनी माई।
अंग अंग अनंग सत सत, बरनि नहिं जाई ॥
कोउ निरखि सिर मुकुट की छवि, सुरति बिसराई।
कोउ निरखि बिथुरी अलक मुख, अधिक सुख छाई ॥
कोउ निरखि रही भालचंदन, एक चित लाई।
कोउ निरखि बिथकी भ्रकुटि पर, नैन ठहराई ॥
कोउ निरखि रही चारु लोचन, निमिष भरमाई।
'सूर' प्रभु की निरखि सोभा, कहत नहिं आई ॥ १८०२ ॥

राग गुंड मलार ॥ २४२१ ॥

स्याम सुखरासि, रसरासि भारी।
रूप की रासि, गुनरासि, जोबनरासि, थकित भईं निरखि नव तरुन नारी ॥
सील की रासि, जसरासि, आनँदरासि, नील-नव-जलद-छवि बरनकारी।
दया की रासि, बिद्यारासि, बलरासि, निर्दयारासि दनु-कुल-प्रहारी ॥
चतुरईरासि, छलरासि, कलरासि, हरि भजै जिहिं हेत तिहिं देन हारी।
'सूर' प्रभु स्याम सुखधाम पूरन काम, बसन-कटि-पीत मुख मुरलीधारी ॥
॥ १८०३ ॥

राग बिहागरौ ॥ २४२२ ॥

सुंदर बोलत आवत बैन।
ना जानौं तिहिं समय सखी री, सब तन स्रवन कि नैन ॥
रोम रोम मैं सब्द सुरनि की, नख सिख लौं चख ऐन।
इते मान बानी चंचलता, सुनी न समुझी मैन ॥
तब तकि जकि ह्वै रही चित्र सी, पल न लगत चित चैन।
सुनहु 'सूर' यह साँच कि संभ्रम, सुपन किधौं दिन रैन ॥ १८०४ ॥

राग मलार ॥ २४२३ ॥

नैना (माई) भूलै अनत न जात।
देखि सखी सोभा जु बनी है, मोहन कै मुसुकात ॥
दाड़िम-दसन-निकट नासासुक, चोंच चलाइ न खात।
मनु रतिनाथ हाथ भ्रकुटीधनु, तिहिं अवलोकि डरात ॥
बदन-प्रभा-मय चंचल लोचन, आनँद उर न समात।
मानहुँ भौंह-जुवा-रथ जोते, ससि नचवत मृग मात ॥
कुंचित केस, अधर धुनि मुरली, 'सूरदास' सुरसात।
मनहुँ कमल पहँ कोकिल कूजत, अलिगन उपर उड़ात ॥ १८०५ ॥

राग कान्हरौ ॥ २४२४ ॥

स्याम-कमल-पद-नख की सोभा ।
जे नखचंद्र इंद्र सिर परसे, सिव विरंचि मन लोभा ॥
जे नखचंद्र सनक मुनि ध्यावत, नहिं पावत भरमाहीं ।
ते नखचंद्र प्रगट व्रजजुवती, निरखि निरखि हरषाहीं ॥
जे नखचंद्र फनिंदहृदय तैं, एकौ निमिष न टारत ।
जे नखचंद्र महा मुनि नारद, पलक न कहूँ बिसारत ॥
जे नख-चंद्र-भजन खल नासत, रमा हृदय जे परसति ।
'सूर' स्याम-नख-चंद्र-विमल-छवि, गोपीजन मिलि दरसति ॥ १८०६ ॥

राग आसावरी ॥ २४२५ ॥

स्यामहृदय जलसुत की माला, अतिहिं अनूपम छाजै (री) ।
मनहुँ बलाकपाँति नवघन पर, यह उपमा कछु भ्राजै (री) ॥
पीत, हरित, सित, अरुन मालवन, राजति हृदय बिसाल (री) ।
मानहुँ इंद्रधनुष नभमंडल, प्रगट भयौ तिहिं काल (री) ॥
भृगु-पद-चिह्न उरस्थल प्रगटे, कौस्तुभ मनि ढिग दरसत (री) ।
बैठे मानौ षट विधु इक सँग, अर्द्ध निसा मिलि हरषत (री) ॥
भुजा बिसाल स्याम सुंदर की, चंदनखौरि चढ़ाए (री) ।
'सूर' सुभग अँग अँग की शोभा, व्रजललना ललचाए (री) ॥ १८०७ ॥

राग मलार ॥ २४२६ ॥

निरखि सखि सुंदरता की सींवा ।
अधर अनूप मुरलिका राजति, लटकि रहति अध ग्रीवा ॥
मंद मंद सुर पूरत मोहन, राग मलार बजावत ।
कबहुँक रीझि मुरलि पर गिरिधर, आपुहि रस भरि गावत ॥
हँसत लसति दसनावलि-पंगति, व्रज-वनिता-मन-मोहत ।
मरकतमनि-पुट-बिच मुकुताहल, बंदनभरे मनु सोहत ॥
मुख बिकसत सोभा इक आवति, मनु राजीवप्रकास ।
'सूर' अरुन-आगमन देखि कै, प्रफुलित भए हुलास ॥ १८०८ ॥

राग टोड़ी ॥ २४२७ ॥

गोपी जन हरिवदन निहारनि ।
कुंचित अलक बिथुरि रहे भ्रुव पर, ता पर तन मन वारनि ॥
वदनसुधा सरसीरुहलोचन भृकुटी दोउ रखवारी ।
मनौ मधुप मधुपानहिं आवत, देखि डरत जिय भारी ॥
इक इक अलक लटकि लोचन पर, यह उपमा इक आवति ।
मनहुँ पन्नगिनि उतरि गगन तैं, दल पर फन परसावति ॥
मुरली अधर धरे, कल पूरत, मंद मंद सुर गावत ।
'सूर' स्याम नागरि नारिनि के, चंचल चितहिं चुरावत ॥ १८०९ ॥

राग बिलावल ॥ २४२८ ॥

देखि सखी यह सुंदरताई ।
चपल-नैन-बिच चारु नासिका, इकटक दृष्टि रही तहँ लाई ॥

करति विचार परस्पर जुवती, उपमा आनतिं बुद्धि बनाई।
मानहुँ खजनविच सुक बैठ्यौ, यह कहि कै मन जाति लजाई ॥
कछु इक तिलप्रसून की आभा, मनमधुकर तहँ रह्यौ लुभाई।
'सूर' स्यामनासिका मनोहर, यह सुदरता उन कहँ पाई ॥ १८१० ॥

राग रामकली ॥ २४२९ ॥

मनोहर है नैननि की भाँति।
मानहुँ दूरि करत बल अपनै, सरदकमल की काँति ॥
इदीवर राजीव कुसेसय, जीते सब गुन जाति।
अति आनद सुप्रौढा तातैं, बिकसत दिन अरु राति ॥
खजरीट मृग मीन विचारत, उपमा कौ अकुलाति।
चचल चारु चपल अवलोकनि, चितहि न एक समाति ॥
जब कहुँ परत निमेषहु अतर, जुग समान पल जाति।
'सूरदास' वह रसिक राधिका, निमि पर अति अनखाति ॥ १८११ ॥

राग रामकली ॥ २४३० ॥

आजु सखि देखे स्याम नए (री)।
निकसे आनि अचानक अबही, इत फिरि फिरि चितए (री) ॥
मैं तब तै पछिताति यहै, तन नैन न बहुत भए (री)।
जौ बिधना इतनी जानत है, कत दृग दोइ दए (री) ॥
सब दे लेउँ लाख लोचन कहुँ, जो कोउ करत नए (री)।
हरि प्रति अग विलोकन का मै प्रन करिकै पठए (री) ॥
अपनै चोप बहुत कहँ पइयै, ये हरिसग गए (री)।
थके चरन सुनि 'सूर' मनौ गुन मदन बान बिधए (री) ॥ १८१२ ॥

राग गूजरी ॥ २४३१ ॥

देखि री हरि के चचल नैन।
खजन-मीन-मृगज-चपलाई, नहिं पटतर इक सैन ॥
राजिवदल इदीवर सतदल, कमल कुसेसय जाति।
निसि मुद्रित प्रातहि वै बिकसित, ये बिकसित दिनराति ॥
अरुन, स्वेत, सित झलक पलक प्रति, को बरनै उपमाइ।
मनु सरसुति, गगा, जमुना मिलि, आगम कीन्हौ आइ ॥
अवलोकनि जलधार तेज अति, तहाँ न मन ठहराइ।
'सूर' स्याम-लोचन-अपार-छवि, उपमा सुनि सरमाइ ॥ १८१३ ॥

राग सोरठ ॥ २४३२ ॥

देखि सखी मोहन मन चोरत।
नैन-कटाच्छ-बिलोकनि मधुरी, सुभग भृकुटि बिबि मोरत ॥
चदनखौरि ललाट स्याम कैं, निरखत अति सुखदाई।
मनौ एक सँग गगजमुन नभ, तिरछी धार बहाई ॥
मलयज भाल भ्रकुटिरेखा की, कवि उपमा इक पाई।
मानहुँ अर्द्धचद्रतट अहिनी, सुधा चुरावन आई ॥
भ्रकुटी चारु निरखि ब्रजसुदरि, यह मन करति बिचार।
'सूरदास' प्रभु सोभासागर, कोउ न पावत पार ॥ १८१४ ॥

राग रामकली ॥ २४३३ ॥

देखि री देखि कुंडल लोल।
चारु स्रवननि ग्रहन कीन्हें, झलक ललित कपोल ॥
वदनमंडल सुधा सरवर, निरखि मन भयो भोर।
मकर क्रीडत गुप्त परगट, रूपजल झकझोर ॥
नैन मीन, भुवंगिनी भ्रुव, नासिका थल बीच।
सरस मृग-मद-तिलक-सोभा, लसति है लगि कीच ॥
मुखविकास सरोज मानहु, जुवतिलोचन भृंग।
बिथुरि अलकैं परी मानहुँ, प्रेम-लहरि-तरंग ॥
स्याम-तनु-छबि अमृतपूरन, रच्यौ कामतड़ाग।
'सूर' प्रभु की निरखि सोभा, ब्रजतरुनि बड़भाग ॥ १८१५ ॥

राग धनाश्री ॥ २४३४ ॥

हरिमुख निरखति नागरि नारि।
कमल नैन के कमलवदन पर, वारिज वारिज वारि ॥
सुमति सुंदरी सरस-पिया-रस-लंपट माँडी आरि।
हरि जुहारि जु करत बसीठी, प्रथमहिं प्रथम चिन्हारि ॥
राखति ओट कोटि जतननि करि, झाँपति अंचल झारि।
खंजन मनहुँ उड़न कौं आतुर, सकत न पंख पसारि ॥
देखि सरूप स्याम सुंदर कौ, रही न पलक सम्हारि।
देखहु सूरज अधिक 'सूर' तन, अजहुँ न मानी हारि ॥ १८१६ ॥

राग धनाश्री ॥ २४३५ ॥

हरिमुख किधौं मोहिनी माई।
बोलत बचन मंत्र सौ लागत, गति मति जाति भुलाई ॥
कुटिल अलक राजति भ्रुव ऊपर, जहाँ तहाँ बगराई।
स्याम फाँसि मन करष्यौ हमरौ, अब समुझी चतुराई ॥
कुंडल ललित कपोलनि झलकत, इनकी गति मैं पाई।
'सूर' स्याम जुवती-मन-मोहन, ये सँग करत सहाई ॥ १८१७ ॥

राग नट ॥ २४३६ ॥

निरखत रूप नागरि नारि।
मुकुट पर मन अटकि लटक्यौ, जात नहिं निरुवारि ॥
स्याम तन की झलक, आभा चंद्रिका झलकाइ।
बार बार बिलोकि थकि रही, नैन नहिं ठहराइ ॥
स्याम मरकत-मनि-महानग सिखा निरतत मोर।
देखि जलधर हरष उर मैं, नहीं आनँद थोर ॥
कोउ कहति सुरचाप मानौ, गगन भयौ प्रकास।
थकित ब्रजललना जहाँ तहँ, हरष कबहुँ उदास ॥
निरखि जो जिहि अंग राँची, तही रही भुलाइ।
सूर-प्रभु-गुन-रासि-सोभा, रसिक जन सुखदाइ ॥ १८१८ ॥

राग विहागरौ ॥ २४३७ ॥

देखि री देखि सोभा-रासि।
काम-पटतर कहा दीजै, रमा जिनकी दासि ॥

मुकुट सीस सिखंड सोहै, निरखि रही ब्रज-नारि ।
कोटि सुर-कोदंड-आभा, झिरकि डारें वारि ॥
केस कुंचित बिथुरि भ्रुव पर, बीच सोभा भाल ।
मनौ चंदहि अवल जान्यौ, राहु घेरयौ जाल ॥
चारु कुंडल सुभग स्रवननि, को सकै उपमाइ ।
कोटि कोटि कला तरनि छवि, देखि तनु भरमाइ ॥
सुभग मुख पर चारु लोचन, नासिका इहि भाँति ।
मनौ खंजन बीच सुक मिलि, बैठे हैं इक पाँति ॥
सुभग नासा तर अधरछवि रंग धरे अरुनाइ ।
मनौ बिंब निहारि सुक, भ्रुव धनुप देखि डराइ ॥
हँसत दसननि चमकताई, बज्र-कन रची पाँति ।
दामिनी, दारिम नही सरि, कियौ मन अति भ्रांति ॥
चिबुक वर चित वित चुरावत, नवल नंदकिसोर ।
'सूर' प्रभु की निरखि सोभा भई तरुनी भोर ॥ १८१६ ॥

राग सोरठ ॥ २४३८ ॥

तन मन नारि डारतिं वारि ।
स्याम सोभासिंधु जान्यौ, अंग अंग निहारि ॥
पैरि रही मन ज्ञान करि करि लहति नाहिंन तीर ।
स्यामतन जल-रासि-पूरन, महा गुन गंभीर ॥
पीतपटफहरानि मानौ, लहरि उठति अपार ।
निरखि छवि थकि तीर बैठी, कहूँ वार न पार ॥
चलत अंग त्रिभंग करिकै, भौंह भाव चलाइ ।
मनौ बिच्च बिच भँवर डोलत, चित परत भरमाइ ॥
स्रवन कुंडल मकर मानौ, नैन मीन बिसाल ।
सलिल झलकनि-रूप-आभा, देखि री नँदलाल ॥
बाहु दंड भुजंग मानौ, जलधि-मध्य-बिहार ।
मुक्तमाला मनौ सुरसरि, ह्वै चली द्वै धार ॥
अंग अँग भूषन बिराजत, कनकमुकुट प्रभास ।
उदधि मथि मनु प्रगट कीन्ही श्री, सुधा परगास ॥
चकित भई तिय निरखि सोभा देहगति बिसराइ ।
'सूर' प्रभु छबिरासि नागर, जानि जाननिराइ ॥ १८२० ॥

राग सारंग ॥ २४३९ ॥

बैठी कहा मदन मोहन कौ, सुंदर वदन बिलोकि ।
जा कारन घूँघट पट अवलौ, अँखियाँ राखी रोकि ॥
फबि रही मोरचंद्रिका माथै, छवि की उठति तरंग ।
मनहुँ अमर-पति-धनुप बिराजत, नव जलधर कै संग ॥
रुचिर चारु कमनीय भाल पर, कुंकुमतिलक दिये ।
मानहुँ अखिल भुवन की, सोभा राजति उदय किये ॥
मनिमय जटित लोल कुंडल की, आभा झलकति गंड ।
मनहुँ कमल ऊपर दिनकर की, पसरीं किरनि प्रचंड ॥

भ्रकुटी कुटिल निकट नैननि कै, चपल होति इहि भाँति ।
मनहुँ तामरस कै सँग खेलत बाल भृंग की पाँति ॥
कोमल स्याम कुटिल अलकावलि, ललित कपोलनि तीर ।
मनहुँ सुभग इंदीवर ऊपर, मधुपनि की अति भीर ॥
अरुन-अधर-नासिका-निकाई, वदत परस्पर होड़ ।
'सूर' सुमनसा भई पाँगुरी, निरखि डगमगे गोड़ ॥ १८२१ ॥

राग नट नारायन ॥ २४४० ॥

सजनी निरखि हरि कौ रूप ।
मनसि वचसि बिचारि देखौ, अंग अंग अनूप ॥
कुटिल केस सुदेस अलिगन, वदन सरदसरोज ।
मकर-कुंडल-किरनि की छवि, दुरत फिरत मनोज ॥
अरुन अधर कपोल नासा, सुभग ईषद हास ।
दसन की दुति तडित, नव ससि, भ्रकुटि मदनविलास ॥
अंग अंग अनंग जीते, रुचिर उर बनमाल ।
'सूर' सोभा हृदय पूरन, देत सुख गोपाल ॥ १८२२ ॥

राग नट ॥ २४४१ ॥

नैननि ध्यान नंदकुमार ।
सीस मुकुट सिखंड भ्राजत, नहीं उपमापार ॥
कुटिल केस सुदेस राजत, मनहुँ मधुकरजाल ।
रुचिर केसरितिलक दीन्हे, परम सोभा भाल ॥
भृकुटि वंकट, चारु लोचन, रही जुवती देखि ।
मनौ खंजन चापडर डरि, उड़त नहिं तिहिं पेखि ॥
मकरकुंडल गंड झलमल, निरखि लज्जित काम ।
नासिकाछवि कीर लज्जित, कविनि वरनत नाम ॥
अधर विद्रुम, दसन दाड़िम, चिबुक है चितचोर ।
'सूर' प्रभुमुख चंद पूरन, नारिनैन चकोर ॥ १८२३ ॥

राग केदारौ ॥ २४४२ ॥

प्यारे नंदलाल हो । मोही तेरी चाल हो ॥
मोर मुकुट डोलनि, मुख मुरली कल मंद ।
मनु तमाल सिखा सिखी, नाचत आनंद ॥
मकराकृत कुण्डलछवि, राजत सु कपोल ।
ईषद मुसुकानि वीच, मंद मंद बोल ॥
चितवनि चख अतिहिं चपल, राजति भ्रुवभंग ।
धनुप वान डारि होत, वस कोटि अनंग ॥
वदनसुधा कौ सरवर, कुटिल अलक पारि ।
व्रजजुवती मृगिनी रची, तिनकौं फँदवारि ॥
पीताम्बरछवि निरखत, दामिनिहु लजाइ ।
चमकि चमकि सावन घन मैं, सो दुरि जाइ ॥
चरनकमल अवलंबित, राजति वनमाल ।
प्रफुलित ह्वै लता मनौ चढ़ी तरु तमाल ॥

'सूरदास' वा छवि पर, वारौं तन प्रान।
गिरिधर पिय देखि देखि, कह करौं अनुमान ॥ १८२४ ॥

राग सारंग ॥ २४४३ ॥

देखि सखी सुंदर घन स्याम।
सुंदर मुकुट, कुटिल कच सुंदर, सुंदर भाल तिलक छविधाम ॥
सुंदर भ्रुव, सुंदर अति लोचन, सुंदर अवलोकनि बिस्राम।
अति सुंदर कुण्डल स्रवननि वर, सुंदर झलकनि रीझत काम ॥
सुंदर हास नासिका सुंदर, सुंदर मुरली अधर उपाम।
सुंदर दसन, चिबुक अति सुंदर, सुंदर हृदय विराजति दाम ॥
सुंदर भुजा, पीतपट सुंदर, सुंदर कनक-मेखला-झाम।
सुंदर जंघ, जानु पद सुंदर, 'सूर' उधारन सुंदर नाम ॥ १८२५ ॥

राग धनाश्री ॥ २४४४ ॥

नंद-नँदन-मुख देखौ नीके।
अंग-अंग-प्रति कोटि माधुरी, निरखि होत सुख जी कै ॥
सुभग स्रवन कुण्डल की आभा, झलक कपोलनि पी कै।
दह-दह-अमृत मकर क्रीड़त मनु, यह उपमा कछु ही कै ॥
और अंग की सुधि नहि जानै, करै कहति है लीकै।
'सूरदास' प्रभु नटवर काछे, रहत है रतिपति वीकै ॥ १८२६ ॥

राग रामकली ॥ २४४५ ॥

देखि री देखि कुंडलझलक।
नैन द्वै छवि धरौ कैसै, लगति तापर पलक।
लसति चारु कपोल दुहुँ बिच, सचल लोचन चारु।
मुख-सुधा-सर मीन मानो, मकर संग विहारु ॥
कुटिल अलक सुभाइ हरि कै, भ्रुवनि पर रहे आइ।
मनौ मनमथ फाँदे फंदनि, मीन बिवि तट ल्याइ ॥
चपल लोचन, चपल कुंडल, चपल भ्रकुटी बंक।
सखा व्याकुल देखि अपने, लेत वनन न मंक ॥
'सूर' प्रभु नँदसुवन की छवि, वरनि कापै जाइ।
निरखि गोपी निकर विथकी, विधिहिं अति रिस पाइ ॥ १८२७ ॥

राग जैतश्री ॥ २४४६ ॥

विधना अतिहीं पोच कियौ री।
कहा विगार कियौ हम वाकौ, व्रज काहैं अवतार दियौ री ॥
यह तौ मन अपनै जानत हो, एते पर क्यो निठुर हियौ री।
रोम रोम लोचन इकटक करि, जुवतिनि प्रति काहैं न टियौ री ॥
अखियाँ द्वै, छवि की चमकनि वह, हम तौ चाहति सवै पियौ री।
सुनि सजनी यह करनी अपनी अपनै ही सिर मानि लियौ री ॥
हम तौ पाप कियौ, भुगतै को, पुन्य प्रगट क्यौ जात छियौ री।
'सूरदास' प्रभु रूप-सुधा-निधि, पुट थोरौ, विधि नही त्रियौ री ॥ १८२८ ॥

राग धनाश्री ॥ २४४७ ॥

सुनि री सखी वचन इक मोसौ ।
रोम-रोम प्रति लोचन चाहति, द्वै सावित है तोसौ ॥
मैं विधना सौं कहौं कछू नहि, नित प्रति निमि कौं कोसौं ।
येऊ जो नीकैं दोउ रहते, निरखत रहती हौं सौं ॥
इक इक अंग-अंग-छवि धरती, मै जो कहती तोसौं ।
'सूर' कहा तू कहति अयानी, काम परयौ मुनि ज्यौं सौं ॥ १८२६ ॥

राग कान्हरौ ॥ २४४८ ॥

कह काहू कौं दोप लगावै ।
निमि सौ कहा कहति, कह विधि सौ, कह नैननि पछितावै ॥
स्याम हितू कैसैं करि जानति, औरौ निठुर कहावै ।
छिन मैं और और अँग सोभा, जोवैं देखि न पावै ॥
जवही इकटक करि अवलोकति, तवही वे भलकावैं ।
'सूर' स्याम के चरित लखै को, येई वैर वढ़ावे ॥ १८३० ॥

राग नट ॥ २४४९ ॥

लहनी करम के पाछै ।
दियौ अपनौ लहै सोई, मिलै नहि वाँछै ॥
प्रगट ही है स्याम ठाढे, कौन अँग किहि रूप ।
लह्यौ काहूँ, कहौ मोसौ, स्याम है ठग भूप ॥
प्रेमजाचक धनी हरि सौ, नैन पुट कह लेइ ।
अमृतसिंधु हिलोरि पूरन, कृपा दरस न देइ ॥
पाइये सोई सखी री, लिख्यौ जोई भाल ।
'सूर' उत कछु कमी नाही, छविसमुद गोपाल ॥ १८३१ ॥

राग सूही विलावल ॥ २४५० ॥

देखि सखी अधरनि की लाली ।
मनि मरकत तै सुभग कलेवर; ऐसे है वनमाली ॥
मनौ प्रात की घटा साँवरी, तापर अरुन प्रकास ।
ज्यौं दामिनि विच चमकि रहत है, फहरत पीत सुवास ॥
कीधौं तरुन तमाल वेलि चढ़ि, जुग फल विंव सुपाके ।
नासा कीर आइ मनु वैठयो, लेत वनत नहि ताके ॥
हँसत दसन इक सोभा उपजति, उपमा जदपि लजाइ ।
मनो नीलमनि-पुट मुकुता-गन, वन्दन भरि वगराइ ॥
किधौं वज्र-कन, लाल नगनि खँचि, तापर विद्रुम पाँति ।
किधौं सुभग वंधूक-कुसुम-तर, झलकत जल-कन-काँति ॥
किधौं अरुन अवुज विच वैठी, सुंदरताई जाइ ।
'सूर' अरुन अधरनि की सोभा, वरनत वरनि न जाइ ॥ १८३२ ॥

राग धनाश्री ॥ २४५१ ॥

स्याम रूप देखन की साध, भरी माई ।
कितनौ पचिहारी रही, देत नहिं दिखाई ॥

मन तौ निरखत सु अँग, मै रही भुलाई।
मोसौं यह भेद कह्यौ कैसैं, उहिं पाई ॥
आपुन अँग अंग विध्यौ, मोकौं बिसराई।
बार बार कहत यहै, तू क्यौं नहिं आई ॥
कबहूँ लै जात साथ, बाँह गहि बुलाई।
'सूर' स्याम छबि अगाध, निरखत भरमाई ॥ १८३३ ॥

राग बिलावल ॥ २४५२ ॥

सुनहु सखी मै बूझति तुमकौं, काहूँ हरि कौं देखे है।
कैसौ तन, कैसौ रँग देखियत, कैसी बिधि करि भेषे है ॥
कैसौ मुकुट, कुटिल कच कैसे, सुभग भाल भ्रुव नीके है।
कैसे नैन, नासिका कैसी, स्रवननि कुंडल पी के है ॥
कैसे अधर, दसनदुति कैसी, चिबुक चारु चित चोरत है।
कैसैं निरखि हँसत काहूँ तन, कैसे बदन सकोरत है ॥
कैसौ उर, माला है कैसी, कैसैं भुजा बिराजति है।
कैसे कर, पहुँची है कैसी, कैसी अँगुरियाँ राजति है ॥
कैसी रोमावली स्याम की नाभि चारु कटि सुनियत है।
कैसी कनकमेखला, कैसी कछनी, यह मन गुनियत है ॥
कैसे जघ, जानु कैसे दोउ, कैसे पदनख जानति है।
'सूर' स्याम-अँग-अँग की सोभा, देखी कै अनुमानति है ॥ १८३४ ॥

राग रामकली ॥ २४५३ ॥

ऐसे सुने नंदकुमार।
नख निरखि ससि कोटि वारत, चरन कमल अपार ॥
जानु जघ निहारि करभा, करनि डारत वारि।
काछनी पर प्रान वारत, देखि सोभा भारि ॥
कटि निरखि तनु सिंह वारत, किंकिनी जु मराल।
नाभि पर ह्रद आपु वारत, रोम-अलि अलिमाल ॥
हृदय मुक्तामाल निरखत, वारी अवलि बलाक।
करज कर पर कमल वारत, चलति जहँ तहँ साक ॥
भुजनि पर बर नाग वारत, गए भागि पताल।
ग्रीव की उपमा नही कहुँ, लसति परम रसाल ॥
चिबुक पर चित वारि डारत, अधर अंबुज लाल।
बँधुक, बिद्रुम, बिंब वारत, ते भए बेहाल ॥
बचन सुनि कोकिला वारति, दसन दामिनि काँति।
नासिका पर कीर वारत, चारु लोचन भाँति ॥
कज, खजन, मीन, मृग सावकहु डारत वारि।
भ्रकुटि पर सुरचाप वारत, तरनि कुंडल हारि ॥
अलक पर वारति अँध्यारी, तिलक भाल सुदेस।
'सूर' प्रभु सिर मुकुट धारे, धरे नटवरवेष ॥ १८३५ ॥

राग सारग ॥ २४५४ ॥

ऐसी बिधि नंदलाल, कहत सुने माई।
देखे जौ नैन, रोम रोम, प्रति सुहाई ॥

विधना द्वै नैन रचे, अंग ठानि ठान्यौ।
लोचन नहि वहुत दियौ, जानि कै भुलान्यौ॥
चतुरता प्रवीनता. विधाता का जानी।
अव ऐसे लगत हमहिं, वातैं न अयानी॥
त्रिभुवनपति तरुन कान्ह, नटवरवपु काछे।
हमकौं द्वै नैन दिये, तेऊ नहि आछे॥
ऐसौ विधि कौ विवेक, कहौ कहा वाकौ।
'सूर' कवहुँ पाऊँ जौ, अपनै कर ताकौ॥ १८३६॥

राग नट॥ २४५५॥

मुख पर चंद डारौं वारि।
कुटिल कच पर भौंर वारौं, भौंह पर धनु वारि॥
भाल-केसरि-तिलक छवि पर, मदनसर सत वारि।
मनु चली वहि सुधाधारा निरखि मन द्यौं वारि॥
नैन सुरसति-जमुन-गंगा, उपम डारौं वारि।
मीन खंजन मृगज वारौं, कमल के कुल वारि॥
निरखि कुंडल तरनि वारौं, कूप स्रवननि वारि।
झलक ललित कपोलछवि पर, मुकुट सत सत वारि॥
नसिका पर कीर वारौं, अधर विद्रुम वारि।
दसन पर कन वज्र वारौं, वीज दाड़िम वारि॥
चिवुक पर चितवित्त वारौं, प्रान डारौं वारि।
'सूर' हरि की अंगसोभा, को सकै निरवारि॥ १८३७॥

राग सोरठ॥ २४५६॥

स्याम उर सुधा दह मानौ।
मलय चंदन लेप कीन्हे, वरन यह जानौ॥
मलय तनु मिलि लसति सोभा, महा जल गभीर।
निरखि लोचन भ्रमत पुनि पुनि, धरत नहि मन धीर॥
उरजु भँवरी भँवर मानो नीलमनि की कानि।
भृगुचरन हियचिह्न ये सव, जीवजल वहु भाँति॥
स्याम वाहु विसाल केसरिखौरि विविध वनाइ।
सहज निकसे मगर मानौ, कूल खेलत आइ॥
सुभग रोमावली की छवि, चली दह तैं धार।
'सूर' प्रभु की निरखौं सोभा, जुवति वारवार॥ १८३८॥

राग सोरठी॥ २४५७॥

मनमधुकर पदकमल लुभान्यौ।
चितचकोर चंदनख अटक्यौ, इकटक पलक भुलान्यौ॥
विनहीं कहैं गए उठि मोतैं, जात नहीं मैं जान्यौ।
अव देखौं तनु मैं वै नाहीं, कहा जियहि धौं आन्यौ॥
तव तैं फेरि तक्यौ नहि मो तन, नखचरननि हित मान्यौ।
'सूरदास' वे आपु स्वारथी, परवेदन नहि जान्यौ॥ १८३९॥

राग मारु ॥ २४५८ ॥

स्याम सखि नीकैं देखे नाहिं।
चितवत ही लोचन भरि आए, बार बार पछिताहिं ॥
कैसेहुँ करि इकटक मैं राखति, नैकहिं मैं अकुलाहिं।
निमिष मनौ छवि पर रखवारे, तातैं अतिहिं डराहिं ॥
कहा करैं इनकौ कह दूषन, इन अपनी सी कीन्ही।
'सूर' स्यामछवि पर मन अटक्यौ, उन सब सोभा लीन्ही ॥ १८४० ॥

राग गौरी ॥ २४५९ ॥

मन लुबध्यौ हरिरूप निहारि।
जा दिन स्याम अचानक आये, तब तैं मोहिं बिसारि ॥
इंद्रिनि संग लगाइ गयौ ह्याँ, डेरा निकस्यो भारि।
ऐसे हाल करत गे कोऊ, रही अकेली नारि ॥
फेरि न मेरी उहिं सुधि लीन्ही, आपु करत सुख भारि।
'सूर' स्याम कौं उरहन दैहौं, पठवत काहे न मारि ॥ १८४१ ॥

राग रामकली ॥ २४६० ॥

पुनि पुनि कहति है ब्रजनारि।
धन्य बड़भागिनी राधा, तेरैं बस गिरधारि ॥
धन्य नंदकुमार धनि तुम, धन्य तेरी प्रीति।
धन्य दोउ तुम नवल जोरी, कोक कलानि जीति ॥
हम बिमुख, तुम कृष्नसंगिनि, प्रान इक, द्वै देह।
एक मन, इक बुद्धि, इक चित, दुहुँनि एक सनेह ॥
एक छिनु बिनु तुमहिं देखैं, स्याम धरत न धीर।
मुरलि मैं तुव नाम पुनि पुनि कहत है बलबीर ॥
स्याम मनि तैं परखि लीन्हौ, महा चतुर सुजान।
'सूर' के प्रभु प्रेमही बस, कौन तो सरि आन ॥ १८४२ ॥

राग बिहागरौ ॥ २४६१ ॥

राधा परम निर्मल नारि।
कहति हौं मन कर्मना करि, हृदयदुविधा टारि ॥
स्याम कौ इक तुही जान्यौ, दुराचारिनि और।
जैसे घट पूरन न डोलै, अध भरो डगडौर ॥
धनी धन कबहूँ न प्रगटै, धरै ताहि छपाइ।
तैं महानग स्याम पायौ, प्रगटि कैसैं जाइ ॥
कहति हौं यह बात तोसौं, प्रगट करिहौं नाहिं।
'सूर' सखी सुजान राधा, परसपर मुसुकाहिं ॥ १८४३ ॥

राग गौरी ॥ २४६२ ॥

तैं ही स्याम भले पहिचाने।
साँची प्रीति जानि मनमोहन, तेरैंहिं हाथ बिकाने ॥
हम अपराध कियौ कहि तुमसौं, हमही कुलटा नारि।
तुमसौं उनसौं बीच नही कछु, तुम दोऊ वर नारि ॥

धन्य सुहाग भाग है तेरौ, धनि बड़भागी स्याम।
'सूरदास' प्रभु से पति जाकैं, तोसी जाकैं वाम ॥ १८४४ ॥

राग सोरठ ॥ २४६३ ॥

राधा स्याम की प्यारी।
कृष्न पति सर्वदा तेरे, तू सदा नारी ॥
सुनत बानी सखीमुख की, जिय भयौ अनुराग।
प्रेमगदगद, रोम पुलकित, समझि अपनौ भाग ॥
प्रीति परगट कियौ चाहै, वचन बोलि न जाइ।
नंदनदन कामनायक रहे नैननि छाइ ॥
हृदय तैं कहु टरत नाही, कियौ निहचल वास।
'सूर' प्रभुरस भरी राधा, दुरत नहीं प्रकास ॥ १८४५ ॥

राग जैतश्री ॥ २४६४ ॥

सुनि सजनी मेरी इक बात।
तुम तौ अतिहि करति बड़ाई, मन मेरौ सरमात ॥
मोसौं कहनि स्याम तुम एकै, यह सुनि कै परमात।
एक अंग कौ पार न पावत, चकित होइ भरमात ॥
वह मरनि द्वै नैन हमारैं, लिखी नही करमात।
सूर रोम प्रति लोचन देत्यौ, बिधना पर तरमात ॥ १८४६ ॥

राग कल्याण ॥ २४६५ ॥

जौ विधना अपवस करि पाऊं।
तौ सखि कह्यौ होइ कछु तेरौ, अपनी साध पुराऊँ ॥
लोचन रोम-रोम-प्रति माँगौ, पुनि पुनि त्रास दिखाऊँ।
इकटक रहैं पलक नहि लागैं, पद्धति नई चलाऊँ ॥
कहा करौ छबि-रासि स्यामघन, लोचन द्वै नहिं ठाऊँ।
एते पर ये निमिप 'सूर' पुनि, यह दुख काहि सुनाऊँ ॥ १८४७ ॥

राग बिलावल ॥ २४६६ ॥

कहा करौ विधि हाथ नही।
वह सुख, यह तनु दसा हमारी, नैननि की रिस मरन मही ॥
अंग अंग कीनो विधि बनए, द्वै नैना देखति जबही।
ऐसौ कौन ताहि धरि आने, कहा करौ खीझति मनही ॥
बड़ौ सुजान चतुरई नीकी, जगतपिता कहियत सबही।
'सूर' स्याम अवतार जानि ब्रज, लोचन बहु न दिये हमही ॥ १८४८ ॥

राग बिलावल ॥ २४६७ ॥

अब समुझी यह निठुर विधाता।
ऐसेहि जगत-पिता कहवावत, ऐसे घात करै सो धाता ॥
कैसौ ज्ञान, चतुरई कैसी, कौन विवेक, कहाँ कौ ज्ञाता।
जैसौ दुख हमकौ इहि दीन्हौ, तैसौ याकौ होइ निपाता ॥
द्वै लोचन तनु मै करि दीन्हे, याही तैं जान्यौ पितुमाता।
'सूर' स्यामछवि तैं अघात नहिं, बार बार आवति अकुलाता ॥ १८४९ ॥

राग सूही बिलावल ॥ २४६८ ॥

द्वै लोचन सावित नहिं तेऊ।
बिनु देखें कल परति नही छिनु, एते पर कीन्ही यह टेऊ ॥
बार बार छवि देखिबौइ चाहत, साथी निमिष मिले हैं येऊ।
ते तौ ओट करत छिनहीं छिनु, देखत ही भरि ग्रावत द्वेऊ ॥
कैसै मैं उनकौ पहचानौ, नैन बिना लखियै क्यो भेऊ।
ये तौ निमिष परत भरि ग्रावत, निठुर विधाता दीन्हे जेऊ ॥
कहा भई जौ मिली स्याम सौ, तू जानै, जाने सब कोऊ।
'सूर' स्याम कौ नाम स्रवन सुनि, दरसन नीकै देत न वेऊ ॥ १८५० ॥

राग सूही ॥ २४६९ ॥

स्यामहि मै कैसे पहिचानौ।
क्रम क्रम करि इक अग निहारति, पलक ओट ताकौ नहि जानौ ॥
पुनि लोचन ठहराइ निहारति, निमिष मेटि वह छवि अनुमानौ।
औरै भाव, और कछु सोभा, कहौं सखी, कैसै उर आनौ ॥
छिनु छिनु अग अग छवि अगिनित, पुनि देखौं, फिरि कै हठ ठानौ।
'सूरदास' स्वामी की महिमा, कैसै रसना एक बखानौ ॥ १८५१ ॥

राग सारंग ॥ २४७० ॥

स्याम सौ काहे की पहिचानि।
निमिष निमिष वह रूप, न, वह छवि, रति कीजै जिय जानि ॥
इकटक रहति निरंतर निसि दिन, मन बुधि सौ चित सानि।
एकौ पल सोभा की सीवाँ, सकति न उर महँ आनि ॥
समुझि न परै प्रगटही निरखत, आनँद की निधि खानि।
सखि यह बिरह, सँजोग, कि समरस, सुख दुख, लाभ कि हानि ॥
मिटति न घृत तै होम-अग्नि-रुचि, 'सूर' सु लोचनबानि।
इत लोभी उत रूप परम निधि, कोउ न रहत मिति मानि ॥ १८५२ ॥

राग बिलावल ॥ २४७१ ॥

कहा करौ नीकै करि हरि कौ, रूप रेख नहि पावति।
सगहि सग फिरति निसि बासर, नैन निमेष न लावति ॥
बँधी दृष्टि ज्यौ गुडी डोर बस, पाछै लागी धावति।
निकट भएँ मेरीयै छाया, मोकौ दुख उपजावति ॥
नख सिख निरखि निहारयौ चाहति, मन मूरति अनि भावति।
जानति नही कहाँ तै निज छवि, अग अंग मै आवति ॥
अपनी देह आपु कौ बैरिनि, दुरति न दूरी दुरावति।
'सूर' स्याम सौ प्रीति निरतर, अंतर मोहि करावति ॥ १८५३ ॥

राग धनाश्री ॥ २४७२ ॥

जौ देखौ तो प्रीति करौ री।
सगहि रहौ, फिरौ निसि बासर, चित तै नैकु नहीं बिसरौ री ॥
कैसै दुरत दुराए मेरै, उन बिन धीरज नही धरौ री।
जाउँ तही जहँ रहै स्यामघन, निरखत इकटक तै न टरौ री ॥

सुनि री सखी दसा यह मेरी, मो कहि धौं अब कहा करौ री।
'सूर' स्याम लोचन भरि देखौं, कैसैं इतनी साध भरौ री ॥ १८५४ ॥

राग विलावल ॥ २४७३ ॥

हरिदरसन की साध मुई।
उड़ियै उडी फिरति नैननि सँग, फर फूटै ज्यौ आकरुई ॥
जानौं नही कहाँ तै आवति, वह मूरति मन माहि उई।
विनु देखे की विथा विरहिनी, अति जुर जरति न जाति छुई ॥
कछुवै कहति कछु कहि आवत प्रेमपुलक स्रम स्वेद चुई।
मूखति 'सूर' धानअंकुर सी, बिनु वरपा ज्यौ मूल तुई ॥ १८५५ ॥

राग धनाश्री ॥ २४७४ ॥

सुनि री सखी दसा यह मेरी।
जब तै मिले स्यामघन सुदर, सगहि फिरति भई जनु चेरी ॥
नीकै दरस देत नहि मोकौं, अगनि प्रति अनग की ढेरी।
चपला तै अतिही चचलता, दसनचमक चकचौंधि घनेरी ॥
चमकत अंग, पान पट चमकत, चमकति माला मोतिनि केरी।
'सूर' समुझि विधना की करनी, अति रिस करति सौह मोहि तेरी ॥ १८५६ ॥

राग मारू ॥ २४७५ ॥

आज के द्यौस कौ सखी अति नही जौ लाख लोचन अंग अग होते।
पूरती साध मेरे हृदय माँझ की, देखती सबै छबि स्याम को ते ॥
चित्त लोभी नैनद्वार अतिही सूछम, कहाँ वह सिधुछबि है अगाधा।
रोम जितने अंग, नैन होते संग, रूप लेती निदरि कहति राधा ॥
स्रवन सुनि सुनि दहै, रूप कैसैं लहै, नैन कछु गहै, रसना न ताकैं।
देखि कोउ रहै, कोउ सुनि रहै, जीभ विनु, सो कहै कहा नहि नैन जाकैं ॥
अग विनु है सबै, नही एकौ फबै, सुनत देखत जबै कहन लोरै।
कहै रसना, सुनत स्रवन, देखत नयन, 'सूर' सब भेद गुनि मनहि तोरै ॥
॥ १८५७ ॥

राग धनाश्री ॥ २४७६ ॥

इनहूँ मै घटताई कीन्ही।
रसना, स्रवन नैन की होते, की रसनाही इनही दीन्ही ॥
वैर कियौ हमसौ विधना रचि, याकी जाति अबै हम चीन्ही।
निठुर निर्दई यातै और न, स्याम वैर हमसौ है लीन्ही ॥
या रस ही मै मगन राधिका, चतुर सखी तबही लखि लीन्ही।
'सूर' स्याम कै रंगहि राँची, टरति नही जल तै ज्यौ मीन्ही ॥ १८५८ ॥

राग सोरठ ॥ २४७७ ॥

धन्य धन्य वड़भागिनि राधा।
नीकै भजी नदनंदन कौ, मेटि भवन-जन-वाधा ॥
नवल स्याम नवला तुमहूँ हौ, दोऊ रूप अगाधा।
मैं जानी यह बात हृदय की, रही नही कछु साधा ॥
सगहि रहत सदा पियप्यारी, क्रीडत करत उपाधा।
कोककला वितपन्न भई हौ, कान्ह-रूप-तनु आधा ॥

प्रेम उमँगि तेरै मुख प्रगटयौ, अरस-परस-अवराधा ।
'सूरदास' प्रभु मिले कृपा करि, गए दुरित दुख दाधा ॥ १८५९ ॥

राग धनाश्री ॥ २४७८ ॥

कहि राधिका बात अब साँची ।
तुम अब प्रगट कही मो आगैं, स्याम-प्रेम-रस माँची ॥
तुमकौं कहाँ मिले नँदनंदन, जब उनकैं रँग राँची ।
खरिक मिले, की गोरस बेचत, की जब विषहर बाँची ॥
कहैं बनै छाँडौ चतुराई, बात नही यह काँची ।
'सूरदास' राधिका सयानी, रूप-रासि-रस-खाँची ॥ १८६० ॥

राग गौरी ॥ २४७९ ॥

कब री मिले स्याम नहिं जानौं ।
तेरी सौं करि कहति सखी री, अजहूँ नहि पहिचानौं ॥
खरिक मिले, की गोरस बेचत, की अबहीं, की कालि ।
नैननि अंतर होत न कबहूँ, कहति कहा री आलि ॥
एकौ पल हरि होत न न्यारे, नीकैं देखे नाहिं ।
'सूरदास' प्रभु टरत न टारैं, नैननि सदा बसाहिं ॥ १८६१ ॥

राग बिलावल ॥ २४८० ॥

स्याम मिले मोहिं ऐसैं माई । मैं जल कौं जमुनातट आई ॥
औचक आए तहाँ कन्हाई । देखत ही मोहिनी लगाई ॥
तबही तैं तनसुरति गँवाई । मधै मारग गई भुलाई ॥
बिनु देखैं कल परै न माई । 'सूर' स्याम मोहिनी लगाई ॥ १८६२ ॥

राग आसावरी ॥ २४८१ ॥

तबही तैं हरि हाथ बिकानी । देह-गेह-सुधि सबै भुलानी ॥
अंग सिथिल भए जैसैं पानी । ज्यौं त्यौं करि गृह पहुँची आनी ॥
बोले तहाँ अचानक बानी । द्वारैं देखे स्याम बिनानी ॥
कहा कहौं सुनि सखी सयानी । 'सूर' स्याम ऐसी मति ठानी ॥ १८६३ ॥

राग धनाश्री ॥ २४८२ ॥

जा दिन तैं हरि दृष्टि परे री ।
ता दिन तैं मेरे इन नैननि, दुख सुख सब बिसरे री ॥
मोहन अंग गुपाल लाल के, प्रेमपियूष भरे री ।
बसे उहाँ मुसुकानि छाँह लै, रुचि रुचि भवन करे री ॥
पठवति हौं मन तिनहिं मनावन निसिदिन रहत अरे री ।
ज्यौं ज्यौं जतन करति उलटावति त्यौं त्यौं हठत खरे री ॥
पचिहारी समुझाइ ऊँच निच पुनि पुनि पाइ परे री ।
सो सुख 'सूर' कहाँ लौ बरनौं इक टक तैं न टरी री ॥ १८६४ ॥

राग सारंग ॥ २४८३ ॥

जब तैं प्रीति स्याम सौं कीन्ही ।
ता दिन तें मेरैं इन नैननि, नैकुहुँ नींद न लीन्ही ॥

सदा रहै मन चाक चढ़्यौ, सो और न कछू सुहाइ ।
करत उपाय बहुत मिलिबे कौ, यहै बिचारत जाइ ।।
'सूर' सकल लागति ऐसीयै, सो दुख कासौं कहियै ।
ज्यौं अचेत बालक की बेदन, अपनै ही तन सहियै ।। १८६५ ।।

राग अडाना ।। २४८४ ।।

का जानै हरि कहा कियौ री ।
मन समझति, मुख कहत न आवै, कछु इक रस नैननि जु पियौ री ।।
ठाढ़ी हुती अकेली आँगन आनि अचानक दरस दियौ री ।
सुधि बुधि कछु न रही उत चितवत, मेरौ मन उन पलटि लियौ री ।।
'सूर' सकल आनति उर अंतर, उपमा कौ पावति न बियौ री ।। १८६६ ।।

राग सारंग ।। २४८५ ।।

हरि मेरै आँगन ह्वै जु गए ।
निकसे आइ अचानक सजनी, इत फिरि फिरि चितए ।।
अति दुख मैं पछिताति यहै कहि, नैन न बहुत ठए ।
जौ बिधि यहै कियौ चाहत हो, द्वै मोहिं कतद नए ।।
सब दै लेउँ लाख लोचन सखि, जो कोउ जटत नए ।
थाके 'सूर' पथिक मग मानौ, मदन व्याध बिधए ।। १८६७ ।।

राग कान्हरौ ।। २४८६ ।।

पीतांबर की सोभा सखि री मोपै कही न जाई ।
सागर-सुत-पति-आयुध मानौ, बन-रिपु-रिपु मैं देत दिखाई ।।
जा रिपु पवन, तासु-सुत-स्वामी-आभा, कुंडल कोटि दिपाई ।
छायापतितनु बदन बिराजत बंधुक अधरनि रहे लजाई ।।
नाकी-नायक-बाहन की गति, राजत मुरली मधुधुनि बजाई ।
'सूरदास' प्रभु हर-सुत-बाहन, ता पख लै रहे सीस चढ़ाई ।। १८६८ ।।

राग बिलावल ।। २४८७ ।।

कहाँ लगि अलकै दैहौ ओट ।
चचल चपल सुरंग छबीलौ, आनि बन्यौ मग जोट ।।
खजन कमल नैन अति राजत, उपमा है जा कोट ।
'सूर' स्यामछबि कहँ लौ बरनौ, नहिन रूप की टोट ।। १८६९ ।।

राग सारंग ।। २४८८ ।।

टरति न टारै छबि, मन जु चुभी ।
घन तन स्याम, पितावर दामिनि, चातक आँखि लुभी ।।
द्वै बगपगति राजति मानौ, मुक्तामाल सुभी ।
गिरा गँभीर गरज मानौ सखि, स्रवननि आइ खुभी ।।
मुरली मोर-मनोहर-बानी, सुनि इकटक जु उभी ।
'सूरदास' मनमोहन निरखत, उपजी कामगुभी ।। १८७० ।।

राग बिलावल ।। २४८९ ।।

नद के लाल हरयौ मन मोर ।
हौं बैठी मोतिनि लर पोवति, काँकरि डारि चले सखि भोर ।।

बंक बिलोकनि, चाल छबीली, रसिकसिरोमनि नवल किसोर।
कहि काको मन रहै स्रवन सुनि, सरस मधुर मुरली की घोर॥
बदन गुबिंद इंदु कै कारन, तरसत नैन, बिहग चकोर।
'सूरदास' प्रभु के मिलिबे कौं, कुच श्रीफल हौं करति अँकोर॥ १८७१॥

राग अड़ानौ॥ २४९०॥

मेरौ मन गोपाल हरयौ री।
चितवतही उर पैठि नैनमग, ना जानतु धौं कहा करयौ री॥
मातु-पिता-पति-बंधु सजन जन, सखि आँगन सब भवन भरयौ री।
लोकबेद प्रतिहार, पहरुआ, तिनहूँ पै राख्यौ न परयौ री॥
धर्म धीर कुलकानि कुँजी करि, तिहि तारौ दै, दूरि धरयौ री।
पलककपाट कठिन उर अंतर, इतेहुँ जतन कछुवै न सरयौ री॥
बुधि बिबेक बल सहित सँच्यौ पचि, सु धन अटल कबहूँ न टरयौ री।
लियौ चुराइ चितै चित सजनी, 'सूर' सोच तनु जात जरयौ री॥ १८७२॥

राग अड़ानौ॥ २४९१॥

मेरौ मन तब तैं न फिरयौ री।
गयौ जु संग स्याम सुंदर कैं तहँ तैं कहुँ न टरयौ री॥
जोबन रूप गर्ब धन सँचि सँचि, हौं उर मैं जु धरयौ री।
कहा कहौं कुल सील, सकुच सखि, सरबस हाथ परयौ री॥
बिनु देखैं मुख हरि कौ मन यह, निसि दिन रहत अरयौ री।
'सूरदास' या बृथा लाज तैं, कछुव न काज सरयौ री॥ १८७३॥

राग सारंग॥ २४९२॥

यह सब मैं ही पोच करी।
स्याम रूप निरखत नैननि भरि, मोहन फंद परी॥
बय किसोर कमनीय, मुगध मैं, लुबधत हूँ न डरी।
अब छबि गई समाइ हिये मैं टारतहूँ न टरी॥
अति सुख, दुख, संभ्रम, ब्याकुलता, बिधुमुख सनमुख री।
बुधि, बिबेक, बल, बचन, बिबस ह्वै, आनँद-उमँग भरी॥
जद्यपि सील सहित सुनि 'सूरज', अंग डुते न सरी।
तद्यपि सुख मुरलिका बिलोकत, उलटि अनंग जरी॥ १८७४॥

राग आसावरी॥ २४९३॥

ना जानौं तबही तैं मोकौं, स्याम कहा धौं कीन्हौ री।
मेरी दृष्टि परे जा दिन तैं, ज्ञान ध्यान हरि लीन्हौ री॥
द्वारैं आइ गए औचक ही मैं आँगन ही ठाढी री।
मनमोहनमुख देखि रही तब, कामबिथा तनु बाढी री॥
नैन सैन दै दै हरि मो तन कछु इक भाव बतायौ री।
पीतांबर उपरैना कर गहि, अपनै सीस फिरायौ री॥
लोकलाज, गुरुजन की संका, कहत न आवै बानी री।
'सूर' स्याम मेरैं आँगन आए, जात बहुत पछितानी री॥ १८७५॥

राग सोरठ ॥ २४९४ ॥

मन हरि लीन्हौ कुँवर कन्हाई ।
जब तै स्याम द्वार ह्वै निकसे, तब तैं री मोहि घर न सुहाई ॥
मेरैं हेत आइ भए ठाढे, मोतै कछु न भई री माई ।
तबहीं तै व्याकुल भइ डोलति, बैरी भए मातु-पितु-भाई ॥
मो देखत सिरपाग सँवारी, हँसि चितए छवि कही न जाई ।
'सूर' स्याम गिरधर वर नागर, मेरौ मन लै गए चुराई ॥ १८७६ ॥

राग धनाश्री ॥ २४९५ ॥

प्रेम सहित हरि तेरैं आए ।
कछु सेवा तै करी कि नाही, की धौं वैसेहि उनहि पठाए ॥
काहे तै हरि पाग सँवारी, क्यौ पीतांबर सीस फिराए ।
गुप्त भाव तोसौं कछु कीन्हौ, घर आए काहे बिसराए ॥
अतिही चतुर कहावति राधा, बातनि ही हरि क्यौं न भुराए ।
'सूर' स्याम कौ बस करि लेती, काहे कौ रहते पछताए ? ॥ १८७७ ॥

राग धनाश्री ॥ २४९६ ॥

गुरुजन माहि बैठी बाल, आए हरि तहँ, बेदी सँवारन मिस पाइ लागी ।
चतुर नायक पाग मसकी गनहि मन, रीझे गुप्त भेद प्रीति तन जागी ॥
हस्त कमलहिं हरि हेरि कै हिरदै धरे, भामिनिहुँ उत आपु कठ लागी ।
'सूरदास' अतिहि चतुर नागरी नागर, दुहुँ कह्यौ, मन मैं सुहाग भागी ॥
॥ १८७८ ॥

राग धनाश्री ॥ २४९७ ॥

स्याम अचानक आइ गए री ।
मैं बैठी गुरुजन बिच सजनी, देखतही मेरे नैन नए री ॥
तब इक बुद्धि करी मै ऐसी, बेदी सौ कर परस कियौ री ॥
आपु हँसे उत पाग मसकि हरि, अंतरजामी जानि लियौ री ॥
लै कर कमल अधर परसायौ, देखि, हरषि पुनि हृदय धरयौ री ।
चरन छुए दोउ नैन लगाए, मैं अपनैं भुज अंक भरयौ री ॥
ठाढ़े रहे द्वार अति हित करि, तबही तैं मन चोरि गयौ री ।
'सूरदास' कछु दोष न मेरौ, उत गुरुजन इत हेत नयौ री ॥ १८७९ ॥

राग धनाश्री ॥ २४९८ ॥

करत मोहि कछुवै न बनी ।
हरि आए चितवत ही रही सखि, जैसै चित्र धनी ॥
अति आनंद हरष आसन उर कमल कुटी अपनी ।
न्यौछावरि अचल फहरनि, दृग अर्घ जु धार घनी ॥
गुरुजन लाज कछु न सकी कहि सुनि मन बुधि सजनी ।
हृदय उमँगि कुच कलस प्रगट भए, टूटी तरकि तनी ॥
अब उपजति अति लाज मनहि मन समुझत निज करनी ।
तदपि 'सूर' मेरी जड़ता प्रभु, मंगल माँझ गनी ॥ १८८० ॥

राग कल्यान ॥ २४९९ ॥

सेवा मानि लई हरि तेरी ।
अब काहै पछिताति राधिका, स्याम जात करि फेरी ॥

गुरुजन मैं भावहि को पूजा, और कहाँ कछु टेरी।
मोहन अति गुप्त पाउ गए री, चाहनि हौं कह मेरी॥
तेरैं वस भए कुँवर कन्हाई, करति कहा अवनेरी।
'सूर' स्याम तुम कौं अति चाहत, तुम प्यारी हरि केरी॥ १८८१॥

राग आसावरी॥ २५००॥
राधा भाव कियौ यह नीकौ, तुम वेंदी, उन पाग छुई।
ऐसे भेद कहा कोउ जानै, तुमही जानौ गुप्त दुई॥
तुम जुहार उनकौ जव कीन्ही, तुमकौं उनहूँ जुहार कियौ।
एकै प्रान, देह द्वै कीन्हे, तुम वै एकै, नहीं वियौ॥
तुम पग परसि नैन पर राख्यौ, उन कर कमलनि हृदय धर्‌यौ।
'सूर' स्याम हिरदै तुम राखे, तुम उनकौ लै कंठ भर्‌यौ॥ १८८२॥

राग विहागरौ॥ २५०१॥
एक गाउँ के वसत वार इक, कीन्हौ हरि पहिचानि।
निसिदिन रहे दरस को आसा, मिले अचानक आनि॥
भागदसा आँगनहीं आए, सुंदर सरस सुजानि।
नीकैं करि देखनहुँ न पाए, वहि न जाइ कुलकानि॥
कल न परति हरि दरसनविनु री, भाँहि परी यह वानि।
'सूरजदास' विकानी री हौं नंदसुवन कैं पानि॥ १८८३॥

राग विहागरौ॥ २५०२॥
कहा करौं गुरुजन डर मान्यौ।
आए स्याम कौन हित करिकै, मैं अपराधिनि कछु न जान्यौ॥
ठाढ़े स्याम रहे मेरैं आँगन, तव तैं मन उन हाथ विकान्यौ।
चूक परी मोकौं सवही विधि, कहा करौं गइ भूलि सयान्यौ॥
वै उतहीं कौं गए हरषि मन, मेरी करनी समुझि अयान्यौ।
'सूर' स्यामसँग मन उठि लाग्यौ मो पर वारवार रिसान्यौ॥ १८८४॥

राग सारंग॥ २५०३॥
औचक आए री घर मेरैं, चितै रही तव छवि निहारि हरि।
कुंडल लोल कपोल, रहे कच स्रमजल सो करकंजनि सौं टरि॥
गुरुजन विच मैं आँगन ठाढ़ौ, अति हित दरसन दियौ मया करि।
'सूरदास' प्रभु अंतरजामी, वे हँसि चितए अतिसय सुख भरि॥ १८८५॥

राग गौरी॥ २५०४॥
मै अपनैं कुलकानि डरानी।
कैसैं स्याम अचानक आए, मै सेवा नहिं जानी॥
वहै चूक जिय जानि, सखी सुनि, मन लै गए चुराइ।
तन तैं जात नहीं मैं जान्यौ, लियौ स्याम अपनाइ॥
ऐसैं ठगत फिरत हरि घर घर, भूलि कियौ अपराध।
'सूर' स्याम मन देहिं न मेरौ, पुनि करिहौं अनुराध॥ १८८६॥

राग काफी॥ २५०५॥
(मेरौ) मन न रहै कान्ह विना, नैन तपैं माई।
नव किसोर स्यामवरन मोहिनी लगाई॥

बन की धातु चित्रित तन मोरचंद सोहै।
वनमालालुब्ध भँवर-सुर-नर-मन मोहै॥
नटवर वपुवेष ललित, कटि किंकिनि राजै।
मनि कुंडल मकराकृत तरुन तिलक भ्राजै॥
कुटिल केस अति सुदेस, गोरज लपटानी।
तड़ितवसन, कुंददसन, देखिहौं भुलानी॥
अरुन संत खुभि वज्र-खचित-पदिक-सोभा।
मनि कौस्तुभ कंठ लसत, चितवत चित लोभा॥
अधर सुधा मधुर मधुर मुरली कल गावै।
भ्रु बिलास, मंद हास, गोपिनि जिय भावै॥
कमलनैन चित के चैन, निरखि मैन वारौं।
प्रेमअंस उरझि रह्यौ, उर तैं नहिं टारौं॥
गोप वेष धरि सखि री, संग संग डोलौं।
तनमन अनुराग भरी, मोहन सँग बोलौं॥
नव किसोर चित के चोर, पल न ओट करिहौं।
सुभग चरनकमल अरुन, अपनै उर धरिहौं॥
असन-वसन-सयन-भवन, हरि बिनु न सुहाई।
बिनु देखैं कल न परै, कहा करौं माई॥
जसुमति सुत सुंदर तनु, निरखि हौं लुभानी।
हरि-दरसन-अमल परचौ, लाज ना लजानी॥
रूपरासि सुखविलास, देखत बनि आवै।
'सूर' मुदितरूप की सु उपमा नहिं पावै॥ १८८७॥

राग गौरी॥ २५०६॥

मन मेरौ हरि साथ गयौ री।
द्वारैं आइ स्याम घन सजनी, हँसि मोतन तिहि संग लयौ री॥
ऐसैं मिल्यौ जाइ मोकौ तजि, मानौ उनही पोषि जयौ री।
सेवा चूक परी जो मोतैं, मन उनकौ धौं कहा कियौ री॥
मोकौं देखि रिसात कहत यह, तेरैं जिय कछु गर्व भयौ री।
'सूर' स्याम-छवि-अंग लुभान्यौ, मन-वच-क्रम मोहि छाँडि दयौ री॥ १८८८॥

[राग] रामकली॥ २५०७॥

मैं मन बहुत भाँति समुझायौ।
कहा करौं दरसनरस अँटक्यौ, बहुरि नही घट आयौ॥
इन नैननि कै भेद, रूपरस उर मैं आनि दुरायौ।
बरजत हीं बेकाज सुपन ज्यौं, पलटचौ, नहिं जो सिधायौ॥
लोक-वेद-कुल निदरि, निडर ह्वै, करत आपनौ भायौ।
मुखछवि निरखि, चौंधि निसिखग ज्यौं, हठि अपुनपौ बँधायौ॥
हरि कौ दोष कहा कहि दीजै, यह अपनैं बल धायौ।
अति बिपरीत भई सुनि 'सूरज', मुरझ्यौ मदन जगायौ॥ १८८९॥

राग बिलावल ॥ २५०८ ॥

मनहिं बिना कह करौं सही री।
घर तजि कै कोउ रहत पराए, मैं तबही तैं फिरति वही री ॥
आइ अचानक ही लै गए हरि, बार बार मैं हटकि रही री।
मेरौ कह्यौ सुनत काहे कौं, गैल गयौ हरि कै उतही री ॥
ऐसी करत कहूँ री कोऊ कहा करौं मैं हारि रही री।
'सूर' स्याम कौ यह न बूझियै ढीठ कियौ मन कौ उनही री ॥ १८९० ॥

राग टोड़ी ॥ २५०९ ॥

माखन की चोरी तैं सीखे, करन लगे अब चित की चोरी।
जाकी दृष्टि परे नँदनंदन, फिरति सु गोहन डोरीडोरी ॥
लोकलाज, कुलकानि मेटि कै, बन बन डोलति नवल किसोरी ॥
'सूरदास' प्रभु रसिकसिरोमनि, देखत निगम बानि भई भोरी ॥ १८९१ ॥

राग आसावरी ॥ २५१० ॥

क्यौं सुरझाऊँ नंदलाल सौं, अरुझि रह्यौ सजनी मन मेरौ।
मोहन मूरति नेकु न बिसरति, हारी कैसैंहु करत न फेरौ ॥
बहुत जतन करि घेरि सु राखति, फिरि फिरि लरत सुनत नहिं टेरौ।
'सूरदास' प्रभु कै सँग डोलत, निसि बासर निरखत नहिं डेरौ ॥ १८९२ ॥

राग बिलावल ॥ २५११ ॥

मैं आपनौ मन हरत न जान्यौ।
कीधौं गयौ संग हरि कैं वह, कीधौं पंथ भुलान्यौ ॥
कीधौं स्याम हटकि है राख्यौ, कीधौं आपु रतान्यौ।
काहे तैं सुधि करी न मेरी, मोपै कहा रिसान्यौ ॥
जबही तैं हरि ह्यौं ह्वै, निकसे, बैरु तबहि तैं ठान्यौ।
'सूर' स्याम सँग चलन कह्यौ मोहिं कह्यौ नही तब मान्यौ ॥ १८९३ ॥

राग गूजरी ॥ २४१२ ॥

स्याम करत है मन की चोरी।
कैसै मिलत आनि पहिलै ही, कहि कहि बतियाँ भोरी ॥
लोकलाज को कानि गँवाई, फिरति गुडी बस डोरी।
ऐसे ढग स्याम अब सीख्यौ, चोर भयौ चित कौ री ॥
माखन की चोरी सहि लीन्ही, बात रही वह थोरी।
'सूर' स्याम भयौ निडर तबहि तै, गोरस लेत अँजोरी ॥ १८९४ ॥

राग टोड़ी ॥ २५१३ ॥

सुनहु सखी हरि करत न नीकी।
आपु स्वारथी है मनमोहन, पीर नहीं पर ही की ॥
वै तौ निठुर सदा मैं जानति, बात कहत मनही की।
कैसेहुँ उनहिं हाथ करि पाऊँ, रिस मेटौ सब जी की ॥
चितवत नही मोहिं सुपनैहूँ, को जानै उन ही की।
ऐसै मिली 'सूर' के प्रभु कौ मनहुँ मोल लै बीकी ॥ १८९५ ॥

राग आसावरी ॥ २५१४ ॥
माई कृष्णनाम जब तैं स्रवन सुन्यौ है री, तब तैं भूली री भौन बावरी सी भई री ।
भरि भरि आवै नैन, चित न रहत चैन, बैन नहि सूधौ दसा औरहि ह्वै गई री ॥
कौन माता, कौन पिता, कौन भैनी, कौन भ्राता, कौन ज्ञान कौन ध्यान, मनमथ हई री ।
'सूर' स्याम जब तैं परे री मेरी डीठि, बाम, काम, धाम, लोकलाजु कुलकानि नई री ॥
॥ १८९६ ॥

राग रामकली ॥ २५१५ ॥
राधा तै हरि कै रँग राँची ।
तो तैं चतुर और नहि कोऊ, बात कहौं मै साँची ॥
तैं उनकौ मन नही चुरायौ, ऐसी है तू काँची ।
हरि तेरौ मन अबहि चुरायौ, प्रथम तुही है नाँची ॥
तुम अरु स्याम एक हौ दोऊ, बाकी नाही बाँची ।
'सूर' स्याम तेरै बस राधा, कहति लीक मैं खाँची ॥ १८९७ ॥

राग जैतश्री ॥ २५१६ ॥
तू काहे कौं करति सयानी ।
स्याम भए बस पहिलै तेरै, तब उन हाथ बिकानी ॥
बाकी नही रही नैकुहूँ अब, मिली दूध ज्यौं पानी ।
नँदनंदन गिरधिर बहुनायक, तू तिनकी पटरानी ॥
तोसी को बड़ भागिनि राधा, यह नीकै करि जानी ।
'सूर' स्यामसँग हिलि मिलि खेलौ, अजहूँ रहति दिवानी ॥ १८९८ ॥

राग सोरठ ॥ २५१७ ॥
मन हरि लीन्हौ, कुँवर, कन्हाई ।
तबहीं तै मैं भई दिवानी, कहा करौं री माई ॥
कुटिल-अलक-भीतर अरुझानौ, अब निरुवारि न जाई ।
नैन कटाच्छ चारु अवलोकनि, मो तन गए बसाई ॥
निलज भई कुलकानि गँवाई, कहा ठगौरी लाई ।
बारंबार कहति मै तोकौ, तेरे हियै न आई ॥
अपनी सी बुधि मेरी जानति, मैं उतनी कहूँ पाई ।
'सूर' स्याम ऐसी गति कीन्ही, देहदसा बिसराई ॥ १८९९ ॥

राग रामकली ॥ २५१८ ॥
राधा हरिअनुराग भरी ।
गदगद मुख बानी परकासति, देहदसा बिसरी ॥
कहति यहै मन हरि हरि लै गए, याही परनि परी ।
लोक-सकुच-संका नहि मानति, स्यामहिं रंग ढरी ॥
सखी सखी सौं कहति बावरी, इहिं हमकौं निदरी ।
'सूर' स्यामसँग सदा रहति है, बूझैहूँ न करी ॥ १९०० ॥

राग सूही बिलावल ॥ २५१९ ॥
तुम जानति राधा है छोटी ।
चतुराई अँग अंग भरी है, पूरनज्ञान, न बुधि की मोटी ॥

हमसौं सदा दुराव कियौ इहिं, बात कहै मुख चोटी पोटी ।
कबहुँ स्याम तैं नैकु न बिछुरति, किये रहति हमसौं हठ ओटी ॥
नंदनँदन याही कैं बस है बिबस देखि बेंदी छबि चोटी ।
'सूरदास' प्रभु वै अति खोटे, यह उनहूँ ते अतिही खोटी ॥ १६०१ ॥

राग बिलावल ॥ २५२० ॥

सखी कहति तू बात गँवारी ;।
याकी सरि कैसैं कोउ ह्वैहै, जाकैं बस हैं श्री बनवारी ॥
ब्रजभीतर यह रूप आगरी, ब्रत लीन्हौ दृढ़ गिरिवरधारी ॥
प्रीति गुप्त ही की है नीकी, या पर मैं रीझी हौं भारी ॥
साँची कहौं नेह ऐसोई, पाछैं मोकौं दीजौ गारी ।
'सूरदास' राधा जौ खोटी, तउ देखौ यह कृष्न पियारी ॥ १६०२ ॥

राग गूजरी ॥ २५२१ ॥

सुनहु सखी राधा सरि को है ।
जो हरि है रतिपति मनमोहन, याकौ मुख सो जोहै ॥
जैसौ स्याम नारि यह तैसी, सुंदर जोरी सोहै ।
यह द्वादस वह दस है कौ, ब्रजजुवतिनि मन मोहै ॥
मैं इनकौ घरि बढि नहिं जानति, भेद करै सो को है ।
'सूर स्याम नागर, यह नागरि, एक प्रान तन दो है ॥ १६०३ ॥

राग मलार ॥ २५२२ ॥

सुंदर स्याम पिया की जोरी ।
सखी गाँठि दै मुदित राधिका, रसिक हँसी मुख मोरी ॥
वै मधुकर ये कंज कली, वै चतुर एउ नहिं भोरी ।
प्रीति परस्पर करि दोऊ सुख, बात जतन की जोरी ॥
वृंदावन वै सिसु तमाल ये कनकलता सी गोरी ।
'सूर' किसोर नवल सागर ये, नागरि नवल किसोरी ॥ १६०४ ॥

राग गूजरी ॥ २५२३ ॥

सुनि सजनी ये ऐसे लागत ।
एक प्रान जुग तन सुखकारन, एकौ निमिष न त्यागत ॥
बिछुरत नहीं संग तैं दोऊ, बैठत, सोवत, जागत ।
पूरबनेह आजु यह नाही, मोसौं सुनहु अनागत ॥
मेरी कही साँच तुम जानौ, कीजौ, आगत स्वागत ।
'सूर' स्याम राधावर ऐसे, प्रीतिहिं तैं अनुरागत ॥ १६०५ ॥

राग जैतश्री ॥ २५२४ ॥

सखी सखी सौं धन्य कहै ।
इनकौ हम ऐसे नहिं जाने. ब्रज भीतर ये गुप्त रहैं ॥
धन्य धन्य तेरी मति साँची, हम इनकौं कछु और कहैं ।
राधा कान्ह एक है दोऊ, तौ इतनौ उपहास सहैं ॥
वै दोउ एक दूसरी तू है, तोहूँ कौं सखि स्याम चहैं ।
'सूर' स्याम धनि, अरु राधा धनि, तुहूँ धन्य हम वृथा बहैं ॥ १६०६ ॥

राग धनाश्री ॥ २५२५ ॥

धन्य धन्य यह तेरी बानी।
तैं नीकै हरि कौ पहिचाने, अब हम तोकौ जानी ॥
राधा आधा देह स्याम की, तू उनकी बिचवानी।
राधा हूँ तैं अधिक स्याम सौं, तेरी प्रीति पुरानी ॥
जौ हरि की सगिनि तू नाही, आदि नेह क्यौ गानी।
'सूरदास' प्रभु रसिकसिरोमनि, यह रसकथा बखानी ॥ १९०७ ॥

राग पूरबी ॥ २५२६ ॥

राधा मोहन सहज सनेही।
सहज रूप गुन, सहज लाड़िले, एक प्रान द्वै देही ॥
सहज माधुरी अंग अंगप्रति, सहज सदा बनगेही।
'सूर' स्याम स्यामा दोउ सहजहिं सहज प्रीति करि लेही ॥ १९०८ ॥

राग आसावरी ॥ २५२७ ॥

राधा नँदनंदन अनुरागी।
भय चिंता हिरदै नहिं एकौ, स्याम-रंग-रस पागी ॥
हरद चून रँग, पय पानी ज्यौ दुविधा दुहुँ की भागी।
तन-मन-प्रान समर्पन कीन्हौ, अंग अंग रति खागी ॥
ब्रजबनिता अवलोकन करि करि, प्रेमबिवस तनुत्यागी।
'सूरदास' प्रभु सौ चित लाग्यौ, सोवन तैं मनु जागी ॥ १९०९ ॥

राग मारू ॥ २५२८ ॥

गोपी स्यामरंग राँची।
देह-गेह-सुधि बिसारि, बढ़ी प्रीति साँची ॥
दुविधा उर दूरि भई, गई मति वह काँची।
राधा तैं आपु बिबस भई, उघरि नाँची ॥
हरि तजि जो और भजै, पुहुमि लीक खाँची।
मातु-पिता-लोक-भीति, वाकी नहिं बाँची ॥
सकुच जबहिं आवै उर, बार बार भाँची।
सूर स्याम-पद-पराग, ता ही मैं माँची ॥ १९१० ॥

राग मारू ॥ २५२९ ॥

स्याम जल सुजल ब्रजनारि खोरै।
नदी मालजलज, तट भुजा अति सबल, धार गेमानली जमुन भोरै ॥
नैन ठहरात नहि बहन अति तेज सौ, तहाँ गयौ चित धीर न सम्हारै ॥
मन गयौ तहाँ, आपुन रही निकट जल, एक इक अगछवि सुधि बिसारै ॥
करति अस्नान सब प्रेमबूड़कीहिं दै, समुझि जिय होइ भजि तीर आवै।
'सूर' प्रभु स्याम जलरासि, ब्रजवासिनी, करति अनुमान नहि पार पावै ॥ १९११ ॥

राग बिलावल ॥ २५३० ॥

स्यामरग राँची ब्रजनारी। और रंग सब दीन्हें डारी ॥
कुसुम रंग गुरुजन पितु माता। हरित रंग भगनी अरु भाता ॥
दिना चारि मैं सब मिटि जैहै। स्याम रंग अजराइल रैहै ॥

उज्ज्वल रंग गोपिका नारी। स्याम रग गिरिवर के धारी ॥
स्यामहि मैं सब रग बसेरौ। प्रगट बताइ देउँ कह भेरौ ॥
अरुन सेत सित सुदर तारे। पीत रग पीतांबर धारे ॥
नाना रग स्याम गुनकारी। 'सूर' स्यामरँग गोपकुमारी ॥ १६१२ ॥

राग विहागरौ ॥ २५३१ ॥

स्याम रूप मैं री मन अरयौ।
लटु ह्वै लटक्यौ, फेरि न भटक्यौ, बहुतै जतन करयौ ॥
ज्यौं ज्यौं खैचति मगन होत त्यौं, ऐसी धरनि धरयौ।
मोसौं बैर करत उनकैं ह्याँ, देखौ जाइ ढरयौ ॥
ज्यौं सिवछत दरसन रवि पाएँ, तेही गरति गरयौ।
'सूरदास' प्रभु रूप थक्यौ मनु, कुंजर पंक परयौ ॥ १६१३ ॥

राग देवसाख ॥ २५३२ ॥

निस दिन इन नैननि कौ आली, नंदलाल की रहै लालसाइ।
मुरली तान परी है स्रवननि, कैसेहुँ टुरत नहीं अतुराइ ॥
कहा कहौं तोसौं यह सजनी, मन मेरौ लै गयौ चुराइ।
'सूर' स्याम कौ नाम धरौ, पुनि धरि न जाइ सुधि रहै न माइ ॥ १६१४ ॥

राग देवसाख ॥ २५३३ ॥

मन न रहै सखि स्याम बिना।
अतिहीं चतुर सुजान जानमनि, वा छवि पर मैं भई लिना ॥
मन तौ चोरि लियौ पहिलै ही, भुरि भुरि कै ह्वै रही छिना।
अपनी दसा कहौं कासौं मैं, बन बन डोलौं रैनदिना ॥
वै मोहन मन हरत सहजही, हरि लै ताकौं करत हिना।
'सूरदास' प्रभु रसिक रसीले, वह नायक है नाहँ जिना ॥ १६१५ ॥

राग सारग ॥ २५३४ ॥

नैननि नींद गई री निसि दिन, पल पल छतियाँ लग्यौ रहै धरकौ।
उत मोहन मुख मुरलि सुनत सखि, सुधि न रही इत घैर घर कौ ॥
ननदी तौ न दियै बिनु गारी रहति, सासु सपनेहु नहि ढरकौ।
माइ निगोड़ी काननि मैं लियैं रहै, मेरे पायनि कौ खरकौ ॥
निकसन हूँ पैयै नहिं, कासौं दुख कहियै, देखे नहि हरि कौ।
'सूरदास' के प्रभु तन मेरौ, ज्यौ भयौ हाथ पाथर तर कौ ॥ १६१६ ॥

राग सुघराई ॥ २५३५ ॥

मोहन मुरलि बजाइ रिझाई, तिनही हौ मोही, मोही री।
साँझ समय निकले ह्वै आँगन, हौं तब तैं चितवति ओही री ॥
काकी देह, गेह सुधि काकैं, को है हरि, माहूँ को हौं री।
तेरे कहैं कहति हौं बानी, तब तैं मैं इकटक जोही री ॥
मिलत नहीं नहि सँग तैं त्यागत, कहा करौ बूझी तोही री।
'सूर' स्याम तब तैं नहि आए, मन जब तैं लीन्हौं दोही री ॥ १६१७ ॥

राग अड़ीना ॥ २५३६ ॥

ब्रज की खोरिहिं ठाढौ साँवरी, तिन हौं मोही री मोही री।
जब तैं देखे स्याम सुँदर सखि, चलि नहिं सकति काम द्रोही री ॥

को ल्याई, किन चरन चलाई, बहियाँ गही सुधौ को ही री।
'सूरदास' प्रभु देखि न मुग्ध बुधि, भई बिदेह बूझति तोहि री ॥ १९१८ ॥

राग सूधराई ॥ २५३७ ॥
आँखिनि मैं बसै, जिय मैं बसै, हिय मैं बसत निसि दिवस प्यारौ।
तन मैं बसै, मन मैं बसै, रसना हू मैं बसै नंदवारौ॥
सुधि मैं बसै, बुधिहू मैं बसै, अंग अंग बसै मुकुटवारौ।
'सूर' बन बसै, घरहु मैं बसै, संग ज्यौं तरंग जल न न्यारौ॥ १९१९॥

राग सोरठ ॥ २५३८ ॥
नंदनँदन बिनु कल न परै।
अति अनुराग भरी जुवती सब, जहाँ स्याम तहँ चित्त ढरै॥
भवन गई मन तहाँ न लागै, गुरु गुरुजन अति त्रास करै।
वै कछु कहैं, करै कछु औरै, सासु ननद तिन पर भहरै॥
यहै तुमहिं पितु मातु सिखायौ, बोल करति नहिं, रिसनि जरै।
'सूरदास' प्रभु सौं चित अरुझ्यौ, यह समुझै जिय ज्ञान धरै॥ १९२०॥

राग जैतश्री ॥ २५३९ ॥
सासु ननद घर त्रास दिखावै।
तुम कुलवधू लाज नहिं आवति, बार बार समुझावै॥
कब की गई न्हान तुम जमुना, यह कहि कहि रिस पावै।
राधा कौं तुम संग करति हौ, ब्रज उपहास उड़ावै॥
वै है बड़े महर की बेटी, तौ ऐसी कहवावै।
सुनहु 'सूर' यह उनही फावै, ऐसी कहति डरावै॥ १९२१॥

राग सारंग ॥ २५४० ॥
हम अहीर ब्रजवासी लोग।
ऐसै चलौ हँसै नहिं कोऊ, घर मैं बैठि करौ सुख भोग॥
दही मही, लवनी, घृत बेचौ, सबै करौ अपने उतजोग।
सिर पर कंस मधुपुरी बैठ्यौ, छिनकहि मैं करि डारै सोग॥
फूँकि फूँकि धरनी पग धारौ, अब लागी तुम करन अजोग।
सुनहु 'सूर' अब जानोगी तब, जब देखौ राधासजोग॥ १९२२॥

राग धनाश्री ॥ २५४१ ॥
तुम कुलवधू निलज जनि ह्वैहौ।
यह करनी उनही कौं छाजै, उनकै संग न जैहौ॥
राधा-कान्ह-कथा ब्रज-घर-घर ऐसै जनि कहवैहौ।
यह करनी उन नई चलाई, तुम जनि हमहिं हँसैहौ॥
तुम हौ बड़े महर की बेटी, कुल जनि नाउँ धरैहौ।
'सूर' स्याम राधा की महिमा, यहै जानि सरमैहौ॥ १९२३॥

राग टोड़ी ॥ २५४२ ॥
यह सुनि कै हँसि मौन रही री।
ब्रज उपहास कान्ह राधा कौ, यह महिमा जानी उनही री॥

जैसी बुद्धि हृदय है इनकै, तैसीयै मुख बान कही री।
रवि कौ तेज उलूक न जानै, तरनि सदा पूरन नभही री॥
विष कौ कीट विषहिं रुचि मानै, कहा सुधा रसही री।
'सूरदास' तिल-तेल-सवादी, स्वाद कहा जानै घृतही री॥ १९२४॥

राग सोरठी॥ २५४३॥

अहिर जाति गोधन कौ मानै।
नंदनँदन सुर-नर-मुनि-बंदन, तिनकी महिमा ये क्यौं जानै॥
धनि राधा उपहास धन्य यह, सदा स्यामही के गुन गानै।
परम पुनीत हृदय अति निर्मल, बार बार वा जसहिं बखानै॥
स्याम काम की पूरनहारी, ताकौ कुलटा करि पहिचानै।
'सूरदास' ऐसे लोगनि कौ नाउँ न लीजै होत बिहानै॥ १९२५॥

राग बिहागरौ॥ २५४४॥

बिधना यह संगति मोहिं दीन्ही।
इनकौ नाउँ प्रात नहि लीजै, कहा निठुरई कीन्ही॥
मनमोहन-गोहन-बिनु अब लौं, मनु बीते जुग चारि।
बिमुखनि तैं मैं कबधौं छूटौं, कब मिलिहौं बनवारि॥
इक इक दिन बिहात कैसेहूँ, अब लौं रह्यौ न जाइ।
'सूर' स्याम दरसन बिनु पाऐं बार बार अकुलाइ॥ १९२६॥

राग सोरठ॥ २५४५॥

बिमुख जननि कौ संग न कीजै।
इनके बिमुख बचन सुनि स्रवननि, दिन दिन देही छीजै॥
मोकौ नैकु नही ये भावत, परबस कौ कह कीजै।
धिक जीवन ऐसौ बहु दिन कौ, स्यामभजन पल जीजै॥
धिक इहि घर धिक इन गुरुजन कौ, इनमैं नही बसीजै।
'सूरदास' प्रभु अंतरजामी, यहै जानि मन लीजै॥ १९२७॥

राग नट॥ २५४६॥

राधा स्यामरंग रँगी।
रोम रोमनि भिदि गयौ सब, अंग अंग पगी॥
प्रीति दै मन लै गए हरि, नंदनंदन आपु।
कृष्न-रस-उन्मत्त नागरि, दुरत नहिं परतापु॥
चली जमुना जानि मारग, हृदै यहै बिचार।
'सूर' प्रभु कौ दरस पाऊँ, निगम-अगम-अपार॥ १९२८॥

राग धनाश्री॥ २५४७॥

चित कौ चोर अबहिं जौ पाऊँ।
हृदयकपाट लगाइ जतन करि, अपने मनहिं मनाऊँ॥
जबहि निसक होति गुरुजन तैं, तिहि औसर जौ आवै।
भुजनि धरौं भरि सुदृढ मनोहर, बहु दिन कौ फल पावै।
लै राखौं कुच बीच चाँपि करि, तन कौ ताप बिसारौं।
'सूरदास' नँदनंदन कौ गृह-गृह-डोलनि-स्रम टारौं॥ १९२९॥

राग बिलावल ॥ २५४८ ॥

इततैं राधा जाति जमुनतट, उततैं हरि आवत घर कौ।
कटि काछनी, वेष नटवर कौ, बीच मिली मुरलीधर कौ ॥
चितै रही मुखइदु मनोहर, वा छवि पर वारति तन कौ।
दूरिहु तैं देखत ही जाने, प्राननाथ सुदर घन कौ ॥
रोम पुलक, गदगद बानी कही, कहाँ जात चोरे मन कौ।
'सूरदास' प्रभु चोरन सीखे, माखन तैं चित-वित-धन कौ ॥ १९३० ॥

राग बिलावल ॥ २५४९ ॥

यह न होइ जैसै माखन चोरी।
तब वह मुख पहिचानि, मानि सुख, देती जान हानि हुति थोरी ॥
तब तिनि दिननि कुमार कान्ह तुम, हमहुँ हुती अपनै जिय भोरी।
तुम ब्रजराज बडे के ढोटा, गोरसकारन कानि न तोरी ॥
अब भए कुसल किसोर कान्ह तुम, हौ भई सजग समान किसोरी।
जात कहाँ बलि बाहँ छुडाए, मूसे मनसपति सब मोरी ॥
नखसिख लौ चितचोर सकल अँग, चीन्हे पर कत करत मरोरी।
इक सुनि 'सूर' हरयौ मेरौ सरवस, औ उलटी डोलति सँग डोरी ॥ १९३१ ॥

राग गौरी ॥ २५५० ॥

भुजा पकरि ठाढे हरि कीन्हे।
बाहँ मरोरि जाहुगे कैसै, मै तुम नीके चीन्हे ॥
माखन चोरी करत रहे तुम. अब भए मन के चोर।
सुनत रही मन चोरत है हरि, प्रगट लियौ मन मोर ॥
ऐसे ढीठ भए तुम डोलत, निदरे ब्रज की नारि।
'सूर' स्याम मोहूँ निदरौगे, देहुँ प्रेम की गारि ॥ १९३२ ॥

राग सारंग ॥ २५५१ ॥

यह बल केतिक जादौराइ।
तुम जु तमकि कै मो अबला सौ, चले बाहँ छुटकाइ ॥
कहियत हौ अति चतुर सकल अँग आवत बहुत उपाइ।
तौ जानौं जौ अब एकौ छन, सकौ हृदय तैं जाइ ॥
'सूरदास' स्वामी श्रीपति कौ, भावत अंतर भाइ।
सहि न सके रतिवचन, उलटि हँसि लीन्ही कठ लगाइ ॥ १९३३ ॥

राग ईमन ॥ २५५२ ॥

मै तुम्हरे गुन जाने स्याम।
औरनि कौ मन चोरि रहे हौ, मेरौ मन चोरयौ किहि काम ॥
वै डरपति तुमकौ धौं काहे, मोकौ जानत वैसी बाम।
मैं तुमकौ अबही बाँधौगी, मोहि बूझि जैहौ तब धाम ॥
मन लैहौ पहुँनाई करिहौ राखौ अटकि द्यौस अरु जाम।
'सूर' स्याम यह कौन भलाई, चोर जहाँ तहँ तुम्हरौ नाम ॥ १९३४ ॥

राग कल्यान ॥ २५५३ ॥

ब्रज मै ढीठ भए तुम डोलत।
अब तौ स्याम परे फँग मेरैं सूधै काहे न बोलत ॥

मन दीजै मरजादा जैहै, रहत चतुरई कीन्है।
दुख करि देहु कि सुख करि दीजै, अब तौ बनिहै दीन्हें ॥
ऐसे ढग तुम करत कन्हाई, जीति रहे ब्रज गाउँ।
'सूर' आजु बहुतै दुख पाए, मन कारन पछिताउँ ॥ १६३५ ॥

राग गौड मलार ॥ २५५४ ॥

सुनि री कुल की कानि, लालन सौं मैं झगरौ मांडौंगी।
मेरे इनके कोउ बीच परै जिनि, अधर दसन खाडौंगी ॥
चतुर नायक सौं काम परयौ है, कैसैं कै छांडौंगी।
'सूरदास' प्रभु नँदनदन कौ, रस लै लै ओडौंगी ॥ १६३६ ॥

राग कान्हरौ ॥ २५५५ ॥

चोरी के फल तुमहि दिखाऊँ।
कञ्चनखंभ डोर कञ्चन की, देखौ तुमहि बँधाऊँ ॥
खंडौ एक अग कछु तुम्हरौ, चोरी नाउँ मिटाऊँ।
जो चाहौ सोई सब लैहौ, यह कहि डौंड़ मनाऊँ ॥
बीच करन जौ आवै कोऊ, ताकौं सौंह दिवाऊँ।
'सूर' स्याम चोरनि के राजा, बहुरि कहाँ मैं पाऊँ ॥ १६३७ ॥

राग गंधारी ॥ २५५६ ॥

रही री लाज नहिं काज आजु हरि, पाए पकरन चोरी।
मूसि मूसि ले गए मनमाखन, जो मेरै धन हो री ॥
बाँधौ कचनखंभ कलेवर, उभय भुजा दृढ डोरी।
चाँपौ कठिन कुलिस कुच अतर, सकै कौन धौं छोरी ॥
खंडौ अधर भूमि रसगोरस हरै न काहू को री।
दंडौ कामदंड परघर को नाउँ न लेइ बहोरी ॥
तब कुलकानि, आनि भई तिरछी छमि अपराध किसोरी।
सिव पर पानि धराइ 'सूर', उर सकुच मोचि, सिर ढोरी ॥ १६३८ ॥

राग बिहागरौ ॥ २५५७ ॥

बीच कियौ कुललज्जा आइ।
सुनि नागरी बकसि यह मोकौं, सनमुख आए धाइ ॥
चूक परी हरि तैं मैं जानी, मन लै गए चुराइ।
ठाढ़े रहे सकुचि तो आगैं, राख्यौ बदन दुराइ ॥
तुम ही बड़े महर की बेटी, काहैं गई भुलाइ।
'सूर' स्याम हैं चोर तिहारे, छाँड़ि देहु डरपाइ ॥ १६३९ ॥

राग गौरी ॥ २५५८ ॥

कुल की लाज अकाज कियौ।
तुम बिनु स्याम सुहात नहीं कछु, कहा करौं अति जरत हियौ ॥
आपु गुप्त करि राखी मोकौं, मैं आयसु सिर मानि लियौ।
देह-गेह-सुधि रहति बिसारे, तुम तैं हितु नहिं और बियौ ॥
अब मोकौं चरननि तर राखौ, हँसि नँदनदन अग छियौ।
अब मोकौं चरननि तर राखौ, हँसि नँदनदन अंग छियौ।
'सूर' स्याम श्रीमुख की बानी, तुम पै प्यारी बसत जियौ ॥ १६४० ॥

राग जैतश्री ॥ २५५९ ॥

मातु पिता अति त्रास दिखावत।
भ्राता मोहिं मारन कौं धिरवै, देखैं मोहिं न भावत ॥
जननी कहति बड़े की बेटी, तोकौं लाज न आवति।
पिता कहै कैसी कुल उपजी, मनहीं मन रिस पावति ॥
भगिनी देखि देति मोहिं गारी, काहै कुलहि लजावति।
'सूरदास' प्रभु सौं यह कहि कहि, अपनी विपति जनावति ॥ १९४१ ॥

राग बिहागरौ ॥ २५६० ॥

सुंदर स्याम कमल-दल-लोचन।
बिमुख जननि की संगति कौ दुख, कब धौं करिहौ मोचन ॥
भवन मोहिं भाटी सौं लागत, मरति सोचही सोचन।
ऐसी गति मेरी तुम आगैं, करत कहा जिय दोचन ॥
धिक वै मातुपिता, धिक भ्राता, देत रहत मोहिं खोचन।
'सूर' स्याम मन तुमहिं लगान्यौ, हरद-चून-रँग-रोचन ॥ १९४२ ॥

राग रामकली ॥ २५६१ ॥

कुल की कानि कहाँ लगि करिहौं।
तुम आगैं मैं कहौ जु साँची, अब काहू नहिं डरिहौं ॥
लोग कुटुंब जग के जे कहियत, पेला सबहिं निदरिहौं।
अब यह दुख सहि जात न मोपै, बिमुख वचन सुनि मरिहौं ॥
आपु सुखी तौ सब नीके हैं, उनके सुख कह सरिहौं।
'सूरदास' प्रभु चतुरसिरोमनि, अबकैं हौं कछु लरिहौं ॥ १९४३ ॥

राग कान्हरौ ॥ २५६२ ॥

प्राननाथ हो मेरी सुरति किन करौ।
मैं जु दुख पावति हौं दीनदयाल, कृपा करौ, मरो कामदंद दुख औ बिरह हरौ ॥
तुम बहु रमनीरमन सो तौ जानति हौ याही के जु धोखैं हौ मोसौं काहै लरौ।
'सूरदास' स्वामी तुम हौ अंतरजामी सुनौ मनसा वाचा मैं ध्यान तुम्हरौई धरौ ॥
॥ १९४४ ॥

राग कान्हरौ ॥ २५६३ ॥

हौं या माया ही लागी तुम कत तोरत।
मेरौ तौ जिय तिहारै चरननि ही मैं लाग्यौ, धीरज क्यौं रहै रावरे मुख मोरत ॥
कोऊ लै बनाइ बातैं, मिलवति तुम आगैं, सोई किन आइ मोसौं अब है जोरत।
'सूरदास' पिय, मेरे तो तुमहि हौ जु जिय, तुम बिनु देखै मेरौ हियौ ककोरत ॥
॥ १९४५ ॥

राग कान्हरौ ॥ २५६४ ॥

सुनहु स्याम मेरी इक बात।
हरि प्यारी के मुखतन चितवत, मन ही मनहि मिहात ॥
कहा कहति वृषभानुनंदिनी, बूझत हैं मुसुकात।
कनकबरन सुंदरी राधिका, कटि कृस कोमल गात ॥
तुम ही मेरी प्रान-जीवन-धन, अहो चंद तुव भ्रात।
सुनहु 'सूर' जो कहति रही तुम, कहौ न कहा लजात ! ॥ १९४६ ॥

राग गुंड ॥ २५६५ ॥

नागरी स्याम सौं कहति बानी।

सुनहु गिरिधरन बर, सीस-मोपंड-धर, जपन सुर नाग नर, सहस बानी॥
रुद्रपति, छुद्रपति, लोकपति, ओकपति, धरनिपति, गगनपति, अगम बानी।
अखिल ब्रह्मांडपति, तिहूँ भुवनाधिपति, नीरपति, पवनपति, बेद बानी॥
सिंह कौं सरन जंबुक की त्रास कह, कृष्नराधा एक जगत बानी।
'सूर' प्रभु स्याम तुव नाम करुनाधाम, करौ मनकाम मुनि दीन बानी॥
॥ १९४७ ॥

राग गुड मलार ॥ २५६६ ॥

बिहँसि राधा कृष्न अंक लीन्ही।

अधर सौं अधर जुरि, नैन सौं नैन मिलि, हृदय सौं हृदय लगि, हरप कीन्ही॥
कंठ भुज भुज जोरि, उछँग लीन्ही नारि, भवन दुख टारि, सुख दियौ भारी।
हरपि बोले स्याम, कुंज-बन-धन-धाम, तहाँ हम तुम संग मिलैं प्यारी॥
जाहु गृह परम धन हमहूँ जैहैं सदन, आइ कहूँ पान मोहिं सैन दैही।
'सूर' यह भाव दे, तुरतही गवन करि, कुंज गृहसदन तुम जाइ रैही॥ १९४८ ॥

राग गुड मलार ॥२५६७॥

यह सुनत नागरी साथ नायौ।

स्याम रसबस भरे, मदन जिय डरडरे, सुंदरी बात कौ भेद पायौ॥
खरे ब्रज जमुन बिच, दुहुँनि मन अति सकुच, और कछु बनै नहिं बुद्धि ठानी।
तबहिं ब्रज नारि आवत देखि, जमुन तैं, इक ब्रजहिं तैं जु राधा लजानी॥
स्याम हँसि कै चले तुरत, ग्वालनि मिले कहाँ सब रहे कहि हाँक दीन्ही।
भाव यह करि गए, 'सूर' प्रभु गुन नए, नागरी रसिक जिय जानि लीन्ही॥
॥ १९४९ ॥

राग टोड़ी ॥ २५६८ ॥

राधा हरि के भावहिं जान्यौ।

यहै बात कैहौ इन आगैं, मनही मन अनुमान्यौ॥
उन देखी राधा मग ठाढ़ी, स्याम पठायौ टारि।
बूझतही कछु बुद्धि रचैगी, बड़ी चतुर यह नारि॥
इत वृषभानु सुता मन सोचति, मोहिं देखि हरि संग।
'सूर' अबहिं बातनि करि धरिहैं, जानति इनके रंग॥ १९५० ॥

राग गुड मलार ॥ २५६९ ॥

चतुर बर नागरी बुद्धि ठानी।

अबहिं मोहिं बूझिहैं इनहिं कहिहौं कहा, स्यामसँग आजु मोहिं प्रगट जानी॥
भाव करि गए, हरि ग्वाल बूझत रहे, जिान जिय लई गति चतुर रासी।
यह रचौ बुद्धि इक, कहा ये कहैं मोहिं, मेरे मन सबै ये घोषवासी॥
इतहुँ की उतहुँ की सबै, जुरि एकठौ, कहति राधा कहाँ जाति है री।
'सूर' प्रभु कौं अबहिं देखे हम तेरे ढिग, कहा गए तिनहिं पछिताति है री॥
॥ १९५१ ॥

राग गूजरी ॥ २५७० ॥

कान्ह कहा बूझत हे तुमसौं।

ह्वाँही तैं लखि लीन्हे तबही, कहा दुरावति हमकौं॥

मन लै गए चुराइ तुम्हारौ, सो अपनौ तुम पायौ।
अपनौ काज सारि तुम लीन्हौ, हम देखतहि पठायौ॥
सदा चतुरई फबनी नाही, अतिही निदरि रही हौ।
'सूर' स्याम धौ कहाँ रहत है, यह कहि कहि जु तही हौ॥ १९५२ ॥

राग अलहिया ॥ २५७१ ॥

कहति रही तब राधिका, जब हरिसँग पेखौ।
बेसरि लीजौ छीनि कै, मुख तन कह देखौ॥
देहौं बेसरि की नही, की लेहि छँडाई।
चतुराई प्रगटी अबै, ऐसी हौ माई॥
बार बार नागरि हँसी, तरुनी बैहानी।
ऐसेहिं बेसरि लेहुगी, सब भई अयानी॥
हम मूरख, तुम चतुर हौ, कछु लाज न आवै।
'सूर' स्यामसँग नहिं रही ? अब कहा दुरावै॥ १९५३ ॥

राग सोरठ ॥ २५७२ ॥

काह कहन मौकौ तुम आई।
इततै ये उततै तुम सब मिलि, काहे ऐसै धाई॥
बेसरि एक लेहुगी, को को, पीतांबर न दिखावहु।
बेसरि अरु पीतांबर लै, तब घर घर जाइ सुनावहु॥
तारी एक बजत कै दोऊ, इतनौइ ज्ञान विचारौ।
सुनहु 'सूर' ये बेसरि लेहै, जान्यौ ज्ञान तुम्हारौ॥ १९५४ ॥

राज जैतश्री ॥ २५७३ ॥

सुनि राधा तो सौ हम हारी।
तेरे चरित नही कोउ जानै, बस कीन्हे गिरिधारी॥
अबही कान्ह टारि करि पठए, धनि तेरी महतारी।
अंग अग रचि कपट चतुरई, विधना आपु सँवारी॥
अबही प्रगट दुहुँनि हम देखे, जानति दैहौ गारी।
'सूर' स्याम कै यह बुधि नाही, जितनी है तो पाँ री॥ १९५५ ॥

राग बिलावल ॥ २५७४ ॥

स्याम भले अरु तुमहुँ भली।
बेसरि छीनति हौ बेकाजहि जाहु न घरहि चली॥
केसैं दौरि परी मेरे पर, मानहुँ संग मिली।
और भई सब बन की बेली, आपुन कमलकली॥
तौ कहती गहि बाहँ दुहुँनि की, जो तुम चतुर अली।
'सूरदास' राधा गुन आगरि, नागरि नारि छली॥ १९५६ ॥

राग अलहिया ॥ २५७५ ॥

अब हमसौ साँची कहौ वृषभानु दुलारी।
कछु तौ तोसौ कहत हे, ठाढे गिरिधारी॥
हा हा हमसौ सोइ कहौ, दैहो जिनि गारी।
हमकौ देखतही गए, उत ग्वाल हँकारी॥
भेद करै जौ लाडिली तोहि सौंह हमारी।
तू ठाढी काहै रही, मग मैं री प्यारी॥

सहज छोड़ तू कहि अबै, उर तै रिस टारी।
'सूर' स्याम की भावती, कहै कहाँ कहा री॥ १६५७ ॥

राग सूही ॥ २५७६ ॥

मैं जमुनातट जाति सही री।
ब्रज तै आवत देखि गर्बिनि कौं, इन कारन ह्याँ परखि रही री॥
उततै आइ गए हरि तिरछै, मैं तुमही तन चितै रही री।
बूझन लगे कान्ह ग्वालनि कौ, तुम तौ देखे उनहिं नही री॥
कछु उनसौ बोली नहि सन्मुख, नाही, हाँ कछुवै न कही री।
'सूर' स्याम गए ग्वालनि टेरत, ना जानौं तुम कहा गही री॥१६५८॥

राग टोड़ी ॥ २५७७ ॥

तुम मेरी बेसरि कौं धाई।
सकुचि गई सुनि सुनि यह बानी, तरुनी भलै लजाई॥
यह तौ बात लगति कछु साँची, हम पर स्याइ रिसाई।
टेरत कान्ह गए ग्वालनि कौं स्रवन परी धुनि आई॥
बेसरि नाउँ लेत मरमानी, तब राधा मुसुकानी।
'सूरदास' ब्रजनारि मनहि मन यह गुनि गुनि पछितानी॥ १६५६ ॥

राग गूजरी ॥ २५७८ ॥

राधा तू अतिही है भोरी।
झूठहि लोग उड़ावत घर घर, हम जान्यौ अब लौं री॥
कट लगाइ लई रिस छाँड़ौ, चूक परी हम ओरी।
तुम निर्मल गंगा जलहू तै, दुर्गति नही वह चोरी॥
घर जैही कै जमुना जैहौ, हम आवैं सँग गोरी।
'सूरदास' प्रभु प्यारी राधा, चतुर दिननि की थोरी॥ १६६० ॥

राग आसावरी ॥ २५७६ ॥

अहो सही तुम ऐसी हौ।
अब लौं तुम कुलटी करि जानति, मोकौं री सब नैसी हौ॥
अपने हौ जैसी तैसी सब, मोहूँ जानति तैसी हौ।
जोरी भली बनैगी हरि सौं, छाँह निहारी कैसी हौ॥
अब लागी मोकौं दुलरावन, प्रेम करत डरिये सी हौ।
सुनहु 'सूर' तुम्हरै छिन छिन मति, बड़ी पेट की गैसी हौ॥ १६६१ ॥

राग टोडी ॥ २५८० ॥

हँसति नारि सब घरहिं चली।
हम जानी राधा है खोटी, हम खोटी राधिका भली॥
इततै जुवति जाति जमुना जे, तिनकौं मग मैं परखि रही।
स्याम कहूँ तै आइ कढ़े ह्वाँ, चले गए उत टेरत ही॥
इतनी तबहि नही हम जानी, झूठै ही सब आनि गही।
'सूर' स्याम अपनै रँग आए, हम बासौं नहि भली कही॥ १६६२ ॥

राग बिलावल ॥ २५८१ ॥

राधा स्यामसनेहिनी, हरि राधानेही।
राधा हरि कै तन बसै, हरि राधादेही॥

राधा हरि कै नैनन मैं, हरि राधा नैननि।
कुज भवन रति जुद्ध कौ, जोरत वल मैननि॥
और न काहू कौं रुचै, घर घर गए दोऊ।
मातुपिता सतिभाइ सौं, यह जानै न कोऊ॥
कैसेहुँ करि करि दिन गयौ, निसि कटत न क्यौ हूँ।
दोउ रसविरह मगन भए, निसि भई अगौ हूँ॥
विरह सरोवर बूड़ई अँधकार सिवारा।
सुधि अवलंबन टेकही, कहुँ वार न पारा॥
तमचुर टेरि पुकारई, बूडै जनि कोऊ।
'सूर' प्रात. नौका मिली आनँद मन दोऊ॥ १९६३ ॥

राग धनाश्री ॥ २५८२ ॥

मन मृग वेध्यौ नैन बान सौं।
गूढ भाव को सैन अचानक, तकि तावयौ भृकुटी कमान सौं॥
प्रथम नाद कल घेरि निकट लै, मुरली सप्तक सुर बँधान सौं।
पाछै वक चितै, मधुरै हँसि, घात कियौ उलटे सुठान सौं॥
'सूर' सु मारग्यिा या तन कौ, घटति नही औपधी आन सौं।
ह्वैहै सुख तबही उरअतर आलिगन गिरिधर सुजान सौं॥ १९६४ ॥

राग विलावल ॥ २५८३ ॥

कान्ह उठे अति प्रातही, तलवेली लागी।
प्रिया प्रेम कैं रस भरे, रति अंतर खागी॥
स्याम उठत अवलोकि कैं, जननी तब जागी।
सुंदर वदन विलोकि कै, अँग अँग अनुरागी॥
माता पूछति सुअन कौ, वलि गई मेरे वारे।
कहा आजु अचरज कियौ, तुम उठे सवारे॥
उत्तम जल लै प्रेम सौं, सुतवदन पखारयो।
झारी जल, दँतुवनि दियौ, छवि पर तनु वारयौ॥
करी मुखारी अतुरई, नागरिरस छाके।
'सूर' स्याम ऐसी दसा, त्रिभुवन बस जाकै॥ १९६५ ॥

राग विलावल ॥ २५८४ ॥

उत वृपभानुसुता उठी, वह भाव विचारे।
रैनि विहानी कठिन सौं, मनमथ वल भारे॥
ग्रीव मुतिसरी तोरि कै, अँचरा सौं बाँध्यौ।
यहै वहानौ करि लियो, हरि मन अनुराध्यौ॥
जननि उठी अकुलाइ कै; क्यौं राधा जागी।
कहा चली उठि भोरही, सोवे न सभागी॥
अव जननी सोऊँ नहीं, रविकिरनि प्रकासी।
तुहूँ उठति काहै नही, जागे व्रजवासी॥
आपु उठी आँगन गई, फिरि घरही आई।
कव धौं मिलिहौ स्याम कौं, पल रह्यौ न जाई॥

फिरि फिरि अजिरहिं भवनही, तलवेली लागी।
'सूर' स्याम के रस भरी, राधा अनुरागी॥ १९६६ ॥

राग गुड मलार ॥ २५८५ ॥

सुता सौं कहति वृषभानुघरनी।
कहाँ तू राधिका भोर तैं फिरति है, तेरो गति मोपै नहिं जाति वरनी॥
तोरि मोतीसरी गुप्त करि धरी कहुँ, याहि मिस सकुचि रही मुख न बोलै।
मनहुँ खजन चपल चद फदा परयौ, उड़त नहि वनत इत उतहिं दोलै॥
कहा तेरी प्रकृति परी तु लाड़िली, अबहिं तैं कहाँ तू जाइगी री।
'सूर' कहै जननि बोलै नही आज तू, परुसि धरिहौं आइ खाइगी री॥
॥ १९६७ ॥

राग नट ॥ २५८६ ॥

जननी पुनि पुनि ग्रीव निहारै।
देखौ नही मुतिसरी माला, सो जनि कतहूँ डारै॥
बोलै नही बात यह सुनि रही, मन लागी मुसुकान।
अबही मोकौं खीझि पठैहै, बनिहै ह्वाँ कौं जान॥
भली वुद्धि मेरै वित आई, कृष्न प्रीति है साँची।
'सूरदास' राधिका नागरी, नागर तैं रँग राँची॥ १९६८ ॥

राग सोरठ ॥ २५८७ ॥

जननी अतिहिं भई रिसहाई।
बार बार कहै कुँवरि राधिका, मोतिसरि कहाँ गँवाई॥
बूझे तैं तोहि ज्वाब न आवै, कहा रही अरगाई।
चौरस हार अमोल गरे कौ, देहु न मेरो माई॥
कालिहि तैं रीतौ गर तेरौ, डारि कहूँ तू आई।
सुनहु 'सूर' माता रिस देखत, राधा हँसति डराई॥ १९६९ ॥

राग विलावल ॥ २५८८ ॥

सुनि री मैया काल्हिही, मोतिसरी गँवाई।
सखिनि मिलै जमुना गई, धौं उनहि चुराई॥
कीधौं जलही मैं गई, यह सुधि नहिं मेरै।
तव तैं मैं पछिताति हौ, कहति न डर तेरै॥
पलक नही निसि कहुँ लागी, मोहिं सपथ तिहारी।
इहि डर तैं मैं आजुही, अति उठी सवारी॥
महरि सुनत चकित भई, मुख ज्वाब न आवै।
'सूर' राधिका गुनभरी, काउ पार न पावै॥ १९७० ॥

राग गुड मलार ॥ २५८९ ॥

क्रोध करि सुता सौं कहति माता।
तोहिं वरजति मरी, अचगरी सिर परी, गर्व गंजन नाम है विधाता॥
तोहिं कछु दोष नहिं, भ्रमति तू जहाँ तहिं, नदी, डोगर, वनहिं पात पाता।
मातुपितु लोक की कानि मानै नही, निलज भई रहति नहि लाज गाता॥
भली नहि उन करी, सीस तोकौं धरी, जगत मैं सुता तू महर ताता।
बात सुनिहै स्रवन, भई बिनही भवन, 'सूर' डारै मारि आजु भ्राता॥
॥ १९७१ ॥

राग धनाश्री ॥ २५९० ॥

जाहु तहीं मोतिसरी गँवाई।
तबही तौ घर पैठन पैहौ, अब ऐसैं ढँग आई ॥
जो बरजौ आपुन सोई करै, दुखौ री गुन माई।
इक इक नग सत सत दामनि कौ, लाख टका दै ल्याई ॥
जाकै हाथ परयौ सो देहै, घर बैठे निधि पाई।
'सूर' सुनति री कुँवरि राधिका, तोकौ नही भलाई ॥ १९७२ ॥

राग टोड़ी ॥ २५९१ ॥

भरि भरि नैन लेति है माता। मुख तैं कछु आवे नहिं बाता ॥
रीती ग्रीव निहारति जबही। हियौ उमँगि आवत है तबही ॥
मुतिसरि तैं मुख परम विराजै। मानौ ससि पारस बिच भ्राजै ॥
मुतिसरिमाला कहाँ गँवाई। जीव बिना करिहै वह भाई ॥
जा धौं देखि कहूँ जो पावै। 'सूर' जोरि कर विधिहिं मनावै ॥
॥ १९७३ ॥

राग गुंड मलार ॥ २५९२ ॥

कहा वह मोतिसरि, जो गँवाई री।
क्या सौ और लैहौ मँगाई री ॥
वै कहा करैगी, सैति राखे री।
ता दिन तुही धौ, कितिक भाखे री ॥
नैन भरि लेति, कह, और नाही री।
छार मोतिसरि कौ मोहि रिसाही री ॥
सदूखनि भरि धरे, सो न खोलै री।
कहा मोसौ खीझि खीझि बोलै री ॥
सुता वृषभानु की हरप मनही री।
'सूर' प्रभु सैन दै बोले बनही री ॥ १९७४ ॥

राग गौरी ॥ २५९३ ॥

सुनि राधा अब तोहिं न पत्यैहौ।
और हार चौकी हमेल अब तेरैं कठ न नैहौ ॥
लाख टका की हानि करी तैं, सो जब तोसौ लैहौं।
हार बिना ल्याएँ लडबौरी, घर नहि पैठन दैहौ ॥
नातरु 'सूर' जन्म भरि तेरो, नाउँ नही मुख लैहौ ॥ १९७५ ॥

राग कल्यान ॥ २५९४ ॥

सुनि री राधा अति लड़बौरी, जमुन गई जब संग कौन ही।
बूझति नही जाइ अपननि कौं, न्हाति रही तब जौन जौन ही ॥
काकौ नाउँ धरौ तो आगै, ललिता चंद्रावली है नही।
बहुत रही सँग सखी सहेली, कहौ काहि मैं सैन सैन ही ॥
देखौ जाइ जमुनतट ही मैं, जहँ धरिकै मैं न्हाति रही हौं।
'सूर' जाइ बूझौ धौं वाकौ, ब्रजजुवती इक देखि रही ही ॥१९७६॥

राग कल्यान ॥ २५९५ ॥

जैहै कहाँ मोतिसरि मोरी।
अब सुधि भई लई वाही नैं, हँसति चली वृषभानुकिसोरी ॥
अबही मैं लीन्हे आवनि हौं, मेरैं सँग आवै जनि को री।
देखौं धौं कह करिहौ वाकौ, बडे लोग सीखत है चोरी ॥
मोकौं आजु अबेर लागि है, ढूँढौगी घर घर ब्रज खोरी।
'सूर' चली निधरक ह्वै सब सौं, चतुर राधिका बातनि भोरी ॥ १९७७ ॥

राग कल्यान ॥ २५९६ ॥

नदनँदन बार बार रवनिपथ जोहै री।
लोचन हरि करि चकोर, राधा-मुख-चंद-ओर, देखत नहिं तिमिर भोर, मनही मन मोहै री ॥
नैना दोउ भृंग रूप, वदन कमल-सरदऽनूप, तरनि कौ प्रकास मिलन विना चपल डोलै री।
लोचन मृग सुभग जोर, राग रूप भए भोर, भौंह धनुप, सरकटाच्छ. मुरति व्याध, तोलै री ॥
कीधौं ये चच्छु चार, प्यारी मुख रूप मारु, स्याम देखि रीझै, मन यहै साँच मानी री।
'सूर' स्याम-सुखद-धाम, राधा है जाहि नाम, आतुर पिय जानि गवन प्यारी अतु-रानी री ॥ १९७८ ॥

राग देवगंधार ॥ २५९७ ॥

स्याम अति राधा विरह भरे।
कबहूँ सदन, कबहूँ अँगनाई, कबहूँ पौरि खरे ॥
जननी आतुर करति रसोई, देखि देखि हरि जात।
कहा अबेर करति तू अब री, भूख लगी अति मात ॥
मैं बलि जाउँ स्याम-घन-सुंदर, अब बैठौ तुम आइ।
'सूर' सखा सँग सबै बुलावहु, हलधर नहीं बल्याइ ॥ १९७९ ॥

राग बिलावल ॥ २५९८ ॥

महरि कह्यौ नँदलाड़िले सँग सखा बुलावहु।
करैं कलेऊ आइकैं, हलधरहूँ चलावहु ॥
हलधर लयौ बुलाइ के, मोहन करि आदर।
दाऊ जू चलि जेंइयै, यह कहि मन सादर ॥
कान्ह जाइ तुम जेंवहु, मोकौं रुचि नाही।
सखा संग हरि लै गए, बेठे इकठाही ॥
पटरस व्यंजन को गनै, बहु भाँति रसोई।
सरस कनिक बेसन मिलै, रुचि रोटी पोई ॥
प्रेम सहित परुसन लगी, हलधर की माता।
ग्वाल सखा सब जोरि कै, बैठे नंदताता ॥
सखा सबै जेवन लगे, हरि आयसु दीन्हौ।
'सूरदास' प्रभु आपहूँ कर कौर जु लीन्हौ ॥ १९८० ॥

राग आसावरी ॥ २५९९ ॥

नंद-महर-घर के पिछवारैं, राधा आइ बतानी।
मनौ अब-दल-मौर देखि के, कुहुकी कोकिल बानी ॥

झूठेहिं नाम लेति ललिता कौ, काहै जाहु परानी।
वृंदावन मग जाति अकेली, सिर लै दही मथानी॥
मैं बैठी परखति ह्वाँ रैहौं, स्याम तवहिं तिहिं जानी।
कोक-कला-गुन-आगरि नागरि, 'सूर' चतुरई ठानी॥ १६८१ ॥

राग रामकली ॥ २६०० ॥

स्याम सखा जेवत ही छाड़े।
कर कौ कौन डारि पनवारै, आपु चले अति चाँडे॥
चकित भई देखत जननी दोउ, चकित भए सब ग्वाल।
अति-आतुर तुम चले कहाँ हौ, हमहि कहौ गोपाल॥
अबही एक सखा यह कहि गयौ, गाइ रही वन व्याइ।
सुनहु 'सूर' मैं जेवन बेठ्यौ, वह सुधि गई भुलाइ॥ १६८२ ॥

राग ललित ॥ २६०१ ॥

धौंरी मेरी गाइ वियानी।
सखनि कह्यौ तुम जेवहु बैठे, स्याम चतुरई ठानी॥
गाइ नही ह्वाँ बछरा नाहीं, ह्वैहै गधा रानी।
सखा हँसत मनही मन कहिकहि, ऐसे गुननि निधानी॥
जननी भेद नहीं कछु जानै, बार बार अकुलानी।
'सूर' स्याम भूखौ उठि धायौ, मरै न गाइ वियानी॥ १६८३ ॥

राग कल्यान ॥ २६०२ ॥

सैन दै नागरी गई वन कौं।
तवहिं कर कौर दियौ डारि, नहिं रहि सके, ग्वाल जेवत तजे मोह्यौ उनकौं॥
चले अकुलाइ वन धाइ, व्याई गाइ देखिहौ जाइ, मन हरप कीन्हौ।
प्रिया निरखति पथ, मिलै कव हरि कंत, गए इहिं अंत हँसि अंक लीन्हौ॥
अतिहिं सुख पाइ अतुराइ मिले धाइ दोउ, मनौ अति रंक नवनिधिहिं पाई।
'सूर' प्रभु की प्रिया राधिका अति नवल, नवल नँदलाल के मनहिं भाई॥
॥ १६८४ ॥

राग धनाश्री ॥ २६०३ ॥

पिछवारै ह्वै वोलि सुनायौ।
कमलनयन हरि करत कलेऊ, कर नाहिंन आनन लौ आयौ॥
गाइ एक वन व्याइ रही है, याही मिस आतुर उठि धायौ।
वेनु न लियौ, लकुट नहि लीन्ही, हरवराइ कोउ सखा न बुलायौ॥
चौंकि परे चकित ह्वै जित तित, सत्य आहि की सुपन भुलायौ।
फूरे फिरत अंक नहि मावत, मानहुँ सुधाकिरनि छवि छायौ॥
मिलि बैठे संकेत-लता-तर, कियौ सबै जितनौ मन भायौ।
'सूरदास' सुंदरी सयानी, उलटि अंक गिरिधर पर नायौ॥ १६८५ ॥

राग देवगंधार ॥ २६०४ ॥

दोऊ राजत रति-रन-धीर।
महा सुभट प्रगटे भूतल वृपभानुसुता वलवीर॥

भौंहें धनुप चढाइ परस्पर, सजे कवच तनुचीर।
गुन संधान निमेप घटत नहिं छुटे कटाच्छनि तीर॥
नख नेजा आकृत उर लागै नैकु न मानत पीर।
मुरली धरनि डारि आयुध लौं, गहे सुभुज भटभीर॥
प्रेम समुद्र छाँडि मरजादा, उमँगि मिले तजि तीर।
करत विहार दुहूँ दिसि तैं मन, सीचत सुधा सरीर॥
अति वल जोवनघाइ रुचिर रचि वंदन मिलि स्रग नीर।
'सूरदास' स्वामी अरु प्यारी, विहरत कुंज कुटीर॥ १९८६ ॥

राग कान्हरौ ॥ २६०५ ॥

नवल निकुंज नवल नवला मिलि, नवल निकेतन, रुचिर बनाए।
विलसत विपिन विलास विविध वर, वारिज वदन विकच सचु पाए॥
लागत चंद्रमयूख सु तियतनु, लता-भवन-रंध्रनि मग आए।
मनहुँ मदनवल्ली पर हिमकर, सींचत सुधाधार सत नाए॥
सुनि सुनि सुचित स्रवन जिय सुंदरि, मौन किये मोदति मन लाए।
'सूर' सखी राधामाधव मिलि क्रीड़त रति रतिपतिहिं लजाए॥१९८७॥

राग कल्यान ॥ २६०६ ॥

हरपि पिय प्रेम तिय अंक लीन्ही।
प्रिया विनु वसन करि, उलटि धरि भुजनि भरि, सुरति रति पूरि, अति निवल कीन्ही॥
आपनै करनखनि अलक कुरवारही, कबहुँ बाँधैं अतिहिं लगत लोभा।
कबहुँ मुख मोरि चुंबन देत हरप ह्वै अधर भरि दसन वह उनहिं सोभा॥
बहुरि उपज्यौ काम, राधिकापति स्याम, मगन रसताम नहिं तनु सम्हारैं।
'सूर' प्रभु नवल-नवला, नवल कुंज गृह, अंत नहि लहत दोउ रति विहारैं॥
॥ १९८८ ॥

राग नट ॥ २६०७ ॥

नागर स्याम नागरि नारि।
सुरत-रति-रन जीति दोऊ, अंग मनमथ धारि॥
स्याम तनु घन नील मानौ, तड़ित तनु सुकुमारि।
मनौ मरकत कनक संजुत, सच्यौ काम सँवारि॥
कोकगुन करि कुसल स्यामा, उत कुसल नँदलाल।
'सूर' स्याम अनंग नायक, बिवस कीन्ही बाल॥ १९८९ ॥

राग मलार ॥ २६०८ ॥

(उलहरि आयौ) सीतल बूँद पवन पुरवाई।
जहाँ तहाँ तैं उमडि घुमडि घन, कारी घटा चहूँ दिसि धाई॥
भीजत देखी राधा माधव, लै कारी कामरी उढाई।
अति जल भीजि चीरवर टपकत और सबै टपकत अँबराई॥
काँपत तन तिय कौ, पिय हँसि कै, भुज भरि अपनै कंठ लगाई।
ह्वै इकठौर 'सूर' प्रभु प्यारी, रहे उपरना बीच समाई॥ १९९० ॥

राग मलार ॥ २६०९ ॥

दीजे कान्ह काँधे कौ कंवर।
नान्ही नान्ही बूँदनि बरपन लाग्यौ, भीजत कुसुँभी अंबर॥

वार वार अकुलाइ राधिका, देखि, मेघ आडवर।
हँसि हँसि रीझि वैठि रहे दोऊ, ओढ़ि सुभग पीतवर।।
सिव सनकादिक नारद सारद, अत न पावै तुवर।
'सूर' स्याम गति लखि न परति कछु, खात ग्वालसँग सबर।। १९९१ ।।

राग मलार ।। २६१० ।।

भीजत कुंजनि मै दोउ आवत।
ज्यौ ज्यौ बूँद परति चूनरि पर, त्यौ त्यौ हरि उर लावत।।
तैसे मोर कोकिला बोलत, पवन बीजु घन धावत।
लै मुरली कर मंद घोर सुर, राग मलार बजावत।।
अधिक झकोर जवै मेघनि की, द्रुम तिरछनि विरमावत।
वै हँसि ओट करत पीतांवर, ये चूनरी उढावत।।
भीजे राग रागिनी दोऊ, भीजै जल छवि पावत।
'सूरदास' प्रभु रीझि परस्पर, प्रीति अधिक उपजावत।। १९९२ ।।

राग विभास ।। २६११ ।।

स्यामा स्याम सौ अति रति कीनी।
स्रमजल बुंद वदन यौ राजति, मनु ससि पर मोतिनि लर दीनी।।
मुक्तामाल टूटि यौ लागति, जनु सुरसरी अधोगति लीनी।
'सूरदास' मनहरन रसिक वर, राधा सग सुरनिरस भीनी।।१९९३।।

राग गौरी ।। २६१२ ।।

सुरति अत वैठे वनवारी।
प्यारीनैन जुरत नहि सन्मुख, सकुचि हँसत गिरिधारी।।
वसन सम्हारत लगे दोऊ तन, आनँद उर न समाइ।
चितवत दुरि दुरि नैन लजौहै, सो छवि वरनि न जाइ।।
नागरि अग मरगजी सारी, कान्ह मरगजे अंग।
'सूरज' प्रभु प्यारी वस कीन्ही, हावभाव रतिरग।। १९९४ ।।

राग सोरठ ।। २६१३ ।।

रीझे स्याम नागरी छवि पर।
प्यारी एक अग पर अँटकी, यह गति भई परस्पर।।
देह दसा की सुधि नहिं काहूँ, नैन नैन मिलि अँटके।
इदीवर राजीव कमल पर, जुग खजन जनु लटके।।
चकित भए तनु की सुधि आई, वनही मै भई राति।
'सूर' स्याम स्यामा विहार कियौ, सो छवि की इक भाँति।। १९९५ ।।

राग आसावरी।। २६१४ ।।

कान्ह कह्यौ वन रैनि न कीजै, सुनहु राधिका प्यारी।
अति हित सौ उर लाइ कह्यौ, अव भवन आपनै जा री।।
मातुपिता जिय जानै न कोऊ, गुप्त-प्रीति-रस भारी।
कर तै कौर डारि मै आयौ, देखत दोउ महतारी।।
तुम जैसी मोहिं प्यारी लागति, चद चकोर कहा री।
'सूरदास' स्वामी इन वातनि, नागरि रिझई भारी।। १९९६ ।।

राग कल्यान ॥ २६१५ ॥

प्यारी उठि पिय कैं उर लागी।
आलस अंग, लटकि लट छूटी, देखि स्याम बड़भागी॥
सुरति मौन निसि बीती मानौ, हँसनि प्रात भयौ जागी।
अति सुख कंठ लगाइ लई हरि, अरस परस अनुरागी॥
नूतन मेघ, नवेली दामिनि, सहज भेंटि मिलि पागी।
'सूरदास' प्रभु कौ अंकम भरि, कामद्वंद तनु त्यागी॥ १९९७ ॥

राग गौरी ॥ २६१६ ॥

कहा करौ पग चलत न घर कौं।
नैन बिमुख जन देखे जात न, लुवधे अरुन अधर कौ॥
स्रवन कहत वै वचन सुने नहि, रिस पावत मोपर कौ।
मन अँटक्यौ रस मधुर हँसनि पर, डरत न काहू डर कौ॥
इद्री अंग अंग अरुझानी, स्याम रंग नटवर कौ।
सुनहु 'सूर' प्रभु रही अकेली, कहा कहौ सुंदर वर कौ॥ १९९८ ॥

राग गौरी ॥ २६१७ ॥

स्याम आपनी चितवनि वरजौ, अरु मुख की मुसुकानि।
तुम्हरैं तनक सहज कैं कारन, सहियत सर्वस हानि॥
इजैं विजैं दोऊ आपस मै निरए विधना आनि।
विद्यमान सवही इनि देखत, वस करिवे की वानि॥
आपुनही डहकाइ अनुनपौ, कहियत कहा वखानि।
'सूरज' सुगथ गँवाइ गाँठि कौ, रही वौरई मानि॥ १९९९ ॥

राग गौरी ॥ २६१८ ॥

नैननि निरखि वसीठी कीन्ही, मने मिलयौ पल पानि।
गहि रतिनाथ लाज निजपुर तैं, हरि कौ सौंपी आनि॥
सुनि सिख करति नंदनंदन की दासी सब जग जानि।
जोइ जोइ कहत, करति सोई सोइ आयसु माथै मानि॥
गई जाति, अभिमान, मोह, मद, पति-परिजन-पहिचानि।
'सूर' सिंधु सरिता मिलि जैसैं, मनसा बूँद हिरानि॥ २००० ॥

राग बिहागरौ ॥ २६१९ ॥

अति हित स्याम बोले वैन।
तुव बदन देखे विना ये, तृप्त होत न नैन॥
पलक नहि चित तैं टरति तुम, प्रानवल्लभ नारि।
सुनत स्रवननि वचन अमृत, हरष अंतर भारि॥
मातुपितु अवसेरि करिहैं, गवन कीजै गेह।
'सूर' प्रभु प्रिय त्रिया आगैं, प्रगटयौ पूरन नेह॥ २००१ ॥

राग विहागरौ ॥ २६२० ॥

स्याम प्रगट कीन्हौ अनुराग।
अति आनंद मनहि मन नागरि वदति आपने भाग॥
सुंदर घन उन व्रजहि सिधारे, इतहिं गमन कियौ नारि।
दंपति नैन रहे दोउ भरि भरि, गए सुरति रति सारि॥

जननी मन अवसेर करति ही, हरि पहुँचे तिहिं काल।
'सूर' स्याम कौ मातु अंक भरि, कहति जाउँ वलि लाल॥ २००२ ॥

राग ईमन ॥ २६२१ ॥

मैं बलि जाउँ कन्हैया की।
करतें कौर डारि उठि धायौ, 'बात गुनी गैया की'॥
धौरी गाइ आपनी जानी, उपजो प्रीति सवैया की।
तातैं जल ममोइ पग धोवति, स्याम देखि हित मैया की॥
जो अनुराग जसोदा कैं उर, मुख की वहनि नन्हैया की।
यह सुख 'सूर' और कहुँ नाही, सौंह करत वल भैया की॥ २००३ ॥

राग ईमन ॥ २६२२ ॥

(कान्ह प्यारे) वारी स्याम सुंदर मूरति पर।
छवि सौं लट लटकी मुख ऊपर, राजत मुरली सुभग भरे कर॥
सुदर नैन विसाल भौह घन, तिलक विराजत ललित भाल पर।
'सूरज' स्याम बन्यौ अति बानक, बनमाला उर, कटि पीतांबर॥ २००४ ॥

राग विहागरी ॥ २६२३ ॥

वह तौ मेरी गाइ न होइ।
सुनि मैया विरथा भरम्यौ, वन देख्यो नैननि भरि जोइ॥
वृंदावन ढूंढ्यौ जमुनातट, देख्यौ वन डीगरनि मँझारि।
सखा सग कोउ नही अकेली, काँध कमरि, कर लकुटी धारि॥
वह तौ धेनु और काहू की, जुवती एक मिली धौं कौन।
'सूर' सग मेरै वह आई, मोकौ उहि पहुँचायौ भौन॥ २००५ ॥

राग रामकली ॥ २६२४ ॥

राधा अतिहि चतुर प्रवीन।
कृष्ण कौ सुख दे चली हँसि, हंसगति कटि छीन॥
हार कै मिस इहाँ आई, स्याममनि कै काज।
भयौ सव पूरन मनोरथ, मिले श्रीब्रजराज॥
गाँठि आचर छोरि कै, मोतिसरी लीन्ही हाथ।
सखी आवनि देखि राधा, लई ताकौ साथ।
जुवति बूझति कहाँ नागरि. निसि गई इक जाम।
'सूर' व्यौरो कहि सुनायौ, मै गई तिहि काम॥ २००६ ॥

राग कान्हरौ ॥ २६२५ ॥

ऐसी री निधरक तू राधा।
ब्रज घर घर वन वन डोली तू, नही कियो कहुँ वाधा॥
मोकौं सग बोलि तू लेती, करनी करी अगाधा।
प्रातहि तैं तू अव आवति है रैनि जाम लगि आधा॥
पायौ हार किधौ पुनि नाही, देखौ री मोहि साधा।
आँचर हेरि, ग्रीव दिखरायो, दामनि मोल उपाधा॥
मन मन कहति वात यह मिलवति, गई स्यामअवराधा।
'सूर' सखी लखि लीन्ही ताकौ, यह तो है कछु वाधा॥ २००७ ॥

राग धनाश्री ॥ २६२६ ॥

कहि राधा किन हार चुरायौ।
ब्रज जुवतिनि सबहिनि मैं जानति, लै लै नाम बतायौ॥
स्यामा, कामा, चतुरा, नवला, प्रमदा, सुमदा नारि।
सुखमा, सीला, अवधा, नदा बृंदा, जमुना सारि॥
कमला, तारा, बिमला, चंदा, चंद्रावलि सुकुमारि।
अमला, अवला, कजा, मुकुता, हीरा, नीला प्यारि॥
सुमना, बहुला, चंपा, जुहिला, ज्ञाना, भाना भाउ।
प्रेमा, दामा, रूपा, हंसा, रंगा हरपा जाउ॥
दुर्गा, रंभा, कृष्ना, ध्याना, मैना, नैना रूप।
रत्ना, कुसुमा, मोहा, करुना, ललना, लोभाऽनूप॥
इतननि मैं कहि कौनैं लीन्हौ, ताकौ नाउँ बताउ।
'सूर' स्याम है चोर तिहारे, मै जानति सब दाउ॥ २००८ ॥

राग संकराभरन ॥ २६२७ ॥

सुरति मानि आई पिया पै तैं, तैं री गजपति गामिनि।
मरगजे हार बार बिछुरे है गई जाम इक यामिनी॥
औरहि सोभा अंग अंग की, बोलति है अलसायिनी।
'सूरदास' प्रभु छबि निरखति रही, रसबस ह्वै, धनि भामिनी॥ २००९ ॥

राग कान्हरौ ॥ २६२८ ॥

लटैं उघरारी रही छूटि छूटि आनन तैं, भींजी है फुलेलनि सौं आली हरि संग केलि।
सौ धैं अरगजा अरु मरगजी मागे अंग, कहूँ दरकी कुचनि पर अँगिया नवेलि॥
नैन अरसात अरु बैनहू अटपटात, जाति ऐंडाति गात गोरि बहियानि भेलि॥
'सूर' प्रभु प्यारी प्यारे संग करि रंगरास, अरस परस दोऊ अंकम धर्यौ है मेलि।
॥ २०१० ॥

राग ललित ॥ २६२९ ॥

डगमगात ऐंडात जँभावत आई रगमगी रँग भरि कै।
चद उदौ मुख पेखि री दर्पन, पीक लीक नैननि छबि परि कै॥
बिथुरी अलक सुथरे आनन पर, अति आनंद भरा उर हरि कै।
'सूरज' रसिकराइ रसबस किये नवला नवल रीझे मन हरि कै॥ २०११ ॥

राग बिलावल ॥ २६३० ॥

सुनि री राधा अबहि नई।
बातैं कहा बनावति मोसौं, हमहूँ तैं तू चतुर भई॥
कहाँ ग्वाल, कहँ हार तुम्हारौ, कहाँ कहाँ तू आजु गई।
मनही जानि लेहि मै जान्यौ, जाकैं रँग तू सदा रई॥
तेरे गुन परगट करिहौ मै, ऐसी री कबहूँ न भई।
'सूर' स्याम सँग जब तैं कीन्ही, तब ही तैं मैं जानि लई॥ २०१२ ॥

राग बिलावल ॥ २६३१ ॥

इन बातनि कछु पावति री।
बिनु देखैं लोगनि सौं सुनि सुनि, काहे बेर बढ़ावति री॥

मोकौ जहाँ अकेली देखति, तबहि बात उपजावति री।
ब्रजजुवतिनि की संगति त्यागौ पुनि पुनि क्रोध करावति री।।
कैसी बुद्धि तुम्हारी सबको, ऐसी तुमको भावति री।
'सूर' सीस तृन दै बूझति हौं, कहति तुमहु कहनावति री।। २०१३।।

राग गुंड मलार।। २६३२।।

करति अवसेर वृषभान नारी।
प्रात तै गई, बासर गयौ बीति सब, जाम निसि गई, धौं कहाँ बारी।।
हार कै त्रास मै कुँवरि त्रासी बहुत, तिहि डरनि अजहुँ नहि सदन आई।
कहाँ मै जाउँ, कहू धौ रही रूसि कै, सखिनि सौ कहति कहुँ मिली माई।।
हार बहि जाइ, अति गई अकुलाई कै, सुता कै नाउँ इक वहै मेरैं।
'सूर' यह बात जौ सुनै अबही महर, कहैगे मोहि ये ढंग तेरे।। २०१४।।

राग सोरठ।। २६३३।।

राधा डर डराति घर आई।
देखत ही कीरति महतारी, हरषि कुँवरि उर लाई।
धीरज भयौ सुता माता जिय, दूरि गयौ तन सोच।
मेरी कौ मैं काहै त्रासी, कहा कियो यह पोच।।
लै री मैया हार मोतिसरी, जा कारन मोहि त्रासी।
'सूर' राधिका के गुन ऐसे, मिलि आई अबिनासी।। २०१५।।

राग बिहागरी।। २६३४।।

परम चतुर वृषभानु दुलारी।
यह मति रची कृष्न मिलिबे की, परम पुनीत महा री।।
उत सुख दियौ नदनदन कौ, इतहि हरष महतारी।
हार इतौ उपकार करायौ, कबहुँ न उर तै टारी।।
जे सिव-सनक-सनातन दुर्लभ, ते बस किये कुमारी।
'सूरदास' प्रभुकृपा अगोचर, निगमनि हू तै न्यारी।। २०१६।।

राग मारू।। २६३५।।

निगम तै अगम हरि कृपा न्यारी।
प्रीति बस स्याम है राव कै रंक कोउ, पुरुष कै नारि नहि भेद कारी।।
प्रीति बस देवकीगर्भ लीन्हौ बास, प्रीति कै हेत ब्रज बेष कीन्हौ।
प्रीति कै हेतु जसुमति-पय-पान कियौ, प्रीति क हेतु अवतार लीन्हौ।।
प्रीति कै हेतु बन धेनु चारत कान्ह, प्रीति कै हेतु नँदसुवन नामा।
प्रीति कै हेतु सूरज प्रभुहि पाइयै, प्रीति कै हेतु दोउ स्याम स्यामा।। २०१७।।

राग मारू।। २६३६।।

प्रीति के बस्य ये है मुरारी।
प्रीति के बस्य नटवर सुभेषहि धरयौ, प्रीति बस करज गिरिराज धारी।।
प्रीति के बस्य ब्रज भए माखनचोर, प्रीति के बस्य दाँवरि बँधाई।
प्रीति के बस्य गोपीरमन नाम प्रिय, प्रीतिबस जमल तरु मोच्छदाई।।
प्रीतिबस नदबंधन बरुनगृह गए, प्रीति के बस्य बनधाम कामी।
प्रीति के बस्य प्रभु 'सूर' त्रिभुवन बिदित, प्रीतिबस सदा राधिका स्वामी।। २०१८।।

राग भैरव ॥ २६३७ ॥

स्याम भए बस नागरि कैं।
नैन कटाच्छ बंक अवलोकनि ,रीझे घोष उजागरि कैं ॥
चित मधुकर, रस कमल कोस कौ, प्यारी बदन सुधागरि कौ।
लोक-लाज-संपुट नहिं छूटत ,फिर फिर आवत वागरि कौं ॥
मिलन प्रकास मनावत मन मन कहा कहौ अनुरागरि कौं।
'सूर' स्याम बस वाम भए है, धनि ऐसी बड़भागरि कौ ॥ २०१९ ॥

राग आसावरी ॥ २६३८ ॥

स्याम भए वृषभानु-सुता-बस, और नही कछु भावै (हो)।
जो प्रभु तिहूँ भुवन कौ नायक, सुर मुनि अंत न पावै (हो) ॥
जाकौ सिव ध्यावत निसिवासर, सहसानन जिहि गावै (हो)।
सो हरि राधा-वदन-चद कौ. नैनचकोर त्रमावै (हो) ॥
जाकौ देखि अनग अनगत, नागरि छवि भरमावै (हो)।
'सूर' स्याम स्यामाबस ऐसै, ज्यौं सँग छाँह डुलावै (हो) ॥ २०२० ॥

राग जैतश्री ॥ २६३९ ॥

कवहुँ स्याम जमुना तट जात।
कवहूँ कदम चढ़त मग देखत. राधा विनु अतिही अकुलात ॥
कवहुँ जात वन कुंजधाम कौं, देखि रहत नहि कछू सुहात।
तव आवत वृषभानुपुरा कौ, अति अनुराग भरे नँदतात ॥
प्यारी हृदय प्रगटही जानति, तव वह मनहीं माँझ सिहात।
'सूरदास' नागरि के उर मैं, निवसे नागर स्यामल गात ॥ २०२१ ॥

राग गूजरी ॥ २६४० ॥

राधा स्याम स्याम राधा रँग।
पिय प्यारी कौ हिरदै राखत, प्यारी रहति सदा हरि कै सँग ॥
नागरि नैन चकोर वदन ससि, पिय मधुकर अंवुज सुंदरिमुख।
चाहत अरस परस ऐसैं करि, हरि नागरि, नागरि नागर सुख ॥
सुख दुख सोचि रहत मनही मन, तव जानत तन कौ यह कारन।
सुनहु 'सूर' कुलकानि जानि, दुख सुख दोऊ फल करत विचारन ॥ २०२२ ॥

राग सूही बिलावल ॥ २६४१ ॥ यमुनागमन ; युगलसमागम

जमुना चली राधिका गोरी।
जुवति-वृंद-बिच चतुर नागरी, देखे नदसुवन तिहिं खोरी ॥
व्याकुल दसा जानि मोहन को, मनही मन डरपी उन ओरी।
चतुर-धाम-फँग परे कन्हाई अव धौं इनहिं बुझावै को री ॥
इत सखियनि सौं बात बनावति, अति ह्वै गई तनक सी मोरी।
'सूर' हरिहिं उत भाव बतावति, धीर धरौ मिलिहै दोउ जोरी ॥ २०२३ ॥

राग जैतश्री ॥ २६४२ ॥

तव राधा इक भाव बतावति।
मुख मुसुकाइ सकुचि पुनि सहजहिं, चली अलक सुरझावति ॥
एक सखी आवति जल लीन्हे तासौं कहति सुनावनि।
टेरि कह्यौ मेरै घर जैहौ, मैं जमुना तै आवति ॥

तव सुख पाइ चले हरि घर कौ, हरि प्रियतमहि मनावति ।
'सूरज' प्रभु वितपन्न-कोक-गुन, तातैं हरि हरि ध्यावति ॥ २०२४ ॥

राग धनाश्री ॥ २६४३ ॥

स्याम कौ भाव दै गई राधा ।
नारि नागरिनि काहूँ लख्यौ, कोउ नही, कान्ह कछु करत है बहुत्रनुराधा ॥
चितै हरि वदन याको हँसत मैं लखी, वे उतहि गए कछु हरप कीन्हे ।
भावते भाव के सीग नाही सुने, ये महा चतुर चतुरई लीन्हे ॥
आजुहीं रैनि दोउ सग ये मिलैंगे, हरैं कहि परस्पर मनहि जानी ।
'सूर' व्रज नागरी नारि नागरिनि सँग, फिरी व्रज तुरत लै जमुनपानी ॥ २०२५ ॥

राग टोड़ी ॥ २६४४ ॥

भाव दियौ आवैंगे स्याम ।
अंग अग आभूषन साजति राजति अपनैं धाम ॥
रति रन जानि अनंग नृपति सौ, आपु नृपति बल जोरति ।
अति सुगध, मरदन अँग अगनि, बनि बनि भूपन सौरति ॥
वीरा-हार-चीर-चोली-छवि, सैना साजि सिगार ।
पान बचन संन्नाह कवच दै, जोरे 'सूर' अपार ॥ २०२६ ॥

राग कान्हरौ ॥ २६४५ ॥

प्यारी अंग सिगार कियौ ।
वेनी रची सुभग कर अपनैं, टीका भाल दियौ ॥
मोतिनि माँग सँवारि प्रथमही, केसरि आड सँवारि ।
लोचन आँजि, स्रवन तरिवन छवि, को कवि कहै निवारि ॥
नासा नथ अतिही छवि राजति, अधरनि वीरा रग ।
नव सत साजि चीर चोली वनि, 'सूर' मिलन हरि सग ॥ २०२७ ॥

राग कल्यान ॥ २६४६ ॥

नागरि नागरपंथ निहारै ।
उदै वालससि अस्त भयौ रवि, जिय जिय यहै विचारै ॥
कीधौ अवही आवत ह्वै है, की आवन नहि पैहै ।
मातुपिता की त्रास उतहि, इत मेरे घरहि डरैहै ॥
अगसिंगार स्यामहित कीन्हे, वृथा होन ये चाहत ।
'सूर' स्याम आवै की नाही, मन मन यह अवगाहत ॥ २०२८ ॥

राग विहागरौ ॥ २६४७ ॥

राधा रचि रचि सेज सँवारति ।
तापर सुमन सुगंध विछावति, वारबार निहारति ॥
भवन गवन करिहैं हरि मेरैं हरपि दुखहि निरुवारति ।
आवैं कवहुँ अचानक ही कहि, सुभग पाँवडे डारति ॥
इहि अभिलाखहि मै हरि प्रगटे, निरखि भवन सकुचानी ।
वह सुख श्रीराधा माधौ कौ, 'सूर' उनहि जिय जानी ॥ २०२९ ॥

राग विहागरौ ॥ २६४८ ॥

कहा कहौं सुख कह्यौ न जाइ ।
वह अभिलाख स्याम की आवनि, दोउनि उर आनँद न समाइ ॥

द्वादस कान्ह, द्वादसी आपुन, वह निसि, वह हरि-राधा जोग।
वह रस की झमकनि, वह महिमा, वह मुसुकनि, वैसो संजोग ॥
वै हित बोल परस्पर दोऊ, ठठकनि कहत प्रेम सकुचानि।
'सूर' स्याम कर वाम भुजा धरि, उछँग लई वह सुख पहिचानी ॥२०३०॥

राग कान्हरौ ॥ २६४६ ॥

स्याम सकुच प्यारी उर जानी।
लई उछंग वाम भुज भरि कै, वार वार कहि वानी ॥
निरखति सकुनि बदन हरि प्यारी, प्रेम सहित जहरानी।
करत कहा पिय अति उताइली, मैं कहुँ जाति परानी ॥
कुटिल कटाच्छ वंक करि भ्रुकुटी, आनन मुरि मुसुकानी।
'सूर' स्याम गिरिधर रतिनागर, नागरि राधा रानी ॥ २०३१ ॥

राग बिहागरौ ॥ २६५० ॥

नागरि नागर करत बिहार।
काम नृपति सैना दुहुँ अगनि, सोभा वार न पार ॥
अधर अधर, नैननि नैननि, भ्रुव भाल कियौ इक ठौर।
मनु इंदीवर कमल कुसेसय, चारि भँवर रँग और ॥
बदन भाल चिन्ह सन दोऊ, अरस परस वर नारि।
मनु विवि चद चकोर परस्पर, कमल अरुन रवि धारि ॥
रति आगम हित अति उपजायौ, पिय प्यारी मन एक।
'सूरदास' स्वामी स्वामिनि मिलि, कोककलानि अनेक ॥ २०३२ ॥

राग गुंड मलार ॥ २६५१ ॥

स्याम स्यामा परम कुसल जोरी।
मनौ नव जलद पर दामिनी की कला, सहज गति मेटि अति भई भोरी ॥
अलक आकुल विथुर स्याम मुख पर रही, मनौ बल राहु ससि घेरि लीन्हौ।
चितै मुख चारु चुम्बन करत सकुच तजि, दसन छत अधर पिय मगन दीन्हौ ॥
परत स्मवुंद टप टपकि आननवाल, भई बेहाल रतिमोह भारी।
विधु परसि दत विध्वंत अंमृत चुवत, 'सूर' विपरीत रति पीउ प्यारी ॥
॥ २०३३ ॥

राग कुरंग ॥ २६५२ ॥

कुज के निकट सुरतनिरत कजसेज राजै सुख गात।
टूटि गई तनी चोली दरकि तरकि गई, चारयौ जाम रजनी विहानी भयौ प्रात ॥
आरस सौं उठि बैठै अरस परस दोऊ दपति अतिहिं मन मन मुसुकात।
'सूर' आस पूरी स्यामास्याम वनी जोरी निसि-रस-सुधि आए नैन नैननि लजात ॥
॥ २०३४ ॥

राग ललित ॥ २६५३ ॥

राजत दोउ रति-रंग-भरे।
सहज प्रीति विपरीत निसा वस आलस सेज परे ॥
अति रनवीर परस्पर दोऊ, नैकुहुँ कोउ न मुरे।
अंग अंग बल अपने अस्त्रनि, रतिसग्राम लरे ॥
मगन मुरछि रहे सेज खेत पर, इत उत कोउ न डरे।
'सूर' स्याम स्यामा रति तन तैं, इक पग पल न टरे ॥ २०३५ ॥

राग विभास ॥ २६५४ ॥

स्यामा स्याम सेज उठि बैठे, अरस परस दोउ करत बिहार ।
उन उनकी पहिरी मोतिमाला, उन पहिरयौ उन नौसरि हार ॥
लटपट पेच सँवारति प्यारी, अलक सँवारत नंदकुमार ।
'सूरदास' प्रभु नागर नागरि, बिपरित भूषन करत सिंगार ॥ २०३६ ॥

राग ललित ॥ २६५५ ॥

करि सिंगार दोऊ अरसाने ।
प्रथम बोल तमचुर सुनि हरषे, पुनि पौढे दोऊ लपटाने ॥
रति-रन-जुद्ध जाम त्रय नीकैं, सेज परे, पुनि उठि मुरझाने ।
मानौ 'सूर' खेत मम लरिकै, गिरत उठे फिरि गिरत लजाने ॥ २०३७ ॥

राग ललित ॥ २६५६ ॥

बोले तमचुर, चारयौ जाम कौ गजर मारयौ, पौन भयो सीतल, तमि तैं तमता गई ।
प्राची अरुनानी, भानु किरनि उज्यारी नभ छाई, उडुगन चंद्रमा मलीनता लई ॥
मुकुले कमल, बच्छ बधन बिछोह्यौ ग्वाल, चरैं चली गाइ, द्विज पैती कर कौ दई ।
'सूरदास' राधिका सरस बानी बोलि कहै, जागौ प्रान प्यारे जू सवारे की समै भई ॥
॥ २०३८ ॥

राग विभास ॥ २६५७ ॥

चिरई चुहचुहानी, चंद की ज्योति परानी, रजनी बिहानी, प्राची पियरी प्रवान की ।
तारिका दुरानी, तम घटयौ, तमचुर बोले, स्रवन भनक परी ललिता के तान की ॥
भृंग मिले भारजा, बिछुरी जोरी काक मिले, उतरी पनच अब काम के कमान की ।
अथवत आए गृह, बहुरि उवन भानु, उठौ प्राननाथ सहा जानमनि जान की ॥
ब्रज घर घर यहै करत चवाउ लोग, बार बार कहनि पगनि पग आन की ।
'सूरदास' प्रभु नंदसुवन सिधारौ धाम, सुनत उठनि छबि कृपा के निधान की ॥
॥ २०३९ ॥

राग बिलावल ॥ २६५८ ॥

जागियै प्रानपति रैनि बीती ।
चंद की दुति गई, यहै पीरी भई सकुच नाही दई अतिहि भीती ॥
मातुपितु बंधु, गुरुजन अबहि जानिहै, लखै जनि कहूँ यह लाज भारी ।
सखिनि आगैं नही नही सब दिन कही, मोहि घेरे रहति सबै नारी ॥
उठे मुसुकाइ, अकुलाइ, अतुराइ कै, निकसि गए स्याम ब्रज नारि जान्यौ ।
'सूर' प्रभु नंदनंदन दरस दै गए, निरखि इक टक रही पल भुलान्यौ ॥
॥ २०४० ॥

राग बिलावल ॥ २६५९ ॥

प्रगट दरस दै गए, कन्हाई ।
राधा गृह तै निकसत देखे, इन उनकी मन साध पुराई ॥
सीस मुकुट, मोतिनि उरमाला, पीतांबर पट सहज फिराई ।
स्याम बरन तनु निरखि भुलानी, अंग अंग छबि कहो न जाई ॥
करति सोच राधा मन अपनै, आलस भरे गए हरि माई ।
'सूर' स्याम निसि नैकु न सोए, यहै कहति पुनि पुनि पछिताई ॥ २०४१ ॥

राग बिलावल ॥ २६६० ॥

स्याम गए देखैं जनि कोई।
सखियनि सौं निबहन पुनि पैहौं, जिनि आगैं रस गोई ॥
देखैं आइ द्वार ह्वै नागरि, जहाँ तहाँ ब्रज नारी।
सकुचि गई जुवतिनि कैं देखत दुख कीन्हौ जिय भारी ॥
मन चिंता अतिही उपजाई, बार बार पछितानी।
'सूर' स्याम सौं प्रीति गुप्त ही, आजु सबनि इनि जानी ॥ २०४२ ॥

राग बिलावल ॥ २६६१ ॥

बार बार राधा पछितानी।
निकसे स्याम सदन मेरे तैं, इनि अँटकनि पहचानी ॥
नितही नित बूझति ये मोसौं, मैं इनपै सतराति।
अब तौ हरि परगट ही देखे, पुनि पुनि कहति लजाति ॥
इक ऐसैंहि झकझोरनि मोकौं, पायौ नीकौ दाउ।
'सूर' आजु किहि भाँति दुराऊँ, सोचति करति उपाउ ॥ २०४३ ॥

राग बिलावल ॥ २६६२ ॥

सोच परयौ मन राधिका, कछु कहत न आवै।
कछु हरषै कछु दुख करे, मन मौज बढ़ावै ॥
निसि-रस-रंगहि मैं पगी, तनु सुधि बिसरावै।
कबहुँ बिचारति निठुर ह्वै, सखि ज्वाब बनावै ॥
अबही मोकौं बूझिहैं, जुवती चतुरावै।
तिन सन्मुख कहियौ कहा, प्रभु 'सूर' मनावै ॥ २०४४ ॥

राग नट नारायन ॥ २६६३ ॥

कबहुँ मगन हरि कैं नेह।
स्याम सँग निसि सुरति कैं सुख, भूली अपनी देह ॥
जबहिं आवति सुधि सखिनि की, रहति अति सरमाइ।
तब करति हरि ध्यान हिरदै, चरन कमल मनाइ ॥
होइ ज्यौं परबोध उनकौं, मेरी पति जनि जाइ।
निदरि दरि हौं रही सबकौं, आजु लौं इहि भाइ ॥
अबहिं सब जुरि आइहैं ह्याँ, तुम बिना न उपाइ।
'सूर' प्रभु ऐसी करौ कछु, बहुरि जाहिं लजाइ ॥ २०४५ ॥

राग टोडी ॥ २६६४ ॥

ज्वाब कहा मैं दैहौं उनकौं।
की आवति अबही की छिनकहिं, चोर कहैंगी मोकौं ॥
कैसैंहू पति रहै बिधाता, अब यह करौ सम्हारि।
घेरेहि रहति दुराऊँ कब लौं, ऐसी नागरि नारि ॥
नैना भए चकोर रहत है, मुख-ससि-पूरन स्याम।
सुनहु 'सूर' यह दसा हमारी, ये सब ब्रज की बाम ॥ २०४६ ॥

राग जैतश्री ॥ २६६५ ॥

ये सब मेरैंहि खोज परी।
मैं तौ स्याम मिली नहिं नीकैं, आजु रही निसि संग हरी ॥

जुवती हैं मव दई सँवारी, घर वनहूँ मै रहति भरी ।
कैसैं धौ यह साध्र मिटैगी, कहूँ मिले जौ एक घरी ॥
प्रगट करौ तौ वनत नही कछु, लोक-सकुच-कुल-लाज मरी ।
ते परगट अवही इन देखे, 'सूरज' प्रभु ब्रजराज हरी ॥ २०४७ ॥

राग धनाश्री ॥ २६६६ ॥

तब नागरि मन हरप वढायौ ।
परम कुसल राधा हरि प्यारी, हृदय वृद्धि उपजायौ ॥
अव आवै कैसैहुँ अँग बूझै, ज्वाव मनहिं ठहरायौ ।
अति आनद पुलक तन कीन्हौ, सोच मोह बिसरायौ ॥
प्रगट गए जैसैं नँदनदन वहै, ध्यान उपजायौ ।
'सूरदास' प्रभु रूप वखानौ, इनकौ जो दरसायौ ॥ २०४८ ॥

राग ललित ॥ २६६७ ॥

राधा हरि कै गर्व भरी ।
सखियनि कौ आगम जव जान्यौ, वैठी रही खरी ॥
उत ब्रज-नारि-सग जुरि कै वै, हँसति करत परिहास ।
चलौ न जाइ देखियै री, वा राधा कौ जु उजास ॥
कैसौ वदन, सिगार कौन विधि, अग दसा भई कैसी ।
'सूर' स्याम सँग निसि रस कीन्हे, निधरक ह्वैहै वैसी ॥ २०४९ ॥

राग जैतश्री ॥ २६६८ ॥

सुनौ सखी राधा के मन की, यह करनी नहिं जान्यौ ।
जब हम जाति चली जमुना कौ, तवही मै पहिचान्यौ ॥
तवहिं सैन दै स्याम बुलाए, गृह आवन कौ भाव ।
उनके गुन धौ को नहि जानत, चतुर सिरोमनि राव ॥
सुनौ सखी अति नही कीजियै, मूँड़ परै अपनैही ।
'सूर' स्यामसुख हमहि दुरावति, आजु मिले सपनैही ॥ २०५० ॥

राग सारंग ॥ २६६९ ॥

तुम जो कहति राधिका भोरी ।
आजु रही अव कहा भुराई, कौन दिननि की थोरी ॥
जो छोटी तेई है खोटी, साजति माँजति जो री ।
वेदी भाल, नैन नित आँजति, निरखि रहति तनु गोरी ॥
चमकति चलै, वदन मटकावै, ऐसी जोवन जोरी ।
'सूर' सखी तिहि कहति अयानी, मनमोहनहिं ठगो री ॥ २०५१ ॥

राग रामकली ॥ २६७० ॥

राधा कौ मै तवही जानी ॥
अपनै कर जो माँग सँवारै, रचि रचि वेनी वानी ॥
मुख भर पान मुकुर लै देखति, तासौ कहति अयानी ।
लोचन आँजि सुधारति करजनि, छाँह निरखि मुसुकानी ॥
वार वार उरजति अवलोकनि, वा तै कौन सयानी ।
'सूरदास' जैसी है राधा, तैसी मै पहिचानी ॥ २०५२ ॥

राग गुड मलार ॥ २६७१ ॥

राधिका मदन ब्रजनारि आई ।
रही मुख मूँदि कै बचन बोलै नही, नैन की सैन दै वै बुलाई ॥
इन तबहि लखि लई, रचति है चतुरई, बुद्धि रचि कै अबहि ओर कैहै ।
चोर चोरी करै आपनै जब बल, प्रगट कैहै तुमहि नहि पत्यैहै ॥
भौंह देखौ निरखि ज्वाब दैहै कौन, तुमहुँ राखति गरब बोलि देखौ ।
'सूर' प्रभुसग तै अतिहि निधरक भई, नैन-मुख-ओर तुम नही पेखौ ॥२०५३॥

राग सूही ॥ २६७२ ॥

आजु कहा मुख मूँदि रही री ।
सुनति नही है कुँवरि राधिका, कापर रिस करि मौन गही री ॥
हमकौ यह काहै न सुनावति, हम हैं तेरी सग सखी री ।
यह कहि कहि मुसुकाति परस्पर, चतुर नारि यह तबहि लखी री ॥
कीधौ ध्यान करति देवनि कौ, कीधौ ऐसी प्रकृति परी री ।
'सूर' जबहि आवति हम तेरै, तब तब ऐसी धरनि धरी री ॥ २०५४ ॥

राग बिलावल ॥ २६७३ ॥

बार बार जुवती सबै, राधा सौ भाषै ।
तुम दुराव कत करति, हम तुमसौ नहि राखै ॥
इतनौ सोच परचौ कहा, मुख ज्वाब न आवै ।
हम तौ है तेरो सखी, सो कहि न सुनावै ॥
कछु दिन तै तेरी दसा, तनु रहति भुलाए ।
निठुर भई कापर इती, कहि 'सूर' सुभाए ॥ २०५५ ॥

राग मलार ॥ २६७४ ॥

राधिका कहति ये करति हाँसी ।
रहति मुख मुख हेरि, नैन की सैन दै, कहति मोकौ कृष्न की उपासी ॥
सुनहु री सखी मैं कहा तुमसो कहौं, कहा बूझति मोहि कहति राधा ।
आजुही प्रात इक चरित देख्यौ नयौ, तबहि तै मोहि यह भई बाधा ॥
कहौ ज्यौं एक करि देखतो नैन भरि, भोर तै भोर ह्वै रही माई ।
'सूर' प्रभु स्याम की स्यामता मेघ की, यहै जिय सोच कछु नही सुहाई ॥२०५६॥

राग रामकली ॥ २६७५ ॥

कधर की धरमेरु सखी री ।
की बग पंगति की सुक सीपज, मोर कि पोड पखी री ॥
की सुरचाप किधौ बनमाला, तडित किधौ पट पीत ।
किधौ मद गरजनि जलधर, की पग नूपुर रव नीत ॥
की जलधर की स्याम सुभग तनु, यहै भोर तै सोचति ।
'सूर' स्याम रस भरी राधिका, उमँगि उमँगि रस मोचति ॥ २०५७ ॥

राग रामकली ॥ २६७६ ॥

आजु सखी अरुनोदय मेरे, नैननि कौ धोख भयौ ।
की हरि आजु पथ इहि गवने, स्याम जलद की उनयौ ॥
की बग पाति भाँति, उर पर की मुकुत माल बहु मोल ।
कीधो मोर मुदित नाचत, की बरह मुकुट की डोल ॥

की घनघोर गँभीर प्रात उठि, की ग्वालनि की टेरनि।
की दामिनि कौंधति चहुँ दिसि, की सुभग पीत पट फेरनि ॥
की बनमाल लाल उर राजति, की सुरपति धनु चारु।
'सूरदास' प्रभु रस भरि उमँगी, राधा कहति विचारु ॥ २०५८ ॥

राग बिलावल ॥ २६७७ ॥

सुनहुँ सखी राधा कहनावति।
हम आईं याकैं जिहिं कारन, सो यह प्रगट सुनावति ॥
हम देख्यौ मोई इन देख्यौ, ऐसैंहिं दोष लगावति।
यह पुनीत हमहीं अपराधिनि, तनु अपराध बढ़ावति ॥
इतनैहिं रहौ और जनि भाषहु, अजहूँ लाज न आवति।
'सूर' स्याम राधा जौ एकै, तऊ नहीं कहि आवति ॥ २०५९ ॥

राग बिलावल ॥ २६७८ ॥

राधा कौ कछु और सुभाउ।
हम देखति हरि कौ औरै अँग, यह निरखिति सतिभाउ ॥
यह है बिनु कलक की साँची, हम कलक मैं सानी।
हम हरि की दासी सम नाहीं, यह हरि की पटरानी ॥
याकी अस्तुति हम कह करिहैं, रसना एक न आवै।
सूर स्याम की इनही जाने, भजनप्रताप बतावै ॥ २०६० ॥

राग गुंड मलार ॥ २६७९ ॥

राधिका हृदय तैं धोख टारी।
नंद के लाल देखे प्रातकाल तैं, मेघ नहिं स्याम तनुछवि विचारी ॥
इंद्रधनु नहीं बनदाम बहु सुमन के, नहीं बग पाँति बर मोतिमाला ॥
सिखी वह नहीं सिर मुकुट सीखंड पछ, तड़ित नहिं पीतपट छवि रसाला ॥
मद गरजन नहीं चरन नूपुर सबद, भोरहीं आजु हरि गवन कीन्हौं।
'सूर' प्रभु भामिनीभवन करि गवन, मनरवन दुख के दवन जानि लीन्हौ ॥२०६१॥

राग गुंड मलार ॥ २६८० ॥

भोर जे गए ते स्याम वै री।
धोख मोहिं भयौ तब लखे नहिं एक करि, नील नव मेघ छवि चीन्हि लये री ॥
सिखी की भाँति सिरपीड़ डोलत सुभग, चाप तैं अधिक बनमाल सोभा।
साँवरी घटा पर बग पाँति तैं रुचिर, मोति बर दाम उर देखि लोभा ॥
तड़ित तैं पीतपट की चमक राजई, गरज नहिं प्रातही ग्वाल बोलै।
'सूर' सुनि सखी यह बात साँची कही, पवन बस मेघ ज्यौं अंग डोलै ॥
॥ २०६२ ॥

राग कल्यान ॥ २६८१ ॥

धन्य हौ धन्य तुम घोषनारी।
मोहिं धोखे गयौ, दरस तुमकौ भयौ, तुमहिं मोहिं देखी री बीच भारी ॥
जा दिना संग मैं गई अस्नान कौ, जमुन कैं तीर देखे कन्हाई।
पीड सीखंड सिर, वेष नटवर कछे, अंग इक छटा मैं रही भुलाई ॥
दिवस इक आइ ठाढ़े भए द्वार पर, आजु हरि गए ह्वै द्वार मेरे।
'सूर' प्रभु ता दिन तुमहिं कहि दियौ, मोहिं, आजु मैं लखे सोउ कहे तेरे ॥२०६३॥

राग आसावरी ॥ २६८२ ॥

तुम कैसै दरसन पावति री।
कैसै स्याम अंग अवलोकति क्यौं नैननि ठहरावति री ॥
कैसै रूप हृदै राखति हो, वै तौ अति भलकावत री।
मोको जहाँ मिलत है माई, तहँ तहँ अति भरमावत री ॥
मै कबहूँ नीकै नहि देखे, कह कहौ कहत न आवत री।
'सूर' स्याम कैसै तुम देखति, मोहि दरस नहि द्यावत री ॥२०६४॥

राग आसावरी ॥ २६८३ ॥

धन्य धन्य वृषभानुकुमारी।
धनि माता, धनि पिता तिहारे तोमो जाई वारी ॥
धन्य दिवस, धनि निसा तबहि की, धन्य घरी, धनि जाम।
धन्य कान्ह तेरे बस जे हैं, धनि कीन्हे बस स्याम ॥
धनि मति, धनि रति, धनि तेरौ हित, धन्य भक्ति, धनि भाउ।
'सूर' स्याम पति धन्य नारि तू, धनि धनि एक सुभाउ ॥२०६५॥

राज जैतश्री ॥ २६८४ ॥

तोहि स्याम हम कहा दिखावैं।
तुमतै न्यारे रहत कहुँ न वै, नैकु नही बिसरावैं ॥
एक जीव देही द्वै राची, यह कहि कहि जु सुनावैं।
उनकी पटतर तुमकौ दीजै, तुम पटतर वै पावैं ॥
अमृत कहा अमृत गुन प्रगटै, सो हम कहा बतावैं।
'सूरदास' गूगे कौ गुर ज्यौ, बूझति कहा बुझावैं ॥ २०६६ ॥

राग टोड़ी ॥ २६८५ ॥

सुनि राधा यह कहा बिचारै।
वै तेरै तू उनकै रँग, अपनौ मुख क्यौं न निहारै ॥
जौ देखै तौ छाँह आपनी, स्याम हृदै ह्याँ छाया।
ऐसी दसा नंदनदन की, तुम दोउ निर्मल काया ॥
नीलांबर स्यामल तनु की छवि, तुम छवि पीत सुवास।
घनभीतर दामिनी प्रकासित, दामिनि घन-चहुँ-पास ॥
सुनि री सखी बिलछ कहौ तोसौं, चाहति हरि कौ रूप।
'सूर' सुनहु तुम दोउ सम जोरी, एक स्वरूप अनूप ॥ २०६७ ॥

राग धनाश्री ॥ २६८६ ॥

सुनि ललिता चंद्रावलि बात।
मोसौं स्याम नेह मानत हैं तुमसौ कहति लजात ॥
तुम तौ सदा रहति हरिसंगहि, भेद कहौ यह मोहिं।
हा हा करति पाइ हौं लागति, सपथ हमारी तोहिं ॥
काहे कौं इतराति सखी री, तोतै प्यारी कौन।
'सूर' स्याम तेरै बस ऐसै, ज्यो पंखावस पौन ॥ २०६८ ॥

राम धनाश्री ॥ २६८७ ॥

पिय तेरै बस यौ री माई।
ज्यौं संगहि सँग छाँह देहवस, प्रेम कह्यौ नहिं जाई ॥

ज्यौ चकोर बस सरद चंद्र कै, चक्रवाक बस भान।
जैसै मधुकर कमल-कोस-बस, त्यौ बस स्याम सुजान।।
ज्यौ चातक बस स्वाति बूँद कै, तन कै बस ज्यौ जीय।
'सूरदास' प्रभु अति बस तेरै समुझि देखि धौ हीय।। २०६९ ।।

राग नट ।। २६८८ ।।

तू री छाँह किये हरि राखति।
अपनै मन तू जानति तोकै, मुख मोसौ अह भाखनि।।
अति बस रहत कान्ह री तोसौ, मुकुर हाथ लै देखि।
तैसीयै मनमोहन की गति, वहै भाव मन लेखि।।
तू है वाम अग दच्छिन वै, ऐसै करि इक देह।
'सूर' मीन-मधुकर-चकोर कौ, इतनौ नही सनेह।। २०७० ।।

राग देवसाख ।। २६८९ ।।

नदनँदन बस तेरै (री)।
सुनि राधिका परम वड़भागिनि, अनुरागनि हरि केरै (री) ।।
जा दिन तै खरिक मिले हरि, धेनु दुहावन आई (री)।
ता दिन तै वस भए कन्हाई, कहा ठगौरी लाई (री)।।
अब तू कहति कहा मो आगै, बातनि मोहि भुलावै (री)।
'सूरदास' ललिता की बानी, सुनि सुनि हरष बढ़ावै (री) ।।२०७१।।

राग टोड़ी ।। २६९० ।।

ललिता मुख सुनि सुनि वै बानी। मैं ऐसी जिय मैं यह आनी।।
और नही कोउ ब्रज मो सरि की। हौ राधा आधा अँग हरि की।।
अपनै ही वस पिय कौ करिहौ। कहूँ जात देखौ तब लरिहौ।।
घर घर सबै गई ब्रज नारी। इहि अंतर आए गिरिधारी।।
हरि अंतरजामी अविनासी। जानि राधिका गर्व उदासी।।
'सूर' स्याम राधा तन हेरचौ। नागरि देखतही मुख फेरचौ।।२०७२।।

राग रारंग ।। २६९१ ।।

वरज्यौ नहिं मानत तुम नैकहुँ उझकत फिरत कान्ह घर ही घर।
मिस ही मिस देखत जु फिरत हौ, जुवतिनि वदन कहौ काकै बर?
कोउ अपने घर जैसैं तैसैं काम काज ते आवत दर दर।
'सूरदास' प्रभु देत अचगरी डोलत नैकु नही जिय मै डर।।२०७३।।

राग बिलावल ।। २६९२ ।।

यह जान्यौ जिय राधिका, द्वार हरि लागे।
गर्व कियौ जिय प्रेम कौ, ऐसे अनुरागै।।
बैठि रही अभिमान सौ, यह ठौर न पायौ।
हृदय स्याम-सुख-धाम मैं, अभिमान बसायौ।।
राधा जिय यह जानि कै, आपुन पछिताही।
जहाँ गर्व अभिमान है, तहँ गोविंद नाही।।
तहाँ नैकहूँ नहि रहे, नहि दरसन दीन्हौ।
'सूर' स्याम अंतर भए, जब गर्वहि चीन्हौ।। २०७४ ।।

राग धनाश्री ॥ २६६३ ॥

राधा चकृत भई मन माहीं।
अबहीं स्याम द्वार ह्वै झाँके, ह्याँ आए क्यों नाहीं॥
आपु न आइ तहाँ जो देखै, मिले न नंदकुमार।
आवत ही फिरि गए स्यामघन, अति ही भयौ बिचार॥
सूनै भवन अकेली मैं ही, नीकैं उभकि निहारयौ।
मोतैं चूक परी मैं जानी, तातैं मोहिं बिसारयौ॥
इक अभिमान हृदय करि बैठी, एतै पर भहरानी।
'सूरदास' प्रभु गए द्वार तैं, तब व्याकुल पछितानी॥ २०७५ ॥

राग सारंग ॥ २६६४ ॥

मैं अपनैं जिय गर्व कियौ।
वै अंतरजामी सब जानत, देखत ही उन चरचि लियौ।
कासौं कहौं मिलावै को अब, नैकु न धीरज धरत जियौ।
वै तौ निठुर भए या बुधि सौं, अहंकार फल यहै दियौ॥
तब आपुन कौं निठुर करावति, प्रीति सुमिरि भरि लेति हियौ।
'सूर' स्याम प्रभु वै बहु नायक, मोसी उनकैं कोटि तियौ॥२०७६॥

राग बिहागरौ ॥ २६६५ ॥

स्याम बिरह-बन-माँझ हिरानी।
सगी गए संग सब तजि कै, आपुन भई दिवानी॥
स्याम धाम मैं गर्वहिं राखति, दुराचारिनी जानी।
तातैं त्यागि गए आपुहि सब, अंग अंग रति मानी॥
'सूर' स्याम-नागर-बिनु, राधानागरि चित्त भुलानी॥ २०७७ ॥

राग बिहागरौ ॥ २६६६ ॥

महा बिरह-बन-माँझ परी।
चकित भइ ज्यौं चित्रपूतरी, हरिमारग बिसरी॥
सँग बटपारगर्व जब देख्यौ, साथी छोड़ि पराने।
स्याम-लहर-अँग-अंग-माधुरी, तहँ वै जाइ लुकाने॥
यह बन माँझ अकेली व्याकुल, संपति गर्व छँड़ायौ।
'सूर' स्याम सुधि टरति न उर तैं, यह मनु जीव बचायौ॥ २०७८ ॥

राग मारू ॥ २६६७ ॥

बिरहबन मिलनसुधि त्रास भारी।
नैन जल नदी, पर्वत उरज येइ मनु, सुभग बेनी भई अहिनि कारी॥
नैन मृग, स्रवन बनकूप जहँ तहँ मिले, भ्रुवगली सघन नहिं पार पावै।
सिंह कटि, व्याघ्र अँग अंस भूषन मनौ, दुसह भए भार अतिही डरावै॥
सरन कर अब हरि डर लहत कोउ नहिं, अंग सुख स्याम बिनु भए ऐसे।
'सूर' प्रभु स्याम करुनाधाम जाउ क्यौं, कृपा मारग बहुरि मिलै कैसे॥
॥ २०७९ ॥

राग टोडी ॥ २६६८ ॥

राधा भवन सखी मिलि आई।
अति व्याकुल सुधि बुधि कछु नाहीं, देह दसा बिसराई॥

बाँह गही तिहिं बूझन लागी, कहा भयौ री माई।
ऐसी बिवस भई तू काहै, कहौ न हमहिं सुनाई॥
कालिहिं और वरन तोहि देखी, आजु गई मुरझाई।
'सूर' स्याम देखे की बहुरौ, उनहिं ठगौरी लाई॥ २०८० ॥

राग हमीर ॥ २६९९ ॥

स्याम नाम चक्रृत भई, स्रवन सुनत जागी।
आए हरि यह कहि कहि, सखिनि कंठ लागी॥
मोतैं यह चूक परी, मैं बड़ी अभागी।
अब कै अपराध छमहु, गए मोहिं त्यागी॥
चरन कमल सरन देहु, वार वार माँगी।
'सूरदास' प्रभु कै वस, राधा अनुरागी॥ २०८१ ॥

राग विहागरौ ॥ २७०० ॥

सखी रही राधामुख हेरि।
चकित भई कछु कहत न आवै, करन लगी अवसेरि॥
वार वार जल परसि वदन सौ, वचन सुनावति टेरि।
आजु भई कैसी गति तेरी, व्रज मैं चतुर निवेरि॥
तव जान्यौ यह तौ चद्रावलि, लाज सहित मुख फेरि।
'सूर' तवहिं सुधि भई आपनी, मिटी मोह अँधेरि॥ २०८२ ॥

राग जैतश्री ॥ २७०१ ॥

कहा भई तू आजु अयानी।
अतिहीं चतुर प्रवीन राधिका, सखियनि मैं तू वड़ी सयानी॥
कहि धौं वात हृदय की मोसौ, ऐसी तू काहै विततानी।
मुख मलीन, तनु की गति औरै, वूझति वार वार सो वानी॥
कहा दुराव करौ री तो सौ, मै तौ हरि कै हाथ विकानी
'सूर' स्याम मोकौ परित्यागी, जा कारन मैं भई दिवानी॥
॥ २०८३ ॥

राग जैतश्री ॥ २७०२ ॥

अव मै तोसो कहा दुराऊँ।
अपनी कथा, स्याम की करना, तो आगै कहि प्रगट सुनाऊँ॥
मै वैठी ही भवन आपनै, आपुन द्वार दियौ दरसाऊँ।
जानि लई मेरे जिय की उन, गर्व प्रहारन उनकौ नाऊँ॥
तवही तै व्याकुल भई डोलति, चित न रहै कितनौ समुझाऊँ।
सुनहु 'सूर' गृह वन भयौ मोकौ, अव कैसै हरि दरसन पोऊँ॥
॥ २०८४ ॥

राग नट नारायन ॥ २७०३ ॥

सखि मिलि करौ कछुक उपाउ।
मार मारन चढयौ विरहिनि, निदरि पायौ दाउ॥
हुतासन धुज जात उन्नत, चल्यौ हरि दिस वाउ।
कुसम-सर-रिपु-नंद-वाहन, हरषि हरषित गाउ॥

वारि-भव-सुत तासु भावरी अब न करिहौं काउ।
वार अब की प्रान प्रीतम, विजय सखा मिलाउ।।
रति विचारि जु मान कीन्हौ, सोउ वहि किन जाउ।
'सूर' सखी सुभाउ रहिहौं, सँग सिरोमनि राउ।। २०८५ ।।

राग नट ।।२७०४।।

मिलवहु पार्थमित्रहि आनि।
जलधिसुत के सुत की रुचि करि भई हित की हानि।।
दधि-सुता-सुत-अवलि उर पर, इंद्र आयुध जानि।
गिरि-सुता-पति-तिलक करकस, हनत सायक तानि।।
पिनाकीसुत तासु वाहन, भपक भप विप खानि।
साख-मृग-रिपु वसन मलयज, हित हुतासन वानि।।
धर्म सुत के अरि सुभावहि, तजति धरि सिर पानि।
'सूरदास' विचित्र विरहिनि, चूक मन मन मानि।। २०८६ ।।

राग टोड़ी ।। २७०५ ।।

सुनि सजनी यह करनी तेरो।
हमसौं भेद करै हित उनसौं, ऐसे गुन उनके री।
आजुहि तैं ऐसे ढँग आए, अवही तातौ दिन है ही।।
ऐसैं टूटि परी उन ऊपर, तुमही कीन्ही वैरी।।
अजहूँ कह्यौ मानिहै मेरौ, कीधौं नही करै री।।
'सूर' स्याम सौं मान करै किन, काहै वृथा मरै री।। २०८७ ।।

राग सोरठ ।। २७०६ ।।

तैंही उनकौ मूड़ चढायौ।
भवन विपिन सँगही सँग डोलै, ऐसैंहि भेद लखायौ।।
पुरुप भँवर दिन चारि आपने, अपनौ चाड़ सरायौ।
नदनँदन वहु रवनि रवन वै, यहै जानि विसरायौ।।
अपनी वात आपनै कर है, हमकौ तव न सुनायौ।
सुनहु 'सूर' विनु मान कहो किन, अपनौ पिय अपनायौ।। २०८८ ।।

राग कान्हरौ ।। २७०७ ।।

रैनि मोहिं जागतहि विहानी, मान कियो मोहन सौं, तातैं भई अधिक तन तपति।।
सेज सुगंधित लखि विष लागत, पावकहू तै दाह सखीरी, त्रय विधि पवन उड़पति।।
ऐसी कै व्याप्यौ है मनमथ, मेरोई ज्यौ जानै माई, स्याम स्याम कै जपति।
वेगि मिलाउ 'सूर' के प्रभु कौ, भूलिहुँ मान करौं कवहूँ नहि, मदन वान तैं कँपति।।
।। २०८९ ।।

राग धनाश्री ।। २७०८ ।।

मान विना नहि प्रीति रहै गी।
धाइ मिले की गति तेरी मो, प्रगट देखि मोहि कहा कहै री।।
अपनौ चाड़ सारि उन लीन्हो, तू काहै अव वृथा वहै री।
वैठि रहै काहै नहि दृढ ह्वै, फिरि काहै नहि मान गहै री।।
अपनौ पेट दियौ तैं उनकौ, नाकवुद्धि तिय सवै कहै री।।
'सूर' स्याम ऐसे हैं माई, उनकौ विनु अभिमान लहै री ! ।। २०९० ।।

राग मलार ।। २७०९ ।।

तजौं मान क्यौं, मन न हाथ, पिय सुमिरत उमँगि भरत।
मोसौं मानत वाम स्याम गुन गुनि अभिलाप करत ।।
जो भो कानि न मानि, आन तिय रत, तिन बिनु न मरत।
अपमानहु मुदित मूढ, जस अपजसहू न डरत ।।
रस मैं रिस बिप दै बिचरत हठ, लालन प्रान हरत।
भ्रमि मैं तौ रिस करति न रस बस, मोहि सौं उलटि लरत ।।
स्वारथ वस इंद्रीसमूह पर, विरह अधीर धरत।
'सूरदास' घर की फूटै री, कैसैं रह्यौ परत ।। २०९१ ।।

राग कान्हरौ ।। २७१० ।।

चारि चारि दिन सवै सुहागिनि, ह्वै चुकी वैस रूप अपनी।
कोउ अपनै जिय मान करौ माई, मोहि तो छूटति अति कपनी ।।
मेरौ कह्यौ करि, मान हृदे धरि, छाँडि देहि री अति तपनी।
'सूर' स्याम तबही मानैंगे, तबहिं करेंगें वै जपनी ।।
।। २०९२ ।।

राग टोड़ी ।। २७११ ।।

हमरी सुरति बिसारी बनवारी, हम सरवस दै हारी।
पै न भए अपने सनेह बस, सपनेहू गिरधारी ।।
वै मोहन मधुकर समान सखि, अनगन, वेलीचारी।
व्याकुल विरह व्यापि दिन दिन हम, नीर जु नैननि ढारी ।।
हम तन मन दै हाथ बिकानी, वै अति निठुर मुरारी।
'सूर' स्याम बहु रमनि रमन, हम इक व्रत, मदन प्रजारी ।। २०९३ ।।

राग गौरी ।। २७१२ ।।

मैं अपनी सी वहुत करी री।
मोसौं कहा कहति तू माई, मन कैं सँग मैं बहुत लरी री ।।
राखौं हटकि उतहि कौं धावत, वाकी ऐसियै परनि परी री।
मोसौं वैर करै रति उनसौं, मोकौ राख्यौ द्वार खरी री ।।
अजहूँ मान करौं, मन पाऊँ, यह कहि इत उत चितै डरी री।
सुनहु 'सूर' पाँचनि मत एकै, मैं ही मोही रही परी री ।।
।। २०९४ ।।

राग गौरी ।। २७१३ ।।

मन जनि सुनै बात यह माई।
कौरै लग्यौ होइगौ कतहूँ, कहि दैहै ह्वाँ जाई ।।
ऐसैं डरति रहति हौं वाकौ, चुगली जाइ करैगौ।
उनसौं कहि फिरि ह्याँ आवैगौ, मोसौं आनि लरैगौ ।।
पंच संग लीन्हे वह डोलत, कोऊ मोहि न मानै।
'सूर' स्याम कौं उनहि सिखायौ, वे इतनौ कह जानैं ।। २०९५ ।।

राग ईमन ।। २७१४ ।।

मेरो मन कहिवे ही कौ है।
जब ही तैं हरिदरसन कीन्हौ, नैननि भेद कियौ है ।।

इंद्रिनि सहित चित्तहू लै गयौ, रहीं अकेली हमही।
एते पर तुम मान करावति, देहु न तौ मन तुमही॥
मोकौं दोवल देति कहा हौ, तुम तौ सबै अयानी।
'सूर' स्याम कौं वेगि मिलावहु, हारि आपनी मानौ॥ २०९६ ॥

राग रामकली ॥ २७१५ ॥

सारग सारँगधरहिं मिलावहु।
सारँग विनय करति, सारँग सौं, सारँग दुख विसरावहु॥
सारँग समय दहत अति सारँग, सारँग तिनहिं दिखावहु।
सारँग गति सारँगधर जे हैं, सारँग जाइ मनावहु॥
सारँग चरन सुभग-कर-सारँग, सारँग नाम बुलावहु।
'सूरदास' सारँग उपकारिनि, सारँग मरत जियावहु॥ २०९७ ॥

राग विहागरौ ॥ २७१६ ॥

मोतैं यह अपराध परयो।
आए स्याम द्वार भए ठाढे, मैं जिय गर्व धरयौ॥
जानिवूझि मैं यह कृत कीन्हौ, सो मेरे सीस परयौ।
मन अपने ढँग ही मैं, मोसौं वारवार लरयौ॥
मैं अति विमुख रही, यह सनमुख नीकैं उनहिं ढरयौ।
'सूरदास' मन आप स्वारथी, अपनौ काज करयौ॥ २०९८ ॥

राग सोरठी ॥ २७१७ ॥

मन जौ कह्यौ करै री माई।
तेरी कही बात सब होती, मिल्यौ उनहिं कौ धाई॥
निलज भई तनुसुधि विसराई, गुरुजन करत लराई।
इत कुलकानि उतहिं हरि कौ रस, दुविधा मैं दिन जाई॥
आनु स्वारथी सबै देखियत, है मोकौं दुखदाई।
'सूरदास' प्रभु चित अपनौ करि, तनकहिं गए रिसाई॥ २०९९ ॥

राग देसाख ॥ २७१८ ॥

मान करौ, मन थिर न रहै।
कोटि जतन करि करि पचिहारी, मोहिं विसारि गयौ कौन कहै॥
मोकौं निदरि मिल्यौ है उनसौं, ऐते पर तन मदन दहै।
'सूर' स्याम सँग नैकु न त्यागत, वरु निसि दिन अपमान सहै॥
॥ २१०० ॥

राग देसाख ॥ २७१९ ॥

मनहिं कहौ करि मान स्याम सौं पै वह नाही कह्यौ करै॥
वार वार हरि हरि गुहरावत, मोहिं मँगावत आइ लरै॥
वटहू मैं इद्री वस वाकैं, लै निकस्यो मोहिं कौन डरै।
सुनि सजनी मैं रही अकेली, विरह दही गुरुजन झहरै॥
अव विन मिले वनत नहिं आली, निसि दिन पल पल रह्यौ न परै॥
'सूर' स्याम वहु रमनि रमन वै, पै यह चित नैकुहु न धरै॥२१०१॥

राग विलावल ॥ २७२० ॥

भूलि नहीं अव मान करौ री।
जातैं होइ अकाज आपनौ, काहैं वृथा मरौ री॥

ऐसे तन मैं गर्व न राखौ, चिंतामनि बिसरौं री।
ऐसी बात कहै जो कोऊ, ताकैं संग लरौ री॥
आरजपंथ चलैं कह सरिहै, स्यामहि संग फिरौ री।
'सूर' स्याम जउ आपु स्वारथी, दरसन नैन भरौं री॥ २१०२॥

राग आसावरी॥ २७२१॥

चूक परी मोतैं मैं जानी, मिलैं स्याम बकसाऊँ री।
हा हा करि दसननि तृन धरि धरि, लोचन नीर बहाऊँ री॥
चरन कमल गाढ़ै गहि कर सौं, पुनि पुनि सीस छुवाऊँ री।
मुख चितवौं, फिरि धरनि निहारौं, ऐसैं रुचि उपजाऊँ री॥
मिलौं धाइ अकुलाइ, भुजनि भरि, उर की तपति जनाऊँ री।
'सूर' स्याम अपराध छमहु अब, यह कहि कहि जु सुनाऊँ री॥ २१०३॥

राग गौरी॥ २७२२॥

माई मेरौ मन पिय सौं यौं लाग्यौ, ज्यौं सँग लागी छाँहि।
मेरौ मन पिय जीव बसत है, पिय जिय मो मैं नाहिं॥
ज्यौं चकोर चंदा कौं निरखत, इत उत दृष्टि न जाइ।
'सूर' स्याम बिनु छिन छिन जुग सम, क्यौं करि रैन बिहाइ॥ २१०४॥

राग जैतश्री॥ २७२३॥

उनकौ यह अपराध नही।
वै आवत हैं नीकैं मेरैं, मैं ही गर्व कियौ तनही॥
गर्व करे तैं सरयौ कछू नहिं, एक भई तनु दसा नहीं।
सुख मिटि गयौ, हियौ, दुख पूरन, अब रैहौं इनही बिनही॥
अब जौ दरस देहि कैसेंहू, फिरति रहौं सँग ही सँग ही।
'सूरदास' प्रभु कौ हियरे तैं, अंतर करौं नही छिनही॥ २१०५॥

राग बिलावल॥ २७२४॥

अब कै जौ पिय कौ पाऊँ, तौ हिरदै माँझ दुराऊँ।
जौ हरि कौ दरसन पाऊँ, आभूषन अंग बनाऊँ॥
ऐसौ को जो आनि मिलावै, ताहि निहाल कराऊँ।
जौ पाऊँ तौ मंगल गाऊँ, मोतियनि चौक पुराऊँ॥
रस करि नाचौं गाऊँ बजाऊँ, चंदन भवन लिपाऊँ।
मनि मानिक न्यौछावरि करिहौं, सो दिन सुदिन कहाऊँ॥
केतकि, करना, बेल, चमेली, फूलनि सेज बिछाऊँ।
तापर पिय कौं पौढ़ाऊँ, मैं अँचरा वायु डुलाऊँ॥
चंदन, अगर, कपूर, अरगजा, प्रभु कैं खौरि बनाऊँ।
जौ बिधना कबहूँ यह करै तौ, काम कौ काम पुराऊँ॥
अब सो करौ उपाउ सखी मिलि, जातैं दरसन पाऊँ।
'सूर' स्याम देखैं बिनु सजनी, कैसैं मन अपनाऊँ॥ २१०६॥

राग संकीर्ण॥ २७२५॥

ए री मो ही तौ पिउ भावै, को ऐसी जो आनि मिलावै।
चौदह-विद्या-प्रवीन अतिही बहु नायक कौ कौन मनावै॥

नैकु दृष्टि भरि चितवै बिरहिनि, बिरह तपनि मो तन तैं बुझावै ।
'सूरदास' प्रभु करे कृपा अब मोकौं नित प्रति बिरह जरावै ॥ २१०७ ॥

राग बिलावल ॥ २७२६ ॥

धीरज करि री नागरी, अब स्यामहि ल्याऊँ ।
अति व्याकुल जनि होहि री, सुख अबहि कराऊँ ॥
देखि दसा सहि नहि सकी, मन ही अकुलानी ।
मैं राधा की प्रिय सखी, यह कहि पछितानी ॥
झूरि झूरि गिरि परी, यह तौ सुकुमारी ।
ऐसी चूक परी कहा, कहाँ गिरिधारी ॥
प्यारी कौ मुख धोइ कै, पट पोंछि सँवारयौ ।
तरक बात बहुतै कही, कछु सुधि न सँभारयौ ॥
सावधान करिकै गई, ल्याऊँ गिरिधर कौ ।
'सूर' तहाँ आतुर गई, पाए हरि वर कौ ॥ २१०८ ॥

राग टोड़ी ॥ २७२७ ॥

ललिता मुख चितवत मुसकाने ।
आपु हँसी पिय मुख अवलोकत, दुहुनि मनहि मन जाने ॥
अति आतुर धाई कहँ आई, काहे वदन झुराए ।
बूझत है पुनि पुनि नँदनंदन, चितवत नैन चुराए ॥
तब बोली वह चतुर नागरी, अचरज कथा सुनाऊँ ।
'सूर' स्याम जौ चलहु तुरत ही, नैननि जाइ दिखाऊँ ॥ २१०९ ॥

राग सारंग ॥ २७२८ ॥

अद्भुत एक अनूपम बाग ।
जुगल कमल पर गज वर क्रीड़त, तापर सिंह करत अनुराग ॥
रुचिर कपोत बसत ता ऊपर, ता ऊपर अमृत फल लाग ॥
फल पर पुहुप, पुहुप पर पल्लव, ता पर सुक, पिक, मृग मद काग ।
खंजन, धनुष, चंद्रमा ऊपर, ता ऊपर इक मनिधर नाग ॥
अंग अंग प्रति और और छवि, उपमा ताकौं करत न त्याग ।
'सूरदास' प्रभु पियौ सुधारस, मानौ अधरनि के बड़ भाग ॥ २११० ॥

राग रामकली ॥ २७२९ ॥

पद्मिनि सारँग एक मझारि ।
आपुहि सारँग नाम कहावै सारँगवरनी वारि ॥
तामैं एक छबीलो सारँग अध सारँग उनहारि ।
अध सारँग पर सकलइ सारँग अध सारंग विचारि ॥
तासैं सारँगसुत सोभित है ठाढी सारँग भारि ।
'सूरदास' प्रभु तुमहू सारँग बनी छबीली नारि ॥ २१११ ॥

राग रामकली ॥ २७३० ॥

बिराजति एक अंग इति बात ।
अपनै कर करि धरे बिधाता, षट् खग, नव जलजात ॥
द्वै पतंग, ससि बीस, एक फनि, चारि बिबिध रँग धात ।
द्वै पक बिंब, बतीस बज्रकन, एक जलज पर थात ॥

इक सायक, इक चाप चपल अति, चितवत चित्त विकात।
द्वै मृणाल, मालूर उभै, द्वै कदलि खंभ बिनु पात ॥
इक केहरि, इक हंस गुप्त रहै, तिनहि लग्यौ यह गात।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे मिलन कौं अति आतुर अकुलात ॥ २११२ ॥

राग सारंग ॥ २७३१ ॥

आजु लखी इक बाम नई सी।
ठाढ़ी हुती अंगना द्वारैं, विधि बिरची किधौं मदन मई सी ॥
हम तनु चितै, सकुचि अंचल दियौ, वारिज मुख पर वारि वई सी।
मनु द्वै ढग चले द्वै दृग (नि) लै, ललित बलित हरि मनहि नई सी ॥
जनु पावस तें निकसि दामिनी, नैकु दमकि दुरि ओट लई सी।
भोजन, भवन कछू नहि भावत, लगत पलक मनु करत खई सी ॥
यह मूरति कबहूँ नहिं देखी, मेरी आँखिनि कछु भूल भई सी।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे मिलन कौं, मनमोहन मोहिनि अँचई सी ॥ २११३ ॥

राग सारंग ॥ २७३२ ॥

बरनौ श्री वृषभानु कुमारि।
चित दै सुनहु स्याम सुंदर छबि, रति नाहीं अनुहारि ॥
प्रथमहिं सुभग स्याम बेनी कौ, सोभा कहौं बिचारि।
मनौ रह्यौ पन्नग पीवन कौं, ससिमुख सुधा निहारि ॥
सुभग सुदेस सीस सेंदुर कौ, देखि रही पचिहारि।
मानौ अरुन किरन दिनकर की, पसरी तिमिर बिदारि ॥
भ्रकुटी बिकट निकट नैननि कैं, राजति अति वर नारि।
मनौ मदन जग जीति, जेर करि, राख्यौ धनुष उतारि ॥
ता बिच बनी आड़ केसर की, दीन्ही सखिनि सँवारि।
मानौ बँधी इंदुमंडल मैं, रूप सुधा की पारि ॥
चपल नैन, नासा बिच सोभा, अधर सुरंग सुढारि।
मनौ मध्य खंजन सुक बैठ्यौ, लुबध्यौ बिंब बिचारि ॥
तरिवन सुधर, अधर नकबेसरि, चिबुक चारु रुचिकारि।
कंठसिरी दुलरी तिलरी पर, नहिं उपमा कहुँ चारि ॥
सुरँग गुलाल माल कुच मंडल, निरखत तनमन वारि।
मनु दिसि दिसि निर्धूम अग्नि कैं, तप बैठे त्रिपुरारि ॥
जौ मेरौ कृत मानौ मोहन करि ल्याऊँ मनुहारि।
सूर रसिक बदिहौ जब चितवत मुरली सकौ सँभारि ॥ २११४ ॥

राग मलार ॥ २७३३ ॥

लाल उन सुनी मनोहर बंसी।
नहिं संभार अजहुँ जुवनिनि वरि, मदन भुवगम डंसी ॥
कैसैं ल्याऊँ, सँगीतसरोवर, मगन भई गति हंसी।
आपुन ही चलियै, उद्धरियै, मेलि भौंह दृढ़ फंसी ॥
मानहु तरुन तमाल स्याम तन, लता मालती ग्रंसी।
'सूरदास' प्रभु सब सुखदाता, लै भुज बीच प्रसंसी ॥ २११५ ॥

राग धनाश्री ॥ २७३४ ॥

मनसिज माधवै मानिनिहिं मारिहै ॥
त्रोटि परलव अग्त परमौ अर निरखि निमुख को तारिहै ॥
किसलय कुसुम कुंत सम सायक, पायक पवन विचारिहै ।
द्रुम वल्ली ग्रह दीप जुग वनौ, जनति अनल विय जारिहै ॥
भँवर जु एक चक्रत चामर कर भरि वंडुण खग डारिहै ।
पुनि पुनि वाज साज सुनि सुदरि, वसित तिनहिं देखे मारिहै ॥
विरह विभूति वढी वनिता वपु, मीस जटा वनवारि है ॥
मुख ससि सेस रह्यौ सित मानौ, भई तमी तनहारि है ॥
जौ न इतै पर चलहु कृपानिधि, तौ वह निज कर मारिहै ।
'सूरदास' प्रभु रसिकसिरोमनि, तुम तजि काहि पुकारिहै ॥ २११६ ॥

राग सारंग ॥ २७३५ ॥

सिव न, अवध सुदरी, वश्यौ जिन ।
मुक्ता माँग अनग, गग नहिं, नवसत साजे अर्थ स्याम घन ॥
भाल तिलक उडपति न होइ यह, कवरि ग्रथित अहिपति न सहस फन ।
नहिं विभूति दधिसुत न कंठ जड़, यह मृगमद चंदन चर्चित तन ॥
नहिं गज चर्म स् असित कंचुकी, देखि विचारि कहाँ नंदी गन ।
'सूर' सु हरि अव मिलहु कृपा करि, वरवस समर करत हठ हम सन ॥ २११७ ॥

राग धनाश्री ॥ २७३६ ॥

प्रिया मुख देखौ स्याम निहारि ।
कहि न जाइ आनन की सोभा, रही विचारि विचारि ॥
छीरोदक घूँघट हातै करि, सन्मुख दियौ उघारि ।
मनौ सुधाकर दुग्ध सिंधु तैं, कढ्यौ कलंक पखारि ॥
मुक्ता माँग सीस पर सोभित, राजति इहिं आकारि ।
मानौ उडगन जानि नवल ससि, आए करन जुहारि ॥
भाल लाल-सिंदूर-विंदु पर, मृगमद दियौ सुधारि ।
मनौ बँधूक कुसुम ऊपर अलि बैठ्यौ, पंख पसारि ॥
चंचल नैन चहूँदिसि चितवत, जुग खजन अनुहारि ।
मनौ परस्पर करत लराई, कीर वचाई रारि ॥
वेसरि के मुक्ता मैं भाईं, वरन विराजति चारि ।
मानौ सुरगुरु, सुक्र, भौम, सनि, चमकत चद मँझारि ॥
अधर विंव विच दसन विराजत, दुति दामिनि चमकारि ।
चिवुक-विंदु-विच दियौ विधाता, रूप सींव निरुवारि ।
तरिवन स्रवन रतन मनि भूषित, सिर सोमत सँवारि ।
जनु जुग भानु दुहूँ दिसि उगए, भयौ द्विधा तम हारि ॥
लाल माल कुच वीच विराजति, सखियनि गुही सिंगारि ।
मनहुँ धुई निर्धूम अग्नि पर, तप वैठे त्रिपुरारि ॥
सन्मुख दृष्टि परै मनमोहन, लज्जित भइ सुकुमारि ।
लीन्ही उमँगि उठाइ अक भरि 'सूरदास' वलिहारि ॥ २११८ ॥

राग नट ॥ २७३७ ॥

भुज भरि लई हिरदय लाइ।
विरह व्याकुल देखि वाला, नैन दोउ भरि आइ ॥
रैनि वासर वीचहो मैं, दोउ गए मुरझाइ।
मनौ वृच्छ तमाल वेली कनक, सुधा सिचाइ ॥
हरप डहडह मुसुकि फूले, प्रेम पल्लनि लगाइ।
काम मुरझनि वेलि तरु की, तुरतही विसराइ ॥
देखि ललिता मिलन वह आनंद उर न समाइ।
'सूर' के प्रभु स्याम स्यामा, त्रिविध ताप नसाइ ॥ २११९ ॥

राग रामकली ॥ २७३८ ॥

ललिता प्रेम बिवस भई भारी।
वह चितवनि, वह मिलनि परस्पर अति सोभा वर नारी ॥
इकटक अग अग अवलोकति, उत बस भए विहारी।
वह आतुर छवि लेन देत वै, इक तै इक अधिकारी ॥
ललिता संग सखिनि सौ भापति, देखौ छवि पिय प्यारी।
सुनहु 'सूर' ज्यौ होम अगिनि घृत, ताहू तै यह न्यारी ॥ २१२० ॥

राग धनाश्री ॥ २७३९ ॥

देखि सखी राधा अकुलानी।
ऐसै अंग अंग छवि लूटति, मिलैहु नहीं पतियानी ॥
जैसै तृपावंत जल अँचवत, वह तौ पुनि ठहरात।
यह आतुर छवि लै उर धारति, नैकु नही तृपितात ॥
ज्यौ चकोर इकटक निसि चितवत, याकी सरि सोउ नाहिं।
ज्यौं घृत होम वह्नि की महिमा, 'सूर' प्रगट या माहिं ॥ २१२१ ॥

राग केदारौ ॥ २७४० ॥

जद्यपि राधिका हरि संग।
हाव भाव, कटाच्छ लोचन, करत नाना रंग ॥
हृदय व्याकुल, धीर नाही, बदन कमल विलास।
तृपा मैं जल नाम सुनि ज्यौ, अधिक अधिकहि प्यास ॥
स्याम रूप अपार उत, इत लोभ पुट विस्तार।
'सूर' मिति नहि लहत कोऊ, दुहुँनि वल अधिकार ॥ २१२२ ॥

राग केदारौ ॥ २७४१ ॥

राधेहिं मिलेहूँ प्रतीति न आवति।
जदपि नाथ-बिधु-बदन विलोकत, दरसन कौ सुख पावति।
भरि भरि लोचन रूप-परम-निधि, उरमैं आनि दुरावति।
भरि भरि लोचन रूप-परम-निधि, उरमैं आनि दुरावति।
चितवत चकित रहति चित अतर, नैन निमेष न लावति।
सपनौ आहि कि सत्य ईस यह, बुद्धि वितर्क बनावति।
कवहुँक करति विचार कौन हौ, को हरि कै हिय भावति।
'सूर' प्रेम की बात अटपटी, मन तरग उपजावति ॥ २१२३ ॥

राग रामकली ॥ २७४२ ॥

देखेहुँ अनदेखे से लागत।
जद्यपि करत रंग भए एकहि, इक टक रहैं निमिष नहिं त्यागत ॥
इत रुचि दृष्टि मनोज महासुख, उत सोभा गुन अमित अनागत।
वाढ्यौ बैर करन अर्जुन ज्यौं, द्वै महिं एक भुनि नहिं भागत ॥
उत सनमुख श्री सावधान सजि, इत सनेह अँग अँग अनुरागत।
ऐसे 'सूर' सुभट ये लोचन, अधिकौ अधिक स्याम सुख माँगत ॥ २१२४ ॥

राग कान्हरौ ॥ २७४३ ॥

देखियत दोउ अहँकार परे।
उत हरि रूप, नैन याके इत, मानहुँ सुभट अरे ॥
रुचिर सुदृष्टि मनोज महासुख, इन इत एक करे।
उन उत भूषन भेद व्यूह रचि, अँग अँग धनुष धरे ॥
ये अति रति-रन रोष न मानत, निमिष निषंग भरे।
बाहु-बिधाहि न बदत पुलक-रह सब अँग सर सँचरे ॥
वै श्री, ये अनुराग, 'सूर' सजि, छिन छिन बढ़त खरे।
मानहुँ उमँगि चल्यौ चाहत है, सागर सुधा भरे ॥ २१२५ ॥

राग विहागरौ ॥ २७४४ ॥

नख सिख अंग-अंग-छवि देखत, नैना नाहिं अघाने।
निसि बासर इकटकही राखे, पलक लगाइ न जाने ॥
छवि तरंग अगिनित सरिता जल, लोचन तृप्ति न माने।
'सूरदास' प्रभु की सोभा कौ, अति व्याकुल ललचाने ॥ २१२६ ॥

राग विभास ॥ २७४५ ॥

ललिता संग सखिनि कौ लीन्हे।
दंपति सुख देखति अति भावत, इकटक लोचन दीन्हे ॥
प्यारी स्याम अंग की सोभा, निदरे देख्यौ चाहत।
उत नागर नागरि नैननि कौ, निदरि, रूप अवगाहत ॥
उत उदार सोभा की सीवाँ, इत लोभहिं नहिं पार।
'सूर' स्याम अँग अँग की सोभा, निरखति बारंबार ॥ २१२७ ॥

राग गुंड मलार ॥ २७४६ ॥

निदरि अँग अँग छवि लेति राधा।
यह कहति, कितिक सोभा करैंगे स्याम, मेटिहौं आजु मन सबै साधा।
उतहि हरि रूप की रासि, नहीं पार कहूँ, दुहुनि मन परसपर होड़ कीन्हौ ॥
ये इतहि लुब्ध, वै उतहि उदार नित, दुहुनि बल अंत नहिं परत चीन्हौ ॥
जुरे रन बीर ज्यौं, एक तै इक सरस, मुरत कोउ नहीं, दोउ रूप भारी।
'सूर' के स्वामि, स्वामिनी राधा, सरस निरस कोउ नाहिं लखि लई नारी ॥ २१२८ ॥

राग मारू ॥ २७४७ ॥

रूपे संग्राम रति खेत नीके।
एक तै एक रनबीर जोधा प्रबल, मुरत नहिं नैकु अति सबल जी के ॥

भौह कोदंड, सर नैन, धानुषि काम, छुटनि मानौ कटाच्छनि निहारैं ।
हँसनि द्रुज चमक करवगनि लौ है झलक नखनि-छत-घात नेजा सम्हारैं ।।
पीत पट डारि, कंचुकी मोचित करन, कवच सन्नाह सो छुटे तन तैं ।
भुजा भुज धरत, मनु द्विरद सुडनि लरत, उर उरनि भिरे दोउ जुरे मन तैं ।।
लटकि लपटानि मानो सुभट लरि परे खेत, रति सेज, रुचि ताम कीन्हे ।
'सूर' प्रभु रसिक प्रिय राधिका रसिकिनी, कोक गुनसहित सुख लूटि लीन्हे ।। २१२९ ।।

राग नट ।। २७४८ ।।

किसोरी अँग अँग भेटी स्यामहिं ।
कृष्न तमाल तरल भुज साखा, लटकि मिली ज्यौं दामहि ।।
अचरज एक लता गिरि उपजै, सोउ दीन्हे करुनामहि ।
कछुक स्यामता स्यामल गिरि की, छाई कनक अगामहि ।।
गिरिवर धरन सुरत-रति-नायक, रति जीत्यौ सग्रामहि ।
'सूर' कहै ये उभय सुभट विच, क्यौ जु वसे रिपु कामहि ।। २१३० ।।

राग नट ।। २७४९ ।।

लपटे अंग सौ सब अंग ।
सुरसरी मनु कियौ संगम, तरनि तनया संग ।।
जोरि अंक प्रयक पौढे, ओढि वसन सुरंग ।
गिरत करते कुसुम कुंतल, अग्ल तरल तरंग ।।
नवल मृगदृग त्रिपित आतुर, पिवत नीर निसंग ।
नाद किंकिनि केहरी सुनि, चपल होत सारग ।।
वाहुवनि वन विविध फूले, जलज जमुना गंग ।
ललित लटकनि डोल मानो, मधुप माल मतग ।।
कुच कटोर किसोर उर त्रिवि., लगत उछरि उमग ।
कमठ पायौ असम, साजत उमँगि होत उतग ।।
वनी वेसरि नासिका मिलि, मिले दोउ अरधग ।
मैन मनसा वस परचौ मिटि, चपल नाल तरंग ।।
करभ नथ नव जोति सगम, जोर भूप अनंग ।
देत दोन विलास सहचर, 'सूर' सुविधि सु अंग ।। २१३१ ।।

राग नट ।। २७५० ।।

रसना जुगल रसनिधि वोल ।
कनक वेलि तमाल अरु ी, सुभुज वंध अखोल ।।
भृग जूथ सुधाकरनि मनु, सघन आवत जात ।
सुरसरी पर तरनि तनया, उमँगि तट न समात ।।
कोकनद पर तरनि तांडव, मीन खंजन संग ।
कीर तिल जल सिखर मिलि जुग, मनौ संगम रग ।
जलद तैं तारा गिरत खसि, परत पयनिधि माहि ।
जुग भुजंग प्रसन्न मुख ह्वै, कनक घट लपटाहिं ।।
कनक संपुट कोकिला रस विवस ह्वै दै दान ।
विकच कंज अनरँगी पर लसि, करत पय पान ।।

दामिनी थिर, घन घटा चर, कबहुँ ह्वै इहिं भाँति।
कबहुँ दिन उद्योत, कबहूँ होति अति कुहु राति॥
सिंह मध्य सनाद मनि गन, सरस सर कै तीर।
कमल जुग बिनु नाल उलटे, कछुक तीच्छन नीर॥
हंस साखा सिखर चढि चढि, करत नाना नाद।
मकर निजपद निकट बिहरत, मिलन अति अहलाद॥
प्रेम हित कैं छीर सागर, भई मनसा एक।
स्याम मनि के अग चदन, अमी के अभिषेक॥
'सूरदास' सखी सबै मिलि, करति बुद्धि बिचार।
समय सोभा लगि रही, मनु सूम कौ संसार॥ २१३२॥

राग रामकली॥ २७५१॥

सोभा सुभग आनन ओर।
त्रास तैं तनु त्रसित तिरछै चितै देति अँकोर।
निरखि समकरि कियौ चाहत, बदन बिधु की जोर।
तुला बिच लोकेस तौलै, गरुअ आनन गोर॥
दरस पति रुचि मुदित मनसिज, चपल दृगहिं चकोर।
कोस क्रीडित मीन मानौ, नील नीरज भोर॥
स्याम सुदर नैन जग बर, झलक कज्जल कोर॥
सुधा सर सकेत मानौ, कुहू दानव चोर॥
स्रवन मनि ताटक मजुल, कुटिल कुंतल छोर।
मकर सकट काम बागी अलक फदनि डोर॥
चिकुर अध नव मोति मडल, तरल लट तन तोर।
जनु बिध्वसित व्याल बालक, अमी की झकझोर॥
स्वेद सीकर गड मंडित, रूप अबुज घोर।
उमँगि ईपद ज्यौ स्रवत, पीयूष कुंभ झकोर॥
मुदित मधुकर त्रिदुगन-मकरद-मध्य न घोर।
हँसत दसननि चमक बिद्युत लसत कुलिस कठोर॥
निरखि सोभा समर लज्जित इदु भयौ भ्रम भोर।
'सूर' धन्य सु नव किसोरी धन्य नंदकिसोर॥ २१३३॥

राग बिलावल॥ २७५२॥

धन्य कान्ह धनि राधा गोरी।
धनि यह भाग, सुहाग धन्य यह, नवल-नवला नव - जोरी॥
धनि यह मिलनि, धन्य यह बैठनि, धनि अनुराग नहीं रुचि थोरी।
धनि यह अरस परस छबि लूटनि, महाचतुर, मुख-भोरे-भोरी॥
प्यारी अंग अग अबलोकति, पिय अवलोकत लगति ठगोरी।
'सूरदास' प्रभु रीझि थकित भए, नागरि पर डारत तृन तोरी॥ २१३४॥

राग धनाश्री॥ २७५३॥

नागरिछबि पर रीझे स्याम।
कबहुँक वारत है पीतांबर, कबहुँक वारत मुक्तादाम॥

कबहुँक धारत है कर मुरली, कबहुँक वारत मोहननाम।
निरखि रूप सुख अंत लहत नहिं, तनु मन वारत पूरनकाम॥
बारंबार सिहात 'सूर' प्रभु, देखि देखि राधा सौ बाम।
इनकौ पलक ओट नहिं करिहौं, मन यह कहत बासरहु जाम॥ २१३५॥

राग बिलावल॥ २७५४॥

स्याम निरखि प्यारी अँग अंग।
सकुचि रहत मुखतन नहिं चितवत, जिहिं बस रहत अनंत अनग॥
चपल नैन दीरघ अनियारे, हाव भाव नाना गति भंग।
वारौं मीन कोटि अंबुजगन, खजन वारौं कोटि कुरंग॥
लोचन नहिं ठहरात स्याम के, कबहूँ बनिता के इक अंग।
'सूरदास' प्रभु यौं प्यारी बस, ज्यौं बस डोर फिरत सँग चग॥ २१३६॥

राग आसावरी॥ २७५५॥

निरखि स्याम प्यारी-अँग-सोभा, मन अभिलाष बढ़ावत है।
प्रिया अभूषन माँगत पुनि पुनि, अपनै अंग बनावत है॥
कुंडल तट तरिवन लै साजत, नासा बेसरि धारत है।
बैंदी भाल, माँग सिर पारत, बेनी गूथि सँवारत है॥
प्यारी नैननि कौ अंजन लै, अपने नैननि अंजत है।
पीतांबर ओढ़नी सीस दै, राधा कौ मन रंजत है॥
कंचुकि भुजनि पहिरि उर धारत, कंठ हमेल सजावत है।
'सूर' स्याम लालच तिय तनु पर, करि सिंगार सुख पावत है॥ २१३७॥

टोरा गड़ो॥ २७५६॥

स्याम भए राधा बस ऐसै।
चातक स्वाति, चकोर चंद ज्यौं, चक्रवाक रवि जैसै।
नाद कुरंग, मीन जल की गति, ज्यौ तन के बस छाया॥
इकटक नेन अंगछबि मोहे, थकित भए पतिजाया॥
उठै उठत, बैठै बैठत है, चलै चलत सुधि नाही।
'सूरदास' बड़भागिनि राधा, समुझि मनहिं मुसुकाही॥ २१३८॥

राग नट॥ २७५७॥

स्यामा स्याम छबि की साध।
मुकुट-कुंडल-पीतपट-छबि, देखि रूप अगाध॥
प्रिया हा हा करति पुनि पुनि, देहु प्रीतम मोहिं।
अंग अंग सँवारि भूषन, रहति वह छबि जोहि॥
काछि कछनी पीत पट, कटि किंकिनी अति सोभ।
हृदय बनमाला बनावति, देखि छबि मन लोभ॥
स्रवन कुंडल धारि सोभा, सीस रचि सीपंड।
'सूर' स्याम सुहागिनी रुचि, कनक कर लै दंड॥ २१३९॥

राग कर्नाटी॥ २७५८॥

श्री गोपाल लाल जी बसी नैंकु तिहारी पाऊँ।
करनाटी गौरी मैं गाऊँ मुरलि बजाइ रिझाऊँ॥

तुम सँगीत गावत जेइ जेई, तेइ तेइ तान सुनाऊँ ।।
तहँ लगि गान सुनाऊँ, जहँ लगि सप्त सुरनि मैं पाऊँ ।।
सुरनि विमान थकित करि राखौ, कलिंदीहि थिराऊँ ।
बेनी, सीस फूल पहिरौ तुम, मैं सिर मुकुट बनाऊँ ।।
तुम वृषभानु सुता ह्वै बैठौ, मैं नँदलाल कहाऊँ ।
तुम मानिनि ह्वै गान करौ पुनि, मैं गहि चरण मनाऊँ ।।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस कौ, भक्ति भावना पाऊँ ।
कीजै कृपा आपनै अनुचर, अनुपम लीला गाऊँ ।। २१४० ।।

राग नट ।। २७५९ ।।

तिहारी लाल मुरली नैकु बजाऊँ ।
जो जिय होति प्रीति कहिबे की, सो धरि अधर सुनाऊँ ।।
जैसी तान तुम्हारे मुख की, तैसीयै मधुर उपाऊँ ।
जैसै आपु अधर धरि फूँकत, मैं अधरनि परसाऊँ ।।
जैसै फिरति रंध्र मग अगुरी, तैसै मैंहूँ फिराऊँ ।
हा हा करति पाइ हौ लागति, बाँस बसूरिया पाऊँ ।।
सारँग नट पूरबी मिलै कै, राग अनूपम गाऊँ ।
तुम्हरे आभूषन मैं पहिरौ, अपने तुम्है पिन्हाऊँ ।।
तुम बैठौ दृढ मान साजि कै, मैं गहि चरन मनाऊँ ।
तुम राधे, हौ माधौ, माधौ ऐसी प्रीति जनाऊँ ।।
यह अभिलाष बहुत मेरै जिय, नैननि यहै दिखाऊँ ।
'सूर' स्याम गिरिधरन छबीले, भुज परि कंठ लगाऊँ ।। २१४१ ।।

राग नट ।। २७६० ।।

हरि जु मुरली तुम्है सुनाऊँ ।
तुम सुर पुरवौ प्राननाथ प्रभु, हौ अंगुरीनि चलाऊँ ।।
मधुरै सुर गति राग रागिनी, भली तान उपजाऊँ ।
जिहिं जिहिं भाँति रिझहुँ नंदनंदन, तिहि तिहि भाँति रिझाऊँ ।।
अंस बाहु धरि कर पकरौगी, सर्वस सुख हौ पाऊँ ।
'सूरदास' अटकै न चलै पल, मन अभिलाष बढाऊँ ।। २१४२ ।।

राग नट ।। २७६१ ।।

प्यारी कर बाँसुरी लई ।
सनमुख ह्वै तुम सुनौ रसिक पिय, ललित त्रिभंग भई ।।
उठति राग रागिनि तरंगनि, छिनु छिनु उपज नई ।
आल बाल नँदलाल स्रवन वर, जनु मोहिनी बई ।।
नमित सुधाकर वदन अमित छवि, मनमोहन चितई ।
मनहुँ चकोर मत्त मेचक भृग, तनु सुधि विसरि गई ।।
करि पीतांबर छाह नाह कौ, अलबेली रिझई ।
'सूरदास' हँसि कमलनैन कहँ, राधा अंक दई ।। २१४३ ।।

राग गूजरी ।। २७६२ ।।

मुरली लई कर तै छीनि ।
ता समय छवि कही जाति न, चतुर नारि नवीन ।।

कहति पुनि पुनि स्याम आगैं, मोहि देहु सिखाइ।
मुरलि पर मुख जोरि दोऊ, अरस परस बजाइ॥
कृष्न पूरत नाद, अछरत प्यारि रिस करि गात।
बार बारहि अधर धरि धरि, बजति नहि अकुलात॥
प्रिया भूषन स्याम पहिरत, स्याम भूषन नारि।
'सूर' प्रभु करि मान बैठे तिय करति मनुहारि॥ २१४४ ॥

राग बिलावल ॥ २७६३ ॥

कहति नागरी स्याम सौ, तजि मान हठीली।
हम तै चूक कहा परी, तिय गर्व गहीली॥
हँसतहि मैं तुम रिस कियौ, कह प्रकृति तुम्हारी।
बार बार कर धरति है, कहि कहि सुकुमारी॥
वृथा मान नहिं कीजियै, सिर चरननि धारति।
आनन आनन जोरि कै, पिय मुखहि निहारति॥
निठुर भई हौ लाडिली, कब के हम ठाढे।
तुम हम पर रिस करति हौ, हम है तुव चाढे॥
स्याम कियौ हठ जानि कै, इक चरित बनाऊँ।
सुनहु 'सूर' प्यारी हृदय, रस बिरह उपाऊँ॥ २१४५ ॥

राग बिलावल ॥ २७६४ ॥

लाल निठुर ह्वै बैठि रहे।
प्यारी हा हा करति, मनावति, पुनि पुनि चरन गहे॥
नहिं बोलत, नहिं चितवत मुख तन, धरनी नखनि करोवत।
आपु हँसति पुनि पुनि उर लागति, चकित होति मुख जोवत॥
कहा करत यह बोलत नाहीं, पिय यह खेल मिटावहु।
'सूर' स्याम मुख कोटि-चंद्र-छवि, हँसिकै मोहि दिखावहु॥ २१४६ ॥

राग धनाश्री ॥ २७६५ ॥

नागरि हँसति हृदय डर भारी।
कबहुँ अंक भरि लेति उरज बिच, कबहुँ करति मनुहारी॥
मान करत नीकै नहिं लागौ, दूरि करौ यह ख्याल।
नैकु नही चितवत राधा तन, निठुर भए नँदलाल॥
सीस धरति चरननि लै पुनि पुनि, पिय कौ रूप निहारत।
'सूरदास' प्रभु मान धरयौ दृढ, धरनी नखनि बिदारत॥ २१४७ ॥

राग गुंड ॥ २७६६ ॥

निरखि पिय रूप तिय चकित भारी।
किधौं वै पुरुष मैं नारि, की वै नारि मै ही हौं पुरुष, तन सुधि बिसारी॥
आपु तन चितै सिर मुकुट, कुंडल स्रवन; अधर मुरली, माल बन बिराजै।
उतहिं पिय रूप सिर माँग बेनी सुभग, भाल बेंदी बिंदु महा छाजै॥
नागरी हठ तजौ, कृपा करि मोहि भजौ, परी कह चूक सो कहौ प्यारी।
'सूर' नागरी प्रभु-बिरह-रस मगन भई, देखि छवि हँसत गिरिराज धारी॥
॥ २१४८ ॥

राग धनाश्री ॥ २७६७ ॥

निरखत पिय प्यारी अँग अंग विरह सोभा।
कबहुँ पिय चरन परसति, कबहुँ भुज अंक भरति, कबहुँ जिय डरति, बचन सुनिबे की लोभा ॥
कबहुँ कहति पिय सों, पिय, कबहुँ कहति प्यारी हो, हा हा करि पाइ परनि, बिकल भई बाला।
कबहुँ उठति, कबहुँ बैठि पाछैं ह्वै रहति, कबहुँ आगैं ह्वै बदन हेरि परी विरह ज्वाला ॥
काहै तुम कियौ मान, बोले बिनु जात प्रान, दंपति है संग दसा ऐसी उपजाई।
रीझे प्रिय 'सूर' स्याम, अंकम भरि लई बाम, विरह द्वंद मेटि हरष हृदय मैं बसाई ॥
॥ २१४९ ॥

राग धनाश्री ॥ २७६८ ॥

प्रिया प्रिय लीन्हो अंकम लाइ।
खेलत मैं तुम विरह बढ़ायौ, गई कहा बितताइ !
तुमही कह्यौ मान करिबे कौ, आपुहि बुद्धि उपाइ।
काहै बिबस भई बिनु कारन ऐसौ गई डराइ ॥
सुनु प्यारी यह भाव बतायौ, अंतर गयौ, जनाइ।
बारंबार अलिंगन दीन्हो, अबहिं रही मुरझाइ ॥
अति सुख दै सुख कौ बिसरायौ, राधरमन कन्हाइ।
सींची कनकलता 'सूरज' प्रभु, अमृत बचन सुनाइ ॥ २१५० ॥

राग गुंड मलार ॥ २७६९ ॥

स्याम तनु प्रिया भूषन बिराजै।
कनक-मनि-मुकुट, कुंडल स्रवन, माल उर अधर मुरली धरे नारि छाजै ॥
निरखि छबि परसपर रीझे दोउ नारि वर, गयौ तजि बिरह डर, प्रेम पागे।
'सूर' प्रभु नागरी हँसति, मन मन रसति, बसति मन स्याम कै बड़े भागे ॥२१५१॥

राग नट ॥ २७७० ॥

नागरि भूषन स्याम बनावत।
श्री नागरि नागर सोभा अँग, कियौ निरखि मन भावत ॥
स्यामा कनक लकुट कर लीन्हे, पीतांबर उर धारै।
बचन परस्पर कोकिल बानी, स्याम नारि. पति राधा।
'सूर सरूप नारि पति काछे. पति तनु नारी साधा ॥२१५२॥

राग नट ॥ २७७१ ॥

नीकै स्याम मान तुम धारौ।
तुम बैठे दृढ मान ठानि, मैं मेटचौ, मान तुम्हारौ ॥
यह मन साध बहुत ही मेरैं, तुम बिनु कौन निवारै।
नागरि पिय तनु अपनी सोभा, बारबार निहारै ॥
बेनी माँग, भाल बेंदी छबि, नैननि अंजन रंग।
'सूर' निरखि पिय घूँघट की छबि, पुलकि न मावति अंग ॥ २१५३ ॥

राग धनाश्री ॥ २७७२ ॥

कुंज बन गवन दंपति बिचारैं।
नारि को वेष करि, नारि के मनहि हरि, मुकुर लै भावती छबि निहारैं ॥

भामिनी अंग वह वेप नटवर निरखि, हँसतही हँसत सब मेटि डारे।
सहज अपनौ रूप धरचौ मन भावती, और भूपन तुरत अंग धारे॥
तिया कौ रूप धरि, संग राधा कुँअरि, जात ब्रजखोरि नहिं लखत कोऊ।
'सूर' स्वामिनी स्वामी बने एक से, कोउ न पटतर अरसपरस दोऊ॥
॥ २१५४ ॥

राग गौरी ॥ २७७३ ॥

नदनँदन तियछवि तनु काछे।
मनु गोरी साँवरी नारि दोउ, जाति सहज मैं आछे॥
स्याम अंग कुसुमी नई सारी, फल गुंजा की भाँति।
इत नागरि नोलावर पहिरे, जनु दामिनि घन काँति॥
आतुर चले जात बनधामहि, मन अति हरप बढाए।
'सूर' स्याम वा छवि कौ नागरि निरखति नैन चुराए॥ २२५५ ॥

राग कान्हरौ ॥ २७७४ ॥

मन ही मन रीझति है राधा, वह पिय रूप निहारै।
निरखि भाल बेंदी सेंदुर की, छवि पर तन मन वारै॥
यह मन कहति सखी जनि देखै, बूझै मे कह कैहौ।
तिहूँ भुवन सोभा सुख की निधि, कैसें इन्है दुरैहौ॥
पग जेहरि बिछियनि की झमकनि, चलत परसपर बाजति।
'सूर' स्याम स्यामा सुख जोरी, मनि-कंचन-छवि लाजत॥ २१५६ ॥

राग कल्यान ॥ २७७५ ॥

स्यामा स्याम कुंज बन आवत।
भुज भुज कंठ परस्पर दीन्हे, यह छवि उनही पावत॥
इततैं चंद्रावली जाति ब्रज, उततैं ये दोउ आए।
दूरिहि तैं चितवति उनही तन, इक टक नैन लगाए॥
एक राधिका दूसरि को है; याकौ नहि पहिचानौ।
ब्रज-वृपभानु-पुरा-जुवतिनि कौ, इक इक करि मैं जानौ॥
यह आई कहुँ और गाँव तैं, छवि साँवरी सलोनी।
'सूर' आजु यह नई बतानी, एकौ अँग न बिलोनी॥ २१५७ ॥

राग सोरठ ॥ २७७६ ॥

राधा भकुचि स्याम मुख हेरति।
चंद्रावली देखि कै आवत, ब्रज ही कौ पिय फेरति॥
जाहु जाहु मुख तै कहि भापति, कर तै कर नहिं छूटत।
उतहिं सखी आवत सकुचानी, इतहि स्याम सुख लूटत॥
दुख सुख हरप कछू नहि जानति, स्याम महारस मातो।
'सूर उतहि चंद्रावलि इकटक, उनही कै रँग रातो॥ २१५८ ॥

राग गौरी ॥ २७७७ ॥

यह वृपभानु सुता वह को है।
याकी सरि जुवती कोउ नाही, यह त्रिभुवन मन मोहै॥
अति आतुर देखन कौ आवति, निकट जाइ पहिचानौ।
ब्रज मैं रहति किधौं कहुँ औरै, बूझै तैं तब जानौ॥

यह मोहिनी कहाँ तैं आई, परम सलोनी नारी।
'सूर' स्याम देखत मुसुक्यानी, करी चतुरई भारी।। २१५९ ।।

राग गौरी ।। २७७८ ।।

इन तैं निधरक और न कोई।
कैसी बुद्धि रची न नोखी, देखी सुनी न होई।।
यह राधा से हाथ विधाता, बुद्धि चतरई बानी।
कैसै स्याम चुराइ चली लै, अपने भुपन ठानी।।
और कहा इनकौं पहिचानैं, मोपै लखे न जात।
'सूर' स्याम चद्रावलि जाने, मनही मन मुसुकात।। २१६० ।।

राग कान्हरौ ।। २७७९ ।।

सकुच छाँडि अब इनहि जनाऊँ।
ये तौ चले आपने काजहि, मैं काहे न समुझाऊँ।।
मन ही मन मैं जीति जाहिंगे, जानिबूझि निदराऊँ।
ये चतुरई काल्हि कै आए. सो सब प्रगटि दिखाऊँ।।
बडे गुनज्ञ कहावत दोऊ, इनकौं लाज लजाऊँ।
'सूर' स्याम राधा की करनी महिमा प्रगट सुनाऊँ।। २१६१ ।।

राग सारंग ।। २७८० ।।

कहि राधा ये को है री।
अति सुंदरि साँवरी सलोनी, त्रिभुवन-जन-मन मोहै री।।
और नारि इनकी सरि नाहीं, कहो न हम तन जोहै री।
काकी सुता, बधू है काकी, काकी जुवती धौं है री।।
जैसी तुम तैसी है येऊ, भली बनी तुमसौं है री।
सुनहु 'सूर' अति चतुर राधिका, येइ चतुरनि की गौं हैं री।। २१६२ ।।

राग ईमन ।। २७८१ ।।

मथुरा तैं ये आई हैं।
कछु संबध हमरौ इनसौं, तातैं इनहि बुलाई हैं।।
ललिता संग गई दधि बेंचन, उनही इनहि चिन्हाई हैं।
उहै सनेह जानि री सजनी, आजु मिलन हम आई हैं।।
तब ही की पहिचानि हमारी, ऐसी सहज सुभाई हैं।
'सूरदास' मोहि आवत देखो, आपु संग उठि धाई हैं।। २१६३ ।।

राग सोरठ ।। २७८२ ।।

इनकौं अजही क्यौ न बुलावहु।
की वृषभानुपुरा, की गोकुल, निकटहि आनि बसावहु।।
येऊ नवल, नवल तुमहूँ हौ, मोहन कौ दोउ भावहु।
मोकौ देखि कियौ अति घूँघट, काहे न लाज छुडावहु।।
यह अचरज देख्यौ नहि कबहूँ, जुवतिहि जुवति दुरावहु।
'सूर' सखी राधा सो पुनि पुनि, कहति जु हमहि मिलावहु।। २१६४ ।।

राग हमीर ।। २७८३ ।।

साँवरै तनु कुसुँभि सारि, सोहति है नीकी (री)।
मानौ रतिपति सँवारी बनी, रवनि जी की (री)।।

राधा तैं अतिहिं सरस, स्याम देखि भावै (री)।
ऐसी यह न नारि और. नारि मन चुरावै (री)॥
घूँघटपट वदन ढाँकि, काहे इन राख्यौ (री)।
चितवहु मो तन कुमारि, चंद्रावलि भाष्यौ (री)॥
आपुहिं पट दूरि कियौ, तरुनी वदन देख्यौ (री)।
मनही मन सफल जानि, जीवन जग लेख्यौ (री)॥
नैन नैन जोग्त महिं, भाव सौं लजाने (री)।
'सूर' स्याम नागरिमुख, चितवत मुसुकाने (री)॥ २१६५॥

राग बिहागरौ ॥ २७८४ ॥

मथुरा मैं बस बास तुम्हारौ ?
राधा तैं उपकार भयौ यह, दुर्लभ दरसन भयौ तुम्हारौ॥
वार वार कर गहि गहि निरखति, घूँघट ओट करौ किन न्यारौ।
कबहुँक कर परसति कपोल छुइ, चुटकि लेति ह्याँ हमहि निहारौ॥
कछु मैं हूँ पहिचानति तुमकौं, तुमहि मिलाऊँ नंददुलारौ।
काहे कौं तुम सकुचति हौ जू, कहौ कहा है नाम तुम्हारौ॥
ऐसी सखी मिली तोहि राधा, तौ हमकौं काहे न बिसारौ।
'सूरदास' दंपति मन जान्यौ, यातैं कैसैं होत उबारौ॥ २१६६॥

राग रामकली ॥ २७८५ ॥

राधा सखी मिली मन भाई।
जब तैं इनसौं नेह लगायौ, बहुत भई चतुराई॥
और भयौ इनतें तुमकौ सुख, गृहजन सौं निठुराई।
काहू कौ मन मैं नहि आनति, हमहुँ सबनि बिसराई॥
तुम हौ कुसल, कुसल है येऊ, आपु स्वारथी माई।
'सूर' परस्पर दंपति आतुर, चतुर सखी लखि पाई॥ २१६७॥

राग रामकली ॥ २७८६ ॥

यह सखि अब लौं कहाँ दुराई।
इते दिवस हम कबहुँ न देखी, अब जु कहाँ तैं आई॥
त्रिभुवन की सोभा सब गुननिधि, है विधि एक उपाई।
विद्यमान वृषभानुनंदिनी सहचरि सब सुखदाई॥
अपनैं मन तकि तकि तनु तोलति, बिय जन सुंदरताई।
द्वितिय रूप की रासि राधिका, कहौ कौन पुर पाई॥
राँचि रहे रस सुरति 'सूर' दोउ, निरखत नैंन निकाई।
चीन्हे हौ चलि जाहु कुंजगृह, छाँड़ि देहु चतुराई॥ २१६८॥

रामकली ॥ २७८७ ॥

ऐसी कुँवरि कहाँ तुम पाई।
राधा हूँ तें नखसिख सुंदरि, अब लौं कहाँ दुराई॥
काकी नारि, कौन की बेटी, कौन गाउँ तैं आई।
देखी सुनी न ब्रज, बृंदावन, सुधि बुधि हरति पराई॥
धन्य सुहाग भाग याकौ, यह जुवतिनि की मनभाई।
'सूरदास' प्रभु हरषि मिले हँसि, ले उर कंठ लगाई॥ २१६९॥

राग गुंड मलार ॥ २७८८ ॥

नंदनंदन हँसे नागरी मुख चितै, हरषि चंद्रावली कंठ लाई।
वाम भुज रवनि, दच्छिन भुजा सखी पर, चले वनधाम सुख कहि न जाई॥
मनौ बिबि दामिनी बीच नव घन सुभग, देखि छबि काम रति सहित लाजै।
किधौं कंचनलता बीच सु तमाल तरु, भामिनिनि बीच गिरिधर बिराजै॥
गए गृह कुंज, अलि गुंज, सुमननि पुंज, देखि आनंद भरे 'सूर' स्वामी।
राधिकारवन, जुवतीरवन मनरवन निरखि छबि मन काम कामी॥
॥ २१७० ॥

राग वैराटी ॥ २७८६ ॥

बसे री नैननि मैं पट इंदु।
नंदनंदन वृषभानुनंदिनी सखी सहित सोभित जग वंद॥
द्वादस ही पतंग, ससि सौ बिस, षट फनि, चौबिस चतुरँग छंद।
द्वादस बिंब, सौ वानवे वज्रकन, षट कमलनि मुसक्यात जु मंद॥
द्वादस ही मृनाल, कदली खँभ, लखि द्वादस मंगल आनंद।
द्वादस ही सायक, द्वादस धनु, खग ब्यालीस माधुरी फंद॥
चौबिस चतुष्पदनि सोभा मनु, चलत चुवत करभा मकरंद।
पीत गौर दामिनि बिच राजत, अनुपम छबि श्री गोकुल चंद॥
साठि जलज अरु द्वादस सरवर, अगहि अंग सरस रस कंद।
'सूर' स्याम पर तन मन वारति ललिता, देखि भयो आनंद॥ २१७१ ॥

राग केदारौ ॥ २७६० ॥

कुंज सुहावनौ भवन वनि ठनि वैठे राधारवन।
बरन बहु कुसुम प्रफुलित ससि की किरनि जगमग द्युति तैसोई बहै त्रिविधि पवन॥
अलिगन पिक मंगल धुनि गावत, मन भावत सुनि, देखत दंपति अति बिवस मन।
'सूरदास' प्यारी प्रभु राजत सँग साजत सुन, लखि सखि वारति रतिपति सयन॥
॥ २१७२ ॥

राग बिलावल ॥ २७८१ ॥

सँग सोभित वृषभानुकिसोरी।
सारँग नैन, बैन बर सारँग, सारँग बदन, कहै छबि कोरी॥
सारँग अधर, सुघर कर सारँग, सारँग जति, सारँग मति भोरी।
सारँग बरन, पीठि पर सारँग, सारँग गति, सारँग कटि थोरी॥
सारँग पुलिन, रजनि रुचि सारँग, सारँग अंग भुभग भुज जोरी।
बिहरत सघन कुंज सखि निरखति, 'सूर' स्याम घन, दामिनि गोरी॥
॥ २१७३ ॥

राग बिलावल ॥ २७६२ ॥

कुंजभवन राधा मनमोहन।
रति बिलास करि मगन भए अति, निरखत नैन लजौहन॥
तियतन कौ दुख दूरि कियौ पिय. दै दै अपनी सौहन।
बार बार भुज धरि अंकम भरि, मिलि बैठे दोउ गोहन॥
पीतांबर पट सौं मुख पोंछत, हरषि परस्पर जोहन।
'सूर' स्याम स्यामा मन रिझवत, पीन कुचनि टकटोहन॥ २१७४ ॥

राग विहागरौ ॥ २७९३ ॥

वनहिं धाम सुख रैनि विहाई।
तैसियै नवल राधिका नागरि, तैसेइ नवल कन्हाई॥
तैसोइ पुलिन पवित्र जमुन कौ, तैसोइ मंद सुगंध।
तैसियै कंठ कोकिला कुहुकनि, तैसोइ सुख संबध॥
रति विहार करि पिय अरु प्यारी, प्रात चले ब्रज धाम।
'सूरदास' दोउ वाहाँजोरी, राजत स्यामा स्याम॥ २१७५ ॥

राग ललित ॥ २७९४ ॥

नवल निकुंज नवल रस दोऊ, राजत है अतिसय रँग भीने।
कुसुमनि सेज भोर उठि आवत, आलस जुत असनि भुज दीने॥
अरुन नैन कुच रेष बिराजति, स्रम जल बसन पलटि तनु लीने।
'सूरज' प्रभु-प्यारी-सुख निरखति, सखिनि सहित ललिता दृग दीने॥२१७६॥

राग कान्हरौ ॥ २७९५ ॥

बरन बरन बादर मन हरन उदै करन मंजु निकसत बन धाम तैं ऐसे दोउ लागे।
राजत, दुरि जात कबहुँ कबहूँ पुनि प्रगट होत अरुन भये जु नैन सब ही निसि जागे॥
मोर मुकुट पीत बसन इंद्र धनुप बीच बीच, मद मंद गरजनि बोलनि अनुरागे।
'सूरदास' प्रभु प्यारी कौ छवि प्रिय गावत नित, पावत कवि उपमा जे ते बड़भागे॥
॥ २१८७ ॥

राग अडानौ ॥ २७९६ ॥

वाहाँजोरी प्रात कुंज तैं निकसे रीझि रीझि कहै बात।
कुंडल झलमलात झलकत अति चकाचौंध नैन न ठहरात॥
राधा मोहन घन चपला ज्यौं चमक मेरी पुतरी न समात।
'सूर' स्याम के मधुर वचन सुनि भूल्यौमोहि पाँच औ सात॥ २१७८ ॥

राग बिलावल ॥ २७९७ ॥

नवल किसोर किसोरी जोरी, आवत है रति रँग अनुरागे।
कबहुँ चरन गति डगति लगति छवि, अलस नैन आनँद निसि जागे॥
बानक देखन रीझि रही हौं, अंजन पीक पलटि मुख लागे।
'सूरदास' प्रभु प्यारी राजत, आवत बने मरगजे बागे॥२१७९॥

राग सारंग ॥ २७९८ ॥

अरुझि रहे मुक्ता निरुवारति, सोहत घूँघरवारे बार।
रति मानो सँग नदनँदन के, टूटे बद कंचुकी, हार॥
निसि के जागे दोऊ नैना, ढरकि रहे जोवन मद भार।
'सूर' स्याम यह अति अनुपम सुख देखत रीझै वारंवार॥ २१८० ॥

राग विलास ॥ २७९९ ॥

नवल स्याम, नवला श्री स्यामा।
दोऊ राजत वाहाँजोरी, चले जात ब्रज धामा॥
या छबि को उपमा दीवे कौ त्रिभुवन नहीं उपामा।
दामिनि घन पटतर दीजै क्यौं, सकुचत कवि लिये नामा॥

सुधा सरीर परस्पर दोऊ, सुखदायक दिन जामा।
'सूरदास' नागरि नागर प्रभु, जीते रति अरु कामा ॥ २१८१ ॥

राग ललित ॥ २८०० ॥

दोउ वन तैं ब्रजधाम गए।
रति संग्राम जीति पिय प्यारी, भूपन सजत नए ॥
वै ब्रज गए आपु अपनै गृह, चित तैं कोउ न टारत।
मन वाचा कर्मना एक दोउ, एकौ पल न विसारत ॥
जैसै मीन नीर नहिं त्यागत, तनु खंडित वै पूरन।
'सूर' स्याम स्यामा दोउ देखौ, इत उत कोउ न अधूरन ॥ २१८७ ॥

राग धनाश्री ॥ २८०१ ॥

वहुरि फिरि राधा सजति सिँगार।
मनहुँ देति पहिरावनि अंग, रन जीते सुरत अपार ॥
कटि तट सुभटहिं देति रसन पट, भुज भूपन ,उर हार।
कर कंकन, काजर, नकवेसरि, दीन्हौ तिलक लिलार ॥
वीरा विहँसि देति अधरनि कौं, सन्मुख सहे प्रहार।
'सूरदास' प्रभु के जु विमुख भए, वाँधति कायर वार ॥ २१८३ ॥

राग कान्हरौ ॥ २८०२ ॥

आजु अति राधा नारि वनी।
प्रति प्रति अंग अनग जीति, रसवस त्रैलोक्य धनी ॥
सोभित केस विचित्र भाँति दुति सिपि-सिपंड-हरनी।
रची माँग सम भाग रागनिधि, काम-धाम सरनी ॥
अलक तिलक राजत अकलंकित, मृग-मद-अंक वनी।
खुभिनि जराव-फूल-दुति यौं, मनु द्वै ध्रुवगति रजनी ॥
भौह कमान समान वान मनु, द्वै जुग नैन अनी।
नासा तिल प्रसून, विवाधर, अमल-कमल-वदनी ॥
चिवुक मध्य मेचक रुचि राजत, विंदु कुंद रदनी।
कंवु-कठ-विधि लोक विलोकत, सुदरि एक गनी ॥
वाहु मृनाल, लाल कर पल्लव, मद-गज-गति-गवनी।
पति-मन-मनि-कंचन-संपुट-कुच, रोमराजि तटनी ॥
पति-मन-मनि-कचन-संपुट-कुच, रोमराजि तटनी ॥
नाभि भँवर, त्रिवली-तरंग-गति पुलिन-तुलिन-टटनी।
कृस कटि, पृथु नितंव, किंकिनि जुत, कदलि-खंभ-जघनी ॥
रचि आभरन सिंगार, अग सजि, ज्यौं रतिपति सजनी।
जीते 'सूर' स्याम गुन कारन, मुख न मुरचौ लजनी ॥ २१९४ ॥

राग विलावल ॥ २८०३ ॥

नंदनँदन वस कीन्हे राधा, भवन गए चित नैकु न लागत।
स्यामा स्याम रूप मंदिर मुख, अंतर तैं सो नैकु न त्यागत ॥
जा कारन वैकुठ विसारत, निज अस्थल मन मैं नहिं भावत।
राधा कान्ह देह धरि पुनि पुनि, जा सुख कौ वृंदावन आवन ॥

विछुरन मिलन विरह-सँजोग-सुख, नूतन दिन दिन प्रीति प्रकासत ।
'सूर' स्याम-स्यामा-विलास-रस, निगम नेति कहि कहि नित भाषत ॥ २१८५ ॥

राग कान्हरौ ॥ २८०४ ॥

राधा प्रान गोबर्धनधारी ।
कनक लता अरु चंपकली तन हरिहिं प्रानधन राधा प्यारी ॥
मरकत मनि नँदलाल लाडिलौ, कचन तनु वृषभानुदुलारी ।
'सूर' स्याम प्रिय प्रीति परस्पर, जोरी जुगल वनी बनवारी ॥ २१८६ ॥

राग टोड़ी ॥ २८०५ ॥

निगम नेति नित गावत जाकौ । राधा वस कीन्हौ है ताकौ ॥
निसि वनधाम संग रहे दोऊ । इक सँग नैकु टरे नहिं कोऊ ॥
प्रात गए घर घर रस पागे । अरस परस दोऊ अनुरागे ॥
अपनी अपनी दसा विचारैं । भाग वड़े कहि वारवारे ॥
प्यारी फेरि अभूपन साजति । वैठी रगमहल मैं राजति ॥
ज्यौं चकोर चदा कौ आतुर । त्यौं नागरि वस गिरिधर चातुर ॥
आए उझकि झरोखे झाँक्यौ । करत सिगार सुदरिहि ताक्यौ ॥
जाल-रंध्र-मग नैन लगायौ । 'सूर' स्याम मन कौ फल पायौ ॥ २१८७ ॥

राग टोडी ॥ २८०६ ॥

आधौ मुख नीलावर सौ ढँकि, विथुरी अलकैं सोहैं ।
एक दिसा मनु मकर चाँदनी, घन विजुरी मन मोहैं ॥
कवहुँ केस पाछे लै डारति, निकसन ससि ज्यौं जोहै ।
'सूर' स्याम प्यारी छबि देखत, त्रिभुवन उपमा को है ॥ २१८८ ॥

राग टोड़ी ॥ २८०७ ॥

दरपन लै कजराहि सँवारत ।
सीस फूल अति लसत नग जरचौ, ता पर सेस सीसमनि वारत ॥
करनफूल कर लिऐं सँवारति, बेदी बुद ललाट सुधारत ।
'सूर' स्याम दुरि देखत दरपन, मुख तै इकटक पलक न टारत ॥२१८९॥

राग गुडमलार ॥ २८०८ ॥

करति शृंगार वृषभानुवारी ।
रहे इकटक जाल रंध्र मग हेरि कैं, स्याम मन भावती परम प्यारी ॥
कवहुँ वेनी रचति फूल सौ मिलै कच, कवहुँ रचि माँग मोतिनि सँवारै ।
कवहुँ राखति सीसफूल लटकाइ कै, कवहुँ सदन विंदु भाल भारे ॥
कवहुँ केसरि आड रचति दर्पन हेरि, कवहुँ भ्रुव निरखि रिस करि सकारैं ।
निरखि अपनौ रूप आपु ही विवस भई, 'सूर' परछाँहि कौं नैन जोरैं ॥ २१९० ॥

राग टोड़ी ॥ २८०९ ॥

यह सुदरी कहाँ तैं आई ।
वार वार प्रतिविव निहारति, नागरि मन मन रही लुभाई ॥
कर तै मुकुर दूरि नहि डारति, हृदय माँझ कछु रिस उपजाई ।
देखै कहूँ नैन भरि याकौ, नागर कुँवर कन्हाई ॥
मेरी कहा चलै या आगैं, यह धौ आजु अरस तै आई ।
'सूरदास' याकौ या व्रज मै, ऐसी को वैरिनि जो ल्याई ॥ २११ ॥

राग हमीर ॥ २८१० ॥

मुकुर छाह निरखि देह की दसा गँवाई।
बोली धौ कौन की, आपुन ही गवन कियौ, ऐसी को बैरिनि है या ब्रज मे माई ॥
बिथकी अँग अँग निरखि, बार बार रहै परखि, ललिता चंद्रावलि कहँ इतनी छबि पाई।
मन मै कछु कहन चहै, देखत ही ठठुकि रहै, 'सूर' स्याम निरखत दुति, तन सुधि बिसराई ॥
॥ २१९२ ॥

राग बिलावल ॥ २८११ ॥

कहति छाँह सौ नागरी, को है तू माई।
मिली नही ब्रज गाँव मै, री कहँ तै आई ॥
नाम कहा है सुदरी, कहि सौह दिवाई।
कहा न मेरै साध है, मुख वचन सुनाई ॥
दिननि हमहुँ तुम सरवरी, तुव छबि अधिकाई।
और सग नहि कोउ लई, यह कहि डरपाई ॥
जानति हौ यह नहिं सुनी, ह्याँ की अधमाई।
अभरन लेत छँड़ाइ कै, ब्रज ढीठ कन्हाई ॥
सदन जाहु मेरे कहै, पट अंग छपाई।
'सूर' स्याम जौ देखिहै, करिहैं बरियाई ॥ २१९३ ॥

राग धनाश्री ॥ २८१२ ॥

मै उनके गुन नीकै जानति।
सदन जाहु मरजादा जै है, कह्यौ न काहै मानति।
अपनी दसा कहौ तब आगै, जैसी बिपति बनाई।
मथुरा चली जाति दधि बेचन, घेरि लई उन आई।
गोरस लियौ, अभूषन छीने, हम अनेक तुम एक।
'सूर' स्याम जौ देखन पैहै, करिहै अपनी टेक ॥ २१९४ ॥

राग बिलावल ॥ २८१३ ॥

तेरे हित कौ कहति हौ, मानै जनि मानै।
तू आई है आजु ही, उनकौ का जानै ॥
नारि पराई देखि कै, हँसि लेत बुलाई ॥
सो अपने सहजहि मिलै, उनके गुन ऐसे।
भूषन लेत नगाइ कै, औरै गुन नैसे ॥
काहू कौ नहिं डरपही, मथुरापति धरकै।
मन कौ भायौ करत है, कबहूँ नहि हरकै ॥
तुम सुदरि काकी बधू, घर जाहु सवारी।
'सूर' स्याम सुनि सुनि हँसै, मनही मन भारी ॥ २१९५ ॥

राग मारू ॥ २८१४ ॥

नागरी चरित पिय चकित भारी।
अंग की छबि निरखि प्रथमही बिबस ह्वै, बिब निरखत देह सुधि बिसारी ॥
एक राधा दूसरी वाहि जानि जिय, नागरी पास आवत लजाही।
नैन ठहराइ ठहराइ पुनि पुनि रहै, कहै नहि कछू हरपत डराही ॥

पुनि उठत जागि देखै मुकुर, नारि कर, ललचात अंक भरि लैन लोरै।
'सूर' प्रभु भावती के सदा रस भरे, नैन भरि भरि प्रिया रूप चोरै ॥ २१९६ ॥

राग गुंडमलार ॥ २८१५ ॥

धन्य हरि नैन, धनि रूप राधा।
धन्य वह मुकुर, धनि धन्य प्रतिबिंब मुख, धन्य दंपति रहत वेष आधा ॥
धन्य सिंगार, धनि धन्य निरखनि स्याम, धन्य छबि लूट लूटत मुरारी।
'सूर' प्रभु चतुर चतुरा नवल नागरी, रहे प्रतिबिंब पर नैन धारी ॥ २१९७ ॥

राग केदारौ ॥ २८१६ ॥

(स्यामा जू) अपनौ रूप देखि रीझति है, नैकहु दर्पन दूरि न करति।
अपनी छवि निहारि तन वारति, विवस बिंब के पायनि परति ॥
कबहूँ स्याम सकुच मानति जिय, वासौं प्रीति करे जनि, डरति।
'सूर' स्याम न्यारे ह्वै प्रिय छवि, निरखत, दृष्टि न इत उत टरति ॥२१९८॥

राग आसावरी ॥ २८१७ ॥

नाम कहा सुंदरी तुम्हारौ, क्यौं मौसौं नहिं बोलति हौ।
हँसै हँसति चितए चितवति तुम, तन डोलै तन डोलति हौ ॥
परम चतुर मैं जानति तुम कौ, मो पर भौंह मरोरति हौ।
लटकति सुभग नासिका बेसरि, पुनि पुनि वदन सकोरति हौ ॥
अरुन अधर चितहरन चिबुक अति, दामिनि दसन लजावति हौ।
ऐसे मुख कौ वचन माधुरी, काहे न हमहि सुनावति हौ ॥
कहौ वचन काकी तुम घरनी, काके मन कौ चोरति हौ।
सुनहु 'सूर' सहजहिं की धौं रिस, मोसौं लोचन जोरति हौ ॥ २१९९ ॥

राग सोरठ ॥ २८१८ ॥

कछु रिस कछु नागरि जिय धरकी।
यह तो जोवन रूप गहीली, सका मानति हरि की ॥
यह विपरीत होन अब चाहत, ब्रज मैं आइ समानी।
यह तौ गुननि उजागरि नागरि, वै तौ चतुर बिनानी ॥
कर दर्पन प्रतिबिंब निहारति, चकित भई सुकुमारी।
'सूर' स्याम निरखत गवाच्छ मग, नागरि भोरी भारी ॥ २२०० ॥

राग बिलावल ॥ २८१९ ॥

सुता विवस वृषभानु की, देखी गिरिधारी।
लोचन इकटक दै रही, प्रतिबिंब निहारी ॥
अपनी छबि पर आपनौ, तन-मन-धन वारै।
वार वार हा हा करै, पिय नाम न सारै ॥
बूझति ताकौ कौन की, की है री प्यारी।
मै देखी तोहि आजुही, सुंदरि गुन भारी ॥
त्रिभुवन मै कोऊ नही, तेरी उपमा री।
यह कहि मुख, मन सोचई, भई सौति हमारी ॥
दृष्टि परै जनि स्याम कै, तबही बस ह्वैहै।
सोच करै पछिताति है, सँगही सँग रैहै ॥

ऐसी सुंदरि नारि कौं जबही वै पैहैं।
दोउ भुज भरि अँकवारि कै, हँसि कंठ लगैहैं ॥
यह बैरिनि मोकौ भई, धौं कहँ तै आई।
मो तन इक टक हेरई, मै रही लजाई ॥
स्यामहिं बस करि लेहिगी, मैं जानी माई।
देखि दसा प्रतिबिंब की, यह बाम भुलाइ ॥
इकटक नैन टरै नही, छबि की अधिकाई।
पिय हरषे आनँद भरे, सोभा यह पाई ॥
कबहुँ चलत तिय पास कौं, फिरि रहत लुभाई।
'सूर' स्याम तृन तोरही, मन मन मुसुकाई ॥ २२०१ ॥

राग बिहागरौ ॥ २८२० ॥

नागरि रही मुकुर निहारि।
आनि औचक नैन मूँदे, कमलकर गिरिधारि ॥
चौंकि चकित भई मन मैं, स्याम कौ जिय जानि।
मै डरति हो अबहिं जाकौ, मिले ताकौं आनि ॥
तबहि तन की सुरति आई, लख्यौ तन प्रतिछाँहि।
सकुच मनही मन दुरावति, परसपर मुसुकाँहि ॥
समुझि मन मैं कहति सखियनि, बिपुल लै लै नाम।
'सूर' प्रभु उर सीस परसे, बीच बेनी स्याम ॥ २२०२ ॥

राग गौरी ॥ २८२१ ॥

मूँदि रहे पिय प्यारी लोचन।
अति हित बेनी उर परसाए, बेष्टित भुजा अमोचन ॥
कचन-मनि-सुमेर अँग दोऊ, सोभा कही न जाइ।
मनौ पन्नगी निकसि बीच रही, हाटक गिरि लपटाइ ॥
चपल नैन दीरघ अति सुदर, खजन तै अधिकाइ।
अति आतुर भय कारन धाई, धरत फनहिं न समाइ ॥
मन हरषति, मुख खिझति सखिनि कहि चतुर-चतुरई-भाव।
'सूर' स्याम मनकामनि के फल, लूटत हैं इहिं दाव ॥ २२०३ ॥

राग रामकली ॥ २८२२ ॥

करत मन-काम-फल-लूट दोऊ।
रहे दोउ नैन पिय मूँदि कोमल करनि, बरनि नहिं सकत वह उपम कोऊ ॥
हृदय भरि बाम सुखधाम मोहन काम, मनौ घन दामिनी कोर लीन्हे।
महा आनद सुखसिंधु उच्छलत दोउ, 'सूर' प्रभु नागरी तुरत चीन्हे ॥ २२०४ ॥

राग कान्हरौ ॥ २८२३ ॥

बैठी रही कुँवरि राधा, हरि अँखिया मूँदी आइ।
अतिहिं बिसाल चपल अनियारी, नहिं पिय पानि समाइ ॥
खन खोलत खन ढाँकत, नागरि, मुखरिस मन मुसुकाइ।
ज्यौ मनिधर मनि छाँड़ि बहुरि फिरि, फन तर धरत छपाइ ॥
स्याम अँगुरियनि अंतर राजति, आतुर दुरि दरसाइ।
मानो मरकत मनि पिंजरनि मैं, बिबि खंजन अकुलाइ ॥

कर कपोल विच सुभग तरचौना, सोभा वढ़ी सुभाइ।
मनु सरोज द्वै मिलत सुधानिधि, विवि रवि संग सहाइ ॥
अपनै पानि पकरि मोहन के कर धरि लिये छँडाइ।
कमल चकोर चचरि ज्यौं, दै ससि दिनकर जुरति सगाइ ॥
उपमा काहि देउँ को लायक, देखी वहुत वनाइ।
'सूरदास' प्रभु दंपति देखत, रति स्यौं काम लजाइ ॥ २२०५ ॥

राग गुंड मलार ॥ २८२४ ॥

स्याम भुज वाम गहि समुख आने।
भले जू भले मैं सखी धोखैं रही, मूँदि लोचन रहे अति पिराने ॥
दौरि पैठे भवन, कवहिं कीन्हौ गवन, नारि-मन-रवन तुम ही कन्हाई।
'सूर' प्रभु हरपि भरि अंक प्यारी लई, मुकुर की कथा तव कहि सुनाई ॥२२०६॥

राग गूजरी ॥ २८२५ ॥

नागरि यह सुनि कै मुसुकानी।
को जानै पिय महिमा तुम्हरी, नैननि चितै लजानी ॥
मैं वैठी प्रतिविंव विलोकति, अपनै सहज सुभाइ।
आपुन कहा अचानक आए, तुव गति लखी न जाइ ॥
इक सुदर दूजैं अति नागर, तीजैं कोकप्रवीन।
'सूरदास' प्रभु अवही तौ तुम, जसुमतिसुवन नवीन ॥ २२०७ ॥

राग विलावल ॥ २८२६ ॥

हँसत चले तव कुँवर कन्हाई।
मन के करे मनोरथ पूरन, राधा के सुखदाई ॥
उत हरषत हरि भवन सिधारे, नागरि हरष वढ़ाई।
इत आवति सुधि मुकुर विलोकनि, जव तव रहति लजाई ॥
इहिं अंतर सखियनि सँग लीन्हे, चंद्रावलि तहँ आई।
'सूर' तुरत राधिका सवनि कौ, आदर करि वैठाई ॥ २२०८ ॥

राग रामकली ॥ २८२७ ॥

अति आदर सौं वैठक दीन्हौ।
मेरैं गृह चंद्रावलि आई, अति ही आनँद कीन्हौ ॥
स्याम-संग-सुख प्रगट्यौ चाहति, पुनि धीरज धरि राखति।
जोइ जोइ कहति वचन गदगद सौं, वार वार मुख भाषति ॥
सखी संग की कहति राधिका, आजु कहा तैं पायौ।
सुनहु 'सूर' इतने आदर सौं, कवहूँ नहीं वुलायौ ॥ २२०९ ॥

राग आसावरी ॥ २८२८ ॥

हम तुम्हरैं नितही प्रति आवति, सुनहु राधिका गोरी।
ऐसौ आदर कवहुँ न कीन्हौ, मेरी अलकसलोरी ॥
काहैं आजु हरप जिय उपज्यौ, कहा विभव तुम पायौ।
कीधौं आजु मिले नँदनंदन, पिछलौ दुख विसरायौ ॥
उमँग्यौ प्रेम रहत नहिं रोकैं, सखियनि कहति सुनावै।
'सूर' स्याम मो भवन पधारे, यह कहि कहि मन भावै ॥ २२१० ॥

राग बिहागरौ ॥ २८२६ ॥

आए स्याम मेरै गेह ।
कही जाति न सखी मोपै, मिले जौन सनेह ॥
करति अंग सिंगार बैठी, मुकुर लीन्हे हाथ ।
आइ पाछै भए ठाढ़ै, चतुर वर ब्रजनाथ ॥
भाव इक मै कियौ, भोरै, कहत ताहि लजाउँ ।
निरखि अपनी छाँह कौ तिय, और जानि डराउँ ॥
जाल रध्रनि रहे ठाढे, निरखि कौतुक स्याम ।
नैन औचक आनि मूँदे, सुनहु हरि के काम ॥
देति हो उरहनौ तुमको, भए डोलत चोर ।
'सूर' प्रभु आए अचानक, भवन बैठी भोर ॥ २२११ ॥

राग बिलावल ॥ २८३० ॥

स्याम संग सुख लूटति हौ ।
सुनि राधे रीझे हरि तोका, अब उनतै तुम छूटति हौ ॥
भली भई हरिकै रस पागी, वै तुमसौ रति मानत है ।
आवत जात रहत घर तेरै अंतर हित पहिचानत है ॥
तुम अति चतुर, चतुर वै तुम तै, रूप गुननि दोउ नीके हौ ।
'सूरदास' स्वामी स्वामिनि दोउ, परम भावते जी के हौ ॥ २२१२ ॥

राग अड़ानौ ॥ २८३१ ॥

भली भई मेरे लालन आए, फूले अंग न आजु समाई ।
गाइ बजाइ प्रेम भरि नाचौं, तन-मन-धन मै देउँ बधाई ॥
धनि धनि भाग, सुहाग धन्य, अरु धन्य धन्य अनुराग कन्हाई ।
धनि धनि रैन धन्य दिन ऐसौ, धन्य घरी फल धनि मै पाई ॥
धन्य देह धनि गेह सखी री, धनि सिँगार प्रतिबिंब भुलाई ।
धनि धनि 'सूर' नैन मूँदे कर, धनि अवलोकनि पिय सुखदाई ॥ २२१३ ॥

राग ईमन ॥ २८३२ ॥

बनि बनि आवत हैं मेरे लालन, भाग बड़े री मेरे ।
दरस देखि अति ही सुख उपजत, अरु सनमुख जब हेरै ॥
तब मै हँसति मद मुसुकत जब, आनँद आवत नेरै ।
'सूरदास' प्रभु की सूरति जिय, टरति न साँझ सवेरै ॥ २२१४ ॥

राग ईमन ॥ २८३३ ॥

स्याम अचानक आए री ।
पाछे तै लोचन दोउ मूँदे, मोकौ हृदय लगाए री ॥
लहनो ताकौ जाकै आवै, मै बडभागिनि पाए री ।
यह उपकार तुम्हारौ सजनी, रूसे कान्ह मिलाए री ॥
ल्याई तुरत जाइ ब्रजनागर, जे अपराध छमाए री ।
'सूरदास' प्रभु नैननि लागे, भावत नहि बिसराए री ॥ २२१५ ॥

रागटोडी ॥ २८३४ ॥ नैन समय के पद

हरि अनुराग भरी ब्रजनारी । लोक सकुच कुलकानि बिसारी ॥
सासु ननद हारी दै गारी । सुनति नही कोउ कहति कहा री ॥

सुत-पति-नेह जगत यह जोरचो। ब्रज तरुनिनि तिनुका सौं तोरचो ।।
काँची सूत तारि सो डारचो। उरग केंचुरी फिरि न निहारचो ।।
ज्यौं जलधार फिरै तृन नाहीं। जैसैं नदी समुद्र समाहीं ।।
जैसैं सुभट खेत चढ़ि धावै। जैसें सती बहुर नहिं आवै ।।
ऐसैं भजी नंदनदन कौं। सकुची नहिं त्यागत गुरुजन कौं ।।
'सूरज' प्रभु बस घोषकुमारी। ज्यौं गज पंक न सकै निवारी ।।२२१६।।

राग सोरठ ।। २८३५ ।।

इहिं अंतर तिहिं खोरिही नँदनंदन आए।
सखिनि सहित ब्रजनागरी, पल बिनु टक लाए ।।
मोर मुकुट सिर सोहई, स्रवननि वर कुंडल।
ललित कपोलनि झलमलै, सुदर अति निर्मल ।।
तरुनि गईं चकचौंधि कै नहिं नैन थिराहीं।
'सूर' स्याम छवि निरखि कै, जुवती भरमाहीं ।। २२१७ ।।

राग सोरठ ।। २८३६ ।।

देखे स्याम अचानक जात।
ब्रज की खोरि अकेले निकसे, पीतांबर कटि पर फहरात ।।
लटकत मुकुट मटक भौंहनि की, चटकत चलत मंद मुसुकात।
पग द्वै जात बहुरि फिरि हेरत, नैन सैन दैकै नँदतात ।।
निरखत नारि निकर बिथकित भइँ, दुख सुख व्याकुल झुरत सिहात।
'सूर' स्यामअंग-अंग-माधुरी, चमकि चमकि चकचौंधति गात ।।२२१८।।

राग सारंग ।। २८३७ ।।

सघन कल्पतरु-तर मनमोहन।
दच्छिन चरन चरन पर दीन्हे, तनु त्रिभंग कीन्हे मृदु जोहन ।।
मनिमय जटित मनोहर कुंडल, सिखी चंद्रिका सीस रही फबि।
मृगमद तिलक, अलक घुँघरारी, उर बनमाल कहौं जु वहै छवि ।।
तनु घन स्याम, पीत पट सोभित, हृदय पदिक की पाँति दिपति दुति।
तनु बन धातु बिचित्र बिराजति, बंसी अधरनि धरे ललित गति ।।
करज मुद्रिका, कर कंकन छवि, कटि किंकिनि, पग नूपुर भ्राजत।
नख-सिख-कांति बिलोकि सखी री, ससि अरु भानु मगन तनु लाजत ।।
नख-सिख-रूप अनूप बिलोकत, नटवर वेष धरे जु ललित अति।
रूप रासि जसुमति कौ ढोटा, बरनि सकै नहिं 'सूर' अलप मति ।। २२१९ ।।

राग सोरठ ।। २८३८ ।।

लोचन हरत अंबुज मान।
चकित मनमथ सरन चाहत, धनुप तजि निज बान ।।
चिकुर कोमल कुटिल राजत, रुचिर बिमल कपोल।
नील-नलिन-सुगंध ज्यौं, रस थकित मधुकर लोल ।।
स्याम उर पर परम सुंदर, सजल मोतिनि हार।
मनो मरकतसैल, तैं, वहि चली सुरसरि धार ।।
'सूर' कटि पटपीत राजत, सुभग छवि नँदलाल।
मनौ कनक लता-अवलि-बिच, तरल बिटप तमाल ।। २२२० ।।

राग रामकली ॥ २८३९ ॥

मोहन (माई री) हठ करि मनहि हरत ।
अग अग प्रति और और गति, छिनु छिनु प्रतिही छवि जु धरत ॥
सुदर सुभग स्याम कर दोऊ तिनसौं मुरली अधर धरत ।
राजत ललित नील कर पल्लव, उभय उरग ज्यौं सुभट लरत ॥
कुंडल मुकुट भाल गोरोचन, मनौ सरद ससि उदय करत ।
'सूरदास' प्रभु तनु अवलोकत, नैन थके इत उत न टरत ॥ २२२१ ॥

राग रामकली ॥ २८४० ॥

मन तौ हरिही हाथ बिकान्यौ ।
निकरयौ मान गुमान सहित वह, मैं यह होत न जान्यौ ॥
नैननि साटि करी मिलि नैननि, उनहीं सौं रुचि मान्यौ ।
बहुत जतन करि हौं पचिहारी, फिरि इत कौ न फिरान्यौ ॥
सहज सुभाइ ठगौरी डारी, सोस, फिरत अरगानौ ।
'सूरदास' प्रभु-रस-बस गोपी, बिसरि गयौ तनु मानौ ॥ २२२२ ॥

राग सोरठ ॥ २८४१ ॥

मन तौ गयौ नैन हे मेरे ।
अब इनसौ वह भेद कियौ कछु, येउ भए हरि चेरे ॥
तनक सहाइ रहे हे मोकौं, येउ इंद्रिनि मिलि घेरे ।
क्रम क्रम गए कह्यौ नहिं काहूँ, स्याम सग अरुझे रे ॥
ज्यौं दिवाल गीली पर काँकर, डारत ही जु गड़े रे ।
'सूर' लटकि लागे अँग छवि पर, निठुर न जात उखेरे ॥ २२२३ ॥

राग विहागरौ ॥ २८४२ ॥

सजनी मनहिं अकाज कियौ ।
आपुन जाइ भेद करि हरि सौं इद्रिनि बोलि लियौ ॥
मैं उनकी करनी नहिं जानी, मोसौ बैर कियौ ।
जैसैं करि अनाथ मोहिं त्यागी, ज्यौं त्यौं मानि लियौ ॥
अब देखौं उनकी निठुराई, सो गुनि भरत हियौ ।
'सूरदास' ये नैन रहे हैं, तिनहूँ कियौ बियौ ॥ २२२४ ॥

राग विहागरौ ॥ २८४३ ॥

मेर जिय यहई सोच परयौ ।
मन के ढग सुनौ री सजनी, जैसैं मोहि निदरयौ ॥
आपुन गयौ पंच संग लीन्हे, प्रथमहि यहै करयौ ।
मोसो बैर, प्रीति करि हरि सौं, ऐसी लगनि लरयौ ॥
ज्यौं त्यौ नैन रहे लपटाने, तिनहूँ भेद भरयौ ।
सुनहु 'सूर' अपनाइ इनहुँ कौ, अब लौं रह्यौ डरयौ ॥ २२२५ ॥

राग गौरी ॥ २८४४ ॥

मन बिगरयौ येउ नैन बिगारे ।
ऐसौ निठुर भयौ देखौ री, तब तैं टरत न टारे ॥

इंद्री लई, नैन अव लीन्हे, स्यामहि गीधे भारे।
ये सव कहा कौन है मेरे, खानाजाद विचारे॥
इतने तै इतने मैं कीन्हे, कैसैं आजु विसारे।
सुनहु 'सूर' जे आपु स्वारथी, ते आपुनही मारे॥ २२२६ ॥

राग गौरी ॥ २८४५ ॥

आपु स्वारथी की गति नाही।
ते विधना काहैं अवतारे, जुवती गुनि पछिताही॥
जनमे संग, संग प्रतिपाने, संगहि वडे भए है।
जव उनकौ आसरौ करयौ जिय, तवही छोड़ि गए है॥
ऐसे है ये स्वाम्किारजी, तिनकौ मानत स्याम।
सुनहु 'सूर' अव प्रगटहि कहियै, ऐसे उनके काम॥ २२२७ ॥

राग कान्हरौ ॥ २८४६ ॥

हम तै गए उनहुँ तै खोवैं।
ह्वाँ तै खेदि देहि वै हम तन, हम उन तन नहि जीवैं॥
जैसी दसा हमारी कीन्ही तैसैं उनहिं विगोवैं।
भटके फिरे द्वार द्वारनि सव, हम देखै वै रोवैं॥
आवहु यहै मतौ री करियै, निधरक वै सुख सोवैं।
'सूर' स्याम कौ मिलै जाइ कैं, कैसै उनकौ धोवैं॥ २२२८ ॥

राग धनाश्री ॥ २८४७ ॥

मन कैं भेद नैन गए माई।
लुव्धे जाइ स्याम-सुदर-रस, करी न कछू भलाई॥
जवहीं स्याम अचानक आए, इकटक रहे लगाई।
लोकसकुच, मरजादा कुल की, छिनही मैं विसराई॥
व्याकुल फिरति भवन वन जहँ तहँ तूल आक उधराई।
देह नही अपनी सी लागति, यह है मनौ पराई॥
सुनहु सखी मन के ढँग ऐसे, ऐसी वुद्धि उपाई।
'सूर' स्याम लोचन वस कीन्हे, रूप ठगौरी लाई॥ २२२९ ॥

राग नट ॥ २८४८ ॥

नैन न मेरे हाथ रहे।
देखत दरस स्यामसुंदर कौ, जल की ढरनि वहे॥
वह नीचे कौ धावत आतुर, वैसेहि नैन भए।
वह तौ जाइ समात उदधि मैं, ये प्रति अंग रए॥
वह अगाध कहुँ वार पार नहि, येउ सोभा नहि पार।
लोचन मिले त्रिवेनी ह्वैकैं, 'सूर' समुद्र अपार॥ २२३० ॥

राग विहागरौ ॥ २८४९ ॥

मन तैं ये अति ढीठ भए।
वह तौ आइ मिलत है कवहूँ, ये जु गए सु गए॥
ज्यौं भुजंग काँचुरी विसारत, फिरि नहि ताहि निहारत।

तैसैहि जाइ मिले इकटक ह्वै, डारत लाज निवारत ॥
इंद्रिनि सहित मिल्यौ मन तबहीं, नैन रहे मोहि सालत।
'सूर' स्याम-सँगही-सँग डोलत, औरनि के घर घालत ॥ २२३१ ॥

राग सोरठ ॥ २८५० ॥

तोहूँ कौ व्यापी री माई, कहा कहति है सोकौ ॥
मैं आइ दुख कहन आपनौ तेरें दुख अधिकारी।
जैसैं दीन दीन सौं जाँचै, वृथा होइ स्रम भारी ॥
मन अपनौ बस कैसेहुँ कीजै, याही तै सचु पावै।
'सूरदास' इंद्रिनि समेत वह, लोचन अबहि मँगावै ॥ २२३२ ॥

राग सोरठ ॥ २८५१ ॥

नैना नोकै उनहि रए।
मन जब गयौ नही मैं जान्यौ, ये दोउ निदरि गए ॥
ये तौ भए भावते हरि के, सदा रहत इन माही।
कर मीडति, सिर धुनति नारि सब, यह कहि कहि पछिताही ॥
मूरख कै ज्यौं बुद्धि पाछिली, हमहूँ करि दियौ आगैं।
अब तौ मिले 'सूर' के प्रभु कौं, पावति हौं अब माँगैं ॥ २२३३ ॥

राग गौरी ॥ २८५२ ॥

नैना नहि आवैं तुव पास।
कैसैहूँ करि निकसे ह्याँ तैं, अतिही भए उदास ॥
अपने स्वारथ के सब कोई, मैं जानी यह बात।
यह सोभा सुख लूटि पाइ कै, अब वह काहि पत्यात ॥
पटरस व्यंजन त्यागि कहौ को, रूखी रोटी खात।
'सूर' स्याम-रस-रूप-माधुरी, एते पर न अघात ॥ २२३४ ॥

राग जैतश्री ॥ २८५३ ॥

नैन परे रस-स्याम-सुधा मैं।
सिव सनकादि, ब्रह्म, नारद मुनि ये लुब्धे है जामैं ॥
ऐसो रस बिलसत नाना विधि, खात, खवावत, डारत।
सुनहु सखी वैसी निधि तजि कै, क्यौ वै तुमहि निहारत ॥
जिनि वह सुधा पान सुख कीन्हौ, ते कैसे दुख देखत।
त्यौं ये नैन भए गरबीले, अब काहैं हम लेखत ॥
काहे कौ अपसोस मरति हौ नैन तुम्हारे नाही।
जाइ मिले 'सूरज' के प्रभु कौं, इत उत कहूँ न जाही ॥ २२३५ ॥

राग भैरव ॥ २८५४ ॥

नैन परे हरि पाछै री।
मिले अतिहिं अतुराइ स्याम कौं, रीझे नटवर काछै री ॥
निमिष नही लागत इकटकहीं, निसि बासर नहिं जानत री।
निरखत अंग अंग की सोभा, ताही पर रुचि मानत री ॥
नैन परे परबस री माई, उनकौ इनि बस कीन्हे री।
'सूरज' प्रभु सेवा करि रिझए, उनि अपने करि लीन्हे री ॥ २२३६ ॥

राग कल्यान ॥ २८५५ ॥

नैना हरि अंगरूप लुब्धे री माई।
लोकलाज, कुल की मरजादा, बिसराई॥
जैसैं चंदा चकोर, मृगी नाद जैसैं।
कचुरि ज्यौं त्यागि फनिग, फिरत नही तैसैं॥
जैसैं सरिता प्रवाह सागर कौं धावैं।
कोऊ स्रम कोटि करै, तहा फिरि न आवैं॥
तनु की गति पगु किये, सोचति ब्रजनारी।
तैसैं ये मिले जाइ, 'सूरज' प्रभु द्वारी॥ २२३७ ॥

राग कल्यान ॥ २८५६ ॥

लोचन भए स्यामहिं बस, कहा करौं माई।
जितही वै चलत तितही, आपु जात धाई॥
मुसुकनि दै मोल लिए, किये प्रगट चेरे।
जोइ जोइ वै कहत, करत, रहत सदा नेरे॥
उनकी परतीति स्याम, मानत नहिं अबहूँ।
अलकनि रजु बाँधि धरे, भाजैं जिनि कबहूँ॥
मन ले इनि उनहिं दियौ, रहत सदा सँगही।
'सूर' स्याम रूप रासि, रीझे वा रँगही॥ २२३८ ॥

राग बिहागरौ ॥ २८५७ ॥

नैना भए बजाइ गुलाम।
मन बेच्यौ लै वस्तु हमारी, सुनहु सखी ये काम॥
प्रथम भेद करि आयौ आपुन, माँगि पठायौ स्याम।
बेचि दिये निधरक हरि लीन्हे, मृदु मुसुकनि दै दाम॥
यह बानी जहँ तहँ परकासी, मोल लए को नाम।
सुनहु 'सूर' यह दोप कौन कौ, यह तुम कहौ न वाम॥ २२३९ ॥

राग मारू ॥ २८५८ ॥

कियौ यह भेद मन, और नाही।
पहिलै ही जाइ हरि सौ कियौ, भेद उहिं और बेकाज कासौ बताही॥
दूसरैं आइ कै इंद्रियनि लै गयौ, ऐसौ अपदाँव सब इनहिं कीन्हे।
मैं कह्यौ नैन मोकौ सँग देहिगे, इनहु लै जाइ हरि हाथ दीन्हे॥
जो कछू कियौ सो मनहिं सब करत है, इहाँ कछु स्याम कौ दोप नाही।
'सूर' प्रभु नैन लै मोल अपबस किये, आपु बैठे रहत तिनही माही॥
॥ २२४० ॥

राग बिलावल ॥ २८५९ ॥

कहा भए जो ऐसे लोचन, मेरै तौ कछु काज नही।
मैं तौ व्याकुल भई पुकारति, वै सँग लै जु गए मनही॥
त्रिभुवन मैं अति नाम जगायौ, फिरत स्याम सँगही सँगही।
अपनै सुख कौ कहा चाहियै, बहुरि न आए मो तनही॥
सो सपूत परिवार चलावै, ये तो लोभी धिक इनही।
एते पर ये 'सूर' कहावत, लाज नही ऐसे जनही॥ २२४१ ॥

राग कान्हरौ ॥ २८६० ॥

इन बातनि कहुँ होति बड़ाई।
लूटत है छवि रासि स्याम की, नोखें करि निधि पाई॥
थोरे हीं मैं उघरि परैंगे, अतिहि चलं इतराई।
डारत खात देत नहिं काहूँ, ओछै घर निधि आई॥
यह संपति है तिहूँ भुवन की, सब इनही अपनाई।
'सूरदास' प्रभु सँग लै धोखैं, काहूँ नहीं जनाई॥ २२४२ ॥

राग बिलावल ॥ २८६१ ॥

नैन पर वह लूटि मैं, नोखैं निधि पाई।
छोह लगनि यह समुझि कैं, इन हमहि जिवाई॥
इनकैं नैकु दया नही, हम पर रिस पावैं।
स्याम अछय निधि पाइ कैं, तउ कृपिन कहावैं॥
ऐसे लोभी ये भए, तब इनहि न जान्यौ।
सगहि सग सदा रहै अति हित करि मान्यौ॥
जैसी हमकौं इनि करी, यह करे न कोई।
'सूर' अनल कर जो गहै, डाढै पुनि सोई॥ २२४३ ॥

राग कान्हरौ ॥ २८६२ ॥

नैन आपने घर के री।
लूटन देहु स्याम-अँग-सोभा, जो हम पर वे तरके री॥
यह जानी नीकैं करि सजनी, नहीं हमारं डर के री।
वै जानत हम सरि को त्रिभुवन, ऐसे रहत निधरके री॥
ऐसी रिस आवति है उनपर, करै उनहिं घर घर के री।
'सूर' स्याम के गर्व भुलाने वै उनपर हैं ढरके री॥ २२४४ ॥

राग गौरी ॥ २८६३ ॥

नैना कह्यौ न मानै मेरौ।
मो वरजत वरजत उठि धाए, वहुरि कियौ नहिं फेरौ॥
निकसे जल प्रवाह की नाईं, पाछैं फिरि न निहारचौ।
भव जंजाल तोरि तरु बन के, पल्लव हृदय विरादचौ॥
तबही तैं यह दसा हमारी, जब येऊ गए त्यागी।
'सूरदास' प्रभु सौ वैं लुवधे, ऐसे वडे सभागी॥ २२४५ ॥

राग टोड़ी ॥ २८६४ ॥

इन नैननि मोहि वहुत सतायौ।
अब लौं कानि करी मैं सजनी, वहुतै मूँड चढायौ॥
निदरे रहत गहे रिस मोसौं, मोहीं दोष लगायौ।
लूटत आपुन श्री-अँग-सोभा, ज्यौं निधनी धन पायौ॥
निसिहूँ दिन ये करत अचगरी, मनहि कहा धौं आयौ।
सुनहु 'सूर' इनकौं प्रतिपालत, आलस नैकु न लायौ॥ २२४६ ॥

राग रामकली ॥ २८६५ ॥

लोचन भए स्याम के चेरे।
एते पर सुख पावत कोटिक, मोतन फेरि न हेरे॥

हा हा करत, परत हरि चरननि, ऐसे वस भए उनही।
उनकौ वदन विलोकत निसि दिन, मेरौ कह्यौ न सुनही ॥
ललित त्रिभंगी छवि पर अँटके, फटके मोसौ तोरि।
'सूर' दसा यह मेरी कीन्ही, आपुन हरि सौ जोरि॥ २२४७ ॥

राग धनाश्री ॥ २८६६ ॥

हरि छवि देखि नैन ललचाने।
इकटक रहे चकार चंद ज्यो, निमिप बिसरि ठहराने॥
मेरी कह्यौ सुनत नहिं स्रवननि, लोक न लाज लजाने।
गए अकुलाइ धाइ मो देखत, नैकुहुँ नही सकाने॥
जैसैं सुभट जात रनसन्मुख, लरत न कवहुँ पराने।
'सूरदास' ऐसी इनि कीन्हीं, स्याम रंग लपटाने॥ २२४८ ॥

राग गुंड मलार ॥ २८६७ ॥

नैन तौ कहे मैं न्हीं मेरे।
वारही वार कहि हटकि राखत कितक, गए हरि सग नहि रहे घेरे॥
ज्यौ व्याध फंद तै छूटत खग उडि चलत, तहाँ फिरि तकत नहिं त्रास माने।
जाइ वन द्रुमनि मैं दुरत त्यौही गए, स्याम-तनु-रूप-वन मैं समाने॥
पालि इतने किये, आज उनके भए, माल करि लए अव स्याम उनकौ॥
'सूर' यह कहति ब्रजनारि व्याकुल प्रेम, नैन लै गए पछिताति मन कौ॥
॥ २२४९ ॥

राग जैतश्री ॥ २८६८ ॥

नैना हाथ न मेरै आली।
इत ह्वै गए ठगौरी लावत, सुदर कमल नैन वनमाली॥
वे पाछै ये आगै धाए, मैं वरजति वरजति पचिहारी।
मेरै तन वै फेरि न चितए, आतुरता वह कहौ कहा री॥
जैसै वरत भवन तजि भजियै, तैसेहिं गए फेरि नहि हेरौ।
'सूर' स्याम रस रसे रसीले, पय पानी को करै निवेरौ॥ २२५० ॥

राग रामकली ॥ २८६९ ॥

स्याम रँग रँगे रँगीले नैन।
धोएं छुटत नही यह कैसैहु, मिले पघिलि ह्वै मैन॥
औचक ही आँगन ह्वै निकसे, दै गए नैननि सैन।
नख सिख अंग अग की सोभा, निरखि लजत सत मैन॥
ये गीधे नहि टरत उहाँ तै, मोसौ लेन न दैन।
'सूरज' प्रभु के सँग सँग डोलत, नैकहुँ करत न चैन॥ २२५१ ॥

राग ईमन ॥ २८७० ॥

नैन भए हरिही के।
जव तै गए फेरि नहि चितए, ऐसे गुन इनिही के॥
और सुनौ इनके गुन सजनी, सोऊ तुमहि सुनाऊँ।
मोसो कहत तुहूँ नहि आवै, सुनत अचभौ पाऊँ॥
मन भयौ ढोठ, इनहुँ कौ कीन्हौ, ऐसे लोनहरामी।
'सूरदास' प्रभु इन्है पत्याने, आखिर वड़े निकामी॥ २२५२ ॥

राग विलावल ॥ २८७१ ॥

नैना लुब्धे रूप कौ, अपनै सुख माई।
अपराधी अपस्वारथी, मोकौं विसराई॥
मन इंद्री तहँई गए, कीन्ही अधमाई।
मिले धाइ अकुलाइ कै, मैं करति लराई॥
अतिहिं करी उन अपतई, हरि सौं सुपत्याई।
वै इनमौ सुख पाइ कै, अति करैं वड़ाई॥
अब वै भरुहाने फिरैं, कहूँ डरत न माई।
'सूरज' प्रभु मुँह पाइ कै, भए ढीठ वजाई॥ २२५३ ॥

राग सारंग ॥ २८७२ ॥

ढीठ भए ये डोलत है।
मौन रहत मो पर रिस पाए, हरि सौं खेलत वोलत हैं॥
कहा कहौं निठुराई इनकी, सपनेहु ह्याँ नहिं आवत है।
लुब्धे जाइ स्याम सुदर कौ, उनही के गुन गावत हैं॥
जैसै इन मोकौ परितेजी, कवहूँ फिरि न निहारत है।
'सूर' भले कौ भलौ होइगौ, वै तौ पंथ विगारत हैं॥ २२५४ ॥

राग विलावल ॥ २८७३ ॥

सुनि सजनी तू भई अयानी।
या कलियुग की वात सुनाऊँ, जानति तोहि सयानी॥
जो तुम करौ भलाई कोटिक, सो नहि मानै कोई।
जे अनभले वड़ाई तिनकी, मानै जोई सोई॥
प्रगट देखि कह दूरि वताऊँ, हमहुँ स्याम को ध्यावैं।
सुनहु 'सूर' सव व्याकुल डोलें, नैन तुरत फल पावैं॥ २२५५ ॥

राग विलावल ॥ २८७४ ॥

नैन करैं सुख, हम दुख पावैं।
ऐसी को पर वेदन जानै, जासौं कहि जु सुनावैं।
तातैं मौन भली सवही तैं, कहि कै मान गँवावैं।
लोचन, मन, इंद्री हरि कौं भजि, तजि हमकौं सुख पावैं॥
वै तौ गए आपने कर तैं, वृथा जीव भरमावैं।
'सूर' स्याम है चतुर सिरोमनि, तिनसौं भेद जनावैं॥ २२५६ ॥

राज धनाश्री ॥ २८७५ ॥

इन नैननि की कथा सुनावैं।
इनकौ गुन औगुन हरि आगै, तिल तिल भेद जनावैं॥
इनसौ तुम परतीति वढावत, ये है अपने काजी।
स्वारथ मानि लेत रति करि कै, वोलत हाँ जी, हाँ जी॥
ये गुन नहि मानत काहू कौ, अपनै सुख भरि लेत।
'सूरज' प्रभु ये पहिलै हित करि, फिरि पाछै दुख देत॥ २२५७ ॥

राग सोरठ ॥ २८७६ ॥

ये नैना यौ आहिं हमारे।
इतने तै इतने हम कीन्हे, वारे तै प्रतिपारे॥

धोवति पुनि अंचल लै पोंछति, आँजति इनहिं बनाइ।
बड़े भए तब लौन मानि यह, जहँ तहँ चलत भगाइ॥
ऐसे सेवक कहाँ पाइहौ, यहै कहै हरि आगैं।
ये अब ढीठ भए ह्याँ डोलत, इनहिं बनै परित्यागैं॥
'सूर' स्याम तुम त्रिभुवन नायक, दुखदायक तुम नाही।
ज्यौं त्यौं करि ये हमहिं मिलावहु, यहै कहै बलि जाही॥ २२५८ ॥

राग सूही ॥ २८७७ ॥

नैननि कौं अब नहीं पत्याउँ।
बहुरचौ उनकौ बोलति हौ तुम, हाय हाय लीजै नहिं नाउँ॥
अब उनकौ मैं फेरि बसाऊँ, मेरैं उनकौ नाही ठाउँ।
व्याकुल भई डोलिहौ ऐसैहि, वै जहँ रहै तहाँ नहिं जाउँ॥
खाइ खवाइ बड़े जब कीन्हे, बसे जाइ अब औरहिं गाउँ।
अपने किये फलहिं पावैगे, मै काहे उनकौ पछिताउँ॥
जैसैं लौन हमारौ मान्यौ, कहा कहौ. कहि काहि सुनाउँ।
'सूरदास' मै इनि बिनु रहिहौ. कृपा करै, उनकौ सरमाउँ॥ २२५९ ॥

राग सूही ॥ २८७८ ॥

सतर होति काहे की माई।
आए नैन धाइ कै लीजै, आवत अब वै ह्याँ वेहाई॥
जिनि अपनौ घर दर परित्याग्यौ, उनि तौ उहाँ कछू निधि पाई।
परे जाइ वा रूप लूटि मै, जानति हौ उनकी चतुराई॥
बिनु कारन तुम सोर लगावति, वृथा होति कापर रिसहाई।
'सूर' स्याम मुख मधुर हँसनि पर, बिवस भए वै तन बिसराई॥ २२६० ॥

राग बिहागरौ ॥ २८७९ ॥

लोचन आइ कहा ह्याँ पावैं!
कुंडल झलक कपोलनि रीझे, स्याम पटाए हूँ नहिं आवैं॥
जिनि पायौ अमृत घट पूरन, छिनु छिनु घात अघात।
ते तुम मो फिरि कै रुचि मानैं, कहति अचभौ बात॥
रस लपट वे भए रहत है, बज्र घर घर यह बानी।
हमहूँ को अपराध लगावहिं येऊ भई दिवानी॥
लूटहि ये इन्द्री मन मिलि कै, त्रिभुवन नाम हमारौ।
'सूर' कहाँ हरि रहत, कहाँ हम, यह काहै न विचारौ॥ २२६१ ॥

राग धनाश्री ॥ २८८० ॥

नैननि तैं यह भई बडाई।
घर घर यहै चबाउ चलावत, हमसौं भेट न माई॥
कहाँ स्याम मिलि बैठी कबहूँ, कहनावति बज्र ऐसी।
लूटहि ये, उपहास हमारौ, यह तौ बात अनैसी॥
येई घर घर कहत फिरत है, कहा करै पचिहारी।
'सूर' स्याम यह सुनत हँसत है, नैन किये अधिकारी॥ २२६२ ॥

राग सारंग ॥ २८८१ ॥

नैन भए अधिकारी जाइ।

यह तुम बात सुनी सखि नाही, मन आए गए भेद बताइ ॥
जब आवै कबहूँ ढिग मेरै, तब तब यहै कहत हैं आइ।
हमही लै मिलयौ हम देखत, स्याम रूप मैं गए समाइ ॥
अब बोऊ पछितात बात कहि, उनहूँ कौ वै भए बलाइ।
अपनौ कियौ तुरत फल पायौ, ऐसौ मन कीन्हौ अधमाइ।
इंद्री मन अब नैननि पाछैं, ऐसे उनि बस किये कन्हाइ।
'सूरदास' लोचन की महिमा, कहा कहै कछु कही न जाइ ॥२२६३॥

राग रामकली ॥ २८८२ ॥

जब तैं हरि अधिकार दियौ।

तबही तै चतुरई प्रकासी, नैननि अतिहिं कियो ॥
इंद्रिनि पर मन नृपति कहावत, नैननि यहै डरात।
काहे कौ मैं इनहि मिलाए, जानि बूझि पछितात।
अब सुधि करन हमारी लाग्यौ, उनको प्रभुता देखि।
हियौ भरत कहि इनहिं टराऊँ, वै इकटक रहे पेखि ॥
अब मानत है दोप आपनौ, हमही वेंच्यौ आइ।
'सूरदास' प्रभु के अधिकारी, येई भए बजाइ॥ २२६४ ॥

राग बिलावल ॥ २८८३ ॥

जद्यपि नैन भरत ढरि जात।

इकटक नैंकु नही कहूँ टारत, तृप्ति न होत अघात ॥
अपनैही सुख भरत निसादिन, जद्यपि पूरन गात।
लै लै भरत आपनै भीतर, औरहि नही पत्यात ॥
जोड लीजै सोई है अपनौ, जैसै चोर भगात।
सुनहु 'सूर' ऐसे ये लोभी, धनि इनके पितु मात॥ २२६५ ॥

राग सोरठ ॥ २८८४ ॥

नैना अतिही लोभ भरे।

संगहिं सग रहत वै जहँ तहँ, बैठत चलत खरे॥
काहू कौ परतोति न मानत, जानत सवहिनि चोर।
लूटत रूप अखूट दाम को, स्याम वस्य यौ भोर॥
बड़े भागमानी यह जानी, कृपिन न इनतैं और।
ऐसी निधि मैं नाउँ न कीन्हौ, कहँ लैहै. कहँ ठौर॥
आपुन लेहिं औरहूँ देते, जस . लेते संसार।
'सूरदास' प्रभु इनहिं पत्याने, को कहै वारंवार॥ २२६६ ॥

राग कान्हरौ ॥ २८८५ ॥

ऐसे आपुस्वारथी नैन।

अपनोइ पेट भरत हैं निसि दिन, और न लैन न दैन॥
वस्तु अपार परी ओछैं कर, ये जानत घटि जैहै।
को इनसौं समुझाइ कहै यह, दीन्है ही अधिकैहै॥

सदा नही रैहैं अधिकारी, नाउँ राखि जौ लेते।
'सूर' स्याम सुख लूटैं आपुन, औरनि हूँ को देते॥ २२६७ ॥

राग बिलावल ॥ २८८६ ॥

जे लोभी ते देहि कहा री।
ऐसे निठुर नही मै जाने, जैसे नैन महा री॥
मन अपनौ कबहूँ बस ह्वैहै, ये नहिं होहि हमारे।
जब तैं गए नंदनंदन ढिग, तब तैं फिरि न निहारे॥
कोटि करौ वै हमहि न मानैं ,गीधे रूप अगाध।
'सूर' स्याम जौ कबहूँ त्रासैं, रहै हमारी साध॥ २२६८ ॥

राग नट ॥ २८८७ ॥

नैंना भरे घर के चोर।
लेत नहिं कछु बने इनसौ, देखि छबि भयौ भोर॥
नही त्यागत, नही भागत, रूप जाग प्रकास।
अलक डोरनि बाँधि राखे, तजौ उनकी आस॥
मैं बहुत करि बरजि हारो, निदरि निकसे हेरि।
'सूर' स्याम बँधाइ राखे, अंग-अंग-छबि घेरि॥ २२६९ ॥

राग बिलावल ॥ २८८८ ॥

भली करी उनि स्याम बँधाए।
बरज्यौ नही करयौ उन मेरौ, अति आतुर उठि धाए॥
अल्प चोर, बहु माल लुभाने, संगी सबनि धराए।
निदरि गए तैसौ फल पायौ, अब वै भए पराए॥
हमसौ इन अति करी ढिठाई, जो करि कोटि बुझाए।
'सूर' गए हरि रूप चुरावन, उन अपबस करि पाए॥ २२७० ॥

राग बिहागरौ ॥ २८८६ ॥

लोचन चोर बाँधे स्याम।
जातही उन तुरत पकरे, कुटिल अलकनि दाम॥
सुभग ललित कपोल आभा गिधे, दाम अपार।
और अँग-छबि-लोग जागे, अब नही निरवार॥
सँग गए वै सबै अटके, लटकि अंग अनूप।
एक एकहिं नही जानत, परे सोभा कूप॥
जो जहाँ, सो तहाँ डारयौ, नेकु तन सुधि नाहिं।
'सूर' गुरुजन डरहिं मानत, यहै कहि पछिताहिं॥ २२७१ ॥

राग जैतश्री ॥ २८६० ॥

लोचन भए पखेरू माई।
लुब्धे स्याम रूप चारा कौ, अलक फंद परे जाई॥
मोर मुकुट टाटी मानौ, यह बैठनि ललित त्रिभंग।
चितवनि लकुट, लास लटकनि पिय, काँपा अलक तरंग॥
दौरि गहनि मुख-मृदु-मुसुकावनि, लोभ पींजरा डारे।
'सूरदास' मन व्याध हमारौ, गृह बन तैं जु बिसारे॥ २२७२ ॥

राग गुडमलार ॥ २८९१ ॥

कपट कन दरस खग नैन मेरे।

चुननि निरखनि तुरत आपुही उड़ि मिले, परयौ चारा पेट मत्र केरे॥
निरखि सुदर वदन मोहिनी सिर परी, रहे इकटक निरखि वै डरत नाही।
लाज-कुल-कानि-वन फेरि आवत कवहुँ, रहत नहिं नैकहुँ, उतहिं जाही॥
मृदु हँसनि व्याध, पढि मंत्र मोलनि मधुर, स्रवन धुनि मुनत इत कौं न आवैं।
'सूर' प्रभु स्याम छवि धामहिं मै रहै, गेह वन नाम मन तै भुलावैं॥
॥ २२७३ ॥

राग मारू ॥ २८९२ ॥

नैन खग स्याम नीकै पढाए।

किये वस कपट कन मत्र के डारि कै, लए अपनाइ मन इनि वडाए॥
वै गिधे उनहिं मो रूप रस पानि करि, नैकहूँ टरत नहि चोन्हि लीन्हे।
गए हमको त्यागि, वहुरि कवहुँ न फिरे, केंचुरो उरग ज्यो छाँड़ि दोन्हे॥
एक ह्वै गए हरदी-चून-रंग ज्यौ, कौन पै जात निरुवारि माई।
'सूर' प्रभु कृपामय कियौ उन वास रचि निज देहु, वन-सघन-मुधि भुलाई॥
॥ २२७४ ॥

राग विहागरौ ॥ २८९३ ॥

नैना ऐसे है विसवासी।

आपु काज कीन्हौ हमकौ तजि, तव तै भई निरासी॥
प्रतिपालन करि वडे कराए, जानि आपने अग।
निमिप निमिप मै धोवति, आँजति, सिखए भाव तरंग॥
हम जान्यौ हमकौ ये ह्वैहै, ऐसे गए पराइ।
मुनहु 'सूर' वरजत ही वरजत, चेरे भए वजाइ॥ २२७५ ॥

राग जैतश्री ॥ २८९४ ॥

नैना भए प्रगटही चेरे।

ताकौ कछु उपकार न मानत, हम ये किये वडे रे॥
जौ वरजौ यह वात भली नहिं, हँसत, न नैकु लजात।
फूले फिरत मुनावत सवकौं, एते पर न डरात॥
यहौ कही हमकौ जनि छाँडौ, तुम विनु तनु वेहाल।
तमकि उठे यह वात मुनतहीं, गीधे गुन गोपाल॥
मुकुट लटक, भौहनि की मटकनि, कुडल झलक कपोल।
'सूर' स्याम मृदु मुसुकनि ऊपर, लोचन लीन्हे मोल॥ २२७६ ॥

राग सोरठ ॥ २८९५ ॥

लोचन मेरे भृग भए री।

लोक-लाज-वन-घन-वेली तजि, आतुर ह्वै जु गए री॥
स्याम-रूप-रस-वारिज-लोचन, तहाँ जाइ लुवधे री।
लपट लटकि पराग विलोकनि, सपुट लोभ परे री॥
हँसनि प्रकास विभास देखि कै निकसत पुनि तहँ पैठत।
'सूर' स्याम अंवुज कर चरननि, जहाँ तहाँ भ्रमि वैठत॥ २२७७ ॥

राग रामकली ॥ २८९६ ॥

लोचन भृंग कोस रस पागे। स्याम कमल-पद सौं अनुरागे॥
सकुच कानि बन बेली त्यागी। चले उड़ाइ सुरति-रति-लागी॥
मुकुति पराग-रसहिं इनि चाख्यौ। भव-सुख-फूल रसहिं इनि नाख्यौ॥
इनि तैं लोभी और न कोई। जो पटतर दीजै कहि सोई॥
गए तबहिं तैं फेरि न आए। 'सूर' स्याम वै गहि अटकाए॥
॥ २२७८ ॥

राग सारंग ॥ २८९७ ॥

नैना बीधे दोऊ मेरे।
मानौ परे गयद पक महिं, महा सबल बल केरे॥
निकसत नाहिं अधिक बल कीन्है, जतन न बनै घनेरे।
स्यामसुँदर के दरस परस तैं, इत उत फिरत न फेरे॥
लंपट लौन हटक नहि मानत, चंचल चपल अरे रे।
'सूरदास' प्रभु निगम अगम सत, मुनि सुमिरत बहुतेरे॥ २२७९ ॥

राग धनाश्री ॥ २८९८ ॥

मेरे नैन कुरंग भए।
जोवन बन तैं निकसि चले ये, मुरली नाद रए॥
रूप व्याध, कुडल दुति ज्वाला, किंकिनि घटा घोप।
व्याकुल ह्वै एकहि टक देखत ,गुरुजन तजि सतोप॥
भौह कमान, नैन सर साधनि, मारनि चितवनि-चारि।
ठौर रहे नहि टरत 'सूर' वै, मद हँसनि सिर डारि॥ २२८० ॥

राग रामकली ॥ २८९९ ॥

नैन भए-बस मोहन तैं।
ज्यौं कुरंग बस होत नाद के, टरत नही ता गोहन तैं॥
ज्यौं मधुकर बस कमल कोस के, ज्यौं बस चद चकोर।
तैसैंहि ये बस भए स्याम के, गुडी वस्य ज्यौं डोर॥
ज्यौं बस स्वाति बूँद के चातक, ज्यौं बस जल के मीन।
'सूरज' प्रभु के वस्य भए ये, छिनु छिनु प्रीति नवीन॥ २२८१

राग टोड़ी ॥ २९०० ॥

ऐसे वस्य न काहुहिं कोऊ।
जैसे वस्य नदनदन के, ये नैना मेरे दोऊ॥
चद चकोर नही सरि इनकी, एकौ पल न बिसारत।
नाद कुरग कहा पटतर इन, व्याध तुरत ही मारत॥
ये बस भए सदा सुख लूटत, चतुर चतुरई कीन्हे।
'सूरदास' प्रभु त्रिभुवन के पति, ते इन वस करि लीन्हे॥ २२८२ ॥

राग जैतश्री ॥ २९०१ ॥

ये नैना अपस्वारथ के।
और इनहि पटतर क्यौं दीजै, जे हैं बस परमारथ के॥

विना दोप हमकौं परित्याग्यौ, सुख कारन भए चेरे।
मिले धाइ बरज्यौ नहिं मान्यौ, तक्यौ न दहिनै डेरे॥
इनकौ भलौ होइगौ कैसैं, नैकु न सेवा मानी।
'सूर' स्याम इन पर कह रीझे, इनकी गति नहि जानी॥ २२८३ ॥

॥ २९०२ ॥

नैना मेरे अटके री, माई, वा मोहन कै संग।
कहा करौ बरज्यौ नहिं मानत, रँग उनहिं कै रंग॥
औरनि कौ तिरछे ह्वै चितवत, गुरुजनहूँ सौ जंग।
'सूरदास' प्रभु-प्रेम-सुरति सौ, होत न कबहूँ भंग॥ २२८४ ॥

राग सूही ॥ २९०३ ॥

नैना लोनहरामी ये।
चोर, ढुढ, बटपार, कहावत, अपमारगी अन्यायी ये॥
निलज, निर्दयी, निसँक, पातकी, जैसे आपुस्वारथी वैं।
बारे तैं प्रतिपालि बढाए, बड़े भए तब गए तजि कैं॥
हमकौ निदरि करत सुख हरि सँग, वै उनकौ लीन्हौ हित कै।
मिले जाइ 'सूरज' के प्रभु कौ, जैसैं मिलत नीर अरुपै॥ २२८५ ॥

राग जैतश्री ॥ २९०४ ॥

नैन मिले हरि कौं ढरि भारी।
जैसैं नीर नीर मिलि एकैं, कौन सकै निरुवारी॥
बातचक्र ज्यौ तृनहिं उड़त लै, देह संग ज्यौं छाही।
पवन बस्य ज्यौ उड़त पताका, ये तैसे छवि माही॥
मन पाछै, ये आगैं धावत, इद्री इनहिं लजाने।
'सूर' स्याम जैसे इन जाने, त्यौ काहूँ नहिं जाने॥ २२८६ ॥

राग नट ॥ २९०५ ॥

लोचन भए अतिही ढीठ।
रहत हैं हरि सग निसि दिन, अतिहिं नवल अहीठ॥
बदत काहूँ नही निधरक, निदरि मोहिं न गनत।
बार बार बुझाइ हारी, भौह मोपर तनत॥
ज्यौ सुभट रन देखि टरत न, लरत खेत प्रचारि।
सूर' छवि सन्मुखहिं धावत, निमिप अस्त्रनि डारि॥ २२८७ ॥

राग बिलावल ॥ २९०६ ॥

सुभट भए डोलत ये नैन।
सन्मुख भिरत, मुरत नहिं पाछै, सोभा चमू डरै न॥
आपुन लोभ अब लै धावत, पलक कवच नहि अंग।
हाव भाव सर लरत कटाच्छनि, भृकुटी धनुप अपग॥
महाबीर ये उत अँग-अँग-बल-रूप-सैन पर धावत।
सुनहु 'सूर' ये लोचन मेरे, इकटक पलक न लावत॥ २२८८॥

राग जैतश्री ॥ २९०७॥

सेवा इनकी वृथा करी।
ऐसे भए दुखदायक हमको, याही सोच मरी॥

घूँघट-ओट-महल मैं राखति, पलक कपाट दिये।
ये जोइ कहै करैं हम सोई, नाहिन भेद दिये॥
अब पाई इनकी लँगराई, रहत पेट समाने।
सुनहु 'सूर' लोचन बटपारी गुन, जोइ सोइ प्रगटाने॥ २२८९॥

राग गौरी ॥ २९०८॥

नैंना हैं री ये बटपारी।
कपट नेह करि करि इन हमसौं, गुरुजन तैं करी न्यारी॥
स्याम-दरस-लाडू कर दीन्हौ, प्रेम ठगौरी लाइ।
मुख परसाइ हँसनि मधुरता, डोलत संग लगाइ॥
मन इनसौं मिलि भेद बतायौ, विरह फाँस गर डारी।
कुल-लज्जा-संपदा हमारी, लूटि लई इन सारी॥
मोह विपिन मैं परी, कराहति, नेह जीव नहिं जात।
'सूरदास' गुन सुमिरि सुमिरि वै अंतरगत पछितात॥ २२९०॥

राग बिहागरी ॥ २९०९॥

तिनकौ स्याम पत्याने सुनियत।
ह्वाऊँ जाइ अकाज करैंगे, यह गुनि गुनि सिर धुनियत॥
विवस भई तन की सुधि नाहीं, विरह फाँस गये डारि।
लगनगाँठि बैठी नहि छूटति, मगनमूरछा भारि॥
प्रेम जीव निसरत नहि कैसैंहु, अंतर अंतर जानति।
'सूरदास' प्रभु क्यौं सुधि पावैं, बार बार गुन गानति॥ २२९१॥

राग सारंग ॥ २९१०॥

रोम रोम ह्वै नैंन गए री।
ज्यौं जलधर परवत पर बरषत, बूँद बूँद ह्वै निचटि द्रए री॥
ज्यौं मधुकर रस कमल पान करि, मोतैं तजि उन्मत्त भए री।
ज्यौं काँचुरी भुअंगम तजही, फिरि न तकैं जु गए सु गए री॥
ऐसी दसा भई री उनकी, स्याम रूप मैं मगन भए री।
'सूरदास' प्रभु-अगनित-सोभा, ना जानौं किहिं अंग छए री॥ २२९२॥

राग सारंग ॥ २९११॥

नैंन निरखि अजहूँ न फिरे री।
हरि-मुख-कमल-कोस-रस-लोभी, मनहुँ मधुप मधु माति गिरे री॥
पलकनि सूल सलाक सही है, निसि बासर दोउ रहत अरे री।
मानहुँ विवर गए चलि कारे, तजि केंचुरी भए निनरे री॥
ज्यौं सरिता परवत की खोरी, प्रेम पुलक स्रम स्वेद, झरे री।
बूँद बूँद ह्वैं मिले 'सूर' प्रभु, ना जानौं किहिं घाट तरे री॥ २२९३॥

राग सारंग ॥ २९१२॥

नैंन गए सु फिरे नहिं फेरि।
जद्यपि घेरि घेरि मैं राखति, रहे नहीं पचिहारी टेरि॥
कहा कहौं सपनैंहु नहिं आवत, वस्य भए हरि ही के जाइ।
मोतैं कहा चूक उन जानी, जातैं निपट गए बिसराइ॥

छिनहूँ की पहिचानि मानियै, उनकौं हम प्रतिपाले प्रेम।
जौ तजि गए हमारैं बेसेइ, उन त्याग्यौ, हम हैं उहिं नेम॥
मात पिता सगहिं प्रतिपालैं, संगहिं संग रहे निसि जाम।
सुनहु 'सूर' ये बाल सँघातो, प्रेम बिसारि मिले हरि स्याम॥ २२६४॥

राग नट॥ २६१३॥

नैननि देखिबे की ठौरि॥
नद-गोप-कुमार सुंदर, किये चदन खौरि॥
मोम पीड़ सिखंड राजत, नख सिखहिं छवि ग्रौरि।
सुभग गावनि, मृदु बजावनि बेनु, ललित सु गौरि॥
कुटिल कच मृगमद-तिलक-छबि, बचन मंत्र ठगौरि।
'सूर' प्रभु नट रूप नागर, निरखि लोचन बौरि॥ २२६५॥

राग मलार॥ २६१४॥

तब तैं नैन रहे इकटकही।
जब तैं दृष्टि परे नँदनदन, नैकु न ग्रंत मटकहीं॥
मुरली धर ग्रग्न अधरनि पर, कुडल झलक कपोल।
निरखत इकटक पलक भुलाने, मनौं बिकाने मोल॥
हमकौं वै काहैं न बिसारैं, अपनी सुधि उन नाहिं।
'सूर' स्याम-छबि-सिधु समाने, बृथा तरुनि पछितांहिं॥ २२६६॥

राग मलार॥ २६१५॥

नैना नैननि माँझ समाने।
टारैं टरत न इक पल मधुकर ज्यौं, रस मैं अरुझाने॥
मन गति पगु भई सुधि बिसरीं, प्रेम पराग लुभाने।
मिले परस्पर खजन मानौ, झगरत निरखि लजाने॥
मन बच क्रम पल ओट न भावत, छिनु छिनु जुग परमाने।
'सूर' स्याम के वस्य भए ये, जिहिं बीतैं सो जानैं॥ २२६७॥

राग गौरी॥ २६१६॥

मेरै माई लोभी नैन भए।
कहा करौं ये कह्यौ न मानत, बरजतही जु गए॥
रहत न घूँघट-ओट-भवन मैं, पलक कपाट दए।
लिए फँदाइ विहगम मानौं, मदन व्याध बिधए॥
नहि परमिति मुखइदु सुधानिधि, सोभा नितहिं नए।
'सूर' स्याम-तनु पीत-बसन छवि, अंग अंग जितए॥ २२६८॥

राग विहागरौ॥ २६१७॥

नैना लोभहिं लोभ भरे।
जैसैं चोर भरे घर पैठत, बैठत उठत खरे॥
अग अग सोभ-अपार-निधि, लेत न, सोच परे।
जोइ देखै सोइ सोइ निरमोलै, कर ले, तहीं धरे॥
त्यौं लुब्धे ये टरत न टारे, लोक लाज न डरे।
'सूर' कछू उन हाथ न आयौ, लोभ जाग पकरे॥ २२६९॥

राग सोरठ ॥ २९१८ ॥

नैना ओछे चोर अरी री।
स्याम-रूप-निधि नोखै पाई, देखत गए भरी री ॥
अंग-अंग-छवि चित्त चलायौ, सो कछु रहति परी री।
कहा लेहि, कह तजैं, बिबस भए, तैसिय करनि करी री ॥
पुनि पुनि जाइ एक इक लेते, आतुर धरनि धरी री।
भोरे भए भोरसौ ह्वै गयौ, धरे जगार परी री ॥
जो कोउ काज करै बिनु बूझै, पेलनि लहत हरी री।
'सूर' स्याम बस परे जाइ कै ज्यौ मोहि तजी खरी री ॥ २३०० ॥

राग मलार ॥ २९१९ ॥

नैना मारेहूँ पर मारत।
राखी छवि दुराइ हिरदै मैं, तिनकौं हिय भरि ढारत ॥
आपु न गए भली कीन्ही, अब उनहि इहाँ तै टारत।
बरबस ही लै जान कहत है, पेंज आपनी सारत ॥
ऐसे खोज परे पहलैहै, आवत जात न हारत।
इनकौ गुन कैसै कहि आवै, 'सूर' पयारहि झारत ॥ २३०१ ॥

राग मलार ॥ २९२० ॥

नैना खोज परे हैं ऐसे।
नैकु रही हरि मूरति हिरदै, डाह मरत है जैसे ॥
मन तौ गयौ इंद्रियनि लैकै, बुधि-मति-ज्ञान समेत।
जिनकी आस सदा हम राखे, तिन दुख दीन्हौ जेत ॥
आपुन गए कौन सो चालै, करत ढिठाई और।
नैकु रही छवि द्रुति हिरदै, मैं, ताहि लगावत ठौर ॥
गए रहे आए इहि कारज, भरि ढारत है ताहि।
'सूरदास' नैननि की महिमा, को है कहियै काहि ॥ २३०२ ॥

राग सारंग ॥ २९२१ ॥

नैना इहि ढँग परे, कहा करौ माई।
आए फिरि कौन काज, कबहि मै बुलाई ॥
अब लौ इहिं आस रही, मिलिहै ये आई।
भाँवरि सी पारि फिरे, नारि ज्यो पराई ॥
आवत है लोभ भरे, कपट नेह धाई।
तनक रूप चोरि हियैं, धरचौ हौ दुराई ॥
आए है ताहि लैन, ऐसे दुखदाई।
मारे कौ मारत है, बडे लोग भाई ॥
अतिही ये करत फिरत, दिनहिं दिन ढिठाई।
'सूरदास' प्रभु आगै, चलौ कहै जाई ॥ २३०३ ॥

राग गौरी ॥ २९२२ ॥

यह तौ नैननि ही जु कियौ।
सरवस जो कछु रह्यौ हमारै, सो लै हरिहिं दियौ ॥
बुधि बिवेक कुल कानि गँवाई, इंद्रिनि कियौ बियौ।
आपुन जाइ बहुरि आए इहं, चाहत रूप लियौ ॥

अब लागे जिय घात करन कौ, ऐसो निठुर हियौ ।
सुनहु 'सूर' प्रतिपाले कौ गुन, वैरइ मानि लियौ ॥ २३०४ ॥

राग नट ॥ २९२३ ॥

मेरे नैन चकोर भुलाने ।
अह निसि रहत पलक सुधि विसरे, रूप सुधा न अघाने ॥
पल घटिका, घटि जाम, जाम दिन, दिनहीं जुग वर जाने ।
स्वाद परे निगिपहुँ नहि त्यागत, ताही माँझ समाने ॥
हरि-मुख-विधु पीवत ये व्याकुल, नैकहुँ नहीं थकाने ।
'सूरदास' प्रभु निरखि ललित तनु, अंग अग अरुझाने ॥ २३०५ ॥

राग सारंग ॥ २९२४ ॥

हरि-मुख-विधु मेरी अँखियाँ चकोरी ।
राखे रहति आटपट जतननि, तऊ न मानति कितिक निहोरी ॥
वरवस ही इन गही मूढता, प्रीति जाइ चंचल सौं जोरी ।
विबस भई चाहति उड़ि लागन, अटकति नैकु अँजन की डोरी ॥
वरवसही इन गही चपलता, करत फिरत हमहूँ सौं चोरी ।
'सूरदास' प्रभु मोहन नागर, वरपि सुधा-रस-सिंधु झकोरी ॥ २३०६ ॥

राग विहागरी ॥ २९२५ ॥

लोचन लालच तैं न टरे ।
हरि सारँग सौं सारँग गीधे, दधि-सुत-काज जरे ॥
ज्यौं मधुकर वस परे केतकी, नहि ह्वाँ तैं निकरे ।
ज्यौं लोभी लोभहि नहि छाँडत, ये अति उमँग भरे ॥
सनमुख रहत, सहत दुख दारुन, मृग ज्यौं नहीं डरे ।
वह धोखै, यह जानत है सव, हित चित सदा करे ॥
ज्यौं पतग फिरि परत प्रेम वस, जीवत मुरछि मरे ॥
जैसैं मीन अहार लोभ तैं, लीलत परै गरे ॥
ऐसैहि ये लुब्धे हरि छवि पर, जीवत रहत भिरे ।
'सूर' सुभट ज्यौं रन नहि छाँड़त, जव लौं धरनि गिरे ॥ २३०७ ॥

राग नट ॥ २९२६ ॥

नैननि कोउ समुझावै री ।
अपनौ घर तुम छाँडे डोलत, मेरे ह्याँ लै आवै री ॥
यही बूझि देखौ नीकै करि, जहाँ जात कछु पावै री ।
देखत के सव साँचे लागत, ताहि छुवत नहि आवै री ॥
वृथा फिरत नट के गुर देखत, नाना रूप वनावै री ।
'सूर' स्याम-अँग-अंग-माधुरी, सत सत मदन लजावै री ॥ २३०८ ॥

राग नट ॥ २९२७ ॥

हरि छवि अंग नट के ख्याल ।
नैन देखत प्रगट सव कोउ, कनक, मुक्ता, लाल ॥
छिनक मैं मिटि जात सो पुनि, और करत विचार ।
त्यौ हियै छवि और औरै, रचत चरित अपार ॥

लहै तब जब हाथ आवै, दृष्टि नहि ठहरात।
वृथा भूले रहत लोचन, इन कहै कोउ बात॥
रहत निसि दिन संग हरि के, हरष नाहि समात।
'सूर' जब जब मिले हमकौ, महा बिह्वल गात॥ २३०९॥

राग कान्हरौ॥ २९२८॥

भई गई ये नैन न जानत।
फिरि फिरि जात लहत नहि सोभा, हारैहु हार न मानत।
बूझहु जाइ रहत निसि बासर, नैकु रूप पहिचानत?
सुनहु सखी सतरात इते पर, हम पर भौहै तानत॥
झूठै कहत स्याम अँग सुदर, बातै गढि गढि बानत।
सुनहु 'सूर' छवि अति अगाध गति, निगम नेति जिहि गानत॥ २३१०॥

राग बिहागरौ॥ २९२९॥

स्याम छवि लोचन भटकि परे।
अतिही भए बिहाल सखी री, निसि दिन रहत खरे॥
हम तै गए लूटि लैबे कौ, ह्वाँ सो परे अगोट।
अपनौ कियौ तुरत फल पायौ, राखति घूंघट ओट॥
इकटक रहत पराऐ बस भए, दुख सुख समुझि न जाइ।
'सूर' कहौ ऐसौ को त्रिभुवन, आवे सिंधु थहाइ॥ २३११॥

राग नट॥ २९३०॥

नैन भए बोहित के काग।
उड़ि उड़ि जात पार नहि पावत, फिरि आवत तिहि लाग॥
ऐसी दसा भई री इनकी, अब लागे पछितान।
मो बरजत बरजत उठि धाए, नहि पायौ अनुमान॥
वह समुद्र ये ओछे बासन, धरै कहाँ सुखरासि।
सुनहु 'सूर' ये चतुर कहावत, वह छवि महा प्रकासि॥ २३१२॥

राग गौरी॥ २९३१॥

हारि जीति नैना नहिं जानत।
धाए जात तही कौ फिरि, फिरि, वै कितनौ अपमानत॥
परे रहत द्वारै सोभा के, वेई गुन गुनि गानत।
हरषित रहत सबनि को निदरे, नैकहु लाज न आनत॥
अब ये रहत निघरई कीन्है, जद्यपि रूप न जानत।
दुख सुख बिरह सँजोग समिति जनु, 'सूरदास' यह गानत॥ २३१३॥

राग रामकली॥ २९३२॥

नैना मानऽपमान सह्यौ।
अति अकुलाइ मिले री बरजत, जद्यपि कोटि कह्यौ॥
जाकी बानि परी सखि जैसी, सो तिहि टेक रह्यौ।
ज्यौ मरकट मूठी नहि छाँडत, नलिनी सुवा गह्यौ॥
जैसै नीर प्रवाह समुद्रहिं, माँझ बह्यौ सु बह्यौ।
'सूरदास' इन तैसिय कीन्ही, फिरि मोतन न चह्यौ॥ २३१४॥

राग सोरठ ॥ २९३३ ॥

यह नैननि की टेव परी।
जैसैं लुवधति कमलकोस मैं, भरमर की भ्रमरी ॥
ज्यौं चातक स्वातिहिं रट लावै, तैसिय धरनि धरी।
निमिष नहीं मिलवत पल एकौ, आपु दसा बिसरी ॥
जैसैं नारि भजै पर पुरुषहि, ताकैं रंग ढरी।
लोक वेद आरज पथ की सुधि, मारगहू न डरी ॥
ज्यौं कचुरी त्यागि उहिं मारग, अहिघरनो न फिरी।
'सूरदास' तैसेहि ये लोचन, का धौं परनि परी ॥ २३१५ ॥

राग बिहागरौ ॥ २९३४ ॥

नैन गए न फिरे री माई।
ज्यौं मरजादा जाइ सुपत की, बहुरयौ फेरि न आई ॥
ज्यौं बालापन बहुरि न आवै फिरे नहीं तरुनाई।
ज्यौं जल ढरत फिरत नहिं, पाछैं, आगैं आगैं जाई ॥
ज्यौं कुलबधू वाहिरी परि कै, कुल मैं फिरि न समाई।
वैसी दसा भई इनहूँ की, 'सूर' स्याम सरनाई ॥ २३१६ ॥

राग सूही ॥ २९३५ ॥

जब तैं नैन गए मोहिं त्यागि।
इद्री गई, गयौ तनु तैं मन, उनहिं बिना अवसेरी लागि।
वै निरदई, मोह मेरैं जिय, कहा करौं मैं भई बिहाल।
गुरुजन तजे, इहाँ इन त्यागी, मेरे बाँटैं परयौ जँजाल ॥
इत की भई न उत की सजनी, भ्रमत भ्रमत मैं भई अनाथ।
'सूर' स्याम कौं मिले जाइ सब, दरसन करि वै भए सनाथ ॥ २३१७ ॥

राग बिलावल ॥ २९३६ ॥

नैना मेरे मिलि चले, इंद्री अरु मन संग।
मोकौं व्याकुल छाँड़ि कै, आपुन करैं जु रंग ॥
अपनौ नहिं कबहूँ करैं, अधमनि के ये काम।
जनम गँवायौ माथही, अब हम भई निकाम ॥
धिक जन ऐसे जगत मैं, यह कहि कहि पछिताति।
धर्म हृदय जिनकैं नहीं, धिक तिनकी है जाति ॥
मनसा बाचा कर्मना, गए बिसारि बिसारि।
'सूर' सुमिरि गुन नैन के बिलपति है ब्रजनारि ॥ २३१८ ॥

राग बिलावल ॥ २९३७ ॥

नैननि सौं झगरौ करिहौ री।
कहा भयौ जौ स्याम संग है, बाँह पकरि सन्मुख लरिहौ री ॥
जन्महिं तैं प्रतिपालि बड़े किये, दिन दिन कौ लेखौ करिहौ री।
रूप लूट कीन्ही तुम काहै, अपने बाँटे कौ धरिहौ री ॥
एक मातु पितु भवन एक रहे, मैं काहै उनकौ डरिहौ री।
'सूर' अस जौ नहीं देहिगे, उनकैं रँग मैंहूँ ढरिहौ री ॥ २३१९ ॥

राग आसावरी ॥ २९३८ ॥

मोहूँ तै वै ढीठ कहावत ।
जबही लौं मै मौन धरे हौ, तबलौ वै कामना पुरावन ॥
मै उनकौ पहिलै करि राख्यौ, वै मोको काहे बिसरावत ।
आपु काज कौ उनहि चले मिलि, बाँटौ देत रोइ अब आवत ॥
बहुतै कानि करी मै सजनी, अब देखौ मरजाद घटावत ।
जो जैसौ तासौं त्यो चलियै, हरि आगै गढि बात बनावत ॥
मिले रहै नहिं उनको चाहति, मेरौ लेखौ क्यौ न बुझावत ।
'सूर' स्याम सँग गर्व बढ़ायौ, उनही कै बल बैर बढावत ॥ २३२० ॥

राग धनाश्री ॥ २९३९ ॥

नैना रहै न मेरे हटकै ।
कछु पढ़ि दियौ सखी उहिं ढोटा, घूघरवारी लटकै ॥
कज्जल कुलुफ मेलि मंदिर मै, पल सँदूक पट अटकै ।
निगम नीति कुल लाज टुटै सब, मन गयंद के झटकै ॥
मोहनलाल करो बस अपनै हौ, निमेष के मटकै ।
'सूरदास' पुर नारि फिरावत, संग लगाए नट कै ॥ २३२१ ॥

राग सारंग ॥ २९४० ॥

नैना निपट बिकट छबि अटके ।
टेढी कटि, टेढो कर मुरली, टेढी पाग लर लटके ॥
देखि रूप रस सोभा रीझे, फेरे फिरत न घटके ।
पारत बचन कमल-दल-लोचन, लाल के मोदनि अटके ॥
मंद मंद मुसकात सखनि मै रहत न काहूँ हटके ।
'सूरदास' प्रभु रूप लुभाने, ये गुन नागर नट के ॥ २३२२ ॥

राग काफी ॥ २९४१ ॥

नैना अटके रूप मै, पल रहत बिसारे ।
निसि बासर नहिं सँग तजै, भरि भरि जल ढारे ॥
अरुन अधर, दुज चमकही, चपला चकचौंधनि ।
कुटिल अलक छबि घूँघरे, सुमनासुत मोधनि ॥
चपकली सी नासिका, रँग स्यामहिं लीन्हे ।
नैंन बिसाल समुद्र से, कुंडल स्रुति दीन्हे ॥
तहँ ये रहे लुभाइ के कछु समुझि न जाई ।
'सूर' स्याम बेबस किये, मोहिनी लगाई ॥ २३२३ ॥

राग जेतश्री ॥ २९४२ ॥

लोचन भूलि रहे तहँ जाई ।
अंग-अंग छबि निरखि माधुरी, इकटक पल बिसराई ।
अति लोभी अँचवत अघात है, तापर पुनि ललचात ।
देत नही काहू कौ नैकहुँ, आपुहिं डारत खात ॥
ओछै हाथ परी अपार निधि, काहूँ काम न आवै ।
'सूर' स्याम इनहीं कौ सौपी, यह कहि कहि पछितावै ॥ २३२४ ॥

राग धनाश्री ॥ २९४३ ॥

नैननि यह कुटेव पकरी।
लूटत स्याम रूप आपुनहीं, निसि दिन, पहर घरी ॥
प्रथमहिं इन यह नोखैं पाई, गए अतिहिं इतराइ।
मिले अचानक बड़भागी ह्वै, पूरन दरसन पाइ ॥
लोभी बड़े, कृपन को इन सरि कृपा भई यह न्यारी।
'सूर' स्याम उनकौ भए भोरे, हमकौ निठुर मुरारी ॥ २३२५ ॥

राग भैरव ॥ २९४४ ॥

सुनि सजनी मोसों इक बात।
भाग बिना कछु नहीं पाइयै, तू काहैं पुनि पुनि पछितात ॥
नैननि बहुत करी री सेवा, पल पल घरी पहर दिन रात।
मन बच क्रम दृढताई जाकैं, धन्य धन्य इनकौ है जात ॥
कैसैं मिले स्याम इनकौ ढरि, जैसैं सुत कौं हित कै मात।
'सूरदास' प्रभु-कृपा-सिंधु वै, सहज बड़े है त्रिभुवन तात ॥ २३२६ ॥

राग भैरव ॥ २९४५ ॥

नैन स्याममुख लूटत हैं।
यहै बात मोकौं नहिं भावै, हम तैं काहैं छूटत हैं ॥
महा अछयनिधि पाइ अचानक, आपुहि सबै चुरावत हैं।
अपने हैं तातैं यह कहियत, स्याम इन्हैं भरमावत हैं ॥
यह सपदा कहौं क्यौं पचिहै, बाल सँघाती जानत हैं।
'सूरदास' जो देते कछु इक, कहौ कहा अनुमानत हैं ॥ २३२७ ॥

राग रामकली ॥ २९४६ ॥

सजनी मोतैं नैन गए।
अब लौं आस रही आवन की, हरि कै अंग छए ॥
जब तैं कमलवदन उन दरस्यौ, दिन दिन और भए।
मिले जाइ हरदी चूना ज्यौं, एकहिं रंग रए ॥
मोकौं तजि भए आपुस्वारथी, वा रस मत्त भए।
'सूर' स्याम कैं रूप समाने, मानो बूँद तए ॥ २३२८ ॥

राग बिहागरौ ॥ २९४७ ॥

नैन गए री अति अकुलात।
ज्यौं धावत जल नीचैं मारग, कहूँ नहीं ठहरात ॥
कहा कहौं ऐसी आतुरता, पवन बस्य ज्यौं पात।
ज्यौं आऐं रितुराज सखी री, बेलि द्रुमनि भहरात ॥
आइ बसी ऐसी जिय उनकै, मैं ब्याकुल पछितात।
'सूरदास' कैसेहुँ नहिं बहुरे, रीझे स्यामल गात ॥ २३२९ ॥

राग रामकली ॥ २९४८ ॥

लोभी नैन है मेरे।
उतहिं स्याम उदार मन के, रूपनिधि टेरे ॥

जातही उन लूटि पाई, तृषा जैसैं नीर।
छुधा मै ज्यौं मिलत भोजन, होत जैसैं छीर ॥
वै भए री निठुर मोकौं, अब परी यह जानि।
अष्ट सिधि नव निद्धि हरि तजि, लेहि ह्यां कह आनि ॥
आपने सुख के भए वै है जु, जुग अनुमान।
'सूर' प्रभु करि लियो आदर, बड़े परम सुजान ॥ २३३० ॥

राग आसावरी ॥ २९४९ ॥

नैननि तैं हरि आपुस्वारथी, आजु बात यह जानी।
ये उनकौ, वै इनकौ चाहत, मिले दूध अरु पानी ॥
सुनियत परम उदार स्यामघन, रूपरासि उन माही।
कीजै कहा कृपन की संपति, नैन नही जु पत्याही ॥
बिलसत डारत रूप-सुधा-निधि, उनकी कछु न चलावै।
सुनहु 'सूर' हम स्वाति बूँद लौं, रट लागी नहिं पावै ॥ २३३१ ॥

राग सारंग ॥ २९५० ॥

जातैं परयौ स्यामघन नाउँ।
इनतैं निठुर और नहिं कोई, कवि गावत उपमाउँ ॥
चातक कैं रट नेह सदा, वह रितु अनरितु नहिं हारत।
रसना तारू सौं नहिं लावत, पीवै पीव पुकारत ॥
वै बरषत डोंगर, बन, धरनी, सरिता, कूप, तड़ाग।
'सूरदास' चातक मुख जैसै, बूँद नही कहुँ लाग ॥ २३३२ ॥

राग मलार ॥ २९५१ ॥

स्याम घन ऐसे है री माई।
मोकौ दरस नही सपनैहूँ, धरे रहत निठुराई ॥
षट-रितु व्रत तनु गारि कियौ क्यौ, चातक ज्यौं रट लाई।
उन्है नेम चित सदा हमारै, नैकु नही बिसराई ॥
इन्द्री मन लूटत लोचन मिलि, इनकौ वै सुखदाई।
'सूर' स्वाति चातक की करनी, ऐसे हमहि कन्हाई ॥ २३३३ ॥

राग सारंग ॥ २९५२ ॥

नैननि हरि कौ निठुर कराए।
चुगली करी जाइ उन आगैं, हमतैं वै उचटाए ॥
यहै कह्यौ हम उनहि बुलावत, वै नाहिंन ह्यां आवति।
आरज पथ, लोक की संका, तुम तन आवत पावति ॥
यह सुनि कै उन हमहि बिसारी, राखत नैननि साथ।
सेवा बस करि कै लूटत है, बात आपनै हाथ ॥
संगहिं रहत फिरत नहिं, कतहूँ, आपुस्वारथी नीके।
सुनहु 'सूर' वै येउ तैसेई, बड़े कुटिल है जीके ॥ २३३४ ॥

राग विहागरौ ॥ २९५३ ॥

कपटी नैननि तैं कोउ नाही।
घर कौ भेद और के आगैं, क्यौं कहिबे कौ जाही ॥

आपु गए निधरक ह्वै हमतैं, बरजि बरजि पचिहारी।
मनकामना भई परिपूरन, हरि रीझे गिरिधारी॥
इनहिं बिना वै, उनहिं बिना ये, अंतर नाहीं भावत।
'सूरदास' यह जुग की महिमा, कुटिल तुरत फल पावत॥ २३३५॥

राग बिलावल॥ २९५४॥

कहा भयौ जौ आपुस्वारथी, नैननि अपनी निठुराई।
जो यह सुनत कहत सोई धिक, तुरतहिं ऐसी भई बड़ाई॥
कहा चाहियै अपने मुख कौ, इन तौ सीखी यहै भलाई।
अजहूँ जाइ कहै कोउ उनसौं, काहे कौं तुम लाज गँवाई॥
अचरज कथा कहति हौ सजनी, ऐसी है तुमसौं चतुराई।
सुनहु 'सूर' जे भजि उबरे है, तिनकौं अब चाहति है माई॥ २३३६॥

राग बिहागरौ॥ २९५५॥

सजनी नैना गए भगाइ।
अरवाती कौ नीर बड़ेरी, कैसै फिरिहै धाइ॥
बरत भवन जैसैं तजियत है, निकसे त्यौं अकुलाइ।
मोउ अपनौ नहि, पथिक पंथ कैं, बासा लीन्हौ आइ॥
ऐसी दसा भई है इनकी, सुख पायौ हौं जाइ।
'सूरदास' प्रभु कौं ये नैना, मिले निसान बजाइ॥ २३३७॥

राग बिलावल॥ २९५६॥

मोहन बदन बिलोकि थकित भए, माई री ये लोचन मेरे।
मिले जाइ अकुलाइ अगमने, कहा भयौ जो घूँघट घेरे॥
लोकलाज कुलकानि छाँडि कै, बरबस चपल चपरि भए चेरे।
काहे बादिहिं बकति बावरी, मानत कौन मते अब तेरे॥
ललित त्रिभंगी-तनु-छवि अटके, नाहिन फिरत किनौऊ फेरे।
'सूर' स्याम सन्मुख रति मानत, गए मग बिसरि दाहिने डेरे॥ २३३८॥

राग रामकली॥ २९५७॥

थकित भए मोहन मुख नैन।
घूँघट ओट न मानत कैसैंहु, बरजत कीन्हौ गैन॥
निदरि गए मरजादा कुल की, अपनौ भायौ कीन्हौ।
मिले जाइ हरि कौं आतुर ह्वै, लूटि सुधारस लीन्हौ॥
अब तू बकति बादि री माई, कह्यौ मानि रहि मौन।
इनहु 'सूर' अपनौ मुख तजिकै, हमहिं मनावै कौन॥ २३३९॥

राग देवगंधार॥ २९५८॥

मेरे इन नैननि इते करे।
मोहन बदन चकोर चंद ज्यौं, इकटक तैं न टरे॥
प्रमुदित मनि अवलोकि उरग ज्यौं, अति आनंद भरे।
निधिहिं पाइ इतराइ नीच ज्यौं, त्यौं हमकौं निदरे॥
जौ अटके गोचर घूँघट पट, सिसु ज्यौं अरनि अरे।
धरे न धीर निमेष रुदनबल, सौ हठ करनि परे॥

रही ताडि, खिझि लाज लकुट ले, एकहु डर न डरे।
'सूरदास' गथ, खोटौ, काहै पारखि दोष धरे ॥ २३४० ॥

राग जैतश्री ॥ २६५६ ॥

नैननि दसा करी यह मेरी।
आपुन भए जाइ हरि-चेरे, मोहिं करत है चेरी ॥
जूठौ खैये मीठैं कारन, आपुहि खात अड़ावत।
और जाइ सो कौन नफे का, देखन तौ नहिं पावत ॥
काज होइ तौ यहौ कीजियै, वृथा फिरै को पाछै।
'सूरदास' प्रभु जब जब देखत, नट सँवाँग सो काछै ॥ २३४१ ॥

राग विलावल ॥२६६० ॥

को इनकी परतीति वखाने।
नैना धौ काहे तै अटके, कौन अंग ढरकाने ॥
इनके गुन बारैहि तै सजनी, मै नीकैं करि जाने।
चेरे भए जाइ ये तिनके, कैसै तिनहि पत्याने ॥
छिनुछिनु मै औरै गति जिनकी, ऐसे आपु सयाने।
'सूर' स्याम अपनैं गुन सोभा, को नहि बस करि आने ॥ २३४२ ॥

राग रामकली ॥ २६६१ ॥

नैननि कठिन बानि पकरी।
गिरिधर लाल रसिक बिनु देखैं, रहत न एक घरी ॥
आवतिही जमुना जल लीन्हे, सखी सहज डगरी।
वे उलटे मग मोहिं देखि, हौ उलटी लै गगरी ॥
वह मूरति तब तै इन बल करि, लै उरमाँझ धरी।
ते क्यो तृप्त होत अब रचक, जिनि पाई सिगरी ॥
जगउपहास लोकलज्जा तजि, रहे एक जक री।
'सूर' पुलक अँग अग प्रेम भरि, सगति स्याम करी ॥ २३४३ ॥

राग रामकली ॥ २६६२ ॥

नैननि बानि परी नहिं नीकी।
फिरत सदा हरि-पाछै-पाछै कहा लगनि उन जी की ॥
लोकलाज कुल को मरजादा, अतिही लागति फीकी।
जो बीतति मोको री सजनी, कहो काहि या ही की ॥
अपनैं मन उन भली करी है, मोहि रहे है बीकी।
'सूरदास' ये जाइ लुभाने, मृदु मुमुकनि हरि पी की ॥ २३४४ ॥

राग धनाश्री ॥ २६६३ ॥

ऐसे निठुर नही जग कोई।
जैसे निठुर भए डोलत है, मेरे नैना दोई ॥
निठुर रहत ज्यौं ससि चकोर कौ, वै उन बिनु अकुलाही।
निठुर रहत दीपक पतंग ज्यो, उड़ि परि परि मरि जाही ॥
निठुर रहत जैसैं जल मीनहिं, तैसिय दसा हमारी।
'सूरदास' धिक धिक है तिनकौ, जिनिहिं न पीर परारी ॥ २३४५ ॥

ललित ॥ २९६४ ॥

नैना घूँघट मैं न समात।
सुंदर बदन नंदनंदन कौ, निरखि निरखि न अघात ॥
अति रसलुब्ध महा मधुलपट, जानत एक न बात।
कहा कहौं दरसनमुख माते, ओट भएँ अकुलात ॥
बार बार बरजत हौं हारी, तऊ टेव नहिं जात।
'सूर' तनक गिरिधर बिनु देखैं, पलक कलप सम जात ॥ २३४६ ॥

राग धनाश्री ॥ २९६५ ॥

नैना मानत नाहिन बरज्यौ।
इनके लएँ सखी री मेरी, बाहिर रहै न घर ज्यौ ॥
जद्यपि जतन किये राखति हौं, तदपि न मानत हरज्यौ।
परबस भई गुडी ज्यौं डोलति, परचौ पराएँ कर ज्यौ ॥
देखे बिना चटपटी लागति, कछू मूँड़ पढ़ि परज्यौ।
को बकि मरै सखी री मेरै, 'सूर' स्याम कै थर ज्यौं ॥ २३४७ ॥

राग नटनारायन ॥ २९६६ ॥

नैना कह्यौ मानत नाहिं।
लोकलज्जा बेदमारग, तजत नाहिं डराहिं।
स्यामरस मैं रहत पूरन, पुलकि अंग न माहिं ॥
पियहि के गुन गुनत उर मैं, दरस देखि सिहाहिं।
बदत हमकौं नैकु नाहीं, मरहिं जौ पछिताहिं ॥
धरनि मन बच धरी ऐसी, कर्मना करि ब्याहिं।
'सूर' प्रभु पद-कमल-अलि ह्वै, रैनि दिन न भुलाहिं ॥ २३४८ ॥

राग आसावरी ॥ २९६७ ॥

परी मेरैं नैननि ऐसी बानि।
जब लगि मुख निरखत तब लगि, सुख सुंदरता की खानि ॥
ये गीधे बीधे न रहत सखि, तजी सबनि की कानि।
सादर श्री मुखचंद बिलोकत, ज्यौं चकोर रति मानि ॥
अतिहि अधीर नीर भरि आवत, सहत न दरसन हानि।
कीजै कहा बाँधि कै सौंपी, 'सूर' स्याम कै पानि ॥ २३४९ ॥

राज जैतश्री ॥ २९६८ ॥

नैननि ऐसी बानि परी।
लुब्धे स्याम-चरन-पंकज कौं, मोकौं तजी खरी ॥
घूँघट ओट किये राखति हौं, अपनी सी जु करी।
गए पेरि ताकौ नहिं मान्यौ, देखौ ज्यौं निदरी ॥
गए सु गए फेरि नहिं बहुरे, कहु धौं जियहिं धरी।
सुनहु 'सूर' मेरे प्रतिपाले, ते बस किये हरी ॥ २३५० ॥

राग सारंग ॥ २९६९ ॥

नैननि हौं समुझाइ रही।
मानत नहीं कह्यौ काहू कौ, कठिन कुटेव गही ॥

अनजानतही चितै वदनछवि, सनमुख सूल सही।
मगन होत वपु स्यामसिंधु मैं, कहूँ न थाह लही॥
तनु विसरयौ, कुलकानि गँवाई, जग उपहास दही।
एते पर सन्तोष न मानत, मरजादा न गही॥
रोम रोम सुंदरता निरखत, आनँद उमँगि ढही।
'सूरदास' इन लोभिनि कैं सँग, वन वन फिरति वही॥ २३५१॥

राग रामकली॥ २९७०॥

नैन कहै न मानत मेरे।
हारि मानि कै रही मौन ह्वै, निकट सुनत नहि टेरे॥
ऐसे भए मनौ नहि मेरे, जबहिं स्याम मुख हेरे।
मै पछितानि जवहि सुधि आवति, ज्यौ दीन्हौ मोंहि डेरे॥
एते पर कबहूँ जब आवत, झरपत लरत घनेरे।
मोहूँ अरवस उतहि चलावत, दूत भए उन केरे॥
लोक-वेद-कुलकानि न मानत, अतिही रहत अनेरे।
'सूर' स्याम धो कहा ठगौरी, लाइ कियौ धरि चेरे॥ २३५२॥

राग कल्यान॥ २९७१॥

कबहुँ कबहुँ आवत ये, मोंहि लेन माई।
आवतही यहै कहत, स्याम तोंहि बुलाई॥
नैकहूँ न रहत विरमि, जात तहाँ धाई।
मानौ पहिचानि नही, ऐसै विसराई॥
उनको सुख देत, मोंहि दहिवे कौ पाई।
'सूर' स्याम-संगहिं-सँग, वासर निसि जाई॥ २३५३॥

राग विहागरौ॥ २९७२॥

मेरे नैननिही सब दोष।
विनही काज और को सजनी, कत कीजै मन रोष॥
जद्यपि हो अपनै जिय जानति, अरु बरजै सब घोष।
तद्यपि वा जसुमति के सुत विनु, कहूँ न सुख संतोष॥
कहि पचिहारि रही निसिवासर, और कठ करि सोष।
'सूरदास' अब क्यौ विसरत है, मधुरिपु कौ परितोष॥ २३५४॥

राग सोरठ॥ २९७३॥

मेरे नैना दोष भरे।
नंदनँदन सुदर वर नागर, देखत तिनहिं खरे॥
पलक कपाट तोरि के निकसे, घूँघट ओट न मानत।
हाहा करि, पाइनि परि हारी, नैकहुँ जौ पहिचानत॥
ऐसैं भए रहत ये मोपर, जैसैं लोग बटाऊ।
सोऊ तौ बूझै तै वोलत, इनमै यह निठुराऊ॥
ये मेरे अब होंहि नही सखि, हरि छवि विगरि परे।
सुनहु 'सूर' ऐसेउ जन जग मै, करता करनि करे॥ २३५५॥

राग रामकली॥ २९७४॥

नैना मोको नही पत्याहिं।
जे लुवधे हरि-रूप-माधुरी, और गनत वे नाहि॥

जिनि दुहि धेनु औटि पय चाख्यौ ते क्यौं निरसे छाकैं।
ज्यौं मधुकर मधु-कमल-कोस तजि, रुचि मानत है आकैं॥
जे पटरस सुख भोग करत है, ते कैसैं खरि खात।
'सूर' सुनहु लोचन हरि रस तजि, हम सौं क्यौं तृपितात॥ २३५६॥

राग देव गंधार॥ २९७५॥

मेरे नैननिही सब खोरि।
स्याम-वदन-छवि निरखि जु अटके, बहुरे नही बहोरि॥
जउ मैं कोटि जतन करि राखति, घूंघट ओट अगोरि।
तउ उडि मिले वधिक के खग ज्यो पलक पीजरा तोरि॥
बुधि विवेक बल वचन चातुरी, पहिलेहि लई अँजोरि।
अनि आधीन भई सँग डोलति, ज्यौंऽव गुडी बस डोरि॥
अब धौं कौन हेतु हरि हमसौ, बहुरि हँसत मुख मोरि।
सुनहु 'सूर' दोउ सिंधु सुधा भरि, उमँगि मिले मिति फोरि॥ २३५७॥

राग गौरी॥ २९७६॥

यह सब नैननिही कौ लागैं।
अपनैंही घर भेड़ि करी इन, बरजत ही उठि भागे॥
ज्यौं बालक जननी सौं अटकत, भोजन कौं कछु मांगे।
त्यौंही ये अतिही हठ ठानत, इकटक पलक न त्यागे॥
कहत देहु हरि-रूप-माधुरी, रोवत है अनुरागे।
'सूर' स्याम धौं कहा चखायौ, रूप माधुरी पागे॥ २३५८॥

राग धनाश्री॥ २९७७॥

माँगत है हरि रूप माधुरी खोज परैं है नैसैं॥
बारंबार चलावत उतही, रहन न पाऊँ वैसें।
जात चले आपुनही अब लौं, राखे जैसैं तैसैं॥
कोटि जतन करि करि परमोधति, कह्यौ न मानहिं कैसैं।
'सूर' कहूँ ठगमूरी खाई, व्याकुल डोलत ऐसैं॥ २३५९॥

राज जैतश्री॥ २९७८॥

इन नैननि की टेव न जाइ।
कहा करौ बरजतही चंचल, लागत है उठि धाइ॥
बाट घाट जहँ मिलत मनोहर, तहँ मुख चलति छपाइ।
गीधे हेमचोर ज्यौं आतुर, वह छवि लेत चुराइ॥
मनहुँ मधुप मधु कारन लोभी, हरि-मुख-पकज पाइ।
घूंघट बस, जल हीन मीन ज्यौं अधिक उठत अकुलाइ॥
निलज भए कुलकानि न मानत, तिनसौं कहा बसाइ।
'सूर' स्यामसुंदर मुख देखैं, बिनु री रह्यौ न जाइ॥ २३६०॥

राग सोरठ॥ २९७९॥

जाकी जैसी टेव परी री।
सो तौ टरे जीव के पाछैं, जो जो धरनि धरी री॥
जैसैं चोर तजै नहि चोरी, बरजैं वहै करी री।
बरु ज्यौं जाइ, हानि पुनि पावत, बकतहिं बकत मरी री॥

जद्यपि व्याध बधै मृग प्रगटहि, मृगिनी रहै खरी री।
ताहूँ नाद बस्य ज्यौ दीन्हो, संका नहीं करी री॥
जद्यपि मैं समुझावति पुनि पुनि, यह कहि कहि जु लरी री।
'सूर' स्याम दरसन तैं इकटक, टरत न निमिषि घरी री॥ २३६१ ॥

राग सारंग ॥ २९८० ॥

ये नैना मेरे ढीठ भए री।
घूँघट ओट रहत नहिं रोकै, हरिमुख देखत लोभि गए री॥
जउ मैं कोटि जतन करि राखे, पलक कपाटनि मूँदि लए री।
तउ ते उमँगि चले दोउ हठ करि, करौं कहा मैं जान दए री॥
अतिहिं चपल, वरज्यौ नहि मानत, देखि वदन तन फेरि नए री।
'सूर' स्यामसुंदर रस अटके, मानहुँ लोभी उहँइ छए री॥ २३६२ ॥

राग नट ॥ २९८१ ॥

नैना ढीठ अतिही भए।
लाजलकुट दिखाइ त्रासी, नैंकुहूँ न नए॥
तोरि पलककपाट घूँघटओट मेटि गए।
मिले हरि कौं जाइ आतुर, हैं जु गुननि मए॥
मुकुट, कुंडल, पीत पट कटि, ललित वेष ठए।
जाइ लुवधे निरखि वा छवि, 'सूर' नंदजए॥ २३६३ ॥

राज विलावल ॥ २९८२ ॥

नैना झगरत आइ कै मोसौं री माई।
खूँट धरत हैं धाइकै, चलि स्याम दुहाई॥
मैं चक्रित ह्वै ठगि रहौ, कछु कहत न आवै।
आपुन जाइ मिले रहैं, अव मोहि वुलावै॥
गए दरस जौ देहि वै, तहँ अपनी छाया।
और कछुवै है नहीं, री उनकी माया॥
कपटिनि कै ढंग ये सखि, लोचन हरि कैंगे।
'सूर' भली जोरी वनी, जैसे कौ तैसे॥ २३६४ ॥

राग सूही ॥ २९८३ ॥

नैननि की मत सुनहु सयानी।
निसि दिन तपत सिरात न कवहूँ, जद्यपि उमँगि चलत पल पानी॥
हौं उपचार अमित उर आनति, खल भई लोकलाज कुलकानी।
कछु न सुहाइ, दहत दरसनदव, वारिज-वदन-मद-मुसुकानी॥
रूप-लकुट-अभिमान निडर ह्वै, अव उपहास न सुनत लजानी।
वुधि विवेक वल वचन चातुरी, मनहुँ उलटि उन माँझ समानी॥
आरजपथ गुरुज्ञान गुप्त करि, विकल भई तनु दसा हिरानी।
जाचत 'सूर' स्यामअंजन को, वह किसोर छवि जीव हितानी॥२३६५॥

राग सारंग ॥ २९८४ ॥

भली मतौ ठहरायौ।
हरि संगहिं, तवही तव ।

जरत रहत एते पर निसि दिन, छिनु विनु जनम गँवायौ।
ऐसी बुद्धि करन अब लागे, मोकौ बहुत सतायौ॥
कहा करो मै हारि धरी जिय, कोटि जतन समुझायौ।
लुब्धे हेमचोर की नाई, फिरि फिरि उतही धायौ॥
मोसौं कहत भेद कछु नाहो, अनोइ उदर भरायौ।
'सूरदास' ऐसे कपटिनि कौ, विधना साथ छुड़ायौ॥ २३६६ ॥

राग बिहागरौ ॥ २९८५ ॥

मेरे नैना अटकि परे।
सुंदर-स्याम-अंग की सोभा, निरखत भटकि परे॥
मोर मुकुट लट घूँघरवारी, तामैं लटकि परे।
कुंडल-तरनि-किरनि-तै-उज्वल-चमकनि चटकि परे॥
चपल नैन मृग-मीन-कंज-जित, अलि ज्यो लुब्धि परे।
'सूर' स्याम-मृदु-हँसनि लुभाने, हम तै दूरि परे॥ २३६७ ॥

राग बिहागरौ ॥ २९८६ ॥

नैननि साधै ई जु रही।
निरखत वदन नंदनंदन कौ, भूलि न तृप्ति गही॥
पचिहारे उनकी रुचि कारन, परमिति तौ न लही।
मगन होत अब स्यामसिंधु मैं, कतहुँ न थाह थही॥
रोम रोम सुंदरता निरखत, आनँद उमँग वही।
दुख सुख 'सूर' विचार एक करि, कुल मरजाद ढही॥ २३६८ ॥

राग नट ॥ २९८७ ॥

नैननि साध नही सिराई।
जदपि निसि दिन संग डोलत, तदपि नाहि अघाई॥
पलक नहि कहुँ नैकु लागति, रहति इकटक हेरि।
तऊ कहुँ तृप्तिात नाही, रूप रस की ढेरि॥
ज्यो अगिनि घृत तृप्ति नाही, तृषा नाहि बुझाइ।
'सूर' प्रभु अति रूप दानो, नैन लोभ न जाइ॥ २३६९ ॥

राग कल्यान ॥ २९८८ ॥

स्याम अंग निरखि नैन कबहूँ न अघाहीं।
एकहि टक रहे जोरि, पलक नाहि सकत तोरि, जैसे चंदा चकोर, तैसी इन पाही॥
छवि तरंग सरिता गन, लोचन ये सागर जनु, प्रेमधार लोभगहनि नीकै अवगाही।
'सूरदास' एते पर तृप्ति नाहि मानत ये, इनकी सो दसा सखी बरनी नहि जाही॥
॥ २३७० ॥

राग विहगरौ ॥ २९८९ ॥

लोचन सपने कै भ्रम भूले।
जो छवि निरखत सो पुनि नाही, भरम हिंडोरै झूले॥
इकटक रहत तृप्ति नहि कबहूँ, एते पर है फूले।
निदरे रहत मोहि नहि मानत, कहत कौन हम तूले॥
मौतै गए कुंभी के जर लौ, ऐसे वै निरमूले।
'सूर' स्याम-जल-रासि परे अब, रूप-रंग-अनुकूले॥ २३७१ ॥

राग गौरी ॥ २९९० ॥

मेरे नैना ये अति ढीठ।
मैं कुलकानि किये राखति हौ, ये हठि होत वसीठ॥
जद्यपि वैं उत कुसल समर वल, ये इत अवल अहीठ।
तदपि निदरि पट जात पलक छिदि, जूझत देत न पीठ॥
अजन त्रान तजत तमकत तकि, तानत दरसन दीठ।
हारैं हूँ नहिं हटत अमित वल वदन पयोधि पईठ॥
आतुर अरत अरुझि अँग अगनि अनुरागनि नमि नीठ।
'सूर' स्याम सुदर रस अटके नहिं जानत कटु मीठ॥ २३७२ ॥

राग विहालव ॥ २९९१ ॥

नही ढीठ नैननि तै और।
कितनौ मै वरजति समुझावति, उलटि करत है झोर॥
मोसो लरत भिरत हरि सन्मुख, महा सुभट ज्यौ धावत।
भौह धनुष सर-सरस-कटाच्छनि मार करत नहिं आवत॥
मानत नही हार जौ हारत अपनै मन नहि टूटत।
'सूर' स्याम अँग अँग की सोभा, लोभसैन सौ लूटत॥ २३७३ ॥

राग विहागरौ ॥ २९९२ ॥

लोचन लालची भारी।
उनके लऐं लाज या तनु की, सवै स्याम सो हारी॥
वरजत मातु पिता पति वधू, अरु आवै कुल गारी।
तदपि न रहत नंननदन बिनु कठिन प्रकृति हठि धारी॥
नख सिख सुभग स्यामसुदर के अग अग सुखकारी।
'सूर' स्याम कौ जो न भजै सो, कौन कुमति है नारी॥ २३७४ ॥

राग कल्यान ॥ २९९३ ॥

अति रस लपट नैन भए।
चाख्यौ रूप-सुधा-रस हरि कौ, लुब्धे उतहिं गए॥
ज्यौ विटनारि भवन नहिं भावत, औरहिं पुरुप रई।
आवति कवहुँ होति अति व्याकुल, जैसै गवन नई॥
फिरि उतही कौ धावति, जैसै छुटत धनुप तै तीर।
चुभे जाइ हरि-रूप-रोम मैं, सुदर स्याम सरीर॥
ऐसै रहत उतहि कौ आतुर मोसौं रहत उदास।
'सूर' स्याम के मन वच क्रम भए, रीझे रूप-प्रकास॥ २३७५ ॥

राग सूही ॥ २९९४ ॥

ये नैना अतिही चपल चोर।
सरवस मूसि देत माधव कौ, सुधि वुधि, सुधन विवेकहुँ मोर॥
अनजानत कल वेनु स्रवन सुनि, चितै रहत है उनकी ओर।
मोहन मुख मुसुकाइ चले मन भेद भयौ. यह लयौ अँकोर॥
हरि कौ दोप कहा कहि दीजै, जो कीजै सो इनकौ थोर।
'सूर' सग सोवत न परी सुधि पायौ मरम वियोगिनि भोर॥२३७६॥

राग गौरी ॥ २९९५ ॥

नैन करत घरही की चोरी।
चोरन गए स्याम-अँग-सोभा, उत सिर परी ठगोरी॥
अपवस करि इनकौ हरि लीन्हौ, मो तन फेरि पठायौ।
जो कछु रही संपदा मेरै, सुधि बुधि चोरि लिवायौ॥
ये धाए आए निधरक सौं लै गए सग लगाइ।
'सूर' स्याम ऐसे है माई, उलटी चाल चलाइ॥ २३७७ ॥

राग मारग ॥ २९९६ ॥

नैननि प्रान चोरि लै दीने।
समुझत नही वहुरि समुझाए, अति उतकंठ नवीने॥
अतिही चतुर, चातुरी जानत, सकल कला जु प्रवीने।
लोभ लिये परवस भए, माई मीन ज्यौं वसी भीने॥
कहा कहौ कहिवे लायक नहिं, मते रहत नर हीने।
आपु वँधाइ पूँजि लै सौंपी, हरि-रस-रति के लीने॥
ज्यौं डोरै बस गुडी देखियत डोलत संग अधीने।
'सूरदास' प्रभु रूपसिंधु मै, मिले सलिलगुन कीने॥ २३७८ ॥

राग नट ॥ २९९७ ॥

ये लोचन ललाची भए री।
सारँगरिपु के रहत न रोकैं, हरि स्वरूप गिधए री॥
काजर कुलुफ मेलि मैं राखे, पलक कपाट दए री।
मिलि मनदूत पैज करि निकसे हरि पै दौरि गए री॥
ह्वै आधीन पंच तै न्यारे कुल लज्जा न नए री।
'सूर' स्यामसुंदर रस अटके, मानौ उहँइ छए री॥ २३७९ ॥

राग विहागरौ ॥ २९९८ ॥

लोचन लोभ ही मै रहत।
फिरत अपने काजही कौ, धीर नाही गहत॥
देखि मृपनि कुरग धावत, तृप्त नाही होत।
ये लहत लै हृदय धारत, तऊ नाही ओत॥
हठी लोभी लालची इनतै नही कोउ और।
'सूर' ऐसे कुटिल कौ छविस्याम दीन्हौ ठौर॥ २३८० ॥

राग रामकली ॥ २९९९ ॥

लोचन मानत नाहिन वोल।
ऐसे रहत स्याम के आगै, मनु है लीन्हे मोल॥
इत आवत दै जात दिखाई, ज्यौ भौरा चकडोर।
उततै सूत्र न टारत कतहूँ, मोसौ मानत कोर॥
नीके रहे सदा मेरै वस, जाइ भए ह्वाँ जोर।
मोहन सिर मोहिनी लगाई, जव चितए उन ओर॥
अव मिलि गए स्याम मनमाने, निसि वासर इक ठौर।
'सूर' स्याम के चोर कहावत, राखे है करि गौर॥ २३८१ ॥

राग रामकली ॥ ३००० ॥

नैना उनही देखैं जीवत ।
सुदर-वदन-तड़ाग-रूप-जल, निरखनि पुट भरि पीवत ॥
राखे रहत और नहिं पावै, उन मानी परतीति ।
'सूर' स्याम इनसौ सुख मानत, देखैं इनकी प्रीति ॥ २३८२ ॥

राग गूजरी ॥ ३००१ ॥

नैना नाहिंन कछू विचारत ।
सनमुख समर करत मोहन सौ, जद्यपि है हठि हारत ॥
अवलोकत, अलसात, नवल छवि, अमित तोप अति आरत ।
तमकि तमकि तरकत मृगपति ज्यौ, घूँघट पटहिं विदारत ॥
वुधिवल, कुलअभिमान, रोपरस, जोवत भँवहिं निवारत ।
निदरे व्यूहसमूह स्यामअँग, पेखि पलक नहि पारत ॥
स्रमित सुभट सकुचत, साहस करि, पुनि पुनि सुखहिं सम्हारत ।
'सूर' स्वरूप मगन भुकि व्याकुल, टरत न इकटक टारत ॥ २३८३ ॥

राग विहागरौ ॥ ३००२ ॥

स्याम रंग नैना राँचे री ।
सारँगरिपु तै निकसि निलज भए, ह्वै परगट नाचे री ॥
मुरली नाद मृदग, मृदगी अधर वजावनहारे ।
गायन घर घर घैर चलावन, लोभ नचावनहारे ॥
चंचलता निर्तनि, कटाच्छ रस भाव वतावत नीके ।
'सूरदास' रिझए गिरिधारी, मन माने उनही के ॥ २३८४ ॥

राग रामकली ॥ ३००३ ॥

नाचत नैन नचावत लोभ ।
यह करनी इन नई चलाई, मेटि सकुच कुल छोभ ॥
घूँघट घर त्याग्यौ इन मन क्रम, नाचहिं पर मन मान्यौ ।
घर-घर-घैर मृदग सब्द करि, निलज काछनी वान्यौ ॥
इद्री मन समाज गायन ये, ताल धरे रहै पाछै ।
सूर प्रेम भावनि सौ रीझे स्याम चतुर वर आछै ॥ २३८५ ॥

राग धनाश्री ॥ ३००४ ॥

नैननि सिखवत हारि परी ।
कमल-नैन-मुख विनु अवलोकै, रहत न एक घरी ॥
हौ कुलकानि मानि सुनि सजनी, घूँघट ओट करी ।
वै अकुलाइ मिले हरि लै मन, तन की सुधि बिसरी ॥
तव तै अंग अग छवि निरखत, सो चित तै न टरी ।
'सूर' स्याम मिलि लोक वेद की, मरजादा निदरी ॥ २३८६ ॥

राग विलावल ॥ ३००५ ॥

इन नैननि सौ री सखी मै मानी हारि ।
साँटसकुच नहिं मानही, वहु वारनि मारि ॥
डरत नही फिरि फिरि अरै, हरि-दरसन-काज ।
आपु गए मोहूँ कहै, चलि मिलि व्रजराज ॥

घूँघट घर मैं नहि रहै, करि रही वुझाइ।
पलक कपाट विदारि कै, उठि चले पराइ ।।
तव तै मौन भई रही, देखत ये रग।
'सूरज' प्रभु जहँ जहँ रहै, तहँ तहँ ये मग ।। २३८७ ।।

राग विलावल ।। ३००६ ।।

इन नैननि सौ मानी हारि।
अनुदिनही उपरात आन रुचि, वाढी सव लोगनि सौ रारि ।।
तदपि निडर चलि जात चपल दोउ, घूँघट सघन कपाट उघारि।
निगम-ज्ञान-प्रतिहार-महावल, लाजलकुट कर करत निवारि ।।
श्री गोपाल कौतुक मन अरप्यौ, तव तै चतुरनि भई चिन्हारि।
'सूरदास' लोभिनि के लीने, सिर पर सही जगत की गारि ।। २३८८ ।।

राग गूजरी ।। ३००७ ।।

नैना वहुत भाँति हटके।
वुधि-वल-छल-उपाइ करि थाकी, नैकु नही मटके ।।
इत चितवत, उतही फिरि लागत, रहत नही अटके।
देखतही उडि गए हाथ तै, भए वटा नट के ।।
एकहि परनि परे खग ज्यौ, हरि-रूप-माँझ लटके।
मिले जाइ हरदी चूना ज्यो, फिरि न 'सूर' फटके ।। २३८९ ।।

राग जैतश्री ।। ३००८ ।।

वहुत भाँति नैना समुझाए।
लंपट तदपि सकोच न मानत, जद्यपि घूँघट ओट दुराए ।।
निरखि नवल इतराहि जाहिं मिलि, जनु विवि खजन अजन पाए।
स्याम कुँवर के कमल वदन कौ, महामत्त मधुकर ह्वै धाए ।।
घूँघट ओट तजी सरिता ज्यौ, स्याम सिंधु के सन्मुख आए।
'सूर' स्याम मिलि कढि पलकनि सौ, विन मोर्नहि हठि भए पराए ।।२३९० ।।

राग सोरठी ।। ३००९ ।।

नट के वटा भए ये नैन।
देखति ही पुनि जात कहाँ धौं, पलक रहत नहि ऐन ।।
स्वाँगी से ये भए रहत है छिनहि और छिन और।
ऐसे जात रहत नहि रोकै, हमहूँ तै अति दौर ।।
गए सु गए गए अव आए, जात लगी नहि वार।
'सूर' स्याम सुदरता चाहत, जाकौ वार न पार ।। २३९१ ।।

राग विहागरौ ।।३०१०।।

मोतै नैन गए री ऐसै।
जैसै वधिक पीजरा तै खग, छूटि भजत है, तैसै ।।
सकुच फद मै फँदे रहत हे, ते धौं तोरै कैसै।
मै भूली इहि लाज भरोसै, राखति ही ये वैसै ।।
स्याम-रूप-वन-माँझ समाने, मोपै रहै अनैसै।
'सूर' मिले हरि कौ आतुर ह्वै, ज्यौ सुरभी सुत तैसै ।। २३९२ ।।

राग जैतश्री ॥ ३०११ ॥

लोचन भए पराए जाइ।
सनमुख रहत टरत नहिं कबहूँ, सदा करत सेवकाइ ॥
ह्वाँ तौ भए गुलाम रहत हैं, मोसौं करत ढिठाइ।
देखति रहति चरित इनके सब, हरिहि कहौंगी जाइ ॥
जिनकौं मैं प्रतिपालि बड़े किये, ये तुम बस करि पाइ।
'सूर' स्याम सौं यह कहि लैहौं, अपनैं बल पकराइ ॥ २३९३ ॥

राग टोड़ी ॥ ३०१२ ॥

अब मैहूँ इहिं टेक परी।
राखौं अटकि जान नहिं पावैं, क्यौं मोकौं निदरी ॥
मौन भई मैं रही आजुलौं, अपनोइ मन समुझाऊँ।
येऊ मिले नैनही ढरि कैं, देखति इनहुँ भगाऊँ ॥
सुनि री सखी मिले ये कब के, इनही कौ यह भेद।
'सूरदास' नहिं जानी अब लौं, वृथा करति तनु खेद ॥ २३९४ ॥

राग धनाश्री ॥ ३०१३ ॥

नैना भए पराए चेरे।
नंदलाल कैं रंग गए रँगि, अब नाहिंन बस मेरैं ॥
जद्यपि जतन किये जोगवति ही, स्यामल सोभा घेरैं।
त्यौं मिलि गए दूध पानी ज्यौं, निवरत नहीं निवेरैं ॥
कुल अंकुस आरजपथ तजिकैं, लाज सकुच दिए डेरैं।
'सूर' स्याम कैं रूप लुभाने, कैसैंहुँ फिरत न फेरैं ॥ २३९५ ॥

राग रामकली ॥ ३०१४ ॥

जाकी जैसी बानि परी री।
कोऊ कोटि करै नहि छूटै, जो जिहिं धरनि धरी री ॥
बारे ही तैं इनके ये ढँग, चंचल चपल अनेरे।
बरजतहीं बरजत उठि दौरे, भए स्याम के चेरे ॥
ये उपजे ओछे नछत्र के, लंपट भए बजाइ।
'सूर' कहा तिनकी संगति, जे रहे पराऐं जाइ ॥ २३९६ ॥

राग आसावरी ॥ ३०१५ ॥

नैननि कौ री यहै सुहाइ।
लुब्धे जाइ रूप मोहन कैं, चेरे भए बजाइ ॥
फूले फिरत गनत नहिं काहूँ, आनँद उर न समाइ।
यहै बात कहि सबनि सुनावत, नैकहु नहीं लजाइ ॥
निसि दिन सेवा करि प्रतिपाले, बड़े भए जब आइ।
तब हमकौं ये छाँड़ि भगाने, देखौ 'सूर' सुभाइ ॥ २३९७ ॥

राग कान्हरौ ॥ ३०१६ ॥

देखत हरि के रूपहि नैना, हारैं हार न मानत।
भए भटकि बलहीन छीन तन, तउ अपनी जय जानत ॥

दुरत न पट की ओट, प्रगट ह्वै, बीच पलक नहिं आनत।
छुटि गए कुटिल कटाच्छ अलक मनु, टूटि गए गुन तानत॥
भाल तिलक भुव चाप आपु लै, सोइ संधान सँधानत।
मन क्रम वचन समेत 'सूर' प्रभु, नहिं अपबल पहिचानत॥ २३९८॥

राग सूही॥ ३०१७॥

हारि जीति दोऊ सम इनकैं।
लाभ हानि काकों कहियतु है, लोभ सदा जिय मैं जिनकैं॥
ऐसी परनि परी री जिनकैं, लाज कहा ह्वैहै तिनकैं।
सुंदर स्याम रूप मैं भूले, कहा वस्य इन नैननि कैं॥
ऐसे लोगनि को सब मानत, जिनकी घर घर है भनकैं।
लुब्धे जाइ 'सूर' के प्रभु कौं, सुनत रहीं स्रवननि भनकैं॥ २३९९॥

राग धनाश्री॥ ३०१८॥ आँख समय के पद

अँखियनि यहई टेव परी।
कहा करौं वारिज-मुख-ऊपर, लागति ज्यौं भ्रमरी॥
चितवति रहति चकोर चंद ज्यौं, विसरति नाहिं घरी।
जद्यपि हटकि हटकि राखति हौं, तद्यपि होति खरी॥
गड़ि जु रहीं वा रूपजलधि मैं, प्रेमपियूष भरी।
'सूर' तहाँ नगअंग परस रस, लूटति हैं सिगरी॥ २४००॥

राग धनाश्री॥ ३०१९॥

अँखियाँ निरखि स्याममुख भूली।
चकित भई मृदु हँसनि चमक पर, इंदु कुमुद ज्यौं फूली॥
कुललज्जा, कुलधर्म, नाम कुल, मानति नाहिन एकौ।
ऐसैं ह्वै ये भजी स्याम कौं, बरजत सुनति न नेकौ॥
ये लुब्धी हरि-अंग-माधुरी, तनु की दसा बिसारी।
'सूर' स्याम मोहिनी लगाई, कछु पटिकैं सिर डारी॥ २४०१॥

राग जैतश्री॥ ३०२०॥

अँखियाँ हरि कैं हाथ बिकानी।
मृदु मुसुकानि मोल इनि लीन्हीं, यह सुनि सुनि पछितानी॥
कैसैं रहति रहीं मेरैं बस, अब कछु औरै भाँति।
अब वै लाज मरति मोहिं देखत, बैठी मिलि हरि पाँति॥
सपने की सी मिलनि करति हैं, कब आवति कब जाति।
'सूर' मिलीं ढरि नंदनँदन कौं, अनत नहीं पतियाति॥ २४०२॥

राग बिहागरौ॥ ३०२१॥

अँखियनि ऐसी धरनि धरी।
नंदनँदन देखैं सुख पावैं, मोसौं रहति डरी॥
कबहूँ रहति निरखि मुखसोभा, कबहुँ देह सुधि नाहीं।
कबहूँ कहति कौन हरि, को हम, यौं तन्मय ह्वै जाहीं॥
अँखियाँ ऐसैं भजी स्याम कौं, नाहिं रह्यौ कछु भेद।
'सूर' स्याम कैं परम भावती, पलक न होत बिछेद॥ २४०३॥

राग रामकली ॥ ३०२२ ॥

अँखियनि स्याम अपनी करी ।
जैसेही उनि मुंह लगाई, तैसेही ये डरीं ॥
इनि किये हरि हाथ अपनै, दूरि हमतैं परी ।
रहतिं बासर रैनि इकटक, घाम छाहँनि खरी ॥
लोक लज्जा, निकसि, निदरी, नही काहूँ डरी ।
ये महा अति चतुर नागरि, चतुर नागर हरी ॥
रहति डोलति संग लागी, छाहँ ज्यौ नहिं टरी ।
'सूर' जब हम हटकि हटकतिं, बहुत हम पर लरीं ॥ २४०४ ॥

राग बिहागरौ ॥ ३०२३ ॥

अँखियनि तब तैं बैर धरचौ ।
जब हम हटकी हरि दरसन कौ, सो रिस नहिं बिसरचौ ॥
तबहीं तै उनि हमहिं भुलायौ, गई उतहिं कौ धाइ ।
अब तौ तरकि तरकि ऐंठति है, लेनी लेतिं बनाइ ॥
भई जाइ वै स्याम सुहागिनि, बड़भागिनि कहवावै ।
'सूरदास' वैसी प्रभुता तजि, हम पै कब वै आवैं ॥ २४०५ ॥

राग जैतश्री ॥ ३०२४ ॥

धन्य धन्य अँखियाँ बड़भागिनि ।
जिनि बिनु स्याम रहत नहिं नैकहुँ, कीन्ही बनै सुहागिनि ॥
जिनकौ नही अंग तै टारत, निसिदिन दरसन पावै ।
तिनकी सरि कहि कैसै कोई, जे हरि कै मन भावै ॥
हमही तै ये भई उजागर, अब हम पर रिस मानै ।
'सूर' स्याम अति बिवस भए है, कैसे रहत लुभाने ॥ २४०६ ॥

राग बिलावल ॥ ३०२५ ॥

ये अखियाँ बड़भागिनी, जिनि रीझे स्याम ।
अँग ते नैकु न टारहीं, बासर अरु जाम ॥
ये कैसी हैं लोभिनो, छवि धरतिं चुराइ ।
और न ऐसी करि सकै, मरजादा जाइ ॥
यह पहिलै मनहीं करी, अब तौ पछितात ।
उनके गुन गुनि गुनि झुरै, याहूँ न पत्यात ॥
इंद्री सब न्यारी परी, सुख लूटति आँखि ।
'सूरदास' जे सँग रहै, तेऊ मरैं झाँखि ॥ २४०७ ॥

राग बिलावल ॥ ३०२६ ॥

अखियनि तैं री स्याम कौं, प्यारी नहिं और ।
जिनकौ हरि अँग अँग मै, करि दीनी ठौर ॥
जो सूख पूरन इनि लह्यौ , कह जाने और ।
अंबुज-हरि-मुख चारु कौ, दोउ भौरी जोर ॥
इहिं अंतर स्रवननि परी, मुरली की रौर ।
'सूर' चकित भई सुंदरी, सिर परी ठगौर ॥ २४०८ ॥

राग बिहागरी ॥ ३०२७ ॥

अँखियनि की सुधि भूलि गई।

स्याम अधर मृदु सुनत मुरलिका, चकित नारि भईं ॥
जो जैसें सो तैसें रहि गईं, सुख दुख कह्यौ न जाइ।
लिखी चित्र की सी सब ह्वै गईं इकटक पल बिसराइ ॥
काहूँ सुधि, काहूँ सुधि नाहीं, सहज मुरलिका गान।
धवन रवन की सुधि न रही तनु, सुनत सब्द वह कान ॥
अँखियनि तैं मुरली अति प्यारी, वे बैरिनि यह सौति।
'सूर' परस्पर कहति गोपिका, यह उपजी उदभौति ॥ २४०९ ॥

राग सारंग ॥ ३०२८ ॥

आवतहीं याके ये ढंग।

मनमोहन बस भए तुरतहीं, ह्वै गए अंग त्रिभंग ॥
मैं जानी यह टोना जानति, करिहै नाना रंग।
देखौ चरित भए हरि कैसे, या मुरली कैं संग।
बातनि मैं कह ध्वनि उपजावति, सिरजति तान तरंग।
'सूरदास' इहूर मदन मैं, पैठ्यौ बड़ौ भुजंग ॥ २४१० ॥

राग गूजरी ॥ ३०२९ ॥ मानलीला तथा दंपतिविहार

स्यामा स्याम कैं उर बसी।

रैनि नृत्यत रिझै पियमन, तड़ित तैं छबि लसी ॥
स्याम ता रस मगन डोलत, सब तियनि मैं जसी।
कोक-कला-प्रवीन सुंदरि, रूप गुन करि नसी ॥
करति सदन सिंगार बैठी, अंग-अंग-प्रति रसी।
'सूर' प्रभु आए अचनाक, देखि तिनकौ हँसी ॥ २४११ ॥

राग रामकली ॥ ३०३० ॥

पियहिं निरखि प्यारी हँसि दीन्हीं।

रीझे स्याम अंग अंग निरखत, हँसि नागरि उर लीन्हीं ॥
आलिंगन दै अधर दसन खंडि, कर गहि चिबुक उठावत।
नासा सौं नासा लै जोरत, नैन नैन परसावत ॥
इहिं अंतर प्यारी उर निरख्यौ, झझकि भई तब न्यारी।
'सूर' स्याम मोकौं दिखरावत, उर ल्याए धनि प्यारी ॥ २४१२ ॥

राग टोड़ी ॥ ३०३१ ॥

अब जानी पिय बात तुम्हारी।

मोसौं तुम मुख हीं की मिलवत, भावति है वह प्यारी ॥
राखे रहत हृदय पर जाकौं, धन्य भाग है ताके।
ऐसी कहूँ लखी नहिं अब लौं, बस्य भए हौ जाके ॥
भली करी यह बात जनाई, प्रगट दिखाई मोहिं।
'सूर' स्याम यह प्रान पियारी, उर मैं राखौ पोहि ॥ २४१३ ॥

राग धनाश्री ॥ ३०३२ ॥

सुनत स्याम चकित भए बानी।

प्यारी पिय मुख देखि कछुक हँसि, कछुक हृदय रिस मानी ॥

नागरि हँसत हँसी उर छाया, तापर अति झहरानी ।
अधर कंप रिस भौंह मरोरयौ, मनहीं मन गहरानी ॥
इकटक चितै रही प्रतिबिंबहिं, सौतिसाल जिय जानी ।
'सूरदास' प्रभु तुम बडभागी, बडभागिनि जिहिं आनी ॥ २४१४ ॥

राग धनाश्री ॥ ३०३३ ॥

प्यारी साँच कहति की हाँसी ।
काहे को इतनौ रिस पावति, कत तुम होहु उदासी ॥
पुनि पुनि कहति कहा तबही तै, कहा ठगी सी ठाढी ।
इकटक चितै रही हिरदय तन, मनी चित्र लिखि काढ़ी ॥
समुझी नहीं कहा मन आई, मदन त्रसै तुव आगे ।
'सूर' स्याम भए काम आतुरे, भुजा गहन पिय लागे ॥ २४१५ ॥

राग धनाश्री ॥ ३०३४ ॥

मोहि छुवी जनि दूर रहौ जू ।
जाकौ हृदय लगाइ लयौ है, ताकौं बाहँ गहौ जू ॥
तुम सर्वज्ञ और सब मूरख, सो रानी अरु दासी ।
मैं देखत हिरदय वह बैठो, हम तुमकौ भई हाँसी ॥
बाहँ गहत कछु सरम न आवति, सुख पावत मन माही ।
सुनहु 'सूर' मो तन वह इकटक, चितवति, डरपति नाही ॥ २४१६ ॥

राग बिलावल ॥ ३०३५ ॥

कहा भई धनि बावरी, कहि तुमहिं सुनाऊँ ।
तुम तैं को है भावतो, जिहिं हृदय बसाऊँ ॥
तुमहिं स्रवन, तुम नैन हौ, तुम प्रानअधारा ।
वृथा क्रोध तिय क्यों करौ, कहि बारबारा ॥
भुज गहि ताहि बतावहू, जेहि हृदय बतावति ।
'सूरज' प्रभु कहै नागरी, तुम तैं को भावति ॥ २४१७ ॥

राग नट ॥ ३०३६ ॥

माधौ नाहिनै दुरति जो हृदय बसति ।
ऐसी ढीठि मेरै जान, तुमही कीन्हो है कान्ह, मोसो सनमुख नाहिं देखत त्रसति ॥
झुके तैं झुकति, भाल भृकुटी, कुटिल किये, रूखे रूखी ह्वै रहति, हँसे तैं हँसति ।
तबही तैं इकटक चितवति, उहि जकि, उर तैं नैकहुँ इत उत न धँसति ॥
जाही सौं जगत नैन, ताही सौं खगत बैन, नख सिख लौं है सब गातनि ग्रसति ।
जाके हरि राँचे रंग, सोई है अंतर संग, काँच की करौती के सुजल ज्यौं लसति ॥
बिहँसि बोले गुपाल, सुनि हो ब्रज की बाल, उछँगहिं लेत कत धरनि खसति ।
अपनी छाया निहारि, काहे को करति आरि, काम की कसौटी 'सूर' संक तैं कसति ॥
॥ २४१८ ॥

राग कान्हरौ ॥ ३०३७ ॥

काहे कौ हौ बात बनावत ।
अब तुमको पिय मैं पत्याति हौं, छाहँ आपनी धरनि बतावत ॥
वा देखत हमको तुम मिलिहौ, काहे कों ताको अनखावत ।
अैहै कहूँ निकसि हिरदय तै, जानि बूझि तिहिं क्यौं उचटावत ॥

जो वह कहै करौ तुम सोई, कहा मोहिं पुनि पुनि समुझावत ।
'सूर' स्याम नागर, वह नागरि, भले भले जू मोहिं खिझावत ।। २४१६ ।।

राग गुंड मलार ।। ३०३८ ।।

वृथा हठ दूरि किन करो प्यारी ।
कहा रिस करति, ह्याँ छाहँ अपनी देखि, उर कोऊ नहीं रिस जरति भारी ।।
तुमहिं धन रहति, मन नैन मैं तुम बसति, कनक सौं लेहु कसि कहा बैठी ।
चतुरई कहँ गई, वृद्धि कैसी भई, चूक समुझे बिना भौंह ऐंठी ।।
यह सुनत रिस भरी, रही नहिं तहँ खरी, ओट ह्वै झरहरी मान कीन्हौ ।
जाहु मन मन कह्यौ, मैं बहुत सुख लह्यौ, सौति दिखराइ मोहिं 'सूर' दीन्हौ ।। २४२० ।।

राग धनाश्री ।। ३०३९ ।।

कियौ अति मान वृषभानुवारी । देखि प्रतिबिंब पिय हृदय नारी ।।
कहा ह्याँ करत लै जाहु प्यारी । मनहिं मन देत अति ताहि गारी ।।
सुनत यह वचन पिय विरह बाढ़ी । कियौ अति नागरी मान गाढ़ौ ।।
काम तनु दहत नहिं धीर धारै । कबहुँ बैठत उठत बार बारै ।।
'सूर' अति भए व्याकुल मुरारी । नैन भरि लेत, जल देत ढारी ।। २४२१ ।।

राग सारंग ।। ३०४० ।।

मान करयौ त्रिय बिनु अपराधहिं ।
तनु दाहति बिनुकाज आपनौ, कहव डरति जिय बादहिं ।।
कहा रही मुख मूँदि भामिनी, मोहिं चूक कछु नाहीं ।
झझकि रही क्यौं चतुर नागरी, देखि आपनी छाहीं ।।
अजहूँ दूरि करौ रिस उर तैं, हिरदय ज्ञान विचारौ ।
'सूर' स्याम कहि कहि पचिहारे, हठ कीन्हौ जिय भारौ ।। २४२२ ।।

राग सोरठ ।। ३०४१ ।।

काम स्याम तनु चटप कियौ ।
मान धरयौ नागरि जिय गाढ़ौ, मुरझ्यौ कमल हियौ ।।
व्याकुल भए चले वृंदावन, मिली दूतिका आनि ।
बार बार हरि बदन निहारति, सकै न बुझि पहिचानि ।।
कैसी दसा आजु मैं देखति, कहौ न मोहिं सुनाइ ।
'सूर' स्याम देखे तुम व्याकुल, आए कहा गँवाइ ।। २४२३ ।।

राग गौरी ।। ३०४२ ।।

व्याकुल वचन कहत हैं स्याम ।
वृथा नागरी मान बढ़ायौ, जोर कियौ तनु काम ।।
यह कहतहिं लोचन भरि आए, पायौ बिरह सहाइ ।
चाहत कह्यौ भेद ता आगैं, बानी कही न जाइ ।।
और सखी तिहिं अंतर आई व्याकुल देखि मुरारी ।
'सूर' स्याम मुख देखि चकित भई, क्यौं तनु रहे बिसारी ।। २४२४ ।।

राग बिहागरौ ।। ३०४३ ।।

कहति दूतिका सखिनि बुझाइ ।
आजु राधिका मान करयौ है, स्याम गए कुम्हिलाइ ।।

कर सौं कर धरि लाल गई लै, सखिनि सहित बन धाम।
सुख दै कह्यौ, लिये आवति हौ, सँग बिलसाऊँ बाम।।
मो आगे की महरि बिटिनियाँ, कहा करे वह मान।
सुनहु 'सूर' प्रभु कित्तिक बात यह, करै न पूरनकाम।। २४२५ ।।

राग भैरव ।। ३०४४ ।।

स्याम कुंज बैठारि गई।
चतुर दूतिका सखियनि लीन्हे, आतुरताई जाति लई।।
मनही मन इक रची चतुराई, यहै कहौगी बात नई।
अबही ले आवति हौ ताकौ, यहै बहुत कछु भई दई।।
करि आई हरि सौ परतिज्ञा, कहा कहै वृषभानु जई।
'सूर' स्याम सौ मान करयौ है, आजुहिं ऐसी कहा भई।। २४२६ ।।

राग नट ।। ३०४५ ।।

सखियनि संग तहाँ गई।
दूतिका मुख निरखि राधा, हृदै जानि लई।।
अति चतुर बृपभानुतनया, सहज बोलि लई।
सहज बचन प्रकास कीन्हौ, कहा कृपा भई।।
तुरतही यह कहि सुनायौ, स्याम बोले तोहिं।
'सूर' प्रभु बन बोलि पठई, तोहिं कारन मोहिं।। २४२७ ।।

राग टोड़ी ।। ३०४६ ।।

काहे कौ बन स्याम बुलाई। याही तै तुम आई धाई।।
कहा कहौ तोकौ री माई। तुमहुँ भली अरु भले कन्हाई।।
अब इक नई मिली है आई। ताही कौ अब लेहिं बुलाई।।
ताकौ राखी हृदय दुराई। तोकौ ह्वाँ तै टारि पठाई।।
'सूर' स्याम ऐसे गुन राई। उनकी महिमा कही न जाई।। २४२८ ।।

राग धनाश्री ।। ३०४७ ।।

आजु कछू घर कलह भयौ री।
तबै आजु अनमनी बत्यानी, यह कछु मान ठयौ री।।
मोकौ कछू कह्यौ नहिं मोहन, सहज पठाई लैन।
कहा पुकार परी हरि आगै चलौ न देखौ नैन।।
तेरौ नाम लेत हरि आगै, कहत सुनाइ सुनाइ।
'सूर' सुनहु काकौ काकौ गथ, तै धौ लियौ छुड़ाइ।। २४२९ ।।

राग सूही ।। ३०४८ ।।

वृंदाबन हरि बैठे धाम।
काहे कौं गथ हरयौ सबनि कौ, काहै अपनौ कियौ कुनाम।।
डारि देहु कह लियौ परायौ, मेरौ कह्यौ मानि री बाम।
तबही तै उन सोर लगायौ, तोकौ बोली है इहिं काम।।
चलै तुरत जनि झेर लगावहु, अबही आइ करौ विस्राम।
'सूर' स्याम तेरो धाँ झगरत, तू काहै तिनसौ करै ताम।। २४३० ।।

राग जैतश्री ॥ ३०४९ ॥

यह कछु नोखी वात सुनावति।
काकौ गथ धो मैं लीन्हौ है, वार वार वन मोहिं वुलावति ॥
मेरी धौं हरि लरत कौन सो, इती मया मोहिं कीन्ही।
जैसे है हरि तेरे माई, मैं नीकैं करि चीन्ही ॥
की वैठौ, की जाहु भवन कौं, मैं उनपै नहिं जाउँ।
'सूरदास' प्रभु कौ री सजनी, जनम न लैहौं नाउँ ॥ २४३१ ॥

राग गौरी ॥ ३०५० ॥

मैं कह तोहिं मनावन आई?
प्रगट लिये सवकौ व्रज वैठी, कहा करति अधिकाई ॥
जाइ करौ ह्वाँ वोध सवनि कौ, मोपर कत सतरानी।
स्याम लरत तवही तैं उनसौं, तिनपर अतिहिं रिसानी ॥
वार वार तू कहा कहति री, व्रज काकौ मैं लीन्हौ।
'सूरदास' राधा, सहचरि सौ, ज्वाव निदरि करि दीन्हौ ॥ २४३२ ॥

राग सोरठ ॥ ३०५१ ॥

तै कछु नहिं काहू कौ लीन्हौ।
प्रगट कहौ तवही मानैगी, ज्वाव निदरि मोहिं दीन्हौ ॥
तव वदिहौ ऐसैहि ह्वाँ कैहै, जहँ वैठे सव वैरी।
मेरे कहैं वहुत रिस पावति, संपति सवकी लै री ॥
इन इक करि सव तोहिं दिखाऊँ, कहि आवहु वन जाइ।
की दीजौ, की पुनि सव लीजौ, 'सूर' स्याम पै आइ ॥ २४३३ ॥

राग सूही ॥ ३०५२ ॥

जिनि जिनि जाइ स्याम के आगैं, तेरी चुगली वहुत करी।
वार वार तिनसौ हरि खीझे, तेरी धौं ह्वै महूँ लरी ॥
स्याम भेद करि मोहिं पठाई, तू मोहीं पर खरी परी।
जाइ करो रिस वैरनि आगैं, जाके जाके गथहिं हरी ॥
धरनि, अकास, वनहुँ तैं आए, देखत तिनकौ अतिहिं डरी।
'सूर' स्याम विनु न्याउ चुकै क्यो, तिन पर तू अतिही झहरी ॥ २४३४ ॥

राग धनाश्री ॥ ३०५३ ॥

ते जु पुकारे हरि पै जाइ।
जिनकी यह सव सौंज राधिका, तुव तनु लई छँड़ाइ ॥
इंदु कहै हौ वदन विगोयौ, अलकनि अलि समुदाइ।
नैननि मृग, वचननि पिक लूटे, विलपत हरिहिं सुनाइ ॥
कमल, कीर, केहरि, कपोत, गज, कनक, कदलि दुख पाइ।
विद्रुम, कुंद, भुजग संग मिलि, सरन गए अकुलाइ ॥
अति अनीति जिय जानि 'सूर' प्रभु, पठई मोहिं रिसाइ।
वोली है व्रजनाथ वेगि चलि, अव उत्तर दै आइ ॥ २४३५ ॥

राग कल्यान ॥ ३०५४ ॥

चलि राधे हरि रसिक वुलाई।
कमल नयन कछु मरम कह्यौ है, मोहन वचन करन पुट लाई ॥

अँग अँग सर्वस हरन लगी री, रचि बिरंचि तुव वनक वनाई।
अब जु पुकार करत तेरै तन, जिन जिनकी सब सोभ चुराई॥
माँग उडू नव तरनि तरयौना, तिलक भाल ससि की ससिताई।
भ्रकुटी सुरधनु, सुधा वचन वर, सुरपुर परी है मदन दुहाई॥
दाड़िम, वज्र पंक्ति, पंकजदल, दामिनिघन, द्युति रदन दुराई।
कंवु कपोत कठ, निसिवासर वाहु वली करि कजलताई॥
उर भय भेप, सेप अंवर जनु, मनु छवि कटि मृगराज सुहाई।
हंस पुकार करत 'सूरज' प्रभु, दोन वधु हौ लेन पठाई॥ २४३६ ॥

राग कान्हरौ ॥ ३०५५ ॥

मान करौ तुम और सवाई।
कोटि करौ एकै पुनि ह्वै हौ, तुम अरु मोहन माई॥
मोहन सो सुनि नाम स्त्रवनही, मगन भई सुकुमारी।
मान गयौ, रिस गई तुरतही, लज्जित भई मन भारी॥
धाइ मिली दूतिका कठ सौ, धन्य धन्य कहि वानी।
'सूर' स्याम वन धाम जानिकै, दरसन कौ अतुरानी॥ २४३७ ॥

राग विलावल ॥ ३०५६ ॥

हँसि के कह्यो दूतिका आगै, स्यामहिं सुख दै जाइ।
करि असनान, अभूषन अँग भरि, आवति पाछै धाइ॥
यह सुनि हरप भई अतिही सखि, गई तहाँ जहँ स्याम।
अति व्याकुल तनु की सुधि नाही, विह्वल कीन्हौ काम॥
की वन मैं की घरही वैठे, की वासर की जाम।
'सूर' स्याम रसना रट लागी, राधा राधा नाम॥ २४३८ ॥

राग रामकली ॥ ३०५७ ॥

स्याम नारि कै विरह भरे।
कवहुँक वैठत कुज द्रुमनि तर, कवहुँक रहत खरे॥
कवहुँक तनु की सुरति विसारत, कवहुँक तनु सुधि आवत।
तव नागरि के गुनहिं विचारत, तेई गुन गनि गावत॥
कहूँ मुकुट, कहुँ मुरलि रही गिरि, कहुँ कटि पीत पिछौरी।
'सूर' स्याम ऐसो गति भीतर, आई दूतिका दौरी॥ २४३९ ॥

राग विलावत ॥ ३०५८ ॥

स्याम भुजा गहि दूतिका, कही आतुर वानी।
काहे कौ कदरात हौ, मै राधा आनी॥
विरह दूरि करि डारियै, सुख करौ कन्हाई।
तिया नाम स्त्रवननि सुन्यौ, चितये अकुलाई॥
मिले दूतिका अंक दै, लोचन भरि आए।
प्यारी प्यारी वोलि कै, जुवतहि उर लाए॥
तव वोली हँसि दूतिका, पिय आवति नारी।
'सूर' स्याम सुनि वोल वै, हरषे वनवारी॥ २४४० ॥

राग गूजरी ॥ ३०५९ ॥

धीर धरौ प्यारी अब आवति।
मैं जु गई परतिज्ञा करिकै, सो कहि बात जनावति ॥
मनचिंता अब दूरि करौ जू, कहौ न कह मोहि देही।
वनि आवति वृषभानुनंदिनी, भुज भरि अंकम लैहौ ॥
यह सुंदरता और नही कहुँ, बड़भागी सो पावै।
'सूर' स्याम दूतिका बचन सुनि, कर जुग जोरि मिलावै ॥ २४४१ ॥

राग जैतश्री ॥ ३०६० ॥

यह सुनि कै मन स्याम सिहात।
पुलकित अंग रहै नहिं धीरज, पुनि पुनि पंथ निहारत जात ॥
कुंजभवन कुसुमनि की सज्या, अपने हाथ निवारत पात।
जे द्रुमलता लटकि तनु लागति, ते ऊँचै धरी पुलकित गात ॥
प्यारी अँग अति कोमल जानत, सेज कली चुनि डारत।
'सूर' स्याम रीझत मनही मन, सुधि करि छविहिं निहारत ॥ २४४२ ॥

राग कल्यान ॥ ३०६१ ॥

दूतिका हँसति हरि चरित हेरै।
कवहुँ कर आपने रचत सुमननि सेज, कवहुँ मग निरखि कहै भयो फेरै ॥
काम आतुरि भरे, कवहुँ वैठत खरे, कवहुँ आगै जाइ रहत ठाढे।
चतुर सखि देखि पुनि राधिका पै गई भेर क्यो करति, धन कंत चाढे ॥
सुनत प्यारी हँसी, पिया कै मन वसी, रूप गुन करि जसी, प्रेमरासी।
'सूर' प्रभु नाम सुनि, मदन तनु वल भयौ, अंग-प्रति-छवि-निरपि रमादासी ॥
॥ २४४३ ॥

राग धनाश्री ॥ ३०६२ ॥

धनि वृषभानुसुता वड़ भागिनि।
कहा निहारति अंग-अग-छवि, धन्य स्याम अनुरागिनि ॥
और त्रिया नखसिख सिंगार सजि, तेरै सहज न पूरै।
रति, रंभा, उरवसी, रमा सी तोहि निरखि मन झूरै ॥
ये सब कत सुहागिनि नाहीं, तू है कंत पियारी।
'सूर' धन्य तेरी सुदरता, तोसी और न नारी ॥ २४४४ ॥

राग धनाश्री ॥ ३०६३ ॥

सहज रूप की रासि राधिका भूपन अधिक विराजै।
मुख सौरभ समिलित सुधानिधि, कनकलता पर छाजै ॥
वदनविंदु धारि मिलि सोभित, धम्मिल नीर अगाध।
मनहुँ वाल-रवि-रस्मिनि-संकित, तिमिर कूट ह्वै आध ॥
मानिक मध्य, पास चहुँ मोती पगति, झलक सिंदूर।
रेग्यौ जनु तमतट तारागन, ऊगत घेरचौ सूर ॥
की मनमथ-रथ-चक्र, कि तरिवन, रवा रचित सहसाज।
स्रवनकूप की रहँटघंटिका, राजत सुभग समाज ॥
नासा-नथ-मुक्ता, विंवाधर प्रतिविंवित असमूच।
वाँध्यौ कनकपास सुक सुदर, करकवीज गहि चूंच ॥

कहँ लगि कहौ भूषननि भूषित, अंग अंग के रूप।
'सूर' सकल सोभा श्रीपति कैं, राजिव नैन अनूप।। २४४५ ।।

राग कान्हरौ ।।३०६४ ।।

विराजति राधा रूपनिधान।
सुंदरता की पुंज प्रगट ही, को पटतर तिय आन।।
सिंदुर सीस, माँग मुक्तावलि, कच कमनीय विनान।
मनहुँ चन्द्रमुख कोपि हन्यौ, रिपुराहु विषम वलवान।।
तरल तिलक ताटक गंड पर झलकत कल विवि कान।
मानहुँ ससि सहाय करिवे कौ, रन बिरचे द्वै भान।।
दीरघ नैन नासिका वेसरि, अरुन अधर छविवान।
खंजन, सुक न विंव समता कौ, लज्जित भए अजान।।
को कहि सकै उरोजनि की छवि, कंचन मेरु लजान।
श्रीफल सकुचि रहे दुरि कानन, सिखर हियौ विहरान।।
रोमावलि-त्रिवली-छवि छाजति, जनु कीन्ही विधि ठान।
कृस कटि सवल दंड वंधन मनु, यह दीन्हौ वधान।।
अंग अंग आभूषन की छवि, कापै होइ वखान।।
'सूरदास' प्रभु रसिक सिरोमनि, विलसहु स्याम सुजान।। २४४६ ।।

राग सारंग ।। ३०६५ ।।

राजत तेरैं वदन ससी री।
किरनि कटाच्छ वान वर साधे, भौंह कलंक कमान कसी री।।
पीन पयोधर सघन उनत अति, तातर रोमावली लसी री।
चक्रवाक खग चंचुपुटी तैं, मनु सैंवल मजली खसी री।।
ज्यौं नाभी सर एक नाल नव, कनक कमल विवि लहे वसी री।
'सूरज' श्रीगोपाल (यमुना) पियारी, मेरुनि अध तमधार धँसी री।।२४४७।।

राग गूजरी ।। ३०६६ ।।

सुनि राधे तेरे अंगनि ऊपर, सुंदरता न बची।
लोक चतुर्दस नीरस लागत, तू रसरासि सँची।।
नखसिख कुसुमविसिष की सेना, कौतुक अवधि रची।
सहज माधुरी रोमनि वर्षति, रति रन कोच मची।।
पदनख की छवि निरखि निरखि कै, कमला आइ लची।
तोसी नारि स्याम से नायक, विधि वेकाज वची।।
तुव अँग अँग छवि की पटतर कौ कविअनि वुद्धि नची।
'सूर' सुमेरु कूट की सरवरि, क्यौं पूजै घुँघुची।। २४४८ ।।

राग नट ।। ३०६७ ।।

राधे देखि तेरौ रूप।
पठई हौ हरि संकि, मनु दल सज्यौ मनसिज भूप।।
चाल गज, शृंखला नूपुर, नीवि नव रुचि ढाल।
किंकिनि-घटा-घोष, माधौ भए भय वेहाल।।
कंचुकीभूषन कवच सजि, कुच, कसे रनवीर।
अँचल ध्वज अवलोकि, नाही धरत पिय मन धीर।।

भौंह चाप चढ़ाइ कीन्हौ, तिलक सर संधान।
नैन की तक देखि गिरिधर, तज्यौ है मद मान ।।
चँवर चिकुर सुदेश घूँघट छत्र सोभित छाहँ।
ज्यौं कहौ त्यौंही मिलाऊँ, दै दयालुहि बाहँ ।।
राधिका अति चतुर सुंदर, सुनि सुवचन बिलास।
'सूर' रुचि मनसा जनाई, प्रगटि सुख मृदु हास ।। २४४९ ।।

राग कल्यान ।। ३०६८ ।।

आजु अंजन दियौ राधिका नैन कौं।
मीन गुनहीन, मृग लजित, खंजन चकित चचल सरस स्याम सुख दैन कौं ।।
लसत दाड़िम दसन, भौंह मन्मथ फंद, सुभग लट लटकि रही, रहत नहिं चैन कौं।
कसनि कंचुकि बंद, उर मुकुतमाल, मुख निरखि उडराज तजि गयौ सुरऐन कौं ।।
रुनित नूपुर चरन, छुद्र कटि घटिका, कनक-तन-गोर-छवि उमँगि उपरैन कौं।
'सुर' सुनि स्रवन उठि, नवल गिरिधर सेज, चली गजगति मनौ मदन गढ लैन कौं ।।
।। २४५० ।।

राग टोड़ी ।। ३०६९ ।।

रसिक सिरोमनि ढोरि लगावत, गावत राधा राधा नाम।
कुंजभवन बैठे मनमोहन बोलत सुख तेरोई गुन ग्राम ।।
स्रवन सुनत प्यारी पुलकित भई, रोम रोम सुख रासी बाम।
'सूरदास' प्रभु गिरिवरधर कौं, चली मिलन गज गति बन धाम ।। २४५१ ।।

राग देवगंधार ।। ३०७० ।।

चलौ किन मानिनि कुंज कुटीर।
तुव बिनु कुँवर कोटि बनिता तजि, सहत मदन की पीर ।।
गदगद स्वर सभ्रम अति आतुर, स्रवत सुलोचन नीर।
क्वासि क्वासि वृषभानुनंदिनी, बिलपत बिपिन अधीर ।।
वसी बिसिष, माल व्यालावलि, पंचानन पिक कीर।
मलयज गरल, हुतासन मारुत, साखामृगरिपु चीर ।।
हिय मैं हरषि प्रेम अति आतुर, चतुर चली पिय तीर।
सुनि भयभीत वज्र के पिंजर, 'सूर' सुरतिरनधीर ।। २४५२ ।।

राग कल्यान ।। ३०७१ ।।

नवेली सुनि नवल पिय नव निकुँज है री।
भावते लाल सौ, भावती केलि करि, भावतो, भाव तै रसिक रस लै री।
त्यागि अभिमान, गुन-रूप-सौभाग-रति, मानिनो, मान हरि मैन सुख दै री।
एक व्रजवास, आवत जात देखियत, आपनो जाति पति पैड कौ धैरी ।।
ललित उद्दार हित पीर करि, कोर-मति-धीर तनु, मेटि मनमत्थ को भै री।
कला चौसट्ठि, सगोत, सिंगार रस, कोक-बिधि-बंद प्रगटि भेद सै सै री ।।
सुरति समर साजि, स्रवत जस रस लाजि, अंग अनुकूल रतिराज रन जै री।
कामसर कनककुच प्रगट भृंगो चिह्न दागि, मेलै कंत आपनो कै री ।।
जासु आलाप सुनि, दारु सोउ पल्लवै, पुहुए, मधुभार फलभार भरि नै री।
मुरलिका गान तुव नाम मधुराधुनो, सुधा-गुन-सिंधु नहिं गनति निज मैं री ।।

हीन जल मीन ज्यौं दरस बिनु कलमलै प्रान, प्रीतम नहीं धीरज धरै री।
प्रीति की रीति गति प्रान चचल करति, निरखि नागर नयन चुवकऽस्मैरी ।।
अधर मधु लोभ पंथान चितवत चकित, कमल-गुलाल-दल-तल्प बिरचै री।
अरुन सीतल मृदुल पाद तल हरि करत सेज चढ़ि, दलमलहि री वरन वैरी ।।
तुव काम केलि कमनीय कामिनी वृंद चद्र, चकोर, चातक, स्वाति तैं री।
'सूर' सुनि स्रवन, तजि भवन कियो गवन, मनरवन तन, तवहि कालहस गति गैरी ।।
।। २४५३ ।।

राग कान्हरौ ।। ३०७२ ।।

मनौ गिरिवर तैं आवति गंगा।
राजति अति रमनीक राधिका, इहि विधि, अधिक अनूपम अगा ।।
गौर-गात-दुति विमल वारिविधि, कटितट त्रिवली तरल तरगा।
रोम राजि मनु जमुन मिली अध, भँवर परत मानौ भ्रुव भगा ।।
भुज जुग पुलिन पास मिलि वैठे, चारु चवकवै उरज उतंगा।
मुख लोचन, पद, पानि पकरुह, गुरु गति, मनहुँ मराल विहगा ।।
मनिगन भूपन रुचिर तीन वर, मध्य धार मोतिनि-मय मंगा।
'सूरदास' मनु चली सुरसरी, श्रीगुपाल सागर सुख गगा ।।२४५४।।

राग सूही ।। ३०७३ ।

नाहिन नैन लगे निसि इहि डर।
जव तैं जाइ कह्यौ हँसि हरि सौं, समरसोच उनकैं जिय धरधर ।।
भौंह कमान, तिलक भलुका करि, रचि मुदेस सीमत सुरँग सर।
वलय ताटक चक्र, नख नेजा, दामिनि से चमकत रद असि वर ।।
गज उरोज, वर वाजि विलोचन, वकट, विसद, विसाल, मनोहर।
लाल ढाल अचल चचल गति, चँवर चिकुर राजत ता ऊपर ।।
अग-अग-सजि सुभट सहायक, वने विविध भूपन वाने वर।
कामिनि आजुहि आनि रहैगी, कामकटक ले कुज भंडा तर ।।
चरन रुनित नूपुर रनतूरा सुनत स्रवन काँपहिंगे थर थर।
तव जानिवी किसोर जोर रुपि, रहौ जीति करि खेत सवै फर ।।
ऐंचि करौ जो कहौ किसोरी, वैं जु भीत ह्वै रहे वैठि घर।
यहै मतौ, मुख जोर होतही, कन्हु पार लै पकरि पियहि कर ।।
सहचरि तुरत चतुर लै आई, वाहँ वोल दै करिकै वहु छर।
रोप-सुरत-रन मिली अक भरि, लै लटकी दै दत पियाऽधर ।।
जुरत-सुरति-संग्राम मच्यौ, छवि छूटि-छूटि कच, टूटि हार लर।
अति सनेह दुहुँ विसरि देह भिरि, मैन मल्ल मुरझाइ गिरे धर ।।
विविध विलास-कला वस कीन्हे, राधा नारि नदनदन वर।
निगमनि नेति कह्यौ निर्गुन, सो कह गुनाधि वरनिहै 'सूर', नर ।। २५४५।।

राग टोडी ।। ३०७४ ।।

फूलनि के महल, फूलनि सेज, फूले कुजविहारी, फूली राधा प्यारी।
फूले वै दपति नवल मगन फूले फूले करैं केलि न्यारीयै न्यारी ।।
फूली लता वेलि, विविध सुमन फूले, फूले आनन दोऊ है सुखकारी।
'सूरदास' प्रभु प्यारी पर डारत हरपि, फूले फूल चंपक वेल निवारी ।।२४५६।।

राग धनाश्री ॥ ३०७५ ॥

आजु रँग फूले कुँवर कन्हाई।
कबहुँक अधर दसन भरि खंडत, चाखत सुधा मिठाई॥
कबहुँक कुच कर परसि कठिन अति, तहाँ बदन परसावत।
मुख निरखति सकुचति सुकुमारी, मनही मन अति भावत॥
तब प्यारी कर गहि मुख टारति, नैकु लाज नहिं आवत।
'सूरदास' प्रभु कामसिरोमनि, कोककला दिखरावत॥ २४५७ ॥

राग बिहागरौ ॥ ३०७६ ॥

देखे सात कमल इक ठौर।
तिनकौ अति आदर दैबे कौं, धाइ मिले द्वै और॥
मिलत मिले फिरि चलत न बिछुरत, अवलोकत यह चाल।
न्यारे भए बिराजत है सब अपने सहज सनाल॥
हरि तिनि स्याम निसा निसि-नायक, प्रकट होत हँसि बोले।
चिबुक उठाइ कह्यौ अब देखौ, अजहूँ रहत अबोले॥
इतने जतन किये नँदनदन, तब वह निठुर मनाई।
भरि कै अंक 'सूर' के स्वामी, पर्यंक पर ल्यौं आई॥ २४५८ ॥

राग केदारौ ॥ ३०७७ ॥

पियभावती राधा नारि।
उलटि चुबन देति रसिकिनि, सकुच दीन्ही ढारि॥
परस्पर दोउ भरे स्रमजल, फूँकि फूँकि झुरात।
मनहुँ बुझी अनंग ज्वाला, प्रगट करत लजात॥
बहुरि उठें सम्हारि भट ज्यौं, अँग अनग सम्हारि।
'सूर' प्रभु बन धाम बिहरत, बने दोउ वर नारि॥ २४५९ ॥

राग रामकली ॥ ३०७८ ॥

बिहरत दोउ मन एक करे।
एक भाव इक भए लपटि कै, उर उर जोरि धरे॥
मनहुँ सुभट रन एक सग जुरि, करि बल नहीं डरे।
अधर दसन छत, नख छत उर पर, घायनि फरहिं परे॥
इहि सुख, इहि उपमा पटतेर को, रति सग्राम लरे।
'सूर' सखी निरखति अतर भई रतिपति काज सरे॥ २४६० ॥

राग रामकली ॥ ३०७९ ॥

आजु अति सोभित है घनस्याम।
मानहुँ है जीते नँदनदन, मनसिज सौं संग्राम॥
मुकुलित कच न समात मुकुट में, रोपअरुन दोउ नैन।
स्रम सूचक गति, भाँति अलस बस बोलत बनत न बैन॥
नख-छत-स्रेनि, प्रस्वेद गात तैं, चँदन गयौ कछु छूटि।
मदन सुभट के सर सुदेस मनु लगे कवच पट फूटि॥
दसन बसन पर प्रगट पीक मनु सनमुख सहे प्रहार।
'सूरदास' प्रभु परम सूरमा, जाने नंदकुमार॥ २४६१ ॥

राग कल्यान ॥ ३०८० ॥

सकुचि मन परस्पर बसन लीन्हे।
प्यारि पिय निपुन दोउ कोक गुन कला मैं, उनि धनहिं उनि कंत अबला कीन्हे॥
स्वेदकन गंडमंडलनि नासानि, तट, पिय निरखि, पीत पट पोछि डारचो।
निरखि प्यारी पोछि वैसैंही पिय वदन, कछु सकुचि कछु हरषि के निहारचौ॥
नागरी डरनि पिय पीत पट उर धरे, बहुरि जिनि आपनी छाहँ देखैं।
'सूर' प्रभुस्वामिनी, अंग-छवि-दामिनी, झलक प्रतिबिंब पर मान भेषैं॥
॥ २४६२ ॥

राग रामकली ॥ ३०८१ ॥

सँग राजति वृषभानु कुमारी।
कुंजसदन कुसुमनि सेज्या पर, दंपति सोभा भारी॥
आलस भरे मगन रस दोऊ, अग अंग प्रति जोहत।
मनहुँ गौर स्यामल ससि नव तन, बैठे सन्मुख सोहत॥
कुंजभवन राधा मनमोहन, चहूँ पास व्रजनारी।
'सूर' रही लोचन इकटक करि, डारति तन मन वारी॥ २४६३ ॥

राग नट ॥ ३०८२ ॥

इकटक रही नारि निहार।
कुंजघर श्री स्याम स्यामा, बैठे करत विहार॥
नैन सैन कटाच्छ सौ मिलि, करत रग बिलास।
नही सोभा पार पावत, बचन मुख सुख हास॥
तरुनि श्री वृषभानु तनया, तरुन नदकुमार।
सूर सो क्यौ बरनि गावै, रूप-रस-सुखसार॥ २४६४ ॥

राग लिावल ॥ ३०८३ ॥

देखौ सोभा सिंधु समात।
स्यामा स्याम सकल निसि, रस बस जागे होत प्रभात॥
ले पाहन सुत कर सन्मुख दै, निरखि निरखि मुसुकात।
अचरज सुभग वेद जलजातक, कनक नील मनि गात॥
उदित जराउ पंच तिय रबि ससि किरन तहाँ सु दुरात।
चचल खग वसु, अष्ट कंजदल, सोभा बरनि न जात॥
चारि कीर पर पारस, विद्रुम, आनि अलीगन खात।
सुख की रासि जुगल मुख ऊपर, 'सूरदास' बलि जात॥ २४६५ ॥

राग रामकली ॥ ३०८४ ॥

देखि सखि पाँच कमल, द्वै संभु।
एक कमल व्रज ऊपर राजत, निरखत नैन अचंभु॥
एक कमल प्यारी कर लीन्हे, कमल सुकोमल अंग।
जुगल कमल सुतकमल विचारत, प्रीति न कबहूँ भग॥
षट जु कमल मुख सन्मुख चितवत, वहु त्रिधि रंग तरंग।
तिन मैं तीनि सोम, बंसी वस तीन सु कस्यप अंग॥
जेइ कमल सनकादिक दुरलभ, जिनही निकसी गंग।
तेई कमल 'सूर' तित चितवत, निपट निरंतर संग॥ २४६६ ॥

राग नट ॥ ३०८५ ॥

देखि सखि चारि चंद्र इक जोर।
निरखति वैठि नितविनि पिय सँग, सार-सुता की ओर॥
द्वै ससि स्याम नवल घन सुदर, द्वै बिधु की छवि गोर।
तिनकै मध्य चारि सुक राजत, द्वै फन्न, आठ चकोर॥
ससि ससि सग प्रवाल, कुदकलि, अरुझि रह्यौ मन मोर।
'सूरदास' प्रभु अति रति नागर, बलि बलि जुगल किसोर॥ २४६७ ॥

राग नट ॥ ३०८६ ॥

देखि री प्रगट द्वादस मीन।
षट इदु, द्वादस तरनि सोभित, विमल उडुगन तीन॥
षट अष्ट अबुज, कीर षष्ट, मुख कोकिला सुर एक।
दस दाड़ विद्रुम, दामिनी षट, तीनि व्याल विसेष॥
षट त्रिवलि श्रीफल षट, विराजत परसपर वर नारि।
ब्रज कुँवरि, गिरिधर कुँवर पर है, 'सूर' जन बलिहारि॥ २४६८ ॥

राग देवगाधार ॥ ३०८७ ॥

देखि साखि तास भानु इक ठौर।
ता ऊपर चालीस विराजत रुचि न रही कछु और॥
घर तै गगन, गगन तै धरती, ता विच कियौ बिस्तार।
गुन निर्गुन सागर की सोभा, विनु रवि भयौ भिनुसार॥
कोटिन कोटि तरगिनि उपजति जोग जुगति चित लाउ।
'सूरदास' प्रभु अकथ-कथा की, पडित भेद बताउ॥ २४६९ ॥

राग ललित ॥ ३०८८ ॥

सघन कुज तै उठे भोरही, स्यामा स्याम खरे।
जलद नवीन मिली मनु दामिनि, वरपि निसा उसरे॥
सिथिल वसन तन नील-पीत दुति, आलस जुत पहिरे।
स्रमजल-बुद कहूँ-कहुँ उड़गन, वदरनि मैं निकरे॥
भूषन विविध भाँति मेड़बारी, रतिरस उमँगि भरे।
कागर अधर, तमोल नैन रँग, अँग-अँग झील परे॥
प्रेमप्रवाह चली मनु सरिता, टूटी माल गरे।
सोभा अमित विलोकि 'सूर' प्रभु क्यौं मुख जात तरे॥ २४७० ॥

राग नट ॥ ३०८९ ॥

दपति कुंजद्वार खरे।
सिथिल अग मरगजे अवर, अतिहि रूप भरे॥
सुरतहि सब रैनि वीती, कोक पूरन रंग।
जलद दामिनि सग सोहत, भरे आलस अग॥
चकृत ह्वै ब्रजनारि निरखति, मनौ चद चकोर।
'सूर' प्रभु वृषभानुतनया, विलसि रति-पति-जोर॥ २४७१ ॥

राग विलावल ॥ ३०९० ॥

राजत दोउ निकुज खमे।
स्यामा नव किसोर, पिय नव रँग अति अनुराग भरे॥

अति सुकुमारि सुभग चंपक-तनु, भूषन भृंग अरे।
मरकत-कमल-सरीर सुभग हरि, रति-पिय-वेप करे।।
चर्चित चार कमलदल मानौ, पिय के दसन समात।
मुख-मयंक-मधु पियत करनि कसि, ललना तउ न अघात।।
लाजति वदन दुराइ मधुर, मृदु मुसुकनि मन हरि लेत।
छूटी अलक भुवंगिनि कुच तट, पैठी त्रिवलिनिकेत।।
रिस रुचि रंग वरह के मुख लौं, आने सोम समेत।
प्रेम पियूप पूरि पोछत पिय, इत उत जान न देत।।
वदन उघारि निहारि निकट करि, पिय के आनि धरे।
विप संका नख रहत मुदित मन, मनसिज ताप हरे।।
जुगल किसोर चरन रज वंदौ, सूरज सरन समाहि।
गावत सुनत स्रवन सुखकारी, विस्व दुरित दुरि जाहि।। २४७२ ।।

राग नट ।। ३०९१ ।।

जो सुख स्याम प्रिया सँग कीन्हौ। सो जुवतिनि अपनौ करि लीन्हौ।।
दुविधा हृदय कछू नहिं राख्यौ। अति आनद वचन मुख भाख्यौ।।
यहै कहति तव की अव नीकै। सकुचि हँसी नागरि सँग पीकै।।
नैनकोर पिय हृदय निहारयौ। उन पहिलेहि पीतांवर धारयौ।।
'सूरदास' यह लीला गावै। हरि-पद-सरन अछै फल पावै।।
।। २४७३ ।।

राग नट ।। ३०९२ ।।

धनि व्रजसुंदरी धनि स्याम।
धन्य धनि वृपभानु तनया, राधिका जिहि नाम।।
गेह गेहनि गईं तरुनी, स्याम गए नँदधाम।
भवन गई वृपभानुतनया, कोक-कला-सुजान।।
करत मनकामना पूरन, एक निसि सव वाम।
'सूर' प्रभु जा सदन जात न, सोइ करति तनु ताम।। २४७४ ।।

राग विलावल ।। ३०९३ ।।

नाना रँग उपजावत स्याम। कोउ रीझति, कोउ खीझति वाम।।
काहू कै निसि वसत वनाइ। काहू मुख छ्वै आवत जाइ।।
वहु नायक ह्वै विलसत आपु। जाकौ सिव पावत नहिं जापु।।
ताकौं व्रजनारी पति जानैं। कोउ आदरैं, कोउ अपमानैं।।
काहू सौं कहि आवन साँझ। रहत और नागरि घर माँझ।।
कवहुँ रैनि सव संग विहात। सुनहु 'सूर' ऐसे नँदतात।।
।। २४७५ ।।

राग विलावल ।। ३०९४ ।।

अव जुवतिनि सौं प्रगटे स्याम।
अरस परस सवहिनि यह जानी, हरि लुवधे सवहिनि कैं धाम।।
जा दिन जाकै भवन न आवत, सो मन मैं यह करति विचारि।
आजु गए औरहिं काहू कै, रिस पावति, कहि वड़े लवार।।

यह लीला हरि कैं मन भावत, खंडित वचन कहत सुख होत।
साँझ बोल दै जात 'सूर' प्रभु, ताकैं आवत होत उदोत ॥२४७६॥

राग रामकली ॥ ३०९५ ॥

ठाढे नंदद्वार गुपाल।
बोलि लीन्हे देखि ललिता सैन दै ततकाल ॥
हँसत गए हरि गेह ताकैं कोउ न जानत और।
मिली हरि कौं लाइ उर भरि चापि कुचनि कठोर ॥
कह्यौ मेरैं धाम कबहूँ क्यौं न आवत स्याम।
'सूर' प्रभु कही आजु नागरि आइहैं हम जाम ॥ २४७७ ॥

राग बिलावल ॥ ३०९६ ॥

ललिता कौ सुख दै गए स्याम।
आजु बसैंगे रैनि तिहारैं, प्रानपियारी हौ तुम बाम ॥
यह कहि कै अनतहि पगु धारे, बहु नायक के भेद अपार।
साँझ समय आवन कहि आए, मोंह बहुत करि नंदकुमार ॥
वह बैठी मारग हरि जोवति, इक इक पल बीतत इक जाम।
'सूर' स्याम आवन की आसा, सेज सँवारति व्याकुल काम ॥ २४७८ ॥

राग गौरी ॥ ३०९७ ॥

साँझहि तैं हरिपथ निहारै।
ललिता रुचि करि धाम आपनैं सुमन सुगंधनि सेज सँवारै ॥
कबहुँक होति बारनैं ठाढी, कबहुँक गनति गगन के तारे।
कबहुँक आइ गली मग जोवति, अजहुँ न आए स्याम पियारे ॥
वै बहुनायक अनत लुभाने, और बाम कैं धाम सिधारे।
'सूर' स्याम बिनु बिलपति बाला, तमचुर जहँ तहँ शब्द पुकारे ॥२४७९॥

राग गौरी ॥ ३०९८ ॥

ललित। तमचुर टेर सुन्यौ।
वै बहुनायक अनत लुभाने, नहिं आए जिय कहा गुन्यौ ॥
बिनु कारन दै आस गए पिय बार बार तिय सीस धुन्यौ।
सेज सँवारि पथ निसि जोवति अस्त आनि भयौ चंद पुन्यौ ॥
तब बैठी मन मारि आपनौ, कछु रिस कछु मन सोच परयौ।
'सूर' स्याम यातैं नहिं आए, मातुपिता कौ त्रास धरयौ ॥ २४८० ॥

राग जैतश्री ॥ ३०९९ ॥

सोच परयौ नागरि मन माहीं।
की कहुँ अनत लुभाने, की पितुमातु त्रास चित माहीं ॥
वै निसि बसे महल मोला कैं, सुख सब रैनि गँवाई।
उठे अकुलाइ भोर भयौ जान्यौ, तब नागरि सुधि आई ॥
सहज चले गोपी सौं कहि कै, जिय सकुचत अति भारी।
'सूर' स्याम ललितागृह आए, चितै रही मुख प्यारी ॥ २४८१ ॥

राग ललित ॥ ३१०० ॥

प्यारी चितै रही मुख पिय कौ।
अंजन अधर, कपोलनि बंदन, लाग्यौ काहू तिय कौ ॥

तुरत उठी दर्पन कर लीन्है, देखौ वदन सुधारौ।
अपनौ मुख उठि प्रात देखि कै, तव तुम कहूँ सिधारौ॥
काजर वदन, अधर कपोलनि, सकुचे देखि कन्हाई।
'सूर' स्याम नागरि मुख जोवत, वचन कह्यौ नहि जाई॥ २४८२ ॥

राग आसावरी ॥ ३१०१ ॥

दर्पन लै प्यारी मुख आगै, कहति पिया छवि हेरौ जू।
मेरी सौं हा हा कहि पुनि पुनि, उत काहै मुख फेरौ जू॥
सकुचत कहा वोल कै साँचे, मेरै गृह तो आए जू।
रैनि नही तौ अव जु कृपा भई, धनि जिनि स्वाँग कराए जू॥
मेरी कही विलग जनि मानौ, मैं तुव करत वडाई जू।
'सूर' स्याम सन्मुख नहि चितवत, रहे धरनि सिर नाई जू॥ २४८३ ॥

राग ललित ॥ ३१०२ ॥

क्यौ मोहन दर्पन नहिं देखत।
क्यौ धरनी पगनखनि करोवत, क्यौ हम तन नहि पेखत॥
क्यौ ठाढ़े वैठत क्यौ नाही, कहा परी हम चूक।
पीतावर गहि कह्यो वैठिये, रहे कहा ह्वै मूक॥
उघरि गयौ उर तै उपरैना, नखछत, विनु गुन माल।
'सूर' देखि लटपटी पाग पर, जावक की छवि लाल॥ २४८४ ॥

राग ईमन ॥ ३१०३ ॥

ऐसी कहौ रँगीले लाल।
जावक सौ कहँ पाग रँगाई, रँगरेजिनी मिली कोउ वाल॥
वदन रग कपोलनि दीन्हौ, अरुन अधर भए स्याम रसाल।
जिनि तुम्हरी मन इच्छा पुरई, धनि धनि पिय, धनि धनि वह वाल॥
माला कहाँ मिली विनु गुन की, उरछत देखि भई वेहाल।
'सूर' स्याम छवि सवै विराजी, यहै देखि मोकौ जजाल॥ २४८५ ॥

राग गुड मलार ॥ ३१०४ ॥

काहै सकुचत दृष्टि न जोरत, मोहन रूप विहारी।
निकसे समाचार सव सोवत, घूमति आँखि तिहारी॥
नैन जगै पल लगे जात है, पौढहु तल्प हमारी।
विविध कुसुम रचना रचि पचि कै, अपनै हाथ सँवारी॥
कहत 'सूर' उर तप्यौ भोर भयौ, हम वैठी रखवारी॥ २४८६ ॥

राग भैरव ॥ ३१०५ ॥

ज्वाव नही पिय आवई, क्यौ कहाँ ठगाने।
मै तवही की वकति हौ, कछु आजु भुलाने॥
हाँ नाहीं नहि कहत हौ, मेरी सौ काहै।
आए क्यौ चकित भए, मोकौ रिस दाहै॥
कहाँ रहे कासौ वन्यौ, तहँई पगु धारौ।
'सूर' स्याम गुन रावरे, हिरदय न विसारौ॥ २४८७ ॥

राग विलावल ॥ ३१०६ ॥

काहे कौं कहि गए आइहै, काहैं भूठी सौंहैं खाए।
ऐसे मैं नहि जाने तुमकौ, जे गुन करि तुम प्रगट दिखाए॥
भली करी यह दरसन दीन्हे, जनम जनम के ताप नसाए।
तव चितए हरि नैकु तिया तन, इतनैंहि सव अपराध छमाए॥
'सूरदास' सुदरी सयानी, हँसि लीन्हे पिय अंकम लाए॥ २४८८॥

राग विलावल ॥ ३१०७ ॥

नैन कोर हरि हेरि कै, प्यारी वस कीन्ही।
भाव कह्यौ आधीन कौ, ललिता लखि लीन्ही॥
तुरत गयौ रिस दूरि ह्वै, हँसि कठ लगाए।
भली करी मनभावते, ऐसैहुँ मैं पाए॥
भवन गई गहि वाँह लै, निसि जागे जाने।
अग शिथिल निसि स्रम भयौ, मनही मन भाने॥
अँग सुगंध मर्दन कियौ, तुरतहि अन्हवाए।
अपनै कर अँग पोछि कै, मनसाध पुराए॥
चीर अभूषन अग दै, वैठे गिरिधारी।
रुचि भोजन पिय कौं दियौ, सूरज वलिहारी॥ २४८९ ॥

राग कल्यान ॥ ३१०८ ॥

कियौ मनकाम नहि रही वाकी,
प्रिया रिस दूरि कै, दियौ रस पूरि कै, अनँगवल दूरि कै गोपजा की॥
नंदसुत लाडिले, प्रेम के चाँड़िले सौंह दै कहत है नारि आगैं।
तुम परम भावती प्रानहूँ तैं खरी, सुख नही लहत मैं तुमहि त्यागैं॥
तुमहिं धन, तुमहि तन, तुमहिं मनही वसौ, और तिय नही मो मनहिं भावै।
'सूर' प्रभु चतुर वर, चतुर नागरिनि के, चतुरई वचन कहि मन चुरावै॥
॥ २४९० ॥

राग भैरव ॥ ३१०९ ॥

यहै भाव सव जुवतिनि सौं।
ऐसेइ वचन कहत सव आगैं, भूलि रहति मन मोहन सौं॥
विनु देखै रिस भाव वढावति, मिलत आइ दै सौंहनि सौं।
मुख देखत दुख रहत नही तन, चितवति मुरि दोउ भौंहनि सौं॥
और तिया अँग चिह्न विराजत, रिस मनही मन छोहनि सौं।
'सूर' स्याम सव गोपकुमारी टरति नहीं कहुँ गोहनि सौं॥ २४९१॥

राग विलावल ॥ ३११० ॥

ललिता कौ मुख दै चले, अपनै निज धाम।
वीच मिली चंद्रावली, उन देखे स्याम॥
मोर मुकुट कछनी कछे, नटवर गोपाल।
रही वदन तनु हेरि कै, अति हित व्रजवाल॥
गली साँकरी, कोउ नही, आतुर मिली धाइ।
कहाँ कहाँ पिय रहत हौ, हमकौ विसराइ॥

स्याम कह्यौ हँसि वाम सौ, तुम्हरै निसि वास।
'सूर' हृदय की कलपना मुनि, भई हुलास॥ २४९२ ॥

राग आसावरी ॥ ३१११ ॥

स्याम वाम कौ मुख दै बोले, रैनि तुम्हारै आऊँगौ।
मातुपिता जिय त्रास धरत हौ, तऊ आइ मुख पाऊँगौ॥
तुम मिलिवे को साध, भुजा भरि, उर सौ कुच परसाऊंगौ।
नैन विसाल भाल उर पैठे, ते तुव हाथ कढ़ाऊँगौ॥
तुव तनु परसि काम दु.ख मेटौ, जीवन सफल कराऊँगौ।
सुनहु 'सूर' अधरनि रस अँचवौ, दुहुँ-मन-तृपा वुझाऊँगौ॥ २४९३ ॥

राग गूजरी ॥ ३११२ ॥

सुनि सुनि वचन नारि मुमुकानी।
गई सदन अति ह्वै उतावली, आनँद सहित लजानी॥
फूली फिरति कहति नहि काहूँ, मीन मिल्यौ जनु पानी।
वारवार स्याम रतिरस की, कही प्रगट करि वानी॥
वासर कल्प समान, न वीतत, कैसैहुँ रैनि तुलानी।
'सूर' देखि गति गत पतग की, अवधि जानि हरपानी॥ २४९४ ॥

राग कल्यान ॥ ३११३ ॥

राधिका गेह हरि-देह-वासी। और तिय घरनि घर तनुप्रकासी॥
ब्रह्म पूरन द्वितीय नही कोऊ। राधिका सवै, हरि सवै वोऊ॥
दीप सौं दीप जैसे उजारी। तैसै ही ब्रह्म घर घर विहारी॥
खडिता वचन हित यह उपाई। कवहुँ कहुँ जात, कहुँ नहि कन्हाई॥
जन्म कौ सुफल हरि यहै पावै। नारि रसबचन स्रवननि सुनावै॥
'सूर' प्रभु अनतही गमन कीन्हौ। तहाँ नहि गए जहँ वचन दीन्हौ॥
॥ २४९५ ॥

राग टोडी ॥ ३११४ ॥

स्याम गए सुखमा कै धाम। देखत हरप भई मन वाम॥
आतुर मंदिर गए समाइ। प्यारी प्रेम उठी भहराइ॥
स्याम भामिनी परम उदार। कोक-कला-रस करति विचार॥
वोलत पिय, नहि आवति पास। गदगद वानी कहति उदास॥
धाइ जाइ पति अकम लाइ। हा हा कहि कहि लेत वलाइ॥
अति आतुर पति कै गति काम। कहा प्रकृति पाई यह वाम॥
वाहँ गहत कीन्हौ धनि मान। तव हरि कीन्हौ एक सयान॥
उन प्यारी चरननि सिर धारी। कामव्यथा जान्यौ सुकुमारी॥
अल्प हँसी, मुख हेरि लजानी। 'सूरज' प्रभु तिय मन की जानी॥
॥ २४९६ ॥

राग गुड मलार ॥ ३११५ ॥

स्याम कर भामिनी मुख सँवारयौ।
बसन तनु दूरि करि, सवल भुज अक भरि, कामरिस वस वाम निदरि धारयौ॥
अधर दसननि भरे, कठिन कुच उर लरे, परे सुख सेज मनु मुरछि दोऊ।
मनौ कुम्हिलाइ रहे मैन सौं मल्ल दोउ, कोकपरवीन घटि नहीं कोऊ॥

अंग विह्वल भए, नैन नैननि नए, लजित रति अंत तिय कंत भारी।
'सूर' धनि धन्य सुखमा-नारि-वस स्याम, जाम जुग भई पति तैं न न्यारी॥
॥ २४९७ ॥

राग विहागरौ ॥ ३११६ ॥

चंद्रावली स्याममग जोवति।
कवहुँ सेज कर भारि सँवारति, कवहुँ मलयरज भोवति॥
कवहुँ नैन अलसात जानिकै, जल लै पुनि पुनि धोवति।
कवहुँ भवन, कवहूँ आँगन ह्वै, ऐसैं रैनि विगोवति॥
कवहुँक विरह जरति अति वयकुल, आकुलता मन मोवति।
'सूर' स्याम वहु रवनिरवन पिय, यह कहि कहि गुन तोवति॥ २४९८ ॥

राग ललित ॥ ३११७ ॥

ऐसैंहि ऐसैं रैनि विहानी।
चंद्र मलीन चिरैया वोली, सुनी काग की वानी॥
वै लुब्धे अनतहि काहू कै मन की आस भुलानी।
कपटी कुटिल कूर कह जानै, स्याम नाम जिय आनी॥
कोकिल स्याम, स्याम अलि देखौ, स्याम रंग है पानी।
स्याम जलद ,अहि स्याम कहावत, 'सूर' स्याम सोइ वानी॥ २४९९ ॥

राग गुडमलार ॥ ३११८ ॥

वाम सँग स्याम त्रय जाम जागे।
कोक-विद्या-निपुन, सकल गुन मैं सँपन, सुरतसंग्राम जुरि नहीं भागे॥
अग आलस भरे, नैन निद्रा ढरे, नैकु सज्या परे निसा वीती।
'सूर' प्रभु नदसुत चले अकुलाइ कै, गए ता धाम रसकाम जीती॥
॥ २५०० ॥

राग विभास ॥ ३११९ ॥

चंद्रावलि धाम स्याम भोर भऐ आए।
इत रिस करि रही वाम, रैनि जागि चारि जाम, देख्यौ जो द्वार स्याम, ठाढे सुखदाए॥
मंदिर तैं रही निहारि, मनही मन देति गारि, ऐसे कपटी, ~ठोर, आए निसि वीते।
रिस नहीं सकी सम्हारि, वैठी चढ़ि द्वार वारि, ठाढे गिरिधारि निरखि, छवि नख सिख ही तैं॥
विनु गुन वनी हृदयमाल, ता विच नखछत रसाल, लोचन दोउ दरस लाल जिय सौ रिस वाढी।
जावक रँग लग्यौ भाल, वंदन भुज पर विसाल, पीक पलक अधर झलक वाम प्रीति गाढी॥
क्यौ आए कौन काज, नाना करि अग साज, उलटे भूपन सिंगार निरखत हौं जाने।
ताही कै जाहु स्याम, जाकै निसि वसे धाम, मेरै गृह कहा काम 'सूरदास' गाने॥
॥ २५०१ ॥

राग विलावल ॥ ३१२० ॥

तहँइ जाहु जहँ रैनि वसे हौ।
काहे कौं दाहन हौं आए, अँग अँग चिह्न लसे हौ॥

अरगज अंग, मरगजी माला, वसन सुगंध भरे हौ।
काजर अधर, कपोलनि वदन, लोचन अरुन धरे हौ।।
पलकनि पीक, मुकुर लै देखौ, ये कौनही करे हौ।
'सूरदास' प्रभु पीठि वलय गड़े, नागरि अंग भरे हौ।। २५०२ ।।

राग विलावल ।। ३१२१ ।।

तहँइ जाहु जह निसा वसे हो।
जानति हौ पिय चतुर सिरोमनि, नागरि-जागर-राग रसे हौ।।
घूमत हौ मनु प्रिया उरगिनी, नव-विलास-स्रम-सेज डसे हो।
काजर अधरनि प्रगट देखियत, नागवेलि रँग निपट लसे हौ।।
स्याम उरस्थल पर नखरेखा, मनहुँ गगन ससि उदित दिसे हौ।
लटपटि पाग महावर के रँग, मानिनि पग पर सीस घसे हौ।।
विगलित वसन, मरगजी माला, पीठि वलय के चिह्न लगे हौ।
'सूरदास' प्रभु प्रियावचन सुनि, नागर नगधर नैकु हँसे हौ।।२५०३।।

राग विलावल ।। ३१२२ ।।

तहँइ जाहु जहँ रैनि हुते।
काह दुराव करत मनमोहन, मिटे त्रिह्न नहि अंग जुते।।
विनही गुन उर हार विराजत, परम चतुर हिय लाइ सुते।
विथुरी अलक, अटपटे भूषन, काम कुटिल कुच विच जु गुते।।
दसनदाग, नखरेख वनी है, भामिनि भवन भलैं भुगुते।
'सूर' सुदेस अधर मधु फीके, लोचन अलस उनीद उते।। २५०४ ।।

राग विलावल ।। ३१२३ ।।

तहँइ जाहु जहँ रैनि गँवाई।
काहे को मुँह परसन आए, जानति हौ चतुराई।।
वाके गुन मन तै नहि टारत, वोलत नाही वैन।
या छवि पर मै तन मन वारौ, पीक विराजत नैन।।
भली करी यह दरस दिखायौ, तातै नैन सिराने।
'सूर' स्याम निसि कौ सुख लूटयौ, हमकौ मया विहाने।। २५०५ ।।

राग सुघराई ।। ३१२४ ।।

आए लाल ललित भेप किये।
पीक कपोल, अधर पर काजर, जावक भाल दिये।।
चदन खौरि मेटि अव आए, कुंकुम रंग हिये।
पोतावर कहँ डारि, कौन को, नोलांवरहि लिये।।
लालो दै, पीरी लै आए, देखत पुलक जिये।
'सूरदास' प्रभु नवल रसोले, वेऊ नवल त्रिये।। २५०६ ।।

राग सूही ।। ३१२५ ।।

जागे हौ जु रावरे ये नैना क्यौ न खोलौ।।
भए हौ तिया कै वस, जागे निसि सरवस, भोर भएँ उठि आए भूले कहा डोलौ।।
चंदन मिटाए तन, अतिही अलस मन, नागरी की पीक लीक लागी न कपोलौ।
पीतांवर भूलि आए, प्यारा जी कौ पट ल्याए, भोर भए उठे 'सूर' किये आए दौलौ।।
।। २५०७ ।।

राग बिलावल ॥ ३१२६ ॥

पीतांबर पट कहा भयौ।
नीलांबर ओढ़े ही आए, अति उहटही नयौ॥
तैसोइ अंग बसन रँग तैसोइ कहा कहौं यह सोभा।
तैसियै बनी मरगजी केसर, ता तिय के मन लोभा॥
एते पर क्यौं बोलत नाहीं, कहा गोइ से आए।
'सूर' स्याम यह अब मैं जानी, नागरि चित्त चुराए॥ २५०८ ॥

राग भैरव ॥ ३१२७ ॥

हा हा हो पिय बात कहौ।
आपु कछू जिय तरक गहत हौ, तौ तुम मोसौं मौन गहौ॥
कहा चूक हमको पिय लागी, रुसि रहे हौ काहे जू।
तबही तैं बैसेहि हौ ठाढ़े, मो तन कौं नहिं चाहे जू॥
अब हमकौं अपराध छमौंगे, कृपा करौ मुख बोलौ जू।
'सूर' स्याम अब तजौ निठुरई, गाँठि हृदय की खोलौ जू॥ २५०९ ॥

राग बिलावल ॥ ३१२८ ॥

रूसे हौ पिय रूसे हौ।
उत्तर को उत्तर न देत तुम, हित तैं हीन कछू से हौ॥
वह चितवनि न होइ नैननि की बैननि हूँ उत हूँसे हौ।
वह मुख कमल बिकास नहीं, रति नायक सिसिर बिदूने हौ॥
की छुटि गई संपदा कर तै, की ठग ठगे कछू से हौ।
मेरैं जान 'सूर' प्रभु साँचे, मदन चोर मिलि मूसे हौ॥ २५१० ॥

राग बिलावल ॥ ३१२९ ॥

मदन चोर सौं जानि मुसायौ।
अपनी लाली खोइ, पीक की लाली पलकनि पायौ॥
ह्याँ तै गए चतुरई लीन्हे, सो सब उनहिं छपायौ।
आलस अबल जम्हात अंग, ऐंड़ात गात दरसायौ॥
कंचन खोइ काँच लै आए, बिटनौ भलौ फबायौ।
'सूर' कहूँ पर घर मन माहीं, जैसै हाल करायौ॥ २५११ ॥

राग काफी ॥ ३१३० ॥

लाल। उनींदे लोइननि, आलस भरि आए।
अरुझि काम की बेलि, सौं कौनै बिरमाए॥
सिथिल पाग दस्तार की, जावक रँग भीने।
पाइ परे, अपबस करे, तब सरबस दीने॥
लाली मेरे, लाल की, सब ही तन ढीले।
लाली लै लालन गए, आए मुख पीले॥
बिनु गुन माल हियैं लगे, पिय प्रीति निसानी।
सखि रसाल हमकौं दई, तुम देहु बिरानी॥
पग डगमग इत कौं, धरौ उत कौं दृग धाए।
हम अंतर अंतर बसै, पिय मो मन भाए॥

उलटि तहाँ पग धारियै, जासौं मन मान्यौ।
छपद कंज तजि वेलि सौ, लटि प्रेम न मान्यौ॥
तव हँसि वोले स्याम जू, तुम तै को प्यारी।
तुम विनु कल मोकौ नही, अतिही सुखकारी॥
वचन चतुरई छाँडियै, कहँ तै पढ़ि आए।
'सूर' स्याम गुन रासि हौ नीकै प्रगटाए॥ २५१२ ॥

राग सुघराई ॥ ३१३१ ॥

आए (लाल) जामिनि जागे भोर।
नील कलेवर, कोमल उर पर, गड़ि गए, कुच जु कठोर॥
निसि वसि रहे मानिनी कै गृह, अव आए इहि ओर।
'सूरदास' प्रभु वचन वनावत, चोरत हौ मन मोर॥ २५१३ ॥

राग विभास ॥ ३१३२ ॥

मै जानी जिय जहँ रति मानी।
तुम आए हौ लालन नेरै, जव चिरियाँ चुचुहानी॥
मुख की वात कहा कहौ ठानी, वातनि ही पहिचानी।
एते पर अँखिया रससानी, अरु पगिया लपटानी॥
भलहि जावकरंग वनानी, अधरहि अजन जानी।
विनुगुनवनी माल, सव अगनि उलटी सकल निसनी॥
धनि त्रिय तुमकौ जो सुखदानी, जागत रैनि विहानी।
'सूरदास' प्रभु गुननिधान हौ, अतर की सव जानी॥ २५१४ ॥

राग विभास ॥ ३१३३ ॥

मै जानी पिय वात तुम्हारी।
भोर भए मेरे गृह आए ऐसे भोरे भारी॥
ह्याँ आए मुख परसन मेरौ हृदय टरति नही प्यारी।
कपट चतुरई दूरि करो जू अपजस लेतऽस गारी॥
कहा साँच मै खोवत कर तै, झूठै कहा फवावत!
'सूर' स्याम नागर नागरि वह हम तुम्हरै मन आवत॥ २५१५ ॥

राग काफी ॥ ३१३४ ॥

रैनि रीझ की वात कह्यौ।
काहे कौ सकुचत मनमोहन, ठाढे क्यो न रहौ॥
पीतांवर कह भयौ तुम्हारौ, कौधौ न्नियौ गहौ।
नीलावर पहिरावनि पाई, सन्मुख क्यौ न चहौ॥
तव हँसि चले स्याम मंदिर तन, कछु जिय लाज गहौ।
'सूर' स्याम ह्वाँई अव्र रहियै, अति पुनीत तुन हौ॥ २५१६ ॥

राग विलावल ॥ ३१३५ ॥

तुम रीझे की उनहिं रिझाए।
हा हा पिय यह प्रगट सुनावौ, कोटिक सोह दिवाए॥
जावक भाल चिह्न, मै जान्यौ, हठ करि पाइ लगाए।
नैननि पीक मया उन कीन्ही, अंजन अधरनि लाए॥

विनुगुन माल मिली कहँ तुमकौ, कंकन पीठि दिखावहु।
'सूर' स्याम हम तौ यौं जानति, तुमहूँ कहि न सुनावहु॥ २५१७ ॥

राग विलावल ॥ ३१३६ ॥

माधौ नीकी विधि सौं आए।
नखरेखा उर मंडित यौं, मनु द्वितीया चंद उगाए॥
विगलित वसन, धरत पग डगमग, किहिं यह चाल चलाए।
निसा आन कैं बसे साँवरे, भोर इहाँ उठि धाए॥
रसवस अनत रहे 'सूरज' प्रभु तउ मेरैं मन भाए।
पाउँ धारियै वामधाम जहँ, चारो जाम गँवाए॥ २५१८ ॥

राग विलावल ॥ ३१३७ ॥

आजु हरि पायौ है मुँह माँग्यौ।
जब तैं तुम सौं विचारचौ मनसिज, दै सिलवारचौ त्याग्यौ॥
कहुँ जावक कहुँ वने तँवोल रँग, कहुँ अँग सेंदुर दाग्यौ।
मानौ रन छूटे घायल कौ, जहँ तहँ स्रोनित लाग्यो॥
नख मनु चंद्र वान सजि कै झझकार उठचौ कर आग्यौ।
'सूरदास' मानिनि रन जीत्यौ, समर सकि नहिं भाग्यौ॥ २५१९ ॥

राग विलावल ॥ ३१३८ ॥

आजु हरि रैनि उनीदे आए।
अंजन अधर, ललाट महाउर, नैन तमोर खवाए!॥
विनु गुन माल विराजति उर पर, वंदन भाल लगाए!
मगन देह, सिर पाग लटपटी, भृकुटी चंदन लाए!
हृदय सुभग नखरेख विराजति, कंकन पीठि वनाए!
'सूरदास' प्रभु यहै अचंभौ तीनि तिलक कहँ पाए॥ २५२० ॥

राग विलावल ॥ ३१३९ ॥

आजु हरि आलस रंग भरे।
कवहुँक वाहँ जोरि ऐंड़ावत, कवहुँ जम्हात खरे॥
वैठोगे की पाउ धारियैं, देखत नैन सिराने।
साँझ आइ इक दरसन दीन्हौ, की अव होत विहाने॥
कव कै द्वार भए पिय ठाढ़े, भोरे वड़े कन्हाई।
'सूर' स्याम ह्वाँ सुरति करति वह, ह्याँ तुम भेर लगाई॥ २५२१ ॥

राग विलावल ॥ ३१४० ॥

सौंह करन कौ भोरही, तुम मेरैं आए।
रैनि करत सुख अनतही, ताकैं मन भाए॥
अँग अँग भूपन और से, माँगे कहुँ पाए।
देखि थकित इहिं रूप कौ, लोचन अरुनाए॥
पाग लटपटी सोहई, जावक रँग लाए।
मान कियौ उहिं मानिनी, धनि पाइ पराए॥
यह चतुराई कहँ पढी, उनही समुझाए।
'सूरदास' प्रभु साँचिलै, उपमा कवि गाए॥ २५२२ ॥

राग गौरी ॥ ३१४१ ॥

तुमकौ कमलनयन कवि गावत।
वदन कमल उपमा यह साँची., ता गुन कौ प्रगटावत॥
सुदर कर कमलनि की सोभा, चरन कमल कहवावत।
और अग कहि कहा वखानौ, इतनहि कौ गुन गावत॥
स्याम नाम अद्भुत यह बानी, स्रवन सुनत सुख पावत।
'सूरदास' प्रभु ग्वाल सँघाती, जानी जाति जनावत॥ २५२३ ॥

राग बिलावल ॥ ३१४२ ॥

तुम न्याय कहावत कमल नैन।
कमल चरन कर, कमल वदन छवि अरु जु सुनावत मधुर वैन॥
प्रात प्रगट रति रविहिं जनावत, हुलसत आवत अंक दैन।
निसि दै द्वार कपाट सदल, वधुमधुपिनि प्यावत परन चैन॥
मिलिवे माँझ उदास अनत चित, बसत सदा जल एक ऐन।
'सूर' कपट फल तवहिं पाइहौ, अपनी अरप जव दहै मैन॥ २५२४ ॥

राग भैरव ॥ ३१४३ ॥

धीर धरहु फल पावहुगे।
अपनेही मुख के पिय चाँडे, कबहूँ तौ बस आवहुगे॥
हम सौ कहत और की औरै इन बातनि मन भावहुगे।
कवहुँ राधिका मान करैगी, अंतर विरह जनावहुगे॥
तव चरित्र हमही देखैंगी, जैसैं नाच नचावहुगे।
'सूर' स्याम अति चतुर कहावत, चतुराई विसरावहुगे॥ २५२५ ॥

राग देव गंधार ॥ ३१४४ ॥

यह कहि प्यारी भवन गई।
रीझे स्याम देखि वा छवि पर, रिस मुख सुदरई॥
द्वार कपाट दियौ गाढे करि, कर आपनै वनाइ।
नैकु नहीं कहुँ संधि बचाई, पौढि रही तब जाइ॥
इहिं अतर, हरि अतरजामी, जो कछु करैं सु होइ।
जहाँ नारि मुख मूँदि पौढ़ि रही, तहाँ सग रहे सोइ॥
जो देखै ह्याँ सग विराजत, चली तिया झहराइ।
एक स्याम आँगनही देखे, इक गृह रहे समाइ॥
उत कौ वै अति विनय करत है, इत अकम भरि लीन्ही।
'सूर' स्याम मनहरनि कला वहु, मन हरि कै वस कीन्ही॥ २५२६ ॥

राग कल्यान ॥ ३१४५ ॥

तव नागरि रिस भूलि गई।
पुलकि अग अँगिया उर दरकी, अग अनग जई॥
अकम भरि पिय प्यारी लीन्ही, निसिमुख वासर दीन्ह।
मान छिडाय हुलास वढायौ, सुफल मनोरथ कीन्ह॥
तव निज धाम स्याम पगुधारे, तहाँ सहचरी आइ।
'सूरज' प्रभु रस भरी नागरी, देखि रही मन लाइ॥ २५२७ ॥

राग आसावरी ॥ ३१४६ ॥

चद्रावली हरप सौं बैठी, तहा सहचरी आई (हो)।
औरे वदन, और अँग सोभा, देखि रही चख लाई (हो)॥
कहा आजु अति हरपित बैठी कहा लूटि सी पाई (हो)।
क्यों अँग सिथिल, मरगजी, सारी, यह छवि कही न जाई (हो)॥
मोसों कहा दुराव करति है, कहा रही सिर नाई (हो)।
मैं जानी तोहि मिले 'सूर' प्रभु, जसुमति कुँवर कन्हाई (हो)॥ २५२८ ॥

राग आसावरी ॥ ३१४७ ॥

चद्रावली करति चतुराई, सुनत वचन मुख मूँदि रही।
ज्वाब नही कछु देति सखी कौं, हाँ, नाही कछुवै न कही॥
गूँगे गुर की दसा गई ह्वै, पूरन स्याम सुहाग भरी।
वहै ध्यान हरि कै अनुरागी, वह लीला चित तैं न टरी॥
तव वोली मोसौं कछु वूझति, कहा कहौं मुख वनै नही।
'सूर' स्याम जुवती-मन-मोहन, तिनके गुन नहिं परत कही॥ २५२९ ॥

राग विलावल ॥ ३१४८ ॥

हा हा कहि चद्रावलि मोसौं, हरि के गुन मैं हूँ सुनि लेहुँ।
स्रवननि मग सुनि हृदय प्रकासौं, पुनि पुनि री तोहि उत्तर देउँ॥
की तोहि मिले तीर जमुना, कै की तोहि मिले भवनही माँझ।
कहौ तोहि मेरैं गृह आए, मानौ अस्त होत रवि साँझ॥
काहु वाम कै धाम वसे निसि, भोर सदन गए मेरैं आइ।
'सूर' स्याम जो चरित उपायौ, कहन चहौं मुख कह्यौ न जाइ॥ २५३० ॥

राग गौरी ॥ ३१४९ ॥

अव तौ कहैं वनैगी माइ।
कहा स्याम अचरज सो कीन्हौं, कहत कह्यौ नहिं जाइ॥
कैसैं लाल अनत तैं आए, कैसैं तेरैं गेह।
कैसैं मान कियौ, क्यौं मिटि गयौ, कैसैं वढ्यौ सनेह॥
तव गदगद वानी मुख प्रगटी, सुनि सजनी दै कान।
'सूरज' प्रभु के चरित सुनाऊँ, जैसैं विसर्यौ मान॥ २५३१ ॥

राग गौरी ॥ ३१५० ॥

मैं हरि सौं हो मान कियौ री।
आवत देखि आन वनितारत द्वार कपाट दियौ री॥
अपनैं ही कर साँकर सारी, संधिहिं संधि सियौ री।
जौ देखौ तौ सेज सुमूरति, काँप्यौ रिसनि हियौ री॥
जव झुकि चली भवन तैं वाहिर, तव हठि लौटि लियौ री।
कहा कहौं कछु कहत न आवे, तहँ गोविंद वियौ री॥
विसरि गई सव रोप, हरप मन, पुनि फिरि मदन जियौ री।
'सूरदास' प्रभु अति रति नागर, छलि मुख अमृत पियौ री॥ २५३२ ॥

राग विलावल ॥ ३१५१ ॥

तवही तैं भयौ हरप हिये री।
सदन पैठि मन चोरि लियौ उन, ऐसे चरित किए री॥

अंग वाम-छवि-सेप देखि कै, रिस उपजी जिय भारी।
क्रोध गयौ उर आनँद उमग्यौ, मुख तनु दसा बिसारी॥
ऐसे चरित कौन कौं आवै, जे कीन्हे गिरिधारी।
'सूर' स्याम रति पति के नायक, सब लायक बनवारी॥ २५३३ ॥

राग भैरव ॥ ३१५२ ॥

नदनँदन सुखदायक है।
नैन सैन दै हरत नारि मन, काम कामतनु दायक है॥
कबहूँ रैनि बसत काहू कै, कबहुँ भोर उठि आवत है।
काहू कौ मन आपु चुरावत, काहू कै मन भावत है॥
काहू कै जागत सगरी निसि, काहूँ बिरह जगावत है।
सुनहु 'सूर' जोइ जोइ मन भावै, सोइ सोइ रँग उपजावत है॥ २५३४ ॥

राग बिलावल ॥ ३१५३ ॥

अनतहि रैनि रहे कहुँ स्याम। भोर भए आए निज धाम॥
नागरि सहज रही मन माँहि। नंदसुवन निसि अनत न जाहि॥
महर सदन की मेरै गेह। हिरदय है तिय यहै सनेह॥
आए स्याम रही मुख हेरि। मन मन करन लगी अवसेरि॥
रतिरस चिह्न नारि के जानि। 'सूर' हँसी राधा पहिचानि॥२५३५॥

राग रामकली ॥ ३१५४ ॥

आजु बने पिय रूप अगाध।
पर उपकार काज तनु धारयौ, पुरवत सब-मन-साध॥
धर्म नीति यह कहाँ पढी जू, हमहूँ बात सुनावहु।
कहौ कहाँ, काकौ सुख दीन्हौ, काहै न प्रगट बतावहु॥
धनि उपकार करत डोलत हौ, आजु बात यह जानी।
'सूर' स्याम गिरिधर गुन नागर, अंग निरखि पहिचानी॥ २५३६ ॥

राग गूजरी ॥ ३१५५ ॥

पिय छवि निरखि हँसति तिय भारी।
कहा महाउर पाग रँगाई. यह सोभा इक न्यारी॥
अरुन नैन अलसात देखियत, पलक पीक लपटानौ।
अधर दसन छत, बदन राजत, बंधुक पर अलि मानौ॥
हृदय रुचिर मोतिनि की माला, नखरेखा तिहिं तीर।
बिनु गुन माल 'सूर' के स्वामी, कुंकुम स्याम सरीर॥ २५३७ ॥

राग बिलावल ॥ ३१५६ ॥

धन्य आजु यह दरस दियौ।
धन्य धन्य जासौं अनुरागे, तब जान्यौ नहिं और बियौ॥
भले स्याम वह भली भावती, भले भली मिलि भली करी।
यह मेरै जिय अतिहि अचंभौ, तौ बिछुरत क्यौ एक घरी॥
जाहु तहीं, सुख दीन्हौ मोकौ, वै सुनिकै रिस पावँगी।
'सूर' स्याम अति चतुर कहावत, बहुरो मन न मिलावैगी॥२५३८॥

राग बिलावल ॥ ३१५७ ॥

क्यों आए उठि भोर इहाँ।
काहे कौं इतनौ सरमाने, रैनि रहे फिरि जाहु तहाँ ॥
हमकौ कहा इती गरुआई, उनही क्यों न सम्हारौ जू।
उन आए ह्याँ नाही जान्यौ, अजहूँ लौं पग धारौ जू ॥
हमहूँ बोलि उहाँई लीजौ, डर उनकौ हमहूँ कौं है।
'सूर' स्याम तिनही सुख दीजै, जो बिलसै सँग तुमकौ लै ॥ २५३९ ॥

राग रामकली ॥ ३१५८ ॥

उनही कौ मन राखै काम।
ह्याँ तुम जौ आए वा नाही, बात सुनत हौं नाही स्याम ॥
देखौ अंग-अंग-प्रति सोभा, मैं तौ भूली हौं इहिं रूप।
धनि पिय बने, बनी वेऊ है, एक एक तैं रूप अनूप ॥
सो छवि मोहिं दिखावन आए, माया करी बहुत हरि आजु।
'सूरदास' प्रभु रसिकसिरोमनि, वेउ रसकिनी बन्यौ समाजु ॥२५४०॥

राग बिहागरौ ॥ ३१५९ ॥

रसिक रसिकई जानि परी।
नैननि तैं अब न्यारै हूजै, तबही तैं अति रिसनि मरी ॥
तुम जोबन अरु मो नवजोबनि, एते पर सब गुननि भरी।
लाज नहीं मेरै गृह आवत, जाहु जाहु करि तिय भहरी ॥
अंजन अधर, कपोलनि बदन, पीक पलक, छवि देखि डरी।
'सूर' स्याम रतिचिन्ह दिखावन, मेरै आए भलै हरी ॥२५४१॥

राग धनाश्री ॥ ३१६० ॥

स्याम पिया सन्मुख नहिं जोवत।
कबहुँ नैन की कोर निहारत, कबहुँ बदन पुनि गोवत ॥
मन मन हँसत त्रसत तनु परगट, सुनत भावती बात।
खंडित बचन सुनत प्यारी के, पुलक होत सब गात ॥
यह सुख 'सूरदास' कछु जानै, प्रभु अपने को भाव।
श्रीराधा रिस करति, निरखि मुख तिहिं छवि पर ललचाव ॥ २५४२ ॥

राग धनाश्री ॥ ३१६१ ॥

पिय कौ सुख प्यारी नहिं जानै।
जोइ आवत सोइ सोइ कहि डारति, जाहु जाहु तुम गानै ॥
काँहे कौं मोहि डाहन आए, रैनि देत सुख वाकौं।
भली नवेली नोखी पाई, जो जाकौ सो ताकौं ॥
चदन, बदन, तिय-अँग-कुकुम, सेप लिये ह्याँ आए।
'सूर' स्याम यह तुमहिं बड़ाई, औरनि को सरमाए ॥२५४३॥

राग बिलावल ॥ ३१६२ ॥

औरनि कौ छवि कहा दिखावत।
तुमही कौं भावति मन मोहन, हम देखत रिस पावत ॥
आपुन कौ भइ बड़ी प्रतिष्ठा, जावक भाल लगाऐ।
याकौ अरथ नही कोउ जानत, मारत सबनि लजाऐ ॥

पिय निधरक, हम अति सकुचति है, दर्पन लै मुख देखौ।
'सूर' स्याम क्यौं वोलत नाही, क्यौं हम तन नहि पेखौ॥ २५४४ ॥

राग गौरी ॥ ३१६३ ॥

स्याम हँसे प्यारी मुख हेरौ।
रिसनि उठी झहराइ, कह्यौ यह, वस कीन्हौ मन मेरौ॥
जाइ हँसौ पिय ताही आगै, मैं रीझी अति भारी।
ऐसै हँसि हँसि ताहि रिझावहु, देहु कहा अव गारी॥
होत अवार गवन अव कीजै, धरनी कहा निहारत।
'सूर' स्याम मन की मैं जानी, ताके गुनहि विचारत॥ २५४५ ॥

राग देवगंधार ॥ ३१६४ ॥

मैं जानी पिय मन की वात।
धरती पग नख कहा करोवत, अव सीखे ये घात॥
तुम जानत जिय हमहिं सयाने, अरु सव लोग अयाने।
रैनि वसत कहूँ, भोर हमारै आवत नही लजाने॥
यह चतुराई पढी ताहि पै, सो गुन हम तै न्यारौ।
धनि धनि 'सूरदास' के स्वामी, काहे हम न विसारौ॥ २५४६ ॥

राग देवगंधार ॥ ३१६५ ॥

मै जाने हौ जू नीकै तुम्है ए हो प्यारे लालन, तही सिधारिए जहाँ लाग्यौ नयौ नेहरा।
मुख की भलाई तुम मोहू सौ करत आए, जानी जी की, तुम विनु मूमो वाकौ गेहरा॥
निसि के सुख कौ कहैं देत है अधर नैन, उर नख लागे अति छवि भई देहरा।
वेगि सवारो पावँ धारो 'सूर' स्वामी नतु, भीजैगो पियरो पट आवत है मेहरा॥
॥ २५४७ ॥

राग गौड़ मलार ॥ ३१६६ ॥

ठाढे रहौ आँगनही हो पिय, जौ लौ मेह न नख सिख भीजौ।
चीर उतारि वस्त्र नव पहिरौ, गेह देहरी पग तव दीजौ॥
कहिऐ वात रैनि की साँची, ता पाछै सोहे तुम कीजौ।
'सूर' स्याम तुम हौ वहु नायक, देह सुधारि मोहि पुनि छीजौ॥२५४८॥

राग मलार ॥ ३१६७ ॥

मोहू सौ निठुराई ठानी हो मोहन प्यारे, काहे कौ आवन कह्यौ साचे हौ जू साँचे।
प्रीति के वचन वाँचे, विरह अनल आँचे, आपनी गरज तुम एक पायँ नाँचे॥
भलै हौ जू जाने लाल, अरगजै भीनी माल, केसरि तिलक भाल, मैन मंत्र काँचे।
निसि के चिह्नानि चीन्हे, 'सूर' स्याम रति भीने, ताही कै सिधारौ पिय, जाकै रग राँचे॥
॥ २५४९ ॥

राग मालकोस ॥ ३१६८ ॥

तुम जनि सकुचौ प्यारे लालन, रति मानी ताही कै रही अव।
मैं इतनेहि भली मान्यौ प्रीतम, आगन पग धारे आपुन जव॥
नैन तृप्त भए दरसन देखत, स्रवन तृप्त भए वचन सुने तव।
'सूरदास' प्रभु चरन छुए कहौ रोम रोम पुलकित अँग अँग सव॥
॥ २५५० ॥

राग कान्हरौ ॥ ३१६९ ॥

नैन चपलता कहाँ गँवाई।
मोसौं कहा दुरावत नागर, नागरि रैनि जगाई॥
ताही कैं रँग अरुन भए हैं, धनि यह सुंदरताई।
मनौ अरुन अंबुज पर बैठे, मत्त भृंग रस पाई॥
उड़ि न सकत ऐसे मतवारे, लागत पलक जम्हाई।
सुनहु 'सूर' यह अंग माधुरी, आलस भरे कन्हाई॥ २५५१ ॥

राग बिलावल ॥ ३१७० ॥

नैन चचलता कीन्हे कहा, भीने रँग कौन के हौ स्याम हमहूँ सौं बात ही दुरावत।
औरनि के बदन देखिबे कौ है नेम लियौ, ताकौं पलकनि राखे भार नए आवत॥
पुष्प-गंध-लोभ भौंर, उड़ि न सकत फिरि, फिरि बैठत ता समीप कोकिल गति गावत।
'सूरदास' पिय प्यारी, रस बस कीन्हे भारी, मुख की मिलाइ तुम हमहि बतावत॥
॥ २५५२ ॥

राग कान्हरौ ॥ ३१७१ ॥

जाकैं रस रैनि आजु जागे हौ लाल जाइ।
जावक तिलक भाल, छिए हौ जू नंदलाल, बिन गुन बनी माल, कहौ बातैं बनाइ॥
अधर अंजन दाग, मिट्यौ है पीक पराग, और मेटि आए लाल बदन की ललाई।
अंग अंग सिथिलित भए प्रेम पैंड़ें परि, 'सूर' के स्वामी की मिटि गई चंचलताई॥
॥ २५५३ ॥

राग कान्हरौ ॥ ३१७२ ॥

रस भरि आए लाल बातैं कहौ अटपटी।
अति अलसान जँम्हात, प्रिय प्रिय प्रगट प्रलाप छूटति नहिं अंतर की गटी॥
यह चतुराई अधिकाई कहाँ पाई स्याम, बाके प्रेम की गढ़ी पढ़े हौ तुम पटी।
'सूरदास' गिरिधर बहुनायक जानी मैं तुम्हैं तन मन नैन लग्यौ चटपटी॥
॥ २५५४ ॥

राग ईमन ॥ ३१७३ ॥

डोलत महल महल इहिं टहलनि, जानति तुम बहु नायक पीय।
आए सुरति किएँ, टाटक रस, लिएँ सकसकी धकधकी हीय॥
बंकन छूटे पाग के बंधन, लटपट पेंच अटपटे दीय।
'सूरदास' प्रभु हौ बहुनायक, गेरै पग धारे भली कीय॥२५५५॥

राग ईमन ॥ ३१७४ ॥

महल महल अब डोलत हौ।
इहै काम तैं धाम बिगार्यौ, बूझैं काहैं न बोलत हौ॥
बहुनायकी आजु मैं जानी, कहा चतुरई तोलत हौ।
निसि रस कियौ, भोर पुनि अँटके, सिथिल अंग सब डोलत हौ॥
टटके चिह्न पाछिले न्यारे, धकधकात उर जोलत हौ।
जाहु चले गुन प्रगट 'सूर' प्रभु, कहा चतुरई छोलत हौ॥ २५५६ ॥

राग ईमन ॥ ३१७५ ॥

अँग अँग रँग भरि आए हौ।
रँग भरी पाग, भाल रँग सोभा, रँग रँग नैन पगाए हौ॥

रँग कपोल, रँग पलकनि सोभा, अधरनि स्याम रँगाए हो।
नख-छत-रंग, चारु उर रेखा, रति रँग रैनि जगाए हो॥
कंकन वलय पीठि गड़ि लागे, उर उरछाप वनाए हो।
'सूर' स्याम वामारँग पागे, अनुरागे मन भाए हो॥ २५५७ ॥

राग विलावल ॥ ३१७६ ॥

वार वार मैं कहति हौ, पिय तहाँ सिधारौ।
आए हौ मन हरन कौ हरि नाम तिहारौ॥
भली वनी छवि आजु की, क्यौं लेत जम्हाई।
रैनि आजु सोए नहीं, रति काम जगाई॥
वह रति तुम रतिनाथ हौ, हम कैसैं भावैं।
'सूर' स्याम ते वहुगुनी, जे तुमहि रिझावैं॥ २५५८ ॥

राग सोरठ ॥ ३१७७ ॥

सकुचत स्याम कहत मृदु वानी।
किनि देख्यौ, किनि कही वात यह, मो हजूर कहै आनी॥
यातैं वचन वोलि नहिं आवत, रिस पावत हौ भारी।
जोरि कहति वातैं तुम आगैं, खोटी व्रज की नारी॥
तुमहूँ तैं ऐसी को प्यारी, सौंह करी जो मानी।
सुनहु 'सूर' जो वूझति मोकौं, मैं काहुँ न पहिचानी॥ २५५९ ॥

राग भैरव ॥ ३१७८ ॥

विनु वोले पिय रहियै जू।
नाही कही गहै कह ताकौं, अव ऐसी जनि दहियै जू॥
मौन रहौ तौ कछू गँवावहु, इन वातनि कछु लहियै जू?
सौंह कहा करिहौ सुनि पावैं, सनमुख ह्वै धौं कहियै जू॥
एते पर वकवादनि लागे, कैसैं रिस मन सहियै जू।
'सूरदास' प्रभु रसिक सिरोमनि, रसिकहिं सव गुन चहियै जू॥ २५६० ॥

राग विलावल ॥ ३१७९ ॥

आई गई व्रजनारि तहाँ।
सौंह करत पिय प्यारी आगैं, आनँद विरह महाँ॥
प्यारी हँसी देखि सखियन की, अंतर रिस है भारी।
नैन सैन दै अंग दिखावति, पिय सोभा अधिकारी॥
स्याम रहे मुख मूँदि सकुचि कै, जुवति परस्पर हेरैं।
'सूरदास' प्रभु सँग अनूप छवि, कहँ पायी किहि केरैं॥ २५६१ ॥

राग विलावल ॥ ३१८० ॥

तव नागरी कहति सखियनि सौं एते पर ए सौंह करैं!
दरसन प्रात देत है हमकौं, निसि औरनि के चित्त हरैं।
तुमही देखि लेहु अँग वानक, एते पर क्यौं सही परे॥
कृपा करैं अनतहीं सिधारैं, मो आगे तैं अव जु टरैं।
यह छवि देखि सनाथ भई, मैं अव ताही पर जाइ ढरे॥
'सूर' स्याम रिस देखि चले डरि, कहौ सखी अव ह्याँ न फिरैं॥ २५६२ ॥

राग बिहागरौ ॥ ३१८१ ॥

स्याम गए तिय मान कियौ।
देखौ नाहिं दोष तुम देती उन मन चोरि लियौ॥
जाहु सदन तुमहूँ सब अपनैं, मैं बैठी हौं धाम।
जान देहु अब ह्याँ जनि आवैं, ऐसेनि कौ कह काम॥
अनतहिं बसत, अनतही डोलत, आवत किरनि प्रकास।
सुनहु 'सूर' पुनि तौ कहि आवैं, तनगि गए ता पास॥ २५६३ ॥

राग बिलावल ॥ ३१८२ ॥ राधा जी का मध्यम मान।

यह कहि कै तिय धाम गई।
रिसनि भरी नख सिख लौं प्यारी, जोबन-गर्व-भई॥
सखी चली गृह देखि दसा यह, हठ करि बैठी जाइ।
बोलति नही मान करि हरि सौं हरि अंतर रहे आइ॥
इहिं अंतर जुवती सब आई जहाँ स्याम घर द्वारैं।
प्रिया मान करि बैठि रही है, रिस करि क्रोध तुम्हारैं॥
तुम आवत अतिही झहरानी, कहा करी चतुराई।
सुनत 'सूर' यह बात चकित पिय, अतिहिं गए मुरझाई॥ २५६४ ॥

राग बिहागरौ ॥ ३१८३ ॥

बहुरि नागरी मान कियौ।
लोचन भरि भरि ढारि दिये दोउ, अति तनु बिरह हियौ॥
देखत ही देखत भए व्याकुल, तिय कारन अकुलाने।
वैं गुन करत होत अब काँचे, कहियत परम सयाने॥
यह सुनि कै दूती हरि पठई, देखि जाइ अनुमान।
'सूर' स्याम यह कहि तिहिं पठई तुरत तजै जिहिं मान॥ २५६५ ॥

राग केदारौ ॥ ३१८४ ॥

दूती दई स्याम पठाइ।
और कछु मुख कहत बानी, तहाँ बैठी जाइ॥
प्रिया मन परवाह नाही, कोटि आवैं जाहिं।
सौति साल सलाइ बैठी, डुलति इत उत नाहिं॥
भीति बिनु कह चित्र रेखैं, रही दूती हेरि।
'सूर' प्रभु आतुर पटाई, करति मन अवसेरि॥ २५६६ ॥

राग कान्हरौ ॥ ३१८५ ॥

दूती मन अवसेरि करै।
स्याम मनावन मोहिं पठाई, वह कतहूँ चितवै, न टरै॥
तब कहि उठी मान अति कीन्हौ, बहुत करी हरि, कहा करौं।
ऐसैं बिनु वैं नही जानिहै, अब कबहूँ जनि उनहिं ढरौं॥
वैं आवति जमुना तट तैं व्रज, सखी एक यह बात कही।
सुनहु 'सूर' मैं रहि न सकी गृह, कहा स्याम की प्रकृत सही॥ २५६७ ॥

राग बिहागरौ ॥ ३१८६ ॥

अब द्वारे तैं टरत न स्याम।
अब पर घर की सौंह करत है भूलि करौं नहिं ऐसे काम॥

अब तू मान तजै जनि उनसौं, यह कहन आई तेरै धाम।
अब समुझी औरौ समुझैवे? हम जब कहै करै तब ताम॥
अब मोकौं यह जानि परी है, काहू कै न बसै कहुँ जाम।
'सूरदास' दूती की बानी सुनति, धरति मन ही मन काम॥ २५६८ ॥

राग सूही ॥ ३१८७ ॥
जब दूती यह बचन कह्यौ।
तब जाने हरि द्वारैं ठाढे, उर उमँग्यौ रिस नही रह्यौ॥
काहे कौ हरि द्वार खरे है किनि राख्यौ कहि जीभ गरै।
मौन गहौ मै ही कहि आऊँ, तू काहे कौ रिसनि जरै॥
चतुर दूतिका जानि लई जिय, अब बोली गयौ मान सबै।
'सूर' स्याम पै आतुर आई कहति आन की आन फबै॥ २५६९ ॥

राग सारंग ॥ ३१८८ ॥
नैकु निकुंज कृपा करि आइयै।
अति रिस कृस ह्वै रही किसोरी, करि मनुहारि मनाइयै॥
कर कपोल अतर नहिं पावत अति उसास तन ताइयै।
छूटे चिहुर वदन कुम्हिलानौ, सुहथ सँवारि वनाइयै॥
इतनौ कहा गाँठि को लागत, जौ बातनि सुख पाइयै।
रूठेंहि आदर देत सयाने, यहै 'सूर' जस गाइयै॥ २५७० ॥

राग केदारौ ॥ ३१८९ ॥
काहि मनाऊँ स्यामलाल जू बाल न नैंकहुँ दीठि।
मुखहूँ जो बोलै तो लहिए, मन की ऐस तुम्हारी हीठि॥
अपनी सी मैं वहुत कही पै बारू बूँद कहा करे बसीठि।
'सूरदास' प्रभु आपुहि जैयै जैसी बयारि तैसी दीजै पीठि॥२५७१॥

राग केदारौ ॥ ३१९० ॥
लालन आजु तुम्हारी प्यारी, कोटि मनायैहूँ नहिं मानति।
बूझि न परति जानि का बैठी, अति रिस किए तब औगुन गानति॥
भरि भरि नैन लेति, नहिं ढारति, अधर फरकि करि भृकुटी तानति।
'सूरदास' प्रभु रसिक-सिरोमनि, आपुहिं चलियै तौ भली बानति॥
॥ २५७२ ॥

राग पूरबी ॥ ३१९१ ॥
कैसै कै ल्याऊँ हौ तौ मरम न पाऊँ स्याम, वाकौ मान गाढौ आजु मनौ गढवै भयौ।
कंचन गिरि प्रगट तनु तामैं कोट रच्यो, वसन अचल ड्योढी सघन ओट दयौ॥
बैन पौरिया न खोले मुख पौरि भौह धनु, नैन रिस बान नाही जाइ निकट गयो।
'सूरदास' प्रभु तुम चतुर कहावत हौ, आपुहिं चलीजै जौ पै तुमहूँ जाइ लयौ॥
॥ २५७३ ॥

राग केदारौ ॥ ३१९२ ॥
बैठी मान्निनी गहि मौन।
मनौ सिद्ध समाधि सेवत सुरनि साधे पौन॥

अचल आसन, पलक तारी, गुफा घूँघट भौन।
रोपही को ध्यान धारैं टेक टारैं कौन॥
अबहिं जाइ मनाइ लीजै, अवसि कीजै गौन।
'सूर' के प्रभु जाइ देखौ, चित्त चौधी जौन॥ २५७४ ॥

राग नट ॥ ३१९३ ॥

विहरति मानसर सुकुमारि।
कैसैहूँ निकसति नही, हौ रही करि मनुहारि॥
मौन पारि अपार रचि, अवगाहि आँसु जु वारि।
प्रगट ह्वैवै डरति नाहीं थकित प्रगट पुकारि॥
सूस स्वास, सरोज लोचन डुलनि, जनु जलचारि।
काम ग्राहक प्रान चाहक, तरति तहँ डर टारि॥
चिकुर सेवर निकर अरुझति, सकति नहि निरुवारि।
नील अंचल पत्र पद्मिनि, उरज जलज निहारि॥
रह्यौ रचि रुचि मान, मानिनि-मन-मराल मुरारि।
'सूर' आपुन आनियै, गहि वाहँ नारि निकारि॥ २५७५ ॥

राग विहागरौ ॥ ३१९४ ॥

यह सुनि स्याम विरह भरे।
कहुँ मुकुट, कहुँ कटि पितांवर, मुरछि धरनि परे॥
जुवति भरि अँकवारि लीन्हौ, है कहा गिरिधारि।
आपुही चलि वाहँ गहियै, अंक लीजै नारि॥
अतिहि व्याकुल होत काहै, धरौ धीरज स्याम।
'सूर' प्रभु तुम वडे नागर, विवस कीन्हे काम॥ २५७६ ॥

राग रामकली ॥ ३१९५ ॥

स्यामहि धीरज दै पुनि आई।
वानी यहै प्रकासति मुख सौं, व्याकुल वड़े कन्हाई॥
वारंवार नैन दोउ ढारत, परे मदन जंजाल।
धरनि रहे मुरझाइ विलोके, कहा कहौ वेहाल॥
वैठी आइ अनमनी ह्वै कै, वार वार पछितानी।
'सूर' स्याम मिलि कै मुख देहि न, जौ तू वड़ी सयानी॥ २५७७ ॥

राग रामकली ॥ ३१९६ ॥

तुही पियभावति नाहिन आन।
निसि दिन मन मन करत मनोरथ रस वस केलि निदान॥
ध्यान विलास दरस सभ्रम मिलि मानत मानिनि मान।
अनुनय करत विवस वोलत है, दै परिरंभन दान॥
प्रथम समागम तै नाना विधि, चरित तिहारे गान।
'सूर' स्याम कुहवर अतर सुनि, सुजस आपने कान॥ २५७८ ॥

राग सारंग ॥ ३१९७ ॥

स्यामा तू अति स्यामहि भावै।
वैठत उठत, चलत गौ चारत, तेरी लीला गावै॥

पीत वरन लखि पीत वसन उर, पीत धातु अँग लावै।
चंद्रानन सुनि, मोर चद्रिका, माथै मकुट वनावै।।
अति अनुराग सैन संभ्रम मिलि, सग परम सुख पावै।
विछरत तोहिं क्वासि राधा कहि, कुंजकुंज प्रति धावै।।
तेरौ चित्र लिखै, अरु निरखै, वासर विरह नसावै।
'सूरदास' रस-रासि-रसिक सौ, अतर क्यौ करि आवै।। २५७९ ।।

राग विहागरौ ।। ३१९८ ।।

मन मन पछितायौ रहि जैहे।
सुनि सुदरि यह समौ गए तै पुनि न सूल सहि जैहे।।
मानहुँ मैंनमजीठ प्रेमरँग तैसैही गहि जैहै।
काम हरप हरै हरि अंवर देखत ही वहि जैहे।।
इते भेद की वात सखी री कत कोऊ कहि जैहै।
वरत भवन खनि कूप 'सूर' त्यौ मदन अगिनि दहि जैहे।। २५८० ।।

राग केदारौ ।। ३१९९ ।।

नैकु नही भावत न्यारे री, नैन सुहावन तेरे।
पलक ओट तै प्रान जात है, चख चितवनि पर चेरे।।
कमल, कुरंग, मधुप उपमा नहिं, चंचल रहत चितेरे।
'सूरदास' प्रभु की तुम जीवन, कतहिं करति तिय फेरे।। २५८१ ।।

राग आसारी ।। ३२०० ।।

वनत नहि राधे मान किये।
नंदलाल आरति करि पठई, सौह करति हौ सीस छिये।।
जाके पद कमला कर लीन्हे, मन-वच-क्रम चित उन्हैं दिये।
ता प्रभु की पठई आई हौ तू जु गर्व की मोट लिए।।
हरि मुख कमल सच्यौ रस, सजनी अति आनंद पियूष पिये।
'सूरजदास' सकल सुख हरि सँग, कृपा विमुख का कल्प जिये।। २५८२ ।।

राग नट ।। ३२०१ ।।

पिय की वात सुनहि किन प्यारी।
जो कछु भयौ सो कहिहौ तुम सन, होहु सखिन तै न्यारी।।
तव जु वियोग सोक अति उपज्यौ, काम देह तिन जारी।
भेपज अधर सुधा है तुम पै, चलि दै विथा निवारी।।
कठिन परे जु कुसल रिपु पूछै, मन की कहा विचारी।
'सूरदास' प्रभ हिरदय तेरे, मानहु सार पुछारी।। २५८३ ।।

राग सारंग ।। ३२०२ ।।

जव जव तेरी सुरति करत।
तव तव डवडवाइ दोउ लोचन, उमँगि भरत।।
जैसै मीन कमलदल कौ चलि अधिक अरत।
पलक कपाट न होत, तवहिं तै निकसि परत।।
आँसु परत ढरिढरि उर, मुक्ता मनहु झरत।
सहज गिरा वोलत न वनत हित हेरि हरत।।

राधा! नैन चकोर बिना मुख चंद्र जरत।
'सूर' स्याम तव दरस बिना नहिं धीर धरत॥ २५८४ ॥

राग सारंग ॥ ३२०३ ॥

चितै, चलि, ठिठुकि रहत।
तव पद चिह्न परसि रस बस, अध बचन कहत॥
किसलय कुसुम पराग अब पै पंत्र ग्रहत।
कंटक जनु भू कठिन जानियत कष्ट लहत॥
कमल कोस कोमल विभाग अनुराग बहत।
'सूरदास' सुंदर अति सीतल मृदु पैंड न सहत॥ २५८५ ॥

राग सारंग ॥ ३२०४ ॥

हरि तोहिं बारंबार सँभारैं।
कहि कहि नाम सकल जुवतिनि के, नहिं रुचि जिहिं उर धारैं॥
कबहुँक आँखि मूँदि करि चाहत, निरत धरि ठौर निहारैं॥
तव प्रसिद्ध लीलाबन बिहरत, अब नहिं तुमहिं बिसारैं।
जो जाको जैसैं करि जानै, सो तैसैं हित मानै।
उलटी रीति तुम्हारी सुनिकैं, सब अनरज करि जानै॥
क्यों पतिया पठवै नहिं उनकौं, बाँचि समुझि सुख पावै।
'सूर' स्याम हैं कुंजधाम मैं, अनत न मन बिरमावै॥ २५८६ ॥

राग सारंग ॥ ३२०५ ॥

राधे हरि तेरी नाम बिचारैं।
तुम्हरेइ गुन ग्रथित करि माला, रसनाकर सौं टारैं॥
लोचन मूँदि ध्यान धरि, दृढ़ करि, पलक न नैकु उघारैं।
अंग अंग प्रति रूप माधुरी, उर तैं नहीं बिसारैं॥
ऐसौ नेम तिहारे पिय कैं, कह जिय निठुर तिहारैं।
'सूर' स्याम मनकाम पुरावहु, उठि चलि कहैं हमारैं॥ २५८७ ॥

राग बिलावल ॥ ३२०६ ॥

चलि राधे हरि बोली री।
उठि चलि बेगि, गहरु कत लावति, बचन स्याम की टोली री॥
तनु जोबन ऐसैं चलि जैहै, जनु फागुन की होली री।
भीजि बिनसि जाइहि छिनु भीतर, जनु कागद की चोली री॥
तोपर कृपा भई मोहन की, छाँड़ि सबै चोंचोली री।
'सूरदास' स्वामी मिलिबे कौ, तातैं तू निरमोली री॥ २५८८ ॥

राग केदारौ ॥ ३२०७ ॥

जाके दरसन को जग तरसत दै री नैकु दरस तिहिं दै री।
जाकी मुरली की धुनि सुर मुनि मोहै, ता तनु नैकु चितै री॥
सिव बिरंचि जाकौ पार न पावत, सो तेरे चरननि परसै री।
'सूरदास' बस त्रिभुवन जाकैं, सो सुख धुनि सुनाइ बस कै री॥ २५८९ ॥

राग भूपाली ॥ ३२०८ ॥

तू को है री, कौन पठाई, कह, तेरी को मानै।
तू जो कहति स्याम, सु न देखे सुने, कौन पहिचानै॥
और कहति गहि नेम लियो ह्याँ, को वैसी बेद्न जानै।
'सूरदास' प्रभु रसिक बड़े, तोकौं पठई अति स्यानै॥ २५९० ॥

राग सारंग ॥ ३२०९ ॥

अति न हठ कीजै री सुनि ग्वारि।
हौ जु कहति तू सुनि या हठ तैं, सरै न एकौ द्वारि॥
एक समय मोतिनि के धोखैं, हंस चुनत है ज्वारि।
कीजै कहा काम अपने कौ, जीति मानियै हारि॥
हौ जु कहति हौ मानि सखी री, तन कौ काज सँवारि।
कामी कान्ह कुँवर के ऊपर, सरबस दीजै वारि॥
यह जोवन वरषा की नदि ज्यौं, वोरति कतहि करारि।
'सूरदास' प्रभु अत मिलहुगी, ये वीते दिन चारि॥ २५९१ ॥

राग रामकली ॥ ३२१० ॥

कहा तुम इतनैहि कौ गरबानी।
जोबन रूप दिवस दसही कौ, जल अँजुरी कौ जानी॥
तृन की अगिनि, धूम कौ मंदिर, ज्यौ तुषार-कन-पानी।
रिसही जरति पतंग ज्योति ज्यौं जानति लाभ न हानी॥
करि कछु ज्ञानऽभिमान जान दै, हैऽव कौन मति ठानी।
तन धन जानि जाम जुग छाया, भूलति कहा अयानी॥
नवसै नदी चलति मरजादा, सूधियै सिंधु समानी।
'सूर' इतर ऊसर के वरषै, थोरैहि जल इतरानी॥ २५९२ ॥

राग पुरिया ॥ ३२११ ॥

एतौ हठ अब छाँड़ि मानि री, तू चलि पिय पै प्यारी री।
अति विचित्र गुन-रूप-आगरी, परम चतुर तिय भारी री॥
मदन दहत मोहन तन, तेरी उनकी पीर न न्यारी री।
'सूरदास' प्रभु बिरह बिकल है, नैकु न निरखि निहारी री॥ २५९३ ॥

राग विहागरौ ॥ ३२१२ ॥

वादि बकति काहे कौ तू, कत आई मेरै घर।
वै अति चतुर कहा कहियै, जिनि तोसी मूरख लेन पठाई तनु वेधति वचननि सर॥
उत की इत, इत की उत मिलवति, समुझति नाहिन प्रीति रीति, को तू, को है गिरिवरधर।
'सूरदास' प्रभु आनि मिलैगे, (हमहिं मनैवो) जौ चाहैगै छ्वैहै पग अपनै कर॥
॥ २५९४ ॥

राग विहागरौ ॥ ३२१३ ॥

ज्यौं ज्यौ मैं निहोरे करौ, त्यौ त्यौ यौ वोलति है अनोखी रोस हारी।
बहियाँ गहत सतराति, कौन पर, मग धरि डग कौन पर होति पीरी कारी॥
को को न करत मान, तोसी तिय पै न आन, हठ दूरि करि धरि, मेरे कहै, अरी।
'सूरदास' प्रभु तेरौ पथ जोवै, तोहिं तोहिं रट लागि मदन दहत तनु भारी॥
॥२५९५ ॥

राग मलार ॥ ३२१४ ॥

तऊ गँवारि अहीरी।
तोसौ कछु नँदनंद हँसि कही, इतने कौ, कबकी न वोलति, न मानै कही री॥

स्याम हँसि हँसि देत, सुनि सुनि कान कानि करति न इक. टक ग्वारि रही री।
कहा कहौं हरि सौंव्व तोसी को मुंह लगाई, वारौं तोहिं पिय इक रोम पै ही री॥
'सूरदास' प्रभु कौऽव, कहा कहि बरनौ जु, एती तौ कबहुँ काहू की न सही री।
॥ २५९६ ॥

राग नट ॥ ३२१५ ॥

एक तौ लालन लाड़ लड़ाई, दूजै जोवन करी वावरी।
उनकै गरव भूलि जनि रहि री, होत अधिक दिन चारि चाव री॥
मेरौ कह्यौ मानि तू माई, सवै त्रियनि कौ यह सुभाव री।
'सूर' स्याम सौं हिलि मिलि रहियै, उठत वैस को इहै दावँ री॥२५९७॥

राग कान्हरौ ॥ ३२१६ ॥

रहि री मानिनि मान न कीजै।
यह जोवन अँजुरी कौ जल है, ज्यौं गुपाल माँगे त्यौं दीजै॥
छिनु छिनु घटति, वढ़ति नहि रजनी, ज्यौं ज्यौं कला चंद्र की छीजै।
पूरब पुन्य सुकृत फल तेरौ, काहे न रूप नैन भरि पीजै॥
सौंह करति तेरे पाँइनि की, ऐसी जियनि दसौ दिन जीजै।
'सूर' सु जीवन सुफल जगत कौ, वैरी वाँधि विवस करि लीजै॥२५९८॥

राग कान्हरौ ॥ ३२१७ ॥

सुनि प्यारी राधिका सुजान।
कहि धौं कौन काज सरिहै री, इहिं झूठै अभिमान॥
जिनकै चरन रमा नित लालति, सव गुन-रूप-निधान।
तिनके मुख के वचन मनोहर, सो तू करति न कान॥
परम चतुर सुदर सुखकारी, तोसी तिया न आन।
कीजै कहा कृपन की संपति, विना भोग, विनु दान॥
ऐसी व्यथा होत निसि हरि कौ, जनि हठि करौ विहान।
नाहिंन कढ़त और के काढ़े, 'सूर' मदन के वान॥२५९९॥

राग रामकली ॥ ३२१८ ॥

आजु हठि वैठी मान किये।
महा क्रोध रस अंसु तपत मिलि, मनु विष विषम पिये॥
अधमुख रहति विरह व्याकुल, सिख मूरि मन्त्र नहिं मानै।
मूक न तजै सुमिरि जाती ज्यौं, सुधि आऐ तनु जानै॥
एक लीक वसुधा पर काढी, नभ तन गोद पसारी।
जनु वोहित तजि तकै परन कौं दधि ज्यौ अवनि निहारी॥
ज्यौं अति दीन दुखी सवही अँग, कतहूँ सांति न पावै।
त्यौं विनु पियहिं तिया प्रातहिं तै, एकै वात मनावै॥
कवहुँक धुकति धरनि स्रमजल भरि महा सरद रवि सास।
त्राटक भई चित्र पूतरि ज्यौ, जीवन की नहिं आस॥
तव उपचार कियौ मैं करकस, लै रस पारचौ कान।
मुर्छा जगी, नही मुख वोली, लै वैठी फिर मान॥

हौ तौ थकी करति बहु जतननि, जी की विथा न पाई।
बूझहु लाल नवल नागर तुम, एकै सैन बताई॥
सिव आकार दिखायौ कछु इक, भाव दोष रस नाही।
'सूरदास' प्रभु रसिक सिरोमनि, लै मेली पग छाही॥ २६०० ॥

राग देवगंधार ॥ ३२१९ ॥

प्रिया पिय नाहि मनायौ मानै।
श्रीमुख वचन मधुर मृदु मादक, कठिन कुलिस तै जानै॥
सोभित सहित सुगंध स्याम कच, कल कपोल अरुझाने।
मनौ विधुतुद ग्रस्यौ कलानिधि, तजत नही विनु दाने॥
वाल भाव अनुसरति, भरति दृग, अग्र अंसुकन आने।
जनु खँजरीट जुगल जठरातुर, लेत सुभप अकुलाने॥
नैन निकट ताटक गंग मंडल पर कविनि वखाने।
जनु खद्योत चमक चलि सकत न, निसि-गत-तिमिर हिराने॥
यह सुनि कै अकुलाइ चले हरि, कृत अपराध छमाने।
'सूरदास' प्रभु मिले परस्पर, माननि मिलि मुसुकाने॥
॥ २६०१ ॥

राग धनाश्री ॥ ३२२० ॥

मानि मनायौ मौन रही।
सकुच समेत चली उठि आतुर, वन को गैल गही॥
विधु मुख निरखि, विमुख करि लोचन, पुनि विधुवदन चही।
दरस परस तदरूप आजु निज, भू नख लेखि कही॥
पुहुप सुरँग सागरिपु ओट दिखावत चतुर लही।
पानि सु परसत सीस, परस्पर मुसुकाने तबही॥
तृन तोरयौ गुनि जात जिते गुन, काढति रेख मही।
'सूर' स्याम वहुरो मिलि विलसहु, जाति अवधि अवही॥ २६०२ ॥

राग सारंग ॥ ३२२१ ॥

चली वन मौन मनायौ मानि।
अचल ओट पुहुप दिखारायौ धरयौ सीस पर पानि॥
ससि तन चितै नैन दोउ मूँदे, मुख महँ अँगुरी आनि।
यह तौ चरित गुप्त की वातै, मुसुकाने जिय जानि॥
रेखा तीनि भूमि पर खाँची, तृन तोरयौ कर तानि।
'सूरदास' प्रभु रसिक सिरोमनि, विलसहु स्याम सुजान॥ २६०३ ॥

राग गुंड ॥ ३२२२ ॥

सैन दै कह्यौ वन धाम चलियै स्याम, यहै करि काम तहँ आनि मिलिहौ।
भाव ही कह्यौ मन त्राव दृढ़ राखिवौ, देउँ सुख तुमहि सँग रंग रलिहौ॥
जानि पिय अतिहिं आतुर नारि आतुरी, गई वन तीर तनु सुद्धहेती।
'सूर' प्रभु हरष भए, कुज वन तहँ गए, सजत रति सेज जे निगम नेती॥
॥ २६०४ ॥

राग गुंडमलार ॥ ३२२३ ॥

स्याम वनधाम मग बाम जोवै ।

कवहुँ रचि सेज अनुमान जिय जिय करत लता-सकेत-तर कवहुँ सोवै ॥
एक छिनु इक घरी, घरी इक जाम सम, जाम वासरहु तै होत भारी।
मनहि मन साध पुरवत अग भाव करि, धन्य भुज, धनि हृदै मिलै प्यारी ॥
कवहि आवै साँझ, सोचि अति जिय माँझ, नैन खगइदु ह्वै रहै दोऊ।
'सूर' प्रभु भामिनी वदन पूरन चद रसपरस मनहि अकुलात वोऊ ॥
॥ २६०५ ॥

राग नटनारायन ॥ ३२२४ ॥

दूती सग हरि कै रही।
स्याम अति आधीन ह्वै कै, जाहु तासौ कही ॥
वेगि आनि मिलाइ मोकौ, परम प्यारी नारि।
देखि हरितन कामव्याकुल, चली मनहि विचारि ॥
गई तहँ जहँ करति राधा, अग अग सिगार।
'सूर' के प्रभु नवल-गिरिधर-संग, जानि विहार ॥ २६०६ ॥

राग विहागरौ ॥ ३२२५ ॥

राधा सखी देखि हरषानी।
आतुर स्याम पठाई याकौ, अंतरगत की जानी ॥
वह सोभा निरखत अँग अँग की, हरी निहारि निहारि।
चकित देखि नागरि मुख वाकौ, तुरत सिगारनि सारि ॥
ताहि कह्यौ सुख दै चलि हरि कौ, मै आवति हौ पाछै।
वैसैहि फिरी 'सूर' के प्रभु पै, जहाँ कुंज गृह काछै ॥ २६०७ ॥

राग केवरौ ॥ ३२२६ ॥

दूती देखि आतुर स्याम।
कुजगृह तै निकसि धाए, काम कीन्हौ ताम ॥
वोलि उठी रेसील वानी, धन्य तुव वड़ भाग।
अवहि आवति वनी वाला, किये मन अनुराग ॥
कहा वरनौ अग सोभा, नैन देखौ आजु।
'सूर' प्रभु धरि नैकु धीरज, करौ पूरन काजु ॥ २६०८ ॥

राग ईमन ॥ ३२२७ ॥

वडे भाग्य के मोटे हौ।
ऐसी तिया और को पावै, वने परस्पर जोटे हौ।
वैसिय नारि सुदरी छोटी, तैसेइ तुम वलि छोटे हौ।
पूरब पुन्य सुकृत फल की वह, आपु गुननि करि घोटे हौ ॥
परम सुसील सुलच्छन नारी, तुमहि त्रिभगी खोटे हौ।
'सूर' स्याम उनके मन तुमही, तुम वहुनायक कोटे हौ ॥ २६०९ ॥

राग काफी ॥ ३२२८ ॥

सुनि मोहन तेरी प्रान प्रिया कौ, वरनौ नदकुमार।
जो तुम आदि अत मेरौ गुन, मानहु यह उपकार ॥

चंद्रमुखी, भौहै कलंक विच, चदन तिलक लिलार।
मनु वेनी भुवंगिनी परसत, स्रवत सुधा की धार॥
नैन मीन, सरवर आनन मै, चचल करत विहार।
मानौ कर्नफूल चारा कौं, रवकत वारवार॥
वेसरि वनी सुभग नासा पर, मुक्ता परम सुढार।
मनु तिल फूल, अधर विंवाधर, दुहुँ विच बूंद तुषार॥
सुनि सुठान ठोढी अति सुदर, सुदरता कौ सार।
चुवतहि चुवत सुधा रस मानौ, रहि गई बूँद मँझार॥
कठसिरी उर पदिक विराजत, गज मोतिनि के हार।
दहिनावर्त देति मनु ध्रुव कौ, मिलि नछत्र की मार॥
कुच जुग कुभ सुडि रोमावलि, नाभि सु ह्रद आकार।
जनु जल सोखि लियौ सैसवता, जोवन गज मतवार॥
रत्नजटित गजरा, वाजू बँद, सोभा भुजनि अपार।
फूंदा सुभग फूल फूले मनु, मदन विटप की डार॥
छीन लक नीवा किंकिनि धुनि, वाजति अति झनकार।
मौर वाँधि वैठ्यौ जनु दूलह मन्मथ आसन तार॥
जुगल जघ जेहरि जराव की, राजति परम उदार।
राजहंस गति चलति कृसोदरि, अति नितव कै भार॥
छिटकि रह्यौ लहँगा रँग तनसुख सारी तन सुकुमार।
'सूर' सु अग सुगंध सनूहनि, भँवर करत गुजार॥ २६१०॥

राग नट ॥ ३२२९ ॥

आजु राधिका रूप अन्हायौ।
देखत वनै कहत नहिं आवै मुख-छवि-उपमा अत न पायौ॥
अवली अलक, तिलक केसरि कौ ता विच सेदुर विदु वनायौ।
मानौ पून्यौ चद्र खेत चढि लरि स्वरभानु सौ घायल आयौ॥
काननि की लरै अति राजति मनहुँ मदन रथ चक्र चढायौ।
सोसफूल, फनि नाग सीस धरि, मनु सुहाग कौ छत्र तनायौ॥
वंकित भोह, चपल अति लोचन, वेसरि रस मुकुताहल छायौ।
मानौ मृगनि अमो भाजन भरि, पियत न वन्यौ दुहूँ ढरकायौ॥
दसनवसन, दसनावलि राजति, चिवुक चारु तिल ताकि वनायौ।
मनहुँ देखि रवि कमल प्रकासित, तापर भृगो सावक स्वायौ॥
कंचुकि स्याम सुगध सँवारी चौकी पर नग वन्यौ वनायौ।
मानौ दीपक उदित भवन मै, तिमिर सकुच सरनागत आयौ॥
भूषन-भुजा-ललित-लटकन वर, मनहुँ मिल्यौ अलि पुज सुहायौ।
एतेहूँ पर रूठ 'सूर' प्रभु, लै दूतो दरपन दिखरायौ॥ २६११॥

राग बिलावल ॥ ३२३० ॥

देखत नवल किसोरी सजनी, उपजत अति आनंद।
नवसत सजे माधुरी अँग अँग, वस कीन्हे नँदनद॥
कंवु कठ ताटक गड पर, मडित वदन सरोज।
मोहन कै मन वाँधन कौ, मनु पूरी पास मनोज॥

नासा परम अनूपम सोभित, लज्जित कीर विहंग।
मनु विधि अपनैं कर बनाइ किये, तिल प्रसून के अंग।।
भुजविलास, कर कंकन सोभित, मिलि राजत अवतंस।
तीनि रेख कंचन के मानी, बहु बनाइ पिय अंस।।
कुंकुम कुचनि कंचुकी अंतर मंगल कलस अनंग।
मधु पूरन राखे पिय कारन, मधुर मधुप के अंग।।
कीरति बिसद बिमल स्यामा की, श्रीगुपाल अनुराग।
गावत सुनत सुखदकर मानौ, 'सूर' दुरे दुख भाग।। २६१२।।

राग जैतश्री।। ३२३१।।

नव नागरि हो। (सकल) गुन आगरि हो।
हरि भुज ग्रीवा हो। सोभा सीवा हो।।
स्याम छबीली भावती। गौर स्याम छबि पावती।।
सैसवता मैं हे सखी, जोवन कियौ प्रवेस।
कहा कहौं छबि रूप की, नख सिख अंग सुदेस।।
श्रीपति-केलि-सरोवरो, सैसव जल भर पूर।
प्रगटी कुच उच्चस्थली, सोख्यौ जोवनसूर।।
छुटे केस मज्जन समय, देखि विरुध अहि मोर।
भार-कुहू-निसि मेरु तैं उतरि चले उहिं ओर।।
सीस सचिक्कन केस कैं, बिच सीमत सँवारि।
मानहुँ किरनि पतँग तैं, भयौ दुधा तम हारि।।
केसरि आड लिलाट हो, बिच सेंदुर को बिंदु।
चक्र तरयौना, नैन मृग, रथ बैठ्यौ जनु इंदु।।
नैननि ऊपर कह कहौं, ज्यौं राजत भ्रुव भंग।
जुवा बनावत चंद्रमा, चपल होत सारंग।।
चंपकली सी नासिका, राजति अमल अदोस।
तापर मुक्ता यौं बन्यौ, मनौ भोर कन ओस।।
मुक्ता आपु बिकाइ के, उर मैं छिद्र कराइ।
अधर अमृत हित तप करैं, अध मुख, ऊरध पाइ।।
अधरनि की छबि कह कहौं, सदा स्याम अनुकूल।
बिंब पँवारे लाजहीं, हरपत बरखत फूल।।
कांति पाँति दसनावली, रहि तमोल रँग भीज।
बदन स्यौं ससि मैं बए, मनु सौदामिनि बीज।।
गुंजा की सी छबि लई, मुक्ता अति बड़भाग।
नैननि की लई स्यामता, अधरनि की अनुराग।।
बेसरि के मुक्ता मनिनि, धनि नासा ब्रजनारि।
गुरु, भृगुसुत बिच भौम हो, ससि समीप ग्रह चारि।।
खुँटिला सुभग जराइ के, मुक्ता मनि छबि देत।
प्रगट भयौ घनमध्य तैं मनु, ससि नखत समेत।।
सुदर सुघर कपोल हो, रहे तमोर भरि पूर।
कंचन-संपुट-द्वैपला मानहुँ भरे सिंदूर।।

चिवुक डिठौना जब दियौ, मो मन धोखैं जात।
निकस्यौ अलिमिसु कंज तैं, मनहुँ जानि परभात॥
जिहिं मारग वन वाटिका निकसति आनि सुभाइ।
मधुप कमलवन छाँड़ि कै, चलत संग लपटाइ॥
जहाँ जहाँ तू पग धरै, तहाँ तहाँ मन साथ।
अति अधीन पिय ह्वै रहे, तन मन दै तव हाथ॥
देखि वदन के रूप कौ, मोहन रह्यौ लुभाइ।
इकटक रह्यौ चकोर ज्यौ, दृष्टि न इत उत जाइ॥
तोहिं स्याम सौ है सखी, वढ़ी निरंतर प्रीति।
तू तन मन धन स्याम कैं, तैं हरि पाए जीति॥
मनमोहनि तू वस करे, अति प्रवीन नँदलाल।
'सूरदास' गावै सदा, कीरति विसद विसाल॥ २६१३॥

राग नट ॥ ३२३२ ॥

राधा सग ललिता लिये।
स्याम आतुर जानि वाला, गवन आतुर किये॥
किंकिनी धुनि स्रवन सुनि हरि, अतिहिं पुलकित हिये।
नारि आवत जानि गिरिधर, नही धीरज जिये॥
चले आतुर धाइ आगैं, संग सहचरि विये।
'सूर' प्रभु रति-रंग-राँचे, देखि रीझी त्रिये॥ २६१४॥

राग नट ॥ ३२३३ ॥

पिय छवि निरखँत नागरी, अँग दसा भुलानी।
अंतरगत आनँद भरी ललिता हरपानी॥
सहचरि सौ कहि सुमन लै हरि फेंट भराए।
अति अधीन पिय ह्वै रहे, वस परे डराए॥
मारग सुमन विछावही, पग निरखिं निहारै।
फूले फूले घर धरै, कलियाँ चुनि डारै॥
ऐसे वस पिय वाम कै, सुख 'सूरज' जानै।
जो जिहिं भावनि हरि भजै, तिहिं तैसैइ मानै॥ २६१५॥

राग पूरवी ॥ ३२३४ ॥

पाछै ललिता आगै स्यामा, आगै पिय फूल विछावत जात।
कठिन कठिन कलि वीनि करति न्यारी, प्यारी पग गड़िवैहि डरात॥
दीरघ लता करनि निरवारत, लै डारत द्रुम वेली पात।
'सूरदास' प्रभु की अधीनता देखत, मेरे नैन सिरात॥ २६१६॥

राग कान्हरौ ॥ ३२३५ ॥

वड़े वडे वार जु एँड़िनि परसत, स्यामा अपनै अचल मै लिएँ।
वेनी गूथन फूल सुगंध भरे, डोलत हरि वोलत न सकुच हिएँ॥
कुसुभी सारी अलक झलक मनौ, अहिकुल वदन सौ पूजा किएँ।
'सूरदास' प्रभु नैन प्रान सुख, चितए मिलि प्रिया कनखियनि दिएँ॥ २६१७॥

राग रामकली ॥ ३२३६ ॥

वरन वरन वन फूलि रह्यौ ।
हरषित ह्वै वृषभानुनंदिनी, सँग सब सखिनि कह्यौ ॥
कुसुम कली देखत रुचि उपजति, यह कहि तिनहिं सुनावति ।
आपुन चुनति गोद लै धारति, जुवतिनि कहति चुनावति ॥
हँसत परस्पर दै दै तारी, स्याम लिये करवाही ।
'सूरदास' प्रभु काम आतुरे, और ध्यान चित नाही ॥ २६१८ ॥

राग रामकली ॥ ३२३७ ॥

डोलत बाँकी कुंज गली ।
व्रज वनिता मृग-सावक-नयनी, बीनति कुसुम कली ॥
कमलवदन पर बिथुरि रही लट कुचित मनहुँ अली ।
अधर बिंब, नासिका मनोहर दामिनि दसन चली ॥
नाभि परस रोमावलि राजति, कुच जुग बीच चली ।
मनहुँ बिवर तै उरग रिग्यौ, तकि गिरि की संधि थली ॥
पृथु नितंब, कटि छीन, हस गति, जघन सघन कदली ।
चरन महावर नूपुर मनिमय, बाजत भाँति भली ॥
ओट भए अवलोकि, परस्पर, बोलति अली अली ।
'सूर' सु मोहनलाल रसिक सँग, वन घन माँझ रली ॥ २६१९ ॥

राग पूरबी ॥ ३२३८ ॥

सखियनि के सँग कुँवरि राधिका, बीनति कुसुमनि कलियाँ ।
एक वहिक्रम एकहिं बानक, एक रूप गुन अलियाँ ॥
सुंदर स्याम लाल के सोहत, करनि रँगीली डलियाँ ।
एक अनूपम माल बनावति, भ्राजति कुंजनि गलियाँ ॥
एक परस्पर बेनी गूँथति, मन भावति रँगरलियाँ ।
'सूरदास' प्रभु सँग मिलि हरषित, प्यारी अंकम भरियाँ ॥ २६२० ॥

राग कल्यान ॥ ३२३९ ॥

लै गए धामबन स्याम प्यारी ।
रहे लपटाइ, दोउ भुजनि पलटाइ कै कह्यौ पिय वचन हो निठुर नारी ॥
बिहसि वृषभानुतनया कहति, हम निठुर, तुम सुहृद, बात वै जनि चलावौ ।
निठुर अरु सुहृद सो मनहिं मन जानिहै, कहा उहि कथा को सुरति ध्यावौ ॥
परसपर हँसे, दोउ रसे रतिरग मैं, करत मन कामफल पुरुप नारी ।
'सूर' प्रभु कोक गुन मैं निपुन हैं बड़े, कामबल तोरि रह्यौ भारी ॥ २६२१ ॥

राग सूही बिलावल ॥ ३२४० ॥

गिरिधर नारि अबल अति कीन्ही ।
सबल भुजा धरि अंकम भरि भरि, चापि कठिन कुच (उर पर) लीन्ही ॥
कोक अनागत क्रीड़ा पर रुचि, दूर करत तनुसारी ।
कमल करनि कुच गहत, लहत पुट, देखौ यह छवि न्यारी ॥
बार बार ललचात साध करि, सकुचति पुनि पुनि बाला ।
'सूर' स्याम यह काम करौ जनि, धनि धनि मदन गोपाला ॥ २६२२ ॥

राग रामकली ॥ ३२४१ ॥

सुतादधि, पति सौ क्रोध भरी।
अंबर लेत भई खिझ वालहिं, सारँग संग लरी ॥
तव श्रीपति अति वुद्धि विचरी मनि लै हाथ धरी।
वै अति चतुर नागरी नागरि, लै मुख माँझ करी ॥
चापत चरन सेस चलि आयौ, उदयाचलहिं डरी।
'सूरदास' स्वामी लीला डरि, अकम लगि उवरी ॥ २६२३ ॥

राग रामकली ॥ ३२४२ ॥

सकुचि तन उदधिसुता मुसुकानी।
रवि-सारथी-सहोदर ता पति, अवर लेत लजानी ॥
सारँग पानि मूँदि मृगनैनी, मनि मुख माँझ समानी।
चरन चापि महि प्रगट करी पिय, सेस सीस सहिदानी ॥
'सूरदास' तव कह करै अवला, जव हरि यममति ठानी।
भुज अकम भरि, चापि कठिन डरि, स्याम कठ लपटानी ॥ २६२४ ॥

राग विलावल ॥ ३२४३ ॥

वह छवि अग निहारत स्याम।
कवहुँक चुंवन लेत उरज धरि, अति सकुचति तनु वाम ॥
सनमुख नैन न जोरत प्यारी, निलज भए पिय ऐसे।
हा हा करति चरन कर टेकति, कहा करत ढँग नैसे ॥
वहुरि काम रस भरे परस्पर, रति विपरीत वढाई।
'सूर' स्याम रतिपति विह्वल करि, नारि रही मुरझाई ॥ २६२५ ॥

राग बिलावल ॥ ३२४४ ॥

पिय प्यारी तनु स्रमित भए।
सकुचि उठी नागरि पट लीन्हौ, स्याम लजाइ गए ॥
सावधान रति अंत भए पिय, प्यारी तन नहिं हेरत।
नागरि कुटिल कटाच्छनि हेरति, भृकुटी वकट फेरत ॥
ऐसे गुन किनि तुमहिं सिखाए, तिरनी कटि कसि दीन्ही।
'सूर' कहति पिय सौ तिय वातैं, आजु तुमहिं मै चीन्ही ॥ २६२६ ॥

राग धनाश्री ॥ ३२४५ ॥

हरषि स्याम तिय वाहँ गही।
अपनैं कर सारी अँग साजत, यह इक साध कही ॥
सकुचति नारि वदन मुसुकानी, उतकौं चितै रही।
कोककला परिपूरन दोऊ, त्रिभुवन और नही ॥
कुंजभवन सँग मिलि दोउ वैठे ,सोभा एक चही।
'सूर' स्याम स्यामा सिर वेनी, अपन करनि मुही ॥ २६२७ ॥

राग धनाश्री ॥ ३२४६ ॥

मोहन मोहिनि अंग सिगारत।
वेनी ललित ललित कर गुंथत, सुंदर माँग सँवारत ॥
सीस फूल धरि, पाटी पोछत, फूंदनि झवा निहारत।

बदन बिंद जराइ की बेदी, तापर बनै सुधारत ॥
तरिवन स्रवन, नैन दोउ अंजन नासा बेसरि साजत ।
बीरी मुख भरि, चिवुक डिठौना, निरखि कपोलनि लाजत ॥
नख सिख सजत सिंगार भाव सौ, जावक चरननि सोहत ।
'सूर' स्याम तिय अंग सँवारत, निरखि आपु मन मोहत ॥ २६२८ ॥

राग ललित ॥ ३२४७ ॥

ऐसेहिं सुख सब रैनि बिहानी ।
भोर भए ब्रज धाम चले, दोउ, मन मन नारि सिहानी ॥
प्यारी गई वृषभानु-पुरा-तन, स्याम जात नँद धाम ।
सुखमा महल द्वारही ठाढी, उन देखी वह बाम ॥
प्रात चले बन तै ब्रज आए, मन मन करत विचार ।
सुनहु 'सूर' ठठकत सकुचत गए, ता गृह नंद कुमार ॥ २६२९ ॥

राग देवगाधार ॥ ३२४८ ॥ सुखमा के गृहगमन

कितते आए हो नँदलाला, ऐसी कौन बाल जो धोखै आइ द्वार ह्वै झाँकै ।
मिटति नही चितवनि हित चित की उहै टेव नित नित की, मै पहिचाने नैना बाँके ॥
कबहुँ जम्हात कबहुँ अँग मोरत, अटपटात मुख बात न आवै रैनि कहूँ धौ थाके ।
'सूरदास' प्रभु रसिकसिरोमनि, रसिक रसिकई नीकै जानी नाम लेहु रहे जाके ॥ २६३० ॥

राग बिलावल ॥ ३२४९ ॥

लाल हो कौन त्रिया बिरमाए ।
चाल तिहारी लटपटी लागति, रस बीधे भोरहिं आए ॥
मोसौ दुराव करत नँदनंदन, प्रगट चिह्न मै पाए ।
'सूर' स्याम बड़भागिनि सोई, जिन मिलि लाड़ लड़ाए ॥ २६३१ ॥

राग धनाश्री ॥ ३२५० ॥

आजु रैन हरि कहाँ गँवाई ?
लटपटी पाग उनीदे लोचन, छाँडि कुँवर हमसौ चतुराई ॥
नद बबा की गाइ चरावत, एक धेनु संध्या नहि आई ।
ढूंढत ढूंढत सब ब्रज ढूंढ्यौ भोर भएँ ब्रंदावन पाई ॥
मोर मुकुट मुरली पीतांबर, एक बात की बीस बनाई ।
'सूरदास' प्रभु प्रिया मिलन कौ, अकथ कथा गोपाल सुनाई ॥ २६३२ ॥

राग ललित ॥ ३२५१ ॥

बनतन तै आए अति भोर ।
राति रहे कहुँ गाइनि घेरत, आए हौ ज्यौ चोर ॥
अंग अंग उलटे आभूपन, बनहूँ मै तुम पावत ।
बडभागी तुम तै नहिं कोऊ, कृपा करत जहँ आवत ॥
औचक आइ गए गृह मेरै, दुर्लभ दरसन दीन्हौ ।
'सूर' स्याम निसि हौ कहुँ जागे पावति अँग अँग चीन्हौ ॥ २६३३ ॥

राग बिलावल ॥ ३२५२ ॥

देखियत लाल उनीदे भए ।
राजत है रतनारे नैना, मानहुँ नलिन नए ॥

पीक कपोल, ललाट महाउर, बंदन बलित खए।
जनु तनु जामैं सध अरुन दल, काम के बीज वए॥
बिनु गुन हार, पयोधर मुद्रा, हृदय सुदेस ठए।
अंजन अधर, सुमंत्र लिख्यौ रति, दीच्छा लेन गए॥
'सूर स्याम बिथुरे कच मुख पर, नख नाराच हए।
ताऊ पर आनंद इंदु जनु, मानहु समर जए॥ २६३४॥

राग बिलावल॥ ३२५३॥

रैनि जागे, रति रस पागे, नव तिय संग।
आए हौ दहन कत, अटपटे बैन पिय रसमसे नैन तहाँ जाहु रँगे जाके रग॥
बिनु गुन बनी माल पीक कपोलनि लाल, जावक तिलक भाल, कीन्हे रस बस अग।
'सूरदास' प्रभु कित रजनी बिहाइ आए, भोर भए मेरै धाम, तुम जीति कै अनग॥ २६३५॥

राग बिलावल॥ ३२५४॥

भोरहिं आए मुखहिं लजाने।
रति की केलि बेलि सुख सींचत, सोभित अरुन नैन अलसाने॥
काजर रेख बनी अधरनि पर, नैन कपोल पीक लपटाने।
मनहुँ कज ऊपर अलि बैठे, उड़ि न सकत मकरद लुभाने॥
है हिय हार अलंकृत बिनुगुन, आए रतिरन जीति सयाने।
'सूरदास' प्रभु पाइ धारियै जानति हौ पर हाथ बिकाने॥ २६३६॥

राग बिलावल॥ ३२५५॥

जानति हौ जिहि गुननि भरे हौ।
काहै दुराव करत मन मोहन, सोइ कहो तुम जाहि ढरे हौ॥
निसि के जागे नैन अरुन दुति, अरु स्रम आलस अग भरे हौ।
बंदन तिलक कपोलनि लाग्यौ काम केलि उर नख उघरे हौ॥
अब तुम कुटिल किसोर नंद सुत, कहौ कौन के चित्त हरे हौ।
एते पर ये समुझि 'सूर' प्रभु, सौह करन कौ होत खरे हौ॥ २६३७॥

राग सारंग॥ ३२५६॥

अरुन उदय वेला अरु नैन।
निसि जागे अलसात स्याम धौ मोहनि बोलत मधुरे बैन॥
आनन जलप्रसेव गत चलि यौ, आए मधुकन माधुरि लैन।
बार बार रजनी सुख सूचत, उमँगि उमँगि रस प्रीति सु दैन॥
क्रीड़त सघन कुज वृंदावन, बसीबट, जमुना कैं ठैन।
'सूरदास' प्रभु सब बिधि नागर, पीवत हौ रस परम सचैन॥२६३८॥

राग बिहागरौ॥ ३२५७॥

आजु निसि कहाँ हुते हो प्यारे।
तुम्हरी सौ कछु कहि न जाति छबि, अरुन नैन रतनारे॥
मेचक अधर, निमेष पीक रुचि, देखियत चिह्न तुम्हारे।
हृदय हार बिनु गुनहिं अलंकृत, मृगमद तिलक लिलारे॥
बोल के साँचे, आए भोर भए, प्रगटित कामकला रे।
दसनबसन पर छापि दृगनि छबि, दई वृषभानुसुता रे॥

अरु देखी मुसुकाइ इते पर, सर्वस हरत हमारे।
'सूर' स्याम चतुरई प्रगट भई, आगे तैं होहु न न्यारे ॥ २६३९ ॥

राग विहागरौ ॥ ३२५८ ॥

कहौ स्याम कहँ रैनि गँवाई।
अब ये चिह्न प्रगट देखियत है, मोसौं कौन करत चतुराई ॥
लटपटी पाग, अलक जो बिथुरी, बात कहत आवत अलसाई ॥
तुमसी चतुर सुजान नागरी, जाकैं रस तुम रहे लुभाई।
'सूरदास' प्रभु तहँहि सिधारौ, नौतन प्रीति जहाँ उपजाई ॥ २६४० ॥

राग बिभास ॥ ३२५९ ॥ सुखमा के घर सखियों का आगमन

सुनत सखी तहँ दौरि गई।
सुने स्याम सुखमा कैं आए, धाई तरुनि नई ॥
कोउ निरखति मुख, कोउ निरखति अँग, कोउ निरखति रँग ओर।
रैनि कहूँ फँग परे कन्हाई, कहति नवं करि रोर ॥
तब कहि उठी नारि सुखमा यह, भाग हमारैं आए।
'सूर' स्याम धनि बाम तुम्हारी, जिनि निसि बस करि पाए ॥ २६४१ ॥

राग सारंग ॥ ३२६० ॥

क्यौंऽब दुरत है प्रगट भए।
कहत है नैन निसा के जागे, मानौ सरसिज अरुन नए ॥
जावक भाल, नागरस लोचन, मसिरेखा अधरनि जु ठए।
बलया पीठि, बचन अलसौंहैं, बिनु गुन कंठ हार बनए ॥
भुज ताटंक, ग्रीव सिर बंधन, चिह्न कपोल दसन ग्रसए।
आलिंगन चंदन कुच चर्चित, मानौ द्वै ससि उरहिं उए ॥
चरन सिथिल अरु चाल डगमगी, घूमत घायल समर भए।
स्रवत सकल अंगनि स्रोनित है, स्यामा नखसायक जु दए ॥
राजत बसन पीत उर राते, अति आतुर ह्वै उलटि लए।
'सूर' सखी कैसैं मन मानैं, सुंदर स्याम कुटिल नग ए ॥ २६४२ ॥

राग बिलावल ॥ ३२६१ ॥

आजु लालन लटपटात माई आए अनुरागे।
अंग अंग आलस भरे रैनि उनींदे जागे ॥
लटपटी सिरपेच, पाग, छूटे बंधन लागे।
'सूर' स्याम जागे जहाँ, सोइ त्रिया बड़ भागे ॥ २६४३ ॥

राग बिभास ॥ ३२६२ ॥

आजु अनत जागे री मोहन, भोरहिं मेरे कीन्हौ है आवन।
सोभित भूषन अँग अँग आलस, लै लागे अनमिलौ मिलावन ॥
अब कैसैं पतियाति हौ प्रीतम, साँचे हौ सौंहनि, बोलनिबाहन।
जावक चिह्न लगाइ 'सूर' प्रभु, अब आए मोहिं असल सलावन ॥ २६४४ ॥

राग सुघराई ॥ ३२६३ ॥

आजु बन्यौ नव रंग पियारौ। ब्रज बनिता मिलि क्यौं न निहारौ ॥
लटपटी पाग महाउर पागी। कुँवरि मनावत अति बड़भागी ॥

पीक कपोल अधर मसि लागे। आलसवलित सवै निसि जागे ॥
कहुँ चदन कहुँ वदन की छवि। रैनिरंग अँग अग रह्यौ फवि ॥
'सूर' स्याम की यह छवि देखो। जीवन जन्म सफल करि लेखो ॥२६४५॥

राग सुघराई ॥ ३२६४ ॥

आजु वने नव रंग छवीले। डगमगात पग अँग अँग ढीले ॥
जावक पाग रँगी धौं कैसैं। जैसैं करी कहौ पिय तैसैं ॥
वोलत वचन वहुत अलसाने। पीक कपोलनि सौं लपटाने ॥
कुंकुम हृदय, भुजनि छविवदन। 'सूर' स्याम नारिनि मनफंदन ॥ २६४६ ॥

राग गौरी ॥ ३२६५ ॥

आजु वने वन तैं व्रज आवत।
जद्यपि हैं अपराध भरे हरि, देखि तऊ मोहि भावत ॥
नख रेखा मुक्तावलि कैं तट, अग अनूप लसी हैं।
मनौ सुरसरी ईस सीस तैं लै विधु कला धँसी हैं ॥
केलि करत काहू जुवती, कर कुमकुम भरि उर दीन्हौ।
मनौ सुरसती पंच धार ह्वै, नभ तैं आगम कीन्हौ ॥
वीच वीच कमनीय अंग पर, स्यामल रेख रही है।
सूरसुता मनु कनक भूमि पर, चारि प्रवाह वही है ॥
निरखत अग 'सूर' के प्रभु कौ, प्रगटित भई त्रिवेनी।
मम-वच-कर्म-दुरित-नासन कौं, मानहु स्वर्ग निसेनी ॥ २६४७ ॥

राग रामकली ॥ ३२६६ ॥

सखि सोभा अनुपम अति राजै।
नैन कोन की अंजन रेखा, पटतर कहूँ न छाजै ॥
खंजरीट मनु ग्रसित पन्नगी, यह उपमा कछु आवै।
दुग्ध सिंधु की गरल कला ज्यौं, कोटिक भ्रम उपजावै ॥
की सुरसरिता तट रवितनया, की पय पियति भुअंगिनि।
की अति मान मानि सागर तैं, उलटी जमुन तरंगिनि ॥
समरारी कौ सुजस, कुजस की, प्रगट एक ही काल।
किधौं रुचिर राजीव कोप तैं निकसि चली अलि माल ॥
'सूरदास' दासनि हितकर की, हरि हलधर की जोरी।
राधावर निसि रसिकसिरोमनि, कविकुल परी ठगौरी ॥ २६४८ ॥

राग अडानौ ॥ ३२६७ ॥

आए लाल उनींदे आपुन, पलिका पौढ़ो पलोटिहौ पाइ।
मेरी सकुच जिय मैं कत आनत, हौ तौ आज्ञाकारि सुभाइ ॥
यह अचरज आवत इन वातनि, मान करत मानत न मनाइ।
'सूर' स्याम ता वामहिं हित करि रसवस लीन्हौ कंठ लगाइ ॥ २६४९ ॥

राग ललित ॥ ३२६८ ॥

आजु अति रैनि उनींदे लाल।
तुम पौढ़ौ मैं चरन पलोटौं, पिय जनि जानौ ख्याल ॥
सुमन सुगंध सेज है डासी, देखत अंग विहाल।
मेरे कहैं न्हाहु, कछु भोजन, करौ न मदनगुपाल ॥

निसि स्रम भयौ पीर मोहिं आवति, सुनति परस्पर बाल ।
'सूर' स्याम सुनि वचन कपट तिय, भरि लीन्ही अँकमाल ॥ २६५० ॥

राग बिलावल ॥ ३२६९ ॥

स्यामहिं सुख दे राधिका निज धाम सिधारी ।
चित तैं कहुँ उतरत नहीं श्रीकुंजबिहारी ॥
रैंनि बिपिन रतिरस रह्यौ सो मनहिं बिचारैं ।
पिय सँग के अँग चिह्न जे दरपनहिं निहारैं ॥
इहिं अंतर चंद्रावली राधा गृह आई ।
अंग सिथिल छबि देखि कै जहँ तहँ भरमाई ॥
कह्यौ चहति कहत न बनैं मन मन अनुमाने ।
'सूर' स्याम सँग निसि बसी, निहचै इह जानै ॥ २६५१ ॥

राग आसावरी ॥ ३२७० ॥

चंद्रावलि सखियनि सँग लीन्हे, राधा कैं गृह आई (हो) ।
आजु अंग सोभा कछु औरै, हरिसँग रैंनि बिहाई (हो) ॥
अब तौ नहीं दुराव रह्ययौ कछु, कहौ साँच हम आगैं (हो) ।
अधर दसन छत, उरजनि नख छत, पीक पलक दोउ पागे (हो) ॥
हम जानी तुम कहौ प्रगट करि, स्यामसंग सुख माने (हो) ।
सुनहु 'सूर' हम सखी परस्पर, क्यौं न रैंनि जस गाने (हो) ॥ २६५२ ॥

राग बिलावल ॥ ३२७१ ॥

कहति सखिनि सौं राधिका, तुम कहति कहा री ।
मेरी सौं, का हँसति हौ, सुनि चकित महा री ॥
पीक कपोलनि यौं लग्यौ, मुख पोछन लागी ।
कहाँ स्याम कहँ मैं रही, कब धौं निसि जागी ॥
उरज करज निज करज कौ, गर हार सँवारत ।
सहज कछुक निसि मैं जगी, वचननि सर मारत ॥
कहति और की औरई, मैं तुमहिं दुरैहौं ।
'सूर' स्याम सँग जौ मिलौ, तुम सौं नहिं कैहौं ? ॥ २६५३ ॥

राग बिलावल ॥ ३२७२ ॥

आजु बनी नव रंग किसोरी । रसिक कुँवर मोहन सँग जोरी ॥
बिथुरी अलक सिथिल कटि डोरी । कनकलता मनु पवन झकोरी ॥
अधर दसन छत कछु छबि छोरी । दरपन लै देखौ मुख गोरी ॥
सुख लूटत अतिही भई भोरी । 'सूर' सखी डारति तृन तोरी ॥ २६५४ ॥

राग टोड़ी ॥ ३२७३ ॥

आजु बनी वृषभानु कुमारी । गिरिधर बर, राधा तू नारी ॥
हम सौं करति दुराव वृथा री । इनि बातनि तू लहति कहा री ॥
आलस अंग, मरगजी सारी । ऐसी छबि कहिं काल्हि कहाँ री ? ॥
'सूरदास' छबि पर बलिहारी । धन्य धन्य तुम दोउ बरनारी ॥ २६५५ ॥

राग सारंग ॥ ३२७४ ॥

बनक बनी वृषभानु किसोरी ।
नख सिख सुंदर चिन्ह सुरति के, अरु मरगजी पटोरी ॥

उर भुज नील कंचुकी फाटी, प्रगटे हैं कुच कोरी।
नव घन मध्य देखियत मानहुँ, नव ससि की छवि थोरी॥
आलस नैन सिथिल कज्जल, वलि, मनि ताटंकनि मोरी।
मानहुँ खंजन, हंस कंज पर, लरत चंचु पुट तोरी॥
विथुरी लट लटकी भृकुटी पर, माँग सु मनि नग रोरी।
मानहुँ कर कोदंड काम अलिसैन कमल हित जोरी॥
अति अनुराग पियत पियूष हरि, अधर सिधु हृद फोरी।
'सूर' सखी निसि संग स्याम के, प्रगट प्रात भई चोरी॥ २६५६॥

राग सानुत॥ ३२७५॥

राधे तू अति रंग भरी।
मेरै जान मिली मोहन सौं, अंचल पीक परी॥
छूटी लट, टूटी नकवेसरि, मोतिनि की दुलरी।
हौं जानति हौं फौज मदन की लूटि लई सगरी॥
अरुन नैन, मुख सरद निसाकर, कुसुम गलित कवरी।
'सूरदास प्रभु गिरिधर कैं सँग, सुरति समुद्र तरी॥ २६५७॥

राग नट॥ ३२७६॥

मै जानी तेरे जिय की वात सोड, गात चिह्नहु कहे देत माई।
आलस तन मोरै, भुजनि जँभाइ जोरै, लागत सुहाई पिय मनभाई॥
वैन, ऐन, नैनसैन देखिए सिंगार वार विथुरे रति देत जनाई।
'सूरदास' प्रभु की सु नजरि उदित अग, हिलनि मिलनि तुव प्रीति प्रगटाई॥२६५८॥

राग सूही॥ ३२७७॥

नहिन दुरत हरि पिय कौ परस।
उपजत है मन कों अति आनंद, अधरनि रँग नैननि कौ अरस॥
अंचल उड़त अधिक छवि लागति, नखरेखा उर वनी वरस।
मनु जलधरतर वाल कलानिधि, कवहुँ प्रगटि दुरि देत दरस॥
विथुरी अलक सुदेस देखियति, स्रम-जल तैं मिटचौ तिलक सरस।
'सूर' सखी बूझैहुँ न वोलत, सो कहि धौ तोहि कौन तरस॥ २६५९॥

राग विलावल॥ ३२७८॥

तोहि छवि राजै व्रजराजसंग जागे की।
कर सौ कर जोरि कै जम्हाति ऐड़ात गात, दुरि मुरि रही लसि अलक जु आगे की॥
कवहूँ पुनि पलक झपकि मन भावत, अति अँखियाँ अरुन भई प्रेम पागे की।
'सूरदास' प्रभु सुख प्रगट उमँगि रह्यो, देखत वनति छवि स्याम उर लागे की॥
॥ २६६०॥

राग देवसाख॥ ३२७९॥

(अरी मैं जानि) पाए चिह्न दुरै न दुराए।
अति अलसाति जम्हाति पियारी, स्यासकाम वनधाम पुराए॥
कहा दुराव करति री प्यारी, कोटि करै मुख नैन भुराए।
सुमनहार सी मरगजि डारी, पिय प्यारे रँगरैनि जगाए॥
प्रगट नहीं तू करति, डरति किहिं सुरतिसेज रतिकाम लजाए।
'सूरस्याम' तोहि रस-वस कीन्ही, जात नहीं मन तैं विसराए॥ २६६१॥

राग सारंग ॥ ३२८० ॥

काहे कौ दुरावति नैन नागरी ।
जानति हौ नँदलाल रसिक पिय, मिलि सब रजनी जाग री ॥
सुरति समैं के मुखतमोर मिलि, लोचन परसत लाग री ।
मनहुँ सरदविधु भए पद्म जुग, मुकुलित लहि अनुराग री ॥
उरज करज मानौ, सिव सिर पर, ससिसारग सुभाग री ।
अरुन कपोल अक अलकैं मिलि, उरगकामिनी आग री ॥
हरि पुनि चतुर चतुर अति कामिनि, कैं तू रूप की आगरी ।
'सूरदास' प्रभु बस करि लीन्हे, धनि तिय तेरो सुहाग री ॥ २६६२ ॥

राग टोड़ी ॥ ३२८१ ॥

लालन सौं रति मानी जानी, कहे देत नैना रग भाए ।
चचल अचल कतहिं दुरावति , मानहुँ मीन महाउर धोए ॥
पीक कपोलनि तरिवन कैं ढिग, झलमलाति मोतिनि छवि जोए ।
'सूरदास' प्रभु छवि पर रीझे जानति हौं निसि नैंकु न सोए ॥ २६६३ ॥

राग विलावल ॥ ३२८२ ॥

भामिनि शोभा अधिक भई री ।
सुपक बिंब सुकखडित, मडित अधरसुधा मधु लाल लई री ॥
राजित रुचिर कपोल माँहि वर रदमुद्रावलि, नाह दई री ।
मनहुँ पीक दल, सीचि स्वेद जल, आलवाल रति वेलि वई री ॥
कचुकिवँद विगलित सुललित छवि, उच्च कुचनि नखरेख नई री ।
मनहुँ सिंदूर-पूर-दुति-दरसित, कचनकुभ दरार लई री ॥
आलस भृकुटी अलक छुटी मनु, टूटी पनच सत जूझ जई री ।
नैन सु ऐंन कटाच्छ लगे सर, सिथिल भई मति, मैन ढई री ॥
ढीली नीवी, गोरी भोरी, पिय कैं सँग रँगराग रई री ।
'सूरज' श्रीगोपालविलासिनि, चद्रवदनि आनदमई री ॥ २६६४ ॥

राग विलावल ॥ ३२८३ ॥

दोउ कर जोरि लेति जँम्हाई ।
सोभा कहत वनति नहि मोपैं, आजु सखी पिय सँग तैं आई ॥
सोइ आभा पुनि फेरि फवति है, विधि आपुन रुचि रचित वनाई ।
मानहुँ कुमुदिनि कनक मेरु चढि, ससि सनमुख मुद सहित सिधाई ॥
सोभित चिकुर ललाट, वदन पर, कुचित कुटिल अलक बिथुराई ।
नागवधू मनु अमी कोप तैं, कैं मधुपान भ्रमर ह्वै आई ॥
झुकि झुकि परति प्रेममदमाती, उमँगि उमँगि तनु देत दिखाई ।
'सूरदास' प्रभु सखी सयानी, चुटुकिनि देत न उहिं लखि पाई ॥ २६६५ ॥

राग धनाश्री ॥ ३२८४ ॥

आलस भरि सोभित सुभामिनी ।
राजत सुभग नैन रतनारे, हरिसँग जागत गई जामिनी ॥
वाहँ उचाइ जोरि जँमुहानी, ऐंडानी कमनीय कामिनी ।
भुज छूटैं छवि यौ लागी, मनु टूटि भई द्वै टूक दामिनी ॥

कुच उतंग वर रचित कचुकी, विलसित त्रिवली उदर छामिनी।
देखियत मनहुँ मदन-नृप तन हरि रस जीते राधिका नामिनी॥
विथुरी अलक, सिथिल कटिडोरी, नखछत छरित, मरालगामिनी।
दुगुन सुरति सजि श्रीगुपाल भजि प्रमुदित 'सूरजदास' स्वामिनी॥ २६६६॥

राग नट॥ ३२८५॥

खजन नैन सुरँग रसमाते।
अतिसय चारु विमल, चचल ये, पलपिंजिरा न समाते॥
बसे कहूँ सोइ बात सखी, कहि रहे इहाँ किहिं नातैं?
सोइ सज्ञा देखति औरासी, विकल उदास कला तैं॥
चलि चलि जात निकट स्रवननि के सकि ताटक फँदाते।
'सूरदास' अजन गुन अटके, नतरु कबै उडि जाते॥ २६६७॥

राग बिलावल॥ ३२८६॥

भोरहि सोभा सिर सिंदूर।
जुगल पाटि घनघटा, बीच मनु उदय कियौ नव सूर॥
मन्मथरथ आनदकद मुख, चदकला परिपूर।
चक्र तटक, निसक सुदृग मृग, जनु रन तम सम जूर॥
सुंदर वर नासिकादेस पर, बेसरिमुक्ता रूर।
किधौं तूल तिल फूलनि कर कन, किधौं असुर-गुरु-कूर॥
रदसद दामिनि, अधरसुधा मधु, रूप-झपा-झकझूर।
वचनरचन माधुरी अधर पर, कौन कोकिला कूर॥
उच्च उरोज, मनोज नृपति के, जोबन-कोट-कँगूर।
हरिसरि कटितट लरकि जाइ, जिमि बिसद-नितंब-गरूर॥
कदली जंघ, मराल मंद गति रूप अनूप समूर।
'सूरदास' स्वामिनि सोभा पर, वारति सखि तृन तूर॥२६६८॥

राग रामकली॥ ३२८७॥

मोसौं कहा दुरावति प्यारी।
नंदलालसँग रैनि बसी री, कोक-कला-गुन भारी॥
लोचनपलक पीक अधरनि की, कैसै दुरत दुराएँ।
मनौ इंदु पर अरुन रहे बसि, प्रेम परस्पर भाए॥
अधर दसनछत की अति सोभा, उपमा कही न जाइ।
मनौ कीर फल बिंब चोंच दै, भख्यौ न, गयौ उड़ाइ॥
कुच-नख-रेख धनुष की आकृति, मनु सिव-सिर-ससि राजै।
सुनत 'सूर' प्रिय वचन सखीमुख, नागरि हँसि मन लाजै॥२६६९॥

राग धनाश्री॥ ३२८८॥

प्यारी सुनत सखी मुख बानी, हँसि मुसुकाइ रही।
नैननि रही लजाइ, मुदित चित मानी बात सही॥
तोसौं कहा दुराव करौगी, तू प्रानिन तैं प्यारी।
कहा कहौं वह मिलनि स्याम की, क्रीडा कहति उघारी॥
रति-सुख-अत रची इक लीला, कहो कि धरौं दुराइ।
'सूरदास' प्रभु के गुन आली, चितही रहे समाइ॥ २६७०॥

राग सोरठ ॥ ३२८९ ॥

राधा अब जनि कछू दुरावै।
हा हा करि चरननि सिर नावति, अपनी सौंह दिवावै ॥
वहै कथा मोसौं कहि प्यारी, चरित कहा हरि कीन्हौ।
जा रस मैं तू मगन भई है, कौन अंग सुख दीन्हौं ॥
उछलित भयौ सुधा उर घट तै, सुख मारग न सम्हारै।
'सूर' स्याम रस छकी राधिका, कहत न बनै विचारै ॥ २६७१ ॥

राग गुडमलार ॥ ३२९० ॥

स्याम रतिअंत रन बहै कीन्हौ।
कहत पुनि पुनि कहा अंग अंबर सजहु, मैं रही सकुचि, गहि प्राय लीन्हौ ॥
कियौ तब मैं कहा, लरी सारंग सो, सारंगधर धरनि तब नग्न चांपी।
सेष सहसौ फननि मनिनि की ज्योति अति, वाम तै कंठ लपटाइ कांपी ॥
रही उनकी टेक, चलै मेरी कहा, धरनि गिरिराज-भुज-गवलधारी।
'सूर' प्रभु के सखी सुनहु गुन रैनि के, वै पुरुष मैं कहा करौं नारी ॥
॥ २६७२ ॥

राग नट ॥ ३२९१ ॥

आजु हौं मधिक हँसी मेरी माई।
कामविवस मोसो रति बाढ़ी, अवलोकत मम भाँई ॥
रवि-ससि-कांति सु उग भवन मैं, ठाढ़ी ही उठाई।
विस्मय बढ्यौ प्रतिबिंब प्रतिहि प्रति, अंक दई ल्दुराई ॥
कर अंचल मुख मूंदि रही हौं दीन देखि हँसि गई।
'सूरदास' प्रभु निहचै जानी, तबहिं उलटि उर लाई ॥ २६७३ ॥

राग आसावरी ॥ ३२९२ ॥

धन्य धन्य वृषभानु कुमारी गिरिवरधर बस कीन्हे (री)।
जोइ जोइ साध करी पिय रस की, सो सब उनकौं दीन्हे (री) ॥
तोसी तिया और त्रिभुवन मैं, पुरुष स्याम से नाहीं (री)।
कोक-कला-पूरन तुम दोऊ, सब न कहूँ हरि जाहीं (री) ॥
ऐसे बस तुम भए परस्पर, मोसौं प्रेम दुरावै (री)।
'सूर' सखी आनँद न सम्हारति, नागरि कंठ लगावै (री) ॥
॥ २६७४ ॥

राग विलावल ॥ ३२९३ ॥

स्याम गए उठि भोरहीं, वृंदा कैं धाम।
कामा कैं गृह निसि बसे, पुरयौ मनकाम ॥
सांझ गए कहि आइहौं, बहुनायक नाम।
सेज सँवारति आस लै, ऐसैंहि गई जाम ॥
अरुन उदै द्वारै खरे, देखत भई ताम।
रिसनि रही झहराइ कै, मनहीं मन बाम ॥
चिन्ह और अँग नारि के, बिनु उर दाम।
'सूरदास' प्रभु गुनभरे, आलस तनु झाम ॥ २६७५ ॥

राग बिलावल ॥ ३२९४ ॥

लालन आए रैनि गँवाइ।
निसि भई छीन, बोले तनचुर खग, ग्वालनि ढीली गाइ॥
अरुन-किरन-सुख पंकज बिगसित, मधुप लियौ रस जाइ।
चंद्र मलीन भयौ, दिनमनि तैं कुमुद गए कुँभिलाइ॥
चारि जाम जागत मोहिं बीते, तुम बिनु कछु न सुहाइ।
'सूर' स्याम या दरसपरस बिनु, निसि गई नींद हिराइ॥ २६७६ ॥

राग बिलावल ॥ ३२९५ ॥

नीकै आए गिरिधर नागर।
तुम्हरीं चिता अरुन नैन भए, सकल निसा के जागर॥
रति के समाचार लिखि पठए, सुभग कलेवर कागर।
जिय की कृपा तबहि हम जानी, भोर खुलाई आगर॥
बलि बलि गई मुखारबिंद की, सुरतिसिंधु, रससागर।
जाकै रसबस भए 'सूर' प्रभु, ऐसी कौन उजागर॥ २६७७॥

राग बिभाष ॥ ३२९६ ॥

तुम्हरे पूजियै पिय पाइ।
बहुत बात उपजति है तुमकौं, कहत बनाइ बनाइ॥
अधरा अरुन स्याम भए कैसैं, आए पट पलटाइ।
चारु कपोल पीक कहँ लागी, उरज पत्र लिखवाइ॥
नंदकुमार जहाँ निसि जागे, तहँ सुख देखौ जाइ।
'सूरदास' सब भाँति अटपटी, अब मन क्यो पतियाइ॥ २७६८ ॥

राग बिलावल ॥ ३२९७ ॥

मोहन काहे कौ लजियात।
मूँदि कर मुख रहे, सनमुख कहि न आवति बात॥
अहि-लता-रँग मिटचौ अधरनि, लग्यौ दीपकजात।
रुचिर कुसुम बँधूक मानो, समय गए कुम्हिलात।
नैन मुद्रित सकुचै जैसैं, उदय ससि जलजात।
जुगल पुतरी जनु निकसि चल, अलि उरझि अध गात॥
चारि जाम जु निसि उनींदे, अलस बसहिं जम्हात।
'सूर' ऐसी मदन. मूरति, निरखि रति मुसुकात॥ २६७९ ॥

राग बिलावल ॥ ३२९८ ॥

सकल निसि जागे के से नैन।
जानति हौं अति किये कोकनद, आन-रमनि-सुख चैन॥
लटपटी पाग, चाल गति उलटी, रसन अटपटे बैन।
लगति पलक उघरति न उघारैं, मनु खडित रसऐन॥
तमचुर टेरत ही उठि धाए, अब दूनौ दुख दैन।
जानी प्रीति 'सूर' प्रभु अब हम, सुरति भई गत मैन॥ २६८० ॥

राग बिलावल ॥ ३२९९ ॥

आजु और छवि नंदकिसोर।
मिलि रसरुचि लोचन भए रोचन, चितवत चित्त पराई ओर॥

सोभित पीठि प्रगट कर कंकन, सोनित हार हियैं बिनु डोर।
सोभित पीत बसन दोउ राते, अधरनि अंजन नैन तमोर॥
नख सिख लौं सिंगार अटपटे, पाए मनहुँ पराए चोर।
फूले फिरत दिखावत औरनि, निडर भए दै हँसनि अँकोर॥
देखत बनै कहत नहिं आवै, बैसैंधि बरनत कबिनि कठोर।
अचरज क्यों न होत इनि बातनि 'सूर' ग्रहन देखै बिनु भोर॥ २६८१ ॥

राग सूही बिलावल ॥३३००॥

अतिहिं अरुन हरि नैन तिहारे।
मानहुँ रतिरस भए रँगमगे, करत केलि पिय पलक न पारे॥
मंद मंद डोलत सकित से, सोभित मध्य मनोहर तारे।
मनहुँ कमलसंपुट महँ बीधे, उडि न सकत चंचल अलि बारे॥
झलमलात रतिरैनि जनावत, अति रसमत्त भ्रमत अनियारे।
मनहुँ सकल जुवती जीतन कौं, कामबान खरसान सँवारे॥
अटपटात, अलसात पलकपट, मूँदत कबहूँ करत उघारे।
मनहुँ मुदित मर्कतमनि आँगन, खेलत खजरीट चटकारे॥
बार बार अवलोकि कनखियनि, कपट नेह मन हरत हमारे।
'सूर' स्याम सुखदायक लोचन, दुखमोचन, रोचन रतनारे॥२६८२॥

राग बिलावल ॥ ३३०१ ॥

नहिँन दुरत नैना रतनारे।
मनहुँ बँधूक कुसुम पर सोभित, सुंदर स्याम सिलीमुख तारे॥
कुटिल अलक रही बिथुरि बदन पर नकुच सहित हरि नरम निहारे।
भौंह सिथिल मनु मदन-धनुष-गुन गरे, कोकनद बान बिसारे॥
मूँदइ आवत नैन अलस बस, छीन भए उघरत न उघारे।
'सूरदास' प्रभु सु पै कहौ तुम, कौ भामिनि जहँ रतिरन हारे॥२६८३॥

राग बिलावल ॥ ३३०२ ॥

रति-संग्राम-बीर-रस माते।
है हरि सूरसिरोमनि अबहूँ, नहिंन सँभारत ताते॥
आनहिं बरन भए दोउ लोचन, अपने सहज बिनाते।
मानहुँ भीर परी जोबनि की, भए क्रोध अति राते॥
बैठि जात, अलसात उनींदे, क्रम क्रम उठत तहाँ ते।
परिमललुब्ध मधुप जहँ बैठत, उडि न सकत तिहिं ठाँ ते॥
मन मूरछा, कटाच्छनाटसल, कढि न सकत हियरा ते।
मनहुँ मदन के है सर पाए फोक बाहिरी घाँते॥
डगमगात घूमत जनु घायल, सोभा सुभट कला ते।
'सूरदास' प्रभु रतिरन जीते, अब सकात धौं काते॥ २६८४ ॥

राग बिलावल ॥ ३३०३ ॥

नैन उनींदे भए रँगराते।
मनहुँ सुरंग सुमन पर सजनी, फिरत भृंग मदमाते॥
प्रेमपराग, पाँखुरी पलदल, प्रफुलित मदनलता तैं।
सुभग सुहास बिलासबिलोकनि, प्रगट प्रीति करी तातैं॥

तैसोइ मारुत मद जम्हावरि मिलित, मुदित छवि याते।
सीचे 'सूर' स्याम मानिनि कर, हित सौं केलि कला तैं॥ २६८५ ॥

राग रामकली ॥ ३३०४ ॥

आए सुरति-रग-रस-माते।
मानहुँ छिन विस्राम निमित पिय, स्रमित भए हैं ताते॥
डगमगात मग धरत परत पग, उठत न वेगि तहाँ तैं।
मनु गज मत्त चरन साँकर करि, गहि आनत तिहिं ठाँ तैं॥
उर नखछत ककनछत पाछै, सोभित हैं रुहिराते।
मदन सुभट के वान लागि मनु, निकसि गए उहि घाँ तैं॥
साँचे करत आपने बोलनि, टरत न मरजादा तैं।
'सूर' स्याम कहि गए आइहैं, पग धारे तिहि नातैं॥ २६८६ ॥

राग विलावल ॥ ३३०५ ॥

अरुन नैन राजत प्रभु भोरे।
रतिसुख सुरति किये ललना सँग, जात समद मनमथ सर जोरे॥
अति उनीदे, अलसात, भरम गति, गोलक चपल सिथिल कछु थोरे।
मनहुँ कमल कैं कोप तमीतम, उठत रहत छवि रिपु दल दो रे॥
सोभित सुभग सजल प्रति कोरै, सगमछवि तारेऽरुन डोरे।
मनु भारति कै भँवर मीनसिसु, जात तरल चितवत चित चोरे॥
वरनि न जाइ, कहाँ लगि वरनौ, प्रेम-जलधि-वेला वर वोरे।
'सूरदास' सो कौन तिया जिनि, हरि के अग अग वल तोरे॥
॥ २६८७ ॥

राग विलावल ॥ ३३०६ ॥

काहे कौ पिय भोरहीं, मेरै गृह आए।
इतने गुन हम पै कहाँ, जे रैनि रमाए॥
ताही कैं पग धारियै, चक्रित मैं जाने।
विनु गुन गडि माला रही, नहि कहुँ विहराने॥
आए हौ सुख देन कौ, ऐसेइ हितकारी।
'सूर' स्याम तुम जोग कौ, को वैसी नारी॥ २६८८ ॥

राग विलावल ॥ ३३०७ ॥

कृपा करी उठि भोरहीं मेरैं गृह आए।
अब हम भई वडभागिनी, निसिचिह्न दिखाए॥
जावक भालनि सौ दियौ, नीकैं वस पाए।
नैन देखि चक्रित भई, त्यौ पान खवाए॥
अधरनि पर काजर वन्यौ, वहुरग कहाए।
वंदन विदुली भाल की, भुज आप वनाए॥
यह मोसौं तुमही कहौ, उरछत अरुनाए।
'सूर' स्याम जसरासि हौ, धनि तिया हँसाए॥ २६८९ ॥

राग भैरव ॥ ३३०८ ॥

जाहु तही कह सोचत हौ।
जा सँग रैनि विहात न जानी, भोर भए तिहिं मोचत हौ॥

औरनि कौ छिनु जुग बीतत है, तुम निहचीते नागर हो।
झूमत नैन, जम्हात बारहीं, रति-सग्राम-उजागर हो॥
मैं अब कहति तिहारे हित की, ताही कैं गृह सोइ रहो।
'सूर' स्याम वैसी तिय को है, वह रस वाही बिनु न लहो॥
॥ २६६० ॥

राग भैरव ॥ ३३०६ ॥
हमही पर पिय रूसे हौ।
बोलत नही मूक क्यों ह्वै रहे, अँग रँगहीन कछू से हौ॥
तब निरखत औरहि हित हमसों, कोधौ कहुँ तुम दूसे हौ।
तब हँसि मिलत आजु कछु औरहि, भए निठुरई पूगे हौ॥
डगमगात पग उतहिं परत है, चित चचल उत हूसे हौ।
'सूरदास' प्रभु साँच भाषिये, तिया कौन बल मूसे हौ॥
॥ २६६१ ॥

राग बिलावल ॥ ३३१० ॥
हरपि स्याम पिय बाहँ गही।
चूक परी हमको यह बकसौ, आवन कौ कहि गए नही॥
रिसनि उठी झहराइ, झटकि भुज, छुवत कहा पिय सरम नही।
भवन गई आतुर ह्वै नागरि, जे आई मुख सबै कही॥
मेरैं महल आजु तैं आवहु, सौंह नद की कोटिक ही।
'सूर' स्याम जब लौ जग जीवौ, मिलौ नहीं बरु काम दही॥२६६२॥

राग नट नारायन ॥ ३३११ ॥
नागरी निठुर मान गह्यौ।
पीठि दै रिसकाँपि बैठी, फिरि न उतहिं चह्यौ॥
स्याम मन अनुमान कीन्हौ, रिसनि व्याकुल नारि।
तनकही रिस खोइ डारौ, यह प्रतिज्ञा धारि॥
सखी एक सुभाव अपनैं, गए ताकैं गेह।
यह चरित सब कह्यौ तासौं, चतुर लख्यौ सनेह॥
गई आतुर नारि ताकैं, लख्यौ नैननि कोर।
चकृत बाला नदसुत बिनु लह्यौ हठ को छोर॥
भुजा गहि कही कियो का रिस, सही ब्रज की ग्वारि।
'सूर' प्रभु सौं मान कीन्हौ, हृदय देखि विचारि॥ २६६३ ॥

राग कान्हरौ ॥ ३३१२ ॥
बाहँ गही कही आँगन ल्याई।
बहुनायक उनकौं नहि जानति, बड़ी चतुर हौ माई॥
मैं जु कहति स्रवननि सुनि, चित धरि, जोबन धन राखे कौ।
चलि गहि भुजा मिलै किन हरि सौं, कहा निठुर अपने कौ॥
तू ही गहति न बाहँ जाइ कै, मोसौं बाहँ गहावति।
सुनहु 'सूर' मैं सौंह करी है, तू मोहिं तिनहिं मिलावति॥ २६६४ ॥

राग कान्हरौ ॥ ३३१३ ॥
कहा कहति तू मिलिहि रही है।
मोसौं करति कहा चतुराई, उनि यह भेद कही है॥

जौ हठ करचौ भली नहि कीन्ही, ये दिन ऐसे नाहिं।
कै इहँई पिय कौ न वुलावै, कै तहँई चलि जाहि॥
वै सव गुन लायक, तू नागरि, जोवन दिन द्वै चारि।
'सूर' स्याम कौ मिलि सुख लेहि न, पुनि पछितैहै नारि॥ २६९५ ॥

राग कान्हरौ ॥ ३३१४ ॥

वहुरि पछितैहै री व्रजनारि।
देखि जाइ ठाढ़े मग जोवत, सुँदर स्याम मुरारि॥
ऐसी निठुर नैकु नहिं चितवति, चचल नैन पसारि।
कहा गर्व या झूठे तन कौ, देखि हाथ लै वारि॥
तजि अभिमान मानि री मानिनि, मैं जु करति मनुहारि।
'सूर' हंस स्वाती-मुत-धोखै, कवहुँक खात जुवारि॥ २६९६ ॥

राग केदारौ ॥ ३३१५ ॥

मानि न मानि री लाल मनाइहैं, तेरी आँखिनि मै पैयत है।
कत सकुचति मैं सव जानति, ऐसी प्रीति क्यौ दुरैयत है॥
मेरौ विलग मानति यह जानति, इनि वातनि मैं कछु पैयत है।
'सूर' स्याम न्यारे न वूझियै, काहे कौ री अनखैयत है॥२६९७॥

राग विलावल ॥ ३३१६ ॥

वहुरि मिलैगी कालिही, चित समुझि सयानी।
मेरौ कह्यौ न क्यौं करै, क्यौ भई अयानी॥
अनलहि औषधि अनल है, सव जानि रही हौ।
काहे कौं हठ करति हौ, वेकाज वही हौ॥
धरनीधर व्याकुल खरे री गर्व गहेली।
'सूर' कह्यौ सुनि मानि लै, मैं कहति सहेली॥ २६९८ ॥

राग सोरठ ॥ ३३१७ ॥

स्याम धरचौ तियमोहन रूप।
दूती प्रिया संग इक लीन्हे, अंग त्रिभंग अनूप॥
अंतरद्वार आइ भए ठाढे, सुनत तिया की वातैं।
सरुस वचन जु कहति सखि आगैं, कहौ मिलैं किहिं नातैं॥
कपटी, कुटिल, क्रूर कहि आवत, यह सुनि सुनि मुसुकात।
'सूरदास' प्रभु हैं वहुनायक, तुहीं कहति यह वात॥ २६९९ ॥

राग मलार ॥ ३८१८ ॥

जौ लौ माई हौ जीवन भरि जीवौ।
तौ लौ मदनगुपाल लाल कैं, पथ न पानी पीवौ॥
करौ न अंजन, धरौ न मरकत, मृगमद तनु न लगाऊँ।
हस्त वलय, कटि ना पट मेचक, कंठ न पोत वनाऊँ॥
सुनौं न स्रवननि अलि-पिक-वानी, नैन न नव घन देखौ।
नील कमल कर धरौ न कवहूँ ,स्यामसरीखे लेखौ॥
इतनी कहत आइ गए मोहन, लिये प्रिय दूती संग।
[illegible] टेक मान की, निरखि रसिक के अंग॥

अति रति लीन भई भामिनि सँग, तब कर गहि कर लीन्हौ।
'सूरदास' प्रभु रसिकसिरामनि, मिलि जु सुधासुख दीन्हौ ॥ २७०० ॥

राग धनाश्री ॥ ३३१६ ॥

कवि गावत हरि मोहन नाम।
गाढ़ौ मान दूरि करि डारयौ, हरष भई मन बाम ॥
ऐसे चरित और को जानै, धन्य धन्य नँदलाल।
जौ ये गुन तौ हरत तियनि मन, अति हरषित भई बाल ॥
मिटयौ कामतनु काम तुरत ही, रिझई मदनगुपाल।
'सूर' स्याम रसबस करि लीन्ही, यहै रच्यौ इक ख्याल ॥ २७०१ ॥

राग मलार ॥ ३३२० ॥

सखी री कठिन मानगढ़ टूटयौ।
श्रीगुपाल बिहँसनि बल आतप, चल्यौ अतिहि गोलनि कौं जूटयौ ॥
करि प्रतिहार तज्यौ सुर गोपुर, तब कचुकी कोट सन फूटयौ।
कामअग्नि उपजी उर अतर, मौन सुभट कौ तब रन छूटयौ ॥
कुच लोचन दोउ लरे सौंह ह्वै, भौंहकमान कुटिलसर छूटयौ।
विद्याचारि गुपाल लाल की, सूरदास' तजि सर्वस लूटयौ ॥ २७०२ ॥

राग गुड मलार ॥ ३३२१ ॥

स्याम गुनरासि मानिनी मनाई।
रह्यौ रस परस्पर मिटयौ तनु-विहर-झर भरयौ आनँद तिय उर न माई ॥
कबहुँ रति सहज, कबहूँ करत विपरीत, बासरहि तैं सबै रैनि बीती। ..
स्रमित दोउ अँग भए, अतिहि विह्वल परे सेज रतिपति जीति बढी प्रीती ॥
भोर भए चले निजु सदन पितु मातु कै, फिरे सकुचे देखि नंद द्वारै।
'सूर' प्रभु स्याम गए सकुचि प्रमुदाधाम, कहति ये गुन भले हरि तुम्हारे ॥ २७०३ ॥

राग गुड मलार ॥ ३३२२ ॥ वृंदा के धाम से प्रमुदा के धाम गमन

कहाँ हे स्याम, कहँ गमन कीन्हौ।
कहाँ तुम रहत, कबहूँ दरस देत नहिं धोखैं गए आइ हम मानि लीन्हौ ॥
नैन आलस भरे, चरन जुग लरखरे, कहा हौ डरे, सो कहौ मोसौं।
रैनि कहँ बसे, तिय कौन सौ रसे हौ, उर करज कसे, सो कहौ मोसौं ॥
भले जू भले नँदलाल वेउ भली, चरन जावक पाग जिनहि रंगी।
'सूर' प्रभु देखि अँग अग बानक कुसल; मैं रही रीझि वह नारि चंगी ॥ २७०४ ॥

राग कल्यान ॥ ३३२३ ॥

सुनत हँसि चले हरि सकुच भारी।
यह कह्यौ आजु हम आइहै गेह तुव, तरकि जनि कही हम समुझि डारी ॥
नारि आनँद भरी, राँग सी ह्वै ढरी, द्वार अपनै खरी, प्रेम पुलकी।
गए कहि 'सूर' प्रभु रैनि बसिहै आजु, सजति शृंगार कछु सकुच कुलकी ॥ २७०५ ॥

राग कल्यान ॥ ३३२४ ॥

अंग शृंगार सुंदरि बनावै।
मिलौंगी स्याम निजु करि धाम आजुही, रैनि विलसौ काम मन मनावै ॥
सरस सुमनाजात सीस कर सौं करति, सीमंत अलक पुनि पुनि सँवारै।
माँग सूधी पारि निरखि दरपन रहति, ग्रथित कबीरीहि पाटी निहारै ॥

कमल, खंजन, मृगज, मीन लोचन जिते लेति, सारगसुत तहाँ ग्राँजै।
हार उर धरति, नखसिखहु भूपन भरति, 'सूर' प्रभु मिलनहित नारि राजै ॥ २७०६ ॥

राग कान्हरौ ॥ ३३२५ ॥

विधु वदनी ग्ररु कमल निहारे।
सुमनासुत लै कमलनि मज्जति, धनपतिधाम को नाम सँवारै ॥
तरनि-तात-वनिता-सुत ता छवि, कमलनि रचि रचि ग्रथित चारै।
कमल कमल पर रेख वनावति, सारँगरिपु पाहन गति ढारै ॥
उर हारावलि मेलति कमलनि, मनहुँ इदु पारस ढिग पारै।
'सूर' स्याम के नामहि जीतन, कमलापति कै पदहिं विचारै ॥ २७०७ ॥

राग ग्रासावरी ॥ ३३२६ ॥

ग्रग शृगार सँवारि नागरी, सेज रचति हरि ग्रावैंगे।
सुमन सुगध रचत तापर लै, निरखि ग्रापु सुख पावैंगे ॥
चंदन ग्रगरु कुमकुमा मिस्रित, स्रम तै ग्रग चढावैंगे।
मैं मन साध करौगी सँग मिलि, वै मन काम पुरावैंगे ॥
रति-सुख-ग्रत भरौगी ग्रालस, ग्रकम भरि उर लावैंगे।
रस भीतर मै मान करौगी, वै गहि चरन मनावैंगे ॥
ग्रातुर जव देखौं पिय नैननि, वचन रचन समुझावैंगे।
'सूर' स्याम जुवती-मन-मोहन, मेरे मनहि चुरावैंगे ॥ २७०८ ॥

राग विलावल ॥ ३३२७ ॥

नंद वहुनायकी, ग्रनतहि रहे जाई।
वह ग्रभिलाप करति रही, ताकौ विसराई ॥
वासर ऐसैंही गयौ, निसि जाम तुलानी।
नारि परी ग्रति सोच मैं, विरहा ग्रकुलानी ॥
ग्रावन कहि गए साँझहीं, ग्रजहूँ नहिं ग्राए।
कीधौ - कतहूँ रमि रहे, फँग परे पराए ॥
वेई है वहुनायकी, लायक गुन भारे।
'सूर' स्याम कुमुदा भवन, सुधि करि पगु धारे ॥ २७०९ ॥

राग केदारौ ॥ ३३२८ ॥

रहे हरि रैनि कुमुदा गेह।
परसपर दोउ प्रेम भीजे, वढचौ ग्रतिहि सनेह ॥
एक छिन इक जाम वितवति, कामरस वस गात।
ताहि वीतत जाम जुग सम, गनत तारा जात ॥
उनहिं वैसै, याहि ऐसै, रजनि गई भयौ भोर।
'सूर' मोसौ करि चतुरई, गए नंदकिसोर ॥ २७१० ॥

राग नट ॥ ३३२९ ॥

कुटिलई करी हरि मोसौ।
चित्त चिंता भरी सुदरि, करति मन गोसौ ॥
कहि गए निसि ग्राइहैं हरि, ग्रनत विरमे जाइ।
रैनि वीती, उदित दिनकर, देखि तिय मुरझाइ ॥

भवनही मन मारि बैठी, सहज सखि इक आइ।
देखि तन अति विरहव्याकुल, कहति वचन सुनाइ ॥
बोलि ढिग बैठारि ताको, पोंछि लोचन लोर।
'सूर' प्रभु कै विरह व्याकुल, सखि लखी मुख ओर ॥ २७११ ॥

राग गौरी ॥ ३३३० ॥

आज बिनु आनँद को मुख तेरौ।
कहा रही मन मारि भोरहीं, अति व्याकुल मन मेरौ ॥
मोसौं गोप करै जनि सुंदरि, नहिं पावति यह भाव।
सुनौं बात कैसी उपजी है, कछु जनि करै दुराव ॥
तब बोली मधुरी बानी सौं, कहा कहौं री तोहिं।
तेरे स्याम भले गुन नागर, कपटी कुटिल कठोहिं ॥
निसि बसिबे की अवधि बदी माहिं, साँझ गए कहि आवन।
'सूर' स्याम अनतहिं कहुँ लुबधे, नैन भए दोउ सावन ॥ २७१२ ॥

राग सोरठ ॥ ३३३१ ॥

ऐसे गुन हरि के री माई।
मैं पहिचानि रही हौं नीकें, कुटिल-सिरोमनि-राई ॥
अब मोसौं उनसौं कहि बनिहै, कछु मैं गई बुलावन।
आपुहि काल्हि कृपा यह कीन्ही, अजिर गए करि पावन ॥
तोको मिलै कहूँ मेरी सौं, तिनसौं यह तू कहियै।
'सूरदास' प्रभु बोल न साँचे, लाज कछू जिय गहियै ॥ २७१३ ॥

राग विहागरौ ॥ ३३३२ ॥

सखी री और सुनहु इक बात।
आजु गुपाल हमारै आए, उठि करि इहिं मिस प्रात ॥
कहुँ तैं रैनि उनींदे मोहन, अपनैं गृहतन जात।
आगैं द्वार नंद है ठाढ़ै, तातैं गए न सकात ॥
डगमगात मग धरत परत पग, आलसवंत जम्हात।
मानहुँ मदन दंड दै छाँड़े, चुटकी दै दै गात ॥
जौ मैं कह्यौ कहाँ रहे मोहन, तौ सनमुख मुसुकात।
तातैं कछू न उत्तर आयौ, सूर स्याम सकुचात ॥ २७१४ ॥

राग केदारौ ॥ ३३३३ ॥

तब हरि यह चतुरई करी।
कह्यौ मेरे धाम आवन, टार दै गए हरी ॥
आपुही श्रीमुख गए कहि सही कैसी परी।
सेज रचि तब रैनि जागी, तब रिसनि हौं जरी ॥
स्याम देखे द्वार ठाढे, मनहिं मन झरहरी।
कहति 'सूर' सुनाइ हरि कौ, धन्य यह सुभ घरी ॥ २७१५ ॥

राग बिलावल ॥ ३३३४ ॥

यहै कही कहि मौन रही।
मन मन कहति दरस अब दीन्हौ, निसिबस विरह डही ॥

मधुरे वचन सुनाइ सखी सौ, रिस वस भरे कही।
आए कहाँ जाहि ताही कै, चतुर तिया ढिग ही ।।
वा विनु उनकौ कौन मिलैगी, नहिं कोउ फिरति वही।
'सूरज' प्रभु इत कौ जनि आवै, पग धारै उतही ।। २७१६ ।।

राग विलावल ।। ३३३५ ।।

सखी निरखि अँग अंग स्याम के।
कहुँ चंदन, कहुँ वदनरेखा, कहुँ काजर छवि लखति वाम के ।।
आलस भरे नैन रतनारे, चतुर-नारि-सँग जगे जाम के।
अपनै मन यह सोच करत हरि, परी तियाफँग कठिन ताम के ।।
मान कियौ मो तन फिरि वैठी, आए है यह सुनत नाम के।
'सूर' स्याम इक वुद्धि विचारी, मनमोहन रति सहित काम के ।। २७१७ ।।

राग सूही ।। ३३३६ ।।

स्याम सैन दै सखी बुलाई।
यह कहि चली जाउँ गृह अपनै, तू तौ मान कियौ री माई ।।
अंतर जाइ भए हरि ठाढे, सखी सहज निकसी तहँ जाई।
मुख निरखत दोउ हँसे परस्पर, भवन जाहु मै लेउँ मनाई ।।
अंग दिखाइ गई हँसि प्यारी, सुरत चिह्न नीकी सुघराई।
सूरज-प्रभु-गुन-पार लहै को, जानि वूझि कीन्ही रिसहाई ।। २७१८ ।।

राग गौरी ।। ३३३७ ।।

सखी गई कहि लेउ मनाई।
ज्ञानिनि मनि, विद्यामनि, गुनमनि, चतुरनिमनि चतुराई ।।
प्रिया हृदय यह वुद्धि उपाई, ह्याँ तौ नही कन्हाई।
आतुर चली जमुन जल खोरन, काहू संग न लाई ।।
पहुँची जाइ तरनि-तनया-तट, न्हाइ चली अतुराई।
'सूर' स्याम मारग भए ठाढे, वालक मोहनराई ।। २७१९ ।।

राग विलावल ।। ३३३८ ।।

पाँच वरस के लाल ह्वै, तिय मोहन आए।
नागरि आगै ह्वै गई, तव वोल सुनाए ।।
कह्यौ कहाँ री जाति है, काकी तू नारी।
मोंहि पठाई स्यामलै, जाकी तू प्यारी ।।
यह सुनि नारि चकित भई, आपुन तहँ आए।
तव कर सौ कर गहि लियौ, देखत मन भाए ।।
अगम चरित प्रभु 'सूर' के, ते लखै न कोई।
स्याम नाम स्रवननि परचौ, हरषी मुख जोई ।। २७२० ।।

राग रामकली ।। ३३३९ ।।

हरषी निरखि रूप अपार।
गह्यौ कर सौ सदन ल्याई, जानि गोपकुमार ।।
स्याम मोकौ वोलि पठई, कहत है यह लाल।
भवन लै इनि भेद वूझौ, सुनौ वचन रसाल ।।

हृदय आनँद भई वाला, प्रेमरस बेहाल।
कुवँरि अंतःपुर गई लै, रच्यौ हरि तहँ ख्याल।।
तरुन ह्वै कर उरज परसे, दियौ अंचल डारि।
'सूर' प्रभु हँसि लई प्यारी, भुजनि अंकम धारि।। २७२१।।

राग टोड़ी।। ३३४०।।

मुख निरखत तिय चकित भई।
जो देखै अति तरुन कन्हाई, यह को लखै दई।।
छाँड़ि देहु ऐसे मनमोहन, हँसि मन लजित भई।
ऐसे छंद रचत पिय धनि धनि, कीन्ही करनि नई।।
अंकम भरि तिय कंठ लगाई, कुच उर चाँपि लई।
'सूर' स्याम मानिनि मनमोहन, रतिरस सौं भिगई।। २७२२।।

राग बिलावल।। ३३४१।।

स्याम मनाई मानिनी, हरषित भई अंग।
रैनि विरह तनु कौं गयौ, जे करे अनग।।
सुता महर वृषभानु की, सुधि कीन्ही स्याम।
ताकौ सुख दै हरि चले, प्यारी कै धाम।।
प्यारी आवत पिय लखे, चितई मुसुकाइ।
जिय डरपे मोहिं देखि कै, मुख कह्यौ न जाइ।।
अब न पियहिं उचटाइहौं, मोकौ सरमात।
त्रास करत मेरी जिती, आवत सकुचात।।
आनि द्वार ठाढे भए, नायकबहु नाम।
'सूरज' प्रभु अँग सहजही, निरखति रुचि बाम।। २७२३।।

राग गुंड मलार।। ३३४२।।

स्याम उर वाम निज धाम आए।
उतहिं प्रमुदा धाम सखी सहजहिं गई, अग के चिह्न कछु और पाए।।
देखि हरषी नारि, सकुच दीन्ही डारि, अतिहि आनँद भरी स्याम रगी।
सखी बूझति ताहि, हँसति ता मुख चाहि, स्याम कौ मिली री बनी चंगी।।
कहन लागी, कहा कहति तू आजु मोहिं, नाहिं नाही करत दुरत कैसै।
मिले प्रभु 'सूर' तोहिं, जानी यह चतुरई नही तू करति नहिं लखति जैसै।। २७२४।।

राग सूही।। ३३४३।।

नैन रँगीले चिहुर छबीले, काजर पीक आरसी देख।
मरगजे बसन अधर दसननि छत, नीकी लागी चदनरेख।।
काहे कौ तू मोहिं दुरावति, जानी अरस-परस-छवि सेप।
'सूरदास' प्रभु नदसुवन सँग अबहिं, सुरति रँग कौ सौ भेप।। २७२५।।

राग बिलावल।। ३३४४।।

अब तू कहा दुरावैगी।
मोहि कहति नहिं, काहि कहैगी, कब लौं बात लुकावैगी।।
मोसी और कौन प्रिय तेरैं, जासौ प्रेम जनावैगी।
मेरी सौ, उनकी सौ तोकौ, कहा दुराऐ पावैगी।।

औरनि सी मोहूँ को जानति, मो तैं बहुरि रमावैगी।
'सूर' स्याम तोहि बहुरि मिलैहौ, आखिर तौ प्रगटावैगी ॥ २७२६ ॥

राग बिलावल ॥ ३३४५ ॥

प्रमुदा अति हरषित भई, सुनि बात सखी की।
रोम रोम पुलकित भई, उपजी रुचि ही की ॥
कहति अबहिं ह्याँ तै गए, नँदसुवन कन्हाई।
चरित कहा उनके कहौं, मुख कह्यौ न जाई ॥
साँझ गए कहि आइहै, मोसौ री आली।
अनत बिरमि कतहूँ रहे, बहुनायक ख्याली ॥
रैंनि रही मैं जागि कै, भोरहि उठि आए।
मान कियौ रिस पाइ कै, पल माहिं छुड़ाए ॥
अगनित गुन प्रभु 'सूर' के, कहि तोहि सुनाऊँ।
अबहिं चरित करिकै गए, तेई गुन गाऊँ ॥ २७२७ ॥

राग रामकली ॥ ३३४६ ॥

आजु सखी जमुनामग मोहन, मोहिं छँदी छँद लाइ।
को तू आहि, कौन की वनिता, बात एक सुनि आइ ॥
बिहँसि कह्यौ मोहिं स्याम पठायौ, सुनत बिरह गति भूली।
रति-जल-जलज हियौ हुलस्यौ, मनु पुलक पाँखुरी फूली ॥
जानि कुमार गह्यौ कर सौं कर, ल्याई भवन बुलाइ।
नैन मूँदि, अचल गहि डारचौ, मैं माधौ मिलि आइ ॥
छैल छुयौ उर, बदन बिलोक्यौ, सकुचि रही मुसुकाइ।
छाँड़हु 'सूर' स्याम यह तुम्हरी, आवनि जानि न जाइ ॥ २७२८ ॥

राग धनाश्री ॥ ३३४७ ॥

आवत ही मैं तोहिं लख्यौ री।
तुमहूँ भली, उनकौ मैं जानति, बिंबहि कीर भख्यौ री ॥
अँग मरगजी पटोरी देखी, उर नखछत छवि भारी।
धनि वै नंदसुवन, धनि नागरि, कियौ सुरति नहिं हारी ॥
हँसत गई सखि भवन आपनै, मन आनंद बढ़ाए।
'सूर' स्याम राधिका धाम के, द्वारैं सीस नवाए ॥ २७२९ ॥

राग सारंग ॥ ३३४८ ॥

राधिका स्याम निरखि मुसुक्यानी।
हार बिनु गुन बन्यौ, अधर काजर रेख, नैन तंमोर, तुतरात बानी ॥
पाग लटपटी बनी, उरह छूटी तनी, अंग की गति देखि मन लजानी।
उपटि कंकन पीठि, वक्र बिह्वल डीठ, चतुरई चतुरभुज अधिक ठानी ॥
पानि पल्लव अधर दसन सौं गहि रहे, अरध बोलत बचन, हार मानी।
'सूर' प्रभु अंक भरि प्रानपति नागरी नवल नागर उरहिं घालि सानी ॥ २७३० ॥

राग बिलावल ॥ ३३४९ ॥

भली करी पिय ऐसेहूँ, मेरैं गृह आए।
लीन्हे कंठ लगाइ कै, बड़भागनि पाए ॥
कहा सोच जिय करत हौ, भुज गहि कर लीन्ही।
गई भवन भीतरु लिये, तहँ बैठक दीन्ही ॥

स्याम सकुचि अँग हेरही, नागरि पहिचानी ।
चिह्न निहारत डर कहा, आवत ही जानी ।।
या छवि पर उपमा कहौं, जौ त्रिभुवन होई ।
तुम जानत इहि रूप कौं, अरु लखै न कोई ।।
चंदन, वंदन, पान रंग, अधरनि काजर छवि ।
'सूर' स्याम-उर-करज कौं, को बरनि सकै कवि ।। २७३१ ।।

राग बिलावल ।। ३३५० ।।

काहे कौं पिय सकुचत हौ ।
अब ऐसौ जनि काम करौ कहुँ, जौ अतिही जिय अकुचत हौ ।।
अब की चूक नही जिय मेरे, और दिननि कौ जानि रहौ ।
सौंह करौ मेरी मो आगै, डर डारौ, जनि मौन गहौ ।।
यह सुनि स्याम हरषि कुच परसे, बार बार सिव सौंह करी ।
'सूर' स्याम गिरिधर गुन नागर, बात आजु तैं सही परी ।। २७३२ ।।

राग गुंड मलार ।। ३३५१ ।।

स्याम सौंह कुच परसि कियौ ।
नद सदन तैं अबही आवत, और तियनि कौं नेम लियौ ।।
ऐसी सपथ करी काहे कौं,जो कछु आजु करी सु करी ।
अब जु काल्हि तैं अनत सिधारौ, तब जानौंगे तुमहि हरी ।।
मैं सति भाव मिली हँसि तुमकौं, कहा आजु की सौंह करौ ।
'सूर' स्याम जु भई सु भई जू, अबतैं सबकौ नेम धरौ ।। २७३३ ।।

राग गुंड मलार ।। ३३५२ ।।

अहो राजति राजीव-नैन-छवि, उरग-लता-रँग लाग ।
जिहि वनिता रस वस कीन्हे निसि, प्रगट होत अनुराग ।।
सिथिल अग अरु सिथिल पाग बनी, सिथिल चरन गति आज ।
मनहुँ सेज-रेवा-ह्रद तैं उठि, आवत है गजराज ।।
भाल मध्य जावक रँग देखत, लागति है मोहि लाज ।
तुम अपनै जिय यौं जानत हौ, तिलक लोक-त्रय-राज ।।
हस वधु वर लोचनि ललना, मिलित, निसा-कृत-काज ।
वदनचद विय सधि जानि, नहिं वढत किरन मन लाज ।।
भवन-जीव-सुत लग्यौ अधर पर, यह छवि कही न जाइ ।
मनु वधूक सुमन ऊपर विय, अलि सुत बैठे आइ ।।
कुच-कुंकुम-अवलेप तरुनि किये, सोभित स्यामल गात ।
गत पतग, राकाससि विय सँग, घटा सघन सोभात ।।
स्याम हृदय लांछन, ता ऊपर लगी करज कृत रेप ।
मनहुँ वसंत-राज-रुचि-कीरति, अरुन-किसल-तरु-त्रेप ।।
काम वान वर लिये पच चितवत प्रति अँग अँग लाग ।
अव न जान गृह देउँ पियारे, जव आए तव भाग ।।
ता दिन तैं वृषभानुनंदिनी, अनत जान नहिं दीन्हे ।
'सूरदास' प्रभु प्रीति पुरातन, इहिं विधि रसवस कीन्हे ।। २७३४ ।।

राग बिलावल ॥ ३३५३ ॥ बड़ी मानलीला

सखियनि सँग लै राधिका, निकसी ब्रज खोरी।
चली जमुन अस्नान कौं, प्रातहि उठि गोरी ॥
नंदसुवन जा गृह बसे, तिहि बोलत आई।
जाइ भई द्वारैं खरी, तब कढे कन्हाई ॥
औचट भेंट भई तहाँ, चक्रित भए दोऊ।
ये इत तैं वै उतहि तैं, नहिं जानत कोऊ ॥
फिरी सदन कौं नागरी, सखि निरखति ठाढी।
स्नान दान की सुधि गई, अति रिस तनु बाढ़ी ॥
स्याम रहे मुरझाइ कै, ठगमूरी खाई।
ठाढ़े जहँ के तहँ रहे, सखियनि समुझाई ॥
इतने ही के ह्वै गए, गहि बाहँ लिवाई।
'सूरज' प्रभु कौं लै तहाँ, राधा दिखराई ॥ २७३५ ॥

राग रामकली ॥ ३३५४ ॥

राधेहिं स्याम देखी आइ।
महा मान दृढाइ बैठी, चितै कापै जाइ ॥
रिसहि रिस भई मगन सुंदरि स्याम अति अकुलात।
चकित ह्वै जकि रहे ठाढ़े कहि न आवै बात ॥
देखि व्याकुल नंदनंदन, सखी करति विचारि।
'सूर' दोऊ मिलैं जैसैं करौ सोइ उपचार ॥ २७३६ ॥

राग कान्हरौ ॥ ३३५५ ॥

सखि इक गई माननि पास।
लखति नहिं कछु भाव ताकौ, मिटी मन की आस ॥
कहौं कासों कौन सुनिहै, रिसनि नारि अचेत।
बुद्धि सोचति लिया ठाढी, नैकु नाहि सुचेत ॥
स्याम व्याकुल अतिहिं आतुर, इहिं कियौ दृढ़ मान।
'सूर' सहचरि कहति राधा बड़ी चतुर सुजान ॥ २७३७ ॥

राग कान्हरौ ॥ ३३५६ ॥

नाहिंन तेरौ अति हठ नीकौ।
मेरौ कह्यौ सुनै री सुंदरि मान मनायौ नागर पी कौ ॥
सोइ अति रूप सुलच्छनि नारी, रीझै जाहि भावतौ जी कौ।
प्यासे प्रान जाइँ जौ जल बिनु, पुनि कह कीजै सिंधु अमी कौ ॥
तौ जौ मान तजहुगी भामिनि, रवि की रस्मि काम फल फीकौ।
कीजै कहा समय बिनु सुंदरि, भोजन पाछैं अचवन घी कौ ॥
'सूर' स्वरूप गरब जोवन कै जानति हौ अपनैं सिर टीकौ।
जाकैं उदय अनेक प्रकासत, ससिहिं कहा उर कुमुद कली कौ ॥ २७३८ ॥

राग सारंग ॥ ३३५७ ॥

चितई चपल नैन की कोर।
मन्मथ बान दुसह अनियारे, निकसे फूटि हियै उहिं ओर ॥

अति व्याकुल धुकि धरनि परे, जिमि तरुन तमाल पवन कैं जोर ।
कहुँ मुरली, कहुँ लकुट मनोहर, कहुँ पट, कहूँ चद्रिका मोर ।।
खन बूड़त, खनही खन उछरत, विरह सिधु कैं परे झकोर ।
प्रेम सलिल भीज्यौ पीरौ पट, फटचौ निचोरत अंचल छोर ।।
फुरै न वचन, नैन नहि उघरत, मानहुँ कमल भए विनु भोर ।
'सूर' सु अधर सुधारस सीचहु मेटहु मुरछा नंदकिसोर ।। २७३९ ।।

राग नट ।। ३३५८ ।।

राधे तेरे नैन किधौ मृगबारे ।
रहत न जुगल भौंह जूये तैं, भजत तिलक रथ डारे ।।
जदपि अलक अजन गहि बाँधे, तऊ चपल गति न्यारे ।
घूँघट पट वाँगुर ज्यौ विडरत, जतन करत ससि हारे ।।
खुटिला जुगल, नाक मोती मनि, मुक्तावलि गरहारे ।
दोउ रुख लिये दीपिका मानौ, किये जात उँजियारे ।।
मुरली नाद सुनत कछु धीरज, जिय जानत चुचकारे ।
'सूरदास' प्रभु रीझि रसिक पिय, उमँगि प्रान धनवारे ।। २७४० ।।

राग सारंग ।। ३३५९ ।।

तव तैं मृगनि चौकरी भूली ।
उघरचौ वदन सहज घूँघट पट, सकुचे कमल कुमुदिनी फूली ।।
निरखि भौह मनमथ मन काँप्यौ, छूटचौ धनुष भुजा भइ लूली ।
'सूरदास' रति पाइँ पलोटति, हुती जो गरव हिँडोरे झूली ।। २७४१ ।।

राग नट ।। ३३६० ।।

राधे तेरे नैन किधौ री वान ।
यौ मारैं ज्यौ मुरछि परैं धर, क्यौ करि राखैं प्रान ।।
खग पर कमल, कमल पर कदली, कदली पर हठि ठान ।
हरि पर सरवर, सर पर कलसा, कलसा पर ससि भान ।।
ससि पर विंव, कोकिला ता विच, कीर करत अनुमान ।
वीच वीच दामिनि दुति उपजति, मधुप जूथ असमान ।।
तू नागरि सब गुननि उजागरि, पूरन कलानिधान ।
'सूर' स्याम तव दरसन कारन, व्याकुल परे अजान ।। २७४२ ।।

राग नट ।। ३३६१ ।।

राधे तेरे नैन किधौ वटपारे ।
तिहिं देखैं वन के मृग म हे, मानुन कौन विचारे ।।
अजन दै पिय कौ मन मोह्यौ, खजन मीन लजारे ।
चितवत दृष्टि वान भरि मारत, घूमत ज्यौ मतवारे ।।
गिरिधर रूप दियौ, सव तोकौ, कहिए तिन्है कहा रे ।
'सूरदास' प्रभु दरसन कारन, नाचत ज्यौ मतवारे ।। २७४३ ।।

राग सारंग ।। ३३६२ ।।

चल भामिनि की भौहै वंक ।
अलक-तिलक-छवि चित्र लिखी सी, स्रुति मंडल ताटंक ।।

तेरौ रूप कहाँ लौं वरनौं, नागरता कौ अंक।
उर सुदेस रोमावलि राजति, मृगअरि की सी लंक॥
सायक नैन सुभग अनियारे, मृगमन गहत निसंक।
'सूरज' चरित चुनौती पठवत, भयौ मदन मन रंक॥ २७४४॥

राग मलार॥ ३३६३॥

यह ऋतु रूसिवे की नाही।
वरषत मेघ मेदिनी कै हित, प्रीतम हरषि मिलाही॥
जेती वेलि ग्रीष्म ऋतु डाही, ते तरवर लपटाही।
जे जल विनु सरिता ते पूरन, मिलन समुद्रहिं जाही॥
जोवन धन है दिवस चारि कौ, ज्यौं वदरी की छाही।
मैं दंपति-रस-रीति कही है, समुझि चतुर मन माही॥
यह चित धरि री सखी राधिका, दै दूती कौ वाही।
'सूरदास' उठि चलि री प्यारी, मेरै संग पिय पाही॥ २७४५॥

राग विलावल॥ ३३६४॥

दधि-सुत-वदनी दधिहिं निवारी।
दधि सुत दृष्टि मेलि दधिसुत मैं दधि-सुत-पति सौं क्यौं न विचारौ॥
धरहिं छाँडि कै, धरहि पकरि लै, धरहु लता घनस्याम सँवारी।
हार पहिरि कर, हार पकरि करि हार गोवर्धन नाथ निहारौ॥
समुझि चली वृषभानुनंदिनी आलिंगन गोपाल पियारी।
विद्यमान कलहंस जात गलि, 'सूरदास' अपनौ तनु वारी॥ २७४६॥

राग सोरठ॥ ३३६५॥

राधे हरि रिपु क्यौं न छिपावति।
मेरु-सुता-पति ताकै पति सुत, ताकौं क्यौं न मनावति॥
हरिवाहन ता वाहन उपमा, सो तैं धरे दृढ़ावति।
नव अरु सात वीस तोहि सोभित, काहे गहरु लगावति॥
सारँग वचन कह्यौ करि हरि सौं, सारँग वचन न भावत।
'सूरदास' प्रभु दरस बिना तुव, लोचन नीर वहावत॥ २७४७॥

राग नट॥ ३३६६॥

राधे हरिरिपु क्यौं न दुरावति।
सैल-सुता-पति तासु-सुता-पति, ताकै सुतहिं मनावति॥
हरिवाहन सोभा यह ताकी, कैसै धरे सुहावति।
द्वै अरु चार छहौ वै वीते, काहै गहरु लगावति॥
नव अरु सात ये जु तोहिं सोभित, ते तू कहा दुरावत।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे मिलन कौ, सारँग भरि भरि आवत॥ २७४८॥

राग सारंग॥ ३३६७॥

राधे हरिरिपु क्यौं न दुरावत।
सारँग-सुत-वाहन की सोभा, सारँग सुत न वनावत॥
सैल-सुता-पति ताकैं सुत पति ताकै सुतहिं मनावत।
हरिवाहन के मीत तासुपति ता पति तोहिं वुलावत॥
राकापति नहिं कियौ उदय सुनि या समये नहिं आवत।
विविध विलास अनंद रसिक सुख, 'सूर' स्याम गुन गावत॥ २७४९॥

राग सारंग ॥ ३३६८ ॥

राधा तैं वहु लोभ करचौ।
लावनरय ता पति आभूपन, आनन ओप हरचौ ॥
मृग कोदंड, श्रवनिधर, चपला, विवस जु कीर अरचौ।
पिक, मृनालअरि ता अरि रूपहि, तै वपु आपु धरचौ ॥
जलचर, गज मृगराज सकुचि जिय, सोचनि जाइ परचौ।
'सूरदास' प्रभु कौं मिलि भामिनि, निसि सव जाति टरचौ ॥ २७५० ॥

राग गौरी ॥ ३३६९ ॥

राधे यामैं कहा तिहारौ।
मुख हिमकर, तनु हाटक, वेनी सो पन्नग अँग कारौ ॥
गति मराल, केहरि कटि, कदली जुगल जघ अनुहारौ।
नैन कुरग, वचन कोकिल के, नासा सुक कहँ गारौ ॥
विद्रुम अधर, दसन दारिम कन, करौ न तुम निरवारौ।
'सूरदास' प्रभु त्रिभुवनपति कौ, एक न उनहिं उवारौ ॥ २७५१ ॥

राग विहागरी ॥ ३३६७० ॥

तोहि किन रूठन सिखई प्यारी।
नवल वैस नव नागरि स्यामा, वे नागर गिरिधारी ॥
सिगरी रैनि मनावत वीती, हा हा करि हौ हारी।
एते पर हठ छाँडति नाही, तू वृपभानुदुलारी ॥
सरद समय-ससि-दरस समरसर, लागै उन तन भारी।
मेटहु त्रास दिखाइ वदन विधु, 'सूर' स्याम हितकारी ॥ २७५२ ॥

राग ईमन ॥ ३३७१ ॥

आजु तेरे तन मैं, नयौ जोवन ठौर, ठौर पिय मिलि मेरे मन काहे रूसी री है वेकाज।
अधिक राखै वड़ाई, तोहिं तोहिं करै माई त्रियनि मै अधिकाई भाग सुहाग विराज ॥
रिस दूरि करि कह्यौ मानि मेरौ, छिया मान छाँड़ि मेरे कहै तोहिं रूसन न आवै लाज।
'सूर' प्रभु अवसेर अतिहिं भई अवेर वेगि चलि री सिंगार काढ़ि माढ़ि आई साज ॥
॥ २७५३ ॥

राग पूरवी ॥ ३३७२ ॥

देखि री कमलनि, मधुर मधुर वैन, हँसि हँसि कव के करत मनुहारि।
जव हरि चितवत, भरि भरि अँखियनि, लाड़िली वारि तू मान की रिस निवारि ॥
अतिहि आसक्त जानि, मोहन सुजान मानि रीझि मन मान दान दै प्रीति विचारि।
'सूरदास' प्रभु के री चरननि पूजि आली, क्यौ न रहै प्रेम उमँगि अँसुवा ढारि ॥
॥ २७५४ ॥

राग ईमन ॥ ३३७३ ॥

अनवोली न रहै री आली, आई मोसन वात वनावन।
वहुत सही हौ घर आए तैं, लागी पाछिलि सुरत दिवावन ॥
वे अति चतुर प्रवीन कहा कहौ, जिन पठई तोकौ वहरावन।
काँच करौती जल ज्यौ जानति, 'सूरदास' प्रभु कहा जनावन ॥ २७५५ ॥

राग कान्हरौ ॥ ३३७४ ॥

तू आई है बात बनावन।
जाइ न ह्याँ तैं बैठि रही है, आई मोहि मनावन ॥
आरि करति, कहि मोहिं सुनावति, जाइ रहै नहि ताकैं।
को उनकी ह्याँ बात चलावै, इतनौ हित है काकैं ॥
इक रिस जरति मनहिं मन अपनैं, तोही कौ वै भावत।
'सूरदास' दरसन ता गृह कौ, उहै ध्यान मन आवत ॥ २७५६ ॥

राग केदारौ ॥ ३३७५ ॥

रही इकटक साँस बिनु, तनु बिरहबिवस भई ॥
बार बारहिं सखि बुलावति, कहा भई दई।
नारि नौमी दसा पहुँची, ह्वै अचेत गई ॥
स्याम व्याकुल धरनि मुरछे, तिया रोषहई।
'सूर' प्रभु गए तीर जमुना, काम जरनि ठई ॥ २७५७ ॥

राग कान्हरौ ॥ ३३७६ ॥

रिस मैं रस की बात सुनाई।
चतुर सखिनि यह बुधि उपाइ तिय क्रोधहि मदन जगाई ॥
उमधि गई, तन सुरति सँभारी, फिरि बैठी लै मान।
कान्ह गए जमुना तट व्याकुल, यह गति देखि अजान ॥
काहे कौ बिपरीति बढावति, यह कहि गइ हरि पास।
देखे जाइ 'सूर' के स्वामी, कुज-द्रुमनितर बास ॥ २७५८ ॥

राग बिहागरौ ॥ ३३७७ ॥

हरि मुख राधा राधा बानी।
धरिनी परे अचेत नही सुधि, सखी देखि अकुलानी ॥
बासर गयौ, रैनि इक बीती, बिनु भोजन बिनुपानी।
बाहँ पकरि तब सखिनि जगायौ, धनि धनि सारँगपानी ॥
ह्याँ तुम बिबस भए हौ ऐसे, ह्वाँ तौ वै बिबसानी।
'सूर' बने दोउ नारि पुरुष तुम, दुहुँ की अकथ कहानी ॥ २७५९ ॥

राग अडानौ ॥ ३३७८ ॥

लाल अनमने कत हि होत हो तुम देखौ धौ, देखौ कैसै, कैसै करि तिहि ल्याइहौं।
जजहिं निकट को बारू जैसैं, ऐमी कठिन त्रिया की प्रकृतिहिं कर ही कर पघिलाइहौं॥
रिस अरु रुचि हौ समुझि देखि वाको, वाके मन की ढरनि देखि पुनि भावति बात चलाइहौं।
'सूरदास' प्रभु तुमहिं मिलैहौ, नेकु न ह्वैहो न्यारे, जैसैं पानी रग मिलाइहौं ॥
॥ २७६० ॥

राग भैरव ॥ ३३७९ ॥

सखी गई हरि कौ सुख दै।
व्याकुल जानि चतुरई कीन्ही, अब आवति प्यारी कौ लै ॥
आतुर गई मानिनी आगै, जाइ कह्यौ अजहूँ रिस है।
मोहन रहे मुरछि द्रुम कै तर, त्रिभुवन मै ह्वैहै जै जै ॥

अजहूँ कह्यौ मानि री मानिनि, उठि चलि मिलि पिय कौ जिय कै।
'सूर' मान गाढ़ौ तिय कीन्हौ, कहै बात कोउ कोटि कलै ॥२७६१॥

राग सारंग ॥ ३३८० ॥

तू चलि री बन बोली स्याम।
कमल नैन के तू अति बल्लभ, सुरति करौ हरि आतुर काम॥
मुरली मै नव नाम प्रकासत, तेरै हित कौ सुनि री बाम।
कोमल करनि सुमन बहु तोरत, रुचि सौं सेज रचत गृह काम॥
मन क्रम बचन सपथ चरननि की, बिसरत नही तुम्हारौ नाम।
'सूरदास' प्रभु कौ मिलि भामिनि, जौ पायौ चाहति बिस्राम ॥२७६२॥

राग रामकली ॥ ३३८१ ॥

रसिक राधे बोली नंदकुमार।
दरसन कौ तरसत हरि लोचन, तू सोभा की धार॥
खंजरीट, मृग, मीन, मधुप मिलि, रंभा रुचि अनुसार।
गौरि सकुच, ससि बिरथ कियौ रथ, मेरु लुटयौ बड़ितार॥
कौन हेत तै मिटयौ सितासित, बिछुरी कौन बिचार।
मंदाकिनि मानौ सिर धरि कै, रुद्रनि करी पुकार॥
राख्यौ मेलि पीठि तै पर धन, हर जु कियौ बिनु हार।
'सूरदास' प्रभु सौ हठ कीन्हौ, उठि चलि क्यौ न सवार॥ २७६३ ॥

राग सारंग ॥ ३३८२ ॥

बोलत है तोहिं नंदकिसोर।
मान छाँडि सखि नैकु चितै री, पइयाँ लागौ, करौ निहोर॥
तरिवन, तिलक, बनी नक बेसरि, चख काजर सुरँग तमोर।
सबै सिंगार बन्यौ जोबन पर, लै मिलि मदनगुपाल अँकोर॥
लताभवन मै सेज बिछाई, बोलत सकल बिहगम मोर।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस कौ ज्यौ दामिनि घन चंद चकोर॥ २७६४ ॥

राग केदारौ ॥ ३३८३ ॥

राधे बोलत नदकिसोर।
ललित त्रिभग स्याम सुदर घन, नाचत ज्यौ बन मोर॥
छिनु छिनु बिलँब करति है सुदरि, क्यौऽब रहत मन तोर?
आनँदकद चंदवृंदाबन, तू करि नैन चकोर॥
कहा कहौ महिमा सुभाग की, पुन्य गनत नहिं ओर।
'सूरदास' प्रभु पै चलि नागरि, लै मिलि प्रान अँकोर॥ २७६५ ॥

राग सारंग ॥ ३३८४ ॥

मानिनि मानि मनायौ मोर।
हौ आई पठई है तो पै, तेरे प्रीतम नंद किसोर॥
तेरै बिरह वृषभानुनदिनी, मोहन बहरावत है डोर।
तान तरँग मुरली मै गावत, लै लै नाम बुलावत तोर॥
बलि तोहिं जाउँ बेगि लै मिलऊँ, स्याम सरोज, बदन तुव गोर।
'सूरदास' प्रभु दृष्टि सुधानिधि, चरनकमल कमला-चित-चोर॥ २७६६ ॥

राग सारंग ॥ ३३८५ ॥

मानिनि नैंकु चितै इहिं ओर।
नासत तिमिर, प्रकास वदन तैं, ज्यौं राजत रवि भोर॥
तुव मुख कमल, मधुप उनकौ मन, विध्यौ नैन की कोर।
वंक विलोकनि, मधुरी मुसुकनि, भावति है प्रिय तोर॥
अंतर दूरि करौ अंचल कौ, होइ मनोरथ मोर।
'सूर' परस्पर रहौ प्रेम वस, दोउ मिलि नवल किसोर॥ २७६७ ॥

राग नट ॥ ३३८६ ॥

कहि पठई हरि वात सुचित दै, सुनि राधिके सुजान।
तैं जु वदन झाँप्यौ झुकि अंचल, यहै न दुख मो मान॥
इहि पै दुसह जु इतनेहिं अतर, उपजि परै कछु आन।
सरद सुधा ससि की नव कीरति सुनियत अपनैं कान॥
खजरीट, मृग, मीन, मधुप, पिक, कीर करत हैं गान।
विद्रुम अरु वंधूक, विंव मिलि, देत कविनि छवि दान॥
दाड़िम, दामिनि, कुंदकली मिलि, वाढचौ वहुत वखान।
'सूरदास' उपमा नछत्रगन, सव सोभित ,विनु भान॥ २७६८ ॥

राग सारंग ॥ ३३८७ ॥

रही दै घूँघट पट की ओट।
मनौ कियौ फिरि मान मवासौ, मन्मथ वंकट-कोट॥
नहसुत कील, कपाट सुलच्छन, वै दृग द्वार अगोट।
भीतर भाग कृष्न भूपति कौ, राखि अधर मधु मोट॥
अंजन, आड तिलक, आभूषन सजि आयुध वड़ छोट।
भ्रकुटी सूर गही करि सारँग, करत कटाच्छनि चोट॥ २७६९ ॥

राग विलावल ॥ ३३८८ ॥

तैं जु नीलपट ओट दियौ री।
सुनि राधिका स्यामसुंदर सौं, विनहिं काज अति रोष कियौ री॥
जल-सुत-विंव मनहुँ जल राजत, मनहुँ सरद ससि राहु लियौ री।
भूमि विसन किधौं कनक खंभ चढ़ि, मिलि रस ही रस अमृत पियौ री॥
तुम अति चतुर सुजान राधिका, कत राख्यौ भरि मान हियौ री।
'सूरदास'-प्रभु-अँग-अँग नागरि, मनहुँ काम कियौ रूप वियौ री॥२७७०॥

राग विलावल ॥ ३३८९ ॥

सारँगरिपु की ओट रहे दुरि सुंदर सारँग चारि।
ससि, मृग, फनिग, ध्वनिग, द्वै अँग अँग सारँग की अनुहारि॥
तामैं एक और सुत सारँग वोलत वहुरि विचारि।
परकृत एक नाम है दोऊ, किधौं पुरुष किधौं नारि॥
ढाँकति कहा प्रेम हित सुंदरि, सारँग नैकुँ उघारि।
'सूरदास' प्रभु मोहे रूपहिं, सारँग वदन निहारि॥ २७७१ ॥

राग विलावल ॥ ३३९० ॥

इहि तेरैं वृंदावन वाग।
सुनि राधिका कदंव विटप की साखा, एक अमी फल लाग॥

स्याम अरुन कछु अधिक पीत छबि, बरनि जाइ नहिं अंगबिभाग।
अति सुपक्क मुरली कै परसत, चुइ चुइ परत उमँगि रस राग॥
ब्रज बनिता बर बारि कनकमय, रोके रहति सुरासुर नाग।
तुव प्रताप छुइ सकत न सुंदरि, सुर सुनि मर्कट, कोकिल, काग॥
मैं मालिनि जतननि जल जुगयौ, सींचत स्वहथ. परे कर दाग।
'सूर' सु स्रम उठि भेटि परस्पर, पिय पियूष पाए बड़भाग॥
॥ २७७२ ॥

राग सोरठ ॥ ३३९१ ॥

राधे सो रस बरनि न जाइ।
जा रस कौं स्वरभानु सीस दियौ, सु तैं पियै अकुलाइ॥
पचिहारे सब कोटि कला करि, चंद न ठिक ठहराइ।
अजहुँ कबध फिरत तिहिं लालच, सुंदरि सैन बुझाइ॥
मोहन तैं न रूप रस आगरि, कटति न जानी काइ।
'सूरजदास' पपीहा कैं मख, कैसैं सिंधु समाइ॥ २७७३ ॥

राग सारंग ॥ ३३९२ ॥

देखि स्याम कौ बदन री माई, मोहिं अपनपौ भूल्यौ।
विद्यमान या दृष्टि सरोवर, मोहन बारिज फूल्यौ॥
करि सु अगाध सघन बृंदावन, चंचल लता तरंग।
निमि मृनाल, सुमृति पल्लावलि, गावत मुनि-जन-भृंग॥
सुरभी सुभग हंस, गो, खग, मृग, जलचर जीव अनंत।
'सूर' कछू यह ह्याँ री अद्भुत लीला कमलाकंत॥ २७७४ ॥

राग बिलावल ॥ ३३९३ ॥

अब राधे नाहिंन ब्रज नीति।
नृप भयौ कान्ह काम अधिकारी, उपजी है ज्यौं कठिन कुरीति॥
कुटिल अलक भ्रुव, चारु नैन मिलि, सँचरैं स्रवन समीप समीति।
वक्र-बिलोकन-भेद भेदिया, जोइ कहत सोइ करत प्रतीति॥
पोच पिसुन दस दसन सभासद, प्रभु अनंग मंत्री बिनु भीति।
सखि बिनु मिले नाहिं बनि ऐहै, कठिन कुराज राज की रीति॥
मंद हास, मुख मंद बचन रुचि, मंद चाल चरननि भई प्रीति।
नख सिख तैं चित चोर सकल अँग, जस राजा तस प्रजा बसीति॥
तेरौ तन धन रूप महागुन सुंदर स्याम सुनी यह कीति।
सु करि 'सूर' जिहिं भाँति रहै पति, जनि बल बाँधि बढावहु छीति॥२७७५॥

राग नट ॥ ३३९४ ॥

राधे तेरे रूप की अधिकाइ।
जो उपमा दीजै तेरैं तनु तामैं छबि न समाइ॥
सिंह सकुचि, सर बिथा भरत दिन, बिनु सोड नीर सुखाइ।
ससि डर घटत हेम पावक परै, चंपक रहै कुम्हिलाइ॥
इभ टूटत अरु अरुन पंगु भए, बिधना आन बनाइ।
कद्रुज रहे पताल दुरि खगपति हरि बाहन भए जाइ॥

हंस दूरि सर दुरचौ सरोरुह गज मृग चले पराइ।
'सूर' विचारि देखि मन पिक तुव रसना रहे लजाइ ॥ २७७६ ॥

राग विहागरौ ॥ ३३९५ ॥

तेरौ वदन देखि उडुपति जु दुरचौ।
दामिनि दुरी देखि दसननि छवि, ताटंकनि रवि चित जु हरचौ ॥
दरपन मलिन कपोलनि सोभा, कीर नास भय वन पकरचौ।
अहि वेनी मोह्यौ, कुच कलसनि घट मोह्यौ अमृत जु भरचौ ॥
ऐरावत थकि रह्यौ निरखि गति कटि के भय मृगराज डरचौ।
'सूरदास' प्रभु नारि नागरी मन मोहन निज वस जु करचौ ॥२७७७॥

राग सारंग ॥ ३३९६ ॥

राधे यह छवि उलटि भई।
सारँग ऊपर सुदर कदली तापर सिंह ठई ॥
ता ऊपर द्वै हाटक वरनौं मोहन कुभ मई।
ता पर कमल; कमल विच विद्रुम ता पर कीर लई ॥
ता ऊपर द्वै मीन चपल हैं; सौतिनि साध रही।
'सूरदास' प्रभु देखि अचंभौ, कहत न परत कही ॥ २७७८ ॥

राग विलावल ॥ ३३९७ ॥

जल-सुत-प्रीतम-सुत-रिपु-वंधव-आयुध आनन विलख भयौ री।
मेरु-सुता-पति वसत जु माथै, कोटि प्रकास नसाइ गयौ री ॥
मारुत-सुत-पति-अरि-पुरवासी-पितु-वाहन भोजन न सुहाई।
हर-सुत-वाहन-असन-सनेही मानहुँ अनल देह दौलाई ॥
उदधि-सुता-पति, ताकर वाहन, ता वाहन कैसैं समुझावै।
'सूर' स्याम मिलि धर्म-सुवन-रिपु ता अवतारहि सलिल वहावै ॥ २७७९ ॥

राग नट ॥ ३३९८ ॥

लोचन स्याम जू के सायक।
नैंकु चितै वृषभानु नदिनी, वस करि गोकुल नायक ॥
यहै जानि पठई नँदनंदन, तुम सव विधि सुखदायक।
तू व्रजनाथ सिरोमनि, सजनी, स्यामसुँदर पिय लायक ॥
लग लागे, पागे उर अतर, कठिन सिलीमुख पायक।
'सूरदास' प्रभु मोहन जोरी, करौ, कुज मन भायक ॥ २७८० ॥

राग सारंग ॥ ३३९९ ॥

जव तैं स्रवन सुन्यौ तेरौ नाम।
तव तैं हा राधा हा राधा, हरि, यहै मंत्र जपत दुरि दाम ॥
वसत निकुंज कालिंदी कै तट, सुरभी सखा छाँड़ि सुख धाम।
विरह वियोग महा जोगी ज्यौ, जागत ही वीतत जुग जाम ॥
कवहुँक किसलय पीठि रुचिर रचि, कवहुँक गान करत गुन ग्राम।
कवहुँक लोचन मूँदि, मौन ह्वै चित चिंतन अँग अँग अभिराम ॥
तरपत नैन, हृदय होमत हवि, मन वच कर्म और नहिं काम।
'सूर' स्याम कृसगात सवै विधि, दरसन दै पुरवहि पिय काम ॥२७८१॥

राग अड़ानी ॥ ३४०० ॥

मोहन नीकौ री अति नीकौ।

तासौं न रूसन कीजै, हित कै मनाइ लीजै, हँसत हँसत दूरि करै रिस जी कौ ॥
अतिहिं मानिनी जे जे तेऊ मैं मनाइ दई, अतिहि कठिन हठ देख्यौ री तो ती कौ ॥
दूसरी जामिनि गई, त्यौं त्यौं तू हठीली भई, सूरज निरखि मुख देखै प्यारी पी कौ ॥
॥ २७८२ ॥

राग विहागरौ ॥ ३४०१ ॥

और सखी इक स्याम पठाई।

हरि की विरह देखि भई व्याकुल, मान मनावन आई ॥
वैठी आइ चतुरई काछे, वह कछु नहीं लगार।
देखति हौं कछु और दसा तुव, वूझति वारवार ॥
मन मन खिझति मानिनी, याकौ कौनै इहाँ पठाई।
'सूर' सवनि कछु मान मनायौ, सो सुनिकै यह आई ॥ २७८३ ॥

राग विहागरौ ॥ ३४०२ ॥

अजहूँ मान तजति नहिं प्यारी।

मदन नृपति वर सैन साजि कै, घेरे आनि विहारी ॥
इतने कटक देखि मनमोहन, भीत भए भय भारी।
कुसुम वान जित तित तैं छूटत, खग, रव घटा सँवारी ॥
पल्लव पट निसान, भँवरा भट मजरि साल विपारी।
'सूरदास' प्रभु के सहाय कौ, उठि चलि वेगि हँकारी ॥ २७८४ ॥

राग सारंग ॥ ३४०३ ॥

वेगि चलौ वलि कुँवरि सयानी।

समय वसंत, विपिन रथ, हय, गय, मदन-सुभट-नृप-फौज पलानी ॥
चहुँ दिसि चाँदनि, निसा चमू चलि, मनौ धवल धर धूरि उड़ानी।
सोरह कला छपाकर की छवि, सोभित सीस छत्र सिर तानी ॥
वोलत हँसत चपल वदजिन, मनहुँ प्रसंसत, पिक वर वानी।
धीर समीर रटत वर अलिगन, मनहुँ कमोदिक मुरलि सुठानी ॥
कुसुम सरासन अधिक विराजत, कठिन मानगढ अति अभिमानी।
'सूरदास' प्रभु की है यह गति, करहु सहाइ राधिका रानी ॥२७८५॥

राग मलार ॥ ३४०४ ॥

सुनि री सयानी तिय रसिवे को नेम लियौ, पावस दिननि कोऊ ऐसौ है करत री।
दिसिदिसि घटा उठी मिलि री पिया सौं रूठी, निडर हियौ है तेरौ नैकु न डरत री ॥
चलिए री मेरी प्यारी, मोकौं मान देन हारी, प्रानहुँ तैं प्यारे पति धीर न धरत री।
'सूरदास' प्रभु तोहिं दियौ चाहैं हितवित, हँसि क्यौं न मिलै तेरौ नेम है टरत री ॥
॥ २७८६ ॥

राग मलार ॥ ३४०५ ॥

सेज रचि पचि साज्यौ सघन निकुंज, कुंज चित चरननि लाग्यौ छतिया धरकि रही।
हा हा चलि प्यारी, तेरौ प्यारौ चौंकि परै, पात की खरक पिय हिय मैं खरकि रही ॥
वात न धरति कान, तानति है भौंह वान, तऊ न चलति वाम अँखिया फरकि रही।
'सूरदास' मदन दहत पिय प्यारी सुनि, ज्यौं ज्यौं कह्यौ त्यौं त्यौं वरु उतकौ सरकि रही ॥
॥ २७८७ ॥

राग मलार ॥ ३४०६ ॥

(तू तौ मो सौ) बात न कहति माई चलेगी कहाँ तैं।
काहे कौ गहरु कीजै, बिनु थर कहा लीजै, दीजै जाइ उत्तर मैं, आई हौं जहाँ तैं॥
अनोखी मानिनी नई, पाहनपूतरी भई, बैन न बदति और जरति महाँ तैं।
जात न परत पाइ, आई हौं सपथ खाइ, जातैं 'सूरदास' प्रभु नवल पहाँ तैं॥
॥ २७८८ ॥

राग सारंग ॥ ३४०७ ॥

उत तैं पठावत वे, इत तैं न मानत ये, हौं तौ हौं दुहुनि बीच चक डोरी कीनी।
क्रोध भेष मुख, नैनछवि नहिं कहि आवै, आतुर ह्वै उठि धाई रावरेंहि लीनी॥
तामरस लोचननि हाव भाव बिनु करे, मानति न मानिनी है मान रंग भीनी।
'सूरदास' प्रभु हौ रसिकराइ सिरोमनि आपु, चलि देखौ क्यौं न नाइका नवीनी॥
॥ २७८६ ॥

राग सारंग ॥ ३४०८ ॥

हौ तौ गई ही मान छुड़ावन हो पिय, रीझि आई।
ऐसी छवि राजति है मोपै, सो बरनि नहिं जाई॥
आपुन चलिये, बदन देखिये, जौ लौ रहै निठुराई।
'सूर' स्याम प्यारी अति राजति, मोहिं रावरी दुहाई॥ २७९० ॥

राग कल्यान ॥ ३४०९ ॥

मैं तौ तुम्है हँसतऽरुखेलतहिं छाँड़ि गई, आई अब न्यारे अबबोले रहे दोऊ।
इत तुम रूखे गिरिधर उत अनमनी, अचल सु मुख जय लाइ रही वोऊ॥
नीची दृष्टि करि नख धरनी करोवति है, इक टक घूँघटहिं चितै रही सोऊ।
'सूरदास' प्रभु प्यारी आँकौ भरि जाइ लीजै, छाँड़ो छाँड़ो कहै देहु मानै नहिं कोऊ॥
॥ २७९१ ॥

राग ईमन ॥ ३४१० ॥

अजहूँ रयनि परी प्यारे तीनि जाम है जू काहे कौं हरवरी तिहारैं उर स्याम है जू।
कैहौं बात प्रकृति ले, जौ पै रिस देखिहौ तौ लागिहै घरीक लाड़िली तिहारी बाम है जू॥
पैज किये जाति, ताहि अब लिये आवति हौं, सुख तौ तिहारैं सुख और कहा काम है जू।
सुनहु 'सूरज' प्रभु अब कै मनाइ ल्याऊँ, बहुरि रुठाइ हौ तौ, मेरी राम राम है जू॥
॥ २७९२ ॥

राग सारंग ॥ ३४११ ॥

माधौ, तहाँ बुलाई राधे, जमुना निकट सुसीतल छहियाँ।
आछी नीकी कुसुंभी सारी गोरैं, तन, चलि हरि पिय पहियाँ॥
दूती एक गई मोहिनि पै, जाइ कह्यौ यह प्यारी कहियाँ।
'सूरदास' सुनि चतुर राधिका, स्याम रैनि वृंदावन महियाँ॥२७९३॥

राग सूही ॥ ३४१२ ॥

झूमक सारी तन गोरैं हो।
जगमग रह्यौ जराइ कौ टीकौ, छवि की उठति झकोरैं हो॥
रत्नजटित के सुभग तरचौना, मनहुँ जात रवि भोरैं हो।
दुलरी कंठ निरखि पिय इक टक, दृग भए रहैं चकोरैं हो॥
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे मिलन कौं, रीझि रीझि तृन तोरैं हो॥२७९४॥

राग ईमन ॥ ३४१३ ॥

बेरस कीजै नाहिं भामिनी, रस मै रिस की बात।
हौ पठई तोहिं लेन साँवरैं, तोहिं बिनु कछु न सुहात॥
हा हा करि तेरे पाइँ परति हौ, छिनु छिनु निसि घटि जात।
'सूर' स्याम तेरौ मग जोवत, अति आतुर अकुलात॥२७९५॥

राग बिलावल ॥ ३४१४ ॥

उठि राधे कत रैनि गँवावै।
महि-सुत-गति तजि, जल-सुत-गति तजि, सिधु-सुधा-पति भवन न भावै॥
अलिवाहन कौ प्रीतम बाला ता वाहन रिपु ताहि सतावै।
सो निवारि चलि प्रान पियारी, धर्म सु नहिं मति भाव न पावै॥
सैल-सुता-सुत-वाहन सजनी ता रिपु ता मुख सब्द सुनावै।
'सूरदास' प्रभु पथ निहारत, तोहि ऐसी हठ क्यौ बनि आवै॥
॥ २७९६ ॥

राग बिहागरौ ॥ ३४१५ ॥

उत्तर न देति मोहिं मोहिनी रही ह्वै मौन, सुनि सब मेरी बात नैंकहूँ न मटकी री।
अब धौं चलैगी कब, रजनी गई री सब, ससिवाहन की घरनी वै देखि लटकी री॥
नैना री करे अलोल, धरे री पानी कपोल, भुव नख लिखैं तिलहू न कछु भटकी री।
मुगुध वधू री सठ, काहे कौ परी है हठ, परम भावती है तू नागर सु नट की री॥
ध्रुव समान आए री जु कहूँ सप्तरिषि, बहुरि तौ वेर ह्वैहै तमचुर रट की री।
'सूर' सखि जाइ बलि, राधिका कुँवरि चलि, आजु छवि नीकी तेरे आछे नील पट की री॥
॥ २७९७ ॥

राग सारग ॥ ३४१६ ॥

जनि हठ करहू सारँग नैनी।
सारँग ससि सारँग पर सारँग ता सारँग पर सारँगबैनी॥
सारँग रसन, दसन गुनि सारँग, सारँगसुत दृग निरखनि पैनी।
सारँग कहौ सु क्यौ न बिचारौ, सारँगपति सारँग रची सैनी॥
सारँग सदनहिं ले जु बरुनि गई, अजहुँ न मानति गत भई रैनी।
'सूरदास' प्रभु तुव मग जोवैं, अंधकरिपु ता रिपु-सुख-दैनी॥२७९८॥

राग बिहागरौ ॥ ३४१७ ॥

आजु सर्वरी सर्व बिहानी, तोहिं मनावत राधा रानी।
लागे उदय होन सुक, जागे तमचुर ढरि आई जु मृगानी॥
प्रफुलित कमल, गुजार करत अलि, पहु फाटी, कुमुदिनि कुम्हिलानी।
'सूर' स्याम बन मुरछि परे है. मान निवारौ, क्यौ झहरानी॥
॥ २७९९ ॥

राग बिहागरौ ॥ ३४१८ ॥

स्यामा प्यारी बोलन लागे तमचुर, घटि गई रजनी।
री वै मनमोहन ठाढे, ब्रजनायक सुनि सजनी।
ठाढ़े है हरि कुजद्वारैं, ललित बेनु बजाई हो।
सुनत कैसैं रहति. कैसैं तोहिं भवन सुहाई हो॥

तुम कुँवरि वृषभानु की. कछु नेह प्रीति न जानहू।
वोलि पठई तोहिं हरि, काहैं न चित कछु आनहू॥
नंदनंदन कह्यौ ऐसैं, सुंदरी ह्याँ आइ हो।
और नहिं कछु काज वन मैं, नैंकु मधुरैं गाइ हो॥
'सूर' प्रभुहिं विचारि मन मे प्रीति सौ उर लाइयै।
यहै पुनि पुनि कहति मैं, मनवानछित फल पाइयै॥ २८०० ॥

राग केदारौ ॥ ३४१९ ॥
मोहन तेरैं आधीन भए री एती रिस कव तैं कीजति है री गुनआगरि नागरी।
तेरैं अनउत्तर सुनि सुनि री देत स्याम हँसि, नैंकु चितै इत तू अति भागनि आगरी॥
तेरोइ भाग, सुहाग तेरोई, अनुरागहु तेरे ही माथैं तू रति रूप उजागरी।
'सूरदास' प्रभु तेरौ मन जोवत जुही, तुही रट लागी जैसैं मृगिनी भूली वागरी॥
॥ २८०१ ॥

राग नट ॥ ३४२० ॥
कौन कुमति आई री जो कह्यौ न मानति।
छाँड़ि मान सुनि वात सयानी कत हरि सौं हठ ठानति॥
यह निसि वृथा विहाइ पिया विनु सोचत नहिं उर आनति।
वोउच स्याम स्याम दामिनि कौ मनौ सरद रितु जल घटत न जानति॥
धनुष कला सु सही सव सिखि कै, भई सयानी गानति।
'सूर' स्याम सुंदरी आपुही, कह तू सर संधानति॥२८०२॥

राग नट ॥ ३४२१ ॥
तू सुनि कान दै री मुरली धुनि, तेरे गुन गावैं स्याम कुंज भवन।
सनमुख ह्वै ताही कौ अंक भरैं, तेरौ तन परसि जो आवत पवन॥
तेरौ स्वरूप आनि उर अंतर, नैंन मूँदि रहे करत न गवन।
'सूरदास' प्रभु कै तू रमि रही, यातैं नाम राधिकारवन॥२८०३॥

राग केदारौ ॥ ३४२२ ॥
प्यारी, प्रीतम आरति करतु।
तुम्हरैं कारन कुँवरि राधिका, मेरैं पाइँनि परतु॥
वरहीमुकुट लुठत अवनी पर, नाहिन निज भुज भरतु।
वारवार रहँट के घट ज्यौं, भरिभरि लोचन ढरतु॥
अति आधीन मीन ज्यौं जल विनु. नाहिन धीरज धरतु।
'सूर' सुजान सखी सुनु तुम विनु, मन्मथ पावक जरत॥ २८०४ ॥

राग सारंग ॥ ३४२३ ॥
मृगनैंनि तू अंजन दै।
नवल निकुंज कलिंदसुता तट, पी कौ सर्वसु लै॥
सोभित तिलक रुचिर मृगमद को भौंहनि वंक चितै।
हाटकघटनि सुधा पीवन कौं, नागिनि लट लटकै॥
नैंन निरखि अंग अंग निरखि यौं अनख प्रिया जु तजै।
वादरवसन उतारि वदन यौं, चंदा ज्यौं न छपै॥

खंजमीन अंजन दै सकुचे, कवि सो काह गनै।
'सूर' स्याम कौ बेगि दरस दै, कामिनि मदन दहै॥ २८०५ ॥

राग नट ॥ ३४२४ ॥

राधे कत रिस सरसतई।
तिष्ठति जाइ बारबारनि पै होति अनीति नई॥
नित तुव जरनि सिंधुसुत मानत मृगमद स्याम दई।
जल थल खगनि सुमन गुरु दोऊ दुज दुति किरनि भई।
विहरत कुज बिलासनि पद्मनि सकुचनि सेत कई।
दुखी दुरे फल त्राहि बिरहिनी, जो अपराध वई॥
अब तुम जाहु निकुज भामिनी, ना तरु करत खई।
परसै 'सूर' चतुर चिंतामनि, विपुल-विलास-मई॥ २८०६ ॥

राग देवगंधार ॥ ३२२५ ॥

मानिनि मानति क्यौ न कह्यौ।
प्रथम स्याम मन चोरि नागरी, अब क्यौ मान गह्यौ॥
जानत कहा रीति प्रीतम की, बन जन जोग मह्यौ।
रुद्र, बिरंचि, सेस सहसानल, तिनहुँ न अंत लह्यौ॥
बैठे नवल कुंज मंदिर मै, सो रस जात बह्यौ।
'सूर' सखी मोहन मुख निरखहु, धीरज नाहिं रह्यौ॥ २८०७ ॥

राग नट ॥ ३४२६ ॥

कुंज भवन मैं ठाढ़े देखौ, अँखियनि भरि तव मैं जाऊँ बलि।
मो पै देखि न परै अकेले, नैकु होइ ठाढी तू ढिग चलि॥
तेरौ वदन प्रफुल्लित अंवुज, हरि जू के नैना अति आतुर अलि।
'सूर' न्यारे नँदनंद न कीजै, हा हा दूरि करो मानै मलि॥ २८०८ ॥

राग केदारौ ॥ ३४२७ ॥

तेरैं मानिवेहू तै री मान नीकौ लागत है, ऐसै ही रहि हौ लालहि जौ लौं लै आऊँ।
औरनि कै हासी खेल, तिहारी रुखाई माई, विरस मैं यह रस मैं आनि दिखाऊँ॥
उलटि पिया पै जाऊँ, नूतन चोप वढ़ाऊँ, सोरह कला को ससि कुहु विगसाऊँ।
'सूरदास' प्रभु गिरिधरन सौ हिलि मिलि, यह मिलिवे को सुख अनुपम पाऊँ॥
॥ २८०९ ॥

राग विहागरौ ॥ ३४२८ ॥

कहति स्याम सौं जाइ मनायौ न मानै जू।
कहा रही मन घालि न कछु अनुमानै जू॥
कहा मन मै घालि बैठी, भेद मैं नहिं लखि सकी।
आपु ह्यां वह उहाँ बैठी, जाति आवति हौ थकी॥
नैकहूँ जौ कह्यौ मानै, कोटि भाँतिनि हौ कही।
हाहा करी, मनुहार करि करि, सुनतही अति रस गही॥
कहा बैठे चलै वनिहै, आपहूँ नहिं मानिहौ।
तुम कुँवर घर ही के बाढे, अब कछू जिय जानिहौ॥
वेगि चलियै अनखिहै, तुम इहाँ वह उहँ गरति है।
वाकै जिय कछु और ह्वैहै, कपट करि हठ धरति है॥

राधिका अति चतुर जानौ, जाइ ता डिगही रहौ।
कहा जौ मुख फेरि बैठी, मधुर मधुर वचन कहौ॥
'सूर' प्रभु अब बनै नाचै, काछ जैसौ तुम कछ्यौ।
कहियै गुननि प्रवीन राधा, क्रोध विष काहै भछ्यौ॥ २८१० ॥

राग विहागरौ ॥ ३४२६ ॥

सुनि यह स्याम विरह भरे।
वार वारहिं गगन निरखत, कबहुँ होत खरे॥
मानिनी नहिं मान मोच्यौ, दूसरी निसि आजु।
तब परे मुरछाइ धरनी, काम करयौ अकाजु॥
सखिनि तब भुज गहि उचाए, कहा वावरे होत।
'सूर' प्रभु तुम चतुर मोहन, मिले अपनै गोत॥ २८११ ॥

राग विलावल सूही ॥ ३४३० ॥

स्याम चतुरई कहाँ गँवाई।
अब जाने घर के वाढ़े हौ, तुम ऐसै कह रहे मुरझाई॥
विना जोर अपनी जाँघनि के, कैसै सुख कीन्हौ तुम चाहत।
आपुन दहत अचेत भए क्यौ, उत मानिनि मन काहै दाहत॥
उहँई रहौ कहैगी तुमकौ, कतहूँ जाइ रहे वहुनायक।
'सूर' स्याम मनमोहन कहियत, तुम हौ सवही गुन के लायक॥ २८१२ ॥

राग रामकली ॥ ३४३१ ॥

तब हरि रच्यौ दूती रूप।
गए जहँ मानिनी राधा, त्रिया स्वाँग अनूप॥
जाइ वैठे कहत मुख यह, तू इहाँ वन स्याम?
मैं सकुचि तहँ गई नाही, फिरी कही पति वाम॥
सहज वातैं कहति मानौ, अब भई कछु और।
तू इहाँ वै उहाँ वैठे, रहत एकहिं ठौर॥
कहौ मोसौं कहा उपजी, वै रटत तुम नाम।
सुनति है कछु वचन राधा, 'सूर' प्रभु वनधाम॥ २८१३ ॥

राग रामकली ॥ ३४३२ ॥

राधे तैं अति मान करयो।
यह कहि पछितात मनहिं मन, पूरव पाप परयो॥
पहिली अपनी कथा चलाई, जब तियभेष धरयो।
तब तिहि रूप अनूप सुमुखि सुनि, त्रिभुवनचित्त हर्‍यौ॥
मोहे असुर महा मद माते, सुर मुख अमृत भर्‍यौ।
सिव गन सहित समेत महामुनि, को व्रत तैं न टर्‍यौ॥
ता तन की छवि निरखि 'सूर' सिव, छत ज्यौ ज्ञान गर्‍यौ।
जिहिं जार्‍यौ जग काम सु माधो, तेरैं हठ जात जर्‍यौ॥ २८१४ ॥

राग विहागरौ ॥ ३४३३ ॥

इतौ स्रम नाहिंन तवहिं भयौ।
सुनि राधिके जितौ स्रम मोकौ, तैं डहिमा न दयौ॥

धरनी धरि, बिधि वेद उधार्‌यो, मधु सौ सत्रु हयौ।
द्विज नृप कियौ, दुसह दुख मेट्यौ, बलि कौ राज लयौ॥
तोर्‌यौ धनुष स्वयबर कीन्हौ, रावन अजित जयौ।
अघ, बक, बच्छ, अरिष्ट, केसि मथि, दावानल अँचयौ॥
गुरुसुत मृतक काज निजु आए, सागर सोध लयौ।
तियवपु धर्‌यो, असुर सुर मोहे, को जग जो न द्रयौ॥
जानौ नही कहा या रस मै, जिहिं सिर सहज नयौ।
'सूर' सुबल अब तोहिं मनावत, मोहिं सब बिसरि गयौ॥ २८१५ ॥

राग मलार ॥ ३४३४ ॥

समुझि री नाहिन नई सगाई।
सुनि राधिके तोहिं माधौ सौ, प्रीति सदा चलि आई॥
जब जब मान कियौ मोहन सौ, विकल होत अधिकाई।
बिरहानल सब लोक जरत है, आपु रहत जलसाई॥
सिंधु मथ्यौ, सागरबल बाँध्यौ, रिपु रन जीति मिलाई।
अब सो त्रिभुवननाथ नेहबस, बन बाँसुरी बजाई॥
प्रकृति पुरुष, श्रीपति, सीतापति, अनुक्रम कथा सुनाई।
'सूर' इती रस रीति स्याम सौ तै ब्रज बसि बिसराई॥ २६१८ ॥

राग बिहागरौ ॥ ३४३५ ॥

राधिका तजि मान मया करु।
तेरैं चरनसरन त्रिभुवनपति, मेटि कलप तू होहि कलपतरु॥
जिनके चरनकमल मुनि वंदत सो तेरौ ध्यान धरै धरनीधरु।
अहो बावरी कह तै कीन्हौ, प्रीतम पठै दियौ बैरनि घरु॥
तुम नागरि, वै श्रीनागरवर, तुम सुंदरि, वै श्रीसुंदरवरु।
वै हरि तौ दुख हरत सबनि कौ. तू वृषभानुसुता हरि कौ हरु॥
जौ झुकि कछुक कह्यौ चाहति हौ, उनहिं जानि सखि मोही सौ लरु।
तबही 'सूर' निरखि नैननि भरि, आयौ उघरि लाल-ललिता-छरु॥२८१७॥

राग बिलावल ॥ ३४३६ ॥

स्याम चतुरई जानति हौ।
ये गुन तुम अजहूँ नहिं छाँड़त, इन छंदनि मैं मानति हौ॥
तुम रसवाद करन अब लागे, जे सब तेउ पहिचानति हौ।
वै बातै अब दूरि गई जू, ते गुन गुनिगुनि गानति हौं॥
यह कहि बहुरि मान गहि बैठी, जिय ही जिय अनुमानति हौ।
'सूर' करौ जोइ जोइ मन भावै, यहै बात कहि भानति हौं॥ २८१८ ॥

राग बिहागरौ ॥ ३४३७ ॥

यह कहि बहुरि मान कियौ।
रिसनि धरधर होति बाला, जोग नेम लियौ॥
कहति मनमन बहुरि मिलि हौं, अब न करौ बिलास।
ध्यान धरि बिधि कौ मनावति, लेति ऊरध स्वास॥
तिया कौ जनि जनम पाऊँ, जनि करे पति नारि।
जनम तो पापान माँगौ, 'सूर' गोद पसारि॥ २८१९ ॥

राग बिलावल ॥ ३४३८ ॥

स्याम चले पछिताइ कै, अति कीन्हो मान।
व्याकुल रिस तन देखि कै, सब गयौ सयान।
बैठे सीस नवाइ कै, बिनु धीरज प्रान।
दूती तुरत बुलाइ कै, पठई दै आन॥
बिरहा के बस हरि परे, तिय कियौ अनुमान।
धीर धरौ मै जाति हौं, करियै कछु ज्ञान॥
सावधान करिकै गई, दूतिका सुजान।
'सूर' महा वह मानिनी, मानौ पापान॥ २८२० ॥

राग धनाश्री ॥ ३४३९ ॥

प्यारी अंस परायौ दै री।
मेरी सिख सुनि रसिक राधिका, मन मैं न्याउ चितै री॥
आपु आपनी तिथि वा इंदुहिं, अँचवत अमर सवै री।
हर, सुरेस, सुर, सेस, समुझि जिय, क्यौ प्रभु पान करै री॥
वह जूठौ ससि जानि, वदनविधु, रच्यौ बिरचि यहै री।
सौप्यौ सुपत बिचारि स्याम हित, सु तू रही लटि लै री॥
जाकौ जहाँ प्रतीति 'सूर' सो, सर्वस तहाँ सँचै री।
सुद्ध सुधानिधि अर्पि अवहिं उठि, विधि पुनि पुनि न पचै री॥ २८२१ ॥

राग बिलावल ॥ ३४४० ॥

राधिका हरि अतिथि तुम्हारै।
रतिपति असनकाल गृह आए, उठि आदर करि कहै हमारे॥
आसन आधी सेज सरकि दै, सुख पैहै पद हरषि पखारै।
अर्घ्यादिक आनद अमृत मय ललित-लोल-लोचन जल धारै॥
धूप सुवास ततच्छन बस करि, मन मोहन हँसि दीप उजारैं।
वचन रचन, भ्रुव भंग और अँग, प्रेम-मधुर-रस परुसि निन्यारैं॥
उचित केलि कटु तिक्त त्यागि, पट अमल उलटि, अंकम हठि हारै।
नखछत छार, कसाय कुचग्रह चुंवन सर्पि समर्पि सँवारैं॥
अधर-सुधा-उपदस-सीक सुचि, बिधु-पूरन-मुखवास सँचारै।
'सूर' सुकृत सतोपि स्याम कौ, वहुत पुन्य यह व्रत प्रतिपारै॥ २८२२ ॥

राग धनाश्री ॥ ३४४१ ॥

अब मोहिं जानियै सो कीजै।
सुनि राधिका कहत माधौ यौ, जो बूझियै दंड सो लीजै॥
उर उर चापि, बाँधि भुज बंधन, नख नाराच मरम तकि दीजै।
भौंह चढाइ, अधर दसननि दँसि, अधर सुधा अपनै मुख पीजै॥
अब जनि करै बिलब भामिनी, सोइ करै जिहिं गात पसीजै॥
ग्रंथि गुननि गहि गूढ गाँठि दै, छुटै न कबहूँ स्रम जल भीजै।
सुनि सखि सुमुखि पाँइ लागति हौं, नाही मान महारस छीजै॥
'सूर' सु जीवन सफल दसौ दिसि, बैरी बस करि जौ जग जीजै॥ २८२३ ॥

राग गुंडमलार ॥ ३४४२ ॥

गह्यौ दृढ मान वृपभानु बारी।
डुलै बरु स्वर्ग सुरपति सहित, सुरनि स्यौ डुलै कंचन मेरु, इहिं निहारी॥

रैनि रवि उवै, वासर चद्र होइ वरु, वरु ढुलै सव नखत, यह होइ भाखै।
धरनि पलटै तजै सिंधु मरजाद को, सेस सिर ढूलै, नहि मान नाखै॥
बाँझ सुत जनै, उकठौ काठ पल्लवै, विफल तरु फलै, विनु मेघ पानी।
'सूर' प्रभु वरु अचल होइ चल, चल थकै, मनहिं मन दूतिका कहति वानी॥ २८२४॥

राग कान्हरौ॥ ३४४३॥

दूती यह अनुमान करै।
कासौं कहौं, सुनै को मेरी, कैसैं कह्यौ परै॥
हरि पठई मोकौ आतुर करि, यह जिय सोच धरै।
कैसै वचन कहौं या आगैं, यह अनुमानि डरै॥
चतुर चतुरई फवै न यासौं, सुनि रिस अतिहि भरै।
'सूर' स्याम कह्यौ सहज मनैयै, सो यह गहरु करै॥ २८२५॥

राग मलार॥ ३४४४॥

मानि मनायौ राधा प्यारी।
दहियत मदन मदन नायक है, पीर प्रीति की न्यारी॥
तू जु झुकति ही औरनि रूसत, अव कहि कैसैं रूसी।
विनही सिसिर तमकि तामस तैं, तू मुख कमल विदूषी॥
सुनियत विरद रूप-रस-नागरि, लीन्ही पलट कछू सी।
तेरैं हुती प्रेम सपति सखि, सो सपति किहिं मूसी॥
उन तन चितैं, आपु तन चितवहु, अहो रूप की रासी।
पिय अपनौ नहिं होइ तऊ, जौ ईस सेइयैं कासी॥
तू तौ प्रान प्रानवल्लभ कै, वै तुव चरन उपासी।
सुनिहै कोऊ, चतुर नारि, कत करति प्रेम की हाँसी॥
ज्यौं ज्यौं मौन गही तुम, उनकैं वाढ़ी आतुरताई।
कान्ह आन-वनिता-रत, सुनि कै जिय पैठी निठुराई॥
हियैं कपाट जोरि जडता के, वोलति नही वुलाई।
हा राधा, राधा रट लागी, चित-चातकी-कन्हाई॥
जौ पै मान तौ भाँवरि नाही, भाँवरि मान न होई।
हिय तैं वादि प्रेम रितवति हौ, अत भाव तौ सोई॥
जौ गोरी पिय-नेह-गरव तौ, लाख कहै किन कोई।
काहू लियौ प्रेम कौ परचौ, चतुर नारि है सोई॥
कत ह्वै रही नारि नीची करि देखति लोचन भूले।
मानौ कुमुद रुठि उडुपति सौ, सकुचि अधोमुख फूले॥
वैं तुव हित वृपभानुनदिनी, सेवत जमुना कूले।
तेरैं तनक मान मोहन के, सवै सयानप भूले॥
अहो इदु वदनी सुनि सजनी, कत पलकनि पल जोरैं।
तुव मुख-दरस-आस के प्यासे, हरि के नैन चकोरैं॥
तेरैं वल भामिनी वदत नहिं उपजत काम हिलोरे।
कहियत हुते चतुर नागर ते, तनक मान भए भोरे॥
तव दूती फिरि गई स्याम पैं, स्याम उहाँ पग धरियैं।
जिहिं हठ तजैं प्रान प्यारी सो, जतन सवारैं करियै॥

वै वैसै, तुम ऐसै वैसे, कहौ काज क्यौं सरियै ।
कीजै कहा चाड़ अपनी कत, इहाँ मसूसनि मरियै ।।
अपनी चोप आप उठि आए, ह्वै रहे आगै ठाढे ।
भूलि गयौ सव चतुर सयानप, हुते जो वहु गुन गाढ़े ।।
डोलत नहिं, वोलत न वुलाऐ, मनहुँ चित्र लिखि काढे ।
परचौ न काम नारि नागर सौ, है घरही के वाढ़े ।।

दूती वचन राधा के प्रति

निवह्यौ सदा औरही कौ हठ, यह जो प्रकृति तुम्हारी ।
आपुनही अधीन ह्वै ठाढे देखि गोवर्धन धारी ।।
प्रान पियहि रूसनौ कहि कैसौ, सुनि वृषभानुदुलारी ।
कहूँ न भई, सुनी नहिं देखी, रहै तरँग जल न्यारी ।।
रिस रूसनौ, मिलन पलकनि कौ, अति कुसुंभ रँग जैसौ ।
रहै न सदा, छुटत छिनु भीतर, प्रात ओस कन तैसौ ।।
वे है परम मलीन किये मन, उठि कहि मोहन वैसौ ।
घर आए आदर न चूकियै, वैठी दूध अँचै सौ ।।
वै तौ भँवर भावते वन के, और वेलि को तैसी ।
कीन्हौ मान मदनमोहन सौ, कीन्ही वात अनैसी ।।
तुम जानहु कै लाल तुम्हारौ, तुमहि उनहि है जैसी ।
याही तै अति गर्व भरी हौ, वै ठाढे तुम वैसी ।।
जोवन जल वर्षा की सरि ज्यौ, चारि दिना कौ आवै ।
अंत अवधि ही लौ नातौ जउ, कोटिक लहर उठावै ।।
वल्लभ कौ वल्लभ कौ मिलिवौ, तुमहि कौन समुझावै ।
लै चलि भवन भावतेहिं भुज गहि, को कहि गारि दिवावै ।।

राधा वचन

झुकि वोली ह्याँ तै ह्वै हाती, कौ नै सिखै पठाई ।
लै किनि जाहि भवन अपनै ह्याँ लरन कौन सौ आई ।।
काँपति रिसनि, पीठि दै वैठी, सहचरि और वुलाई ।
कछु सीरी, कछु ताती वानी, कान्हहिं देति दुहाई ।।
कवहुँक लै धरि दर्पन मोहन, ह्वै रहै आगै ठाढौ ।
पट अंतर नहिं विव निहारति, इतौ मान मन गाढौ ।।
तलफत फिरै, धरै नहिं धीरज, विरह अनल को डाढ़ौ ।
इत नागरी उतहिं वै नागर, इन वातनि कौ चाढौ ।।

दूती वचन

वड़ौ वडाई कौ प्रतिपालै, वडौ वड़ाई छीजै ।
ताकै वडौ वड़ी सरनागत, वैर वड़े सौ कीजै ।।
तू वृषभानु वड़े की वेटी, तेरे ज्याऐ जीजै ।
जद्यपि वैर हिऐ मैं है री, वैरिहिं पीठि न दीजै ।।
भामिनि और भुजगिनि कारी, इनके विषहिं डरैयै ।
राँचेहूँ, विरचै सुख नाही, भूलि न कवहुँ पत्यैयै ।।

इनकैं वस मन परै मनोहर, वहुत जतन करि पैयै ।
कामी होइ काम आतुर तिहिं, कैसै कै समुझैयै ॥
जे जे प्रेम छके मैं देखे, तिनहिं न चातुरताई ।
तेरैं मान सयान सखी तोहिं, कैसै कै समुझाई ॥
परिहै क्रोधचिनगि भाँवरि मैं, वुझिहै नही वुझाई ।
हौ जु कहति तैं वादि वावरी, तृन तैं आगि उठाई ॥

दूती रूप मे कृष्ण वचन

वहुरौ भए सहचरी मोहन, ताकि आपनी घातैं ।
लागे कान सखी के धोखे, कहत कुंज की वातैं ॥
सुधि करि देखि रूसनौ उनकौ, जब खाई हा हा तैं ।
आपु पीर पर पीर न जानति, भूली जोवन नातैं ॥
कवहुँ न भयौ, सुन्यौ नहिं देख्यौ, तनु तैं प्रान अवोले ।
होत कहा है आलसहूँ मिस, छिनु घूंघट पट खोले ॥
पावति कहा मान मे तू री, कहा गँवावति वोले ।
काल्हिहिं प्राननाथ तुम प्यारी, फिरिहौ कुंजनि डोले ॥
कहा रही अति क्रोध हियैं धरि, नैंकु न दया दयानी ।
प्रगटे जानि, मदनमोहन सौं, वात वात अधिकानी ॥
हित की कहै अनख लागति है, समुझहु भलैं सयानी ।
मन की चोप मान कीजत कह, थोरैंही गरवानी ॥
रही मूँदि पट सौं हठि भामिनी, नैंकु न वदन उघारैं ।
हरि हित-वचन रसाल, कठिन पाहन ज्यौं वूँद उतारैं ॥
धरे ग्रीव पट सन्मुख ठाढ़े, नैंकु न कोप निवारैं ।
जिहिं आधीन देव सुर नर मुनि, सो दीनता पुकारे ॥
खन गावैं, खन वेनु वजावैं, कमल भृंग की नाईं ।
खन पाँइनि तन हाथ पसारैं, छुवन न पावैं छाईं ॥
खन ही लेहिं वलाइ वाम की, लालन करि ललचाई ।
कहै आन की आन सौंह दै, खन खन हाहा खाई ॥
कवहुँक निकट वैठि कुसुमावलि, अपनैं कर पहिरावैं ।
जोइ जोइ वात भावतिहिं भावै, सोइ सोइ वात चलावैं ॥
जितहिं जितहिं रुख करै लड़ैती, तितही आपुन आवैं ।
नाचत जाकैं डर त्रिभुवन, तिहिं नैंकहुँ मान नचावैं ॥
जिन नैननि देखत दुख भूले, ते दुख नैन समोवैं ।
जो मुख सकल सुखनि कौ दाता, सो मुख नैंकु न जोवैं ॥
जिहिं ललाट त्रिभुवन कौ टीकौ सो पाइनि तन सोवैं ।
राँचहिं जाहि सनक अरु संकर, विरुचे ताहि विगोवैं ॥
एते मान भए वस मोहन, वोलत कछुक डराई ।
दीपक प्रेम क्रोध मारुत छिनु, परसत जनि वुझि जाई ॥
तातैं करि हरि छल दूती कौ, कहत वात सकुचाई ।
कपटी कान्ह पत्याहि न राधे, तोहिं वृषभानु दुहाई ॥
पठई मोहिं देइ उर माला, जहाँ कहूँ रतिमानी ।
हौं वहराइ इतहिं आई री, आली तोहिं डरानी ॥

काहे कौ रूसनौ वद्यौ है, मोसौ कहौ कहानी ।
नवनागर पहिचानि राधिका, इहिं छल अधिक रिसानी ।।
जानिय कहा कौन अपराधिनि, आनि कान है लागी ।
सुनि सुनि उठी सूदरी कै जिय, प्रगट कोप की आगी ।।
जद्यपि रसिक रसाल रसीली, प्रेम पियूषनि पागी ।
किती ढई सिख मन्त्र सावरै, तउ हठ लहरि न भागी ।।
कहियै कहा नंदनदन सौ, जैसैं लाड़ लडाई ।
कौन न भई मानिनी उनसौ, एते मान मनाई ।।

राधावचन

नव नागर तवही पहिचानी, नागरिनागरताई ।
इन छँद वदनि छदै पैये; प्रेम न पायौ जाई ।।
हारे वल अवला सौ मोहन, तजति न पानि कपोलै ।
मानहुँ पाहन की प्रतिमा सी नैंकु न इत उत डोलै ।।

दूतीवचन

इन द्यौसनि रूसनौ करति है करिहै कर्बाहि कलोलै ?
कहा दियौ पढ़ि सीस स्याम कैं, खीचि आपनौ सो लै ।।
तोहिं हठ परचौ प्रानवल्लभ सौ, छूटत नही छुड़ायौ ।
देखहु मुरछि परचौ मनमोहन, मनहुँ भुअंगिनि खायौ ।।
काहे कौ अपराध लेति है, करति काम कौ भायौ ।
नैंकु निरखि उठि कुँवरि राधिका, जौ चाहति है ज्यायौ ।।
वहुरौ लियौ जगाइ मनोहर, जुवतिनि जतन उपायौ ।
विरह ताप वर दाप हरन कौ, सरस सुगंध चढायौ ।।
जिते करे उपचार मनहु लै जरत माँझ घृत नायौ ।
काम अग्नि तैं विना कामिनी, करि कौनैं सचु पायौ ।।
जिनकैं हित तू त्रिभुवन गाई, ठकुराइनि करि पूजी ।
जिनके अंग संग सुख विलसति, वननायक ह्वै कूजी ।।
अनुदिन काम-विलास-विलासिनि, वै अलि तू अवूजी ।
ऐसैं पिय सौ मान करति है, तो सी मुग्ध न दूजी ।।
मेरौ कह्यौ मानती नाहिन, ह्याँ अरु कौन कहैगौ ।
राखत मान तिहारौ मोहन, एतौ कौन सहैगौ ।।
जानहुगी तव मानहुगी मन, तव तनु काम दहैगौ ।
करिहौ मान मदनमोहन सौ, मानैं हाथ रहैगौ ।।

राधावचन

नख लिखि कह्यौ जाहु तहँई उठि, जाकैं हाथ विकाने ।
राँचे रहत रैनि दिन माधव, हरदचून ज्यौं साने ।।
मुख मेरौ हौ मान मनावत, मन अनतहि रुचि माने ।
गावत लोग विरद साँचोई, हरि हित कौन सिराने ।।

कृष्णवचन

तुम मम तिलक, तुमहिं मम भूपन, तुमहि प्रान धन मेरैं ।
हौ सेवक सरनागत आयौ, जानहु जतन घनेरैं ।।

तेरी सौ वृषभानुनदिनी, एक गाँठि सौ फेरे।
हित सौ वैर, नेह अनहित सौ, इहै न्याउ है तेरै ॥

राधावचन

पर-धन-रमन, दमन दावागिनि, डोलनि कुंजनि माही।
चारन धेनु, फेन मथि पीवन, जीवन भरचौ वृथाही ॥
डासन काँस, कामरी ओढन, वैठन गोपसमाही।
भूषन मोरपखौवनि, मुरली, तिनकै प्रेम कहाँ ही !

मोहन-वचन

प्रेम पतग परै पावक मै, प्रेम कुरग वँधे से।
चातक रटै, चकोर न सोवै, मीन विना जल जैसे ॥
जहाँ प्रेम तहँ मान न मानिनि, प्रेम न गनियै ऐसे।
प्रेम माहिं जो करहिं रूसनौ, तिनहिं प्रेम कहि कैसे ?
काँपति रिसनि, पीठि दै वैठी, मनि माला तन हेरौ।
निरखि आपु आभास सयानी, वहुरि नैन रुख फेरौ ॥
लिये फिरत उर माँझ दुराए, जानत लोग अँधेरौ।
एते मान भावती तौ कत, मान मनावन मेरौ ॥
तेरी सौ आभास तिहारौ, इहाँ और को जो है।
दै दरपन मनि धरचौ पाइ तर, देखि दुहुँनि मैं को है ॥
विनु अपराध दास कौ त्रासै, ठाकुर कौ सव सोहै।
निरखि निरखि प्रतिविंव वहै तन, नैन नैन मिलि मोहै ॥
नैकु भौह मुसुकात जानि, मनमोहन मन सुख आन्यौ।
मानौ दव द्रुम जरत आस भइ, उनयौ अवर पान्यौ ॥
जो भाई सो सौह दिवाई, तव सूधै मन मान्यौ।
दियौ तमोर हाथ अपनै करि, तव हरि जीवन जान्यौ ॥

राधा-माधव-मिलन

हँसि करि कह्यौ, चलौ हरि कुंजनि, हौ आवति हौ पाछै।
जो न पत्याहु जाहु मुरली धरि, हमहिं तुमहिं है साछै ॥
लकुटी, मुकुट, पीत उपरैना, लाल काछनी काछै।
गो दोहन की वेर जानि सँग, लिये वछरुवा आछै ॥
सघन कुज अलि पुंज तहाँ हरि, किसलय सेज वनाई।
आतुर जानि मदनमोहन तन, काम केलि, चलि आई ॥
हँसि गोपाल अंक भरि लीन्ही, मनहुँ रंक निधि पाई।
अति रस रीति प्रीति-पिय-प्यारी, छूटत नही छुटाई ॥
आलिगन, चुंवन, परिरभन, दियौ सुरति रस पूरौ।
छिटकि रही स्रम वूँद वदन पर, अरु पाँइनि खुभि चूरौ ॥
मुख के पवन परस्पर सुखवत, गहे पानि पिय जूरौ।
वुझत जानि मन्थन चिनगी फिरि, मानौ देत मरूरौ ॥
आलस मगन, वदन कुम्हिलानौ, वाला निर्वल कीनी।
थकित जानि मनमोहन, भुज भरि तिया अंक गहि लीनी ॥

गोरै गात मनोहर उरजनि, लसति कचुकी भीनी ।
मनु मधुकलस स्यामताई की, स्याम छाप सी दीनी ॥
इत नागरी नवल नागर उत, भिरे सुरति रन दोऊ ।
नैन कटाच्छ वान, असि वर नख, वरपि सिरानं वोऊ ॥
टूटे हार, कंचुकी दरकी, घायल मुरे न कोऊ ।
प्रगटयौ तरनि वीच करिबे कौ, लाज लजाने दोऊ ॥
इहि उर रहत पितंबर ओढे, कहा कहौ चतुराई ।
अव जनि कहै, हिये मै को है, वहुरि परै कठिनाई ॥
भुरयौ काम, प्रेमहूँ भुरयौ, भुरई वैसभुराई ।
पति अरु प्रिया प्रगट प्रतिविंबित, ज्यौ दरपन मै झाई ॥
कर जोरे बिनती करै मोहन, कहौ पाँइ सिर नाऊँ ।
तेरी सौ वृषभानुनदिनी, अनुदिन तुव गुन गाऊ ॥
हौ सेवक निज प्रानप्रिया कौ, कहौ तौ पत्र लिखाऊँ ।
अव जनि मान करौ तुम मोसौ, यहै मौज करि पाऊँ ॥
हँसि करि उठि प्यारी उर लागी, मान मै न दुख पायौ ?
तुम मन दियौ आन वनिता तौ, मै मन मान लगायौ ॥
लै वलाइ, उर लाइ अक भरि, पछिलौ दुख विसरायौ ।
स्याम मान है प्रेमकसौटी, प्रेमहिं मान सहायौ ॥
छूटे वद, छुटी अलकावलि, मरगजे तन के वागे ।
अंजन अधर, भाल जावक रँग, पीक कपोलनि पागे ॥
विनु गुन माल, पीठि गडे ककन उपटि परे, उर लागे ।
रसिक राधिका के सुख कौ सुख, विलसे स्याम सभागे ॥
नवल गुपाल, नवेली राधा, नए नेह वस कीने ।
प्राननाथ सौ प्रानपियारी, प्रान पलटि से लीने ॥
विविध विलास-कला-रस की विधि, उभय अग परवीने ।
अति हित मानि, मान तजि मानिनि, मनमोहन मुख दीने ॥
राधा-कृष्ण-केलि-कौतूहल, स्रवन सुनै, जौ गावै ।
तिनकै सदा समीप स्याम, नितही आनद वढावै ॥
कवहुँ न जाहिं जठर पातक, जिनकौ यह लीला भावै ।
जीवन मुक्त 'सूर' सो जग मैं, अंत परम पद पावै ॥ २८२६ ॥

राग गुंड मलार ॥ ३३४५ ॥

राधिका वस्य करि स्याम पाए ।
विरह गयौ दूरि, जिय हरष हरि कै भयौ, सहस मुख निगम जिहि नेति गायौ ॥
मान तजि मानिनी मैन कौ वल हरयौ, करत तनु कत जो त्रास भारी ।
कोकविद्या निपुन, स्याम स्यामा विपुल, कुंज-गृह-द्वार ठाढे मुरारी ॥
भक्त-हित-हेत अवतारि लीला करत, रहत प्रभु तहाँ निजु ध्यान जाकै ।
प्रगट प्रभु 'सूर' व्रजनारि कै हित वँधे, देत मन-काम-फल सग ताकै ॥ २८२७ ॥

राग विलावल ॥ ३३४६ ॥ दूसरी गुरु मानलीला

सखिनि संग वृषभानुकिसोरी । चली न्हान प्रातहिं उठि गोरी ॥
जाकै घर निसि वसे कन्हाई । ता घर ताहि वुलावन आई ॥
ठाढ़ी भई द्वार पर जाई । कढ़े तहाँ तै कुँवर कन्हाई ॥

औचक मिले न जानत कोऊ। रहे चकित इत उत तैं दोऊ ॥
फिरी सदन कौ तुरतहिं प्यारी। न्हान जान की सुरति बिसारी ॥
भई विकल तन रिस अति बाढी। रहि गईं सखी निरखि सब ठाढ़ी ॥
रहि गए ठाढे स्याम ठगे से। सकुचाने उर सोच पगे से ॥
जब देखे हरि अति मुरझाए। तब सखियनि गहि भुज समुझाए ॥
उलटि भई सब हरि की घाई। दै कैं बाहँ तिया जहँ ल्याईं ॥
देखी स्याम आइ जहँ राधा। बैठी मान दृढाइ अगाधा ॥
रिसही कै रस मगन किसोरी। भई स्याम मति देखत भोरी ॥
ठाढे चकित चित्त अकुलाही। मुख तैं बचन कहे नहिं जाही ॥

व्याकुल लखि नँदलाल कौ, सखियनि कियौ विचार।
अब दोऊ जैसैं मिलैं, करियै सो उपचार ॥
अति रिस नारि अचेत, को सुनिहै कासौं कहै।
इत ये धरत न चेत, परी रुठावन बानि इन ॥

प्यारी निकट गई सब आली। ठाढे पौरि रहे बनमाली ॥
कहति मान कीन्हौ तैं प्यारी। न्हान जान तैं फिरी कहा री ॥
तोहिं लखत ही री गिरधारी। अतिहिं डरे तन सुरति बिसारी ॥
मुरछि परे धरनी अकुलाई। तरु तमाल जनु गयौ झुराई ॥
तैं ऐसैं चितयौ कछु बिनकौं। नैकुहुँ चैन रह्यौ नहिं तिनकौं ॥
तेरे नैन अरी अनियारे। किधौं बान खरसान सँवारे ॥
भौंह कमान तानि जौ मारे। क्यौं करि राखैं प्रान पियारे ॥
घायल जिमि मूर्छित गिरिधारी। अमी बचन अब सींचि पियारी ॥
बहुनायक वै तू नहिं जानै। तिनसौं कहा इतौ दुख मानै ॥
बाहँ गहै हरि कौ ढिग ल्यावै। अब वै निज अपराध छमावैं ॥
गहति बाहँ तुमही किन जाई। मोसौं बाहँ गहावन आई ॥
काल्हिहि सौंह मोहिं उनि दीनी। आजुहिं यह करनी पुनि कीनी ॥

देखि चुकी उनके गुननि, निज नैननि सुख पाइ।
तिन्है मिलावति मोहि अब, बाहँ गहावति आइ ॥
मिलौं न तिनसौं भूल, अब जौलौं जीवन जियौं।
सहौं बिरह कौ सूल, बरु ताकी ज्वाला जरौं ॥

मैं अब अपनै मन यह ठानी। उनकैं पंथ न पीवौं पानी ॥
कबहूँ नैन न अंजन लाऊँ। मृगमद भूलि न अंग चढाऊँ ॥
हस्तवलय पट नील न धारौं। नैननि कारे घन न निहारौं ॥
सुनौं न स्रवननि अलि-पिक-बानी। नील जलज परसौं नहिं पानी ॥
सुनत प्रिया की बात सुहाई। हरषत ढाढे पौरि कन्हाई ॥
सखी कहति यौं हठ नहिं लीजै। हरि सो ऐसौ मान न कीजै ॥
तू है नवल नवल गिरिधारी। यह जीवन है री दिन चारी ॥
छिनु छिनु ज्यौं कर कौ जल छीजै। सुनि री याकौ गर्व न कीजै ॥
नँद-नंदन-मुख-ससि सुखकारी। तू करि नैन चकोर पियारी ॥
हुतौ प्रेमधन तौ यह भारी। सो अब कहि तैं कियौ कहा री ॥

कहति हुती रूसौ नहि कवही। सो अव रूसति है जव तवही ॥
सुनिहै सुघर नारि जो कोई। करिहै हँसी प्रेम की सोई ॥

मान कियौ जिहिं भावतैं, सो न भावतौ होइ।
उर तौ रितवत प्रेम कत, अत भावतौ सोड ॥
लाख कहौ किनि कोइ, पिय सनेह जो गोइहै।
चतुर नारि है सोइ, लियौ प्रेम परचौ किनहु ॥

तुम वै एक न दोइ पियारी। जल तैं तरँग होइ नहि न्यारी ॥
रिस रूसनौ ओसकन जैसौ। सदा न रहै चाहियै तैसौ ॥
तजि अभिमान मिलहि पिय प्यारी। मानि राधिका कही हमारी ॥
चुप न रहति कह करति मनावन। तुम आई हौ वात वनावन ॥
वहुत सही घर आई यातैं। सुरति दिवावति पिछली वातैं ॥
मोसौ वात कहति हौ काकी। जाहु घरनि अव कछु है वाकी ॥
को उनकी ह्याँ वात चलावत। है वै अव तुमही कौ भावत ॥
तुम पुनीत अरु वै अति पावन। आई हौ सव मोहिं मनावन ॥
यह कहि रही रोष भरि भारी। गई सखी तव जहँ वनवारी ॥
कह्यौ जाइ हरि सौ हरुवाई। आजु चतुरई कहाँ गँवाई ॥
विनु निज जंघनि चलहिं ललारे। कैसैं चहत कियौ सुख प्यारे ॥
हौ मनमोहन तुम वहुनायक। नागर नवल सकल गुन लायक ॥
तव वोले हरि दोउ कर जोरी। तेरी सौ वृषभानुकिसोरी ॥
तू ही हित चित जीवन मोकौ। सदा करत आराधन तोकौ ॥
तू मम तिलक तुही आभूषन। पोषन तेरे वचन पियूषन ॥
तेरोइ गुन मैं निसि दिन गाऊँ। अव तजि मान हृदय सुख पाऊँ ॥
कर जोरे विनती करि भाष्यौ। कहत सीस चरननि पर राख्यौ ॥
यह सुनि कछु प्यारी मुसुक्यानी। तव वोली उठि सखी सयानी ॥
सुनहु स्याम तुम हौ रससागर। रूप-सील-गुन-प्रीति-उजागर ॥
तुम तैं प्रिया नैंकु नहि न्यारी। एक प्रान द्वै देह तुम्हारी ॥
प्यारी मैं तुम तुम मैं प्यारी। जैसैं दरपन छाहँ विहारी ॥
रस मै परैं विरस जहँ आई। होइ परति तहँ अति कठिनाई ॥
अवकैं हम सव देति मनाई। परसौ प्यारी चरन कन्हाई ॥
अव रुठाइहौ जौ गिरिधारी। राम राम तौ वहुरि हमारी ॥

जव परसे प्यारी चरन, परम प्रीति नँदनंद।
छुट्यौ मान हरषी प्रिया, मिट्यौ विरह-दुख-द्वंद ॥
उर आनंद वढाइ, प्रेमकसौटी कसि पियहिं।
अवगुन मन विसराइ, मिली प्रिया उठि स्याम सौ ॥

हरषि मिले दोउ प्रीतम प्यारी। भई सखी सव निरखि सुखारी ॥
तव दोउ उवटि सखी अन्हवाए। रुचिर सिंगार सिंगारि वनाए ॥
मधुर मिष्ट भोजन मन भाए। दोउनि एकैं थार जिमाए ॥
दिये पान अँचवन करवाए। सुमन-सुगंध-माल पहिराए ॥
ले वीरी अपनैं कर प्यारी। दीन्ही विहँसि वदन गिरिधारी ॥
तवहिं सुफल हरि जीवन जान्यौ। परम हरष उर अंतर मान्यौ ॥

मिलि बैठे दोउ प्रीतम प्यारी। तब सखियनि आरती उतारी ॥
अति आनद भरे दोउ राजैं। अरस परस निरखत छवि छाजैं ॥
पाए बस करि कुंजविहारी। विहँसि कह्यौ तब पिय सौं प्यारी ॥
सुनहु स्याम बरषा रितु आई। रचहु हिंडोरौ सुभ सुखदाई ॥
है मन पिय यह साध हमारैं। सब मिलि झूलहिं सग तुम्हारैं ॥
सुनि तिय वचन स्याम सुख पायौ। ऐसैं करि हरि मान छुड़ायौ ॥

छद

तिय मान हरि ऐसैं छुडायौ भक्त हित लीला करी।
कहै निगम नेति अपार गुन सुखसिंधु नट नागर हरी ॥
यह मान चरित पवित्र हरि कौ प्रेम सहित जु गावही।
सब करहिं आदर मान तिनकौ संत जन सुख पावही ॥

दोहा

राधा रसिक गुपाल कौ कौतूहल रस केलि।
ब्रजवासी प्रभुजननि कौ, सुखद काम-तरु-बेलि ॥
सुफल जन्म है तासु, जे अनुदिन गावत सुनत।
तिनकौ सदा हुलासु, 'सूरदास' प्रभु की कृपा ॥ २८२८ ॥

रागमारू विहागरी ॥ ३४४७ ॥ झूलन

वृंदावन स्यामलघन नारि संग सोहैं (जू)।
ठाढ़े नव कुजनि तर, परम चतुर गिरिधर वर,
राधा पति, पति राधा अरस परस मोहैं (जू) ॥
नीपछाहँ जमुनतीर, ब्रज-ललना-सुभग भीर,
पहिरे अँग विविध चीर, नवसत सब साजे।
बार बार विनय करति, मुख निरखति पाँइ परति,
पुनि पुनि कर धरति, हरति पिय के मन काजे ॥
विहँसति प्यारी समीप, घन-दामिनि-संग-रूप,
कठ गहति कहति कंत, झूलन की साधा।
जमुन पुलिन अति पुनीत, पिय इहाँ हिंडोर रचौ,
'सूरजरु प्रभु हँसति कहति ब्रजतरुनि राधा ॥
॥ २८२९ ॥

राग मलार ॥ ३४४८ ॥

हिंडोर हरि सँग झूलियै (हो) अरु पिय कौ देहिं झुलाइ।
गई बीति ग्रीपम गरद हितरितु, सरस बरपा आइ ॥
अब यहै साध पुरावहू, हो, सुनहु त्रिभुवनराइ।
गोपागना गोपाल जू सौ, कहति गहि गहि पाइ ॥
अब गढनहार हिंडोरना कौ, ताहि लेहु बुलाइ।
हम रमकि हिंडोरैं चढैं, अरु तुमहिं देहु झुलाइ ॥
वन बनन्हि कोकिल कंठ निरवति, करत दादुर सोर।
घन घटा कारी, स्वेत बगपंगति, निरखि नभ ओर ॥
तैसीयै दमकति दामिनी, तैसोइ अंबर घोर।
तैसोइ रटत पपीहरा, तैसोइ बोलत मोर ॥

तैसीयै हरियरि भूमि विलसति होति नहिं रुचि थोरि।
तैसीयै रंग सुरंग विधि वधु, लेति है चित चोरि॥
तैसीयै नन्ही बूँद वरषति, झमकि झमकि झकोरि।
तैसीयै भरि सरिता सरोवर, उमँगि चली मिति फोरि॥
सुनि विनय श्रीपति विहँसि, बोले विसकरमा सुतधारि।
खचि खंभ कंचन के रुचिर, रचि रजत मरुव मयारि॥
पटुली लगे नग नाग वहु रँग, वनी डाँड़ी चारि।
भँवरा भँवै भजि केलि भूले, नगर नागर नारि॥
सब पहिरि चुनि चुनि चीर, चुहि चुहि चूनरी वहुरंग।
कटि नील लँहगा, लाल चोली, उवटि केसरि अंग॥
नवसात सजि नई नागरी, चली झुंड झुंडनि संग।
मुख-स्याम-पूरन-चंद कौ मनु उमँगि उदधि तरंग॥
तहँ त्रिविध मद सुगंध सीतल, पवन गवन सुभाइ।
उर उड़त अचल उघरि मुख, मिलि नैन नैन लजाइ॥
तैसोइ जमुना पुलिन परम पुनीत, सब सुखदाइ।
तैसियै गोपी कठ गावति, मोहि मोहनराइ॥
गिरिराजधारन गोपिकनि मिलि, करत कौतुक केलि।
झूलत झुलावत, कंठ लावत, बढ़ी आनँदवेलि॥
कवहूँक रहसत, मचकि लै लै एक एक सहेलि।
झकझोरि झमकति, डरति प्यारी, पिया अकम मेलि॥
तिहिं समय सकुचि मनोज तकि छवि जक्यौ धनु सर डारि।
अंवर विमाननि सुमन वरषत, हरषि सुर सँग नारि॥
मोहे सुगन गंधर्व किन्नर, रहे लोक विसारि।
सुनि 'सूर' स्याम सुजान सुंदर, सवनि के हितकारि॥ २८३०॥

राग सारंग॥ ३४४६॥

सुरँग हिंडोरना माई, झूलत स्यामा स्याम।
द्वै खंभ विसकर्मा वनाए, कामकुंद चढाइ॥
हरित चूनी, जटित नग सब, लाल हीरा लाइ।
वहुत विद्रुम, वहुत मुक्ता, ललित लटके कोर॥
वहुरंग रेसमवरूहा, होत राग झकोर।
स्याम स्यामा संग झूलत, सखी देति झुलाइ॥
सवै सरस सिंगार कीने, रूप वरनि न जाइ।
लाल सारी नील लहँगा, स्वेत अँगिया अंग॥
रोमअवली मनौ जमुना, त्रिवलि तरल तरंग।
कहूँ जूथनि जुवति ठाढ़ीं, कहूँ ठाढ़े ग्वाल॥
कहूँ तरुनी गीत गावैं, कहूँ करैं सब ख्याल।
कहूँ दादुर, कहूँ पपिहा, कहूँ वोलैं मोर॥
चकित चितै चकोर रहि गए, देखि री इहिं ओर।
दसन दाड़िमदमक विकसी, हँसी जब मुसुकाइ॥
दमकि दामिनि निरखि लज्जित, गई वहुरि छिपाइ।
मीन खंजन कंज मानौ, उड़त नाहिंन भौर॥

बिंब कैं ढिग कीर बैठे, गहत नाहिंन ठौर।
देखि सखी उरोजकचन, संभु धरे बनाइ॥
नाहिं श्रीफल सुंदरी कैं, कमल कली सुहाइ।
बीच मुकुताहार जनु, सुरसरी उतरी धाइ॥
वार चकई, पार चकवा, दिनहुँ मिलत न आइ।
लंक कह्यौ न जाइ सखि री, अंग देखि बिचारि॥
भृंग भ्रमि भ्रमि बन गयौ, कढि गयौ केहरि हारि।
चाल देखि मराल लज्जित, गए सर तजि गेह॥
मानि कैं अपमान, गज सिर अजहुँ डारत खेह।
राग रागिनि मेलि गावैं, सुघर गुंड मलार॥
सुही, सारँग, टोड़ी, भैरव, सोरठी, केदार।
मालवाई, राग गौरी अरु असावरि राग॥
कान्हरो, हिंडोल कौतुक, तान बहु बिधि लाग।
देखि सखि री एक अचरज, राहु ससि इक ठौर॥
उड़त अंचल लटकैं बेनी, दपट झपटैं मोर।
कनक जरित जराइ बीरे,, कबि जु उपमा पाइ॥
'सूर' ससि द्वै एक ब्रज मैं, उगे मानौ आइ॥ २८३१॥

राग मलार॥ ३४५०॥

जमुना पुलिनहिं रच्यौ, रंग सुरंग हिंडोलनौ।
रमत राम-स्याम-सँग ब्रजबालक, सुख पावत हँसि बोलनौ॥
द्वै खंभ कंचन के मनोहर, रत्ननि जटित सुहावनौ।
पटुली बिच बिच बिद्रुम लागे, हीरा लाल खचावनौ॥
सुंदर डाँड़ि चुनी बहु लायौ, कोटिक मदन लजावनौ।
मरुव मयारि पिरोजा लटकत, सुंदर सुढर ढरावनौ॥
मोतिनि झालरि झुमका राजत, बिच नीलम बहु भावनौ।
पँच रँग पाट कनक मिलि डोरी, अतिही सुघर बनावनौ॥
स्फटिक सिंहासन मध्य बिराजत, हाटक सहित सजावनौ।
हीरा लाल-प्रवालनि पंगति, बहु मनि पचित पचावनौ॥
मानौ सुरपुर तैं तिहिं सुरपति, पठइ जु दियौ पठावनौ।
बिसकर्मा सुतहार श्रुती धरि, सुरलभ सिलप दिखावनौ॥
तिहिं देखैं त्रिताप तन नासैं, ब्रजबधूनि मन भावनौ।
स्यामा नवसत सजि सखि लैं, कियौ बरसाने तैं आवनौ॥
जब आवत बलरामहिं देख्यौ, मधुमंगल तन हेरनौ।
तब मधुमंगल कही ग्वाल सौं, गैया है भैया फेरनौ॥
उठे सँकर्षन करी सृंग बेनु धुनि, धौरी कजरी टेरनौ।
गैया गईं बगराइ सघन बन, बंसी-बट-तट घेरनौ॥
पहिरे चीर सुरंग सारी, चुह चुह चूनरि बहु रंगनौ।
नील लहँगा जाल चोली कसि, केसरि अंग सुरंगनौ॥
नवसत साजि सिंगार नागरी, मनिमय भूषन मंगनौ।
सादर मुख गोपाल लाल कौ, चित चकोर रस संगनौ॥

स्यामा स्याम मिले ललितादिहिं, सुख पावत मनमोहनौ ।
गावत राग मलार रागिनी गिरिधरन-लाल-छवि सोहनौ ।।
पच रग वर पाटपवित्रा, विच विच फोदा गोहनौ ।
नाचति सखी सँगीत परस्पर, पहिरि पवित्रा सोहनौ ।।
माथै मोरचंद्रिका राजै, वैजंती माल प्रसावनौ ।
कुडल लोल कपोलनि ढिग, मनु रविपरकास करावनौ ।।
अधर अरुनछवि वज्रदंत दुति, ससि गुन रूप समावनौ ।
मनिमय भूषन कँठ मुकतावलि, कोटि अनंग लजावनौ ।।
सखी हरपि वृपभानुनंदिनी, झूलै सँग नँदलालनौ ।
मनिमय नूपुर कुनित किंकिनी, कल ककन झनकारनौ ।।
ललिता विसाषा वृजवधू झुलावै, सुरुचि सार कौ सारनौ ।
गौर स्याम मिलि नीलपीत छवि, घन दामिनि सचारनौ ।।
नान्ही नान्ही बूँदनि वरषै, मधुर मधुर धुनि घोरनौ ।
तैसिहि हरी हरी भूमि सुहावनि, मोर सुरव नहि थोरनौ ।।
जहँ त्रिविधि मद सुगंध सीतल, पवन सु गवन सुहावनौं ।
तहँ उठत विहरत सुवास वहु, उडत मधुप गन भावनौ ।।
चढ़ि विमान सुर सुमन जु वरपै, जै जै धुनि नभ पावनौ ।
स्यामा स्याम विहार वृंदावन, सुरललना ललचावनौ ।।
सुक सेप सारद नारदादिक, विधि सिव ध्यान न पावनौ ।
'सूरज' स्याम प्रेम हिय उमग्यौ, हरि-जस-लीला गावनौ ।। २८३२ ।।

राग गुंड मलार ।। ३४५१ ।।

हिंडोरनौ (माई) झूलत गोकुलचद ।
संग राधा परम सुदरि, सवनि करत अनद ।।
द्वै खंभ कंचन के मनोहर, रतनजटित सुरग ।
चारि डाँड़ी परम सुंदर, निरखि लजत अनंग ।।
पटुली पिरोजा लाल लटकत, झूमका वहु रंग ।
मरुवे सौ मानिक चुनी लागी, वीच हीर तरग ।।
कल्पद्रुमतर छाहँ सीतल, त्रिविध वहति समीर ।
वर लता लटकति भार कुसुमनि, परसि जमुनानीर ।।
हंस, मोर, चकोर, चातक, कोकिला, अलि, कीर ।
नव नेह नवल किसोर राधा, नवल गिरिधर धीर ।।
ललिता विसाखा देहिं झोंटा, रीझि अंग न माति ।
अति लाड़िली सुकुमारि डरपति स्याम उर लपटाति ।।
गौर स्यामल अंग मिलि दोउ, भए एकहिं भाँति ।
नील-पीत-दुकूल दुति घन दामिमी दुरि जाति ।।
कुंज पुंज झुलाइ झूलति, सहचरी चहुँ ओर ।
मनौ कुमुदिनि कमल फूले, निरखि जुगल किसोर ।।
व्रजवधू तृन तोरि डारति, देति प्रान अँकोर ।
जन 'सूर' कौ व्रजवास दीजै, नवल नंदकिसोर ।। २८३३ ।।

राग राग्नी श्रीहठी ॥ ३४५२ ॥

हिंडोरैं झूलत स्यामा स्याम ।
ब्रज-जुवती-मंडली चहूँघा, निरखत विथकित काम ॥
कोउ गावति, कोउ हरपि झुलावति, सब पुरवति मनसाध ।
कोउ सँग मचति, कहति कोउ मचिहौं, उपज्यौ रूप अगाध ॥
कोउ डरपति, हा हा करि विनवति, प्यारी अकम लाइ ।
गाढ़ै गहति पियहिं अपनैं भुज, पुलकत अंग डराइ ॥
अब जनि मचौ पाइ लागति हौं, मोकौं देहु उतारि ।
यह सुनि हँसत मचत अति गिरिधर, डरत देखि अति नारि ॥
प्यारी टेरि कहति ललिता सौं, मेरी सौं गहि राखि ।
'सूर' हँसति ललिता चंद्रावलि, कहा कहति प्रिय भाखि ॥ २८३४ ॥

राग राग्नी रामगिरी ॥ ३४५३ ॥

हिंडोरा (माई) झूलत हैं गोपाल ।
संग राधा परम सुंदरि चहूँघा ब्रज बाल ॥
सुभग-जमुना-पुलिन मोहन, रच्यौ रुचिर हिंडोर ।
लाल डाँड़ी फटिक पटुली, मनिनि मरुव धोर ॥
भँवरा मयारिहिं नीलमनि, खँचे पाँति अपार ।
सरल कंचनखंभ सुंदर, रच्यौ काम सुतार ॥
भाँति भाँतिनि पहिरि सारी, तरुनि नव सत अंग ।
सुंदरी वृषभानुतनया, नैन चपल कुरंग ॥
हँसति पिय सँग लेति झूमक, लसति स्यामल गात ।
मनौ घन मैं दामिनी छवि, अंग मैं लपटात ॥
कबहुँ पुलकति, कबहुँ डरपति, कबहुँ निरखति नारि ।
कबहुँ देति झुलाइ गोपी, गावहीं वनवारि ॥
'सूर' प्रभु के संग कौ सुख, वरनि कापैं जाइ ।
अमर वरपत सुमन अंबर, विविध अस्तुति गाइ ॥ २८३५ ॥

राग राग्नी मलार ॥ ३४५४ ॥

जमुनापुलिन रच्यौ हिंडोर ।
घोपललना संग तरुनी, तरुन नंदकिसोर ॥
एक सँग लै मचति मोहन, एक देति झुलाइ ।
एक निरखति अंग माधुरि, इक उठति कछु गाइ ॥
स्यामसुंदर गोपिकागन, रही घेरि बनाइ ।
मनु जलद कौं दामिनीगन, चहत लेन लुकाइ ॥
नारि सँग वनवारि गावत, कोकिला छवि थोर ।
डुलत झूलत मुकुट सिर पर, मनौ नृत्यत मोर ॥
सुभग मुख दुहुँ पास कुंडल, निरखि जुवती भोर ।
चक्रवाक चकोर लोचन, करि रही हरिओर ॥
थकित सुर ललनासहित नभ, निरखि स्यामविहार ।
हरपि सुमन अपार वरषत, मुखहिं जैजैकार ॥

करत मन मन यहै वाछा, भए न वन द्रुम डार।
देह धरि प्रभु 'सूर' विलसत, ब्रह्म-पूरनसार॥ २८३६॥

राग केदारौ ॥ ३४५५ ॥

हिंडोरनै हरि सँग झूलन आई।
पँचरँग वरन पाट की डाँड़ी, अतिही सौज वनाई॥
झूलति जुवती नँदलालन सँग एक वसै इकदाई।
'सूरदास' प्रभु मोहन नागर, आपुन झूलि झुलाई॥ २८३७॥

राग ईमन ॥ ३४५६ ॥

झूलन आई रंग हिंडोरै।
पँचरँग वरन कुसुभी सारी, कचुकि सोधै वोरै॥
मुकुतामाल ग्रीव लर छूटी, छवि की उठति झकोरै।
'सूरदास' प्रभु मन हरि लीन्हौ, चपल नैन की कोरै॥ २८३८॥

राग विहागरौ ॥ ३४५७ ॥

ललना झुलै हिंडोरै सोभा तनु गोरै।
नील पीत पट घन दामिनी कौ भोरै।
सोभा सिंधु मन वोरै गोपी चहुँ ओरै।
नैननि नैन जोरै झूलै थोरै थोरै॥
पवन गवन आवै सोंधे की झकोरै।
तन मन वारै या छवि पर तृन तोरै॥
'सूर' प्रभु चित चोरै नैकु अँग मोरै।
सुनि मुरलि घोरै सुरवधु सीस ढोरै॥ २८३९॥

राग मलार ॥ ३४५८ ॥

झूलत स्याम स्यामा संग।
निरखि दंपति अंग सोभा, लजत कोटि अनंग॥
मंद त्रिविध समीर सीतल, अंग अग सुगंध।
मचत उड़त सुवास सँग, मन रहे मधुकर वंध॥
तैसियै जमुना सुभग जहँ, रच्यौ रंगहिंडोल।
तैसिये वृजवधू वनि, हरि चितै लोचन कोर॥
तैसोई वृंदा-विपिन-घन-कुंज-द्वार-विहार।
विपुल गोपी, विपुल वन गृह, रवन नंदकुमार॥
नित्य लीला, नित्य आनँद, नित्य मंगल गान।
'सूर' सुर मुनि मुखनि अस्तुति, धन्य गोपी कान्ह॥ २८४०॥

राग मलार ॥ ३४५९ ॥

(हिंडोरै) हरि सँग झूलहि घोपकुमारि।
ब्रज वधू विधि क्यौं न कीन्ही, कहति सव सुरनारि॥
मरुआ लगे नग ललित लीला, सुविधि सिलप सँवारि।
वज्र कीलैं लगी सुठि, सुभग सोभा कारि॥
खंभ जंवू नग सु विद्रुम रची रुचिर मयारि।
मनु सुता रवि कौ दिखावति, भुजा जुगल पसारि॥

मनि लाल मानिक जटित भँवरा, सुरँग रंगरसार।
सुक, सेस, नारद, सारदा, उपमा कहै को पार॥
डाँडी खची पचि पाचि मरकतमय, सुपाँति सुडार।
मनु उवत रवि रथ तैं धँसी, जमुना धरे त्रिविधार॥
त्रिविधार धारा धँसी अध को, स्फटिक-पटुली-सग।
वहि निकसि तिरछी वीच ह्वै मिली, गगन तैं जनु गग॥
ढिग जरित भरि मजीर इत उत, चरन पकज रंग।
प्रतिबिंव झलमल झलक मनु सरसुती आनि विनग॥
वन महल के द्वारैं रच्यौ, नव रंग रंग हिंडोर।
मनु कोटि-मनमथ-मोद-मोहन तरुनि तरुन किसोर॥
वदन तनु चितचोरि चितवत भलक लोचन कोर।
सरद विधु मधु लुब्ध मनु उड़ि मिलत तहाँ चकोर॥
उड़ि मिलत तहाँ चकोर अति छवि, ललित चलित सुवेनि।
मनहुँ अवुज वास कौं सँग, मिलित मधुकर स्त्रैनि॥
झमकि झूमत लेति दै, दुमची मचै रुचि कैन।
गावति सुकठ सुराग नागरि, गिरिधरैं जति लैन॥
कनक नूपुर, कुनित कंकन, किंकिनी भनकार।
तहँ कुँवरि वृषभान कै सँग, सोहै नदकुमार॥
नील पीत दुकूल स्यामल-गौर-अग-विकार।
मनहु नौतन घनघटा मैं, तड़ित तरल अकार॥
अनिमेष दृग दिये देखही सुख, मंडली वर नारि।
मानहु सिंगार नवीन-तरु-प्रति रची कंचन वारि॥
हँसि हाव भाव कटाच्छ, घूँघट गिरत लेति सम्हारि।
मनहरन मुनि सोभा सु लै, रति काम डारत वारि॥
अध उरध झमकि झकोर इत उत, झलक मोतिनि माल।
रितु समै सावन जानि मनु वगपाँति, उडति विसाल॥
श्री सीसफूल, अमोल तरिवन, तिलक सुंदर भाल।
सारी सुरँग मिलि नील लहँगा, सोभ कँचुकि लाल॥
मन मुदित मोदित मानिनी मुख, माधरी मुसुकानि।
ढरहरति ढरति हिंडोर डाँडी, डरति धरि दुहुँ पानि॥
उर उडत, अचल-छोर छवि, दुति-पीत-पट फहरानि।
कहै 'सूर' सो उपमा नहीं कहूँ, नेति निगमहु गानि॥ २८४१॥

राग मलार॥ ३४६०॥

गोपी गोविंद कै हिंडोरैं झूलन आइ।
रंगमहल मैं जहँ नंदरानी, खेलै तीज सुहाइ॥
श्रीखड खंभ मयारि सहित, सुसमर मरुव वनाइ।
तापर कितिक जु भ्रमत भँवरा, डाँडी जटित जराइ॥
सुठि हेम पटुली मध्य हीरा, पूलि रोचन लाइ।
सखी विविध विचित्र राग मलार मंगल गाइ॥
नँदलाल पावसकाल, दामिनि नागरी नव संग।
वोलत जु दादुर अरु पपीहा, करत कोकिल रंग॥

तहँ वर्हि निर्तत वचन मुखरित, अलि चकोर विहंग।
वलभद्र सहित गुपाल झूलत, राधिका अरधंग॥
जल भरित सरवर, सघन तरुवर, इंद्रधनुप सुदेस।
घन स्याम मध्य सुपेद वग जुरि, हरिन महि चहुँदेस॥
तहँ गगन गरजत, वीजु तरपत, मधुर मेह असेस।
झूलत विह्वल स्याम स्यामा, सीस मुकुलित केस॥
ताटंक तिलक सुदेस झलकत, खचित चूनी लाल।
नव अकृत विकृत वदन प्रहसित कमल नैन विसाल॥
करज मुद्रिका किंकिनी कटि, चाल गज गति वाल।
'सूर' मुररिपु रंग रगे, सखी सहित गुपाल॥ २८४२ ॥

राग विलावल ॥ ३४६१ ॥

नित्य धाम वृंदावन स्याम। नित्य रूप राधा व्रजवाम॥
नित्य रास, जल नित्य विहार। नित्य मान ,खंडिताऽभिसार॥
ब्रह्मरूप येई करतार। करन हरन त्रिभुवन येइ सार॥
नित्य कुंजमुख नित्य हिंडोर। नित्यहिं त्रिविध समीर झकोर॥
सदा वसत रहत जहँ वास। सदा हर्ष, जहँ नही उदास॥
कोकिल कीर सदा तहँ रोर। सदा रूप मन्मथ चितचोर॥
विविध सुमन वन फूले डार। उन्मत मधुकर भ्रमत अपार॥
नव पल्लव वन सोभा एक। विहरत हरि सँग सखी अनेक॥
कुहू कुहू कोकिला सुनाई। सुनि सुनि नारि परम हरपाई॥
वार वार सो हरिहि सुनावति। ऋतु वसत आयौ समुझावति॥
फाग-चरित-रस साध हमारै। खेलहिं सव मिलि संग तुम्हारै॥
सुनि सुनि 'सूर' स्याम मुसुकाने। ऋतु वसत आयौ हरपाने॥
॥ २८४३ ॥

राग वसंत ॥ ३४६२ ॥

राधे जू आज वरनौ वसंत।
मनहुँ मदनविनोद विहरत, नागरीनवकंत॥
मिलत सनमुख पटल पाटल भरति मानहि जूही।
वेलि प्रथम-समाज-कारन, मेदिनी कच गही॥
केतकी कुच-कलस-कचन, गरे कंचुकि कसी।
मालती मदचलित लोचन, निरखि मुख मृदु हँसी॥
विरह व्याकुल मेदिनी कुल, भई वदन विकास।
पवन परिमल सहचरी, पिक गान हृदय हुलास॥
उत सखा चपक चतुर अति, कुंद मनु तनमाल।
मधुप मनिमाला मनोहर, 'सूर' श्री गोपाल॥ २८४४ ॥

राग वसंत ॥ ३४६३ ॥

ऐसौ पत्र पठायौ वसंत। तजहु मान मानिनी तुरंत॥
कागद नव दल अवनि पात। देति कमल मसि भँवर सुगात॥
लेखिनि काम वान कै चाप। लिखि अनग कसि दीन्ही छाप॥
मलयानिल चर पठयौ विचारि। वाँचत सुक पिक सुनि सव नारि॥
'सूरदास' क्यौं होई आन। भजि हरि गोपी तजहु सयान॥२८४५॥

राग वसंत ॥ ३४६४ ॥

बेगि चलहु, प्रिय चतुर सयानी।
समय-वसंत-विपिन रथ-हय-गज, मदन सुभट नृप फौज पलानी॥
चहूँ दिसा चाँदनी, चमू चलि मनहुँ धवल सोड धूरि उड़ानी।
सोरह कला छपाकर की छवि सोभित मनहुँ छत्र सिर तानी॥
बोलत हँसत चपल बदीजन मनहुँ प्रसंसत पिक बर बानी।
धीर समीर रटत बन अलिगन, मनहुँ काम कर मुरलि सुठानी॥
कुसुम-सरासन-बान विराजत, मनहुँ मानगढ अनु अनु भानी।
'सूरदास' प्रभु की वेई गति, करहु सहाइ राधिका रानी॥
॥ २८४६ ॥

राग वसत ॥ ३४६५ ॥

देखौ वृंदावन कमल नैन। मनु आयौ मदन गुन गुदरि दैन॥
भए नव द्रुम सुमन अनेक रंग। प्रति ललित लता सकुचित सग।
कर धरे धनुप कटि कसि निषग। मनू बने सुभट सजि कवच अग॥
जहँ नव सुमंत्र वहे मलय बात। अति राजत सुचिर बिलोल पात॥
धपि धाइ धरत मनु तुरै गात। गति तेज वसन बाने उडात॥
कोकिल कूजत कलहस मोर। रथ सैल सिला पदचर चकोर॥
बर ध्वज पताक तरु तार केरि। निर्झर निसान डफ भँवर भेरि।
सुनि 'सूरदास' इमि बदत बाल। करि काम कृपन सिव क्रोध काल॥
हँसि चितै चारु लोचन बिसाल। तिहि अपनै करि थपियै गुपाल॥
॥ २८४७ ॥

राग वसंत ॥ ३४६६ ॥

कोकिल बोली, बन बन फूले, मधुप गुँजारन लागे।
सुनि भयौ भोर, रोर बदिनि कौ, मदनमहीपति जागे॥
ते दूने अकुर द्रुम पल्लव जे पहिले दव दागे।
मानहुँ रतिपति रीझि जाचकनि, बरन बरन दए बागे॥
नई प्रीति, नई लता, पुहुप नए, नयन नए रसपागे।
नए नेह, नव नागरि हरषित 'सूर' सुरँग अनुरागे॥ २८४८ ॥

राग बसंत ॥ ३४६७ ॥

देखौ वृंदावन खेलहि गोपाल। सब वनि ठनि आई व्रज की बाल॥
नव वल्ली सुदर नव नव तमाल। नव कमल महा नव नव रसाल॥
अपनै कर सुदर रचित माल। अवलंबित नागर नंदलाल॥
नव केसरि अरगजा घोरि। छिरकति नागर कहँ नव किसोरि॥
नव गोपवधू राजही सग। गज मोतिनि सुदर लसति मग॥
गोपीगुवाल सुदर सुदेस। छिरकत सुगध भए ललित भेस॥
श्री नदनँदन कै भ्रुव विलास। आनदित गावत 'सूरदास'॥
॥ २८४९ ॥

राग वसत ॥ ३४६८ ॥

पिय देखौ वन छवि निहारि। वार वार यह कहति नारि॥
नव पल्लव वहु सुमन रंग। द्रुम-वेली-तनु भयौ अनग॥

भँवरा भँवरी भ्रमत सग। जमुन करति नाना तरंग॥
त्रिविध पवन मन हरष दैन। सदा वहत नहि रहत चैन॥
'सूरज' प्रभु करि तुरत गैन। चले नारि मन सुखद मैन॥
॥ २८५० ॥

राग वसंत ॥ ३४६९ ॥
आयौ आयौ पिय ऋतु बसत। दंपति मन सुख विरह अंत॥
फाग खेलावहु संग कत। हा हा करि तृन गहति दंत॥
तुरत गए हरि लै मनाइ। हरपि मिले उर कठ लाइ॥
दुख डारयौ तुरतहिं भुलाइ। सो सुख दुहुँ कै उर न माइ॥
रितु वसंत आगमन जानि। नारिन राखी मान वानि॥
'सूरदास' प्रभु मिले आनि। रस राख्यौ रतिरग ठानि॥२८५१॥

राग वसंत ॥ ३४७० ॥
आयौ जान्यौ हरि वसत। ललना सुख दीन्हौ तुरत॥
फूले वननि सुमन पलास। ऋतु नायक सुख कौ विलास॥
संग नारि चहुँ-आस-पास। मुरली अंमृत करति भास॥
स्यामा स्याम विलास एक। सुखदायक गोपी अनेक॥
तजत नही काहू छनेक। अकल निरजन विविध भेष॥
फाग-रंग-रस करत स्याम। जुवतिनि पूरन करन काम॥
वासरहूँ सुख देत जाम। 'सूर' स्याम प्रभु निकट वाम॥
॥ २८५२ ॥

राग वसंत ॥ ३४७१ ॥
देखत वन व्रजनाथ आज, अति उपजत है अनुराग।
मानहुँ मदन वसंत मिले दोउ, खेलत फूले फाग॥
झाँझ झिली निर्भर, निसान डफ, भेरि भँवर गुजार।
मानहुँ मदन मडली रचि पुर वीथिनि विपिन विहार॥
द्रुम-गन-मध्य पलास मजरी, उदित अगिनि की नाई।
अपनै अपनै मेरनि मानौ, होरी हरपि लगाई॥
केकी, कोक, कपोत और खग, करत कुलाहल भारी।
मानहुँ लै लै नाउँ परस्पर, देत दिवावत गारी॥
कुज-कुज-प्रति कोकिल कूजति, अति रस विमल बढ़ी।
मन कुल-वधू-निलज भई गृह गृह गावति अटनि चढी॥
प्रफुलित लता जहाँ जहँ देखत, तहाँ तहाँ अलि जात।
मानहुँ विट सवहिनि अवलोकत, परसत गनिका गात॥
लीन्हें पुहुप पराग पवन कर, क्रीड़त चहुँ दिसि धाइ।
रस अनरस सजोगिनि विरहिन, भरि छाँड़त मन भाइ॥
वहु [illegible] अनेक रग छवि, उत्तम भाँति धरे।
[illegible] सौ सवही, लै लै रंग भ[illegible]
[illegible] हौ रूप निधि. वृंदाविपिन [illegible]
सुख क्रीड़त, स्याम [illegible]

राग वसंत ॥ ३४७२ ॥

सुंदर वर सँग ललना विहरति, वसँत सरस ऋतु आई।
लै लै छरी कुमारि राधिका, कमलनैन पर धाई ॥
सरिता सीतल वहति मद गति, रवि उत्तर दिसि आयौ।
अति रस भरी कोकिला वोली, विरहिनि विरह जगायौ ॥
द्वादस वन रतनारे देखियत, चहुँ दिसि टेसू फूले।
मौरे अँवुआ अरु द्रुम वेली, मधुकर परिमल भूले ॥
इत श्री राधा उत श्री गिरिधर, इत गोपी उत ग्वाल।
खेलत फाग रसिक व्रजवनिता, सुदर स्याम तमाल ॥
चोवा चदन अविर कुमकुमा, छिरकत भरि पिचकारी।
उडत गुलाल अवीर, जोति रवि दिसि दीपक उँजियारी ॥
ताल मृदग वीन, वाँसुरि डफ, गावत गीत सुहाए।
रसिक गुपाल नवल-व्रज-वनिता, निकसि चौहटै आए ॥
भूमि भूमि भूमक सव गावति, वोलति मधुरी वानी।
देति परस्पर गारि मुदित मन, तरुनी वाल सयानी ॥
सुरपुर नरपुर नागलोक, जलथल क्रीडासुख पावै।
प्रथम-वसत-पंचमी-लीला, 'सूरदास' जस गावै ॥२८५४॥

राग वसंत ॥ ३४७३ ॥

कुसुमित वन देखन चलहु आज। जहँ प्रगट भयौ रितु-रंग-राज ॥
अति विविध कुसुम परिमल वहाइ। वन सुवा सहित पंचम सुहाइ ॥
केकी वोलत पिक-सुर-सनेहि। जुवती मन अति आनंद देहि ॥
श्री मदन मोहन सुदरता पुज। श्री राधा सँग राजत निकुज ॥
गावै सुरगन दपतिविलास। तहँ सदा रहै मन "सूरदास" ॥
॥ २८५५ ॥

राग होरी ॥ ३४७४ ॥

पिय प्यारी खेलै जमुन तीर। भरि केसरि कुमकुम अरु अवीर ॥
घसि मृगमद चदन अरु गुलाल। रँग भीने अरगज वस्त्र माल ॥
कूजत कोकिल कल हस मोर। ललितादिक स्यामा एक ओर ॥
वृदादिक मोहन लई जोर। वाजै ताल मृदंग रवाव घोर ॥
प्रभु हँसि कै गेंदुक दई चलाइ। मुख पट दै राधा गई वचाइ ॥
ललिता पट मोहन गह्यौ धाइ। पीतावर मुरली लई छिड़ाइ ॥
हौ सपथ करौं छाँडौं न तोहि। स्यामा जु आज्ञा दई मोहि ॥
इक निज सहचरि आई वसीठि। सुनि री ललिता तू भई ढीठि ॥
पट छाँडि दियौ तव नव किसोर। छवि रीझि 'सूर' तृन दियौ तोर ॥२८५६॥

राग होरी ॥ ३४७५ ॥

वाल गोपाल लाल सँग खेलै, मुख मूँदे हिय खोलै।
चिकने चिकुर छूटे वेनी तै, मिले वसन मे डोलै ॥
मानौ कुटुँव सहित कालिंदी, काली करत कलोलै।
नासा की वेसरि अति राजति, लागे नग अनमोलै ॥
मानौ मदन मजरी लीन्हे, कीर करत मलगोलै।
'सूरदास' सव चाँचरि खेलै, अपने अपने टोलै ॥ २८५७ ॥

राग बसंत ॥ ३४७६ ॥

खेलत नवलकिसोर किसोरी।
नंदनँदन वृषभानसुता चित, लेत परस्पर चोरी॥
औरौ सखीजाल वनि सोभित, सकल ललित तन गोरी।
तिनकी नख सोभा देखत हो, तरनिनाथ मति भोरी॥
एक गुवाल अवीर लिये कर, इक चंदन इक रोरी।
उपरा उपरि छिरकि रस सर भरि, कुल की परिमित फोरी॥
देति असीस सकल व्रजजुवती, जग जग अविचल जोरी।
'सूरदास' उपमा नहिं सूझत, जो कछु कहौ सु थोरी॥ २८५८ ॥

राग श्रीहठी ॥ ३४७७ ॥

तेरै आवैगे आज सखी हरि, खेलन कौ फाग री।
सगुन सँदेसौ हौ सुन्यौ, तेरै आँगन बोलै काग री॥
मदनमोहन तेरै वस माई, सुनि राधे वडभाग री।
वाजत ताल मृदंग झाँझ डफ, का सोवै, उठि जाग री॥
चोवा चदन लै कुमकुम अरु, केसरि पैयाँ लाग री।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस कौ, राधा अचल सुहाग री॥ २८५९ ॥

राग कान्हरौ ॥ ३४७८ ॥

हरि सँग खेलति है सब फाग।
इहिं मिस करति प्रगट गोपी. उर अतर कौ अनुराग॥
सारी पहिरि सुरँग, कसि कचुकि, काजर दै दै नैन।
वनि वनि निकसि निकसि भई ठाढी, सुनि माधौ के वैन॥
डफ, वाँसुरी रुंज अरु महुअरि, वाजत ताल मृदंग।
अति आनंद मनोहर वानी, गावत उठति तरग॥
एक कोध गोविंद ग्वाल सब, एक कोध व्रज नारि।
छाँड़ि सकुच सब देति परस्पर, अपनी भाई गारि॥
मिलि दस पाँच अली कृष्नहिं, गहि लावति अचकाइ।
भरि अरगजा अवीर कनकघट, देति सीस तैं नाइ॥
छिरकति सखी कुमकुमा केसरि, भुरकति वदनधूरि।
सोभित है तन साँझ-समै-घन, आए है मनु पूरि॥
दसहूँ दिसा भयौ परिपूरन, 'सूर' सुरंग प्रमोद।
सुर विमान कौतूहल भूले, निरखत स्याम विनोद॥ २८६० ॥

राग काफी ॥ ३४७९ ॥

जमुना कै तट खेलति हरि सग, राधा लिये सब गोपी।
नंदलाल गोवर्धनधारी, तिनकै नेहनि ओपी॥
चलहु सखी जाइयै तहाँ चलि, छिन जियरा न रहाइ।
वेनु सब्द करि मन हरि लीन्हौ, नाना राग वजाइ॥
सजल-जलद-तन पीतावर छवि, कर मुख मुरली धारि।
लटपट पाग वने मनमोहन, ललना रही निहारि॥
नैन सौ नैन मिलै कर सौ कर, भुजा ठए हरि ग्रीव।
मधि नायक गोपाल विराजत, सुदरता की सीव॥

करत केलि कौतूहल माधो, मधुरी बानी गावै।
पूरन चद सरद की रजनी, सतनि सुख उपजावै॥
सकल सिंगार कियौ व्रजवनिता, नखसिख लौ भल ठानि।
लोक-वेद-कुल धर्म केतकी, नैकु न मानति कानि॥
वलि वलि वल के वीर त्रिभगी, गोपिनि के सुखदाइ।
सकल विथा जु हरी या तन की, हरि हँसि कठ लगाइ॥
माधव नारि, नारि माधव कौ, छिरकत चोवा चदन।
ऐसौ खेल मच्यौ उपरापरि, नँदनंदन जगवदन॥
ब्रह्मा इद्रदेव गनगंध्रव, सवै एकरस वरपै।
'सूरदास' गोपी वड़भागिनि, हरि-क्रीड़ा-सुख करपै॥ २८६१॥

राग आसावरी ॥ ३४८० ॥

मानौ व्रज तै करिनि चलि मदमाती हो।
गिरिधर गज पै जाइँ. ग्वालि मदमाती हो॥
कुल अंकुस मानै नही, मदमाती हो।
साँकरवेद तुराइ, ग्वालि मदमाती हो॥
अवगाहै जमुना नदी, मदमाती हो।
करति तरुनि जलकेलि, ग्वालि मदमाती हो॥
चहुँ दिसि तै मिलि छिरकहिं, मदमाती हो।
सुँड-दड-भुज पेलि ग्वालि मदमाती हो॥
वृंदावन वीथिनि फिरै, मदमाती हो।
सग मदन गजपाल, ग्वालि मदमाती हो॥
कवहूँ नैन कर दै मिलै, मदमाती हो।
तैसियै गजगति चाल, ग्वालि मदमाती हो॥
नागवेलि चावति फिरै मदमाती हो।
मोदक माँझ कपूर ग्वालि मदमादी हो॥
सुगँध पुढे स्रवननि चुवै, मदमाती हो।
मडित माँग सिंदूर, ग्वालि मदमाती हो॥
केसरि लाई सानि कै, मदमाती हो।
घुघुरु घट घुमाइ, ग्वालि मदमाती हो॥
उर पर कुच जुग घट से, मदमाती हो।
मुक्तामाल रुराइ, ग्वालि मतमाती हो॥
अचल उडत वखानियै, मदमाती हो।
मनु वैरख फहराइ ग्वालि मदमाती हो॥
जुगल हार मनु सुरसरी मदमाती हो।
जुगल प्रवाह वहाइ ग्वालि मदमाती हो॥
अँग अँग छिरकै स्याम कौ, मतमाती हो।
कुकुम चदन गारि, ग्वालि मदमाती हो॥
'सूरदास' प्रभु क्रीड़ही, मदमाती हो।
सँग गोकुल की नारि, ग्वारि मदमाती हो॥ २८६२ ॥

राग गौरी ॥ ३४८१ ॥

खेलत है अति रसमसे, रँगभीने हो।
अति रस केलि विलास, लाल रँगभीने हो॥
जागत सब निसि गत भई, रँगभीने हो।
भले जु आए प्रात, लाल रँगभीने हो॥
बोलत बोल प्रतीति के, रँगभीने हो।
सुंदर स्यामल गात, लाल, रँगभीने हो॥
अति लोहित दृग रँगमँगे, रँगभीने हो।
मनहुँ भोर जलजात, लाल रँगभीने हो॥
पिया अधरमधु पानमत्त रँगभीने हो।
कहौ कहुँ की कहुँ बात, लाल रँगभीने हो॥
केस सिथिल, बेसहु सिथिल, रँगभीने हो।
ससि मुख सिथिल जँभात, लाल रँगभीने हो॥
अंग अंग अलसात, लाल रँगभीने हो।
सकुचत हौ कत लाड़िले रँगभीने हो॥
दुरत न उर-नख-घात लाल रँगभीने हो।
'सूरदास' प्रभु नंदकुँवर रँगभीने हो।
बहुनायक विख्यात लाल रँगभीने हो॥ २८६३ ॥

राग गौरी ॥ ३४८२ ॥

गोकुल सकल गुवालिनी, घरघर खेलत फाग।
मनोरा झूम करो॥
तिनमैं राधा लाड़िली, जिनकौ अधिक सुहाग। म०॥
झुंडनि मिलि गावति चली, झूमक नंददुवार। म०॥
आजु परब हँसि खेलियै, मिलि सँग नंदकुमार। म०॥
मोहन दरस दिखावहु, दुरहु तो नँद की आन। म०॥
रसिकराइ सुंदर बरन, राधाजीवन प्रान। म०॥
प्रगट प्रीति गोकुल भई, कैसै करत दुराउ। म०।
हम न दरस बिनु जीवही, कोउ कछू करौ उपाउ। म०॥
जसुमतिसुत, चित चुभि रही, वह तुम्हरी मुसुकानि। म०।
अब न अनत रुचि ऊपजै, सहज परी यह बानि। म०॥
दुरत स्याम धरि पाइयो, राधा भरि अँकवारि। म०।
कनक कलस केसरि भरे, लै धाई ब्रजनारि। म०॥
भरहु भरहु सखि स्यामही, पीत पिछौरी पाग। म०।
देह गेह सुधि बीसरी, नंदनँदन अनुराग। म०॥
छुटे केस बँद कंचुकी टूटी मोतिनि माल। म०।
चोवा चंदन अरगजा, उड़त अबीर गुलाल। म०॥
कर करताल बजावही, छिरकति सब ब्रजनारि। म०।
हँसि हँसि हरि पर डारही, अरुन नैन फुलवारि। म०॥
गगन बिमाननि सौं छयो, आनँद बरषै फूल। म०।
जै जै सब्द उचारही सुर मुनि कौतुक भूल। म०॥
'सूर' गुपाल कृपा बिना, यह रस लहै न कोइ। म०।
श्रीवृषभानुकुमारिका, स्याम मगन मन होइ। म०॥ २८६४ ॥

राग सारंग ॥ ३४८३ ॥

(आली री) नदनँदन वृषभानुकुँवरि सौ बाढ्यौ अधिक सनेह।
दोउ दिसि पै आनँद बरषत ज्यौ भादौं की मेह॥
सब सखियाँ मिल गईं महरि पै, मोहन माँगै देहु।
दिना चारि होरी कै अवसर, बहुरि आपनौ लेहु॥
झुकि झुकि परति है कुँवरि राधिका, देति परस्पर गारि।
अब कह दुरे साँवरे ढोटा, फगुआ देहु हमारि॥
हँसि हँसि कहत जसोदा रानी, गारी मति कोउ देहु।
'सूरदास' स्याम के बदलै, जो चाहौ सो लेहु॥ २८६५ ॥

राग सारंग ॥ ३४८४ ॥

निकसि कुँवर खेलन चले, रँग होरी।
मोहन नदकिसोर, लाल रँग होरी॥
कचन माट भराइ कै, रँग होरी।
सौंधै भरयौ कमोर, लाल रँग होरी॥
झाँझ ताल सुर मडले, रँग होरी।
बाजत मधुर मृदग, लाल रँग होरी॥
तिन मै परम सुहावनी, रँग होरी।
महुवरि बाँसुरि चग, लाल रँग होरी॥
खेलत रँगीले लाल जू, रँग होरी।
गए वृषभानु की पौरि, लाल रँग होरी॥
जे ब्रज हुती किसोरिका, रँग होरी।
ते सब आईं दौरि, लाल रँग होरी॥
सखि सुख देखन कारने, रँग होरी।
गाँठि दुहूँनि की जोरि, लाल रँग होरी॥
फगुआ दियौ न जाइ जौ, रँग होरी।
लागौ राधा पाइँ, लाल रँग होरी॥
यह सुख सबकै मन बसौ, रँग होरी।
'सूरदास' बलि जाइ, लाल रँग होरी॥ २८६६ ॥

राग टोड़ी ॥ ३४८५ ॥

या गोकुल के चौहटै रँगभीजी ग्वालिनि।
हरि सँग खेलै फाग, नैन सलोने री रँगराँची ग्वालिनि॥
डरति न गुरुजन लाज कौ, रँगभीजी ग्वालिनि।
मोहन कै अनुराग, नैन सलोने री रँगराँची ग्वालिनि॥
दुँदुभि बाजै गहगही, रँगभीजी ग्वालिनि।
नगर कुलाहल होइ, नैन सलोने रँगराँची ग्वालिनि॥
उमह्यौ मानुप घोप यौ, रँगभीजी ग्वालिनि।
भवन रह्यौ नहि कोइ, नैन सलोने री रँगराँची ग्वालिनि॥
डफ बाँसुरी सुहावनी, रँगभीजी ग्वालिनि।
ताल मृदग उपग, नैन सलोने री रँगराँची ग्वालिनि॥
झाँझ झालरी किन्नरी, रँगभीजी ग्वालिनि।
आउझ बर मुहचंग, नैन सलोने री रँगराँची ग्वालिनि॥

उतहिं संग सब ग्वाल, लिये रँगभीजी ग्वालिनि।
सुंदर नंदकुमार, नैन सलोने री रँगराँची ग्वालिनि॥
उत स्यामा नव जोवना, रँगभीजी ग्वालिनि।
अंबुज लोचन चारु, नैन सलोने री रँगराँची ग्वालिनि॥
टेसू कुसुम निचोइ कै, रँगभीजी ग्वालिनि।
भरे परस्पर आनि, नैन सलोने री रँगराँची ग्वालिनि॥
चोवा चंदन अरगजा, रँगभीजी ग्वालिनि।
वूका वंदन सानि, नैन सलोने री रँगराँची ग्वालिनि॥
रत्न जटित पिचकारियाँ रँगभीजी ग्वालिनि।
कर लिये गोकुलनाथ नैन सलोने री रँगराँची ग्वालिनि॥
छिरकहि मृगमद कुंकुमा, रँगभीजी ग्वालिनि।
जो राधे कैं साथ, नैन सलोनी री रँगराँची ग्वालिनि॥
सुरँग पीत पट रँगि रह्यौ, रँगभीजी ग्वालिनि।
सुभग साँवरै अंग, नैन सलोने रँगराँची ग्वालिनि॥
नील वसन भामिनि वनी, रँगभीजी ग्वालिनि।
कंचुकि वसन सुरंग, नैन सलोने री रँगराँची ग्वलिनि॥
अरुन नूत पल्लव धरे रँगभीजी ग्वालिनि।
कूजित कोकिल कीर, नैन सलोने री रँगराँची ग्वालिनि॥
नृत्य करत अलिकुल मिले, रँगभीजी ग्वालिनि।
अति आनद अधीर, नैन सलोने री रँगराँची ग्वालिनि॥
चढ़ि विमान सुर देखहीं, रँगभीजी ग्वालिनि।
देह दसा बिसराइ, नैन सलोने री रँगराँची ग्वालिनि॥
राधा रसिक रसज्ञ की, रँगभीजी ग्वालिनि।
'सूरदास' वलि जाइ, नैन सलोने री रँगराँची ग्वालिनि॥

॥ २८६७ ॥

राग गौरी ॥ ३४८६ ॥

हो हो हो हो हो हो होरी।
खेलत अति सुख प्रीति प्रगट भई, उत हरि इतहिं राधिका गोरी।
बाजत ताल मृदंग झाँझ डफ, बीच बीच बाँसुरि धुनि थोरी॥हो०॥
गावत दै दै गारि परस्पर, उत हरि, इत वृषभानुकिसोरी।
मृगमद साख जवादि कुमकुमा, केसरि मिलै मिलै मथि घोरी॥हो०॥
गोपी ग्वाल गुलाल उड़ावत, मत्त फिरै रतिपति मनु घोरी।
भरित रंग रति नागरि राजति, मनहुँ उमँगि वेला वल फोरी॥हो०॥
छुटि गई लोक लाज कुल सका, गनति न गुरु गोपिनि कौ कोरी।
जैसैं अपने मेर मते मैं, चोर भोर निरखत निसि चोरी॥हो०॥
उन पट पीत किये रँग राते, इन कंचुकी पीत रँग वोरी।
रही न मन मरजाद अधिक रुचि, सहचरि सकति गाँठि गहिडोरी॥हो०॥
बरनि न जाइ बचनरचना रचि, वह छवि झकझोरा झकझोरी।
'सूरदास' सारदा सरल मति, सो अवलोकि भूलि भई भोरी॥हो०॥
हो हो हो हो हो हो होरी॥ २८६८ ॥

राग गूजरी ॥ ३४८७ ॥

ब्रज की बीथिनि बीथिनि डोलत।
मदनगुपाल सखा सँग लीन्हें, हो हो हो हो बोलत ॥
ताल मृदंग बीन डफ बाँसुरि, बाजत गावत गीत।
पहिरे बसन अनेक बरन तन, नील अरुन सित, पीत ॥
सुनि सब नारि निकसि ठाढी भई, अपनै अपनै द्वारि।
नवसत सजे प्रफुल्लित आनन, जनु कुमुदिनी कुमारि ॥
चपल नैन, अति चतुर चारु तन जनु फुलवारी गाई।
देखत ही नँदनद परम सुख, मिलत मधुप लौं भाई ॥
राखति गहि भुजबल चहुँदिसि जुरि, अतिहि प्रेम अकुलात।
मानहुँ कमल-कोष-अभिअंतर, भ्रमर भ्रमत बिनु प्रात ॥
छाँड़ति भरि भायौ अपनौ करि, राजत अंग बिभाग।
मानहुँ उडि जु चले है अलिकुल, आस्रित अगपराग ॥
अंतर कछु न रह्यौ तिहि औसर, अति आनंद प्रमाद।
मानहुँ प्रेम समुद्र 'सूर' बल, उमँगि तजी मरजाद ॥ २८६९ ॥

राग गौरी ॥ ३४८८ ॥

ऊँचौ गोकुल नगर, जहाँ हरि खेलत होरी।
चलि सखि देखन जाहि, पिया अपने की खोरी ॥
बाजत ताल, मृदग, और किन्नरि की जोरी।
गावति दै दै गारि, परस्पर भामिनि भोरी ॥
बूका सुरँग अबीर उडावत, भरि भरि झोरी।
इत गोपिनि को झुंड, उतहि हरि-हलधर-जोरी ॥
नवल छबीले लाल, तनी चोली की तोरी।
राधा चली रिसाइ, ढीठ सौं खेलै कोरी ॥
खेलत मैं कस मान, सुनहु वृषभानुकिसोरी।
'सूर' सखी उर लाइ हँसति, भुज गहि झकझोरी ॥ २८७० ॥

राग धनाश्री ॥ ३४८९ ॥

होरी खेलत ब्रज खोरिनि मैं, ब्रजबाला बनि बनि बनवारी।
डफ की धुनि सुनि बिकल भई सब, कोउ न रहति घर घूँघटवारी ॥
जाहि अबीर देत आँखिनि मैं, ताही कौं छिरकत पिचकारी।
सौंधे तेल अबीर अगरचा, तैसी जरद केसरि चटकारी ॥
उड़त गुलाल लाल भए बादर, रँगि गए सिगरे अटा अटारी।
'सूरदास' वारी छवि ऊपर, कल न परति छिनु बिनु गिरिधारी ॥
॥ २८७१ ॥

राग सारंग ॥ ३४९० ॥

कर लिये डफहि बजावै, हो हो हो सनाक खेलार होरी की।
संग सखा सब बनि बनि आवत, छवि मोहन हलधर जोरी की ॥
ताल मृदंग बजावत गावत, भावति धुनि मुरली थोरी की।
लाल गुलाल समूह उड़ावत, फेंट कसे अबीर झोरी की ॥

खेलत फाग करत कौतूहल, मत्त फिरै मन्मथ धोरी की।
बरन बरन सिर पाग चौतनी, कछ कटि छबि चंदन खोरी की ।।
उतहिं सुनत वृषभानुसुता लई, तरुनि बोलि सब दिन थोरी की।
नीलांबर कचुकि सुरंग तनु, अति राजति राधा गोरी की ।।
मनु दामिनि घनमध्य रहति दुरि, प्रगट हसनि चितवनि भोरी की।
नख सिख सजि सिँगार ब्रजजुवती, तनु डँड़िया कुँसुभी बोरी की ।।
पान भरे मुख चमकत चौका, भाल दिये वेदी रोरी की।
कनक कलस कोटिक कर लीन्हे, भरि फुलेल रँग रँग घोरी की ।।
जुवति वृंद ब्रजनारि सग लै, जाइ गहनि ब्रज की खोरी की।
घर घर तै धुनि सुनि उठि धाई, जे गुरुजन पुरजन चोरी की ।।
हाथनि लै भरि भरि पिचकारी, नाना रग सुमन बोरी की।
कोउ मारति, कोउ दाउँ निहारति, अरसपरस दौरादौरी की ।।
उतहिं सखा कर जेरी लीन्हे, गारी देहिं सकुच थोरी की।
इतहिं सखी कर बाँस लिये बिच, मार मची झोरा झोरी की ।।
पाछे तै ललिता चंद्रावलि, हरि पकरे भुज भरि कौरी की।
ब्रजजुवती देखतही धाई, जहाँ तहाँ तै चहुँ ओरी की ।।
इक पट पीताबर गहि झटक्यौ, इक मुरलि लई कर मोरी की।
इक मुख सौ मुख जोरि रहति, इक अंक भरति रतिपति ओरी की ।।
तब तुम चीर हरे जमुना तट, सुधि बिसरे माखन चोरी की।
अब हम दाउँ आपनौ लैहै, पाइ परौ राधा गोरी की ।।
अपने अपने मनसुख कारन, सब मिलि झकझोरा झोरी की।
नीलांबर पीतांबर सौ लै, गाँठि दई कसि कै ढोरी की ।।
कनक कलस केसरि भरि ल्याई, डारि दियौ हरि पर ढोरी की।
अति आनँद भरी ब्रजजुवती, गावति गीत सबै होरी की ।।
अमर विमान चढे सुख देखत, पुहुप वृष्टि जै-धुनि-रोरी की।
'सूरदास' सो क्यौ करि बरनै, छबि मोहनराधा जोरी की ।।२८७२।।

राग श्रीहठी ।। ३४९१ ।।

हरि सँग खेलन फागु चली।
चोवा चंदन अगरु अरगजा, छिरकतिँ नगर चली ।।
राती पीरी अँगिया पहिरे, नव तन झूमक सारी।
मुख तमोर, नैननि भरि काजर, देहि भावती गारी ।।
रितु वसंत आगम रतिनायक, जोवन-भार-भरी।
देखन रूप मदनमोहन कौ, नदद्वार खरी ।।
कहि न जाइ गोकुल कौ महिमा, घर घर बीथिनि माही।
'सूरदास' सो क्यौ करि बरनै, जो सुख तिहुँ पुर नाही ।। २८७३ ।।

राग गौरी ।। ३४९२ ।।

ठाढ़ी हो ब्रज खोरी ढोटा कौन कौ।
(लटिहिं) लकुट त्रिभंगी एक पद (री) मानौ मन्मथ गौन कौ ।।
मोर मुकुट कछनी कसे (री) पीतांबर कटि सोभ।
नैन चलावै फेरि कै (री) निरखि होत मन लोभ ।।

भौंह मरोरै मटकि कै (री) रोकत जमुना घाट।
चितै मद मुसुकाइ कै (री) जिय करि लेइ उचाट॥
हँसत दसन चमकाइ कै (री) चकचौंधी सी होति।
वग पंगति नव जलद मैं (री) उर माला गजमोति॥
पिचकारी रतननि जरित (री) तकि तकि छिरकत अंग।
टेसू कुसुम निचोइ कै (री) अरु केसरि को रंग॥
फेंट गुलाल भराइ कै (री) डारत नैननि ताकि।
एते पर मन हरत है (री) कहा कहौं गति वाकि॥
पुनि हा हा करि मिलत है (री) नाना रंग वनाइ।
नंदसुवन के रूप पर (री) 'सूरदास' वलि जाइ॥२८७४॥

राग श्रीहठी ॥ ३४९३ ॥

साँवरौ ढोटा को है माई, वारिज नैन विसाल।
अधर धरे मुख मुरलि वजावत, गावत राग रसाल॥
मंद मंद मुसुकनि सरोज मुख, सोभा वरनि न जाइ।
वाँकी भौंहैं, तिरछी चितवनि, चित वित लियौ चुराइ॥
अति लोने सोने के कुंडल, कौनै रचे सँवारि।
मनौ काम किल फंद वनाए, फँदी मीन व्रजनारि॥
सिर पगिया, वीरा मुख सोहै, सरस रसीले वोल।
अति आधीन भई व्रज वनिता, वस कीन्ही विनु मोल॥
कहा करौ देखे विनु सजनी, कल न परै पल प्रान।
ग्वालनि संग रंग भरयौ भावत, गावत आछी तान॥
तातै और कौन हितु मेरै, सखि चलि नैकु दिखाइ।
मदनमोहन की चरनरेनु पर, 'सूरदास' वलि जाइ॥ २८७५ ॥

राग नट नारायन ॥ ३४९४ ॥

खेलत स्याम ग्वालनि संग।
एक गावत, एक नाचत, इक करत वहु रंग॥
वीन मुरज उपंग मुरली, झाँझ, झालरि ताल।
पढत होरी वोलि गारी, निरखि कै व्रजवाल॥
कनक कलसनि घोरि केसरि, कल लिये व्रजनारि।
जवहिं आवत देखि तरुनी, भजत दै किलकारि॥
दुरि रही इक खोरि ललिता, उत तै आवत स्याम।
धरे भरि अँकवारि औचक, धाइ आई वाम॥
वहुत ढीठौ दै रहे हौ, जानवी अव आजु।
राधिका दुरि हँसति ठाढी, निरखि पिय मुख लाज॥
लियौ काहू मुरलि कर तै, कोउ गह्यौ पट पीत।
सीस वेनी गूँथि, लोचन आँजि, करी अनीत॥
गए कर तै छुटकि मोहन, नारि सव पछिताति।
सीस धुनि कर मीजि वोलति, भली लै गए भाँति॥
दाउँ हम नहि लैन पायौ, वसन लेती लाल।
'सूर' प्रभु कहँ जाहुगे अव, हम परी इहिं ख्याल॥ २८७६ ॥

राग काफी ॥ ३४९५ ॥

मोहन गए आजु, तुम जाहु दाँव हम लेहिगी हो।
लालन हमहिं करे वेहाल, वहै फल देहिगी हो॥
आजुहि दाँव आपनौ लेती, भले गए हौ भागि।
हा हा करते पाइनि परते, लेहु पितंवर माँगि॥
वेनी छोरत हँसत सखा सँग, कहत लेहु पट जाइ।
सौह करत हौ नंद ववा की, अपनी अपति कराइ॥
जौ मै लेहु पितावर अवही, कहा देहुगे मोहिं।
इत उत जुवती चितवन लागी, रही परस्पर जोहि॥
एक सखा हरि पिया रूप करि, पठै दियौ तिन पास।
गयौ तहाँ मिलि सग तियनि कै, हँसत देखि पटवास॥
मोहिं देहु राखौ दुराइ कै, स्यामहि जनि लै देहु।
लियौ दुराइ गोद मै राख्यौ, दाँव आपनौ लेहु॥
पितांवर जनि देहु स्याम कौ, यह कहि चमक्यौ ग्वाल।
'सूर' स्याम पट फेरत कर सौ, चकित निरखि व्रजवाल॥ २८७७ ॥

राग गौरी ॥ ३४९६ ॥

चकित भई हरि की चतुराई। हमहिं छली इन कुँवर कन्हाई॥
कहा ठगोरी देखत लाई। धिरवति है कहि भली वनाई॥
एक सखी हलधरवपु काछौ। चली नील पट ओढ़े आछौ॥
स्याम मिलन ताकौ तहँ आए। अग्रज जानि चले अतुराए॥
मिले साँकरी व्रज की खोरी। ढूंकी रही जहाँ तहँ गोरी॥
गह्यौ धाइ भुज दोउ लपटानी। दौरि परा सव सखी सयानी॥
निरखि निरखि तरुनी मुसुकानी। एक निलज, इक रही लजानी॥
कहा रही करि सकुच दिवानी। अव इनकी जनि राखौ कानी॥
गारि नारि सव देहिं सुहानी। नंद महर लौ जाति वखानी॥
उतर्‍यौ 'सूर' स्याम-मुख-पानी। गई लिवाइ जहँ राधा रानी॥
॥ २८७८ ॥

राग श्रीहठी ॥ ३४९७ ॥

(व्रज जुवती मिलि) नागरि, राधा पै मोहन लै आईं।
लोचन आँजि, भाल वेंदी दै, पुनि पुनि पाइ पराई॥
वेनी गूँथि, माँग सिर पारी, वधू वधू कहि गाईं।
प्यारी हँसति देखि मोहनमुख, जुवती वने वनाई॥
स्याम अग कुसुमी नई सारी, अपनै कर पहिराई।
कोउ भुज गहति, कहति कछु कोऊ, कोउ गहि चिवुक उठाई॥
एक अधर गहि सुभग अँगुरियनि, वोलत नही कन्हाई।
नीलांवर गहि खूँट, चूनरी, हँसि हँसि गाँठि जुराई॥
जुवती हँसति देति कर तारी, भई स्याम मनभाई।
कनक कलस अरगजा घोरि कै, हरि कै सिर ढरकाई॥
नंद सुनत हँसि महरि पठाई, जसुमति धाई आई।
पट मेवा दै स्याम छुडायौ, 'सूरदास' वलि जाई॥ २८७९ ॥

राग काफी ॥ ३५०१ ॥

लालन प्रगट भए गुन आजु, त्रिभंगी लालन ऐसे हौ।
रोकत घाट बाट गृह बनहूँ निबहति नहिं कोउ नारि॥
भली नही यह करत साँवरे, हम दैहैं अब गारि।
फागुन मैं तौ लखत न कोऊ, फबति अचगरी भारि॥
दिन दस गए, दिना दस औरौ, लेहु सासु सब सारि।
पिचकारी मोकौ जनि छिरकौ, झरकि उठी मुसुकाइ॥
सासु ननद मोकौ घर बैरिनि, तिनहि कहौ कह जाइ।
हा हा करि, कही नद दुहाई, कहा परी यह बानि॥
तासौ भिरहु तुमहिं जो लायक, इहिं हेरनि मुसुकानि।
अनलायक हम हैं, की तुम हौ, कहौ न बात उघारि॥
तुमहूँ नवल, नवल हमहूँ है, बड़ी चतुर हौ ग्वारि।
यह कहि स्याम हँसे, बाला हँसी, मनही मन दोउ जानि।
'सूरदास' प्रभु गुननि भरे हौ, भरन देहु अब पानि॥ २८८३ ॥

राग काफी ॥ ३५०२ ॥

(अरी माई) मेरौ मन हरि लियौ नंदढुटौना।
चितवनि मैं वाके कछु टोना॥
निरखत सुंदर अंग सलोना। ऐसी छवि कहुँ भई न होना॥
काल्हि रहे जमुना तट जौना। देख्यौ खोरि साँकरी तौना॥
बोलत नही रहत वह मौना। दधि लै छीनि खात रह्यौ दौना॥
घर घर माखन चोरत जौना। बाटनि घाटनि लेत है दौना॥
खेलतु फागु ग्वाल सँग छौना। मुरलि बजाइ बिसारै भौना॥
मो देखत अबही कियौ गौना। नटवर अँग सुभ सजे सजौना॥
त्रिभुवन मैं बस कियौ न कौना। 'सूर' नंदसुत मदनलजौना॥ २८८४॥

राग काफी ॥ ३५०३ ॥

माई—मोहन मूरति साँवरौ नंदनँदन जिहिं नाँवरौ।
अबहिं गए मेरे द्वारै ह्वै, कहत रहत ब्रज गाँवरौ॥
मै जमुना जल भरि घर आवति, मोहिं करि लागौ ताँवरौ।
ग्वाल सखा सँग लीन्हे डोलत, करत आपनौ भावरौ॥
जसुमति कौ सुत, महरढुटौना, खेलत फागु सुहावरौ।
'सूर' स्याम मुरली धुनि सुनि री चित, न रहत कहूँ ठाँवरौ॥ २८८५ ॥

राग काफी ॥ ३५०४ ॥

(अरी माई) साँवरौ सलौनौ अति, नंद कौ कँवरै री।
चंदन की खौरि भाल, भौहैं है जवरै री॥
कुंतल कुटिल छवि राजत झवरै री।
लोचन चपल तारे, रुचिर भँवरै री॥
मकरकुंडल गंड, झलमल करै री।
मनहुँ मुकुर बीच, रवि छबि बरै री॥
नासिका परम लोनी, बिबाधर तरै री।
तहाँ धरी मुरली लौ, नाना रंग भरै री॥

जमुना कैं तीर ग्वाल-संगहि विहरै री।
अवही मैं देखि आई, वसीवट तरै री॥
पिचकारी कर लिये, धाइ अंग धरै री।
नैननि अवीर मारै, काहू सौं न डरै री॥
वातनि हरत मन राग ह्वै कै ढरै री।
'सूरज' कौ प्रभु आली, चित्त तैं न टरै री॥ २८८६ ॥

राग काफी ॥ ३५०५ ॥

नद कै नँदन आली, मोहिं कीन्ही वावरी।
कहा करौ, चित्त क्यौ हूँ, रहत न ठाँव री॥
विहरत हरि जहाँ, तहाँ तुहूँ आव री।
निसिहुँ वासर आली, मोकौ यहै चाव री॥
जमुना भरन जल जाइँ, यहै दाँव री।
गुरु-पुर-जननि सौ, और न उपाव री॥
काफी राग मुख गावै, मुरली वजाइ री।
धुनि सुनि तनु भूली, अति ही सुहाइ री॥
चदन कपूर चूर, फेटनि भराइ री।
सौंधै भरि पिचकारी, मारत है धाइ री॥
आतुर ह्वै चलि, और जाइ कि न जाइ री।
चित न रहत ठौर, और न सुहाइ री॥
मिलि प्रभु 'सूरज' कौ, सकुच गँवाइ री।
लाज डारि, गारी खाइ, कुल विसराइ री॥ २८८७ ॥

राग कल्यान ॥ ३५०६ ॥

खेलत हरि ग्वालसंग फागुरंग भारी।
इक मारत इक तारत, इत भाजत इक गाजत, इक धावत इक पावत, इक आवत मारी॥
इक हरपत्त इक लरखत, इक परखत घातहि कौ, लोचननि गुलाल डारि, सौंधै ढरकावैं।
इक फिरत संग सग, इक इक न्यारे विहरत, डरत दाँव दीवे कौ, वै ज्यौ नहिं पावैं॥
इक गावत इक भावत, इक नाचत इक राँचत, इक कर मिरदग तार, गतिजति उपजावै।
इक वीना इक किन्नरि, इक मुरली इक उपंग इक तुँवुर इक रवाव, भाँति सौ वजावै॥
इक पटह इक गोमुख, इक आउझ इक झल्लरि, इक अमृत कुंडली, इक डफ कर धारै।
'सूरज' प्रभु वल मोहन, संग सखा वहु गोहन, खेलत नृपभानु पौरि लिये जात टारै॥
॥ २८८८ ॥

राग आसावरी ॥ ३५०७ ॥

सुनतहिं वृपभानसुता जुवति सव वुलाईं।
आए वलराम स्याम, आईं तजि काम वाम,
धाम धाम तैं आतुर, सातनव वनाई॥
हरपत सव ग्वाल वाल, अरस परस करत ख्याल,
इक मारत, इक भाजत राजति वहु जोरी।
उततैं निकमी कुमारि, संग लिये विपुल नारि,
कोउ कोउ नव जोवन भरी, कोउ कोउ दिन थोरी॥

इत उत मुख दरस भयौ, पिय पूरन काम कयौ,
मानौ ससि उदै भयौ, आनँदित चकोरी।
उत जेरी धरे ग्वार, बाँसनि इत परी मार,
इहिं छवि नहिं वार पार, सोर झोर झोरी॥
उत होरी पढ़त ग्वार, इत गारी गावत ये,
नंद नाहि जाये तुम, महरि गुननि भारी।
कुलटी उनर्त को है, नंदादिक मन मोहै,
बाबा वृषभानु की वै, 'सूर' सुनहु प्यारी॥
॥ २८८९ ॥

राग गुड मलार ॥ ३५०८ ॥
(खेलत रंग रह्यौ) एक ओर ब्रजसुदरि एक ओर मोहन।
बरन बरन ग्वाल बने, महर नंद गोप जने, इक गावत इक नृत्यत एक रहत गोहन॥
बाजत मिरदग तार, अरस परस करै विहार, सोभा नहिं वार पार, इक इक दै सोहन।
कनक लकुट करनि लिये, धाई सब हरपि हिये, ब्रजललना 'सूरज' प्रभु मन मन मिलि मोहन॥
॥ २८९० ॥

राग सारंग ॥ ३५०९ ॥
हो हो हो हो होरी, करत फिरत ब्रज खोरी, मोहन हलधर जोरी, सुवन नंद कौ री॥
ग्वाल सखा सँग ढोरी, लिये अबीर कर झोरी, नारि भजत जिहि जोरी, दाँव लेत दौरी॥
इक गावत है धमारि, इक एकनि देत गारि, दई सबनि लाज डारि, बाल पुरुष तोरी।
सौंधे अरगजा कीच, जहाँ तहाँ गलिनि बीच, एक एक ऊँच नीच करत रग झोरी॥
इक उघटति इक नृत्यति, एक तान लेति उपज, इक दै करताल हरपि गावति है गोरी।
'सूरदास' प्रभु कौ सुख निरखि हरप ब्रजललना सुरललना सुरनि सहित विथकित भई बौरी।
॥ २८९१ ॥

राग बलिावल ॥ ३५१० ॥
खेलत मोहन फाग भरे रँग। डोलत सखा समूह लिये सँग॥
नदराइ सौं विनती कीनी। स्याम एक की आज्ञा लीन्ही॥
अगनित तब पिचकारि गढाईं। कचन रतन बबा पै पाईं॥
मन सहमक केसरि लै दीन्हौ। असित सुगध अरगजा लीन्हौ॥
गोपनि बैठि औसरे कीन्हे। गाइ चरावन कौ सँग लीन्हे॥
तबहि अनत सखागन साजे। सकल सँवारि संग लिये बाजे॥
घर घर ध्वजा पताका बानी। तोरन बारन बासौं ठानी॥
बरन पचासक अबिर सँवारे। बीथिनि छिरकि तहाँ बिस्तारे॥
मोहन चरन धरत तहँ आवै। द्वारै जुरि जुवती मिलि गावै॥
निरखि भरन कौ सब मिलि धावै। मोहन इततैं सखा सिखावैं॥
नाहिं गात, बिस्तर नहिं राखैं। भरि नीकैं करि मुख कछु भाखैं॥
बैठे जहाँ गोप बस राजै। आवत देखि सबै उठि भाजै॥
मोहन पै कोउ जान न पावै। महा मत्त गजवर ज्यौं धावै॥
सब मिलि बोलत हो हो होरी। छिरकत चंदन बंदन रोरी॥
एक द्यौस गोपी जुरि आईं। घरही मैं घेरे हरि जाई॥
इक भीतर इक रही दुवारैं। एक जाइ लागी पिछवारैं॥

एक इहाँ चहुँ दिसि तैं घेरे। एक पैठि मंदिर मैं हेरे ॥
एक लिये कर कमल विराजैं। पसरैं किरनि कोटि ससि भ्राजैं ॥
एक लिये सिर सौंधे गागरि। फेंट अबीर भरे बहु नागरि ॥
सारी सुभग काछ सब दिये। पाटंबर गाती सब हिये ॥
एकनि जाइ दुरे हरि पाए। सैन देइ राधिका बताए ॥
करत कुलाहल हरि गहि ल्याई। फूली ज्यौं निधनी धन पाई ॥
एक गहे कर दोऊ हरि के। हलधर देखि उतहिं कौं सरके ॥
केसरि अरु गुलाल मुख लायौ। पूरन चंद उदै करि आयौ ॥
पीत अरुन रँग नाए सिर तैं। चली धातु मनु साँवर गिर तैं ॥
एक भरे पिचाकरी ताके। देत स्रवन मैं नंदलला के ॥
ब्रज जन सकल सुधा रस पीते। ऐसी भाँति पहर द्वै बीते ॥
देखी निकट राधिका प्यारी। तब हरि लीला और बिचारी ॥
तब हरि जाइ दुरे उपवन मैं। चली नाइका कुंजसदन मैं ॥
करति कुलाहल ब्रज की नारी। देखत चढे कदंब बिहारी ॥
कबहुँक मुरली मधुर बजावैं। स्रवन सुनत जितहीं तित धावैं ॥
जब हरि जानी निकटहिं आई। डर तैं तब वै रहे लुकाई ॥
कुंज कुंज कोकिल ज्यौं टेरैं। सुनि सुनि नाद मृगी त्यौं हेरैं ॥
कबहूँ फिरि आपुस मैं खेलति। सकल मुगध परस्पर मेलति ॥
झुके वचन कहती बिनु पाए। कहति कछू राधिका लगाए ॥
करिनि-भाज बर-बन-भय जैसैं। जाइ डुलति बन बन मैं तैसैं ॥
तब हरि भेप धर्‌यौ जुवती कौ। सुंदर परम भाव तौ जी कौ ॥
सारी कंचुकि केसरि टीकौ। करि सिंगार सब फूलनि ही कौ ॥
कर राजित कंदुक नवला सी। छूटी दामिनि ईपद हाँसी ॥
सकल भूमि बन सोभा पाई। सुंदरता उमँगी न समाई ॥
ब्रजनारी ता सोभा सौं ही। रहीं ठगी सी रूप बिमोही ॥
एक कहति हरि के से नैना। एक कहति वैसेई बैना ॥
बूझति एक कौन की नारी। बिधि की सृष्टि नहीं तू न्यारी ॥
तब हरि कहत सुनहु ब्रजबाला। बोलत हँसि हँसि बचन रसाला ॥
हम तुम मिलि खेलहिं सब जानति। राधा आली मोहि पहिचानति ॥
हौं हूँ संग तिहारैं खेली। जानति हौं हूँ जान सहेली ॥
अबहीं कीरति महरि पठाई। राधा इकली खेलन आई ॥
अब इक बात कहौ हौं जी की। हौं जानति हौं छल हरि पी की ॥
सघन बिपिन ऐसैं कहँ पावहु। सब मिलि एक संग जनि धावहु ॥
सुनत सोर कत रहिहैं नेरैं। कोटि करौ पावहु नहिं हेरैं ॥
द्वै द्वै न्यारी न्यारी डोलहु। तनक मूँदि कर मुख जनि बोलहु ॥
जाइ अचानकहीं गहि ल्यावहु। सखी एक ज्यौं त्यौं करि पावहु ॥
राधा कौ भुज गहि कै लीन्हौ। ऐसैं सब कौ द्वै द्वै कीन्हौ ॥
मौन किये प्रवेस कियौ बन मैं। हरि कौ रूप राखि निज मन मैं ॥
और सखी खोजति सब कुंजनि। राधा हरि बिहरत सुख पुंजनि ॥
राधा आवति देखि अकेली। तबहिं बहुरि सब बैठि सकेली ॥
तब बूझति वृषभानुदुलारी। सखी संग की कहाँ बिसारी ॥

अति गह्वर मैं जाइ परी हम। सूर्य न सूझत भयौ निसा तम ॥
ता ठाहर तैं हौं भई न्यारी। फिरि आई डरपी हिय भारी ॥
पुहुप वाटिका हौं फिरि आई। मुकुट दीठि तहँ हौं इत धाई ॥
ता ठाहर जौ ठाढ़े पावहि। चलौ जाइँ धाइ गहि ल्यावहि ॥
नारी बात सुनत ही धाई। घेरि लिये कोकिल सुर गाई ॥
जाहु कहाँव अकेले पाए। सकल सुगंध सीस तैं नाए ॥
एक रूपमाधुरी निहारहि। एक कटाच्छ नैंन सर मारहि ॥
एक सुमन लै ग्रंथति माला। सोभित सुंदर हृदय बिसाला ॥
खेलत आए पुलिन सुहाए। बैठे तहँ मडली बनाए ॥
मोहन नव ससि मध्य राजिजै। देखि 'सूर' कोटिक छवि छाजै ॥ २८९२॥

राग काफी ॥ ३५११ ॥

खेलत फागु कुँवर गिरिधारी।
अग्रज, अनुज, सुबाहु, श्रीदामा, ग्वाल बाल सब सखा-नुसारी ॥
इत नागरि निकसी घर घर तैं, दै आगैं वृषभानुदुलारी।
नवसत सजि ब्रजराज द्वार मिलि, प्रफुलित बदन भीर भइ भारी ॥
दुंदुभि ढोल पखावज आवझ, बाजत डफ मुरली नचिकारी।
मारति बाँस लिये उन्नत कर, भाजत गोप तियनि सौं हारी ॥
एक गोप इक गोपी कर गहि, मिल गए हलधर सौं भुज चारी।
मिटि गई लाज, सम्हार न कुचपट, बहुत सुगंध लियौ सिर ढारी ॥
बाँह उचाइ कहत हो होरी, लै लै नाम देत प्रभु गारी।
इहि राधिका निकसि जूथ तैं सनमुख पिय छाँड़ति पिचकारी ॥
इक गोपी गोपाल पकरि कै, लै चली अपनैं सेर उसारी।
आँजति आँखि मनावति फगुआ, हँसनि हँसावति दै करतारी ॥
सुर बिमान नभ कौतुक भूले, कोटि मनोज जाइ बलिहारी।
'सूरदास' आनंद सिंधु मैं, मगन भए ब्रज के नर नारी ॥ २८९३ ॥

राग काफी ॥ ३५१२ ॥

नंदनँदन वृषभानु किसोरी, मोहन राधा खेलत होरी।
श्रीवृंदावन अतिहि उजागर, बरन बरन नव दंपति भोरी ॥
एकनि कर हैं अगर कुमकुमा, एकनि कर केसरि लै घोरी।
एक अर्थ सौं भाव दिखावनि, नाचनि तरुनि बाल वृध भोरी ॥
स्यामा- उतहि सकल ब्रजवनिता, इतहि स्याम रस रूप लहौ री।
कंचन की पिचकारी छूटति, छिरकत ज्यौं सचु पावैं गोरी ॥
अतिहि ग्वाल दधि गोरस माते, गारी देत कहौ न करौ री।
करत दुहाई नंदराइ की, लै जु गयौ कल बल छल जोरी ॥
झुंडनि जोरि रही चंद्रावलि, गोकुल मैं कछु खेल मच्यौ री।
"सूरदास" प्रभु फगुआ [illegible] चिरजीवौ राधा बर जोरी ॥ २८९४ ॥

राग सोहनी ॥ ३५१३ ॥

मोहन के [illegible], स्यामा पनी विकाइ।
खेलन चले [illegible]ै, मारग पीक पराइ ॥

पेलि चली जोवन मदमाती, अधर-सुधा-रस प्याइ।
खेलत वने दोउ रँगभीने, स्यामा स्याम खिलाइ॥
इत लिये कनकलकुटिया नागरि, उत जेरी धरे ग्वार।
इत हैं रग रँगीली राधा, उत श्री नदकुमार॥
खेलन मै रिस ना करि नागरि, स्यामहि लागै चोट।
मोहन है अति माधुरिमूरति, रखियै अचल ओट॥
मारि डगै जव फिरि चली सुदरि, वेनी रुरै सु अग।
वदनचद के मनहुँ सुधा कौ, उड़ि उड़ि लगत भुजंग॥
रुज मुरज डफ झाँझ झालरी, जत्र पखावज तार।
मदनभेदि अरु राइगिरिगिरी, सुरमडल झनकार॥
एक जु आई आन गावँ तै, सुदर परन सुजान।
यह ढोढा धौ आहि कौन कौ, मारत मनसिज वान॥
जमुनाकूल मूल वसीवट गावत गोप धमारि।
लै लै नाउँ गाउँ वरसानो, देत दिवावत गारि॥
खेलि फाग मिलि कै मनमोहन, फगुवा दियौ मँगाइ।
हरषित भई सकल व्रजवनिता 'सूरदास' वलि जाइ॥ २८९५ ॥

राग नट नारायन ॥ ३५१४ ॥

हो हो हो हो लै लै वोलै। गोरस केरे माते डोलै॥
व्रज के लरिकनि सग लिये जो लै। घर घर केरे फरके खोलै॥
गोपी ग्वाल मिले इकसारी। वचत नही विनु दीन्हे गारी॥
आनि अचानक अँखियाँ मीचै। चदन वदन ऊपर सीचै॥
जो कोउ जाइ रहै घर वैसै। करि वरियाइ तहाँहू पैसै॥
हाथनि लिये कनक पिचकारी। तकितकि छिरकत मोहन प्यारी॥
कुमकुम कीच मची अति भारी। उडति अवीरनि रँगी अटारी॥
अति आनद भरे सव गावै। नाना गति कौतुक उपजावै॥
मोहन गहि आने मिलि धाइ। फगुआ हमकौ देहु मँगाइ॥
भागत कुसुमहार उर टूटे। पीतावर गहने दै छूटे॥
सोभा सिधु वढ्यौ अति भारी। छवि पर कोटि काम वलिहारी॥
'सूरदास' प्रभु कौ रसहोरी। वरनौ कहँ लगि मो मति थोरी॥२८९६॥

राग विलावल ॥ ३५१५ ॥

सौंधे की उठति झकौर, मोहन रग भरे।
चोवा चदन अगरु कुकुमा, सोहै माट भरे॥
रतन जटित पिचकारी कर गहे वालक वृद खरे।
भरि पिचकारी प्रेम सौं डारी, सो मेरे प्रान हरे॥
सव सखियन मिलि मारग रोक्यौ जव मोहन पकरे।
अंजनि आँजि दियौ अँखियनि मै, हाहा करि उवरे॥
फगुवा वहुत मँगाइ साँवरे, कर जोरे अरज करे।
धनि धनि 'सूर' भाग ताके, प्रभु जाकै सँग विहरे॥ २८९७ ॥

राग काफी ॥ ३५१६ ॥

राधा मोहन रंग भरे है खेल मच्यौ व्रजखोरि।
नागरि संग नारिगन सोहै, स्याम ग्वाल सँग जोरि॥

हरि लिये हाथ कनक पिचकारी सुरँग कुंकुमा घोरि।
उतहि माट कंचन रँग भरि भरि, लै आई तिय जोरि॥
आतुर ह्वै धाई उत नागरि, इत बिचले सब ग्वाल।
घेरि लई सब खोरि साँकरी, पकरे मदन गुपाल॥
गह्यौ धाइ चन्द्रावलि हँसि कै, कह्यौ भले हो लाल।
जनि बल करौ नेकु रहौ ठाढ़े, जुरि आई ब्रजबाल॥
आई हँसति कहति हरि येई, बहुत करत हे गाल।
क्यौं जू खबरि कहौ यह कीन्ही, करत परस्पर ख्याल॥
काहू तुरत आइ मुख चूम्यौ, कर सौ छुयौ कपोल।
कोउ काजर, कोउ बदन माँड़ति, हरषहि करहिं कलोल॥
कोउ मुरली लै लगी बजावन, मनभावन मुख हेरि।
किनहूँ लियौ छोरि पट कटि तै वारत तन पर फेरि॥
स्रवननि लागि कहति कोउ बातैं, बसन हरे तेइ आप।
काल्हि कह्यौ करिहौ कह मेरौ, प्रगट भयौ सोइ पाप॥
कोउ नैननि सौ नैन जोरि कै, कहति न मोतन चाहौ।
अब ही तुम अकुलात कहा हौ, जानुहुगे मन लाहौ॥
घेरि रही सरधा की नाई, करति सबै मन लाह।
इक बूझति, इक चिबुक उठावति, बस पाए हरि नाह॥
पीतांबर मुरली लइ तबही, जुवती स्वाँग बनाइ।
देखत सखा दूरि भए ठाढे, निरखत स्याम लजाइ॥
नख-छत-छाप बनाइ पठाए, जानि मानि गुन येहु।
'सूर' स्याम हम कौ जनि बिसरौ, चिन्ह यहै तुम लेहु॥ २८९८ ॥

राग रागिनी टोड़ी ॥ ३५१७ ॥

ग्वाल हँसे मुख हेरि कै, अति बने कन्हाई।
हलधर कौ लियौ टेरि, आजु अति बने कन्हाई॥
हो हो करि करि कहत है, अति बने कन्हाई।
रहे चहूँधा घेरि, आजु अति बने कन्हाई॥
ऐसेहि चलियै नद पैं, अति बने कन्हाई।
बल की सौह दिवाइ, आजु अति बने कन्हाई॥
भुजा गहे तहँ लै गए, अति बने कन्हाई।
वह छबि बरनि न जाइ, आजु अति बने कन्हाई॥
इत जुवती मन हरत हैं, अति बने कन्हाई।
उतहि चले ह्वै भोर, आजु अति बने कन्हाई॥
और सखी आई तहाँ, अति बने कन्हाई।
करि करि नैन चकोर, आजु अति बने कन्हाई॥
महर हँसे छबि देखि कै, अति बने कन्हाई।
सुनि जननी तहँ आइ, आजु अति बने कन्हाई॥
हँसि लीन्हौ उर लाइ कै, अति बने कन्हाई।
आनँद उर न समाइ, आजु अति बने कन्हाई॥
कछुक खीझि कछु हँसि कह्यौ, अति बने कन्हाई।
किन यह कीन्हौ हाल, आजु अति बने कन्हाई॥

लेति बलैया वारि कै, अति बने कन्हाई।
ये ऐसियै ब्रजबाल, आजु अति बने कन्हाई॥
रँग रँग पहिरावनि दई, अति बने कन्हाई।
जुवतिनि महर बुलाइ, आजु अति बने कन्हाई॥
यह सुख प्रभु कौ देखि कै, अति बने कन्हाई।
'सूरदास' बलि आइ, आजु अति बने कन्हाई॥ २८९९॥

राग कल्यान ॥ ३५१८॥

ब्रजराज लडैतौ गाइयै, (मन) मोहन जाकौ नाउँ।
खेलत फागु सुहावनौ, (रँग) भीजि रह्यौ सब गाउँ॥
ताल पखावज बाजहीं, (हो) डफ सहनाई भेरि।
स्रवन सुनत सब सुंदरी, (हो) झुंडनि आई घेरि॥
इतहिं गोप सब राजहीं, (हो) उत सब गोकुलनारि।
अति मीठी मनभावती, (हो) देहिं परस्पर गारि॥
चोवा चंदन छिरकहीं, (हो) उड़त अबीर गुलाल।
मुदित परस्पर खेलहीं (हो) हो हो बोलत ग्वाल॥
सब गोपिनि हलधर पकरि (हो) छाँड़ि पाट लगाइ।
दाऊ आजु भले बने, (हो) आए आँखि अँजाइ॥
बहुरि निमिटि ब्रजसुंदरी, (हो) पकरे गोकुलनाथ।
नव कुमकुम मुख माँड़ि कै, (हो) बेनी गूँथी माथ॥
तब नँदरानी बीच कियौ, (बहु) मेवा दियै मँगाइ।
पट भूषन दियौ सबनि कौ (हो) निरखि 'सूर' बलि जाइ॥ २९००॥

राग गौरी ॥ ३५१९॥

ग्वालिनि जोबन-गर्ब-गहेली। राधे कैं सँग फदम महेली॥
कुमकुम उबटि कनक-तन-गोरी। अंग सुगंध न्हाइ किसोरी॥
दच्छिन चीर तिपाइ कौ लहँगा। पहिरि विविध पट मोलनि महँगा॥
कबरी कुसुम माँग मोतियनि मनि। केसरि आड़ ललाट, भ्रकुटि धनि॥
कज्जल रेख नैन अनियारे। खंजन मीन मधुप मृग हारे॥
स्रवननि कुंडल रवि सम ज्योती। नकबेसरि लटकै गजमोती॥
दसन अनार अधर बिंब जानौ। चिबुक दाग मृगी मधु मानौ॥
कँठ कपोत मुक्तावलि हार। जनु जुग-गिरि-बिच सुरसरि धार॥
कुच चकवा, मुख-ससि-भ्रम भूले। बैठे बिछुरि दुहूँ अनफूले॥
कर कंकन चूरा गजदंती। नग मेटत मनि-मानिक-कंती॥
नाभी ह्रद, तन हाटक बरनी। कटि मृगराज, नितंबिनि करनी॥
कदली जंघ, चरन कल नूपुर। गवन मराल करति धरनी पर॥
भूषन अंग सजे सत नारी। गावति फाग नंद की पौरी॥
सुनि सुंदर बर बाहिर आए। हलधर ग्वाल गुपाल बुलाए॥
इक तन नर एक तन भई नारी। खेल मच्यौ ब्रज कै बिच भारी॥
कुमकुम चंदन अरगज घोरे। हाथनि पिचकारी लै दौरे॥
गोपी गोप भए झकझोरे। अंचल गाँठि परस्पर जोरे॥
उड़त गुलाल अरुन भए अंबर। कुमकुम कीच मची धरनी पर॥
चंग मृदंग बाँसुरी बाजै। पकरत एक एक भरि भाजै॥

राधा मिलि इक मत्र उपायौ। हलधर अपनी भीर बुलायौ॥
काम लागि स्यामा समुझायौ। संकर्षन गहि स्यामहि ल्यायौ॥
हरि के हाथ गहे चंद्रावलि। कज्जल लै आई संभावलि॥
ललिता लोचन आँजन लागी। चंद्रभगा मुरली लै भागी॥
इक लै लावति हरद कपोलन। इक लै पोछति ललित पटोलनि॥
इक अवलवति, इक अवलोकति। चुंबन दान देति इक दंपति॥
मगन भई अप वपु न सम्हारति। लालन भुज अपनै उर धारति॥
गुरुजन खरे सवै मिलि देखैं। तिनकौ तरनी तृन सम लेखैं॥
एक कहै पिय कौ मुख माँड़ै। एक कहै फगुआ लै छाँड़ै॥
एक लियौ पट पीट छुड़ाई। राधा राखति कृष्ण वड़ाई॥
सिमटे सखा छुडावन आए। उन लियो ढेल न मोहन पाए॥
वाँसनि मार मचो कर आडे। ग्वाल टिके पग एक न छाँड़े॥
वल कियौ वीच ग्वाल समुझाए। मोहन मेवा मोल मँगाए॥
फगुआ लै लालन छिटकाए। हँसत गुपाल ग्वाल तहँ आए॥
तव मोहन हलधर पकराए। करहु तरुनि अपने मन भाए॥
नाक नयन मुख काजर लायौ। हरद कलस हलधर सिर नायौ॥
वहुत भरे वलराम सवनि गहि। धौलागिरि मनु धातु चली वहि॥
न्हान चले जमुना कै कूल। गोपी गोप भए अनुकूल॥
जो रस वाढ़्यौ खेलत होरी। सारद का वरनै मति भोरी॥
"सूरदास" सो कैसै गावै। लीला सिंधु पार नहि पावै॥२९०१॥

राग गौरी ॥ ३५२० ॥

गारी होरी देत दिवावत। व्रज मै फिरत गोपगन गावत॥
दूध दही के माते डोलें। काहे न हो हो हो हो वोलैं॥
वगलनि मैं दावे पिचकारी। वाँधत फेटै पाग सँवारी॥
रुकि गए वाटनि नारे पैठे। नव केसरि के माट उलैडे॥
छज्जनि तैं छूटति पिचकारी। रँगि गई वाखरि महर अटारी॥
नाना रंग गए रँगि वागे। वलदाऊ इत उत ह्वै भागे॥
न्हान चले जमुना कै तीर। मनमोहन हलधर दोउ वीर॥
"सूरदास" प्रभु सव सुखदायक। दुर्लभ रूप देखिवै लायक॥२९०२॥

रा श्रीहठी ३५२१ ॥

ऋतु वसंत के आगमहि, मिलि झूमक हो।
सुख सदन मदन कौ जोर, मिलि झूमक हो॥
कोकिल वचन सुहावनौ, मिलि झूमक हो।
हित गावत चातक मोर, मिलि झूमक हो॥
वृंदावन घन तरु लता, मिलि झूमक हो।
सव फूलि रही वन राइ, मिलि झूमक हो॥
जमुना पुलिन सुहावनी, मिलि झूमक हो।
वहै त्रिविध पवन सुखदाइ, मिलि झूमक हो॥
जहाँ निवारी, सेवती, मिलि झूमक हो।
वहु पाँडल विपुल गँभीर, मिलि झूमक हो॥

खूभौ, मरुवौ, मोगरौ, मिलि झूमक हो।
कुल केतकि, करनि, कनीर, मिलि झूमक हो॥
वेलि, चमेली, माधवी, मिलि झूमक हो।
मृदु मंजुल वकुल, तमाल, मिलि झूमक हो॥
नव-वल्ला-रस विलसही, मिलि झूमक हो।
मनु मुदित मधुप की माल, मिलि झूमक हो॥
ताल पखावज वाजही, मिलि झूमक हो।
विच डफ मुरली की घोर, मिलि झूमक हो॥
चलहु अली तहँ जाइयै, मिलि झूमक हो।
जहँ खेलत नद किसोर, मिलि झूमक हो॥
जूथनि जूथनि सुदरी, मिलि झूमक हो॥
जिनि जोवत लजत अनग, मिलि झूमक हो॥
चोवा चदन अरगजा, मिलि झूमक हो।
मथि लै निकसी इक सग, मिलि झूमक हो॥
प्रति अँग भूषन साजि कै, मिलि झूमक हो।
लिये कनक कलस भरि रंग, मिलि झूमक हो॥
जाइ परस्पर छिरकही, मिलि झूमक हो।
प्रिय स्यामल सुदर अंग, मिलि झूमक हो॥
इततैं गई ब्रजसुदरी, मिलि झूमक हो।
उत मोहन नवल अहीर, मिलि झूमक हो॥
वाँस धरे, जेरी धरे, मिलि झूमक हो।
विच मार मची भई भीर, मिलि झूमक हो॥
इक सखि निकसी झुड तै, मिलि झूमक हो।
तिनि पकरि लिये हरि हाथ, मिलि झूमक हो॥
वहुरि उठी दस वीस मिलि, मिलि झूमक हो।
धरि लिये आइ ब्रजनाथ, मिलि झूमक हो॥
इक पट पीतावर गह्यौ, मिलि झूमक हो।
इक मुरली लई छँडाइ, मिलि झूमक हो॥
इक मुख मीड़हि कुमकुमा, मिलि झूमक हो।
इक गारी दै उठी गाइ, मिलि झूमक हो॥
प्यारी कर काजर लियौ, मिलि झूमक हो।
हँसि आँजति पिय की आँखि, मिलि झूमक हो॥
इहि विधि हरि कौ घेरि रही, मिलि झूमक हो।
ज्यौं घेरि रही मधुमाखि, मिलि झूमक हो॥
अब तौ घात भली वनी, मिलि झूमक हो।
तब चीर हरे, जल तीर, मिलि झूमक हो॥
सो परिहास हम सारिहै, मिलि झूमक हो।
सुनि लेहु ललन वलवीर, मिलि झूमक हो॥
अब हम तुमहि नँगाइहै, मिलि झूमक हो।
मुसुकात कहा जदुराइ, मिलि झूमक हो॥
की हमसौं हा हा करो, मिलि झूमक हो।
की परहु कुँवरि कै पाइ, मिलि झूमक हो॥

वक विलोकनि मन हरचौ, मिलि भूमक हो ।
ठगि तुमहि रही व्रजवाल, मिलि भूमक हो ॥
फगुआ वहुत मँगाइ दियो, मिलि भूमक हो ।
मधु मेवा मधुर रसाल, मिलि भूमक हो ॥
कहि मोहन व्रजसुदरी, मिलि भूमक हो ।
तव धाइ धरे वल घेरि, मिलि भूमक हो ॥
संक सकुच सव छाँड़ि कै, मिलि भूमक हो ।
चहुँ पास रही मुख हेरि, मिलि भूमक हो ॥
कनक कलस भरि कुमकुमा, मिलि भूमक हो ।
धरि ढारि दिये सिर आनि, मिलि भूमक हो ॥
चंदन वदन अरगजा, मिलि भूमक हो ।
सव छिरकतिं करतिं न कानि, मिलि भूमक हो ॥
खेलि फाग अनुराग वढचौ, मिलि भूमक हो ।
फिरि चले जमुन जल न्हान, मिलि भूमक हो ॥
द्वितिया वैठि सिंहासनै, मिलि भूमक हो ।
दोउ देत रतन-मनि-दान, मिलि भूमक हो ॥
इहिं विधि हरि सँग खेलही, मिलि भूमक हो ।
गन-गोकुल-नारि अनत, मिलि भूमक हो ॥
'सूर' सवनि कौ सुख दियौ, मिलि भूमक हो ।
रमि रसिक राधिका कत, मिलि भूमक हो ॥ २९०३ ॥

राग आसावरी ॥ ३५२२ ॥

डफ वाजन लागे हेली ।
चलहु चलहु जैयै तहँ री, जहँ खेलत स्याम सहेली ॥
जहँ घन सुंदर साँवरौ, नहिं मिस देखन दाँउ ।
ये गुरुजन वैरी भए, कीजै कौन उपाउ ॥
आवहु वछरा मेलियै, वन कौ देहि विडारि ।
वै दैहै हमको पठै, देखै रूप निहारि ॥
औजत गागरि ढारियै, जमुना जल कै काज ।
इहि मिस वाहिर निकसि कै, जाइ मिलै व्रजराज ॥
राग रंग रँगि मँगि रह्यौ नदराइ दरवार ।
गावतिं सकल गुवारिनी, नाचत सकल गुवार ॥
घरी घरी आनद करि जीवन जानि असार ।
खाइ खेलि हँसि लीजियै, फाग वड़ौ त्यौहार ॥
मुरली मुकुट विराजही, कटि पट राजत पीत ।
'सूरज' प्रभु आनंद सौ, गावत होरी गीत ॥ २९०४ ॥

राग आसावरी ॥ ३५२३ ॥

वल्लभ राजकुमार छवीले हो ललना । (टेक)
धनि धनि नंद जसोमती, धनि धनि गोकुल गाँउ ।
धन्य कुँवर दोउ लाडिलै, वल मोहन जिन नाउ ॥
सखा राम लै वोलही, सुवल तोप श्रीदाम ।
जहाँ तहाँ तै उठि चले, वोलत सुंदर स्याम ॥

गिरिवरधारी रस भरे, मुरली मधुर बजाइ।
स्रवन सुनत गोपी सबै, घर घर तैं चली धाइ॥
वेप विचित्र बनाइ कै, भूपन बसन सिँगारि।
मंदिर तैं सब सजि चले, वालक वल बनवारि॥
एक ओर जुवती जुरी, एक ओर बलवीर।
बाँसनि मार मची मनौ, रुपे सुभट रनधीर॥
सकिलि बधू आई सबै, अपनै अपनै टोल।
झूमक सेती गावही नैकु बिच बिच मीठे बोल॥
एक सखी तब सैन दै, लीन्हौ, सुवल बुलाइ।
हा हा क्यौं हूँ भाँति कै, मोहन कौ पकराइ॥
बहुरि उलटि व्रजसुंदरी, मोहन लीन्हे घेरि।
नैननि काजर दै चली, हँसत बदन तन हेरि॥
रुंज मुरलि डफ दुंदुभी, बाजै बहु विधि साज।
बिच बिच भेरी झिमझिमी, सब्द सुघोप समाज॥
इहिं विधि होरी खेलही, सकल घोप सुखदाइ।
गिरिवरधारी रूप पर, 'सूरज' जन बलि जाइ॥ २९०५॥

राग काफी॥ ३५२४॥

(मन मोहन ललना मन हर्यौ हो।)
गृह गृह तैं सुंदरि चलि देखन, श्रीव्रजराज कुमार।
देखि बदन विथकित भई, मोहन ठाढ़े सिंह दुवार॥
डिमडिम, पटह, ढोल, डफ, वीना, मृदँग चंग अरु तार।
गावत प्रभृति सहित श्रीदामा, बाढ्यौ रंग अपार॥
इत राधिका सहित चंद्रावलि, ललिता घोप अपार।
उत मोहन हलधर दोउ भैया, खेल मच्यौ दरबार॥
रत्नजटित पिचकारी कर लिये, छिरकति घोप कुमारि।
मदन मोहन पिय रँग रस माती, कछुव न अंग सम्हारि॥
मोहन प्यारी सैन दै हलधर, पकराए तिन्ह जाइ।
आपुन हँसत पीत पट मुख दिए, आए आँखि अँजाइ॥
बहुरि सिमिटि व्रजसुंदरि छल करि, मोहन पकरे जाइ।
करति अधर-रस-पान पिया कौ, मुरली लई छँडाई॥
परिवा सिमिटि सकल व्रजवासी, चले जमुनजल न्हान।
वारि कुँवर पर पट नँदरानी, दिये विप्रनि बहु दान॥
द्वितिया पाट सिंहासन बैठे, चमर छत्र सिर डार।
'सूरज' प्रभु पर सकल देवता, बरपत सुमन अपार॥ २९०६॥

राग श्रीहठी॥ ३५२५॥

स्याम सँग खेलन चली स्यामा, सब सखियनि कौ जोरि।
चंदन अगर कुमकुमा केसरि, बहु कंचन घट घोरि॥
खेलत मोहन रंग भरे हो, संग बाल व्रजवासि।
लाल पियारौ रूप उजारौ, सुंदर सब सुख रासि॥
फूलनि के कंदुक नौलासी, कनक लकुटिया हाथ।
जाइ गही व्रजखोरि राधिका, कोटिक जुवती साथ॥

उत तैं हरि आए जब खेलत, हो हो होरी संग।
कान परी सुनियै नाहीं वहु, बाजत ताल मृदंग॥
पहिलै सुधि पाई नाहीं तब, घिरे साँकरी खोरि।
अब हलधर उलटहु काहे तुम, धावहु ग्वालनि जोरि॥
धरत भरत भाजत राजत, गेंदुक नीलासी मार।
रसन वसन छूटत न सँभारत, टूटत हैं उर हार॥
जब मोहन न्यारे करि पाए, पकर चहूँ दिसि घेरि।
बोलहु जू अब आनि छुडावैं, बल भैया कौ टेरि॥
आजु हमारैं बस्य परे हौ, जैहौ कहाँ छँड़ाइ।
की बल छूटहु अपनैं, की अब, जसुमति माइ बुलाइ॥
एक गहे कर, एक फैंट पीतांबर लियौ, छँड़ाइ।
राधा हँसति दूर भई ठाढ़ी, सखियनि देति सिखाइ॥
एक स्रवन मैं कहि कछु भाजति, एक भरति अँकवारि।
एक निहारति रूप माधुरी, एक अपुनपौ वारि॥
एक चिबुक गहि बदन उठावति, हम तन लाल निहारि।
एक नैन की सैन मिलावति, एक उठति दै गारि॥
आई भूमि सकल ब्रजवनिता, हरि देखी चहुँ ओर।
राधा दृष्टि परै बिनु, मोहन तलफत नैन चकोर॥
हरि तब अपनैं कर वर सौ, घूँघटपट कीन्हौ दूरि।
हँसत प्रकास भयौ चहुँ दिसि मैं, सुधा किरनि भरि पूरि॥
आँखि दिखावत हौ जु कहा तुम, करिहौ कहा रिसाइ।
हम अपनौ भायौ करि लैहैं, छुवहु कुँवरि के पाइ॥
तब तुम अंबर हरे हमारे, कीन्हे कौन उपाइ।
अब तौ दाउँ परयौ धरि पाए, छाँड़हिं तुमहिं नँगाइ॥
मुख की कहत सबै झूठी, मनही मन बहुत सनेहु।
कूट करैंगे बल भैया अब, हमहि छाँडि किनि देहु॥
तुम जो फगुवा देहु कहा बलि, बोलहु साँचै बोल।
की हमसौं हाहा करियैं, कौ देहु श्रीदामा ओल॥
हँसि हँसि कहत, सहत सबही की, आभूषन सब लेहु।
नासा कौ मुक्ता अरु मुरली, पीतांबर मोहिं देहु॥
एक बनाइ देति बीरी, करपल्लव छुवति कपोल।
धन्य धन्य बड भाग सबनि के, बस कीन्हे बिनु मोल॥
उडत गुलाल अबीर कुमकुमा, छबि छाई जनु साँझ।
नाही दृष्टि परत राधा-मुख-चंद निलाबर माँझ॥
खेलि फाग अनुराग बढ़चौ, धर मची अरगजाकीच।
ब्रजवनिता कुमुदिनि सी फूली, हरि ससि राजत बीच॥
अष्ट सिद्धि, नव निधि, ब्रजबीथिनि डोलति घर घर बार।
सदा बसंत बसत बृंदावन, लता लता द्रुमडार॥
देखि देखि सोभा-सुख-संपति, जिय मैं करति बिचार।
ब्रजवनिता हम क्यौं न भईं, यौं कहति सकल सुरनार॥
फाग खेलि अनुराग बढायौ, सबकै मन आनंद।
चले जमुन अस्नान करन कौ, सखा, सखी, नँदनंद॥

दुष्टनि दुख, सतनि-सुख-कारन, ब्रजलीला अवतार।
जै जै ध्वनि सुमननि सुर बरषत, निरखत स्याम विहार॥
जुगल-किसोर-चरन-रज माँगौं, गाऊँ सरस धमारि।
श्रीराधा गिरिवरधर ऊपर, 'सूरदास' बलिहारि॥ २९०७॥

राग नट नारायन॥ ३५२६॥

खेलत फागु कहत हो होरी।
उत नागरी समाज विराजत, इत मोहन हलधर की जोरी॥
बाजत ताल, मृदग, झाँझ, डफ, रुज, मुरज बाँसुरि धुनि थोरी।
स्रवन सुहाई गारि दै गावति, ऊँची तान लेति प्रिय गोरी॥
कोटि मदन दुरि गयौ देखि छवि तेऊ मोहे जिन मति भोरी।
मोहन नदनँदन रस विथकित धर्यौ हूँ दृष्टि जाति नहि मोरी॥
कुमकुम रग भरी पिचकारी, हरि तन छिरकति नवलकिसोरी।
इहिं विधि उमँगि चल्यौ रँग जहँ तहँ, मनु अनुराग सरोवरफोरी॥
कबहुँक मिलि दस बीसक धावति, लेति छिड़ाइ मुरलि झकझोरी।
जाइ श्रीदामा लै आवत तब, दियै मानी बहु भाँति पटोरी॥
भरि करकमल अबीर उडावति, गोविंद निकट जाइ दुरि चोरी।
मनहुँ प्रचड बातहत पकजधूरि, गगन सोभित चहुँ ओरी॥
कनककलस कुमकुम भरि लीन्हौ, कस्तूरी तामैं घसि घोरी।
खेल परस्पर कीच मची धर, अधिक मुगध भई ब्रजखोरी॥
ग्वाल बाल सब सग मुदित मन, जाइ जमुनजल न्हाइ हिलोरी।
नए बसन आभूषन पहिरत, अरुन, सेत पाटंबर कोरी॥
दुइज समाजसमेत करत द्विज तिलक, दूब दधि रोचन रोरी।
'सूर' स्याम विप्रनि, वदीजन, देत रतन कंचन की बोरी॥ २९०८॥

राग सारंग॥ ३५२७॥

बनी रूप रँग राधिका, तातैं अधिक बने ब्रजनाथ।
ललिता अरु चंद्रावली, मिलि बन्यौ छबीलो साथ॥
ताल पखावज बाजही, सँग डफ मुरली की घोर।
नदद्वार औसर रच्यौ, दोउ राजत नवलकिसोर॥
एक कौध ब्रज सुँदरी, इक कौध गुवाल गोविद।
सरस परस्पर गावही, दै गारि नारि बहु वृंद॥
आवहु री हम दुरि रहै, बलभद्र कृष्न गहि देहि।
लोचन उनके आजही, अरु अधरनि कौ रस लेहि॥
सीला नाम गुवालिनी; तिहिं गहे कृष्न धपि धाइ।
उपरैना मुरली लई, मुख निरखि हरपि मुसुकाइ॥
गहे अचानक राधिका, तब रही कठ भुज लाइ।
मन के सब सुख भोगए, जब परसे जादवराइ॥
कोटि कलस भरि बारुनी, दई बहुत मिठाई पान।
राधा माधौ रस रह्यौ, सब चले जमुनजल न्हान॥
द्वितिया सकल समाज सौं, पट बैठे आनँदकँद।
दान देत ब्रज सुदरी नगभूपन नवनिधि नंद॥
बन बीथिनि अरु पुर गलिनि, उमँग्यौ रग अपार।
'सूर' सु नभ सुर थकित, रहे निरखत प्रान अधार॥ २९०९॥

राग सारंग ॥ ३५२८ ॥

स्यामा स्याम खेलत दोउ होरी । फागु मच्यौ अति ब्रज की खोरी ॥
इतहिं बनी वृषभानु किसोरी । सँग ललिता चंद्रावलि गोरी ॥
ब्रज जुवती सँग राजति भोरी । बनि सिंगार श्री राधा गोरी ॥
उतहिं स्याम हलधर दोउ जोरी । वारौं कोटि-काम-छबि थोरी ॥
ग्वाल अबीरनि की लिये झोरी । सुरँग गुलाल अरगजा रोरी ॥
गावति सबै मधुर सुर गोरी । तान लेति दै दै झकझोरी ॥
राधा सहित चंद्रावलि दौरी । औचक लीन्ही पीत पिछौरी ॥
देखत ही लै गई अँजोरी । डारि गई सिर स्याम ठगोरी ॥
ग्वाल देत होरी की गारी । बैर कियौ हम सौं तुम भारी ॥
हँसति परस्पर जोवनबौरी । लै आई हरि पीत पिछौरी ॥
घात करति मन मुरली कौ री । अधरनि तैं नहिं टारति जौ री ॥
भली करी तुम सब हम सौं री । सावधान अब होहु किसोरी ॥
स्याम चितै राधा-मुख-ओरी । नैन चकोर चंद दरस्यौ री ॥
पिय की पिया मोहिनी लाई । इहि अंतर गोपी हँसि धाई ॥
गह्यौ हरषि भुज ललिता जाई । गई स्याम की सब चतुराई ॥
मनमानी सब करति बड़ाई । राधा मोहन गाँठि जुराई ॥
करति सबै रुचि की पहुनाई । नंद महर कौ गारी गाई ॥
फगुवा हमकौ देहु मँगाई । पँचरँग सारी बहुत दिवाई ॥
तुरत सबै जुवतिनि पहिराई । लीन्ही जो जाकैं मन भाई ॥
खेलत फागु रह्यौ रस भारी । वृद्ध किसोर बाल अरु नारी ॥
अति स्रम जानि गए जल तीरा । ग्वाल ग्वालि हलधर हरि बीरा ॥
परम पुनीत जमुन-जल-रासी । क्रीड़त जहाँ ब्रह्म अबिनासी ॥
धन्य धन्य सब ब्रज के वासी । बिहरत हैं हरि सँग करि हाँसी ॥
जलक्रीड़ा तरुनिनि मिलि कीन्ही । ब्रज-नर-नारिनि कौं सुख दीन्ही ॥
करि अस्नान चले ब्रजधामा । करे सबनि के पूरन कामा ॥
जो सुख नंद जसोदा पायौ । सो सुख नाही प्रगट बतायौ ॥
सुर वनिता यह साध बिचारैं । कैसैं हरि सँग हमहूँ बिहारैं ॥
धन्य धन्य ये ब्रज की बाला । धन्य धन्य गोकुल के ग्वाला ॥
'सूर' स्याम जिनके सुखदाई । भुव प्रगटे हरि हलधर भाई ॥ २९१० ॥

राग सारंग ॥ ३५२९ ॥

करत जदुनाथ जलधि जल केलि ।
अबलनि कर लिये, अंबु अमृत किये, दिये नव नव सुख खेलि ॥
यौ राजत तिहि काल लाल, ललना रसाल रस रंग ।
मानहुँ न्हात मदन-धुजिनी-गज, सजनी गजिनी संग ॥
स्रवत सलिल सिव बिदित अलक इव, राहु वदन विधु दमत ।
मनहुँ पान करि मौजनि सौ अलि, पियौ कमल रस वमत ॥
धुनि न करत, उर कुच सिंधु अति, तरँग रह्यौ ठहराइ ।

राग वसंती ॥ ३५३० ॥

जदुपति जल क्रीड़त जुवति संग।
सागर सकुचित तजियत तरंग ॥
षोडस सहस्र सत अष्ट नारि।
तिन मैं अति सोभित श्री मुरारि ॥
उड़गन समेत ससि सिंधु वारि।
मनु पुनि आयौ चित हित बिचारि ॥
मृगमद मलयज केसरि कपूर।
कुमकुमा कलित कृत अगरु चूर ॥
छूटत कटाच्छ सर भ्रकुटिपूर।
मनु धनुपनिपुन, संग्राम सूर ॥
चंचल मलयानिल चलत सीर।
अरु जलद वृंद छिति भित समीर ॥
वर वदन निकट कच चुवत नीर।
मकरंद निमित मधुकर अधीर ॥
जहँ नारदादि मुनि करत गान।
जग पूरत हरि-जस-सुचि-वितान ॥
सुर सुमन सुघन वरषत विमान।
जै जै 'सूरज' प्रभु सुखनिधान ॥ २९१२ ॥

राग कल्यान ॥ ३५३१ ॥

जमुना तैं हौं बहुत रिझायौ ॥
अपनी सौंह दियें नंददुहाई, ऐसौ सुख मैं कबहुँ न पायौ ॥
मिले मातु पितु वधु स्वजन सब, सखनि संग बन बिहरन आयौ।
आज अनंत भगवंत धरनि धर, सुश्रम कियौ प्रिय गान सुनायौ ॥
भयौ प्रसन्न प्रेम हित तेरे, कलिमल हरे जु इहिं जल न्हायौ।
अब जिय सकुच कछू मति राखहि, माँगि 'सूर' अपनौ मन भायौ ॥२९१३॥

राग गौरी ॥ ३५३२ ॥

कछु दिन ब्रज औरौ रहौ, हरि होरी है।
अब जिनि मथुरा जाहु, अहो हरि होरी है ॥
परव करौ घर आपनैं, हरि होरी है।
कुसल छेम निरवाहु, अहो हरि होरी है ॥
पंद्रह तिथि भरि बरनिहौं, हरि होरी है।
सारद कृपा समाज, अहो हरि होरी है ॥
फागुन मदन महीपती, हरि होरी है।
करियै इहिं विधि राज, अहो हरि होरी है ॥
परिवा पिय चलियै नहीं, हरि होरी है।
सब सुख कौ फल फाग, अहो हरि होरी है ॥
प्रगट करौ यह जानि कै, हरि होरी है।
अंतर कौ अनुराग, अहो हरि होरी है ॥
गनहु द्वैज दिन सोधि कै, हरि होरी है।
भूपति ह्वैहै काम, अहो हरि होरी है ॥

रचि रेखा सिर तिलक दै, हरि होरी है।
सब कोउ करै स्नान, अहो हरि होरी है॥
कनकसिंहासन बैठिहै, हरि होरी है।
कुमुदिनि कै उर मानि, अहो हरि होरी है॥
चिकुर चौर अंचल छुजा, हरि होरी है।
छत्र आतप तानि, अहो हरि होरी है॥
तीज तिहूँ पुर प्रगटि है, हरि होरी है।
अपनौ मान नरेस, अहो हरि होरी है॥
सुनि पग पग डफ डिलडिमी, हरि होरी है।
सोइ करिहै सब देस, अहो हरि होरी है॥
चौथि चहूँ दिसि चालिहै, हरि होरी है।
यह अपनी इक नीति, अहो हरि होरी है॥
करै भावतौ नृपति कौ, हरि होरी है।
छाँड़ि सकुच कुलरीति, अहो हरि होरी है॥
पाँचैं परिमिति परिहरै, हरि होरी है।
चलै सकल इक चाल, अहो हरि होरी है॥
नारि पुरुष सादर करै, हरि होरी है।
वचनप्रीतिप्रतिपाल, अहो हरि होरी है॥
छठि छ राग रस रागिनी, हरि होरी है।
ताल तान बंधान, अहो हरि होरी है॥
चटुल चरित रतिनाथ के, हरि होरी है।
सीखत ह्वै अवधान, अहो हरि होरी है॥
सुनि सातैं सब सजग ह्वै हरि होरी है।
सबनि मत्यौ मत एक, अहो हरि होरी है॥
नृपति कहै सोइ कीजियै, हरि होरी है।
क्यौ राखियै विवेक, अहो हरि होरी है॥
आठैं सुनि सब साजि भए, हरि होरी है।
राजा की रुचि जानि, अहो हरि होरी है॥
करहु क्रिया तैसी सबै, हरि होरी है।
आयसु माथै मानि, अहो हरि होरी है॥
नवमी नवरात साजि कै, हरि होरी है।
करि सुगंध उपहार, अहो हरि होरी है॥
मनहुँ चलीं मिलि मेलि कै, हरि होरी है।
मनसिज भवन जुहार, अहो हरि होरी है॥
दसमी दस दिसि सोधि कै, हरि होरी है।

देखि भले भट आपने, हरि होरी है।
द्वादस दिवस विचारि, अहो हरि होरी है॥
करहु क्रिया तैसी सबै, हरि होरी है।
ह्वै निसंक नर नारि, अहो हरि होरी है॥
ढोल भेरि डफ बाँसुरी, हरि होरी है।
बाजै पटह निसान, अहो हरि होरी है॥
मिलहु 'लोकपति छाँड़ि कै, हरि होरी है।
उबरौ नही निदान, अहो हरि होरी है॥
राते कवच बरात सजि, हरि होरी है।
खरनि भए असवार, अहो हरि होरी है॥
धूरि धातु रँग घट भरे, हरि होरी-है।
धरे यत्र हथियार, अहो हरि होरी है।
जहाँ तहाँ सेना चली, हरि होरी है।
मुक्त काछ सिर केस, अहो हरि होरी है॥
आपौ पर समुझै नही, हरि होरी है।
राजा रंक अवेस, अहो हरि होरी है॥
जे कबहूँ देखी नही, हरि होरी है।
कबहूँ सुनी न कान, अहो हरि होरी है॥
ते कुल नारि निडर भई, हरि होरी है।
लागे लोग परान, अहो हरि होरी है॥
भस्म भरैं अंजन करैं, हरि होरी है।
छिरकै चंदन बारि, अहो हरि होरी है॥
मरजादा राखै नही, हरि होरी है।
कटिपट डारैं फारि, अहो हरि होरी है॥
जहाँ सुनहिं तपसंजमी, हरि होरी है।
धर्म-धीर-आचार, अहो हरि होरी है॥
छिरकहिं तहीं निसंक ह्वै, हरि होरी है।
पकरहि तोरि किवार, अहो हरि होरी है॥
सठ पडित वेस्या वधू, हरि होरी है।
सबै भए इकसारि, अहो हरि होरी है॥
तेरसि चौदस दिवस द्वै, हरि होरी है।
जनु जीते जग भार, अहो हरि होरी है॥
पून्यौ प्रगट प्रताप तैं, हरि होरी है।
दूरि मिले पालागि, अहो हरि होरी है॥
जहाँ तहाँ होरी जरै हरि होरी है।
मनहु मवासैं आगि, अहो हरि होरी है॥
सब नाचहिं गावहि सबै, हरि होरी है।
सबै उड़ावहिं छार, अहो हरि होरी है॥
साधु असाधु न समुझही, हरि होरी है।
बोलहिं बचन विकार, अहो हरि होरी है॥
अति अनीतिमिति देखि कै, हरि होरी है।
परिवा प्रगटी, आनि, अहो हरि होरी है॥

बिनत बदन तन तावहीं, हरि होरी है।
मरजादा की कानि, अहो हरि होरी है॥
आवत ही आदर करैं, हरि होरी है।
हँसि जोरहि ठाढ़े हाथ, अहो हरि होरी है॥
बरन धर्म मिति राखही, हरि होरी है।
कृपा करौ रतिनाथ, अहो हरि होरी है॥
सुनि बिनती रितुराज की, हरि होरी है।
प्रभु समुझे मन माँहि, अहो हरि होरी है॥
जाइ धर्म अपने रहौ, हरि होरी है।
बसौ हमारी बाँहि, अहो हरि होरी है॥
और कहाँ लौं बरनियै, हरि होरी है।
मनसिज के गुन ग्राम, अहो हरि होरी है॥
सुनहु स्याम या मास मैं, हरि होरी है।
कियौ जु कारन काम, अहो हरि होरी है॥
'सूर' रसिक मनि राधिका, हरि होरी है।
कहि गिरिधर सौं बात, अहो हरि होरी है॥
स्याम कृपा करि ब्रज रहौ, हरि होरी है।
बरजति मधुबन जात, अहो हरि होरी है॥ ३६१४॥

राग धनाश्री ॥ ३५३३ ॥

कछु इक दिन औरौ रहौ, अब जिनि मथुरा जाहु।
परब करहु घर आपने, कुसल छेम निरबाहु॥
आठैं उर उनमानि कै, सखनि कियौ मत एक।
रितुराजहि देखन चलीं, फूलत कुसुम अनेक॥
नवैं नवल नव नागरी, नव जोबन, नव रूप।
नयौ नेह नित नाह सौं, नवसत साजें अनूप॥
दसैं दसौं दिसि घोष मैं, घर घर बाजैं अनंद।
नर नारी मिलि गावहीं, जस बृंदावन चंद॥
एकादसि इक प्रीति सौं, चलीं जमुन कैं तीर।
बरन बरन बनि बनि चलीं, पीत अरुन तन चीर॥
द्वादस अभउन आदमी, साजि चलीं ब्रजनारि।
हरि हलधरहि सुनावहीं, दैहिं नंद कौं गारि॥
तेरसि तन्मय तिय भईं, खेलत प्रीतम संग।

जसुमति हँसि सब सखिनि स्यौं, राधे लिन्ही बोल।
मेवा मिश्री बहु रतन, दई सबनि भरि ओल॥
होरी हरपि हलाइ कै, मोहन झूलैं डोल।
गावति सखी निसक ह्वै, कहि कहि अमृत बोल॥
पाट सिंहासन बैठि कै, अरु अभिषेक कराइ।
राज करहु नित लाड़िले, 'सूरदास' बलि जाइ॥ २६१५॥

राग सारंग॥ ३५३४॥

होरी खेलत जमुना कै तट, कुजनि तर बनवारी।
इत सखियनि कौ मडल जोरे, श्रीवृपभानुदुलारी॥
होडा होड़ी होति परस्पर, देत है आनँदगारी।
भरे गुलाल कुमकुमा केसरि, कर कंचन पिचकारी॥
बाजत बीन बाँसुरी महुवरि, किन्नरि औ मुहचंग।
अमृतकुडली औ सुर मडल, आउझ सरस उपग॥
ताल मृदग झाँझ डफ बाजैं, सुर की उठति तरग।
हँसत हँसावत करत कुतूहल, छिरकत केसरि रंग॥
तब मोहन सब सखा बुलाए, मिलि कै मतौ बतायौ।
रे भैया तुम चौकस रहियौ, जिनि कोउ होहु गहायौ॥
जौ काहू कौ पकरि पाइहै, करिहै मन कौ भायौ।
तातै सावधान ह्वै रहियौ, मै तुमकौ समुझायौ॥
राधा गोरी नवल किशोरी, इनहूँ मतौ जु कीन्हौ।
सखि इक बोलि लई अपनै ढिग, भेप जु बल कौ कीन्हौ॥
ताकौ मिलन चले उठि मोहन, काहूँ सखा न चीन्हौ।
नैसुक बात लगाइ साँवरै, पाछे तैं गहि लीन्हौ॥
आई सिमिट सकल व्रजसुदरि, मोहन पकरे जबही।
हम माँगति ही कह विधिना पै, दाँव पाइहै कबही॥
तब तुम चीर हरे जु हमारे, हा हा खाई सबही।
अब हम बसन छीनि करि लैहै, हा हा करिहौ अबही॥
एक सखी कहै बदन उठावहु, हमहूँ देखन पावैं।
श्रीमुख-कमल-नैन-मेरे-मधुकर, तन की तृपा बुझावैं॥
एक सखी कहै आँखि आँजि कै, माथैं बेदी लावैं।
एक सखी कहै इनहिं नचावहु, हम सब ताल बजावैं॥
एक सखी आई पाछे तै, मोरपच्छ गहि लीन्यौ।
एक सखी त्यौ आइ अचानक, पीतांबर धरि छीन्यौ।
एकै आँखि आँजि, मुख माँड्यौ, ऊपर गुलचा दीन्यौ।
मानत कौन फाग मैं प्रभुता, मन भायौ सो कीन्यौ।
एक कहै बोलौ बल भैया, तुमकौ आइ छुडावैं।
सखा एक पठवौ कोउ घर कौ, जसुमति कौ लै आवैं॥
जानत हौ कल बल कै छूटै, सो नहिं छूटन पावैं।
राधा जू सौं करौ बीनती, वै बलि तुमहिं छुड़ावैं॥
दूरहिं तैं देख्यौ बल आवत, सखी बहुत उठि धाईं।
कल बल छल जैसै तैसै करि, उनहूँ कौ गहि ल्याईं॥

किये आनि ठाढ़े इक ठौरहिं, बल मोहन दोउ भाई।
उनहुँ की आँखि आँजि मुख माँड्यौ, राधा सैन बुझाई ॥
देखि देखि ब्रह्मा सिव नारद, मनही मन पछिताही।
बड़े भाग हैं श्रीगोकुल के, हम मुख कहे न जाही ॥
जाके काज ध्यान धरि देख्यौ, ध्यानहु आवत नाही।
वे अब देखे वनितनि आगैं, ठाढ़े जोरे बाही ॥
हँसि हँसि कहत सु मोहन प्रीतम, मन मानौं सुख कीजै।
छाँड़ि देहु गृह जाउँ आपनैं, पीतांबर मोहि दीजै ॥
कर जोरे गिरिवरधर ठाढे, अज्ञा हमकौं दीजै।
जौ कछु इच्छा होइ तिहारी, सो सब फगुआ लीजै ॥
तब गिरिवरधर सखा बुलाए, फगुवा बहुत मँगायौ।
जोइ जोइ बसन जाहि मन मान्यौ, सोइ सोइ तिहि पहिरायौ ॥
राधा मोहन जुग जुग जीवो, सब कोउ भलौ मनायौ।
बाढौ बंस नंद बाबा कौ, 'सूरदास' जस गायौ ॥ २६१६ ॥

राग जैतश्री ॥ ३५३५ ॥

माई फूले फूले फूलत, श्री राधा कृष्न हैं भूलत, सरस रसहि फूल डोल।
फूले फूलनि जोरत, फूले निमिष न मोरत, संतनि हित फूल डोल ॥
फूल फटिक खंभ रचित, कंचन ही फूल खचित, सरस रसही फूल डोल।
पटुली नव रतन पचित, हीरा लाल मोती जटित, संतनि हित फूल डोल ॥
मरुवा मयारी डरोल, भूमका प्रवाल ओल, सरस रसही फूल डोल।
डाँड़ि हेम चारु गोल, चुनिनि फूल लगे लोल, संतनि हित फूल डोल ॥
फूले वृंदावनऽनुकूल, सघन लता फूले फूल सरस रसही फूल डोल।
फूले श्री जमुन कूल, बिबिध रंग फूले फूल, संतनि हित फूल डोल ॥
फूले चंपक चमेलि, फूलि लवँग लता बेलि, सरस रसही फूल डोल।
फूली निवारी एलि, मोगरी सेवति सुबेलि, संतनि हित फूल डोल ॥
तहाँ मौरे अंब फूले, निबुआ जहँ सदा फर फूले, सरस रसही फूल डोल।
तहाँ कमल केवरा फूले, केतकी कनेल फूले, संतनि हित फूल डोल ॥
फूली मधु मालती रेलि, फूले मधुप करत केलि, सरस रसही फूल डोल।
फूले फले आनँद बेलि, फूले पिवत सरस पेलि, संतनि हित फूल डोल ॥
फूलनि के सौंधे बार, मानौ मधुप छवि अपार, सरस रसही फूल डोल।
फूलनि के हिय हैं हार, सुरसरि मनु धरे धार, संतनि हित फूल डोल ॥
माथे मुकुट रचित फूल, फूलनि के सीसफूल, सरस रसही फूल डोल।
फूले धेनु ग्वाल बाल, फूले नंद जू के लाल, सरस रसही फूल डोल ॥
फूलनि की बेंदी लिलार, फूलनि नख सिख सिंगार, संतनि हित फूल डोल।
फूली तरुनि वृद्ध बाल, फूली करति बिबिध ख्याल, संतनि हित फूल डोल ॥
फूली रोहिनि जसुदा रानि, फूली देखि राजधानि, सरस रसही फूल डोल।
नँद सँकर्षन सुख मानि, फूले सब गोकुल प्रानि, संतनि हित फूल डोल ॥
फूले बजावैं मृदंग, महुवरि डफ ताल चंग, सरस रसही फूल डोल।
फूले बजावैं बाँसुरी संग, अमृतकुंडली उपंग, संतनि हित फूल डोल ॥
फूले बजावैं किनरि तार, सुरमंडल भनतकार सरस रसही फूल डोल।
(फूले) बजावैं गिरगिरी गार, भेरी घहरै अपार, संतन हित फल डोल ॥

(फूले) बजावैं मुरुज, रुज, झाँझ झालरीनि पुंज, सरस रसहि फूल डोल ।
(फूले) बजावैं दुंदुभि गुंज, कूजत कोकिल निकुंज, संतन हित फूल डोल ।।
ब्रज जन लखि डोल फूले, गोपी झुलावति कान्ह झूलैं, सरस रसहि फूल डोल ।
(फूले) मुदित मनोहर तूले, रसिक रसिकिनी फूले, संतन हित फूल डोल ।।
(फूले) हरषि परस्पर गावैं, मीठे बोल बुलावैं, सरस रसहि फूल डोल ।
(फूली) मुदित मनोहर भावैं, लालन लाड लड़ावैं, संतन हित फूल डोल ।।
(फूली) चंदन बदन रोरी, केसरि मृगमद घोरी, सरस रसहि फूल डोल ।
(फूली) छिरकति नवल किसोरी, अबिर गुलाल भरे झोरी, संतन हित फूल डोल ।।
(फूली) नाचति जोवन भोरी, जूथनि जूथनि जोरी, सरस रसहि फूल डोल ।
(फूले) करत कुलाहल खोरी, पुर नर नारि किसोरी, संतन हित फूल डोल ।।
(फूले) फगुवा दियौ रस राख्यो, पट भूषन नहिं (रह्यौ) काख्यौ, सरस रसहि फूल डोल ।।
(फूले) हरि हँसि अमृत भाख्यौ, सबहो कौ मन राख्यौ, संतन हित फूल डोल ।।
(फूले) नारदादि करत गान, रिषि मुनि सिव धरत ध्यान सरस रसहि फूल डोल ।
(फूले) बीना हरि जस बखान, (कंस मारि) फेरी उग्रसेन आन संतन हित फूल डोल ।।
(फूले) कही हरि मुनि कहो जाइ, तुरत मोहि लै बुलाइ सरस रसहि फूल डोल ।
(फूले) रजधानी असुर आइ, जमुना मैं देउँ बहाइ संतन हित फूल डोल ।।
(फूले) उग्रसेन छत्र धाइ, मथुरा आनँद बढाइ सरस रसहि फूल डोल ।
(फूले) पितु माता मिलौ धाइ, दुख नसि सुख देउँ जाइ संतनि हित फूल डोल ।।
(फूले) मुनि सुनि ज्ञान हरपाइ, भूमी ब्रज रतन छाइ सरस रसहि फूल डोल ।
(फूले) सुरपति-सुर-सची आइ, नभ चढि सुमन बरपाइ संतन हित फूल डोल ।।
(फूले) हरपत होरी खिलाइ, मुनि गए बैकुंठसिधाइ सरस रसहि फूल डोल ।
(फूले) हरपहि हरि सुजस गाइ, पूछत सुर, कहि न जाइ संतन हित फूल डोल ।।
पढैं पढावैं सुनैं सुनावैं, ते बैकुंठ परम पद पावैं सरस रसहि फूल डोल ।
'सूरदास' कैसैं करि गावैं, लीलासिंधु पार नहिं पावैं संतन हित फूल डोल ।। २९१७ ।।

राग रामगिरी ।। ३५३६ ।।

हरि पिय तुम जनि चलन कहौ ।
यह जनि मोहिं सुनावहु प्रीतम, जनि यह गहनि गहौ ।।
जब चलियौ तबही कहियौ अब जनि कहि उरहिं दहौ ।
जौ चलियैं तौ अबही चलियै, प्राननि लै निबहौ ।।
प्रान गऐ बरु भलौ मानिहे, यह जनि प्रान सहौ ।
प्रान औरहू जनम मिलत है, तुम पुनि मिलत न हौ ।।
जानराइ जिय जानि मानि सुख, अब की बार रहौ ।
'सूरदास' प्रभु कौ लालच, उत कबहूँ जनि उमहौ ।। २९१८ ।।

राग कल्यान ।। ३५३७ ।।

गोकुलनाथ बिराजत डोल ।
संग लिये वृषभानुनंदिनी, पहिरे नील निचोल ।।
कंचन खचित लाल मनि मोती, हीरा जटित अमोल ।
झुलवहि जूथ मिलैं ब्रजसुंदरि, हरपित करति कलोल ।।
खेलति, हँसति परस्पर गावति, बोलति मीठे बोल ।
'सूरदास' स्वामी, पिय प्यारी, झूलत है झकझोल ।। २९१९ ।।

राग गौरी ॥ ३५३८ ॥

डोल देखि ब्रजवासी फूलै। गोपि झुलावैं गोविंद झूलै ॥
नंदनँदन गोकुल मैं सोहै। मुरलि मनोहर मन्मथ मोहै ॥
कमल नैन कौ लाड़ लडावैं। प्रमुदित गीत मनोहर गावैं ॥
रसिक सिरोमनि आनँदसागर। 'सूरदास' मन मोहन नागर ॥२६२०॥

राग कल्यान ॥ ३५३९ ॥

झूलत नदनंदन डोल।
कनकखभ जराइ पटुली, लगे रतन अमोल ॥
सुभग सरल सुदेस डाँड़ी, रची विधना गोल।
मनौ सुरपति सुरसभा तैं, पठै दियौ हिंडोल ॥
जवहि झंपत तवहिं कपति, विहँसि लगति उरोल।
त्रिदसपति सजि चढ़ि बिमाननि, निरखि दै दै ओल ॥
थके मुख कछु कहि न आवै, सकल मपकृत झोल।
सखी नवसत साज कीन्हे, वदति मधुरे वोल।
थक्यौ रतिपति देखि यह छवि, भयौ वहु भ्रम भोल।
'सूर' यह सुख गोप गोपी, पियत अमृत कलोल ॥ २६२१ ॥

राग बिलावल ॥ ३५४० ॥ अक्रूर-ब्रज-आगमन

फागु रग करि हरि रस राख्यौ। रह्यौ न मन जुवतिन के काप्यौ ॥
सखा सग सवकौ मुख दीनौ। नर नारी मन हरि हरि लीनौ ॥
जो जिहि भाव ताहि हरि तैसैं। हित कौं हित नैसनि कौं नैसैं ॥
महरि नद पितु मातु कहाए। तिनही के हित तनु धरि आए ॥
जुग जुग यह अवतार धरत हरि। हरता करता विस्व रहे भरि ॥
धरनी पाप भार भइ भारी। सुरनि लिये सँग जाइ पुकारी ॥
त्राहि त्राहि श्रीपति दैत्यारी। राखि लेहु मोहि सरन उवारी ॥
राजस रीति सुरनि कहि भाषी। भये चंद सूरज तहँ साखी ॥
छीरसिंधु अहिसयन मुरारी। प्रभु स्रवननि तहँ परी पुकारी ॥
तव जान्यौ कमला के कंता। दनुजभार पुहुमी मैंमता ॥
सिंधु मध्यवानी परगासी। भुव अवतार कह्यौ अविनासी ॥
मथुरा जनमि गोकुलहिं आए। मातु पिता सुत हेतु कहाए ॥
नारद कहि यह कथा सुनाई। व्रज लोगनि सुख दियौ कन्हाई ॥
नद जसोदा वालक जान्यौ। गोपी काम रूप करि मान्यौ ॥
प्रथम पियत पय वकी विनासी। तुरत सुनत नृप भयौ उदासी ॥
इहिं अंतर वहु दैत्य सँहारे। इहिं अतर लीला वहु धारे ॥
को माया कहि सकै तुम्हारी। वाल तरुन सव न्यारी न्यारी ॥
धन्य धन्य ये व्रज के वासी। वस कीन्हे जिन ब्रह्म उदासी ॥
अकलकला, निगमहु तैं न्यारे। तिन जुवती वन वननि विहारे ॥
अग्या इहै मोहिं प्रभु दीन्हौ। यह अवतार जवहिं प्रभु लीन्हौ ॥
दैत्यदहन सुर के सुखकारी। अव मारौ प्रभु कंस प्रचारी ॥
यह सुनि हँसे सुरनि के नाथा। जव नारद गाई यह गाथा ॥
श्रीमुख कह्यौ जाइ समुझावहु। नृप आयसु करि मोहिं वुलावहु ॥
अंजलि जोरि राजमुनि हर्षे। कृपा वचन तिनसौं हरि वर्षे ॥

तुरत चले नारद नृप पासा। यहै बुद्धि मन करत प्रकासा॥
सकरषन हिरदै प्रगटाई। जो बानी रिषि गए सुनाई॥
आदि पुरुष उद्यौत विचारी। सेषरूप हरि के सुखकारी॥
अतरजामी है जगताता। अनुज हेत जग मानत नाता॥
इहै वचन हलधर कहि भाष्यौ। सुनि सुनि स्रवन हृदय हरि राष्यौ॥
तुम जनमे भू भार उतारन। तुम हो अखिल लोक के तारन॥
तुम ससार सार के सारा। जल थल जहाँ तहाँ विस्तारा॥
तव हँसि कही भ्रात सौ वानी। जो तुम कहत वात मैं जानी॥
कस निकदन नाम कहाऊँ। केस गही भुव मैं घिसटाऊँ॥
इहि अतर मुनि गए नृप पासा। मन मारे मुख करे उदासा॥
हरषि कस मुनि निकट बुलायौ। आदर करि आसन बैठायौ॥
कैसौ मुख, क्यौ रिषि मन मारे। कह चिता जिय वढी तुम्हारै॥
नारद कह्यौ सुनौ हो राव। कह बैठे कछु करहु उपाव॥
त्रिभुवन मैं तुम सरि को ऐसौ। देख्यौ नदसुवन व्रज जैसौ॥
करत कहा रजधानी ऐसी। यह तुमको उपजी कहौ कैसी॥
दिन दिन भयौ प्रवल वह भारी। हम सव हित की कहैं तुम्हारी॥
तव गर्वित नृप वोले वानी। कहा वात नारद तुम जानी॥
कोटि दनुज मो सरि मो पासा। जिनकौ देखि तरनि तनु त्रासा॥
कोटि कोटि तिनके सँग जोधा। को जीवै तिनके तनु क्रोधा॥
मल्लनि कौ वल कहा वखानौ। जिनके देखत काल डरानौ॥
कोटि धनुर्धर सतत हारै। वचै कौन तिनके जु हँकारै॥
एक कुवलया त्रिभुवन गामी। ऐसे और कितक हैं नामी॥
ग्वाल सुतनि की कहा चलावहु। यह बानी कहि कहा सुनावहु॥
प्रजा लोग व्रज के सव मेरे। सेवा करत सदा रहैं नेरे॥
ताते सकुचत हौ उहिं काजा। वालक सुनत होइ जिय लाजा॥
भली करी यह वात सुनाई। सहज वुलाइ लेउँ दोउ भाई॥
और सुनौ नारद मुनि मोसौं। स्रवननि लागि कहौ कछु गोसौं॥
कितिक वात वलराम कन्हाई। मो देखत अति काल डराई॥
आजु काल्हि अव उनहिं वुलाऊँ। कहि पठवौ व्रज सहित मँगाऊँ॥
और प्रजा व्रज आनि वसाऊँ। अपने जिय की खुटक मिटाऊँ॥
तिन पर क्रोध कहा मैं पाऊँ। रगभूमि गज चरन रुँदाऊँ॥
मेरे समसरि कौ वै नाही। यह सुनि कै नारद मुसकाही॥
सत्य वचन नृप कहत पुकारे। अव जाने उन तौ तुम मारे॥
यह कहि मुनि वैकुंठ सिधारे। त्रिभुवन मै को वलहि तुम्हारे॥
कस परचौ मन इहै विचारा। राम कृष्न वध इहैं खँभारा॥
दनुज हृदै हरि इहै उपायौ। नारद कही सुनत मन आयौ॥
अव मारौ नहिं गहरु लगाऊँ। मथुरा जहाँ तहाँ वल छाऊँ॥
धकधकात जिय वहुरि सँभारै। क्यौं मारौ सो वुद्धि विचारै॥
'सूरज' प्रभु अविगत अविनासी। कंस काल यह वुद्धि प्रकासी॥

॥ २६२२ ॥

राग कान्हरी ॥ ३५४१ ॥

अहौ नृप द्वै अरि प्रगट भए।
वसे नंद गृह गोकुल थानक, दियौ सुदननि गए॥
तुमहू कौ दुख वहुत जनम कौ, रथ मारग आरोपे।
ता दिन तैं सुत सप्त देवकी, तेरै ही कर सौंपे॥
जौ पै राज काज सुख चाहै, वेगि वुलाइ न लीजै।
हारि जीति दोउनि की विधि यह, जैसैं होइ सो कीजै॥
ऐसी कहि वैकुंठ सिधारे, कष्ट निसा विकराइ।
'सूर' स्याम कृत कीवै इच्छा, मुनि मन इहै उपाइ॥ २९२३ ॥

राग सोरठ ॥ ३५४२ ॥

नृपति मन इहै विचार परचौ।
क्यौं मारौं दोउ नन ढुटौना, ऐसी अरनि अरचौ॥
कवहुँक कहत आपु उठि धावौं, यहै विचार करचौ।
सात दिवस मैं वधी पूतना, यह गुनि मनहि डरचौ॥
पुनि साहस जिय जिय करि गरव्यौ, ताकौ काल सरचौ।
'सूर' स्याम वलराम हृदय तैं, नैकु नही विसरचौ॥ २९२४ ॥

राग सारंग ॥ ३५४३ ॥

मथुरा निकट चरित है गाइ।
दुष्ट कंस भय करत मनहि मन, सुनै कृष्न प्रभुताइ॥
सीस धुनै नृप रिसनि, मनहि मन; वहुत उपाइ करै।
घर वैठैं ही दसन अधर धरि चंपै, स्वास भरै॥
समुझै वचन कहे जे देवी, पहिलैं अकास परै।
नारद गिरा सँभारी पुनि पुनि, सिर धुनि आपु सरै॥
काल रूप देवकि कौ नदन प्रगटचौ वसुधा माहि।
कासौं कहौं 'सूर' अतर की, सुफलक सुत कौ चाहि॥ २९२५ ॥

राग सोरठ ॥ ३५४४ ॥

महर ढुटौना सालि रहे।
जन्महि तैं अपडाउ करत है, गुनि गुनि हृदय कहे॥
दनुजसुता पहिले सघारी, पय पीवत दिन सात।
गयौ प्रतिज्ञा करि कागासुर, आइ गिरचौ मुरछात॥
त्रिना सकट छिन मैं संघारचौ, केसी हत्यौ प्रचारि।
जे जे गए वहुरि नहि देखे, सवही डारे मारि॥
ज्यौं त्यौं करि इन दुहुनि सँघारौं, वात नही कछु और।
'सूर' नृपति अति सोच परचौ जिय, यहै करत मन दौर॥ २९२६ ॥

राग रामकली ॥ ३५४५ ॥

नँदसुत सहज वुलाइ पठाऊँ।
स्याम राम अति सुदर कहियत, देखन काज मँगाऊँ॥
जैहै कौन प्रेम करि ल्यावै, भेद न जानै कोइ।
महर महरि सौं हित करि ल्यावै, महा चतुर जौ होइ॥
इहि अतर अक्रूर वुलायौ, अति आतुर महराज।
'सूर' चल्यौ मन सोच वढ़ाये, कौन है ऐसौ काज॥ २९२७ ॥

राग धनाश्री ॥ ३५४६ ॥

अति आतुर नृप मोहिं बुलायौ।
कौन काज ऐसौ अटक्यौ है, मन मन सोच बढायो॥
आतुर जाइ पौरि भए ठाढे, कह्यौ पौरिया जाइ।
सुनत बुलाइ महल ही लीन्हौ, सुफलक सुत गए धाइ॥
कछु डर कछु धीरज मन कीन्हौ, सुफलक सुत गए धाइ।
कछु डर कछु धीरज मन कीन्हौ, गयौ नृपति के पास॥
'सूर' सोच मुख देखि डरानौ, ऊरध लेत उसाँस॥ २६२८ ॥

राग मारू ॥ ३५४७ ॥

सोच मुख देखि अक्रूर भरमे।
माथ तर नाइ, कर जोरि दोऊ रहे, बोलि लीन्हौ निकट वचन नरमे॥
आपुही कस तहँ दूसरो कोउ नहिं, त्रास अक्रूर जिय कहा कैहै।
नृपति जिय सोच जान्यौ हृदय आपनै, कहत कछु नाहि धौ प्रान लैहै॥
निकट वैठारि सब बात तेई कही, जे गए भाषि नारद सवारैं।
'सूर' सुत नद के हियै सालत सदा, मल्ल यह उनहि अब बनै मारैं॥
॥ २६२६ ॥

राग मारू ॥ ३५४८ ॥

सुनौ अक्रूर यह बात साँची कहौं, आजु मोहि भोर तैं चेत नाही।
स्याम बलराम यह नाम सुनि ताम मोहि, काहि पठवहुँ जाइ तिनहिं पाही॥
प्रीति करि नद सौं सहज बातैं कहे, तुरत ल्यावै दुहूँ नृपति, बोले।
देखिबे की साध सुनि गुन विपुल, अतिहि सुदर सुने दोउ अमोले॥
कमल जब तैं उरगपीठ ल्याये सुने, वहै बकसीस अब उनहि दैहै।
'सूर' प्रभु स्याम बलराम कौ डर नहो, वचन उनके सुनत हर्ष पैहै॥
॥ २६३० ॥

राग सोरठ ॥ ३५४६ ॥

यह बानी कहि कस सुनाई।
तब अक्रूर हियै भयौ धीरज, डर डारयौ बिसराई॥
मन मन कहत कहा चित वैठी, सुनि सुनि वैसी बानी।
अपनो काल आपुही बोल्यौ, इनकी मीच तुलानी॥
हरपि वचन अक्रूर कहे तब, तुरत काज यह कीजै।
'सूर' जाहि आयसु करि पाऊँ, भोर पठै तिहि दीजै॥ २६३१ ॥

राग बिलावल ॥ ३५५० ॥

तब अक्रूर कहत नृप आगैं, धन्य धन्य नारद मुनि ज्ञानी।
बडे सत्रु ब्रज मैं दोउ हमको, सुनहु देव नीकी चित आनी॥
महाराज तुम सरि को ऐसौ, जाकी जग यह चलति कहानी।
जब नहि बचै क्रोध नृप कीन्हौ, जैहै छनकि तवा ज्यौ पानी॥
यह सुनि हर्ष भयौ गरवानौ, जबहि कही अक्रूर सयानी।
काल्हि बुलाइ 'सूर' दोउ मारौ, बार बार भाषत यह बानी॥२६३२॥

राग विलावल ॥ ३५५१ ॥

यहै मंत्र अक्रूर सौं, नृप रैनि विचारि।
प्रात नंदसुत मारिहौं, यह कह्यौ प्रचारि॥
करि विचारि जुग जाम लौं मंदिरहि पधारे।
कह्यौ, जाहु अक्रूर सौं, भए आलस भारे॥
तुरत जाइ पलिका परयौ, पलकनि झपकानौ।
स्याम राम सुपने खरे, तहँ देखि डरानौ॥
अति कठोर दोउ काल से, भरम्यौ अति झझक्यौ।
जागि परचौ तहँ कोउ नही, जियही जिय ससक्यौ॥
चौंकि परचौ सँग नारि के, रानी सव जागी।
उठी सवै अकुलाइ कै, तव वूझन लागी॥
महाराज झझके कहा, सपने कह ससके।
'सूर' अतिहिं व्याकुल भये, धर धर उर धरके॥ २९३३ ॥

राज विलावल ॥ ३५५२ ॥

महाराज क्यौ आजही सपने झझकाने।
पौढ़े जवही आनि कै, देखे विलखाने॥
कहा सोच ऐसौ ऐसौ पर्यौ, ऐसौ पुहुमी कौ॥
काकी सुधि मन मै रही, कहियै अप जी कौ॥
रानी सव व्याकुल भई, कछु भेद न पावै।
तव आपुन सहजहि कह्यौ, वह नही जनावै॥
सावधान करि पौरिया, प्रतिहार जगायौ।
'सूर' त्रास वलस्याम कै, नहिं पलक लगायौ॥ ३९३४ ॥

राग विलावल ॥ ३५५३ ॥

उत नदहिं सपनौ भयौ, हरि कहूँ हिराने।
वलमोहन कोउ लै गयौ, सुनि कै विलखाने॥
ग्वाल सखा रोवत कहै, हरि तौ कहुँ नाही।
सगहि सँग खेलत रहे, यह कहि पछिताही॥
दूत एक सँग लै गयौ, वलराम कन्हाई।
कहा ठगौरी सी करी, मोहिनी लगाई॥
वाही के दोउ ह्वै गए, हम देखत ठाढे।
'सूरज' प्रभु वै निठुर ह्वै, अतिही गए गाढे॥ २९३५ ॥

राग सोरठ ॥ ३५५४ ॥

व्याकुल नद सुनत यह वानी।
धरनी मुरछि परी अति व्याकुल, विवस जसोदा रानी॥
व्याकुल गोप ग्वाल सव, व्याकुल व्रज की नारि।
व्याकुल सखा स्याम वल के जे, व्याकुल तन न सँभारि॥
धरनी परत, उठत, पुनि धावत, इहि अतर नँद जागे।
धकधकात उर नैन स्रवत जल, सुत अँग परसन लागे॥
सिसकत सुनि जसुमति अतुराई, कहा महर भ्रम पायौ।
'सूर' नंद घरनी के आगै, यह भ्रम नही सुनायौ॥ २९३६ ॥

राग कल्यान ॥ ३५५५ ॥

एक जाम नृप कौ निसि, जुग तैं भइ भारी।
आपुनहूँ जाग्यो, सँग जागी सब नारी॥
कबहुँ उठत, बैठत पुनि, कबहुँ सेज सोवै।
कबहुँ अजिर ठाढो ह्वै, ऐसैं निसि खोवै॥
वार वार जोतिक सौं, निसि घरी वुझावै।
एक जाइ पहुँचै नहीं, अरु एक पठावै॥
जोतिक जिय त्रास परयौ, कहा प्रात करिहै।
'सूर' क्रोध भरयौ नृपति. काकैं सिर परिहै॥ २९३७ ॥

राज कल्यान ॥ ३५५६ ॥

व्याकुल ह्वै टेरै निकट, बूझै घरी वाकी।
इक इक छिन, जाम जाम, ऐसी गति ताकी॥
को जैहै व्रज कौ, मन करै, किहि पठाऊँ।
जासौं कहि नदसुवन, आजुही मँगाऊँ॥
अब नहिं राखौ उठाइ, वैरी नहिं नान्हौ।
मारौं गज पै रुँदाइ, मन यह अनुमानौ॥
पठवौ अक्रूर, और वैसौ नहिं कोऊ।
'सूर' जाइ गोकुल तैं, ल्यावैं सँग दोऊ॥ ३९३८ ॥

राग विलावल ॥ ३५५७ ॥

अरुन उदय उठि प्रातही, अक्रूर वुलाए।
आपु कह्यौ प्रतिहार सौं, इक सुनि सत धाए॥
सोवत जाइ जगाइहौ, चलियैं नृप पासा।
उहै मत्र मन मानिकै, उठि चले उदासा॥
नृपति द्वार ही पै खरौ, देखत सिरनायौ।
कहि खवास कौ सेन दै, सिरोपाव मँगायौ॥
अपनैं कर लै करि दियौ, सुफलकसुत लीन्हौ।
लै आवहु सुत नंद के, यह आयसु दीन्हौ॥
मुख अक्रूर हरपित भयौ, हिरदय विलखानौ।
असुर त्रास अति जिय परयौ, यह कहै सयानौ॥
तुरतहिं रथ पलनाइ कैं, अक्रूरहि दीन्हौ।
आयसु सिर पै मानि कैं, आतुर होइ लीन्हौ॥
विलम करौ जनि नैकहूँ, अबही व्रज जाहू।
'सूर' काज करि आवहू, जनि रैनि वसाहू॥ २९३९ ॥

राग विलावल ॥ ३५५८ ॥

कंस नृपति अक्रूर वुलाये।
वैठि इकंत मंत्र दृढ कीन्हौ, दोऊ वंधु मँगाये॥
कहूँ मल्ल, कहुँ गज दै राखे, कहूँ धनुप, कहुँ वीर।
नंद महर के वालक मेरैं, करषत रहत सरीर॥
उनहिं वुलाइ वीच ही मारौं, नगर न आवन पावैं।
'सूर' सुनत अक्रूर कहत, नृप मन मन मौज वढ़ावैं॥ २९४० ॥

राग कल्यान ॥ ३५५९ ॥

तुम विनु मेरैं हितू न कोऊ।
सुनि अक्रूर, पुरत नृप भाषत, नद महरसुत ल्यावहु दोऊ॥
सुनि रुचि वचन रोम हरषित तनु, प्रेम पुलकि मुख कछु न वोल्यौ।
यह आयसु पूरव सुक्रित वस, सो काहू पै जाहि न तोल्यौ॥
मौन देखि परिहस नृप भीन्यौ, मनहुँ सिह गो आइ तुलानौ।
वहिक्रम विनु द्वै सुत अहीर के, रे कातर कत मन संकानौ॥
आयसु पाइ सुष्ठु रथ कर गहि, अनुपम तुरँग साज धृत जोह्यौ।
'सूर' स्याम की मिलनि सुरति करि, मनु निरधन निधि पाइ विमोह्यौ॥२९४१॥

राग विलावल ॥ ३५६० ॥

सुनहु देव इक वात वनाऊँ।
आयसु भयौ तुरत लै आवहु, तातै फेरि सुनाऊँ॥
वल मोहन वन जात प्रातही, जौ उनकौ नहिं पाऊँ।
रहिहौ आजु नंद गृह वसिकै, काल्हि प्रात लै आऊँ॥
यह कहि चल्यौ, नृपतिहू मान्यौ, सुफलकसुत रथ हाँक्यौ।
'सूरदास' प्रभु ध्यान हृदय धरि, गोकुल तन कौ ताक्यौ॥ २९४२॥

राग टोड़ी ॥ ३५६१ ॥

सुफलकसुत मन परयौ विचार। कस निवस होइ हत्यार॥
नगर माँझ रथ कीन्हौ ठाढौ। सोच परयौ मनमैं अति गाढ़ौ॥
मंत्र कियौ निसि मेरैं साथ। मोहि लेन पठयौ ब्रजनाथ॥
गज, मुष्टिक, चानूर निहारयौ। व्याकुल नैन नीर दोउ ढारयौ॥
अति वालक वलराम कन्हाई। कैसैं आनि देउँ मैं जाई॥
कहा करौं नहिं कछू वसाई। मो देखत मारैं दोउ भाई॥
मारैं मोहिं वंदि लै मेलै। आगे कौ रथ नैकु न ठेलै॥
'सूरदास' प्रभु अंतरजामी। सुफलकसुत मन पूरन कामी॥२९४३॥

राग कल्यान ॥ ३५६२ ॥

सुफलकसुत हृदय ध्यान, कीन्हौ अविनासी।
हरन करन समरथ वै, सव घट के वासी॥
धन्य, धन्य कसहिं कहि, मोहिं जिन पठायौ।
मेरौ भरि काज, मीच आप कौ वुलायौ॥
यह गुनि रथ हाँकि दियौ, नगर परयौ पाछै।
कछु सकुचत, कछु हरपत, चल्यो स्वाँग काछै॥
वहुरि सोच परयो, दरस दच्छिन मृगमाला।
हरष्यौ अक्रूर 'सूर', मिलिहै गोपाला॥ २९४४॥

राग टोड़ी ॥ ३५६३ ॥

दच्छिन दरस देखि मृगमाला। अति आनद भयौ तिहिं काला॥
अवहीं वन मिलिहौ गोपाला। स्याम जलद तनु अंग रसाला॥
ता दरसन तै होउँ निहाला। वहु दिन के मेटौ जंजाला॥
मुख ससि नैन चकोर विहाला। तन त्रिभंग सुंदर नँदलाला॥
विविध सुमन हिरदै सुभ माला। सारसहू तै नैन विसाला॥
निसचय भयौ कंस कौ काला। 'सूरज' प्रभ त्रिभुवन प्रतिपाला॥२९४५॥

राग आसावरी ॥ ३५६४ ॥

दाहिनै देखियत मृगमाल।

मानौ इहिं सकुन अबहिं इहि वन आजु, इनहिं भुजनि भरि भेटौ गो गोपाल॥
निरखि तनु त्रिभंग, पुलक सकल अग अकुर धरनि जिमि पावसहिं काल।
परिहौं पाइनि जाइ, भेटिहै अंकम लाइ, मूल तै जमी ज्यौ वेलि चढति तमाल॥
परसि परमानद, सीचि कै कामना कद, करिहैं प्रगट प्रीति प्रेम के प्रवाल।
वचन रचन हास, सुमन सुख निवास, करहिं फलिहै फल अभय रसाल॥
स्फुरत सुभ सुवाहु लोचन मन उछाहु, फुलि कै सुकृत फल फलै तिहिं काल।
निगम कहत नेति सिव न सकत चेति, हृदय लगाइ 'सूर' लैहौ ता दयाल॥
॥ २९४६ ॥

राग कान्हरौ ॥ ३५६५ ॥

आजु वे चरन देखिहौ जाइ।

जे पद कमल प्रिया श्री उर तै, नैकु न सकइ भुलाइ॥
जे पद कमल सकल मुनि दुरलभ, मै देखौ सति भाइ।
जे पद कमल पितामह ध्यावत, गावत नारद चाइ॥
जे पद कमल सुरसरी परसे, तिहूँ भुवन जस छाइ।
'सूर' स्याम पद कमल परसिहौ, मन अति वढ़्यौ उछाइ॥ २९४७ ॥

राग कान्हरौ ॥ ३५६६ ॥

आजु जाइ देखौ वै चरन।

सीतल सुभग सकल सुखदाता, दुसह दोप दुख हरन॥
अंकुस कुलिस कमल धुज चिन्हित, अरुन कंज के रग।
गो चारत वन जाइ पाइहौ, गोप सखिन के संग॥
जाकौ ध्यान धरत मुनि नारद, सुर विरचि अरु ईस।
तेई चरन प्रगट करि परसौ, इन कर अपने सीस॥
लखि सरूप रथ रहि नहिं सकिहौ, तिनि धरिहौ धर धाइ।
'सूरदास' प्रभु उभय भुजा धरि, हँसि भेटिहै उठाइ॥ २९४८ ॥

राग नट ॥ ३५६७ ॥

जव सिर चरन धरिहौ जाइ।

कृपा करि मोहिं टेकि लैहैं, करनि हृदय लगाइ॥
अग पुलकित, वचन गदगद, मनहिं मन सुख पाइ।
प्रेम घट उच्छलित ह्वैहै, नैन अंसु वहाइ॥
कुसल वूझत कहि न सकिहौ, वार वार सुनाइ।
'सूरदास' प्रभु के ध्यान अटक्यौ, गयौ पंथ भुलाइ॥ २९४९ ॥

राग विलावल ॥ ३५६८ ॥

मथुरा तै गोकुल नहिं पहुँचे, सुफलकसुत कौ साँझ भई।
हरि अनुराग देह सुधि विसरी, रथ वाहन की सुरति गई॥
कहाँ जात, किन मोहिं पठायौ, को हौ मैं, इहिं सोच परयौ।
दसहूँ दिसा स्याम परिपूरन, हृदय हरष आनद भरयौ॥
हरि अतरजामी यह जानी, भक्तवछल वानौ जिनिकौ।
'सूर' मिले जो भाव भक्त के, गहरु नही कीन्हौ तनिकौ॥ २९५० ॥

राग कल्यान ॥ ३५६९ ॥

वृन्दावन ग्वालिन सँग, गइया हरि चारैं।
अपने जन हेत काज, ब्रज कौ पगु धारैं॥
जमुना करि पार गाइ, स्याम देत हेरी।
हलधर सँग सखा लिए, सुरभी गन घेरी॥
धेनु दुहन सखनि कह्यौ, आपु दुहन लागे।
वृन्दावन गोकुल बिच, जमुना के आगे॥
भक्त हेत श्री गोपाल, यह सुख उपजायौ।
'सूरदास' प्रभु कौ दरस, सुफलकसुत पायौ॥ २९५१ ॥

राग कल्यान ॥ ३५७० ॥

सुफलकसुत हरि दरसन पायौ।
रहि न सक्यौ रथ पर मुख व्याकुल, भयौ वहै मन भायौ॥
भू पर दौरि निकट हरि आयौ, चरननि चित्त लगायौ।
पुलक अंग, लोचन जलधारा, श्रीपद सिर परसायौ॥
कृपासिंधु करि कृपा मिले हँसि, लियौ भक्त उर लाइ।
'सूरदास' यह सुख सोइ जानै, कहौ कहा मैं गाइ॥ २९५२ ॥

राग गुंडमलार ॥ ३५७१ ॥

हरि अक्रूर हरि हृदय लायौ।
मिले तिहि भाव जो भाव चेत्यौ चित्त, भक्तवच्छल नाम तव कहायौ॥
कुसल बूझत प्रस्न, वचन अमृत रसन, स्रवन सुनि पुलक अँग अंग कीन्हौ।
चितै आनन चारु बुद्धि उर विस्तार, दनुज अव दलौं यह ज्वाव दीन्हौ॥
भेद ही भेद सब दैत बानी कही, तुरत बोले हेत इहै वाकै।
'सूर' भुज फरकि, मन नैन उत्साह लै, धरनि उद्धार हित बसी ताकै॥
॥ २९५३ ॥

राग बिलावल ॥ ३५७२ ॥

स्याम इहै कहि कै उठे, नृप हमहिं बुलाए।
अतिहिं कृपा हम पर करी, जो काल्हि मँगाए॥
संग सखा यह सुनत ही, चक्रित मन कीन्हौ।
कहा कहत हरि सुनत हौ, लोचन भरि लीन्हौ॥
स्याम सखनि मुख हेरि कै, तब करी सयानी।
काल्हि चलौ नृप देखियै सका जनि आनी॥
हरषि भये हरि यह कहै, मन मन दुख भारे।
'सूर' संग अक्रूर के, हरि ब्रज पग धारे॥ २९५४ ॥

राग रामकली ॥ ३५७३ ॥

अति कोमल बलराम कन्हाई।
दुहुनि गोद अक्रूर लिए हँसि, सुनमहुँ तैं हरुवाई॥
ग्वाल संग रथ लीन्हे आए, पहुँचे ब्रज की खोर।
देखत गोकुल लोग जहाँ तहँ, नंद उठे सुनि रोर॥
निसि सुपने कौ त्रस्त भए अति, सुन्यौ कंस कौ दूत।
'सूर' नारि नर देखन धाये, घर घर सोर अकूत॥ २९५५ ॥

राग गुडमलार ॥ ३५७४ ॥

कंस नृप अक्रूर ब्रज पठाये।
गए आगैं लैन नंद उपनद मिलि, स्याम बलराम उन हृदय लाए॥
उतरि स्यंदन मिल्यौ देखि हरष्यौ हियौ, सोच मन यह भयौ कहा आयौ।
राज के काज कौ नाम अक्रूर यह, किधौ कर लैन कौ नृप पठायौ॥
कुसल तिहिं बूझि लै गए ब्रज निज धाम, स्याम बलराम मिलि गए वाकौ।
चरन पखराइ कै सुभग आसन दियौ, विविध भोजन दियौ तुरत ताकौ॥
कियौ अक्रूर भोजन दुहुँनि संग लै, नर नारि ब्रज लोग सबै देखैं।
मनौ आए सग, देखि ऐसे रंग, मनहिं मन परस्पर करत मेषैं॥
सारि ज्यौनार कै आचमन सुद्ध भये दियौ तंबोर नंद हरष आगे।
सेज बैठारि अक्रूर सौ जोरि कर, कृपा कर कही तब कहन लागे॥
स्याम बलराम कौ कस बोले हेत, नंद लै सुतनि हम पास आवैं।
'सूर' प्रभु दरस की साध अतिही करत, आजु ही कही जनि गहरु लावैं॥
॥ २९५६ ॥

राग कान्हरौ ॥ ३५७५ ॥

सुन्यौ ब्रजलोग कहत यह बात।
चक्रित भए नारि नर ठाढ़े, पाँच न आवै सात॥
चक्रित नँद जसुमति भइ चक्रित, मन ही मन अकुलात।
दै दै सैन स्याम बलरामहिं, सबै बुलावत जात॥
पारब्रह्म अविगत अविनासी, माया रहित अतीत।
मनौ नही पहिचानि कहूँ की, करै सभी मन भीत॥
बोलत नहीं नैकु चितवत नहिं, सुफलकसुत सौ पागे।
'सूर' हमैं हित कर नृप बोले, यहै कहत ता आगैं॥ २९५७ ॥

राग बिहागरौ ॥ ३५७६ ॥

व्याकुल भए ब्रज के लोग।
स्याम मन नहिं नैकु आनत, ब्रह्मपूरन जोग॥
कौन माता ,पिता को है, कौन पति की नारि।
हँसत दोउ अक्रूर कै सँग, नवल नेह बिसारि॥
कोउ कहत यह कहा आयौ, क्रूर याकौ नाम।
'सूर' प्रभु लै प्रात जैहै, और सँग बलराम॥ २९५८ ॥

राग बिहागरौ ॥ ३५७७ ॥ गोपिकाओं की उद्विग्नता

चलन चलन स्याम कहत, लैन कोउ आयौ।
नंदभवन भनक सुनी, कंस कहि पठायौ॥
ब्रज की नारि गृह बिसारि, ब्याकुल उठि धाई।
समाचार बूझन कौ, आतुर ह्वै आई॥
प्रीति जानि, हेत मानि, बिलखि वदन ठाढ़ी।
मानहु वै अति विचित्र, चित्र लिखी काढ़ीं॥
ऐसी गति ठौर ठौर, कहत न बनि आवै।
'सूर' स्याम बिछुरैं, दुख बिरह काहि भावै॥ २९५९ ॥

राग कान्हरौ ॥ ३५७८ ॥

चलत जानि चितवहिं ब्रजजुवती, मानहु लिखी चितेरैं।
जहाँ सु तहाँ एकटक रहि गईं, फिरत न लोचन फेरैं॥
बिसरि गई गति भाँति देह की, सुनति न स्रवननि टेरैं॥
मिलि जु गई मानौ पै पानी, निवरहि नही निवेरैं॥
लागीं संग मतंग मत्त ज्यौं, घिरति न कैसेहु घेरैं।
'सूर' प्रेम आसा अंकुस जिय, वै नहिं इत उत हेरैं॥ २९६० ॥

राग सारंग ॥ ३५७९ ॥

अब देखि लै री स्याम कौ मिलनौ बड़ी दूरि।
मधुवन चलन कहत हैं, सजनी, इन नैननि की मूरि॥
ठाढी चितवै छाहँ कदम की, उड़त न रथ की धूरि।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस विनु, बिरह रह्यौ मन पूरि॥ २९६१ ॥

राग सारंग ॥ ३५८० ॥

सब मुरझानी री चलिवे की सुनत भनक।
गोपी ग्वाल नैन जल ढारत, गोकुल ह्वै रह्यौ मूंद चनक॥
बसन मलीन, छीन देखियत तन, एक रहति जो बनी बनक।
जाके हैं पिय कमलनैन से, बिछुरे कैसै रहत दिनक॥
यह अक्रूर कहाँ तै आयौ, दाहन लाग्यौ देह कनक।
'सूरदास' स्वामी के बिछुरत, घट नहिं रहिहैं प्रान तनक॥ २९६२ ॥

राग रामकली ॥ ३५८१ ॥

अनल तै बिरहअगिनि अति ताती।
माधव चलन कहत मधुवन कौं, सुने तपति अति छाती॥
न्याइहिं नागरि नारि बिरहबस, जरति दिया ज्यौं बाती।
जे जरि मरी प्रगट पावक परि, ते त्रिय अधिक सुहाती॥
ढारति नीर-नयन भरि भरि सब, व्याकुलता मदमाती।
'सूर' बिथा सोई पै जानै, स्याम-सुभग-रँग-राती॥ २९६३ ॥

राग आसावरी ॥ ३५८२ ॥

स्याम गएँ सखि प्रान रहैंगे?
अरस परस ज्यौं बातै कहियत, तैसै बहुरि कहैंगे?
इदु बदन खग नैन हमारे, जानति और चहैंगे?
बासर निसि कहुँ होत न न्यारे, बिछुरनि हृदय सहैंगे?
एक कहौ तुम आगै बानी, स्याम न जाहिं, रहैंगे?
'सूरदास' प्रभु जसुमति कौ तजि, मथुरा कहा लहैंगे? ॥ २९६४ ॥

राग मलार ॥ ३५८३ ॥

हरि मोसौ गौन की कथा कही।
मन गह्वर मोहि उतर न आयौ, हौ सुनि सोचि रही॥
सुनि सखि सत्य भाव की बातैं, बिरह बेलि उलही।
करवत चिह्न कहे हरि हम सौ, ते अब होत सही॥
आजु सखी सपने मैं देख्यौ, सागर पालि ढही।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरौ गवन सुनि, जल ज्यौ जात बही॥ २९६५ ॥

राग मारू ॥ ३५८४ ॥

वहुत दुख पैयत है इहिं वात।
तुम जु सुनत ही माधौ, मधुवन सुफलक सुत सँग जात ॥
मनसिज बिथा दहति दावानल, उपजी है या गात।
सूधौ कहौ तव कैसै जीहैं, निजु चलिहौ उठि प्रात ॥
जो पै यहै कियौ चाहत है, मीचु बिरह-सर-घात।
'सूर' स्याम तौ तव कत राखौ, गिरि कल लै दिन सात ॥ २९६६ ॥

राग रामकली ॥ ३५८५ ॥

देखि अक्रूर नर नारि बिलखे।
धनुर्भजन यज्ञ हेत वोले इन्है, और डर नही मन कहि सँतोप ॥
महरि व्याकुल दौरि पाइँ गहि लै परी, नंद उपनद सँग जाहु लैकै।
राज कौ अस लिखि लेहु दूनौ देहुँ, मैं कहा करौं सुत दुहुँनि दैकै ॥
कहति व्रजनारि नैननि नीर ढारि कै, इन्हनि कौ काज मथुरा कहा है।
'सूर' नृप क्रूर अक्रूर क्रूरै भए, धनुप देखन कह्यौ कपटी महा है ॥२९६७॥

राग सारंग ॥ ३५८६ ॥

(मेरे) कमलनैन प्राननि तै प्यारे।
इन्है कहा मधुपुरी पठाऊँ, राम कृप्न दोऊ जन बारे ॥
जसुदा कहै सुनौ सुफलकसुत, मैं इन बहुत दुपनि सौं पारे।
ये कहा जानैं राज सभा कौं, ये गुरुजन विप्रहुँ न जुहारे ॥
मथुरा असुर समूह वसत हैं, कर कृपान जोधा हत्यारे।
'सूरदास' ये लरिका दोऊ, इन कव देखे मल्ल अखारे ॥ २९६८ ॥

राग सारंग ॥ ३५८७ ॥

व्रजवासिनि के सरवस स्याम।
यह अक्रूर क्रूर भयौ हमकौ, जिय के जिय मोहन वलराम ॥
अपनौ लाग लेहु लेखौ करि, जो कछु राज अस कौ दाम।
और महर लै सग सिधारौ, नगर कहा लरिकन कौ काम ॥
तुम तौ साधु परम उपकारी, सुनियत वड़ौ तिहारौ नाम।
'सूरदास' प्रभु पठै मधुपुरी, को जीवै छिन आमर जाम ॥ २९६९ ॥

राग मलार ॥ ३५८८ ॥

सखी री हौ गोपालहिं लागी।
कैसैं जियै वदन विनु देखे, अनुदित छिन अनुरागी ॥
गोकुल कान्ह कमलदल लोचन, हरि सवहिनि के प्रान।
कौन न्याव, तुम कहत जौ इनकौ मथुरा को लै जान ॥
तुम अक्रूर वडे के ढोटा, अति कुलीन मति धीर।
वैठत सभा वडे राजनि की, जानत हौ पर पीर ॥
लीजै लाग इहाँ तैं अपनौ, जो कछु राज कौ अंस।
नगर वोलि ग्वालनि के लरिका, कहा करैगौ कंस ॥
मेरे वलरामैं धन माई, माधौई सव अंग।
वहुरि 'सूर' हौ कापै माँगौ, पठै पराएँ सग ॥ २९७० ॥

राग रामकली ॥ ३५८९ ॥

मेरौ माई निधनी कौ धन माधौ।
वारंवार निरखि सुख मानति, तजति नहीं पल आधौ॥
छिनु छिनु परसति अकम लावति, प्रेम प्रकृत ह्वै बाँधौ।
निसिदिन, चंद चकोरी अँखियनि, मिटै न दरसन साधौ॥
करिहे कहा अक्रूर हमारौ, दैहै प्रान अवाधौ।
'सूर' स्याम घन हौं नहिं पठवौं, अवहिं कस किन बाँधौ॥ २९७१ ॥

राग सोरठ ॥ ३५९० ॥

नहिं कोउ स्यामहिं राखै जाइ।
सुफलकसुत वैरी भयौ मोकौं, कहति जसोदा माइ॥
मदनगोपाल विना घर आँगन, गोकुल काहि सुहाइ।
गोपी रहीं ठगी सी ठाढ़ी, कहा ठगौरी लाइ॥
सुन्दर स्याम राम भरि लोचन, विनु देखै दोउ भाइ।
'सूर' तिन्हैं लै चले मधुपुरी, हिरदै सूल बढ़ाइ॥ २९७२ ॥

राग सोरठ ॥ ३५९१ ॥

जसोदा वार वार यौं भाषै।
है कोउ व्रज मैं हितू हमारौ, चलत गुपालहिं राखै॥
कहा काज मेरे छगन मगन कौं, नृप मधुपुरी वुलायौ।
सुफलकसुत मेरे प्रान हरन कौं, काल रूप ह्वै आयौ॥
वरु यह गोधन हरौ कस सब, मोहिं वंदि लै मेलौ।
इतनोई सुख कमलनयन मेरौ अँखियनि आगैं खेलौ॥
वासर वदन विलोकत जीवौं, निसि निज अंकम लाऊँ।
तिहिं विछुरत जौ जियौं कर्मवस, तौ हँसि काहि वुलाऊँ॥
कमलनयन गुन टेरत टेरत, अधर वदन कुम्हिलानी।
'सूर' कहाँ लगि प्रगटि जनाऊँ, दुखित नंद जु की रानी॥ २९७३ ॥

राग सोरठ ॥ ३५९२ ॥

(गोपाल राई) किहि अवलवन रहिहै प्रान।
निठुर वचन कठोर कुलिसहुँ तैं, कहत मधुपुरी जान॥
क्रूर नाम, गति क्रूर, क्रूर मति, काहै गोकुल आयौ।
कुटिल कस नृप वैर जानि कै, हरि कौं लैन पठायौ॥
जिहिं मुख तात कहत व्रजपति सौं, मोहिं कहत है माइ।
तेहिं मुख चलन सुनत जीवित हौं. विधि सौं कहा वसाइ॥
को कर कमल मथानी धरिहै, को माखन अरि खैहै।
वरपत मेघ वहुरि व्रज ऊपर, को गिरिवर कर लैहै॥
हौं वलि वलि इन चरन कमल की ह्याई रहौ कन्हाई।
'सूरदासरु अवलोकि जसोदा, धरनि परी मुरझाई॥ २९७४ ॥

राग सोरठ ॥ ३५९३ ॥

मोहन इतौ मोह चित धरियै।
जननी दुखित जानि कै कवहूँ, मथुरा गवन न करियै॥

यह अक्रूर क्रूर कृत रचिकै, तुमहि लेन है आयौ।
तिरछे भए करम कृत पहिले, विधि यह ठाट बनायौ।।
वार वार जननी कहि मोसौं, माखन माँगत जौन।
'सूरर' तिनहिं लैवे कौ आए करिहैं सूनौ भौन।। २९७५ ।।

राग सूही ।। ३५९४ ।।

सुफलकसुत के संग तैं, हरि होत न न्यारे।
वार ह्वार जननी कहै, मोहिं तजि न दुलारे।।
कहा ठगौरी इन करी, मेरौ वालक मोह्यौ।
हा हा करि मै मरति हौं, मो तन नहिं जोह्यौं।।
नंद कह्यौ परवोधि कै, मैं सँग लै जइहौं।
धनुपजज्ञ दिखराइ कै, तुरतहिं लै अइहौं।।
घर घर गोपनि सौ कह्यौ, कर भार जुरावहु।
'सूर' नृपति के द्वार कौ, उठि प्रात चलावहु।। २९७६ ।।

राग मलार ।। ३५९५ ।।

भरोसौ कान्ह कौ है मोहिं।
सुनहि जसोदा कंस नृपति भय, तू जनि व्याकुल होहि।।
पहिलैं पूतना कपट रूप करि, आई स्तननि विप पोहि।
वैसी प्रवल सु द्वै दिन वालक, मारि दिखायौं तोहिं।।
अघ, वक, धेनु ,तृनाव्रत, केसी कौ वल देख्यौ जोहि।
सात दिवस गोवरधन. राख्यौ, इद्र गयौ द्रप छोहि।।
सुनि सुनि कथा नंद नंदन की, मन आयौ अवरोहि।
जोइ जोइ करन चहै 'सूरज' प्रभु, सो आवै सव सोहि।। २९७७ ।।

राग विहागरौ ।। ३५९६ ।।

जसुमति अति ही भई विहाल।
सुफलकसुत यह तुमहिं वूझियत, हरत हमारे वाल!
ये दोउ भैया जीवन हमरे, कहति रोहिनी रोइ।
धरनी गिरति, उठति अति व्याकुल, कहि राखत नहि कोइ।।
निठुर भए जव तैं यह अयौ, घरहूँ आवत नाहिं।
'सूर' कहा नृप पास तुम्हारौ, हम तुम विनु मरि जाहिं।। २९७८ ।।

राग सोरठ ।। ३५९७ ।।

कन्हैया मेरी छोह विसारी।
क्यौ वलराम कहत तुम नाही, मैं तुम्हरी महतारी।।
तव हलधर जननी परवोधत, मिथ्या यह ससारी।
ज्यौ सावन की वेलि फैलि कै, फूलति है दिन चारी।।
हम वालक तुमको कह सिखवैं, हम तुमही तैं जात।
'सूर' हृदय धीरज अव धारौ, काहे कौ विलखात।। २९७९ ।।

राग सोरठ ।। ३५९८ ।।

यह सुनि गिरी धरनि झुकि माता।
कहा अक्रूर ठगौरी लाई, लिये जात डोउ भ्राता।।

विरध समय की हरत लकुटिया, पाप पुन्य डर नाहीं।
कछू नफा है तुमकौ यामैं, सोचौ धौं मन माहीं॥
नाम सुनत अक्रूर तुम्हारौ, क्रूर भए हौ आइ।
'सूर' नद घरनी अति व्याकुल, ऐसैंहि रैंनि विहाइ॥ २६८० ॥

राग रामकली ॥ ३५६६ ॥

सुने है स्याम मधुपुरी जात।
सकुचनि कहि न सकति काहू सौं, गुप्त हृदय की बात॥
संकित वचन अनागत कोऊ, कहि जु गयौ अधरात।
नींद न परै घटै नहि रजनी, कव उठि देखौं प्रात॥
नंद नँदन तौ ऐसे लागैं, ज्यौं जल पुरइन पात।
'सूर' स्याम सँग तैं विछुरत हैं, कव ऐहैं कुसलात॥ २६८१ ॥

राग भैरव ॥ ३६०० ॥

भोर भयौ व्रज लोगन कौं।
ग्वाल सखा सव व्याकुल सुनि कै, स्याम चलत है मधुवन कौं॥
सुफलकसुत स्यंदन पलनावत, देखैं तहँ वल मोहन कौं।
यह सुनि घर घर तैं उठि धाईं, नंदसुवन मुख जोहन कौं॥
रोर परी गोकुल मैं, जहँ तहँ, गाइ फिर तिपैं दोहन कौं।
'सूर' वरप कर भार सजावत, महर चले हरि गोहन कौं॥ २६८२ ॥

राग रामकली ॥ ३६०१ ॥

चलन कौ कहियत है हरि आज।
अवहीं सखी देखि आई है, करत गवन की साज॥
कोउ इक कंस कपट करि पठयौ, कछु सँदेस दै हाथ।
सुतौ हमारौ लिये जात है, सरवस अपनैं साथ॥
सो यह सूल नाहिं सुनि सजनी ! सहियै धरि जिय लाज।
धीरज जात, चलौ अवही मिलि, दूरि गऐ कह काज॥
छाँडौ जग जीवन की आसा, अरु गुरुजन की कानि।
विनती कमलनयन सौं करियै, 'सूर' समै पहिचानि॥ २६८३ ॥

राग रामकली ॥ ३६०२ ॥

चलत हरि धिक जु रहत ये प्रान।
कहँ वह सुख, अव सहौ दुसह दुख, उर करि कुलिस समान॥
कहँ वह कंठ स्याम सुंदर, भुज, करति अधर रस पान।
अँचवत नैंन चकोर सुधा विधु, देखत मुख छवि आन॥
जाकौ जग उपहास कियौ तव, छाँड़्यौ सव अभिमान।
'सूर' सुनिधि हमतैं है विछुरत, कठिन है करम निदान॥ २६८४ ॥

राग कल्यान ॥ ३६०३ ॥

स्याम चलन चहत कह्यौ सखी एक आई।
वल मोहन वैठे रथ, सुफलकसुत चढ़न चहत,
यह सुनि कै भई चकित, विरह दव लगाई॥

धुकि धुकि सब धरनि परी, ज्वाला झर लता गिरी,
मनौ तुरत जलद बरपि सुरति नीर परसी।
आई सब नद द्वार, बैठे रथ दोउ कुमार,
जसुमति लोटति भुव पर, निठुर रूप दरसीं॥
कौन पिता कौन मात, आपु ब्रह्म जगत धात,
राख्यौ नहिं कछू नात, नैकुँ चित्त माहीं।
आतुर अक्रूर चढ़े, रसना हरि नाम रढे,
'सूरज' प्रभु कोमल तनु, देखि चैन नाही॥
॥ २९८५ ॥

राग सारंग ॥ ३६०४ ॥
बिनु परबहि उपराग आजु हरि, तुम है चलन कह्यौ।
को जानै उहि राहु रमापति! कत ह्वै सोध लह्यौ॥
वह तकि बीच नीच नयननि मिलि, अजन रूप रह्यौ।
बिरहसधि बल पाइ मनौ हठि, है तिय बदन गह्यौ॥
दुसह दसन मनु धरत स्रमित अति, परस न परत सह्यौ।
देखौ देव अमृत अतर तैं, ऊपर जात बह्यौ॥
अब यह ससि ऐसौ लागत, ज्यौ बिनु माखनहिं मह्यौ।
'सूर' सकल रसनिधि दरसन बिनु, मुख छबि अधिक दह्यौ॥ २९८६ ॥

राग धनाश्री ॥ ३६०५ ॥
हरि की प्रीति उर माहिं करकै।
आइ अक्रूर चले लै स्यामहि, हित नाही कोउ हरकै॥
कचन कौ रथ आगै कीन्हौ, हरहिं चढाये बर कै।
'सूरदास' प्रभु सुख के दाता, गोकुल चले उजरि कै॥ २९८७ ॥

साग सारग ॥ ३६०६ ॥
सब ब्रज की सोभा स्याम।
हरि के चलत भई हम ऐसी, मनहु कुमुम निरमायल दाम॥
देखियत हौ तुम क्रूर बिपम से, सुन्यौ 'सूर' अक्रूरहिं नाम।
बिचरत हौ न आन गृह गृह क्यौ, सिसु लायक नृप कौ कह काम॥२९८८॥

राग बिलावल ॥ ३६०७ ॥
गोपालहि राखहु मधुबन जात।
लाज किऐ कछुकाज न सरिहै, पल बीतै जुगसात॥
सुफलकसुत के सँग न दीजियै, सुनौ हमारी बात।
गोकुल की सोभा सब जैहै, बिछुरत नँद के तात॥
रथ आरूढ होत बल केसव, ह्वै आयौ परभात।
'सूरदास' कछु बोल न आयौ, प्रेम पुलक सब गात॥ २९८९ ॥

राग बिलावल ॥ ३६०८ ॥
मोहन नैकु बदन तन हेरौ।
राखौ मोहिं नात जननी कौ, मदनगुपाल लाल मुख फेरौ॥

पाछै चढ़ौ विमान मनोहर, वहुरौ व्रज मैं होत अँधेरौ।
विछुरन भेंट देहु ठाढ़े ह्वै, निरखौं घोष जनम कौ खेरौ॥
समदौ सखा स्याम यह कहि कहि, अपने गाइ ग्वाल सब घेरौ।
गए न प्रान 'सूर' ता अवसर, नद जतन करि रहे घनेरौ॥२९९०॥

राग विहागरौ ॥ ३६०९ ॥

अव नँद गाइ लेहु सँभारि।
जो तुम्हारैं आनि विलमे, दिन चराई चारि॥
दूध दही खवाइ कीन्हे, वड़े अति प्रतिपारि।
ये तुम्हारे गुन हृदय तैं, डारिहै न विसारि॥
मातु जसुदा द्वार ठाढ़ी, चलै आँसू ढारि।
कह्यौ रहियौ सुचित सौं, यह ज्ञान गुर उर धारि॥
कौन सुत, को पिता माता, देखि हृदै विचारि।
'सूर' के प्रभु गवन कीन्हौ, कपट कागद फारि॥ २९९१ ॥

राग सोरठ ॥ ३६१० ॥

जवही रथ अक्रूर चढ़े।
तव रसना हरि नाम भाषि कै, लोचन नीर वढे॥
महरि पुत्र कहि सोर लगायौ तरु ज्यौ धरनि लुटाइ।
देखति नारि चित्र सी ठाढी, चितये कुँवर कन्हाइ॥
इतने हि मैं सुख दिम्रौ सवनि कौं, दीन्ही अवधि वताइ।
तनक हँसे, हरि मन जुवतिन कौं, निठुर ठगौरी लाइ॥
वोलति नहीं रही सव ठाढी, स्याम ठगी व्रजनारि।
'सूर' तुरत मधुवन पग धारे, धरनी के हितकारी॥ २९९२ ॥

राग विहागरौ ॥ ३६११ ॥

चलत हरि फिरि चितये व्रज पास।
इतनोहि धीरज दियौ सवनि कौं, गए अवधि दै आस॥
नदहिं कह्यौ तुरत तुम आवहु, ग्वाल सखा लै साथ।
माखन, मधु मिष्ठान महर लै, दियो अक्रूर कै हाथ॥
आतुर रथ हाँक्यौ मधुवन कौं, व्रजजन भए अनाथ।
'सूरदास' प्रभु कस निकंदन, देवनि करन सनाथ॥ २९९३ ॥

राग नट ॥ ३६१२ ॥

रही जहाँ सो तहाँ सव ठाढी।
हरि के चलत देखियत ऐसी, मनहु चित्र लिखि काढी॥
सूखे वदन, स्रवति नैननि तैं, जलधारा उर वाढी।
कधनि वाँह धरे चितवति मनु, द्रुमनि वेलि दव दाढी॥
नीरस करि छाँड़ी सुफलकसुत, जैसे दूध विनु साढी।
'सूरदास' अक्रूर कृपा तैं, सही विपति तन गाढ़ी॥ २९९४ ॥

राग सारग ॥ ३६१३ ॥

चलतहुँ फेरि न चितये लाल।
नीकै करि हरि मुख न विलोक्यौ, यहै रह्यौ उर साल॥

रथ बैठे दूरिहि तैं देखैं, अंबुजनैन विसाल।
मीडत हाथ सकल गोकुल जन, विरह विकल वेहाल॥
लोचन पूरि रहे जल महियाँ, दृष्टि परी जिहिं काल।
'सूरदास' प्रभु फिरि नहिं चितयौ, अंबुज-नैन-रसाल॥ २६६५॥

राग विलावल ॥ ३६१४ ॥

विछुरत श्री ब्रजराज आजु, इनि नैननि की परतीति गई।
उड़ि न गए हरि संग तबहिं तैं, ह्वै न गए सखि स्याम मई॥
रूप रसिक लालची कहावत, सो करनी कछुवै न भई।
साँचे क्रूर कुटिल ये लोचन, वृथा मीन छवि छीन लई॥
जल काहैं जल मोचत, सोचत, समौ गए तैं मूल नई।
'सूरदास' याही तैं जड़ भए, पलकनिहूँ हठि दगा दई॥ २६६६॥

राग धनाश्री ॥ ३६१५ ॥

केतिक दूरि गयौ रथ माई।
नदनँदन के चलत सखी हौं, हरि कौं मिलन न पाई॥
एक दिवस हौ द्वार नद के, नाहिं रहति विनु आई।
आजु विधाता मति मेरी हरी, भवन काज विरमाई॥
जव हरि ऐसौ साज करत हे, काहु न वात चलाई।
ब्रज ही वसत विमुख भइ हरि सौं, सूल न उर तैं जाई॥
सोवत ही सुपने की संपति, रही जियहिं सुखदाई।
'सूरदास' प्रभु विनु ब्रज वसिवौ, एकौ पल न सुहाई॥ २६६७॥

राग मलार ॥ ३६१६ ॥

सखी री वह देखौ रथ जात।
कमलनयन काँधे पर, न्यारौ पीत वसन फहरात॥
लये जात जव ओट अटनि की, वचनहीन कृत गात।
छिति परकप, कनक कदली कहँ, मानौ पवन विहात॥
मधु छँडाइ सुफलकसुत लै गए, ज्यौं माखी विललात।
'सूर' सुरूप-नीर-दरसन विनु, मनहु मीन जल जात॥ २६६८॥

राग सारंग ॥ ३६१७ ॥

पाछैं ही चितवत मेरे लोचन, आगे परत न पायँ।
मन लै चली माधुरी मूरति, कहा करौ ब्रज जायँ॥
पवन न भई पताका अंवर, भई न रथ के अंग।
धूरि न भई चरन लपटाती, जाती उहँ लौ संग॥
ठाढी कहा, करौ मेरी सजनी, जिहि विधि मिलहिं गुपाल।
'सूरदास' प्रभु पठै मधुपुरी, मुरझि परी ब्रजवाल॥ २६६६॥

राग सारंग ॥ ३६१८ ॥

कान्ह घौं हम सौं कहा कह्यौ।
निकसे वचन सुनाइ सखी री, नाही परत रह्यौ॥
मैं मतिहीन मरम नहिं जान्यौ, भूली मथति दह्यौ।
कीजै कहा कहौ अब लै निधि, दूत दूरि निवह्यौ॥

सवै अजान भई तिहिं औसर, काहूँ रथ न गह्यौ।
'सूरदास' प्रभु वृथा लाज करि, दुसह वियोग लह्यौ॥ ३००० ॥

राग नट ॥ ३६१९ ॥

तव न बिचारी ही यह वात।
चलत न फेंट गही मोहन की, अव ठाढ़ी पछितात॥
निरखि निरखि मुख रही मौन ह्वै, थकित भई पलपात।
जव रथ भयौ अदृस्य अगोचर, लोचन अति अकुलात॥
सवै अजान भई उहिं औसर, ढिगहिं जसोमति मात।
'सूरदास' स्वामी के विछुरैं कौड़ी भर न बिकात॥ ३००१ ॥

राग सारंग ॥ ३६२० ॥

अव वे वातैं ईं ह्याँ रही।
मोहन मुख मुसकाइ चलत कछु, काहूँ नही कही॥
सखि सुलाज वस समुझि परस्पर, सन्मुख सूल सही।
अव वे सालति है उर महियाँ, कैसैंहु कढति नही॥
ज्यौ त्यौ सल्य करन कौ सजनी, काहैं फिरति वही।
हरि चुवक जहँ मिलहिं 'सूर' प्रभु मो लै जाहु तही॥ ३००२ ॥

राग नट ॥ ३६२१ ॥

मेरी वज्र की छाती किन, विदरि विदरि जाति।
हरिहिं चलत चितवति मग ठाढी पछिताति॥
विद्यमान विरह सूल, उर मै जु समाति।
प्राननाथ विछुरे सखि, जीवत न लजाति॥
ज्यौ ठग निधि हरत, रच गुर दै किहुँ भाँति।
इमि फिरि मुसकानि 'सूर', मनसा गई माति॥ ३००३ ॥

राग गौरी ॥ ३६२२ ॥

आजु रैनि नहिं नीद परी।
जागत गिनत गगन के तारे, रसना रटत गोविंद हरी॥
वह चितवनि, वह रथ की वैठनि, जब अक्रूर की वाँहँ गही।
चितवति रही ठगी सी ठाढी, कहि न सकति कछु काम दही॥
इते मान व्याकुल भइ सजनी, आरजपंथहुँ तै विडरी।
'सूरदास' प्रभु जहाँ सिधारे, कितिक दूर मथुरा नगरी॥ ३००४ ॥

राग सारंग ॥ ३६२३ ॥

हरि विछुरत फाट्यौ न हियौ।
भयौ कठोर वज्र तै भारी, रहि कै पापी कहा कियौ॥
घोरि हलाहल सुनि री सजनी, तिहि अवसर काहै न पियौ।
मन सुधि गई सँभार न तन की पूरौ दांव अक्रूर दियौ॥
कछु न सुहाइ गई निधि जव तै, भवन काज कौ नेम लियौ।
निसिदिन रटत 'सूर' के प्रभु विनु मरिवौ, तऊ न जात जियौ॥ ३००५ ॥

राग नट ॥ ३६२४ ॥

हरि विछुरत प्रान निलज्ज रहे री।
पिय समीप सुख की सुधि आवै, सूल सरीर न जात सहे री॥

निसि बासर ठाढी मग जोवति, ये दुख हम न सुने न चहे री।
गवन करत देखन नहिं पाए नैन नीर भरि बहसि बहे री॥
वै बातैं बसि रही हिये मैं, उलटि अवधि के बचन कहेरी।
'सूर' स्याम बिनु परब बिरह बस, मानहुँ रबि ससि राहु गहे री॥३००६॥

राग अड़ानी ॥ ३६२५ ॥

सुँदर बदन सुख सदन स्याम कौ, निरखि नैन मन थाक्यौ।
बारक इनि बीथिन ह्वै निकसे, उझकि झरोखा झाँक्यौ॥
उन इक कछू चतुरई कीन्ही, गैंद उछारि जु ताक्यौ।
बारौ लाज भई मोहिं बैरिनि, मैं गँवारि मुख ढाँक्यौ॥
कछु करि गये तनिक चितवनि मैं, रहत प्रान मद छाक्यौ।
'सूरदास' प्रभु सरबस लै गये, हँसत हँसत रथ हाँक्यौ॥ ३००७ ॥

राग सारंग ॥ ३६२६ ॥

री मोहि भवन भयानक लागै, माई स्याम बिना।
काहि जाइ देखौं भरि लोचन, जसुमति कैं अँगना॥
को संकट सहाइ करिबै कौं, मेटै बिघन घना।
लै गयौ क्रूर अक्रूर साँवरौ, ब्रज कौ प्रानधना॥
काहि उठाइ गोद करि लीजै, करि करि मन मगना।
'सूरदास' मोहन दरसन बिनु, सुख संपति सपना॥ ३००८ ॥

राग मलार ॥ ३६२७ ॥

सब कोउ कहत गुपाल दोहाई।
गोरस बेचन गई ब्रजा की सौ, मथुरा तैं आई॥
जब तैं गए मोहन सु कंस सुनि, जियत मृतक करि लेखौं।
जागत सोवत असुर दिवस निसि, कृष्न कला सब देखौं॥
करत अवज्ञा प्रजा लोग सब, नृप की सक न मानैं।
ठकुराइत कैसौ गिरिधर की, 'सूरदास' जन जानैं॥ ३००९ ॥

राग धनाश्री ॥ ३६२८ ॥

है कोउ ऐसी भाँति दिखावै।
किंकिनि सब्द चलत धुनि, रुनझुन ठुमुकि ठुमुकि गृह आवै॥
कछुक बिलास बदन की सोभा, अरुन कोटि गति पावै।
कंचन मुकुट कंठ मुक्तावलि, मोर पंख छवि छावै॥
धूसर धूरि अंग अँग लीन्हे, ग्वाल बाल सँग लावै।
'सूरदास' प्रभु कहति जसोदा, भाग बड़े तैं पावै॥३०१०॥

राग सोरठ ॥ ३६२९ ॥

कहा हौं ऐसे ही मरि जैहौं।
इहिं आँगन गोपाल लाल कौं, कबहुँ कि कनिया लैहौं॥
कब वह मुख बहुरी देखौंगी, कह वैसो सचु पैहौं।
कब मोपै माखन माँगैं गे, कब रोटी धरि दैहौं॥
मिलन आस तन प्रान रहत है, दिन दस मारग ज्वैहौं।
जौं न 'सूर' आइहैं इते पर, जाइ जमुन धँसि लैहौं॥ ३०११ ॥

राग गुंड मलार ॥ ३६३० ॥

मनहिं मन अक्रूर सोच भारी।
जननि कौ दुखित करि इनहिं मैं लै चल्यौ, भई व्याकुल सवै घोप नारी॥
अतिहिं ये बाल हैं भोजी नवनीत के जानि लीन्हे जात दनुज पासा।
कुवलया, मल्ल मुप्टिकऽरु चानूर से, कियौ मैं कर्म यह अति उदासा॥
फेरि लै जाउँ व्रज स्याम वलराम कौ, कंस लै मोहिं तव जीव मारै॥
'सूर' पूरन ब्रह्म निगम नाहीं गम्य, तिनहिं अक्रूर मन यह विचारै॥
॥ ३०१२ ॥

राग गुंडमलार ॥ ३६३१ ॥

इहै सोच अक्रूर पर्यौ।
लिये जात इनकौं मैं मथुरा, कंसहिं महा डर्यौ॥
धिक मोकौं, धिक मेरी करनी, तवही क्यौं न मर्यौं।
मैं देखौं इनकौं वह हतिहै, अति व्याकुल हहर्यौ॥
इहिं अंतर जमुना तट आए, स्यदन कियौ खर्यौ।
'सूरदास' प्रभु अंतरजामी, भक्त सँदेह हर्यौ॥ ३०१३ ॥

राग धनाश्री ॥ ३६३२ ॥

सुफलकसुत दुख दूरि कर्यौ।
जमुना तीर कियौ रथ ठाढ़ौ आपुहिं प्रगट हर्यौ॥
तिनहिं कह्यौ तुम स्नान करौ ह्याँ हमहिं कलेऊ देहु।
भूख लगी भोजन हम करिहैं, नेम सारि तुम लेहु॥
तव लौं नंद, गोप सव आवैं, संग मिले सव जैहैं।
'सूरदास' प्रभु कहत हैं पुनि पुनि; तव अतिही सुख पैहैं॥ ३०१४ ॥

राग गुंडमलार ॥ ३६३३ ॥

सुनत अक्रूर यह वात हरपे।
स्याम वलराम कौं तुरत भोजन दियौ, आपु असनान कौं नीर परसे॥
गए कटि नीर लौं नित्य संकल्प करि, करत अस्नान इक भाव देख्यौ।
जैसेइ स्याम वलराम स्यंदन चढ़े, वहै छवि कुंभरस माझ पेख्यौ॥
चकित भये कवहुँ तीर पुनि जल निरखि, घोप अक्रूर जिय भयौ भारी।
'सूर' प्रभु चरित मैं थकित अतिही भयौ, तहाँ दरसि नित-थल-विहारी॥
॥ ३०१५ ॥

राग कान्हरौ ॥ ३६३४ ॥

कमल पर वज्र धरति उर लाइ।
राजति रमा कुंभरस अंतर, पति निज थल जल साइ॥
वैनतेय संपुट सनकादिक, जय अरु विजय सखाइ।
औसर-वाग-विसारद नारद, हाहा जित गुन गाइ॥
कनकदंड सारंग विविध रव, निगम सिद्ध सुर ध्याइ॥
तिनके चरनसरोज 'सूर' दरसन, गुरु कृपा सहाइ॥ ३०१६ ॥

राग धनाश्री ॥ ३६३५ ॥

हरप अक्रूर हिरदै न माइ।
नेम भूल्यौ, ध्यान स्याम वलराम कौ, हृदै आनंद सुख कहि न जाइ॥

ब्रह्म पूरन अकल, कला तैं रहित ये, हरन करन समर्थ और नाहीं।
कहा वपुरा कंस मिट्यौ तव मन सस, करत है गंस निरवंस जाही॥
हाँकि रथ चलौ चढ़ि, विलम अव कहा प्रभु, गयौ संदेह अक्रूर जी कौ।
नंद उपनंद सँग ग्वाल वहु भार लै, जाइ स्यंदन मिले 'सूर' पी कौ॥
॥ ३०१७ ॥

राग कल्यान ॥ ३६३६ ॥

वार वार स्याम अक्रूरहिं गानैं।
अवहीं तुम हरष भए, अवही मन मारि रहे, चले जात रथहिं वात वूझत है वानैं॥
कही नही साची सो हमसौ जनि गोप करौ, सुनिकै अक्रूर विमल अस्तुति मुख भानैं।
'सूरज' प्रभु गुन अथाह, धनि धनि श्री प्रिया नाह, निगम कौ अगाह, सहस आनन नहिं
जानैं॥ ३०१८ ॥

राग विलावल ॥ ३६३७ ॥

वार वार मोसौं कह वूझत, तुम परब्रह्म गुसाईं।
तुम हरता करता एकै हौ, अखिल भुवन के साईं॥
कहा मल्ल चानूर कुवलया, त्रास नही तिन नैंकौ।
'सूरदास' प्रभु कंस निपातहु, गहरु न करौ वैसैं कौ॥ ३०१९ ॥

राग धनाश्री ॥ ३६३८ ॥

वूझत हैं अक्रूरहिं स्याम।
तरनि किरनि महलनि पर झाईं, इहै मधुपुरी नाम॥
स्रवननि सुनत रहत है जाकौं, सो दरसन भए नैन।
कंचन कोट कँगूरनि की छवि, मानौ वैठे मैन॥
उपवन वन्यौ चहूँधा पुर के, अतिही मोकौं भावत।
'सूर' स्याम वलरामहिं पुनि पुनि, कर पल्लवनि दिखावत॥ ३०२० ॥

राग कल्यान ॥ ३६३९ ॥

वार वार वलराम को, मधुपुरी वतावत।
छज्जनि महलनि देखि कैं, मन हरष वढावत॥
जन्मथान जिय जानि कैं, तातैं सुख पावत।
वन उपवन छाये सघन, रथ चढे जनावत॥
नगर सोर अनकत स्रवन, अति रुचि उपजावत।
सुनत सव्द घरियार को, नृप द्वार वजावत॥
वरन वरन मंदिर वने, लोचन ठहरावत।
'सूरज' प्रभु अक्रूर सौं कहि देखि सुनावत॥ ३०२१ ॥

राग कल्यान ॥ ३६४० ॥

श्री मथुरा ऐसी आजु वनी।
जैसैं पति कौ आगम सुनि कैं, सजति सिंगार धनी॥
कोट मनौ कटि कसी किंकिनी, उपवन वसन सुरंग।
भूषन भवन विचित्र देखियत, सोभित सुंदर अंग॥
सुनत स्रवन घरियार घोर धुनि, पाइनि नूपुर वाजत।
अति संभ्रम अंचल चंचल गति, धामनि धुजा विराजत॥

ऊँच अटनि पर छत्रनि की छवि, सीसफूल मनौ फूली।
कनक कलस कुच प्रगट देखियत, आनँद कंचुकि भूली॥
विद्रुम फटिक रचित परदनि पर, जालरंध्र की रेख।
मनहु तुम्हारे दरसन कारन, भूले नैन निमेष॥
चित दै अवलोकहु नँदनदन, पुरी परम रुचि रूप।
'सूरदास' प्रभु कंस मारिकै, होहु इहाँ के भूप॥ ३०२२॥

राग कल्यान ॥ ३६४१ ॥

मथुरा हरषित आजु भई।
ज्यौं जुवती पति आवत सुनि कै पुलकित अंग मई॥
नवसत साजि सिंगार सुंदरी, आतुर पंथ निहारति।
उड़ति धुजा तनु सुरत विसारे अंचल नहीं सँभारति॥
उरज प्रगट महलनि पर कलसा, लसति पास वन सारी।
ऊँचे अटनि छाज की सोभा, सीस उचाइ निहारी॥
जालरंध्र इकटक मग जोवति, किंकिनि कंचन दुर्ग।
वेनी लसित कहाँ छवि ऐसी, महलनि चित्रे उर्ग॥
वाजत नगर वाजते जहँ तहँ, और वजत घरियार।
'सूर' स्याम वनिता ज्यौं चचल, पग नूपुर झनकार॥ ३०२३॥

राग गुंड मलार ॥ ३६४२ ॥

देखि रथ चढ़े वलराम अरु स्याम कौं, गए अक्रूर तिन लए आए॥
कंस के दूत जहँ तहाँ तै देखि कै, गए नृप पास आतुर सुनाए।
नंद के वाल गोपाल वलराम दोउ, सुनत यह सुभट निकटहि वुलाए॥
उठ्यौ दलकारि कर ढाल खड्गहि लिए, रंग रनभूमि कै महल वैठौ।
कुवलया मल्ल मुष्टिकऽरु चानूर सौं, होहु तुम सजग कहि सवनि ऐंठौ॥
एक पठवत, एक कहत है आइ कै, एक सौं कहत धौं कहाँ आए।
'सूर' प्रभु सहर पैठार पहुँचे आए, धनुष के पास जोधा रखाए॥
॥ ३०२४॥

राग धनाश्री ॥ ३६४३ ॥

मथुरा पुर मे सोर पर्‌यौ।
गरजत कंस वंस सव साजे, मुख कौ नीर हर्‌यौ॥
पीरौ भयौ, फेफरी अधरनि, हिरदै अतिहि डर्‌यौ।
नंद महर के सुत दोउ सुनि कै, नारिनि हर्ष भर्‌यौ॥
कोउ महलनि पर कोउ छज्जनि पर, कुल लज्जा न कर्‌यौ।
कोउ धाई पुर गलिन गलिन ह्वै, काम धाम विसर्‌यौ॥
इंदु वदन नव जलद सुभग तनु, दोउ खग नयन कर्‌यौ।
'सूर' स्याम देखत पुरनारी, उर उर प्रेम भर्‌यौ॥ ३०२५॥

राग गौरी ॥ ३६४४ ॥

ढोटा कौन कौ यह री।
स्रुतिमंडल मकराकृत कुंडल कंठ कनक दुलरी॥
घन तन स्याम, कमल दल लोचन, चारु चपल तुल री।
इंदुवदन, मुसुकानि माधुरी, अलकै अलिकुल री॥

उर मुक्ता की माल, पीत पट, मुरली सुर गवरी।
पग नूपुर मनि जटित रुचिर अति, कटि किंकिनि रव री॥
बालक-वृंद-मध्य राजत है, छवि निरखत भुल री।
सोइ सजीवनि 'सूरदास' की महरि रहे उर री॥ ३०२६ ॥

राग गौरी ॥ ३६४५ ॥

ढोटा नंद कौ यह री।
नाहिं जानति बसत ब्रज मैं, प्रगट गोकुल री॥
धरयौ गिरिवर बाम कर जिहिं, सोइ है यह री।
दैत्य सब इनही सँहारे, आपु-भुज-बल री॥
ब्रजघरनि जो करत चोरी, खात माखन री।
नंदघरनी जाहिं बाँध्यौ, अजिर ऊखल री॥
सुरभि ठान लिये बन तैं आवत, सबहि गुन इन री।
'सूर' प्रभु ये सबहि लायक, कंस डरैं जिन री॥ ३०२७ ॥

राग गौरी ॥ ३६४६ ॥

जसुमति कौ सुत यहै कन्हाई। इनहिं गुवर्धन लियौ उठाई॥
इंद्र परयौ इनही कैं पाई। इनही की ब्रज चलति बडाई॥
बकी पियावन इनही आई। जोजन एक परी मुरझाई॥
इनहि तृना लै गयौ उड़ाई। पटक्यौ द्वार सिला पर आई॥
केसी असुर इनहि सहारयौ। अघा बकासुर इनही मारयौ॥
स्याम बरन तन, पीत पिछौरी। मुरली राग बजावत गौरी॥
देखि रूप चक्रित भई बाला। तन की सुधि न रही तिहिं काला॥
'सूर' स्याम कौ जानत नीकैं। मगन भई, पूछति सुख जी कैं॥ ३०२८ ॥

राग रामकली ॥ ३६४७ ॥

रथ पर देखि हरिबलराम।
निरखि कोमलचारु मूरति, हृदय मुक्ता दाम॥
मुकुट कुंडल पीत पट छवि, अनुज भ्राता स्याम।
रोहिनीसुत एक कुंडल, गौर तनु सुखधाम॥
जननि कैसैं धरयौ धीरज, कहति सब पुरबाम।
बोलि पठयौ कंस इनकौं, करैं धौं कह काम॥
जोरि कर विधि सौं मनावतिं, असिप दै दै नाम।
न्हात बार न खसै इनकौ, कुसल पहुँचैं धाम॥
कंस कौ निरबस ह्वै है, करत इन पर ताम।
'सूर' प्रभु नँदसुवन दोऊ हंसबाल उपाम॥ ३०२९ ॥

राग मलार ॥ ३६४८ ॥

देखु वै आवत है बनमाली।
घन तन स्याम सुदेस पीत पट, सुंदर नैन बिसाली॥
जिन पहिलैं पलना पौढे, पय पिवत पूतना घाली।
अघ बक बच्छ अरिष्ट केसि मथि, जल तैं काढयौ काली॥
जिन हति सकट प्रलंब तृनाबृत, इंद्र प्रतिज्ञा टाली।
एते पर यह समुझत नाही, कपटी कंस कुचाली॥

अब विधुवदन विलोकि सुलोचन, स्रवन सुनत ही आली।
धन्य सु गोकुलनारि 'सूर' प्रभु प्रगट प्रीति प्रतिपाली॥ ३०३० ॥

राग भैरव ॥ ३६४९ ॥

एइ माधौ जिन मधु मारे री।
जन्मत ही गोकुल सुख दीन्हौ, नंद दुलार वहुत सारे री॥
केसी तृनावर्त, वृषभासुर, हती पूतना जव वारे री।
इंद्र कोप वरषत गिरि धारयौ, महा प्रलय वज्र के टारे री॥
वल समेत नृप कंस वुलाए, रचे रंग रन अति भारे री।
'सूर' असीस देति सव सुदरि, जीवहि अपनी माँ-प्यारे री॥ ३०३१ ॥

राग विहागरौ ॥ ३६५० ॥

भए सखि नैन सनाथ हमारे।
मदन गोपाल देखतहिं सजनी, सव दुख सोक विसारे॥
पठये हे सुफलकसुत गोकुल, लैन सो इहाँ सिधारे।
मल्ल युद्ध प्रति कंस कुटिल मति, छल करि इहाँ हँकारे॥
मुष्टिक अरु चानूर सैल सम, सुनियत है अति भारे।
कोमल कमल समान देखियत ,ये जसुमति के वारे॥
होवे जीति विधाता इनकी, करहु सहाइ सवारे।
'सूरदास' चिर जियहु दुष्ट दलि, दोऊ नंददुलारे॥ ३०३२ ॥

राग मारू ॥ ३६५१ ॥ अक्रूर प्रत्यागमन (संक्षिप्त)

जमुन तट आइ अक्रूर न्हाए।
स्याम वलराम कौ रूप जल मै निरखि, वहुरि रथ देखि अचरज पाए॥
किधौ यह विंव प्रतिविंव जल देखियत, किधौ निज रूप दोउ है सुहाए।
चकित ह्वै नीर मै वहुरि वुड़की दई, सहित सुर सिद्ध तहँ दरस पाए॥
दोउ कर जोरि विनय वहु विधि करी, लियौ जल रूप तव हरि दुहाई।
निकसि कै नीर तै तीर आयौ वहुरि ताहि ढिग वोलि, वोले कन्हाई॥
गति तुम्हारी न जानै कोऊ तुम विना, राखि प्रभु राखि मैं सरन आयौ॥
हरि कह्यौ चलौ मथुरापुरी देखियै, सहित अक्रूर पुनि तहाँ आए।
'सूर' प्रभु कियौ विश्राम निसि वसि तहाँ, वोधि अक्रूर निज गृह पठाए॥ ३०३३॥

राग भैरव ॥ ३६५२ ॥ श्रीकृष्ण का मथुरा आगमन

भोर भयौ जागे नँदलाल।
नँदराइ निरखत मुख हरषे, पुनि आए सव ग्वाल॥
देखि पुरी अति परम मनोहर, कंचन कोट विसाल।
कहन लगे सव 'सूरज' प्रभु सौं, होहु इहाँ भूपाल॥ ३०३४ ॥

राग परज ॥ ३६५३ ॥

हरि वल सोभित इहि अनुहार।
ससि अरु सूर उदै भए मानौ, दोऊ एकहिं वार॥
ग्वाल वाल सँग करत कुतूहल, गवने पुरी मझार।
नगर नारि सुनि देखन धाईं, सुत पति, गेह विसार॥

उलटि अंग आभूषण साजत, रही न देह सँभार।
'सूरदास' प्रभु दरस देखि, भईं चकित करति विचार।। ३०३५ ।।

राग धनाश्री ।। ३६५४ ।।

वे देखौ आवत दोऊ जन।
गौर स्याम नट नील पीट पट, मनहुँ मिले दामिनि घन।।
लोचन बंक विसाल कमलदल, चितवत चितै हरत सबकौ मन।
कुंडल स्रवन कनक मनि भूषित जटिल लाल अति लोल मीन तन।।
चंदन चित्र विचित्र अंग पर, कुसुम सुवास धरे नँदनंदन।
वलि वलि जाउँ चलै जिहिं मारग, संग लगाइ लेत मधुकर गन।।
धनि यह भूमि जहाँ पगु धारे, जीतहिंगे रिपु आज रंग रन।
'सूरदास' वे नगर नारि सब लेतिं वलाइ वारि अंचल सन।। ३०३६ ।।

राग रामकली ।। ३६५५ ।।   रजक वध

नृपतिरजक अंवरनृप धोवत।
देखे स्याम राम दोउ आवत, गर्व सहित तिन जोवत।।
आपुस ही मैं कहत हँसत है, प्रभु हिरदै एड सालत।
तनक तनक से ग्वाल छोहरनि, कंस अवहिं वधि घालत।।
तृनावर्त प्रभु आहि हमारौ, इनहीं मारयौ ताहि।
वहुत अजगरी इंहि करि राखी, प्रथम मारिहैं याहि।।
जोकौ नाम स्याम सोइ खोटौ, तैसेइ है दोउ वीर।
'सूर' नंद विनु पुत्र कहाए, ऐसे. जाए हीर।। ३०३७ ।।

राग विलावल ।। ३६५६ ।।

अंतरजामी जानि कै, सव ग्वाल वुलाए।
परखि लिए पाछैन कौ, तेऊ सव आए।।
सखा वृंद लै तहँ गए, वूझन तिंहि लागे।
नृपति पास हम जाहिंगे, अंवर कछु माँगे।।
हँसे स्याम मुख हेरि कै, धोवत गरवानौ।
मारत मारत सात के, दोउ हाथ पिरानौ।।
अवही दैहैं आइ कै, कछु हम लै रैहै।
पहिरावनि जो पाइ हैं, सो तुमहूँ दैहैं।।
की पहिलै ही लेहुगे, हम इहौ विचारैं।
देहु वहुत गुन मानिहै, आधीन तुम्हारै।।
मारु मारु कहि गारि दै, धिक गाइ चरैया।
कंस पास ह्वै आइयै, कामरी आढ़ैया।।
वहुरि अरस तै आइकै, तव अंवर लीजौ।
धोइ धरी करि राखिहै, भावै सो कीजौ।।
अरस नाम है महल कौ, जह राजा वैठे।
गारी दै दै सव उठे, भुज निज कर ऐठे।।
पहिरावनि कौ जुरि चले, पैहौ मल्लनि सौ।
'सूर' अजा के भोग ये, सुनि लेहु न मोसौ।। ३०३८ ।।

राग बिलावल ॥ ३६५७ ॥

हम माँगत है सहज सौ, तुम अति रिस कीन्हौ।
कहा करैं तौ जाहिंगे, तुम हमहि न दीन्हौ॥
रिस करियत क्यौ सहजही, भुज देखत ऐसे।
करि आए नट स्वाँग से, मोकौ तुम वैसे॥
हमहिं नृपति सौ नात है, तातै हम माँगै।
वसन देहु हमकौ सवै, कहिहै नृप आगै॥
नृप आगे लौ जाहुगे, बीचहिं मरि जैहौ।
नैंकु जियन की आस है, ताहू विनु ह्वैहौ॥
नृप काहे कौ मारिहै, तुमही अब मारत।
गहरु करत हमकौ कहा, मुख कहा निहारत॥
'सूर' दुहुनि मै मारिहौ, अति करत अचगरी।
वसत तहाँ बुधि तैसियै, वह गोकुल नगरी॥ ३०३६ ॥

राग बिलावल ॥ ३६५८ ॥

स्याम गह्यौ भुज सहजही, क्यौ मारत हमकौ।
कस नृपति की सौह है, पुनि पुनि कहि तुमकौ॥
पहुँचा कर सौ नहि रहे, जिय सकट मेल्यौ।
डारि दियौ तिहिं सिला पर, बालक ज्यौ खेल्यौ॥
तुरत गयौ उडि स्वर्ग कौ, ऐसे गोपाला।
जनम मरन तै रहि गयौ, वह कियौ निहाला॥
रजक भजे सब देखिकै, नृप जाइ पुकारचौ।
'सूर' छोहरनि नद के, नृप सेठिहि मारचौ॥ ३०४० ॥

राग गौरी ॥ ३६५६ ॥

यह सुनि कै नृप त्रास भरचौ।
सवनि सुनाइ कही यह वानी, यह नदनद करचौ॥
मारौ स्याम राम दोउ भाई, गोकुल देउँ वहाइ।
आगै दै कै रजक मरायौ, स्वर्गहि देउँ पठाइ॥
दिन दिन इनकी करौ बड़ाई, अहिर गए इतराए।
तौ मै जौ वाही सौ कहिकै, उनकी खाल कढाइ॥
'सूर' कंस यह करत प्रतिज्ञा, त्रिभुवन नाथ कहाइ॥ ३०४१ ॥

राग बिलावल ॥ ३६६० ॥

रजक मारि हरि प्रथम ही नृप वसन लुटाए।
रंग रग बहु भाँति के, गोपनि पहिराऐ॥
आए नगर लगार कौ, सब बने बनाए।
इकटक रही निहार कै, तरुनिनि मन भाए॥
जैसी जाकै कल्पना, तैसेइ दोउ आए।
'सूर' नगर नर नारि के, मन चित्त चुराए॥ ३०४२ ॥

राग बिलावल ॥ ३६६१ ॥

एइ दोउ वसुदेव के ढोटा।
गौर स्याम नट नील पीट पट, कल हंसनि के जोटा॥

कुंडल एक वाम स्रुति जाकैं, सो रोहिनि को अंस।
उर वनमाल देवकी कौ सुत, जाहि डरत है कंस॥
लै राखे ब्रज सखा नंद गृह, बालक भेष दुराइ।
सम बल ये सिरात दृग देखत, अब प्रगटे हैं आइ॥
केसी, अघ, पूतना, निपाती, लीला गुननि अगाध।
'सूरदास' प्रभु प्रगट हरन खल, अभय करन सुर साध॥ ३०४३ ॥

राग रामकली ॥ ३६६२ ॥

एइ कहियत वसुदेव कुमार।
कंस त्रास मन मानि पठाए, कीन्हे नंद दुलार॥
प्रथम पूतना इनहि निपाती, काग मरत उठि भाज्यौ।
सकटा, तृना इनहिं सहारयौ, काली इनहिं निवाज्यौ॥
अघा, बका सहारन एई, असुर सँहारन आए।
'सूरज' प्रभु हित हेत भाव के, जसुमति बाल कहाए॥ ३०४४ ॥

राग नट ॥ ३६६३ ॥

वै है रोहिनीसुत राम।
गौर अंग सुरग लोचन, प्रलय जिनके ताम॥
एक कुंडल स्रवन धारी, धौत दरसी ग्राम।
नील अंबर अंग धारी, स्याम पूरन काम॥
महा जे खल तिनहुँ ते अति, तरत है इक नाम।
ब्रह्म पूरन सकल स्वामी, रहे ब्रज निज धाम॥
ताल वन इन वच्छ मारयौ, ब्रह्म पूरन काम।
'सूर' प्रभु आकरषि तातैं, सँकरषन है नाम॥ ३०४५ ॥

राग रामकली ॥ ३६६४ ॥

मुकुट सिर सुभ स्रवन कुंडल, करत पूरन काम॥
महा जे-खल तिनहुँ तैं अति, तरत है इक नाम।
ब्रह्म पूरन सकल स्वामी, रहे ब्रज निज धाम॥
नंद पितु माता जसोदा, बाँधि ऊखल दाम।
लकुट लै लै त्रास कीन्हौ, करयौ इन पर ताम॥
ताहि मान्यौ हेत करि, इन हँसति ब्रज की बाम।
'सूर' धनि नँद धन्य जसुमति, धन्य गोकुल ग्राम॥ ३०४६ ॥

राग मारू ॥ ३६६५ ॥

धनुपसाला चले नंदलाला।
सखा लिए संग प्रभु रंग नाना करत, देव नर कोउ न लखि सतत ख्याला॥
नृपति के रजत सौं भेंट मग में भई, कह्यौ दै बसन हम पहिरि जाही।
बसन ये नृपति के जासु की प्रजा तुम, ये वचन कहत मन डरत नाही॥
एक ही मुष्टिका प्रान ताके गए, लए सब बसन कछु सखानि दीन्हे।
आइ दरजी गयौ बोलि ताकौं लयौ, सुभग अँग साजि उन विनय कीन्हे॥
पुनि सुदामा कह्यौ गेह मम अति निकट, कृपा करि तहाँ हरि चरन धारे।
धोइ पद कमल पुनि हार आगैं धरे, भक्ति दै, तासु सब काज सारे॥

लिए चंदन बहुरि आनि कुबिजा मिली, स्याम अँग लेप कीन्हौ बनाई।
रीझि तिहि रूप दियौ, अंग सूधौ कियौ, बचन सुभ भाषि निज गृह पठाई॥
पुनि गए तहाँ जहँ धनुष, बोले सुभट, हौस जनि मन करौ बनविहारी।
'सूर' प्रभु छुवत धनु टूटि धरनी परयौ, सोर सुनि कंस भयौ भ्रमित भारी॥
॥ ३०४७ ॥

राग गुंडमलार ॥ ३६६६ ॥

स्याम बलराम गए धनुषसाला।
लियौ रथ तैं उतरि रजक मारयौ जहाँ, कंदरा तैं निकसि सिंघ बाला॥
नंद उपनंद सँग सखा इक थल राखि, कोउ बने आवैं वीर जोटा।
असुर सैना खरे देखिकैं वै डरे, धनुष चहुँ पास रिपु घटा घोटा॥
घेरि लीन्हे स्याम बलराम कौ तहाँ, बोलि सब उठे हरि धनुप तोरौ।
'सूर' तुमकौ सुने भुजनि बल चंड अति, हँसत हरि कह्यौ यह बैर जोरौ॥
॥ ३०४८ ॥

राग विहागरौ ॥ ३६६७ ॥

हमकौ नृप इहिं हेत बुलाए?
कहाँ धनुप, कहँ हम अति बालक, कहि आचरज सुनाए॥
ठाढ़े सूर वीर अवलोकत, तिनिसौं कहौ न तोरैं।
हमसौं कहौ खेल कछु खेलैं, यह कहि कहि मुख मोरैं॥
कंस एक तहँ असुर पठायौ, यहै कहत वह आयौ।
बनैं धनुप तोरैं अब तुमकौं, पाछैं निकट बुलायौ॥
बालक देखि गहन भुज लाग्यौ, ताहि तुरत ही मारयौ।
तोरि कोदंड मारि सब जोधा, तब बल भुजा निहारयौ॥
जाकैं अस्त्र तिनहिं तेहिं मारयौ, चले सामुही खोरी।
'सूर' कूबरी चदन लीन्हे, मिली स्याम कौ दौरी॥ ३०४९ ॥

राग धनाश्री ॥ ३६६८ ॥

प्रभु तुमकौ मैं चंदन ल्याई।
गह्यौ स्याम कर अपने सौं, लिए सदन कौं आई॥
धूप दीप नैवेद साजि कै, मंगल करे बिचारि।
चरन पखारि लियौ चरनोदक, धनि धनि कहि दैतारि॥
मेरी जनम कलपना ऐसी, चंदन परसौं अंग।
'सूर' स्याम जन के सुखदायक, बँधे भाव-रजु-रंग॥ ३०५० ॥

राग गुंडमलार ॥ ३६६९ ॥

कूबरी नारि सुंदरी कीन्ही।
भाव मैं बास बिनु भाव नहिं पाइयै, जानि हिरदै हेत मानि लीन्ही॥
ग्रीव कर परसि पग पीठि तापर दियौ, उरबसी रूप पटतरहिं दीन्ही।
चित वाकैं इहै स्याम पति मिलैं मोहिं, तुरत सोई भइ नहिं जाति चीन्ही॥
ताहि अपनी करी चले आगैं हरी, गए जहँ कुबलया मल्ल द्वारैं।
बीच माली मिल्यौ, दौरि चरननि परयौ, पुहुप माला स्याम कंठ धारे॥

कुसल प्रस्नहि कहे, तुरत मनकाम लहि, भक्तवत्सल नाम भक्त गावैं।
ताहि सुख दै चलै, पौरिही ह्वै खरे, 'सूर' गजपाल सौं कहि सुनावैं॥
॥ ३०५१ ॥

राग कान्हरौ ॥ ३६७० ॥

सुनिहि महावत वात हमारी।
वार वार संकर्पन भाषत, लेत नहिं ह्याँ तैं गज टारी॥
मेरौ कह्यौ मानि रे मूरख, गज समेत तोहि डारौं मारी।
द्वारैं खरे रहे हैं कवके, जनि रे गर्व करहि जिय भारी॥
न्यारौ करि गयंद तू अजहूँ, जान देहि कै आपु सँभारी।
'सूरदास' प्रभु दुष्टनिकदन, धरनी भार उतारनकारी॥ ३०५२ ॥

राग गुडमलार ॥ ३६७१ ॥

वार वार सकरपन भाषत, वारन वनि वारन करि न्यारौ।
वार न छाँड़ि देत किन हमकौ, तू जानत मतंग मतवारौ॥
वाहिर खरे वात सुनि मेरी, त्रिभुवनपति जनि जानहि वारौ।
वादहिं मरि जैहै पलभीतर, कहे देत नहिं दोप हमारौ॥
वात सुनत रिस भरचौ महावत, तुमहिं कहा इतनौ रे गारौ।
वादत वड़े 'सूर' की नाईं, अवहि लेत हौं प्रान तिहारौ॥ ३०५३ ॥

राग गुंडमलार ॥ ३६७२ ॥

वार नहिं करो वारन सहित फटकिहौ, वावरे वात कहि मुख सँभारौ।
वादि मरि जाइगौ, वार नहि छाँड़ि दै, वदत वलराम तोहिं वार वारौ॥
वात मेरी मानि गर्व वोलै कहा, काल किन देखि, इतरात का रे।
वाम कर गहिं मुड डारिहौ अमरपुर, हाँक दै तुरत गज कौ हँकारे॥
वाज सौ टूटि गजराज हाँकत परचौ, मनौ गिरि चरन धरि लपकि लीन्हौं।
वार वाँधे वीर चहुँघा देखही वज्र सम थाप वल कुंभ दीन्हौ॥
कूक पारचौ लपकि घीच गज डारचौ मद, गड मधि रध्र झरिवौ सुखान्यौ।
क्रोध गजपाल कै ठठकि हाथी रह्यौ, देत अकुस मसकि कह सकान्यौ॥
वहुरि तातौ कियौ, डारि तिन पै दियौ, आड लपटे मुतहु नद केरे।
'सूर' प्रभु स्याम वलराम दोउ दुहूँघा, वीच करि नाग इत उतहिं टेरे॥
॥ ३०५४ ॥

राग गुंडमलार ॥ ३६७३ ॥

क्रोध गजराज, गजपाल कीन्हौ।
गरजि घुमरात मदभार गंडनि स्रवत, पवन तैं वेग तिहि समय चीन्हौ॥
चक्र सौं भ्रमत चकित भए देखि सव, चहुँघा देखियै नंदढोटा।
चमकि गए वीर सव चकाचौंधी लगी, चितै डरपे असुर घटा घोटा॥
नील अवल धौल वरन वलराम वनि, पीत अंवर स्याम अंग सोभा।
'सूर' प्रभुचरित पुरनारि देखत, महल महल पर आसिषा देति लोभा॥
॥ ३०५५ ॥

राग मलार ॥ ३६७४ ॥

कहत हलधर कह्यौ मानि मेरौ।
अखिल ब्रह्मंड के नाथ ह्याँ है खरे, गज मारि जीव अव लेउँ तेरौ॥

यह सुनत रिस भरचौ, दौरिबे कौ परचौ, सूँडि झटकत पटकि कूक पारचौ।
घात मन करत लै डारिहौ दुहुनि पर, दियौ गज पेलि आपुन हँकारचौ॥
लपकि लीन्हौ धाइ, दबकि उर रहे दोउ, भ्रम भयौ गजहिं कहँ गए वे धौं।
अरचौ दै दसन धरनि कढ़े बीर दोउ, कहत अबही याहि मारै कैधौं॥
खेलिहैं संग दै हाँक ठाढ़े भए, स्याम पाछै राम भए आगे।
उतहिं वे पूँछ गहि जात ये सुंडि छ्वै, फिरत गज पास चहुँ हँसन लागे॥
नारि महलनि खरी सबै अति ही डरी, नद के नद दोउ गज खिलावैं।
'सूर' प्रभु स्याम बलराम देखति त्रसित बचै ये कुँवर विधि सौ मनावैं॥
॥ ३०५६ ॥

राग कल्यान ॥ ३६७५ ॥

खेलत गज संग कुँवर स्याम राम दोऊ।
क्रोध दुरद व्याकुल अति, इनकौ रिस नैंकु नहिं चकित भए जोधा तहँ देखत सब कोऊ॥
स्याम झटकि पूँछ लेत हलधर कर, सूँड़ि देत, महल नारि चरित देखति यह भारी।
ऐसे आतुर गुपाल, चपल नैन मुख रसाल, लिए करनि लकुट लाल, मनौ नृत्यकारी॥
सुरगन व्याकुल बिमान, मन मन सब करत ज्ञान, बोलत यह बचन अजहुँ मारचौ नहि हाथी।
'सूरज' प्रभु स्याम राम, अखिल लोक के बिस्राम, सुरनि करन पूर्न काम, नाम लेत साथी॥
॥ ३०५७ ॥

राग सोरठ ॥ ३६७६ ॥

तब रिस कियौ महावत भारि।
जौ नहिं आज मारिहौ इनकौ, कस डारिहै मारि॥
आँकुस राखि कुंभ पर करष्यौ, हलधर उठे हँकारि।
धायौ पवनहुँ तैं अति आतुर, धरनी दत खँभारि॥
तब हरि पूँछ गह्यौ दच्छिन कर, कँवुक फेरि सिर वारि।
पटक्यौ भूमि, फेरि नहिं मटक्यौ, लीन्हौ दत उपारि॥
दुहुँ कर दुरद दसन इक इक छवि सो निरखति पुरनारि।
'सूरदास' प्रभु सुर सुखदायक, मारचौ नाग पछारि॥ ३०५८ ॥

राग मारू ॥ ३६७७ ॥

नवल नंदनंदन रगद्वार आए।
तड़ित से पीत पट, काछनी कसे कटि, खौरि चदन किए मुख सुहाए॥
निरखि यौ रूप जिन, भयौ सोई मगन, मातु पितु कौ पुत्र भाव आयौ।
ब्रह्म पूरन मुनिनि, परम सुदर तियनि, काल कौ रूप सुभटनि जनायौ॥
पील कौ देखि हरि कह्यौ यौ बिहँसि करि, पथ तैं टारि गज कौ महावत।
दियौ खटकारि उन धारि अभिमान मन, सुड तैं दौरि गह्यौ ताहि आवत॥
दंत जुग बिच जुग चरन भीतर निकसि, जुग करनि पूछ कौ गह्यौ जाई।
महा करि सिंह भेटत, महा उरग कौ, महाबल गरुड़ ज्यौ गहत धाई॥
कबहुँ लै जात उत इतैं ल्यावत कबहुँ, भ्रमत व्याकुल भयौ पील भारी।
गेंद ज्यौं गयँद कौं पटकि हरि भूमि सौ, दंत दोउ लिए निज कर उपारी॥
भभकि कै दंत तैं रुधिर धारा चली, छीट छवि बसन पर भई भारी।
केसरी चीर पर अबिर मानौ परचौ; खेलतै फागु डारचौ खिलारी॥

पील तजि प्रान कौ, गयौ निरवान कौ, सिद्ध गधर्व जै जै उचारैं।
देखि लीला ललित 'सूर' के प्रभु की, नारि नर सकल तन प्रान वारैं॥
॥ ३०५९ ॥

राग नट ॥ ३६७८ ॥

नवल नदनंदन रगभूमि आए।
संग वलराम अभिराम ससि 'सूर' ज्यौ, आपनी आप छवि सौं सुहाये॥
द्वार गजराज लखि पीतपट कटि कसत, मद मृदु हँसत अति लसत भारी।
कछु न कहि परत तव जवहि फिरि हेरि कै, पैंच दै छवीली पगिया सँवारी॥
गर्व कौ गिरि मनौ चलत पाइनि तैसैं, कुवलया प्रवल रिस सहित धायौ।
वाल गन वच्छ ज्यौ पूंछ धरि खेलियै, तैसैं हरि हाथ हाथी गिरायौ॥
पटकि गहि पुहुमि पर नैकु नहि मटकियौ, दत दोउ नाल से ऐंचि लीन्हे।
कध धरि चले दोउ वीर नीके वने, निरखि पुरजन प्रान वारि दीन्हे॥
सैल से मल्ल वै धाइ आए सरन, कोड़ भूले, गोड थरथराने।
कंस के प्रान भयभीत पिजरा मनौ, नव विहगम भरत फरफराने॥
मधुपुरी की जुवति सव कहति अति रति भरी, देखि री देखि अँगअँग लुनाई।
सुनत स्रवननि रही देखी री अव सही, मधुर मूरति सु रतिपति न पाई॥
निपट अस्मर दोऊ, निरखि देखि री सखि, विधि वडौ कूर किधौ हम अभागी।
धन्य व्रजवाल नँदलाल गिरिधरन कौ, नित्य निरखत रहति प्रेम पागी॥
अवला सौ अवल भए सवल सौ सवल भए, ललित तन ज्योति अतिही प्रगासी।
ज्ञान करि, ध्यान करि, मानि जैसी लई, 'सूर' प्रभु दुःख डारैं विनासी॥
॥ ३०६० ॥

राग विलावल ॥ ३६७९ ॥

देखौ री आवत वे दोऊ।
मनि कचन की रासि ललित अति, यह उपमा नहिं कोऊ॥
कीधौ प्रात मानसरवर तै, उडि आए दोउ हस।
इनकौ कपट करैं मथुरापति तौ, ह्वैहै निरवस॥
जिनके सुने करत पुरुपारथ, तेई हैं की और।
'सूर' निरखि यह रूप माधुरी, नारि करति मन डौर॥ ३०६१ ॥

राग कान्हरौ ॥ ३६८० ॥

(सजनी) येई है गोपाल गुसाई।
नद महर के ढोटा, जिनकी ,सुनियत वहुत वडाई॥
यह सुरूप नैननि भरि देखौ, वडे भाग निधि पाई।
चद चकोर, मेघ चातक लौ, अवलोकौ मन लाई॥
सुदर स्याम सुदेस पीटपट, चदन चर्चित कीन्हे।
नटवर वेप धरे मन मोहन, कध दसनगज लीन्हे॥
नूपुर चारु चरन, कटि किकिनि, वनमाला उर सोहै।
कर कंकन मणि कठ मनोहर, जुवती गन मन मोहै॥
कुडल स्रवन, सरोज विलोकनि, कुटिल अलक अलिमाल।
चंद वदन अँचवति जु अमीरस, धन्य धन्य व्रजवाल॥

चंद चकोर स्वाति चातक ज्यौं, अवलोकति सत भाए।
'सूरदास' प्रभु दुष्टविनासन, माधव मथुरा आए॥ ३०६२ ॥

राग विलावल ॥ ३६८१ ॥
एई सुत नंद अहीर के।
मारचौ रजक वसन सव लूटे, सग सखा वल वीर के॥
काँधे धरि दोऊ जन आए, दंत कुवलयापीर के।
पसुपति मडल मध्य मनौ, मनि छीरधि नीरधि नीर के॥
उड़ि आए तजि हंस मात मनु, मानसरोवर तीर के।
'सूरदास' प्रभु ताप निवारन, हरन संत दुख पीर के॥ ३०६३ ॥

राग कल्यान ॥ ३६८२ ॥
हँसत हँसत स्याम प्रवल, कुवलया संहारचौ।
तुरत दंत लिए उपारि, कंधनि पर चले धारि, निरखत नर नारि मुदित चकित गज मारचौ॥
अतिही कोमल अजान, सुनत तृनावृत जिय स कान, तनु त्रिनु जनु भयौ प्रान, मल्लनि पै आए।
देखत ही संकि गए, काल गुनि विहाल भए, कस डरनि घेरि लए, दोउ मन मुसुकाए॥
असुर वीर चहूँ पास, जिनकैं वस भू अकास मल्ल करत गाँस नास, ब्रह्म को विचारै।
सवै कहत भिरहु स्याम, सुनत रहत सदा नाम, हारि जीति घरही की, कौन काहि मारै॥
हँसि वोले स्याम राम, कहा सुनत रहे नाम, खेलन को हमहि काम, वालक सँग डोलैं।
'सूर' नंद के कुमार, यह है राजस विचार, कहा कहत वार वार, प्रभु ऐसे वोलैं॥
॥ ३०६४ ॥

राग कल्यान ॥ ३६८३ ॥
रंगभूमि आए अति नंदसुवन वारे।
निरखति ब्रजनारि नेह, उर तैं न विसारे॥
देखौ री मुष्टिक चानूर, इन हँकारे।
कैसे ये वचैं नाथ साँस उरध डारे॥
रजक धनुष जोधा हति दंतगज उपारे।
निरदय यह कस इनहिं चाहत है मारे॥
कहाँ मल्ल, कहाँ अतिहिं कोमल ये वारे।
कैसी जननी कठोर कीन्हे जिन न्यारे॥
वारवार इहै कहति भरि भरि दोउ तारे।
'सूरज' प्रभु वल मोहन उर तैं नहि टारे॥ ३०६५ ॥

राग गुडमलार ॥ ३६८४ ॥
वोलि लीन्हौ कस मल्ल चानूर कौ, कहा रे करत क्यौं विलव कीन्हौ।
वंस निरवस करि डारिहौ छिनक मैं, गारि दैदै ताहि त्रास दीन्हौ॥
सत्रु नान्हौ जानि रहे अवलौ वैठि, जनक आपने कौ मारि डारौ।
दुरद कौ दत उपटाइ तुम लेत हे, वहै वल आजु काहै न सँभारौ॥
भली नहिं करी तुम राखि राख्यौ उनहिं, यहै कहि तुरत वाकौ पठायौ।
क्रोध कछु, त्रास कछु, सोक कछु, साहस करत रंगभूमि आयौ॥

परस्पर कही सबनि नृपति त्रास्यौ मोहिं, सुनहु रे वीर अवलौ न मान्यौ ।
की मरौ, की मारि डारौ दुहूनि कौ, होइ सो होइ यह कहत रान्यौ ॥
निरखि दोउ वीर तन डरे दोउ मनहिं मन, यहै बुधि करचौ ज्यौं नास कीजै ।
लखति पुर नारि प्रभु 'सूर' दोउ मारिहैं, कहति है नृपति पै सुजस लीजै ॥
॥ ३०६६ ॥

राज धनाश्री ॥ ३६८५ ॥

कहति पुर नारि यह मन हमारैं ।

रजक मारचौ, धनुष तोरि द्वै खड करे, हन्यौ गजराज, त्यौं उनहुँ मारैं ॥
त्रसति अति नारि सब मल्ल ज्यौ ज्यौ कहै, लरत नहिं स्याम हम सग काहैं ।
परस्पर मत करत मारि डारौ इनहिं, लखत ये चरित मुख दुहुनि चाहैं ॥
कहा ह्वै है दई होन चाहत कहा, अवहिं मारत दुहुनि हमहिं आगैं ।
'सूर' कर जोरि अचल छोरि बीनवै, बचै ये आज विधि यहै माँगैं ॥ ३०६७ ॥

राग कल्यान ॥ ३६८६ ॥

देखौ री मल्ल इन्है मारन कौ लोरैं ।

अतिही सुंदर कुमार, जसुमति रोहिनी बार, विलखति यह कहति सबै लोचन जल ढारैं ॥
कैसेहुँ ये बचैं आजु, पठए धौ कौन काज, निठुर हियौ वाम ताकौ लोभही पठाए ।
ए तौ बालक अजान, देखौ उनकौ सयान, कहा कियौ ज्ञान, इहाँ काहे कौ आए ॥
कहाँ मल्ल मुष्टिक से चानूर सिलाभजन, कहत भुजा गहि पटकन नद सुवन हरषैं ।
नगर नारि व्याकुल जिय जानति प्रभु 'सूर' स्याम गरव हतन नाम, ध्यान करि करि वै परखैं ॥ ३०६८ ॥

राग गुडमलार ॥ ३६८७ ॥

सुनौ हो वीर मुष्टिक चानूर सबै, हमहिं नृप पास नहिं जान दैहौ ।
घेरि राखे हमैं, नही बूझे तुम्है, जगत मै कहा उपहास लैहौ ॥
सबै यहै कैहै भली मति तुम पै है, नद के कुँवर दोउ मल्ल मारे ।
यहै जस लेहुगे, जान नहि देहुगे, खोजही परे अब तुम हमारे ॥
हम नही कहै तुम मनहिं जौ यह बसी, कहत हौ कहा तौ करौ तैसी ।
'सूर' हम तन निरखि देखियै आपुकौ, बात तुम मनहिं यह बसी नैसी ॥
॥ ३०६९ ॥

राग टोडी ॥ ३६८८ ॥

जवही स्याम कही यह बानी। सो सुनि कै जुवती विलखानी ॥
मल्लनि कह्यौ हमहिं तुम देखौ। अपनौ बल, अपनौ तनु पेखौ ॥
चितयै मल्ल नदसुत कोधा। काल रूप अग्रागी जोधा ॥
भुजा ऐंठि रज अग चढायौ। गाँस भरे हरि ऊपिर आयौ ॥
स्याम सहज पीताबर बाँधे। हलधर निरखत लोचन आधे ॥
तब चानूर कृष्ण पर धायौ। भुज भुज जोरि अग बल पायौ ॥
प्रथम भए कोमल तन ताकौ। सिथिल रूप मन मेलत वाकौ ॥
तब चानूर गर्व मन लीन्हौ। दुर्ग प्रहार कृष्न पर कीन्हौ ॥
फूलहु तै अति सम करि मान्यौ। तेहिं अपनै जिय मारयौ जान्यौ ॥
हरष्यौ मल्ल मारि भयौ न्यारौ। कहन लग्यौ मुख अहौ बिचारौ ॥
हँसत स्याम जब देख्यौ ठाढ़ौ। सोच परचौ तब प्राननि गाढ़ौ ॥

फिरि फिरि कहि हरि मल्ल हँकारयौ। मनहुँ गुफा तैं सिंह पुकारयौ ॥
हाँक सुनत सब कौड़ भुलानौ। थरथराइ चानूर सकानौ ॥
'सूर' स्याम महिमा तब जान्यौ। निहचै मृत्यु आपनी मान्यौ ॥
॥ ३०७० ॥

राग धनाश्री ॥ ३६८९ ॥

भिरयौ चानूर सौं नंदसुत बाँधि कटि, पीटपट फेंट रन रंग राजै ।
द्विप दंत कर कलित भेष नटवर ललित, मल्ल उर सल्ल तल ताल बाजै ॥
पीन भुज लीन जय लच्छि रंजित हृदय, नील घन सीत तनु, तुंग छाती ।
देखि रहि भेष अति प्रेम नर नारि सब, बदति तजि भीर रति-रीति-राती ॥
मत्त मातंग बल अंग दंभोलि दल, काछनी लाल गलमाल सोहै ।
कमलदल नैन मृदु बैन बंदित बदन, देखि सुरलोक नरलोक मोहै ॥
बाहु सौं बाहु उर जानु सौं जानुनी, चरन सौं चरनि धरि प्रगट पेलैं ।
परस्पर भिरत जब स्याम अरु मल्ल दोउ, देखि पुर नारि नर मप्ट झेलैं ॥
घूम दै घूंघरनि वै उभय वधु जन, सुभट पद पानि धरि धरनि मेले ।
चित्त सौं चित्त मनिबंध मनिबंध सौं, दृप्टि सौं दृप्टि नहि 'सूर' डोले ॥
॥ ३०७१ ॥

राग भैरव ॥ ३६९० ॥

स्याम बलराम रँगभूमि आए ।
मल्ल लघु रूप सुंदर परम देखि पुनि, प्रबल बल जानि मन मैं सकाए ॥
कह्यौ गज कुवलया हते भयौ गर्व तुम, जानि परिहै भिरत सँग हमारैं ।
काल सौं भिरैं हम कौन तुम बापुरे, पै हृदैं धर्म रहियौ बिचारे ॥
स्याम चानूर. बलबीर मुप्टिक भिरे, सीस सौं सीस, भुज भुज मिलावैं ।
वैं उन्हैं गहत वैं दौरि उनकौं गहत, करत बल छल नहीं दाँव पावैं ॥
धरि पछारयौ दुहूँ बीर दुहूँ मल्ल कौं, हरपि कह्यौ हते ये नंद दुहाई ।
'सूर' प्रभु परस लहि, लह्यौ निरवान पद, सुरनि आकास जय धुनि सुनाई ॥
॥ ३०७२ ॥

राग गुंडमलार ॥ ३६९१ ॥

गह्यौ कर स्याम भुज मल्ल अपने धाइ, झटकि लीन्हौ तुरत पटकि धरनी ।
भटकि अति सब्द भयौ, खटक नृप के हियै, अटकि प्राननि परयौ चटक करनी ॥
लटकि निरखन लग्यौ, मटक सब भूलि गइ, हटक करि देउँ इहै लागी ।
झटकि कुंडल निरखि, अटक ह्वैकैं गयौ, गटकि सिल सौं रह्यौ मीच जागी ॥
मल्ल जे जे रहे सबै मारे तुरत, असुर जोधा सबै तेउ सँहारे ।
धाइ दूतनि कह्यौ, मल्ल कोउ न रह्यौ, 'सूर' बलराम हरि सब पछारे ॥
॥ ३०७३ ॥

राग कल्यान ॥ ३६९२ ॥

मारे सब मल्ल नंद के कुमार दोऊ ।
कौड सबनि भूलि गए, हाँक देत चकृत भए, लपकि लपकि हए, उबरयौ नहि कोऊ ॥
जोधा चितवतहिं मरे, हहरि हहरि धरनि परे, ज्वाला ज्यौं जरे डरे, भए सब बिनु प्राना ॥
तारागन लुप्त होत जैसैं दिनकर प्रकास, यह सुनि नृप भए निरास रह्यौ नहीं ज्ञाना ॥

गलबल सब नगर परयौ, नागिनि मन हरष भरयौ, सेस सीस भार हरयौ प्रगटे जदुबंसी।
द्वारपाल इहै कही, जोधा कोउ बचे नहीं, काँधे गजदंत धरे 'सूर' ब्रह्म अंसी॥
॥ ३०७४ ॥

राग गुंडमलार ॥ ३६९३ ॥
नंद के नंद सब मल्ल मारे निदरि, पौरिया जाइ नृप पै पुकारे।
सुनत ठाढ़ो भयौ, हाँक तिनकौं दयौ, दनुज-कुल-दहन ता तन निहारे॥
सुभट बोले सबै, आइही पुनि कबै, मारि डारे सबै मल्ल मेरे।
अजगरी करि रहे, बचन एई कहे, डर नहीं करत सुत अहिर केरे॥
रंग महलनि खरे, कहा रे तुम करौ, ढाल कर खड्ग तहँ तै चलावै।
जियत अब जाहुगे, बहुरि करिहौ राज, नहीं जानत 'सूर' कहि सुनावै॥
॥ ३०७५ ॥

राग धनाश्री ॥ ३६९४ ॥
भले रे नंद के छोहरा डर नहीं, कहा जो मल्ल मारे बिचारे।
बार ही बार दै हाँक गए कहाँ अब, आपुनै सम असुर ते हँकारे॥
पौरि गारी करी द्वार बीरनि कहू, आपु दलकारि मुख गारि दैकै।
बहुरि घर जाहुगे धेनु दुहि खाहुगे, जान देहौं तुमहिं प्रान लैकै॥
कोउ नहि टरे उहाँ ता आवत कहा, ढुँक पग धारि हरि समुख आयौ।
चकित ह्वैकै गयौ, मीचु दरसन भयौ, कहा री मीचु यह कहि सुनायौ॥
स्याम बलराम कौ नाम लै लै कहत मीचु, आई लैन तुमहिं बाजै।
'सूर' प्रभु देखि नृप क्रोध पूरी घरी, कस्यौ कटि पीत पट देवराजै॥३०७६॥

राग मारू ॥ ३६९५ ॥
कंध दंत धरि डोलत, रंगभूमि बल हरि।
उज्ज्वल साँवल बपु, सोभित अंग, फिरत फरि॥
द्वारै पैठत गयंद मारि, धरनि डारयौ।
मुष्टिक, चानूर मल्ल सूगल संहारयौ॥
जिहि जैसौ जिय बिचार, तैसौ रूप धारयौ।
देवकी बसुदेव कौ, संताप निवारयौ॥
मल्ल सुभट परे भगार, कृष्न कै रिसाने।
देखि पराक्रम कंस, तब जिय बिलखाने॥
दोषदलन, अभयकरन, कृपन सरनदाई।
जोइ चितहिं सोइ चितै, गोवरधन राई॥
कंस सुनि अचेत भयौ, बजन लगे बाजा।
कहि असीस गगन उठे, सिद्ध सुर समाजा॥
सुभट रहे देखत ही, रोके दरवाजा।
'सूर' नंदनंदन गए, जहाँ कंस राजा॥ ३०७७ ॥

राग नट ॥ ३६९६ ॥
नवल नंदनंदन रंगभूमि राजै।
स्याम तन, पीत पट मनौ घन मैं तडित, मोर के पंख माथै बिराजै॥
स्रवन कुंडल झलक मनौ चपला चमक, दृग अरुन कमल दल से बिसाला।
भौंह सुंदर धनुष, बान सम सिर तिलक, केस कुंचित सोह भृंग माला॥

हृदय वनमाल. नूपुर चरन लाल, चलत् गज चाल अति वुधि विराजै ।
हंस मानौ मानसर अरुन अंवुज सुभर, निरखि आनद करि हरपि गाजै ।।
कुवला मारि चानूर मुष्टिक पटकि, वीर दोउ कध गजदत धारे ।
जाइ पहुँचे तहाँ कंस वैठ्यौ जहाँ, गए अवसान प्रभु के निहारे ।।
ढाल तलवारि आगैं धरी रहि गई, महल कौ पथ खोजत न पावत ।
लात कै लगत सिर तैं गयौ मुकुट गिरि, केस गहि लै चले हरि खसावत ।।
चारि भुजा धारि तेहिं चारु दरसन दियौ, चारि आयुध चहूँ हाथ लीन्हे ।
असुर तजि प्रान निरवान पद कौ गयौ, विमल मति भई प्रभु रूप चीन्हे ।।
देखि यह पुहुप वर्षा करी सुरनि मिलि, सिद्ध गधर्व जय धुनि सुनाई ।
'सूर' प्रभु अगम महिमा न कछु कहि परति, सुरनि की गति तुरत असुर पाई ।।
।। ३०७८ ।।

राग मारू ।। ३६९७ ।।

देखि नृप तमकि हरि चमक तहँई गए, दमकि लीन्हौ गिरह वाज जैसैं ।
धमकि मारचौ घाव, गुमकि हिरदै रह्यौ, झमकि गहि केस लै चले ऐसैं ।।
ठेलि हलधर दियौ. झेलि तव हरि लियौ, महल के तरैं धरनी गिरायौ ।
अमर जय धुनि भई, धाक त्रिभुवन गई, कस मारचौ निदरि देवरायौ ।।
धन्य वानी गगन, धरनि पाताल धनि, धन्य हो धन्य वसुदेव ताता ।
धन्य अवतार सुर धरनि उपकार कौ, 'सूर' प्रभु धन्य वलराम भ्राता ।।
।। ३०७९ ।।

राग विलावल ।। ३६९८ ।।

जै जै धुनि तिहुँ लोक भई ।
मारचौ कस धरनि उद्धारचौ, ओक ओक आनंदमई ।।
रजक मारि कोदड विभंज्यो, खेल करत गज प्रान लियौ ।
मल्ल पछारि असुर संहारे, तुरत सवनि सुरलोक दियौ ।।
पुर नर नारिनि कौ सुख दीन्हौ, जो जैसौ फल सोइ लह्यौ ।
'सूर' धन्य जदुवस उजागर, धन्य धन्य धुनि घुमरि रह्यौ ।। ३०८० ।।

राग धनाश्री ।। ३६९९ ।।

देखि री नंद कुल के उधारी ।
मातु पितु दुरित उद्धरन, व्रज उद्धरन, धरनि उद्धरन सिर मुकुट धारी ।।
पतित उद्धरन, निज भगत उद्धरन, जन दीन उद्धरन, कुडलनि धारी ।
पूतना उद्धरन, दनुज कुल उद्धरन, तृना उद्धरन, मुख मुरलि धारी ।।
सकट उद्धरन, केसी प्रलंव उद्धरन, वका उद्धरन, गिरि अँगुरि धारी ।
अघा उद्धरन, गो ग्वाल के उद्धरन, वृपभ उद्धरन, वनमाल धारी ।।
वच्छ उद्धरन, ब्रह्म उद्धरन, येइ प्रभु जज्ञपति, जज्ञपतिनि उधारी ।
कालि उद्धरन, फन फन सहित उद्धरन, दवा उद्धरन, अँग मलय धारी ।।
ग्राह उद्धरन, गजराज उद्धरन, ये सिला उद्धरन, पट पीत धारी ।
पंडुकुल उद्धरन, द्रौपदी उद्धरन, रुक्मिनी उद्धरन, लकुट धारी ।।
सिंधु उद्धरन, सीताप्रिया उद्धरन, जै विजै उद्धरन, धनुप धारी ।
दास उद्धरन, प्रहलाद के उद्धरन, प्रवल नरसिंह अवतार धारी ।।

हिरन कस्यप हिरन्याच्छ के उद्धरन, वेद उद्धरन, वल भुजा धारी।
धरम उद्धरन, येइ कर्म उद्धरन प्रभु, सुभग कटि काछनी पीत धारी॥
'सूर' उद्धरन, सुरलोक उद्धरन हरि, कस उद्धरन, येई मुरारी॥
॥ ३०८१ ॥

राग गुडमलार ॥ ३७०० ॥

हरप नर नारि मथुरा पुरी के।
सोक सबकौ गयौ, दनुज कुल सब हयौ, तिहुँ भुवन जै जयौ, हरप ही के॥
निदरि मारचौ कस, प्रगट देखत सबै, अतिहिं अल्प के, नद ढोटा।
नैन दोउ ब्रह्म से परम सोभा लसे, भक्त कौ जसे सुभ हस जोटा॥
देव दुदुभि बजी अमर आनद भए, पुहुप गन बरपहि चैन जान्यौ।
'सूर' बसुदेव सुत रोहिनी नद धनि, धनि मिटचौ भुव भार अखिल जान्यौ॥
॥ ३०८२ ॥

राग रामकली ॥ ३७०१ ॥

निदरि मारचौ, कंस देवनाथा।
निदरि मारे कस पूतना आदि दै, धरनि पावन करी भइ सनाथा॥
लोक लोकनि विदित कथा तुरतहि गई, करन अस्तुति जहाँ तहाँ आए।
देव दुदुभि पुहुप वृष्टि जय धुनि करै, दुष्ट इन मारि सुरपुर पठाए॥
केस गहि करपि जमुना धार डारि दए, सुन्यौ नृप नारि पति मारचौ।
भई व्याकुल सबै हेत रोवन लगी, मरन कौ तुरत जौहर बिचारचौ॥
गए तहँ स्याम बलराम बोधी सबै, कहत तब नारि तुम करी नैसी।
सुनहु नृप बाम यह काम ऐसोइ रह्यौ, जानि यह बात क्यौ कहति ऐसी॥
मरति काहै कहा तुमहिं कौ यह भई, जानि अज्ञान तुम होति काहै।
'सूर' नृप नारि हरि बचन मान्यौ सत्य, हरप ह्वै स्याम मुख सबनि चाहै॥
॥ ३०८३ ॥

राग कल्यान ॥ ३७०२ ॥

रानिनि परबोधि स्याम महर द्वार आए।
कालनेमि बस उग्रसेन सुनत धाए॥
चरननि धुकि परचौ आइ त्राहि त्राहि नाथा।
बहुतै अपराध परे छमहु मैं सनाथा॥
महाराज श्री मुख कहि लियौ उर लगाई।
हमकौ अपराध छमौ करी हम ढिठाई॥
तबही सिंघासन पै उग्रसेन धारे।
छत्र सिर धराइ चँवर अपने कर ढारे॥
ठाढे आधीन भए, देव देव भाषे।
अपने जन की प्रसाद, सादर सिर राखे॥
मोकौ प्रभु इती कहा बिस्व भरन स्वामी।
घट घट की जानत हौ तुम अंतरजामी॥
तौ फिरि नृप कहत कहा तुमकौ यह केती।
सेवा तुम जेती करी दैहौ पुनि तेती॥

रजक धनुष गज मल्लनि कंस मारि काजा ।
'सूरज' प्रभु कीन्हौ तब उग्रसेन राजा ।। ३०८४ ।।

राग बिलावल ।। ३७०३ ।।

उग्रसेन कौ दियौ हरि राज ।
आनँद मगन सकल पुरवासी, चँवर डुलावत श्री ब्रजराज ।।
जहाँ तहाँ तैं जादव आए, कंस डरनि जे गए पराइ ।
मागध सूत करत सब अस्तुति, जै जै जै श्री जादवराइ ।।
जुग जुग विरद यहै चलि आयौ, भए बलि के द्वारै प्रतिहार ।
'सूरदास' प्रभु अज अविनासी, भक्तनि हेत लेत अवतार ।। ३०८५ ।।

राग बिलावल ।। ३७०४ ।।

मथुरा लोगनि बात सुनी यह, उग्रसेन कौ राज दियौ ।
सिंहासन बैठारि कृपा करि, आपु हाथ सौं चँवर लियौ ।।
मातु पिता कौ संकट मेट्यौ, देवनि जै धुनि सब्द कियौ ।
रानी सबै मरत तैं राखी, उनतैं प्रभु नहिं और बियौ ।।
अबही सुनि बसुदेव देवकी, हरषित ह्वैहै दुहिनि हियौ ।
'सूरदास' प्रभु आए मधुपुरी, दरसन तैं सब लोग जियौ ।। ३०८६ ।।

राग रामकली ।। ३७०५ ।।

मथुरा के लोगनि सुख पाए ।
नटवर भेष कछे नँदनंदन, सँग अक्रूर के आए ।।
प्रथमहिं रजक मारि अपनैं कर, गोप बृंद पहिराए ।
तोरि धनुष लीला भटनागर, तब गज खेल खिलाए ।।
रंगभूमि मुष्टिक चनूर हति, भुज बल ताल बजाए ।
नगर नारि दै गारि कंस कौं, अजसुत जुद्ध बनाए ।।
बरषहिं सुमन अकास महा धुनि दुंदुभि देव बजाए ।
चढ़ि चढ़ि अमर बिमान परम सुख, कौतुम अंबर छाए ।।
कंस मारि सुरराज काज करि, उग्रसेन सिर नाए ।
माता पिता बंदि तैं छोरे, 'सूर' सुजस जग गाए ।। ३०८७ ।।

राग रामकली ।। ३७०६ ।।

मथुरा घर घरनि यह बात ।
रजक धनुष गज मल्ल मारे, तनक से नँदतात ।।
धन्य माता पिता धनि है, धन्य धनि वह राति ।
जब लियौ अवतार धरती, धन्य धनि सो भाँति ।।
हंस केसे जोट दोऊ, असुर कियौ निपात ।
'सूर' जोधा सबै मारे, कहा जानत घात ।। ३०८८ ।।

राग कल्यान ।। ३७०७ ।।

सुन्यौ बसुदेव दोउ नंदसुवन आए ।
त्रिया सौं कहत कछु सुनत है री नारि, रातिहूँ सपन कछु ऐसे पाए ।।
गए अक्रूर, तिनि नृपति माँगे बोलि, तुरत आए, आइ कंस मारे ।
कहा पिय कहत सुनिहै बात पौरिया, जाइ कैहै, रहौ मष्ट धारे ।।

दिए लोचन ढारि नारि पति परस्पर, कहा हम पाप करि जनम लीन्हौ ।
सात देखत बधे एक दुरि ब्रज बच्यौ, इते पर बाँधि हम पगु कीन्हौ ॥
मारि डारे कहा बंदि कौं जिवन धिक मीच हमकौं नहीं, मीच भूल्यौ ।
मरै वह कंस, निरबंस बिधना करै, 'सूर' क्यौंहू होइ वह निमूल्यौ ॥
॥ ३०८६ ॥

राग जैतश्री ॥ ३७०८ ॥

यहै कहत बसुदेव त्रिया जनि रोवहु हो ।
भाग्य बिबस सुख दुःख सकल जग जोवहु हो ॥
जल दीन्हे कर आनि कहत मुख धोवहु नारी ।
कहियत है गोपाल हरनदुख गर्वप्रहारी ॥
कबहुँ प्रगट वै होइँगे, कृष्न तुम्हारे तात ।
आजु काल्हि हरि आइहैं, यह सपने की बात ॥
अब जनि होहि अधीर, कंस की आयु तुलानी ।
देखत जाइ बिलाइ, भार तिनका करि जानी ॥
ऐसौ सुपनौ मोहि भयौ, त्रिया सत्य करि मानि ।
त्रिभुवनपति तेरौ सुवन है, तोहि मिलैगौ आनि ॥
इहिं अंतर हरि कह्यौ, मातु पितु कहाँ हमारे ।
तहँ लै गए अक्रूर स्याम बलराम पधारे ॥
बज्र सिला द्वारै दियौ, दरसन तैं गइ छूटि ।
सहज कपाट उघरि गए, ताला कुंजी टूटि ॥
जौ देखै बसुदेव, कुँवर दोउ काके आए ।
दरस दियौ तिहिं प्रेम, प्रथम जो दरस दिखाए ॥
धाइ मिले पितु मातु कौ यह कहि मैं निजु तात ।
मधुरै दोउ रोवन लगे जिन सुनि कंस डरात ॥
तुरत बंदि तैं छोरि, कह्यौ मैं कंसहि मारयौ ।
जोधा सुभट सँहारि, मल्ल कुवलया पछारयौ ॥
जिय अपनै जनि डर करौ, मैं सुत तुम पितु मात ।
दुःख बिसरौ अब सुख करौ, तुम काहैं पछतात ॥
निहचै जननी जानि कंठ, धरि रोवन लागी ।
तब बोले बलराम, मातु तुम तैं को भागी ॥
बार बार देवै कहै, गोद खिलाए नाहिं ।
द्वादस बरस कहाँ रहे, मातु पिता बलि जाहिं ॥
पुनि पुनि बोधत कृष्न लिखौ मेटै नहिं कोई ।
जोइ जोइ मन की साध कहौ करिहौं मैं सोई ॥
जे दिन गए सुतौ गए अब सुख लूटहु मातु ।
तात नृपति रानी जननि, जाके मोसौ तात ॥
जो मन इच्छा होइ तुरत देखौ मैं करिहौं ।
गगन धरनि पाताल जात कतहूँ नहिं डरिहौं ॥
मातु हृदय की कही तब, मन बाढ्यौ आनंद ।
महर सुवन मैं तौ नहीं, मैं बसुदेव कौ नंद ॥

राज करौ दिन वहुत जानि कै है अब तुमकौ ।
अष्ट सिद्धि नव निद्धि देउँ मथुरा घर घर कौ ।।
रमा सेवकिनि दउँ करि, कर जोरै दिन जाम ।
अब जननी जनि दुख करौ, करौ न पूरन काम ।।
धनि जदुवसी स्याम चहूँ जुग चलति वड़ाई ।
सेष रूपमय राम कहत नहि वात वनाई ।।
सूरज प्रभु दनुकूल दहन, हरन करन ससार ।
ते पाए सुत तुमहि करि, करौ न सुख विस्तार ।। ३०६० ।।

राग रामकली ।। ३७०६ ।।

तव वसुदेव हरपित गात ।
स्याम रामहि कठ लाए, हरपि देवै मात ।।
अमर दिवि दुदुभी दीन्ही, भयौ जैजैकार ।
दुष्ट दलि सुख दियौ संतनि, ये वसुदेव कुमार ।।
दुख गयौ वहि हर्ष पूरन, नगर के नरनारि ।
भयौ पूरव फल सँपूरन, लह्यौ सुत दैत्यारि ।।
तुरत विप्रनि वोलि पठये, धेनु कोटि मँगाइ ।
'सूर' के प्रभु ब्रह्मपूरन, पाइ हरपे राइ ।। ३०६१ ।।

राग काफी ।। ३७१० ।।

आजु हो निसान वाजै वसुदेव राइकै ।
मथुरा के नरनारि उठे, सुख पाइ कै ।।
अमर विमान सव कहै हरपाइ कै ।
फूले मात पिता दोऊ आनँद वढाइ कै ।।
कस कौ भँडार सव देत है लुटाइ कै ।
धेनु जे सँकल्प राखी लई ते गनाइ कै ।।
ताँबे, रूपे सोने सजि राखी वै वनाइ कै ।
तिलक विप्रनि वंदि, दई वै दिवाइ कै ।।
मागध मगल जन लेत, मन भाइ कै ।
अष्ट सिद्धि नवो निद्धि आगे ठाढ़ी आइ कै ।।
सव पुर नारि आई मगलनि गाइ कै ।
अंवर भूपन दए उन्है पहिराइ कै ।।
अखिल भूवन जन कामना पुराइ कै ।
वहु पुरजन धन देत है लुटाइ कै ।।
'सूर' जन दीन द्वारै ठाढ़ौ भयौ आइ कै ।
कछु कृपा करि दीजै मोहूँ कौ दिवाइ कै ।। ३०६२ ।।

राग विलावल ।। ३७११ ।।

वसुद्यौ कुल व्यौहार विचारि ।
हरि हलधर कौ दियौ जनेऊ, करि षटरस ज्यौनारि ।।
जाके स्वास उसांस लेत मैं प्रगट भए श्रुति चार ।
तिन गायत्री सुनी गर्ग सौ प्रभु गति अगम अपार ।।

विधि सौं धेनु दई बहु विप्रनि, सहित सर्वऽलकार।
जदुकुल भयौ परम कौतूहल, जहँ तहँ गावति नार॥
मातु देवकी परम मुदित ह्वै, देति निछावरि बारि।
'सूरदास' की यहै आसिषा, चिर जियौ नंद कुमार॥ ३०९३ ॥

राग धनाश्री ॥ ३७१२ ॥

आजु परम दिन मंगलकारी।
लोक लोक कौ टीकौ आयौ, मुदित सकल नर नारी॥
सिव सुरेस सेष औरौ बहु, चतुरानन कर धारी।
हर कर पाटबंध, न्यौछावरि करत रतन पट सारी॥
बाजत ढोल निसान, संख रव होत कुलाहल भारी।
अपने अपने लोक चले सब 'सूरदास' बलिहारी॥ ३०९४ ॥

राग बिलावल ॥ ३७१३ ॥

जब जदु-कुल-पति कंसहि मारचौ। तिहूँ भुवन भयौ सोर पसारचौ॥
तुरत मंच तै धरनि गिरायौ। ऐसैंहि मारत बिलंब न लायौ॥
केस गहे पुहुमी घिसटायौ। डारि जमुन के बीच बहायौ॥
जा कंसहिं तिहूँ भुवन डराई। ताकौं मारचौ हलधर भाई॥
जाकै धनुष टँकोरत हाथा। आसन डारि भजे सुरनाथा॥
मारत ताहि बिलंब न कीन्हौ। उग्रसेन कौ राजस दीन्हौ॥
जै हो जै वसुदेव कुमारा। जै हो जै तुम नंददुलारा॥
सुरदेवी देवै धनि मैया। धनि जसुमति त्रिभुवन पति धैया॥
धन्य अक्रूर मधुपुरी ल्याए। सुर अंबर जै जै धुनि गाए॥
दनुज वंस निरवंस कराए। धरनी सिर तैं भार गँवाए॥
मातु पिता बंदि तैं छुड़ाए। यह बानी सुर लोकनि गाए॥
जो जैसौ तैसै तिहिं भाए। 'सूरज' प्रभु सबकौ सुखदाए॥
॥ ३०९५ ॥

राग धनाश्री ॥ ३७१४ ॥

मथुरा दिनदिन अधिक बिराजै।
तेज, प्रताप राइ केसौ कैं, तीनि लोक पर गाजै॥
पग पग तीरथ कोटिक राजैं, मधि विश्रांत बिराजै।
करि अस्नान प्रात जमुना कौ, जनम मरन भय भाजै॥
विट्ठल विपुल विनोद विहारन, ब्रज कौ बसिबौ छाजै।
'सूरदास' सेवक उनहीं कौ कृपा सु गिरिधर राजै॥ ३०९६ ॥

राग मलार ॥ ३७१५ ॥

जय जय जय मथुरा सुखकारी।
चक्र सुदरसन ऊपर राजति, केवस जू की प्यारी॥
हाटक कोट कँगूरा राजत. हीरा रतन जरे।
मनिमय भवन उतुंग सुहाए, नवधा भक्ति भरे॥
घर घर मंगल महा महोच्छव, हरिरस माते लोग।
मधु मेवा पकवान मिठाई, खटरस व्यंजन भोग॥

दही दूध के ढेरनि जित तित, सुरभी सबै सुदेस ।
अष्ट महासिधि बीथिनि बीथिनि, सुमन गुहे सुर केस ॥
परम धाम बैकुंठ तैं आगर, श्री बाराह बखानी ।
भक्ति मुक्ति के बाजन बाजैं, क्रीड़त सारँगपानी ॥
तीरथ सकल मधुपुरी सेवत, सुर नर मुनि जन आवैं ।
सदा प्रीति हित कान्ह विराजैं, नारदादि गुन गावैं ॥
अखिल भुवन की सोभा मथुरा, महिमा कही न जाइ ।
धनि धनि मथुरा, पुरी सिरोमनि, निज मुख करी बड़ाइ ॥
अगतिन की गति श्री मथुरा, हरिदरसन की रजधानी ।
मथुरा छाँड़ि अनत रति करिए, यातैं और न हानी ॥
मथुरा निकट कबहुँ नहिं देखैं, ते मतिमंद अभागे ।
जननी बोझ वृथा कत मारी, जम के कागर दागे ॥
निमिष एक मथुरा कौ बासी, जननी जठर न आवै ।
जे बड़भागी रहैं निरंतर, तिनकी कौन चलावै ॥
मथुरा सरन सदा मोहिं राखौ, बिनती करौ सो दीजै ।
'सूरदास' द्वारैं ह्वै गावैं, कृष्न चरन रति कीजै । ३०९७ ॥

राग सोरठ ॥ ३७१६ ॥

मथुरा बाजति आजु बधाई ।
चोवा, चंदन, अगर, कुमकुमा, कुबिजा चरचन आई ॥
कंसराइ के मल्ल पछारे, जीत्यौ कुँवर कन्हाई ।
उग्रसेन कौ राजतिलक दियौ, मोहन जदुपति राई ॥
हरष देव वसुदेव देवकी, जिनकी बंदि छुड़ाई ।
'सूरदास' प्रभु भक्तबछल की, ब्रज मैं फिरी दुहाई ॥ ३०९८ ॥

राग धनाश्री ॥ ३७१७ ॥

कंस मारि सुरकाज कियौ ।
माता पिता बंदि तैं छोरे, दुख बिसरयौ आनंद हियौ ॥
उग्रसेन कौ धाइ मिले हरि, अभय अचल करि राज दियौ ।
असुर बंस निरबंस छिनक मैं, ऐसौ नहिं कोउ और बियौ ॥
मिली कूबरी चंदन लै कै, ऐसैंहि हरि कौ नाम लियौ ।
सुनहु 'सूर' नृप पास जाति ही, बीच सुकृत अति दरस दियौ ॥ ३०९९ ॥

राग रामकली ॥ ३७१८ ॥

कुबरी पूरब तप करि राख्यौ ।
आए स्याम भवन ताही कै, नृपति महल सब नाख्यौ ॥
प्रथमहिं धनुष तोरि आवत हे, बीच मिली यह धाइ ।
तिहिं अनुराग बस्य भए ताकैं, सो हित कह्यौ न जाइ ॥
देवकाज करि आवन कहि गए, दीन्हौ रूप अपार ।
कृपा दृष्टि चितवतहीं श्री भइ, निगम न पावत पार ॥
हम तैं दूरि दीन के पाछै, ऐसे दीनदयाल ।
'सूर' सुरनि करि काज तुरतहीं, आवत तहाँ गोपाल ॥ ३१०० ॥

राग रामकली ॥ ३७१९ ॥

कियौ सुरकाज गृह चले ताकै ।
पुरुष औ नारि कौ भेद भेदा नहीं, कुलिन अकुलीन अवतरयौ काकै ॥
दास दासी कौन प्रभु निप्रभु कौन है, अखिल ब्रह्मांड इक रोम जाकै ।
भाव साँचौ हृदय जहाँ, हरि तहाँ है, कृपा प्रभु की माथ भाग वाकै ॥
दास दासी स्याम भजनहु तैं जिये, रमा सम भई सो कृष्नदासी ।
मिली वह 'सूर' प्रभु प्रेम चदन चरचि, कियौ जप कोटि, तप कोटि कासी ॥
॥ ३१०१ ॥

राग रामकली ॥ ३७२० ॥

भक्तवछल श्रीजादवराइ ।
गेह कूबरी कै पग धारे, जाति पाँति विसराइ ।
पूरन भाग मानि तिन अपने, चरन गहे उठि धाइ ।
सुरति रही नहि देह गेह की, आनँद उर न समाइ ॥
प्रभु गहि बाहँ पास बैठारी, सो सुख कह्यौ न जाइ ।
'सूरदास' प्रभु सदा भक्त बस, रंक गनत न हि राइ ॥ ३१०२ ॥

राग नट ॥ ३७२१ ॥

कुबिजा सदन आए स्याम ।
कृपा करि हरि गए प्रथमहिं, भई अनुपम बाम ॥
प्रीति कैं बस दीनबधु, भक्तवत्सल नाम ।
मिली मारग मलय लै कै भई पूरन काम ॥
उरवसी पटतरहि नाही, रमा कै मन ताम ।
'सूर' प्रभु महिमा अगोचर, बसे दासी धाम ॥ ३१०३ ॥

राग धनाश्री ॥ ३७२२ ॥

कुबिजा हरि की दासी आहि ।
जैसैं आपु भाजि गोकुल रहे, तैसैं राखी ताहि ॥
रूपरतन दुराइ कैं राख्यौ, जैसैं नली कपूर ।
जैसैं छीप अमोल रतन भरि, कह जानै जो कूर ॥
वैसैहि रही कूबरी दासी, अविनासी की आहि ।
'सूरदास' प्रभु कंस मारि कैं, लई आनि तिहिं चाहि ॥ ३१०४ ॥

राग धनाश्री ॥ ३७२३ ॥

मथुरा के नरनारि कहै ।
कहाँ मिली कुबिजा चंदन लै, कहा स्याम तिहि कृपा चहै ॥
कहा तपस्या करि इहिं राखी, जहाँ तहाँ पुर रहै चलै ।
कछू नही आवत हरि देखी, इहै कह्यौ प्रभु हेत मलै ॥
तबहिं कृपा करि सुदरि कीन्ही, महिमा यह कहत न आवै ।
'सूरदास' भाग कूबरी कौ, कौन ताहि पटतर पावै ॥ ३१०५ ॥

राग धनाश्री ॥ ३७२४ ॥

कुबिजा सी भागिनि को नारि ।
कंसहिं चंदन लिए जाति ही, बीच मिले ताकौ दैत्यारि ॥

हरि करि कृपा करी पटरानी, वाकौ डारचौ कुब्ज मिटारि ।
यह बात मधुपुरी जहाँ तहँ दासी कहत डरत जिय भारि ।।
कुबिजा भूलि रहत जौ काऊ, ताहि उठत दै दै सब गारि ।
सुनहु 'नूर' रानी सुनि पावै, त्रास होत जनि डारै मारि ।। ३१०६ ।।

राग धनाश्री ।। ३७२५ ।।

कुबिजा तौ बड़भागी ह्वै ।
करुना करि हरि जाहि निवाजी, ग्रापु रहे तहँ राजी ह्वै ।।
पूरब तपफल बिलसन लागी, मन के भाव पुरावति ह्वै ।
मथुरा नर नारिनि मुख बानी, रह्यौ जहाँ तहँ जै जै ह्वै ।।
दैत्य बिनासि तुरत तहँ ग्राए, यह लीला जानै पै वै ।
'सूरदास' प्रभु भावहिं कै बस, मिलत कृपा करि ग्रति सुख ह्वै ।। ३१०७ ।।

राग रामकली ।। ३७२६ ।।

हरि की कृपा जापर होइ ।
ताहि कछु यह बहुत नाही, हृदय देखौ जोइ ।।
कहा संसौ करत याकौ, कितिक है यह बात ।
ग्रसुर सैन सँहारि डारे, भक्तजन सौ नात ।।
हरन, करन समर्थ एई, कहौ वारंवार ।
'सूर' हरि की कृपा तै, खल तरि गए संसार ।। ३१०८ ।।

राग बिलावल ।। ३७२७ ।।

कृष्न कृपा सबही तै न्यारी । कोटि करै तप, नही मुरारी ।।
भाव भजन कुबिजा भइ प्यारी । दनुज भाव बिनु डारे मारी ।।
प्रथमहि रजक मारि पुर ग्राए । धनुषजज्ञ कौ कंस बुलाए ।।
तोरि कोदंड बीर सब मारे । हित कुबिजा कै धाम सिधारे ।।
रूप-रासि-निधि ताकौ दीन्हौ । ग्रावन कह्यौ गवन तब कीन्हौ ।।
तहाँ कुवलया राख्यौ द्वारै । जात स्याम बलराम बिचारे ।।
माली मिल्यौ माल पुहुपनि लै । लीन्हौ कठ स्याम ग्रति रुचि कै ।।
मन कामना तुरत फल पायौ । कोटि कोटि मुख ग्रस्तुति गायौ ।।
ग्रातुर गए कुवलया पासा । सूरज चंद धरनि परगासा ।।
बालक देखि महावत हरष्यौ । कर धरि पुच्छ तुच्छ करि करष्यौ ।।
कौतुक करि मतंग मतवारौ । महि पटक्यौ, तन नैकु न टारौ ।।
दुहुनि एक एक दंत उपारचौ । जहाँ मल्ल तहँ कौ पग धारचौ ।।
देखत रूप त्रास जिय ग्रान्यौ । मन मन काल ग्रापनौ जान्यौ ।।
तब कोमल दरसे जदुराई । तुरत गए ग्रागै सब धाई ।।
मारे मल्ल एक नहिं उबरे । पटकत धरनि स्रवन नृप घुमरे ।।
क्रोध सहित सब कंस प्रचारचौ । ताहि प्रगटि तुरतहि तेहि मारचौ ।।
ग्रमर नाग नर कहि कहि भाषै । सदा ग्रापने जन कौ राखै ।।
राजा उग्रसेन कहवाए । मातु पिता बंदि तै छुड़ाए ।।
इतनौ काज किए हरि नीकै । कुबिजाप्रेम बँधे हरि ही कै ।।
ग्रातुर हरि ताकै घर ग्राए । रानिनि बोधि महल नहिं भाए ।।
चितवत मंदिर भए ग्रवासा । महल महल लागे मनि पासा ।।

जबहिं सुने कुबिजा हरि आए। पाटबर पाँवड़े डसाए ।।
कुबिजा तैं भइ राजकुमारी। रूप कहा कहौं कृष्नपियारी ।।
टेढ़ी तैं हरि सूधी कीन्ही। लच्छन अंग अंग प्रति दीन्ही ।।
राजा हरि कुबिजा पटरानी। मथुरा घरघर सबही जानी ।।
गोप सखा यह सुनत न माने। त्रासहिं मैं सब रहत सकाने ।।
मारयौ कंस सुनत सब सके। बन मोहन आए नहिं दके ।।
ब्रज तैं चले भए घट जामा। व्याकुल महरि होति लै नामा ।।
प्रजा जानि मन मन डरपाही। कैसैं बल मोहन ब्रज जाही ।।
इहिं अतर हरि आए तहई। नंद गोप सब राखे जहँई ।।
नृप ऊधव अक्रूरहिं लीन्हो। तहाँ गवन 'सूरज' प्रभु कीन्ही ।।३१०९।।

राग लबिवल ।। ३७२८ ।।

जदुवसी कुल उदित कियौ।
कस मारि पुहुमी उद्धारी, सुरनि कियौ निर्भय जु हियौ ।।
घर घर नगर अनंद बधाई, मनवाछित फल सवनि लह्यौ ।
निगड़ तोरि मिलि मातु पिता कौ, हर्ष अनल करि दुखहिं दह्यौ ।।
उग्रसेन मथुरा करि राजा, ऐसे प्रभु रच्छक जन कैं ।
कहुँ जनमे, कहुँ कियौ पान पय, राखि लेत भक्तनि पन कैं ।।
आपुन गए नद जहँ बासा, हलधर अग्रज सग लिएँ ।
'सूरज' मिले नंद हरषवंत ह्वै चलिहैं ब्रज अति हरष हिएँ ।। ३११० ।।

राग बिलावल ।। ३७२९ ।।

अरस परस सब ग्वाल कहै।
जब मारयौ हरि रजक आवतहिं, मन जान्यौ हम नहिं निवहैं ।।
वैसौ धनुष तोरि सब जोधा, तिन मारत नहिं बिलँब करयौ ।
मल्ल मतंग तिहूँ पुरगामी, छिनकहि मैं सो धरनि परयौ ।।
वैसे मल्लनि दाँव बिसारयौ, मारि कस निरबंस कियौ ।
सुनहु 'सूर' ये हैं अवतारी इनतैं प्रभु नहिं और बियौ ।। ३१११ ।।

राग बिलावल ।। ३७३० ।।

नद गोप सब सखा निहारत, जसुमति सुत कौ भाव नही ।
उग्रसेन वसुदेव उपँगसुत, सुफलक सुत, वैसैं सँग ही ।।
जबही मन न्यारौ हरि कीन्हौ, गोपनि मन यह ब्यापि गई ।
बोलि उठे इहि अंतर मधुरे, निठुर रूप जो ब्रह्म मई ।।
अति प्रतिपाल कियौ तुम हमरौ, सुनत नंद जिय भभकि रहे ।
'सूरदास' प्रभु की बसुधौ सौं, की मोसौ ये बचन कहे । ३११२ ।।

राग बिलावल ।। ३७३१ ।।

काहि कहत प्रतिपाल कियौ।
मोसौ कहत होइ जनि ऐसो, नैन ढरत नहिं भरत हियौ ।।
संकित नद त्रास बानी सुनि, बिलँब करत यह क्यौ न चलैं ।
कंस मारि रजधानी दीन्ही, ब्रज तैं बहुरौ आनि मिलैं ।।
मन ही मन ऐसी उपजावत, वै उत ब्रह्म ब्रह्मदरसी ।
'सूर' पिता को, मातु कौन है, रहत सवनि मैं वै परसी ।। ३११३ ।।

तब बोले हरि नंद सौं, मधुरै करि बानी ।
गर्ग वचन तुम सौं कह्यौ, नहि निहचै जानी ।।
मैं आयौ संसार मे, भुवभार उतारन ।
तिनकौ तुम धनि धन्य हौ, कीन्हौ प्रतिपारन ।।
मातु पिता मेरै नही तुमतैं अरु कोऊ ।
एक वेर ब्रज लोग कौं, मिलिहौं सुनौ सोऊ ।।
मिलन हिलन दिन चारि कौ, तुम तौ सब जानौ ।
मोकौ तुम अति सुख दियौ, सो कहा बखानौ ।।
मथुरा नरनारी सुनै, व्याकुल ब्रजवासी ।
'सूर' मधुपुरी आइकै, ये भये अविनासी ।। ३११४ ।।

राग टोड़ी ।। ३७३३ ।।

निठुर बचन जनि कहौ कन्हाई । अतिही दुसह सह्यौ नहि जाई ।।
तुम हँसि कै बोलत ये बानी । मेरै नैन भरत है पानी ।।
अब ये बोल कबहुँ जनि बोलौ । तुरत चलहु ब्रज आँगन डोलौ ।।
पथ निहारति जसुमति ह्वैहै । धाइ आइ मारग मैं लैहै ।।
तब नंदहि हलधर समुझावत । कछु करि काज तुरत ब्रज आवत ।।
जननि अकेली व्याकुल ह्वैहै । तुमहि गए कछु धीरज लैहै ।।
बहुत कियौ प्रतिपाल हमारौ । जाइ कहाँ उर ध्यान तुम्हारौ ।।
व्याकुल होन जननि जनि पावै । बार बार कहि कहि समुझावै ।।
व्याकुल नंद सुनत यह बानी । डसी मनौ नागिनी पुरानी ।।
व्याकुल सखा गोप भए व्याकुल । अंतकदसा भए भयआकुल ।।
'सूर' स्याम मुख निरखत ठाढे । मनौ चितेरे लिखि सब काढे ।।३११५।।

राग सोरठ ।। ३७३४ ।।

गोपालराइ हौं न चरन तजि जैहौं ।
तुमहिं छाँड़ि मधुवन मेरे मोहन, कहा जाइ ब्रज लैहौं ।।
कैहौं कहा जाइ जसुमति सौं, जब सम्मुख उठि ऐहै ।
प्रात समय दधि मथत छाँड़ि कै, काहि कलेऊ दैहै ।।
बारह बरस दियौ हम ढीठौ, यह प्रताप बिनु जाने ।
अब तुम प्रगट भए वसुद्यौसुत, गर्ग वचन परमाने ।।
रिपु हति काज सबै कत कीन्हौ, कत आपदा बिनासी ।
डारि न दियौ कमल कर तैं गिरि, दवि मरते ब्रजवासी ।।
बासर संग सखा सब लीन्हे, टेरि न धेनु गरैहौ ।
क्यौं रहिहै मेरे प्रान दरस बिनु, जब संध्या नहिं ऐहौ ।।
ऊरध स्वाँस चरन गति थाकी, नैन नीर मरहाइ ।
'सूर' नंद बिछुरत की वेदनि, मो पै कही न जाइ ।। ३११६ ।।

राग बिलावल ।। ३७३५ ।।

वेगि ब्रज कौं फिरिए नँदराइ ।
हमहिं तुमहिं सुत तात कौ नातौ, और परचौ है आइ ।।
बहुत कियौ प्रतिपाल हमारौ, सो नहिं जी तैं जाउ ।
जहाँ रहैं तहँ तहाँ तुम्हारे, डारचौ जनि बिसराइ ।।

जननि जसोदा भेटि सखा सब, मिलियौ कंठ लगाइ ।
साधु समाज निगम जिनके गुन, मेरैं गनि न सिराइँ ॥
माया मोह मिलन अरु बिछुरन, ऐसैंही जग जाइ ।
'सूर' स्याम के निठुर वचन सुनि, रहे नैन जल छाइ ॥ ३११७ ॥

राग नट ॥ ३७३६ ॥

यह सुनि भए व्याकुल नंद ।
निठुर बानी कही हरि जब, परि गए दुख फंद ॥
निरखि मुख मुख रहे चकित, सखा अरु सब गोप ।
चरित ए अक्रूर कीन्हे, करत मन मन कोप ॥
धाइ चरननि परे हरि कैं, चलहु ब्रज कौ स्याम ।
कंस असुर समेत मारे, सुरनि के करि काम ॥
मोचि बंधन राज दीन्हो, हरष भए वसुदेव ।
'सूर' जसुमति बिनु तुम्हारैं, कौन जानैं देव ॥ ३११८ ॥

राग सोरठ ॥ ३७३७ ॥

नंद विदा होइ घोष सिधारौ ।
बिछुरन मिलन रच्यौ बिधि ऐसौ, यह संकोच निवारौ ॥
कहियौ जाइ जसोदा आगैं, नैंन नीर जनि ढारौ ।
सेवा करी जानि सुत अपनौ, कियौ प्रतिपाल हमारौ ॥
हमैं तुम्हैं अंतर कछु नाहीं, तुम जिय ज्ञान बिचारौ ।
'सूरदास' प्रभु यह बिनती है, उर जनि प्रीति बिसारौ ॥ ३११९ ॥

राग सोरठ ॥ ३७३८ ॥

(मेरे) मोहन तुमहिं बिना नहिं जैहौं ।
महरि दौरि आगे जब ऐहै, कहा ताहि मैं कैहौं ॥
माखन मथि राख्यौ ह्वै है, तुम हेत, चलौ मेरे बारे ।
निठुर भए मधुपुरी आइ कैं, काहैं असुरनि मारे ॥
सुख पायौ बसुदेव देवकी, अरु सुख सुरनि दियौ ।
यहै कहत नँद गोप सखा सब, बिदरन चहत हियौ ॥
तब माया जड़ता उपजाई, निठुर भए जदुराइ ।
'सूर' नंद परमोधि पठाए, निठुर ठगौरी लाइ ॥ ३१२० ॥

राग नट ॥ ३७३९ ॥

नंदहिं कहत हरि ब्रज जाहु ।
कितिक मथुरा ब्रजहि अंतर, जिय कहा पछिताहु ॥
कहा व्याकुल होत अतिही, दूरि हौ कहुँ जात ?
निठुर उर मैं ज्ञान बरत्यौ, मानि लीन्ही बात ॥
नंद भए कर जोरि ठाढे, तुम कहै ब्रज जाउँ ।
'सूर' मुख यह कहत बानी, चित नहीं कहुँ ठाउँ ॥ ३१२१ ॥

राग देवगंधार ॥ ३७४० ॥

मेरे माथैं राखौ चरन ।
दीनदयाल कंस-दुख-भंजन, उग्रसेन सुखहरन ॥

परम मुदित वसुदेव देवकी आए पायनि परन ।
मेरौ दाप मेटि करुनाकर, लै चलौ गोकुल घरन ।।
ते जन पार भए मनमोहन, जे आए तुव सरन ।
एई 'सूरदास' के जीवन, भवजल नौका तरन ।। ३१२२ ।।

राग बिलावल ।। ३७४१ ।।

तुम मेरी प्रभुता वहुत करी ।
परम गँवार ग्वाल पसुपालक, नीच दसा लै उच्च धरी ।।
रोग दोष संताप जनम के, प्रगटत ही तुम सवै हरी ।
अष्ट महा सिधि और नवौ निधि, कर जोरैं मेरे द्वार खड़ी ।।
तीनि लोक अरु भुवन चतुर्दस, वेद पुराननि सही परी ।
'सूरदास' प्रभु अपने जन को, देत परम सुख घरी घरी ।। ३१२३ ।।

राग रामकली ।। ३७४२ ।।

उठे कहि माधौ इतनी वात ।
जिते मान सेवा तुम कीन्हौ, वदलौ दयौ न जात ।।
पुत्र हेत प्रतिपार कियौ तुम, जैसैं जननी तात ।
गोकुल वसत हँसत खेलत मोहि, द्यौस न जान्यौ जात ।।
होहु विदा घर जाहु गुसाईं, माने रहियौ नात ।
ठाढ़ौ थक्यौ उतर नहि आवै, लोचन जल न समात ।।
भए वलहीन खीन तन कंपित, ज्यौ वयारि वस पात ।
धकधकात हिय वहुत 'सूर' उठि, चले नंद पछितात ।। ३१२४ ।।

राग नट ।। ३७४३ ।।

फिरि करि नंद न उत्तर दीन्हौ ।
रोम रोम भरि गयौ वचन सुनि, मनहु चित्र लिखि कीन्हौ ।।
यह तौ परंपरा चलि आई, सुख दुख लाभऽरु हानि ।
हम पर वक्षा मया किए रहियौ, सुत अपनौ जिय जानि ।।
को जलपै काके पग लागै, निरखि वदन सिर नायौ ।
दुख समूह हृदय परिपूरन, चलत कंठ भरि आयौ ।।
अध-अध-पद भुव भई कोटि गिरि जौ लगि गोकुल पैठौ ।
'सूरदास' अँस कठिन कुलिस तैं, अजहुँ रहत तनु वैठौ ।। ३१२५ ।।

राग धनाश्री ।। ३७४४ ।।

चले नंद व्रज कौ समुहाइ ।
गोप सखा हरि वोधि पठाए, सवै चले अकुलाइ ।।
काहूँ सुधि न रही तन की कछु, लटपटात परैं पाइ ।
गोकुल जात फिरत पुनि मधुवन, मन तिन उन्हि चलाइ ।।
विरह सिंधु मैं परे चेत विनु, ऐसैंहि चले वहाइ ।
'सूर' स्याम वलराम छाँडि कै, व्रज आए नियराइ ।। ३१२६ ।।

राग भैरव ।। ३७४५ ।।

वारवार मग जोवति माता । व्याकुल विनु मोहन वलभ्राता ।।
आवत देखि गोप नद साथा । विवि बालक विनु भई अनाथा ।।

धाई धेनु वच्छ ज्यौं ऐसैं। माखन विना रहे घौं कैसैं॥
व्रजनारी हरषित सव धाई। महरि जहाँ तहँ आतुर आई॥
हरषित मातु रोहिनी आई। उर भरि हलधर लेउँ कन्हाई॥
देखे नंद गोप सव देखे। वल मोहन कौं तहाँ न पेखे॥
आतुर मिलनकाज व्रजनारी। 'सूर' मधुपुरी रहे मुरारी॥३१२७॥

राग सोरठ ॥ ३७४६ ॥

नदहिं आवत देखि जसोदा, आगैं लैन गई।
अति आतुर गति कान्ह लैन कौ, मन आनदमई॥
कहँ नवनीतचोर छांड़े विनु देखत नार नई।
तेहिं खन घोष सरोवर मानौ पुरइनि हेम हई॥
गर्ग कथा तव कहि जो सुनाई, सो अव प्रगट भई।
'सूर' मोहि फिरिफिरि आवत गहि, भगरत नेति रई॥ ३१२८ ॥

राग कल्यान ॥ ३७४७ ॥

स्याम राम मथुरा तजि, नंद व्रजहि आए।
वार वार महरि कहति, जनम धिक कहाए॥
कहूँ कहति सुनी नहीं दसरथ, की करनी।
यह सुनि नँद व्याकुल ह्वै, परे मुरछि धरनी॥
टेरि टेरि पुहुमि परति, व्याकुल व्रजनारी।
'सूरज' प्रभु कौन दोष, हमकौं जु बिसारी॥ ३१२९ ॥

राग सारंग ॥ ३७४८ ॥

उलटि पग कैसैं दीन्हौ नंद।
छाँड़े कहाँ उभै सुत मोहन, धिक जीवन मतिमंद॥
कै तुम धन-जोवन-मद-माते, कै तुम छूटे वद।
सुफलक सुत वैरी भयौ हमकौ, लै गयौ आनँदकंद॥
राम कृष्न विनु कैसैं जीजै, कठिन प्रीति कै फंद।
'सूरदास' मैं भई अभागिन, तुम विनु गोकुलचद॥ ३१३० ॥

राग मलार ॥ ३७४९ ॥

दोउ ढोटा गोकुलनायक मेरे।
काहैं नंद छाड़ि तुम आए, प्रान जिवन सव केरे॥
तिनकैं जात वहुत दुख पायौ, रोर परी इहिं खेरे।
गोसुत गाइ फिरत हैं दहुँ दिसि, वै न चरैं तृन घेरे॥
प्रीति न करी राम दसरथ की, प्रान तजे विनु हेरैं।
'सूर' नंद सौं कहति जसोदा, प्रवल पाप सव मेरैं॥ ३१३१ ॥

राग नट ॥ ३७५० ॥

नद कहौ हो कहँ छांडे हरि।
लै जु गए जैसैं तुम ह्यांते, ल्याए किन वैसहिं आगैं धरि॥
पालि पोपि मैं किए सयाने, जिन मारे गज मल्ल कंस अरि।
अव भए तात देवकी वसुद्यौ, वाहँ पकरि ल्याये न न्याव करि॥

देखौ दूध दही घृत माखन, मैं राखे सब वैसैं ही धरि ।
अब को खाइ नंदनदन बिनु, गोकुल मनि मथुरा जु गए हरि ।।
श्रीमुख देखन कौ ब्रजवासो, रहे ते घर आँगन मेरैं भरि ।
'सूरदास' प्रभु के जु सँदेसे, कहे महर आँसू गदगद करि ।। ३१३२ ।।

राग बिहागरौ ।। ३७५१ ।।

यह मति नंद तोहिं क्यौं छाजी ।
हरि रस विकल भयौ नहिं तिहिं छन, कपट कठोर कछू नहिं लाजी ।।
राम कृष्न तजि गोकुल आए, छतिया छोभ रही क्यौं साजी ।
कहा अकाज भयौ दसरथ को, लै जु गयौ अपनी जग बाजी ।।
बातैं ईं पै रहतिं कहन कौं, सब जग जात काल की खाजी ।
'सूर' जसोदा कहति सो धिक मति, जो गिरिधरन बिमुख ह्वै भाजी ।।३१३३।।

राग सोरठ ।। ३७५२ ।।

जसुदा कान्ह कान्ह कै बूझै ।
फूटि न गईं तुम्हारी चारौ, कैसैं मारग सूझै ।।
इक तौ जरी जात बिनु देखैं, अब तुम दीन्हौ फूँकि ।
यह छतिया मेरे कान्ह कुँवर बिनु' फटि न भई द्वै टूक ।।
धिक तुम धिक ये चरन अहौ पति, अध बोलत उठि धाए ।
'सूर' स्याम बिछुरन की हम पैं, दैन बधाई आए ।। ३१३४ ।।

राग सोरठ ।। ३७५३ ।।

नद हरि तुमसौं कहा कह्यौ ।
सुनि सुनि निठुर वचन मोहन के, कैसैं हृदय रह्यौ ।।
छाँड़ि सनेह चले मंदिर कत, दौरि न चरन गह्यौ ।
दरकि न गई बज्र की छाती, कत यह सूल सह्यौ ।।
सुरति करत मोहन की बातैं, नैननि नीर बह्यौ ।
सुधि न रही अति गलित गात भयौ, मनु डसि गयौ अह्यौ ।।
उन्है छाँड़ि गोकुल कत आए, चाखन दूध दह्यौ ।
तजे न प्रान 'सूर' दसरथ लौं, हुतौ जन्म निबह्यौ ।। ३१३५ ।।

राग सोरठ ।। ३७५४ ।।

मेरौ अति प्यारौ नँदनंद ।
आए कहाँ छाँड़ि तुम उनकौ, पोच करी मतिमद ।।
बल मोहन दोउ पीड़ नयन की, निरखत ही आनद ।
सरवर घोष, कुमोदिनि ब्रजजन. स्याम बदन बिनु चंद ।।
काहै न पाइ परे बसुद्यौ के, घालि पाग गर फद ।
'सूरदास' प्रभु अबकैं पठवहु, सकल लोक मुनि बंद ।। ३१३६ ।।

राग सारंग ।। ३७५५ ।।

कहाँ रह्यौ मेरौ मनमोहन ।
वह मूरति जिय तैं नहिं बिसरति, अंग अंग सब सोहन ।।
कान्ह बिना गौवैं सब व्याकुल, को ल्यावै भरि दोहन ।
माखन खात खवावत ग्वालनि, सखा लिए सब गोहन ।।

जब वै लीला मुरति करति ही, चित चाहत उठि जोहन ।
'सूरदास' प्रभु के बिछुरे तैं, मरियत हैं अति छोहन ।। ३१३७ ।।

राग रामकली ।। ३७५६ ।।

तब तू मारिबोई करति ।
रिसनि आगैं कहि जु आवति, अब लै भाँड़े भरति ।।
रोस कै कर दाँवरी लै, फिरति घरघर धरति ।
कठिन यह करी तब जो बाँध्यौ, अब वृथा करि मरति ।।
नृपति कस बुलाइ पठयौ, बहुत कै जिय डरति ।
यह कछुक बिपरीत मो मन, माँझ देखि जु परति ।।
होनहारी होइ है सोइ, अब इहाँ कत अरति ।
'सूर' तब किन फेरि राखे, पाइँ अब किहिं परति ।। ३१३८ ।।

राग अड़ानो ।। ३७५७ ।।

कह ल्यायौ तजि प्रानजिवनधन ।
राम कृष्न कहि मुरछि परी धर, जसुदा देखत ही पुर लोगन ।।
विद्यमान हरि बचन स्रवन मुनि कैसैं गए न प्रान छूटि तन ।
सुनी न कथा राम दसरथ की, अहो न लाज भई तेरैं मन ।।
मद हीन मति भयौ नद अति, होत कहा पछिताने छन छन ।
'सूर' नद फिरि जाहु मधुपुरी, ल्यावहु सुत करि कोटि जतन घन ।।३१३९।।

राग केदारौ ।। ३७५८ ।।

कहौ नद कहाँ छाँडे कुमार ।
कैसे प्रान रहे सुत बिछुरत पूछत है गोपी अरु ग्वार ।।
करुना करैं जसोदा माता नैननि नीर बहैं असरार ।
चितवत नद ठके से ठाढे मानौ हार्यौ हेम जुआर ।।
मुरली धुनि नहिं सुनियत ब्रज मैं सुर नर मुनि नहिं करत कवार ।
'सूरदास' प्रभु के बिछुरे तैं कोउ न झाँकन आवत द्वार ।।३१४०।।

राग नट ।। ३७५९ ।।

ग्वारनि कही ऐसी जाइ ।
भए हरि मधुपुरी राजा बड़े बस कहाइ ।।
सूत मागध वदत बिरदनि वरनि बसुद्यौ तात ।
राजभूषन अग भ्राजत अहिर कहत लजात ।।
मातु पितु बसुदेव दैवै नंद जसुमति नाहिं ।
यह सुनत जल नैन ढारत मीजि कर पछिताहिं ।।
मिली कुबिजा मलै लै कै सो भई अरधंग ।
'सूर' प्रभु बस भए ताकैं करत नाना रग ।। ३१४१ ।।

राग गौरी ।। ३७६० ।।

कुबिजा मिली कह्यौ यह बात ।
मातु पिता बसुदेव देवकी मन दुख सुत्र हरषात ।।
सुदरि भई अंग परसत ही करी सुहागिनि भारी ।
नृपति कान्ह कुबिजा पटरानी हँसति कहति ब्रजनारी ।।

सौति साल उर मैं अति साल्यौ नखसिख लौं भहरानी ।
'सूरदास' प्रभु ऐसेइ माई कहति परस्पर बानी ।। ३१४२ ।।

राग कल्यान ।। ३७६१ ।।

कुबिजा कौ नाम सुनत बिरह अनल जूड़ी ।
रिसनि नारि भहरि उठीं क्रोध मध्य बूड़ी ।।
आवन की आस मिटी ऊरध सब स्वासा ।
कुबिजा नृपदासी हम सब करी निरासा ।।
लोचन जलधार अगग, बिरह नदी बाढ़ी ।
'सूर' स्याम गुन सुमिरत, बैठी कोउ ठाढ़ी ।। ३१४३ ।।

राग धनाश्री ।। ३७६२ ।।

कुबिजा स्याम सुहागिनि कीन्ही । रूप अपार जाति नहि चीन्ही ।।
आपु भए पति वह अरधगी । गोपिनि नाँउ धरयौ नवरगी ।।
वै बहुरवन, नगर की सोऊ । तैसोइ सग बन्यौ अब दोऊ ।।
एक एक तैं गुननि उजागर । वह नागरि, वै तौ अति नागर ।।
वह जो कहति स्याम सोइ मानत । निसिदिन वाकै गुननि बखानत ।।
जानि अनोखी मनहि चुरावै । 'सूरज' प्रभु अब नहि ब्रज आवै ।।३१४४।।

राग रामकली ।। ३७६३ ।।

कुबिजा नई पाई जाइ ।
नवल आपुन वह नवेली, नगर रही खिलाइ ।।
दास दासी भाव मिलि गयौ, प्रेम तैं भए एक ।
निठुर होइ सखि गए हमतैं, जानि सहज अनेक ।।
लैन अब अक्रूर आयौ, तुरत लाग्यो कान ।
नई कुबिजा उन सुनाई, 'सूर' प्रभु मन मान ।। ३१४५ ।।

राग धनाश्री ।। ३७६४ ।।

कैसैं री यह हरि करिहै ।
राधा कौ तजिहैं मनमोहन, कहा कंसदासी धरिहै ।।
कहा कहति वह भइ पटरानी, वै राजा भए जाइ उहाँ ।
मथुरा बसत लखत नहिं कोऊ, को आयौ, को रहत कहाँ ।।
लाज बेचि कूबरी बिसाही, संग न छाँड़त एक घरी ।
'सूर' जाहि परतीति न काहू, मन सिहात यह करनि करी ।। ३१४६ ।।

राग धनाश्री ।। ३७६५ ।।

कुबिजा नहिं तुम देखी है ।
दधि बेचन जब जाति मधुपुरी, मैं नीकै करि पेषी है ।।
महल निकट माली की बेटी, देखत जिहि नरनारि हँसैं ।
कोटि बार पीतरि जौ दाहौ, कोटि बार जो कहा कसैं ।।
सुनियत ताहि सुदरी कीन्ही, आपु भए ताकौ राजी ।
'सूर' मिलै मन जाहि जाहि सौं, ताकौ कहा करे काजी ।। ३१४७ ।।

राग धनाश्री ।। ३७६६ ।।

कोटि करौ वनु प्रकृति न जाइ ।
ए अहीर वह दासी पुर की, विधिना जोरी भली मिलाइ ।।
ऐसेन कौ मुख नाउँ न लीजै, कहा करौ कहि आवत मोहि ।
स्यामहिं दोष किधौं कुबिजा कौ, यहै कहौ मैं बूझति तोहि ।।
स्यामहिं दोष कहा कुबिजा कौ, चेरी चपल नगर उपहास ।
टेढ़ी टेकि चलति पग धरनी, यह जानै दुख 'सूरजदास' ।।३१४८।।

राग नट ।। ३७६७ ।।

हरि ही करी कुब्जिा ढीठ ।
टहल करती महल महलनि संग बैठी पीठ ।।
नैंकुही मुख पाइ भूली, अति गई गरवाइ ।
जात आवत नहीं कोऊ, यहै कहैं पठाइ ।।
वै दिना गए भूलि तोकौ, दिवस दस की बात ।
'सूर' प्रभु दासी लुभाने, ब्रज वधू अनखात ।। ३१४९ ।।

राग नट ।। ३७६८ ।।

देखौ कूवरी के काम ।
अब कहावति पाटरानी, वड़े राजा स्याम ।।
कहत नहिं कोउ उनहिं दासी, वै नहीं गोपाल ।
वै कहावति राजकन्या, वै भए भूपाल ।।
पुरुष कौ री सबै सोहै, कूवरी किहिं काज ।
'सूर' प्रभु कौं कहा कहिऐ, वेचि खाई लाज ।। ३१५० ।।

राग नट ।। ३७६९ ।।

यह सुनि हमहिं आवति लाज ।
जाइ मथुरा कंस मारयौ, कूवरी कैं काज ।।
लोग पुर मैं वसत ऐसेइ, सवनि यहै सुहात ।
कवहुँ कोऊ कहत नाही, स्याम आगैं वात ।।
कहा चेरी नारि कीन्ही, कहा आपुन होत ।
तुम वड़े जदुवंस राजा, मिले दासीगोत ।।
अजहुँ कहै सुनाइ कोऊ, करै कुबिजा दूरि ।
'सूर' डाहनि मरति गोपी, कूवरी कै झूरि ।। ३१५१ ।।

राग विलावल ।।३७७०।।

कंस वध्यौ कुबिजा कैं काज ।
और नारि हरि कौ न मिली कहुँ, कहा गँवाई लाज ।।
जैसैं काग हंस की संगति, लहसुन संग कपूर ।
जैसैं कंचन काँच बरावरि, गेरू काम सिंदूर ।।
भोजन साथ सूद्र ब्राम्हन के, तैसौ उनकौ साथ ।
सुनहु 'सूर' हरि गाइ चरैया, अब भए कुबिजानाथ ।। ३१५२ ।।

राग गौरी ।। ३७७१ ।।

भामिनि कुबिजा सौं रँगराते ।
राजकुमारि नारि जौ पवते, तौ कव अंग समाते ।।

रीझे जाइ तनक चंदन लैं, मधुवन मारग जाते ।
ताको कहा बड़ाई कीजै, ऐसैं रूप लुभाते ॥
ए अहीर वह कंस की दासी, जोरी करी विधाते ।
ब्रजवनिता त्यागी 'सूरज' प्रभु बूझी उनकी बातैं ॥ ३१५३ ॥

राग आसावरी ॥ ३७७२ ॥

वैं कह जानैं पीर पराई ।
सुंदर स्याम कमल-दल-लोचन, हरि हलधर के भाई ॥
मुख मुरली सिर मोर पखौवा, वन वन धेनु चराई ।
जे जमुना जल रंग रँगे हैं, अजहुँ न तजत कराई ॥
वहई देखि कूवरी भूले, हम सब गई विसराई ।
'सूरज' चातक बूंद भई है, हेरत रहे हिराई ॥ ३१५४ ॥

राग नट ॥ ३७७३ ॥

तुम भली निवाही प्रीति, कमल नयन मन मोहन ।
तब कैसै अति प्रेम सौं, हमैं खिलाई फाग ।
अब चेरी के कारनैं, कियौ निमिष मैं त्याग ॥
हम तौ सब गुन आगरी, कुविजा कूवर वाढ़ि ।
कहौ तौ हमहूँ लै चलैं, पाछैं कूवर काढ़ि ॥
जौ पै तुम्हरी रीझ है, चेरिनि सो अति नेहु ।
दृग द्युति दरस दिखाइ कै, हम चेरी करि लेहु ॥
वड़ी वड़ाई रावरी, वाढ़ी गोकुल गाँव ।
सब ब्रज वनितनि ढूंढि कै धरयौ चिरियानौ नावँ ॥
अबहूँ चेरी परिहरौ, राजन् स्वामी मीत ।
या चेरी के कारनै, 'सूर' चलैं ब्रज गीत ॥ ३१५५ ॥

राग जैतश्री ॥ ३७७४ ॥

सखी री, काके मीत अहीर ।
काहे कौ भरि भरि ढारति हौ, नैननि कौ नीर ॥
आगुन पियत पियावत दुहि दुहि, इन धेनुनि के छीर ।
निसिवासर छिन नाहिन विछुरत, हे जो जमुना तीर ॥
मेरे हियै लगति दव दाहति, जारत तन के चीर ।
'सूरदास' प्रभु दुखित जानि कै, छाड़ि गए वेपीर ॥ ३१५६ ॥

राग धनाश्री ॥ ३७७५ ॥

तव तैं मिटे सब आनंद ।
या ब्रज के सब भाग संपदा, लै जु गए नँदनंद ॥
विह्वल भई जसोदा डोलति, दुखित नंद उपनंद ।
धेनु नही पय स्रवति रुचिर मुख, चरति नही तृण कंद ॥
विषम वियोग दहत उर सजनी, वाढ़ि रहे दुख दंद ।
सीतल कौन करै री माई, नाहि इहाँ ब्रजचंद ॥
रथ चढ़ि चले गहे नहि काहू, चाहि रहीं मतिमंद ।
'सूरदास' अब कौन छुड़ावै, परे विरह कै फंद ॥ ३१५७ ॥

राग कान्हरौ ॥ ३७७६ ॥

अब वह सुरति होति कत राजनि।
दिन दस रहे प्रीति करि स्वारथ, हित रहे अपने काजनि ॥
सबै अजान भई सुनि मुरली, वधिक कपट की बाजनि।
अब मन थक्यौ सिंधु के खग ज्यौं, फिरि फिरि सरन जहाजनि ॥
वह नातौ ता दिन तैं टूट्यौ, सुफलकसुत सँग भाजनि।
गोपीनाथ कहाइ 'सूर' प्रभु, मारत अब कत लाजनि ॥ ३१५८ ॥

राग गौरी ॥ ३७७७ ॥

ब्रज री मनौ अनाथ कियौ।
सुनि री सखी जसोदानंदन सुख संदेह दियौ ॥
तब वह कृपा स्यामसुंदर की, कर गिरि टेक लियौ।
अरु प्रतिपाल गाइ ग्वारनि कौ, जल कालिंदि पियौ ॥
यह सब दोष हमहिं लागत है, बिछुरत फट्यौ न हियौ।
'सूरदास' प्रभु नँदनंदन बिनु, कारन कौन जियौ ॥ ३१५९ ॥

राग केदारौ ॥ ३७७८ ॥

अब हम निपटहिं भईं अनाथ।
जैसैं मधु तोरे की माखी, त्यौं हम बिनु ब्रजनाथ ॥
अधरअमृत की पीर मुई हम, बाल दसा तैं जोरि।
सो छँडाइ सुफलकसुत लै गयौ, अनायास ही तोरि ॥
जौ लगि पानि पलक मीडत रहीं, तौ लगि चलि गए दूरि।
करि निरधन निबहे दै माई, आँखिनि रथ-पद-धूरि ॥
निसि दिन करी कृपन की संपति, कियौ न कबहूँ भोग।
'सूर' विधाता रचि राख्यौ वह, कुबिजा के मुख जोग ॥ ३१६० ॥

राग रामकली ॥ ३७७९ ॥

इक दिन नंद चलाई बात।
कहत सुनत गुन राम कृष्न कैं, ह्वै आयौ परभात ॥
वैसैंहिं भोर भयौ जसुमति कौ, लोचन जल न समात।
सुमिरि सनेह बिहरि उर अंतर, ढरि आवत ढरि जात ॥
जद्यपि वै वसुदेव देवकी, हैं निज जननी तात।
बार एक मिलि जाहु 'सूर' प्रभु धाई हू कैं नात ॥ ३१६१ ॥

राग गौरी ॥ ३७८० ॥

चूक परी हरि की सेवकाई।
यह अपराध कहाँ लौं बरनौं, कहि कहि नंद महर पछिताई ॥
कोमल चरन कमल कंटक कुस, हम उन पै बन गाइ चराई।
रंचक दधि के काज जसोदा, बाँधे कान्ह उलूखल लाई ॥
इंद्रप्रकोप जानि ब्रज राखे, बरुन फाँस तैं मोहिं मुकराई।
अपने तन-धन-लोभ कंस डर, आगैं कै दीन्हे दोउ भाई ॥
निकट बसत कबहुँ न मिलि आयौ, इते मान मेरी निठुराई।
'सूर' अजहुँ नातौ मानत है, प्रेम सहित करै नंददुहाई ॥ ३१६२ ॥

राग सोरठ ॥ ३७८१ ॥

हरि की एकौ बात न जानी।
कहौं कत कहँ तज्यौ स्याम कौं, कहति विकल नँदरानी॥
अब ब्रज सून भयौ गिरिधर बिनु, गोकुल मनि बिलगानी।
दसरथ प्रान तज्यौ छिन भीतर, बिछुरत सारँगपानी॥
ठाढ़ी रहै ठगौरी डारी, बोलति गदगद बानी।
'सूरदास' प्रभु गोकुल तजि गए, मथुरा ही मन मानी॥ ३१६३ ॥

राग सारंग ॥ ३७८२ ॥

लै आवहु गोकुल गोपालहि।
पाइँनि परि क्यौं हूँ बिनती करि, छल बल बाहु बिसालहिं॥
अब की बार नैकु दिखरावहु, नंद आपने लालहि।
गाइनि गनत ग्वार गोसुत सँग, सिखवत बैन रसालहिं॥
जद्यपि महाराज सुख संपति, कौन गनै मनि लालहिं।
तदपि 'सूर' वै छिन न तजत है, वा घुँघुची की मालहि॥ ३१६४ ॥

राग सोरठ ॥ ३७८३ ॥

सराहौं तेरौ नंद हियौ।
मोहन सौ सुत छाँड़ि मधुपुरी, गोकुल आनि जियौ॥
कहा कह्यौ मेरे लाल लड़ैतै, जब तू बिदा कियौ।
जीवनप्रान हमारे ब्रज कौ, बसुद्यौ छीनि लियौ॥
कह्यौ पुकारि पारि पनिहारी, बरजत गवन कियौ।
'सूरदास' प्रभु स्यामलाल धन, ले पर हाथ दियौ॥ ३१६५ ॥

राग बिलावल ॥ ३७८४ ॥

जद्यपि मन समुझावत लोग।
सूल होत नवनीत देखि मेरे, मोहन के मुख जोग॥
निसि बासर छतिया लै लाऊँ, बालक लीला गाऊँ।
वैसे भाग बहुरि कब ह्वैहै, मोहन मोद खवाऊँ॥
जा कारन मुनि ध्यान धरैं, सिव अंग बिभूति लगावै।
सो बालक लीला धरि गोकुल, ऊखल साथ बँधावै॥
बिदरत नहीं बज्र कौ हिरदै, हरि बियोग क्यौं सहिऐ।
'सूरदास' प्रभु कमलनयन बिनु, कौनै बिधि ब्रज रहिऐ॥ ३१६६ ॥

राग बिलावल ॥ ३७८५ ॥

ब्रज तजि गए माधव कालि।
स्याम सुंदर कमल लोचन, क्यौं बिसारौं आलि॥
बैठि निसि बासर बिसूरति, बिकल चहुँ दिसि भारि।
कह करौं कृत कर्म अपनौ, काहि दीजै गारि॥
तज्यौ भोजन भवन भूषन, अति बियोग बिहाल।
हित नहीं कोउ काहि पठवौं, करि रही जिय लाल॥
धोख ही धोखैं दगा दै, क्रूर ग्यौ रथ चालि।
'सूर' के प्रभु कहति जसुदा, कहा पायौ पालि॥ ३१६७ ॥

राग कान्हरौ ॥ ३७८६ ॥

नंद ब्रज लीजै ठोकि बजाइ।
देहु बिदा मिलि जाहिं मधुपुरी, जहँ गोकुल के राइ॥
नैननि पंथ कहौ क्यौ सूझ्यौ, उलटि दियौ जब पाइँ।
रघुपति दसरथ कथा सुनी ही, बरु मरते गुन गाइ॥
भूमि मसान बिदित यह गोकुल, मनहु धाइ कै खाइ।
'सूरदास' प्रभु पास जाहिं हम, देखहिं रूप अघाइ॥ ३१६८ ॥

राग सोरठ ॥ ३७८७ ॥

माई हौ किन संग गई।
हौ ए दिन जानत ही बूडी, लोगनि की सिखई॥
मोकौ बैरी भए कुटुब सब, फेरि फेरि ब्रज गाडी।
जौ हौ कैसैहु जान पावती, तौ कत आवति छाँडी॥
अब हौ जाइ जमुन जल बहिहौ, कहा करौ मोहिं राखी।
'सूरदास' वा भाइ फिरति हौ, ज्यौ मधु तोरै माखी॥ ३१६९ ॥

राग मलार ॥ ३७८८ ॥

हौ तौ माई मथुरा ही पै जैहौ।
दासी ह्वै बसुदेव राइ की, दरसन देखत रैहौ॥
राखि राखि एते दिवसनि मोहिं, कहा कियौ तुम नीकौ।
सोऊ तौ अक्रूर गए लै, तनक खिलौना जी कौ॥
मोहिं देखि कै लोग हसैंगे, अरु किन कान्ह हँसै।
'सूर' असीस जाइ दैहौ, जनि न्हातहु बार खसै॥ ३१७० ॥

राग सारंग ॥ ३७८९ ॥

पथी इतनी कहियौ बात।
तुम बिनु इहाँ कुँवर बर मेरे, होत जिते उतपात॥
बकी अघासुर टरत न टारे, बालक बनहिं न जात।
ब्रज पिंजरी रुधि मानौ राखे, निकसन कौ अकुलात॥
गोपी गाइ सकल लघु दीरघ, पीत बरन कृस गात।
परम अनाथ देखियत तुम बिनु, केहिं अवलंबै तात॥
कान्ह कान्ह कै टेरत तब धौ, अब कैसै जिय मानत।
यह व्यवहार आजु लौ है ब्रज, कपट नाट छल ठानत॥
दसहूँ दिसि तैं उदित होत है, दावानल के कोट।
आँखिनि मूँदि रहत सनमुख ह्वै, नामकवच दै ओट॥
ए सब पुष्ट हते हरि जेते, भए एकही पेट।
सत्वर 'सूर' सहाइ करौ अब, समुझि पुरातन हेट॥ ३१७१ ॥

राग सारंग ॥ ३७९० ॥

कहियौ स्याम सौ समुझाइ।
यह नातौ नहिं मानत मोहन, मनौ तुम्हारी धाइ॥
एक बार माखन के काजैं, राखे मैं अटकाइ।
वाकौ बिलग न मानौ मोहन, लागौ मोहि बलाइ॥

बारहिं वार यहै लौ लागी, गहै पथिक के पाइँ ।
'सूरदास' या जननी कौ जिय, राखौ वदन दिखाइ ॥ ३१७२ ॥

राग बिलावल ॥ ३७९१ ॥

जद्यपि मन समुझावत लोग ।
सूल होत नवनीत देखि मेरे, मोहन के मुख जोग ॥
प्रात काल उठि माखन रोटी, को विनु माँगे दैहै ।
को मेरे वा कान्ह कुँवर कौ, छिनु छिनु अकम लैहै ॥
कहियौ पथिक जाइ, घर आवहु, राम कृष्न दोउ भैया ।
'सूर' स्याम कत होत दुखारी, जिनके मो सी मैया ॥ ३१७३ ॥

राग रामकली ॥ ३७९२ ॥

मेरौ कहा करत ह्वैहै ।
कहियौ जाइ वेगि पठवहि गृह, गाइनि को को द्वैहै ॥
दीजै छाँड़ि नगर वारी सव, प्रथम और प्रतिपारौ ।
हमहूँ जिय समुझै नहिं कोऊ, तुम तै हितू हमारौ ॥
आजुहि आजु, कालि काल्हिहिं करि, भलौ जगत जस लीन्हौ ।
आजुहिं कालि कियौ चाहत हौ, राज अटल करि दीन्हौ ॥
परदा 'सूर' वहुत दिन चलतौ, दूहुनि फवती लूटि ।
अंतहु कान्ह आइहै गोकुल, जन्म जन्म की ऊटि ॥ ३१७४ ॥

राग सारंग ॥ ३७९३ ॥

सँदेसौ देवकी सौ कहियौ ।
हौ तौ धाइ तिहारे सुत की, मया करत ही रहियौ ॥
जदपि टेव तुम जानति उनकी, तऊ मोहिं कहि आवै ।
प्रात होत मेरे लाल लड़ैतै, माखन रोटी भावै ॥
तेल उवटनौ अरु तातौ जल, ताहि देखि भजि जाते ।
जोइ जोइ माँगत सोइ सोइ देती, क्रम क्रम करि कै न्हाते ॥
'सूर' पथिक सुनि मोहिं रैनि दिन, बढ़्यौ रहत उर सोच ।
मेरौ अलक लड़ैतौ मोहन, ह्वैहै करत सँकोच ॥ ३१७५ ॥

राग सोरठ ॥ ३७९४ ॥

मेरे कान्ह कमलदल लोचन ।
अवकी वेर वहुरि फिरि आवहु, कहा लगे जिय सोचन ॥
यह लालसा होति मेरै जिय, वैठी देखत रैहौ ।
गाइ चरावन कान्ह कुँवर सौ, वहुरि न कवहूँ कैहौं ॥
करत अन्याव न वरजौ कवहूँ, अरु माखन की चोरी ।
अपने जियत नैन भरि देखौ, हरि हलधर की जोरी ॥
दिवस चारि मिलि जाहु साँवरे, कहियौ यहै सँदेसौ ।
अव की वेर आनि सुख दीजै, 'सूर' मिटाइ अँदेसौ ॥ ३१७६ ॥

राग सोरठ ॥ ३७९५ ॥

अव कैं लाल होहु फिरि वारे ।
कैसै टेव मिटति मन मोहन आँगन, डोलत फिर उघारे ॥

माखन कारन आरि करत जो, उठि पकरत दधि माठ सकारे ।
कछुक भाजि लै जात जु भावत, सुख पावत जब खात ललारे ।।
जा कारन हौ भरमति बिह्वल, लै कर लकुट फिरत गुनहारे ।
'सूरदास' प्रभु तुम मनमोहन, भूप भए देखति हौ प्यारे ।।३१७७।।

राग आसावरी ।। ३७९६ ।।

हौं इहाँ गोकुल ही तैं आई ।
देवकि माइ पाइँ लागति हौ, जसुमति मोहि पठाई ।।
तुमसौं महर जुहार कह्यौ है, पालागन नँदनारी ।
मेरैं हूतौ राम कृष्न कौ, भेटचौ भरि अँकवारी ।।
औरौ एक सँदेस कह्यौ है, कहौ तो तुम्है सुनाऊँ ।
वारक वहुरि तुम्हारे सुत कौ कैसैहु दरसन पाऊँ ।।
तुम जननी जगविदित 'सूर' प्रभु हम हरि की है धाइ ।
कृपा करहु पठवहु इहि नातैं, जीवैं दरसन पाइ ।। ३१८७ ।।

राग सारंग ।। ३७९७ ।।

जौ पै राखति हौ पहिचानी ।
लौ अवकै वह मोहनि मूरति, मोहि दिखावहु आनि ।।
तुम रानी वसुदेव गेहिनी, हम अहीर ब्रजवासी ।
पठैं देहु मेरे लाल लड़ैतै, वारौ ऐसी हाँसी ।।
भली करी कसादिक मारे, सब सुर काज किए ।
अब इनि गैयनि कौन चरावै, भरि भरि लेति हिए ।।
खान पान परिधान राज सुख, सो कोउ कोटि लडावै ।
तदपि 'सूर' मेरौ वाल कन्हैया, माखन ही सचु पावै ।। ३१७९ ।।

राग सोरठ ।। ३७९८ ।।

मेरे कुँवर कान्ह विनु सब कुछ वैसेहि धरचौ रहै ।
को उठि प्रात होत लै माखन, को कर नेति गहै ।।
सूने भवन जसोदा सुत के, गुन गुनि सूल सहै ।
दिन उठि घर घेरत ही ग्वारिनि, उरहन कोउ न कहै ।।
जो ब्रज मैं आनंद हुतौ, मुनि मनसा हू न गहै ।
'सूरदास' स्वामी विनु गोकुल, कौडी हू न लहै ।। ३१८० ।।

राग सारंग ।। ३७९९ ।।

चलत गुपाल के सब चले ।
यह प्रीतम सौं प्रीति निरतर. रहे न अर्ध पले ।।
धीरज पहिल करी चलिवैं की, जैसी करत भले ।
धीर चलत मेरे नैननि देखे, तिहिं छिन आँसु हले ।।
आँसु चलत मेरी वलयनि देखे, भए अंग सिथिले ।
मन चलि रह्यौ हुतौ पहिलैं ही, चले सबैं विमले ।
एक न चलै प्रान 'सूरज' प्रभु, असलेहु साल सले ।। ३१८१ ।।

राग मलार ।। ३८०० ।।

लोग सब कहत सयानी बातैं ।
कहतहि सुगम करत नहिं आवै, सोचि रहति है तातैं ।।

कहत आगि चदन सी सीरी, सती जानि उमहैं।
समाचार ताते अरु सीरे, पाछै जाइ लहैं॥
कहत सबै संग्राम सुगम अति, कुसुम लता करवार।
'सूरदास' सिर देत सूरमा, सोइ जानै व्यौहार॥ ३१८२ ॥

राग मलार ॥ ३८०१ ॥

वातनि सब कोउ जिय समुझावै।
जिहिं विधि मिलनि मिलै वै माधौ, सो विधि कोउ न वतावै॥
जद्यपि जतन अनेक सोचि पचि, त्रिया मनहि विरमावै।
तद्यपि हठी हमारे नैना, और न देख्यौ भावै॥
वासर निसा प्रानबल्लभ तजि, रसना और न गावै।
'सूरदास' प्रभु प्रेमहि लगि कै, कहिऐ जो कहि आवै॥ ३१८३ ॥

राग सारग ॥ ३८०२ ॥

करि गए थोरे दिन की प्रीति।
कहँ वह प्रीति कहाँ यह विछुरनि, कहँ मधुवन की रीति॥
अव की वेर मिलौ मनमोहन, वहुत भई विपरीति।
कैसै प्रान रहत दरसन विनु, मनहु गए जुग वीति॥
कृपा करहु गिरिधर हम ऊपर, प्रेम रह्यौ तन जीति।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे मिलन विनु, भई भुस पर की भीति॥ ३१८४ ॥

राग धनाश्री ॥ ३८०३ ॥

प्रीति करि दीन्ही गरै छुरी।
जैसै वधिक चुगाइ कपट कन, पाछै करत वुरी॥
मुरली मधुर चेप काँपा करि, मोर चद्र फँदवारि।
वक विलोकनि लगी, लोभ वस, सकी न पंख पसारि॥
तरफत छाँड़ि गए मधुवन कौ, वहुरि न कीन्ही सार।
'सूरदास' प्रभु सग कल्पतरु, उलटि न वैठी डार॥ ३१८५ ॥

राग मलार ॥ ३८०४ ॥

देखौ माधौ की मित्राइ।
आई उघरि कनक कलई सी, दै निजु गए दगाइ॥
हम जानै हरि हितू हमारे, उनकै चित्त ठगाइ।
छाँड़ि सुरति सबै ब्रज कुल की, निठुर लोग भए माइ॥
प्रेम निवाहि कहा वै जानै, साँचेई अहिराइ।
'सूरदास' विरहिनी विकल मति, कर मीजै पछिताइ॥ ३१८६ ॥

राग कान्हरौ ॥ ३८०५ ॥

ऐसे हम नहिं जाने स्यामहि।
सेवा करत करी उनि ऐसी, गई जाति कुल नामहिं॥
तन मन प्रीति लाइ जो तोरै, कौन भलाई तामहिं।
वै कह जानै पीर पराई, लुब्ध आपने कामहिं॥
नगर नारि रति के रतिनागर, रते कूविजा वामहिं।
अतहुँ 'सूर' सोइ पै प्रगट, होइ प्रकृति जो जामहिं॥ ३१८७ ॥

राग मलार ॥ ३८०६ ॥

एकहिं बेर दई सब ठेरी।
तब तक डोरि लगाइ कोरि मन, मुरलि अधर धरि टेरी॥
बाट घाट बीथी ब्रज घर. बन, संग लगाए फेरी।
तिनकी यह करि गए पलक मैं, पारि बिरह दुख बेरी॥
जौ पै चतुर सुजान कहावत, गही समुझियाँ मेरी।
बहुरि न 'सूर' पाइहौ हम सी, बिनु दामन की चेरी॥ ३१८८ ॥

राग नट ॥ ३८०७ ॥

अब तौ ऐसेई दिन मेरे।
सुनि री सखी दोष नहिं काहूँ, हरि हित लोचन फेरे॥
मृगमद मलय कपूर कुमकुमा, ये सब सत्य तचे रे।
मंद पवन ससि कुसुम सुकोमल, तेउ देखियत करेरे॥
बन बन बसत मोर चातक पिक, आपुन दिए बसेरे।
अब सोइ बकत जाहि जोइ भावै, बरजे रहत न मेरे॥
जे द्रुम सींचि सींचि अपने कर, किए बढ़ाइ बड़ेरे।
तेइ सुनि 'सूर' किसल गिरिवर भए, आनि नैन मग घेरे॥ ३१८९ ॥

राग ईमन ॥ ३८०८ ॥

नाथ अनाथनि की सुधि लीजै।
गोपी, ग्वाल, गाइ, गोसुत सब, दीन मलीन दिनहिं दिन छीजै॥
नैननि जलधारा बाढ़ी अति, बूड़त ब्रज किन कर गहि लीजै।
इतनी बिनती सुनहु हमारी, बारक हूँ पतिया लिखि दीजै॥
चरन कमल दरसन नव नवका. करुनासिंधु जगत जस लीजै।
'सूरदास' प्रभु आस मिलन की, एक बार आवन ब्रज कीजै॥३१९०॥

राग सारग ॥ ३८०९ ॥

देखियति कालिंदी अति कारी।
अहो पथिक कहियौ उन हरि सौं, भई बिरह जुर जारी॥
गिरिप्रजंक तैं गिरति धरनि धँसि, तरंग तरफ तन भारी।
तट बारू उपचार चूर, जलपूर प्रस्वेद पनारी॥
बिगलित कच कुस काँस कूल पर, पंक जु काजल सारी।
भौंर भ्रमत अति फिरति भ्रमित गति, दिसि दिसि दीन दुखारी॥
निसि दिन चकई पिय जु रटति है, भई मनौ अनुहारी।
'सूरदास' प्रभु जो जमुना गति, सो गति भई हमारी॥३१९१॥

राग सारंग ॥ ३८१० ॥

परेखौ कौन बोल कौ कीजै।
ना हरि जाति न पाँति हमारी, कहा मानि दुख लीजै।
नाहिन मोरचंद्रिका माथैं, नाहिन उर बनमाल।
नहिं सोभित पुहुपनि के भूषन, सुंदर स्याम तमाल॥
नंदनँदन गोपी-जन-बल्लभ, अब नहिं कान्ह कहावत।
बासुदेव, जादवकुलदीपक, बंदी जन बरनावत॥
बिसरयौ सुख नातौ गोकुल कौ, और हमारे अंग।
'सूर' स्याम वह गई सगाई, वा मुरली कैं संग॥ ३१९२ ॥

राग सारंग ॥ ३८११ ॥

सुनियत मुरली देखि लजात।
दूरिहिं तैं सिहासन वठे, सीस नाइ मुसकात॥
मोर पच्छ कौ व्यजन विलोकत, वहरावत कहि वात।
जौ कहुँ सुनत हमारी चरचा, चालत ही चपि जात॥
सुरभी लिखत चित्र की रेखा, सोचँ हू सकुचात।
'सूरदास' जो व्रजहिं विसारयौ, दूध दही कत खात॥ ३१९३ ॥

राग मलार ॥ ३८१२ ॥

कह परदेसी को पतिआरौ।
प्रीति वढ़ाइ चले मधुवन कौं, विछुरि दियौ दुख भारौ॥
ज्यौं जलहीन मीन तरफत, त्यौं व्याकुल प्रान हमारौ।
'सूरदास' प्रभु के दरसन विनु, दीपक भौन अँध्यारौ॥ ३१९४ ॥

राग मलार ॥ ३८१३ ॥

कह परदेसी को पतिआरौ।
पीछैं ही पछिताइ मिलौगे, प्रीति वढ़ाइ सिधारौ॥
ज्यौं मृग नाद रीझि तन दीन्हौ, लाग्यौ वान विषारौ।
प्रीतिहिं लिऐं प्रान वस कीन्हौ. हरि तुम यहै विचारौ॥
वलि अरु वालि सुपनखा बपुरी, हरि तैं कहा दुरायौ।
'सूरदास' प्रभु जानि भले हौ, भरयौ भराइ ढरायौ॥ ३१९५ ॥

राग सारंग ॥ ३८१४ ॥

सखी री हरिहिं दोष जनि देहु।
तातैं मन इतनौ दुख पावत, मेरोइ कपट सनेहु॥
विद्यमान अपने इन नैननि, सूनौ देखति गेहु।
तदपि सखी व्रजनाथ विना उर, फटि न होत वड वेहु॥
कहि कहि कथा पुरातन सजनी, अव नहिं अंतहि लेहु।
'सूरदास' पन यौऽव करौंगी, ज्यौं फिरि फागुन मेहु॥ ३१९६ ॥

राग मलार ॥ ३८१५ ॥

अव कछु औरहि चाल चली:
मदन गुपाल विना या व्रज की, सवै वात वदली॥
गृह कदरा समान सेज भइ, सिहहु चाहि वली।
सीतल चंद मुतौ सखि कहियत, तातैं अधिक जली॥
मृगमद मलय कपूर कुंकुमा, सीचति आदि अली।
एक न फुरत विरह जुर तैं कछु, लागत नाहिं भली॥
अमृत वेलि 'सूर' के प्रभु विनु अव विष फलनि फली।
हरिविधु विमुख नाहिन विगसति, मनसा कुमुद कली॥ ३१९७ ॥

राग मलार ॥ ३८१६ ॥

अव वै घातैं उलटि गई।
जिन वातनि लागत मुख आली, तेऊ दुसह भई॥
रजनी स्याम स्याम सुदर सग, अरु पावस की गरजनि।
सुख समूह की अवधि माधुरी, पिय रसवस की तरजनि॥

मोर पुकार गुहार कोकिला, अलि गुजार सुहाई।
अब लागति पुकार दादुर सम, विनही कुंवर कन्हाई॥
चंदन चंद समीर अगिन सम, तनहिं देत दव लाई।
कालिंदी अरु कमल कुसुम सव, दरसन ही दुखदाई॥
सरस वसंत सिसिर अरु ग्रीपम, हिंतरितु की अधिकाई।
पावस जरैं 'सूर' के प्रभु विनु, तरफत रैनि विहाई॥ ३१९८॥

राग धनाश्री ॥ ३८१७ ॥

अव वै मधुपुरि है माधौ।
जिनकौ वदन विलोकत नैननि, जुग होतौ पल आधौ॥
जिहिं कारन आरिन गइ घर तैं, जिय पद कमलनि वाँधौ।
हिय अंतर चित चाह दाह सौं, लाज महा वन दाधौ॥
सो सपनेहूँ दीठि न आवत, जो इहिं जतननि लाधौ।
'सूरदास तिहिं देखन कारन, नैन मरत है साधौ॥ ३१९९॥

राग सारंग ॥ ३८१८ ॥

अव हौं कहा करौं री माई।
नदनँदन देखैं विनु सजनी, पल भरि रह्यौ न जाई॥
घर के मात पिता सब त्रासत, इहिं कुल लाज लजाई।
वाहर के सब लोग हँसत हैं, कान्ह सनेहिनि आई॥
सदा रहत चित चाक चढ्यौ सो, गृह अँगना न सुहाई।
'सूरदास' गिरिधरन लाड़िले, हँसि करि कंठ लगाई॥ ३२००॥

राग सारंग ॥ ३८१९ ॥

इहिं विरियाँ वन तैं व्रज आवत।
दूरिहिं तैं वह वेनु अधर धरि, वारवार वजावत॥
कवहुँक काहूँ भाँति चतुर चित, अति ऊँचे सुर गावत।
कवहुँक लै लै नाम मनोहर, धौरी धेनु वुलावत॥
इहिं विधि वचन सुनाइ स्याम घन, मुरछे मदन जगावत।
आगम सुख उपचार विरहजुर, वासर अंत नसावत॥
रचि रुचि प्रेम पियासे नननि, क्रम क्रम बलहिं वढ़ावत।
'सूर सकल रसनिधि सुंदर घन, आनँद प्रगट करावत॥ ३२०१॥

राग सारंग ॥ ३८२० ॥

मोहन जा दिन वनहिं न जात।
ता दिन पसु पच्छी द्रुम वेली, विनु देखें अकुलात॥
देखत रूप निधान नैन भरि, तातैं नहीं अघात।
ते न मृगा तृन चरत उदर भरि, भए रहत कृस गात॥
जे मुरली धुनि सुनत स्रवन भरि, ते मुख फल नहिं खात।
ते खग विपिन अधीर कीर पिक, डोलत हैं विलखात॥
जिन वेलिन परसत कर पल्लव, अति अनुराग चुचात।
ते सव सूखी परतिं विटप ह्वै, जीरन से द्रुम पात॥
अति अधीर सव वरस सिथिल सुनि, तन की दसा हिरात।
'सूरजदास' मदनमोहन विनु, जुग सम पल हम जात॥ ३२०२॥

राग सारंग ।। ३८२१ ।।

नहिं बिसरति वह रति ब्रजनाथ ।
हौ जु रही हठि रूठि मौन धरि, सुख ही मै खेलत इक साथ ।।
पचिहारे मै तऊ न मान्यौ, आपुन चरन छुए हँसि हाथ ।
तव रिस धरि सोई उत मुख करि, झुकि ढाँप्यौ उपरैना माथ ।।
रह्यौ न परै प्रेम आतुर अति, जानी रजनी जात अकाथ ।
'सूरस्याम हौ ठगी महा निसि, कहति सुनाइ प्रीति की गाथ ।। ३२०३ ।।

राग नट ।। ३८२२ ।।

ते गुन बिसरत नाही उर तैं ।
जे ब्रजनाथ किए मुनि सजनी, साँचि कहति हौ धुर तैं ।।
मेघ कोपि ब्रज वरपन आयौ, त्रास भयौ पतिसुर तैं ।
विह्वल विकल जानि नँदनदन, करज धरचौ गिरि तुरतैं ।।
एक-समै वन माँझ मनोहर, जाम रैनि रज जुर तैं ।
पत्रभग सुनि सक स्याम घन, सैन दई कर दुरतैं ।।
दैत्य, महावल वहुत पठाए, कंस वली मधुपुर तैं ।
'सूरदास' प्रभु सवै वधे रन, कछु नहि सरचौ असुर तैं ।। ३२०४ ।।

राग विलावल ।। ३८२३ ।।

इतने जतन काहे कौ किए ।
अपने जान जानि नँदनदन, वहुत भयनि सौ राखि लिए ।।
अघ वक वृपभ वच्छ वधन तैं, व्याल जीति दावागि पिए ।
इंद्र मान मेटचौ गिरि कर धरि, छिन छिन प्रति आनद दिए ।।
हरि विछुरन की पीर न जानी, वचन मानि हम वादि जिए ।
'सूरदास' अव वा लालन विनु, कह न सहत ए कठिन हिए ।। ३२०५ ।।

राग सारंग ।। ३८२४ ।।

मिलि विछुरन की वेदन न्यारी ।
जाहि लगै सोई पै जानै, विरह पीर अति भारी ।।
जव यह रचना रची विधाता, तवही क्यौ न सँभारी ।
'सूरदास' प्रभु काहै जिवाई, जनमत ही किन मारी ।। ३२०६ ।।

राग सारंग ।। ३८२५ ।।

विछुरे स्याम वहुत दुख पायौ ।
दिन दिन पीर होति अति गाढी, पल पल वरप विहायौ ।।
व्याकुल भई सकल ब्रजवनिता, नैकु सँदेस न पायौ ।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे मिलन कौं, नैननि अति झर लायौ ।। ३२०७ ।।

राग विलावल ।। ३८२६ ।।

यह कुमया जौ तवहि करते ।
तौ इन पै कत जियत आजु लौ, गोकुल लोग उवरते ।।
केसी तृनावर्त वृपभासुर, कहौ कौन विधि मरते ।
व्योम प्रलंव व्याल दावानल, हरि विनु कौन निवरते ।।
संखचूड वक वकी अघासुर, वरुन इंद्र क्यौ टरते ।
'सूर' स्याम, तौ घोष कहा, जौ इती निठुरई धरते ।। ३२०८ ।।

राग मलार ॥ ३८२७ ॥

हरि हम तब काहे कों राखी।
जब सुरपति ब्रज बोरन लीन्हौ, दियौ क्यों न गिरि नाखी॥
अब लौं हमरी जग मैं चलती, नई पुरानी साखी।
सो क्यों झूठी होइ सखी री, गर्ग कथा जो भाषी॥
तौ हमकौ होती कत यह गति, निसि दिन बरषति आँखी।
'सूरदास' यौं भई फिरति ज्यौं, मधु दूहे की माखी॥ ३२०९ ॥

राग सारंग ॥ ३८२८ ॥

मधुबन तुम क्यौं रहत हरे।
बिरह बियोग स्याम सुंदर के ठाढ़े क्यौं न जरे॥
मोहन बेनु बजावत तुम तर, साखा टेकि खरे।
मोहे थावर अरु जड़ जंगम, मुनि जन ध्यान टरे॥
वह चितवनि तू मन न धरत है, फिरि फिरि पुहुप धरे।
'सूरदास' प्रभु बिरह दवानल, नख सिख लौं न जरे॥ ३२१० ॥

राग केदारो ॥ ३८२९ ॥

जौ सखि नाहिनै ब्रज स्याम।
बरष होत न एक पल सम, अब सु जुग वर याम।
वहै गोकुल, लोग वेई, वहै जमुना ठाम।
वहै गृह जिहि सकल संपति, बन भयो सोइ धाम॥
वहै रतिपति अछत स्यामहि, लै न सकतौ नाम।
'सूर' प्रभु बिनु सब कलेवर, दहन लाग्यौ काम॥ ३२११ ॥

राग जैतश्री ॥ ३८३० ॥

हरि न मिले माइ जनम, ऐसैं, लाग्यौ जान।
चितवत मग दिवस निसा जाति जुग समान॥
चातक पिक बचन सखी, सुनि न परत कान।
चंदन अरु चंद किरनि मनौ अनल भान॥
भूषन तन तज्यौ रनहि आतुर ज्यौं बान।
भीषम लौं सहत मदन अर्जुन के बान॥
सोपति तन सेज 'सूर' चल न चपल प्रान।
दच्छिन रवि अवधि अटक इतनी जिय आन॥ ३२१२ ॥

राग नट ॥ ३८३१ ॥

बिचारत ही लागे दिन जान।
तुम बिनु नंदनंदन इहिं गोकुल, निमि भइ कल्प समान।
मुरलि सब्द, कल धुनि की गरजनि, सुनियत नाहीं कान।
चलत न रथ गहि रही स्याम कौ, अब लागी पछितान॥
है कोउ जाइ कहै माधौ सौं, धीरज धरहिं न प्रान।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस बिनु, फुरत नहीं औसान॥ ३२१३ ॥

राग सारंग ॥ ३८३२ ॥

अब यौं ही लागे दिन जान।
सुमिरत प्रीति लाज लागति है, उर भयो कुलिस समान॥

लोचन रहत बदन बिनु देखे, वचन सुने बिन कान ।
हृदय रहत हरि पानि परस बिनु, छिदत न मनसिज वान ।।
मानौ सखी रहे नहिं मेरे, वै पहिले तन प्रान ।
विधि समेत रचि चले नदसुत, विरह विथा दै आन ।।
विधि वछ हरे और पुनि कीने, वसेइ वेत विषान ।
'सूरदास' ऐसीयै कछु यह, समुभति है अनुमान ।। ३२१४ ।।

राग धनाश्री ।। ३८३३ ।।

ऐसौ कोउ नाहिनै सजनी जो मोहनहि मिलावै ।
बारक बहुरि नंदनंदन कौ, जो ह्याँ लौ लै आवै ।।
पाइनि परि विनती करि मेरी, यह सब दसा सुनावै ।
निसि निकुंज सुख केलि परम रुचि, रास की सुरति करावै ।।
और कौनहू बात की सकुच न, किहुँ विधि की उपजावै ।
पुनि पुनि 'सूर' यहै कहै हरि सौ, लोचन जरत बुझावै ।। ३२१५ ।।

राग केदारौ ।। ३८३४ ।।

बहुरौ देखिवौ इहि भाँति ।
असन बाँटत खात बैठे, बालकन की पाँति ।।
एक दिन नवनीत चोरत, हौ रही दुरि जाइ ।
निरखि मम छाया भजे मैं दौरि पकरे धाइ ।।
पोंछि कर मुख लई कनियाँ, तब गई रिस भागि ।
वह सुरति जिय जाति नाही, रहे छाती लागि ।।
जिन घरनि वह सुख विलोक्यौ, ते लगत अब खान ।
'सूर' बिनु ब्रजनाथ देखे, रहत पापी प्रान ।। ३२१६ ।।

राग केदारौ ।। ३८३५।।

कब देखौ इहि भाँति कन्हाई ।
मोरनि के चँदवा माथे पर, काँध कामरी लकुट सुहाई ।।
वासर के बीतैं सुरभिन सँग, आवत एक महाछवि पाई ।
कान अँगुरिया घालि निकट पुर, मोहन राग अहीरी गाई ।।
क्यौं हुँ न रहत प्रान दरसन बिनु, अब कित जतन करै री माई ।
'सूरदास' स्वामी नहिं आए, वदि जु गए अवध्यौ‌ऽव भराई ।। ३२१७ ।।

राग सारंग ।। ३८३६ ।।

यह जिय हौंसै पै जु रही ।
सुनि री सखी स्याम सुंदर हँसि, बहुरि न बाँह गही ।।
अब वै दिवस बहुरि कब ह्वैहै, ऐसी जात सही ।
कहाँ कान्ह है कहँ री अब हम, कौन बयारि बही ।।
कासौं कहौं कहत नहिं आवै, कहत न परै कही ।
जो कछु हुती हमारी हरि की, हरि कै सँग निबही ।।
इतनी कहतहिं हिलकी लागी, गोविंद गुननि दही ।
'सूरदास' काटे तरिवर ज्यौं, ठाढी ररति रही ।। ३२१८ ।।

।। ३८३७ ।।

ब्रज मैं वै उनहार नहीं ।
ब्रज सब गोप रहे, हरि बिनहीं, स्वाद न दूध दही ।।

ज्यौं द्रुम डार पवन के परसे, दस दिसि परत वही।
वासर विरह भरी अति व्याकुल, कबहुँ न नींद लही॥
दिन दिन देह दुखी अति हरि बिनु, इहि तन बहुत सही।
'सूरदास' हम तब न मुई, अब ये दुख सहन रही॥ ३२१९ ॥

राग जैतश्री ॥ ३८३८ ॥

कहँ लौं मानौं अपनी चूक।
बिनु गुपाल सखि री यह छतिया, ह्वै न गई द्वै टूक॥
तन मन धन घर बन अरु जोबन, ज्यौं भुवंग कौ फूक।
हृदय जरत है दावानल ज्यौं, कठिन बिरह की ऊक॥
जाकी मनि सिर तैं हरि लीन्ही, कहा करै अहि मूक।
'सूरदास' ब्रजबास बसी हम मनौ सासुहि मूक॥ ३२२० ॥

राग मलार ॥ ३८३९ ॥

भलौ ब्रज भयौ धरनि तैं स्वर्ग।
तब इन पर गिरि, अब गिरि पर ये, प्रीति किधौं यह दुर्ग॥
सुर बासुर छल बाल बारि गढ़, अब अवधि मिति छूटी।
प्रिय पति बिरह मदन गढ घेर्यौ, एकौ अनँग न टूटी॥
नैन तड़ाग, स्रवन सूरनि मठ, जब नछत बर बानी।
राम केलि घन पौरि कोट मनु, देखि अमर रजधानी॥
गोरभन गोला गर्जन, घन धूमि दुंदुभिनि रोकी।
कटक रोम कँगूरनि प्रति मनौ आनी अपनी चौकी॥
चढत त्रिभंगी साज साजि सत, धँसत नहीं पल आँखी।
देखहु 'सूर' सनेह स्याम कौ, गगन मँडल हम राखी॥ ३२२१ ॥

राग मलार ॥ ३८४० ॥

सखी री हरि बिनु है दुख भारी।
सिंहिकासुत हरभूषन असि ज्यौं, सोइ गति भई हमारी॥
सिखर-बधु-अरि बयौ न निवारत, पुहुप धनुष कै बिसेष।
चच्छुस्रवा उरहार असी ज्यौं, छिनु दुतिया बपु रेख॥
घट-सुत-असन समयसुत, आनन असी गलित जैसै सेत।
जलधर ब्योम अंबुकन, मुचत नैन होइ बदि लेत॥
जदुपति प्रभु मिलि आनि मिलावहु, हरिसुत आरत जानि।
जैसै हरि करि बधु प्रगट भए, तैसिय आरति मानि॥
पट-आनन-बाहन कानन मैं, घन रजनी तहँ बासी।
'सूरदास' प्रभु चतुर सिरोमनि, सुनि चातक पिक बासी॥ ३२२२ ॥

राग सोरठ ॥ ३८४१ ॥

कहा दिन ऐसै ही चलि जैहै।
सुनि सखि मदनगुपाल अँगन मैं, ग्वालनि संग न ऐहै॥
कबहूँ जात पुलिन जमुना के, बहु बिहार बिधि खेलत।
सुरति होत सुरभी सँग आवत, पुहुप गहे कर झेलत॥
मृदु मुसकानि आनि राख्यौ जिय, चलत कह्यौ है आवन।
'सूर' सुदिन कबहूँ तौ ह्वैहै, मुरली सब्द सुनावन॥ ३२२३ ॥

राग मलार ॥ ३८४२ ॥

स्याम सिधारे कौनैं देस।
तिनकी कठिन करेजौ सखि री, जिनकौ पिय परदेस॥
उन माधौ कछु भली न कीन्हीं, कौन तजन कौ बैस।
छिन भरि प्रान रहत नहिं उन बिनु, निसि दिन अधिक अँदेस॥
अतिहिं निठुर पतियाँ नहिं पठई, काहू हाथ सँदेस।
'सूरदास' प्रभु यह उपजत है, धरिए जोगिनि बेस॥ ३२२४ ॥

राग मलार ॥ ३८४३ ॥

सखी री दिखरावहु वह देस।
कहा कहौं या ब्रज बसि हरि बिनु, लह्यौ न सुख कौ लेस॥
मुख मीठी अक्रूर जु दीन्ही, हम सिसु दीन्हौं जान।
जानि न बधिक बिसेसौं मृग ज्यौं, हनत बिसासी प्रान॥
मैं मधु ज्यौं राखे सँचि मोहन, ते भृंगी की रीति।
दै दृगछाट अवधि लै गवने, सुनियत जहाँ अनीति॥
मोहन बिन हम बसत घोष महँ भई तीसरी साँझ।
'सूरदास' ये प्रान पतित अब, कहा रहत घट माँझ॥ ३२२५ ॥

राग मलार ॥ ३८४४ ॥

गोपालहिं पावौं धौं किहिं देस।
सिंगी मुद्रा कर खप्पर लै, करिहौं जोगिनि भेस॥
कंथा पहिरि बिभूति लगाऊँ, जटा बँधाऊँ केस।
हरि कारन गोरखहिं जगाऊँ, जैसैं स्वाँग महेस॥
तन मन जारौं भस्म चढाऊँ, बिरहा के उपदेस।
'सूर' स्याम बिनु हम है ऐसी, जैसैं मनि बिनु सेस॥ ३२२६ ॥

राग केदारौ ॥ ३८४५ ॥

फिरि ब्रज आइयै गोपाल।
नंद-नृपति-कुमार कहिहैं, अब न कहिहैं ग्वाल॥
मुरलिका धुनि सप्त दिसि दिसि, चलौ निसान बजाइ।
दिगविजय कौ जुवति-मंडल-भूप परिहैं पाइ॥
सुरभि सखा सु सैन भट सँग, उठैगी खुर रैन।
आतपत्र मयूर चंद्रिका, लसत है रबिऐन॥
मधुप बंदी जन सुजस कहि, मदन आयसु पाइ।
द्रुम-लता-बन कुसुम बानक, बसन कुटी बनाइ॥
सकल खग मृग पैक पायक, पौरिया, प्रतिहार।
'सूर' प्रभु ब्रज राज कीजै, आइ अबकी बार॥ ३२२७ ॥

राग जैतश्री ॥ ३८४६ ॥

फिरि ब्रज बसौ गोकुलनाथ।
अब न तुमहिं जगाइ पठवैं, गोधननि के साथ॥
बरजे न माखन खात कबहूँ, दह्यौ देत लुटाइ।
अब न देहिं उराहनौ, नंदघरनि आगैं जाइ॥

आँसू सलिल सबै भइ काया, पल न जात रिस टारे।
'सूरदास' प्रभु यहै परेखौ, गोकुल काहैं बिसारे।। ३२३६ ।।

राग सोरठ ।। ३८५५ ।।

तब तैं नैन अनाथ भए।
जब तैं मदनगुपाल हमारे, ब्रज तजि अनत गए।।
ता दिन तैं पावस दल साजत, जुद्ध निसान हए।
सुभट मोर सायक मुख मोचत, दिन दुख देत नए।।
यह सुनि सोचि काम अबलनि के, तनुगढ आनि लए।
'सूरदास' जिन दए संग सुख, तिन मिलि बैर ठए।। ३२३७ ।।

राग सारंग ।। ३८५६ ।।

नैननि नाध्यौ है झर।
ऊँचे चढि टेरति आतुर सुर, कहि गिरिधर गिरिधर।।
फिरति सदन दरसन के काजैं, ज्यौं झख सूखे सर।
कौन कौन की दसा कहौं सुनि, सब ब्रज तिनतैं पर।।
निसि दिन कलमलाति सुनि सजनी, गाजत मनमथ अर।
'सूरदास' सब रही मौन ह्वै, अतिहिं मैन के भर।। ३२३८ ।।

राग सारंग ।। ३८५७ ।।

अति रस लंपट मेरे नैन।
तृप्ति न मानत पिवत कमल मुख, सुंदरता मधु ऐन।।
दिन अरु रैनि दृष्टि रसना रस, निमिष न मानत चैन।
सोभा सिंधु समाइ कहाँ लौं, हृदय साँकरे ऐन।।
अब यह बिरह अजीरन ह्वै कै, बमि लाग्यौ दुख दैन।
'सूर' बैद ब्रजनाथ मधुपुरी, काहि पठाऊँ लैन।। ३२३९ ।।

राग केदारौ ।। ३८५८ ।।

हरि दरसन कौ तरसत अँखियाँ।
बार बार सिर धुनति बिसूरति, बिरह ग्राह जनु भखियाँ।
'सूर' सुरूप मिलै तैं जीवहिं, काट किनारे नखियाँ।। ३२४०

राग सारंग ।। ३८५९ ।।

लोचन व्याकुल दोऊ दीन।
कसैं रहैं दरस बिनु देखे, बिधु चकोर ज्यौं लीन।।
बिबरन भए खंज ज्यौं दाधे, बारिज ज्यौं जलहीन।
स्यामसिंधु तैं बिछुरि परे है, तरफरात ज्यौं मीन।।
ज्यौं रितुराज बिमुख भृंगी की, छिन छिन बानी छीन।
'सूरदास' प्रभु बिनु गोपालहिं, कत बिधना ये कीन।। ३२४१ ।।

राग सारंग ।। ३८६० ।।

महा दुखित दोउ मेरे नैन।
जा दिन तैं हरि चले मधुपुरी, नैकु न कबहूँ कीन्ही सैन।।

भरे रहत अति नीर न निघटत, जानत नहिं कब दिन कब रैन ।
महा दुखित अतिही श्रम माते, बिन देखे पावत नहि चैन ।।
जौ कबहूँ पलकौ नहि खोलति, चाहत चाहति मूरति मैन ।
छाँड़त छिन मै ग्रे जो सरीरहि, गहि कै व्यथा जात हरि लैन ।।
रसना यहई नेम लियौ है, और नही भाषै मुख बैन ।
'सूरदास' प्रभु जबतै बिछुरे, तब तै सब लागे दुख दैन ।। ३२४२ ।।

राग सारंग ।। ३८६१ ।।

अँखिया करति है अति आरि ।
सुदर स्याम पाहुनै कैं मिस, मिलि न जाहु दिन चारि ।।
बाहँ थकी बायसहिं उडावत, कब देखौ उनहारि ।
मै तौ स्याम स्याम करि टेरति, कालिंदी कै करार ।।
कमलवदन ऊपर द्वै खंजन, मानौ बूड़त वारि ।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस बिनु, सकै न पख पसारि ।। ३२४३ ।।

राग धनाश्री ।। ३८६२ ।।

लोचन लालच तै न टरै ।
हरि मुख एक रंग सँग बीधे, दाधे फेरि जरै ।
ज्यौ मधुकर रुचि रच्यौ केतकी, कटक कोटि अरै ।
तैसेइ लोभ तजत नहिं लोभी, फिरि फिरि फेरि फिरै ।।
मृग ज्यौ सहज सहत सर दारुन, सन्मुख तै न दुरै ।
जानत आहि हतै, तन त्यागत, तापर हितै करै ।।
समुझि न परै कौन सचु पावत, जीवत जाइ मरै ।
'सूर' सुभट हठ छाँड़त नाही, काटे सीस लरै ।। ३२४४ ।।

राग सारंग ।। ३८६३ ।।

लोचन चातक ज्यौ है चाहत ।
अवधि गए पावस की आसा, क्रम क्रम करि निरबाहत ।।
सरिता सिंधु अनेक और सखि, सुत पति सजन सनेह ।
ये सब जल जदुनाथ जलद बिनु, अधिक दहत हैं देह ।।
जब लगि नहिं बरषत ब्रज ऊपर, नव घन स्याम सरीर ।
तौ लगि तृषा जाइ किन 'सूरज' आन ओस कै नीर ।। ३२४५ ।।

राग केदारौ ।। ३८६४ ।।

(मेरे) नैना बिरह की बेलि बई ।
सीचत नैन नीर के सजनी, मूल पताल गई ।।
बिगसित लता सुभाइ आपनै, छाया सघन भई ।
अब कैसै निरवारौ सजनी, सब तन पसरि छई ।।
को जानै काहू के जिय की, छिन छिन होत नई ।
'सूरदास' स्वामी के बिछुरै, लागी प्रेम जई ।। ३२४६ ।।

राग देवगंधार ।। ३८६५ ।।

ब्रज बसि काके बोल सही ।
इन लोभी नैननि के काजैं, परबस भइ जो रहीं ।।

विसरि लाज गइ सुधि नहिं तन की, अब धौं कहा कहौं।
मेरे जिय मै ऐसी आवति, जमुना जाइ वहौं॥
इक वन ढूँढि सकल वन ढूँढौ, कहूँ न स्याम लहौं।
'सूरदास' प्रभु तुम्हारे दरस कौ, इहिं दुख अधिक दहौं॥ ३२४७ ॥

राग केदारौ ॥ ३८६६ ॥

नैना अब लागे पछतान।
बिछुरत उमगि नीर भरि आए, अब न कछू अवासन॥
तब मिलि मिलि कत प्रीति बढावत, अब सो भई विष बान।
तब तौ प्रीति करी आतुर ह्वै, समुझी कछु न अजान॥
अब यह काम दहत निसि वासर, नाही मेरे मान।
भयौ विदेस मधुपुरी हमकौ, क्यौहूँ होत न जान॥
अति चटपटी देखिवैं चाहत, अब लागे अकुलान।
'सूरदास' प्रभु दीन दुखित ये, लै न गए सँग प्रान॥ ३२४८ ॥

राग आसावरी ॥ ३८६७ ॥

हो, ता दिन कजरा मैं दैहौं।
जा दिन नंदनँदन के नैननि, अपने नैन मिलैहौं॥
सुनि री सखी यहै जिय मेरैं, भूलि न और चितैहौं।
अब हठ 'सूर' यहै ब्रत मेरौ, कौंकिर खै मरि जैहौं॥ ३२४९ ॥

राग गौरी ॥ ३८६८ ॥

कहा इन नैननि कौ अपराध।
रसना रटत सुनत जस स्रवननि, इतनौ अगम अगाध॥
भोजन कहै भूख क्यौ भाजति, विनु खाए कह स्वाद।
इकटक रहत, छुटति नहिं कबहूँ, हरि देखन की साध॥
ये दृग दुखी विना वह मूरति, कहौ कहा अब कीजै।
एक वेर ब्रज आनि कृपा करि, 'सूर' सुदरसन दीजै॥ ३२५० ॥

राग मलार ॥ ३८६९ ॥

चितवत ही मधुवन दिन जात।
नैननि नीद परत नहिं सजनी, सुनि सुनि बातनि मन अकुलात॥
अब ये भवन देखियत सूने, धाइ धाइ हमकौ ब्रज खात।
कौन प्रतीति करै मोहन की, जिन छाडे निज जननी तात॥
अनुदिन नैन तपत दरसन कौ, हरद समान देखियत गात।
'सूरदास' स्वामी कै बिछुरे, ऐसी भई हमारी घात॥ ३२५१ ॥

राग गौरी ॥ ३७८० ॥

मथुरा के द्रुम देखियत न्यारे।
ह्याँ है स्याम हमारे प्रीतम, चितवत लोचन हारे॥
कितिक वीच, सँदेसहु दुरलभ, सुनियत टेरि पुकारे।
तुव गुन सुमिरि सुमिरि हम मोहन, मदन बान उर मारे॥
तुम विनु स्याम सवै सुख भूल्यौ, गृह वन भए हमारे।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस विनु, रैनि गनत गइ तारे॥ ३२५२ ॥

राग मलार ॥ ३८७१ ॥

देखि सखी उत है वह गाउँ।
जहाँ वसत नँदलाल हमारे, मोहन मथुरा नाउँ॥
कालिंदी कै कूल रहत है, परम मनोहर ठाउँ।
जौ तन पख होइँ सुनि सजनी, अवहिं उहाँ उड़ि जाउँ॥
होनी होइ होइ सो अवही, इहि व्रज अन्न न खाउँ।
'सूर' नंदनदन सौं हित करि, लोगनि कहा डराउँ॥ ३२५३ ॥

राग सारंग ॥ ३८७२ ॥

लिखि नहिं पठवत है द्वै वोल।
द्वै कौडी के कागद मसि कौ, लागत है वहु मोल?
हम इहि पार, स्याम पैले तट, वीच विरह कौ जोर।
'सूरदास, प्रभु हमरे मिलन कौ, हिरदै कियौ कठोर॥ ३२५४ ॥

राग सारंग ॥ ३८७३ ॥

देखि देखि मधुवन की वाटहिं, धूँधरे भए मेरे नैन।
अवधि गनत अँगुरिनि छाले परे, रटत जु थाके वैन॥
आपुन जाइ मधुपुरी छाए, कुविजा सँग सुख चैन।
'सूरदास' प्रभु अविचल जोरी, वह कुवरी वे वौन॥ ३२५५ ॥

॥ ३८७४ ॥

आली देखत रहे नैन मेरे, वा मधुवन की राह।
कै हरि कौ हम आनि मिलावैं, कै हमही लै जाहि॥
मिलि कै विछुरै पलक न लागे, रहीं दिखाइ दिखाइ।
'सूर' स्याम हम अतिहि दुखित है, सपने हूँ मिलि जाइँ॥ ३२५६ ॥

राग केदारौ ॥ ३८७५ ॥

जव तैं विछुरे कुंजविहारी।
नींद न परै घटै नहिं रजनी, व्रिथा विरह जुर भारी॥
सरद रैनि नलिनी दल सीतल, जगमग रही उजियारी।
रवि किरननि तैं लागति ताती, इहिं सीतल ससि जारी॥
स्रवननि सब्द सुहाइ न सखि री, पिक चातकद्रुम डारी।
उर तैं सखी दूरि करि हारहिं, कंकन धरहिं उतारी॥
'सूर' स्याम विनु दुख लागत है, कुसुमसेज करि न्यारी।
विलखि वदन वृषभानुनंदिनी, करि वहु जतन जु हारी॥ ३२५७ ॥

राग नट ॥ ३८७६ ॥

सुपनैहू मैं देखियै, जो नैन नींद परै।
विरहिनी व्रजनाथ विन कहि, कहा उपाइ करै॥
चंद मंद समीर सीतल, सेज सदा जरै।
कहा करौं किहु भाँति मेरौ, मन न धीर धरै॥
करै जतन अनेक विरहिनि, कछु न चाड़ सरै।
'सूर' सीतल कृष्न विनु, तन कौन ताप हरै॥ ३२५८ ॥

राग सारंग ॥ ३८७७ ॥

इतनी दूरि गोपालहिं माई, नहिं कबहू मिलि आई ॥
कहिऐ कहा, दोष किहिं दीजै, अपनी ही जड़ताई ॥
सोवत मैं सपनैं सुनि सजनी, ज्यौं निधनी निधि पाई।
गनतहिं आनि अचानक कोकिल, उपवन बोलि जगाई ॥
जौ जागी तौ कहू उठि देखौं, बिकल भई अधिकाई।
नूतन किसलै कुसुम दसहु दिसि, मधुकर मदन दुहाई ॥
बिछुरत तन न तज्यौ तेहीं छन, संग न गई हठि माई।
समुझि न परी 'सूर' तिहिं अवसर, कीन्ही प्रीति हँसाई ॥ ३२५९ ॥

राग धनाश्री ॥ ३८७८ ॥

अब ह्याँ हेत है कहाँ।
जहँ वै स्याम मदन मूरति, चलि मोहिं लिवाइ तहाँ ॥
कुटिल अलक, मकराकृत कुंडल, सुंदर नैन बिसाल।
अरुन अधर, नासिका मनोहर, तिलक तरनि ससि भाल ॥
दसन ज्योति दामिनि ज्यौं दमकति, बोलत बचन रसाल।
उर विचित्र बनमाल बनी ज्यौं, कंचन लता तमाल ॥
घन तन पीत बसन सोभित अति, जनु अलि कमल पराग।
बिपुल बाहु भरि कृत परिरंभन, मनहु मलय द्रुम नाग ॥
सोवत हीं सुपने मैं अति सुख, सत्य जानि जिय जागी।
'सूरदास' प्रभु प्रगट मिलन कौं, चातक ज्यौं रट लागी ॥ ३२६० ॥

राग मलार ॥ ३८७९ ॥

सुपनैं हरि आए हौं किलकी।
नीद जु सौति भई रिपु हमकौं, सहि न सकी रति तिल की ॥
जौ जागौं तौ कोऊ नाहीं, रोके रहति न हिलकी।
तन फिरि जरनि भई नख सिख तैं, दिया बाति जनु मिलकी ॥
पहिली दसा पलटि लीन्ही है, त्वचा तचकि तनु पिलकी।
अब कैसैं सहि जाति हमारी, भई 'सूर' गति सिलकी ॥ ३२६१ ॥

राज कान्हरौ ॥ ३८८० ॥

मैं जान्यौ री आए है हरि, चौंकि परे तैं पुनि पछितानी।
इते मान तलफत तनु बहुतै, जैसे मीन तपति बिन पानी ॥
सखि सुदेह तौ जरति बिरहजुर, जतननि नहिं प्रवृती ह्वै आनी।
कहा करौं अब अपथ भए मिलि, बाढी बिथा दुःख दुहरानी ॥
पठवौ पथिक सब समाचार लिखि, बिपति बिरह बपु अति अकुलानी।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस बिनु, कैसे घटति कठिन यह कानी ॥ ३२६२ ॥

राग मलार ॥ ३८८१ ॥

जौ जागी तो कोऊ नाही, अंत लगी पछितान।
जानौ साँच मिले मनमोहन, भूली इहिं अभिमान ॥
नीदहिं मैं मुरझाइ रही हौं, प्रथम पंचसंधान।
अब उर अंतर मेरी माई, स्वपन छुटे छल बान ॥

'सूर' सकति जैसे लछिमन तन, विह्वल ह्वै मुरझान।
ल्याउ सजीवन मूरि स्याम कौ, तौ रहिहै ये प्रान ॥ ३२६३ ॥

राग कल्यान ॥ ३८८२ ॥

हरि विछुरत निसि नीद गई री।
वन पिक, वरह, सिलीमुख मधुव्रत, वचननि हौ अकुलाइ लई री ॥
वह जु हुती प्रतिमा समीप की, सुख सपत्ति दुरित चितई री।
तातै सदा रहति सुनि सजनी, सेज सजल दृग नीर मई री ॥
अवधि अधार जु प्रान रहत है, इनि सवहिनि मिलि कठिन ठई री।
'सूरदास' प्रभु सुधा दरस विनु, भई सकल तन विरह रई री ॥ ३२६४ ॥

राग केदारौ ॥ ३८८३ ॥

वहुरौ भूलि न आँखि लगी।
सुपनैहूँ के सुख न सहि सकी, नीद जगाइ भगी ॥
वहुत प्रकार निमेप लगाए, छुटी नही सठगी।
जनु हीरा हरि लियौ हाथ तै, ढोल वजाइ ठगी ॥
कर मीडति पछिताति विचारति, इहि विधि निसा जगी।
वह मूरति वह सुख दिखरावै, सोई 'सूर' सगी ॥ ३२६५ ॥

राग धनाश्री ॥ ३८८४ ॥

अव सखि नीदौ तौ जु गई।
भागी जिय अपमान जानि जनु सकुचनि ओट लई ॥
तव अति रस करि कत विमोह्यौ, आगम अटक दई।
सुपनैहूँ सजोग सहित नहि, सहचरि सौति भई ॥
कहतहि पोच, सोच मनही मन, करत न वनत खई।
'सूरदास' तन तजै भलै वनै, विधि विपरीति ठई ॥ ३२६६ ॥

राग धनाश्री ॥ ३८८५ ॥

सखी री काहे रहति मलीन।
तनसिंगार कछू देखति नहि, वुधिवल आनँद हीन ॥
मुख तोमर नैननि नहि अँजन, तिलक ललाट न दीन।
कुचिल वस्त्र, अलकै अति रूखी, दिखियत है तन छीन ॥
प्रेम तृपा तीनौ जन जानै, विरही चातक मीन।
'सूरदास' वीतति जु हृदय मैं, जिय जिन परवस कीन ॥ ३२६७ ॥

राग मलार ॥ ३८८६ ॥

हमकौ सपनेहू मैं सोच।
जा दिन ते विछुरे नँदनदन, ता दिन तै यह पोच ॥
मनु गुपाल आए मेरे गृह, हँसि करि भुजा गही।
कहा करौ वैरिनि भइ निद्रा, निमिप न और रही ॥
ज्यौ चकई प्रतिविव देखि कै, आनदै पिय जानि।
'सूर' पवन मिलि निठुर विधाता, चपल कियौ जल आनि ॥ ३२६८ ॥

राग विहागरौ ॥ ३८८७ ॥

हरि विनु वैरिनि नीद वढ़ी।
हौ अपराधिनि चतुर विधाता, काहै वनाइ गढ़ी ॥

तन मन धन जोवन सुख संपत्ति विरहा अनल डढ़ी।
नदनँदन कौ रूप निहारति, अह निसि अटा चढ़ी॥
जिहि गुपाल मेरे वस होते, सो विद्या न पढ़ी।
'सूरदास' प्रभु हरि न मिलै तौ, घर तै भली मढी॥ ३२६९॥

राग मलार॥ ३८८८॥

सुनहु सखी ते धन्य नारि।
जे आपने प्रान वल्लभ की, सपनै हू देखति अनुहारि॥
कहा करौ री चलत स्याम के, पहिलै हि नीद गई दिन चारि।
देखि सखी कछु कहत न आवै, झीखि रही अपमाननि मारि॥
जा दिन तै नैननि अंतर भए, अनुदिन अति वाढत है वारि।
मनहु 'सूर' दोउ सुभग सरोवर, उमँगि चले मरजादा टारि॥ ३२७०॥

राग मलार॥ ३८८९॥

हमकौ जागत रैनि विहानी।
कमल नैन, जग जीवन की सखि, गावत अकथ कहानी॥
विरह अथाह होत निसि हमकौ, विनु हरि समुद समानी।
क्यौ करि पावहि विरहिनि पारहिं, विनु केवट अगवानी॥
उदित सूर चकई मिलाप, निसि अलि जु मिलै अरविंदहि।
'सूर' हमै दिन राति दुसह दुख, कहा कहै गोविंदहि॥ ३२७१॥

राग सोरठ॥ ३८९०॥

पिय विनु नागिनि कारी रात।
जौ कहु जामिनि उवति जुन्हैया, डसि उलटी ह्वै जात॥
जंत्र न फुरत मत्र नहि लागत, प्रीति सिरानी जात।
'सूर' स्याम विनु विकल विरहिनी, मुरि मुरि लहरै खात॥ ३२७२॥

॥ ३८९१॥

तिरिया रैनि घटै सचु पावै।
अंचल लिखति स्वान की मूरति, उडुगन पथहि दिखावै॥
हँसत कुमोदिनि विहँसत पदमिनि, भँवर निकट गुन गावै।
तजत भोग चकई चकवा जल, सारँग वदन छपावै॥
अपने सुख संपति के काजै, कस्यप सुतहि मनावै।
'सूरदास' कंकन द्यौ तवही, तमचुर वचन सुनावै॥ ३२७३॥

राग मलार॥ ३८९२॥

मोकौ माई जमुना जम ह्वै रही।
कैसै मिलौ स्यामसुंदर कौ, वैरिनि वीच वही॥
कितिक वीच मथुरा अरु गोकुल, आवत हरि जु नही।
हम अवला कछु मरम न जान्यौ, चलत न फेंट गही॥
अव पछिताति प्रान दुख पावत, जाति न वात कही।
'सूरदास' प्रभु सुमिरि सुमिरि गुन, दिन दिन सूल सही॥ ३२७४॥

राज धनाश्री॥ ३८९३॥

नैन सलोने स्याम, वहुरि कब आवहिगे।
वै जौ देखत राते राते, फूलनि फली डार॥

हरि विनु फूलझरी सी लागत, झरि झरि परत अँगार।
फूल विनन नहिं जाउँ सखी री, हरि विनु कैसे फूल ॥
सुनि री सखि मोहिं राम दुहाई, लागत फूल त्रिमूल।
जव मैं पनघट जाउँ सखी री, वा जमुना कैं तीर ॥
भरि भरि जमुना उमड़ि चलति है, इन नैननि कैं नीर।
इन नैननि कैं नीर सखी री, सेज भई घरनाउ ॥
चाहति हौं ताही पै चढि कैं, हरि जू कैं ढिग जाउँ।
लाल पियारे प्रान हमारे, रहे अधर पर आइ ॥
'सूरदास' प्रभु कुंजविहारी, मिलत नहीं क्यौं धाइ ॥ ३२७५ ॥

॥ ३८९४ ॥
वै नहिं आए प्रान पियारे। मुरलि वजाइ मन हरे हमारे ॥
तव तैं गोकुल गाँव विसारे। जव लै क्रूर अक्रूर सिधारे ॥
तव तैं ये तन परे जु कारे। जव तैं लागी हृदय दवा रे ॥
'सूरदास' प्रभु जग उजियारे। निसि दिन पपिहा रटत पुकारे ॥३२७६॥

वहुरौ गोपाल मिलै, सुख सनेह कीजै।
नैननि मग निरखि वदन, सोभा रस पीजै ॥
मदनमोहन हिरदै धरि, आसन उर दीजै।
परे न पलक आँखिनि की, देखि देखि जीजै ॥
मान छाँड़ि प्रेम भजन, अपनौ करि लीजै।
'सूर' सोइ सुहागि नारि, जासौं मन भीजै ॥ ३२७७ ॥

राग केदारौ ॥ ३८९६ ॥
सखी री हरि आवहिं किहिं हेत।
वै राजा तुम ग्वारि वुलावत, यहै परेखौ लेत ॥
अव सिर कनक छत्र राजत है, मोर पंख नहिं भावत।
सुनि व्रजराज पीठि दै वैठत, जदुकुल विरद वुलावत ॥
द्वारपाल अति पौरि विराजत, दासी सहस अपार।
गोकुल गाइ दुहत दुख कौ लौं, 'सूर' सहे इक वार ॥ ३२७८ ॥

राग मलार ॥ ३८९७ ॥
चलत न माधौ की गही वाहैं।
वार वार पछितातित तवहि तैं, यहै सूल मन माहैं ॥
घर वन कछु न सुहाइ रैनि दिन, मनहु मृगी दव दाहैं।
मिटति न तपति विना घनस्यामहिं, कोटि घनी घन छाहैं ॥
विलपति अति पछितातित मनहिं मन, चंद गहै जनु राहैं।
'सूरदास' प्रभु दूरि सिधारे, दुख कहिऐ किहिं पाहैं ॥ ३२७९ ॥

राग सारंग ॥ ३८९८ ॥
मन की मन ही माँझ रही।
जव हरि रथ चढि चले मधुपुरी, सव अज्ञान भरी ॥
मति वुधि हरी परी धरनी पर, अति वेहाल खरी।
अंकुस अलक कुटिल भइ आसा, तातैं अवधि वरी ॥

ज्यौ बिनु मनि अहि मूक फिरत है, विधि विपरीत करी।
मन तौ रह्यौ पंपि 'सूरज' प्रभु, माटी रही धरी॥ ३२८०॥

राग सारंग॥ ३८९९॥

मेरौ मन वैसीयै सुरति करै।
मृदु मुसकानि वक अवलोकनि, हिरदै तै न टरै॥
जब गुपाल गोधन सँग आवत, मुरली अधर धरै।
मुख की रेनु भारि अचल सौ, जसुमति अंक भरै॥
संध्या समय घोष की डोलनि, वह सुधि क्यौ बिसरै।
'सूरदास' प्रभु दरसन कारन, नैननि नीर ढरै॥ ३२८१॥

॥ ३९००॥

कह लौ राखिय मन बिरमाई।
इक टक सिव घर नैन न लागत, स्याम-सुता-सुत धनि चलि आई॥
हरिवाहन दिववाम महोदर, तिहिं मति उदित मूरछि महि जाई।
गिरिजा-पति-रिपु नख सिख व्यापत. बसत सुधा प्रिय कथा सुनाई॥
बिरहिनि बिरह आपु बस कीन्हौ, लेहु कमल जिनि पाइँ छुवाई।
वेगिहिं मिलौ 'सूर' के स्वामी, उदधि-सुता-पति मिलिहै आई॥
॥ ३२८२॥

राग धनाश्री॥ ३९०१॥

माधव बिलमि बिदेस रहे।
अमरराज सुत नाम रैन दिन, चितवत नीर वहे॥
मारुत-सुत-पति नंद गेह तजि, हरिभख वचन कहे।
जल-रिपु-नाम जान अब लागी, काके नेह नहे॥
कुंती-पति-पितु तासु नारिघर ता अरि अंग दहे।
घट-सुत-रिपु-तनया-पति सजनी, उर अति कपट गहे॥
सैल-सुता-पति ता सुत-वाहन-बोल न जात सहे।
'सूरदास' यह बिपति स्याम सौ, को समुझाइ कहै॥ ३२८३॥

राग नट नारायण॥ ३९०२॥

मन की मन ही मैं नहिं माति।
सहियत कठिन सूल निसि बासर, कहँ कही नहिं जाति॥
हरि के संग किए सुख जेते, ते अब रिपु भए गात।
स्वाति बूँद इक सीप सु मोती, विष भयौ कदली पात॥
यहई ब्रज येई ब्रजसुंदरि, औरै अब रस रीति।
'सूर' कौन जानै यह बिपदा, जौ भरियत करि प्रीति॥ ३२८४॥

राग मारू॥ ३९०३॥

कमलनैन अपनै गुन, मन हमार बाँध्यौ।
लागत तौ जान्यौ नहिं, विषम बान साध्यौ॥
कठिन पीर बेध्यौ सर, मारि गयौ माई।
लागत तौ जान्यौ नहिं, अब न सह्यौ जाई॥

मंत्र तंत्र केतिक करौ, पीर नाहि जाई।
है कोउ उपचार करै, कठिन दरद माई॥
कैसैहु नँदलाल पाउँ, नैकु मिलौ धाई।
'सूरदास' प्रेमफंद, तोरयौ नहि जाई॥ ३२८५॥

राग सोरठ ॥ ३६०४ ॥

हरि जु हमसौ करी माई, मीन जल की प्रीति।
कितिक दूरि दयालु, माधौ, गई अवधि वितीति॥
तरफि कै उन प्रान दीन्हौ, प्रेम की परतीति।
नीर निकट न पीर जानी, वृथा गए दिन वीति॥
चलत मोहन कह्यौ हमसौ, आइहै रिपु जीति।
'सूर' श्री ब्रजनाथ कीन्ही, सबै उलटी रीति॥ ३२८६॥

राग धनाश्री ॥ ३६०५ ॥

मति कोउ प्रीति कै फद परै।
सादर स्वाति देखि मन मानै, पखी प्रान हरै॥
देखि पतग कहा श्रम कीन्यौ, जीव कौ त्याग करै।
अपने मरिबे तै न डरत है, पावक पैठि जरै॥
और सनेही तोहि बताऊँ, केतकि प्रेम धरै।
सारँग सुनत नाद रस मोह्यौ, मरिबे तै न डरै॥
जैसै चकोर चद कौ चाहत, जल बिनु मीन मरै।
'सूरदास' प्रभु सौ ऐसै करि, मिलै तौ काज सरै॥ ३२८७॥

राग सारंग ॥ ३६०६ ॥

प्रीति करि काहू सुख न लह्यौ।
प्रीति पतग करी पावक सौ, आपै प्रान दह्यौ॥
अलिसुत प्रीति करी जलसुत सौ, संपुट माँझ गह्यौ।
सारग प्रीति करी जु नाद सौ, सन्मुख बान सह्यौ॥
हम जौ प्रीति करी माधव सौ, चलत न कछू कह्यौ।
'सूरदास' प्रभु बिनु दुख पावत, नैननि नीर बह्यौ॥ ३२८८॥

॥ ३६०७ ॥

हेली हिलग की पहिचानि।
जौ पै हिलग हिए मै है री, कहा करै कुलकानि॥
हिलग पतग करी दीपक सौ, तन सौंप्यो है आनि।
कसक्यौ नही जरत ज्वाला मै, सही प्रान की हानि॥
हिलग चकोर करी है ससि सौ, पावक चुगत न मानि।
हिलगहि नाद स्वाद मृग मोह्यौ, बिध्यौ पारधी तानि॥
हिलग आनि बाँध्यौ सब गुन बिच, मधुप कमल हित जानि।
सोई हिलग लाल गिरिधर सौ, 'सूरदास' सुख दानि॥ ३२८९॥

राग मलार ॥ ३६०८ ॥

प्रीति तौ मरिबौऊ न विचारै।
निरखि पतंग ज्योति पावक ज्यौ, जरत न आपु सँभारै॥

प्रीति कुरंग नाद मन मोहित, वधिक निकट ह्वै मारै।
प्रीति परेवा उड़त गगन त, गिरत न आपु सँभारै॥
सावन मास पपीहा बोलत, पिय पिय करि जु पुकारै।
'सूरदास' प्रभु दरसन कारन, ऐसी भाँति विचारै॥ ३२९०॥

राग मलार॥ ३९०९॥

जनि कोउ काहू कै बस होहि।
ज्यौं चकई दिनकर बस डोलत, मोहिं फिरावत मोहि॥
हम तौ रीझि लटू भई लालन, महा प्रेम तिय जानि।
बधन अवधि भ्रमति निसिबासर, को सुरझावत आनि॥
उरझे संग अंगअंगनि प्रति, बिरह बेलि की नाई।
मुकुलित कुसुम नैन निद्रा तजि, रूप सुधा सियराई॥
अति आधीन हीनमति व्याकुल, कहँ लौं कहौं बनाई।
ऐसी प्रीति रीति रचना पर, 'सूरदास' बलि जाई॥ ३२९१॥

राग नट॥ ३९१०॥

दिन ही दिन को सहै वियोग।
यह सरीर नाहिन मेरौ सखि, इते विरह जुर जोग।
रचि स्रककुसुम, सुगंध सेज सजि, बसन कुकुमा बोरि।
नलिनी दलनि दूरि करि उर तैं, कंचुकी के बँद छोरि॥
बनबन जाइ, मोर, चातक, पिक, मधुपनि टेरि सुनाइ।
उदित चंद, चंदन चढ़ाइ उर, त्रिविधि समीर बहाइ॥
रटि मुख नाम स्याम सुंदर कौ, तोहिं सुनाइ सुनाइ।
'सूरदास' स्वामी कृपालु भए, जानि जुवति रसरीति॥
तेहि छिन प्रगट भए मनमोहन, सुमिरि पुरातन प्रीति॥ ३२९२॥

॥ ३९११॥

बिथा माई कौन सौ कहियै।
हम तौ भई जज्ञ के पसु ज्यौं, केतिक दुख सहियै॥
कामिनि भामिनि निसि अरु बासर, कहूँ न सुख लहियै।
मन मैं बिथा मथति लागै यौं, उर अंतर दहियै॥
कबहुँक जिय ऐसी उपजति है, जाइ जमुन बहियै।
'सूरदास' प्रभु हरि नागर बिनु, काकी ह्वै रहियै॥ ३२९३॥

राग मलार॥ ३९१२॥

बोलि सखी चातक पिक, मधुकर अरु मोर।
दिन ही दिन कौन सहै, बिरह बिथा घोर॥
सजि सुगंध सुमन सेज, ससि सौं कहि जाइ।
जैसै यह बीर कर्म, देखै सब आइ॥
लाउ मलय मारुत अरु. रितु बसंत संग।
पूजौं सखि कमल बैन, सनमुख रति रंग॥
नलिनीदल दूरि करै, मगमद कौ पंक।
अब जनि तन राखि लेउँ, मनसिज सर संक॥

'सूरदास' प्रभु कृपालु, कोमल चित गात।
ताही छन प्रगट भए, सुनत प्रिया बात॥ ३२९४॥

राग धनाश्री॥ ३९१३॥

बहुरि न कबहूँ सखी मिलै हरि।
कमल नैन के दरसन कारन, अपनो सो जतन रही बहुतै करि॥
जेइ जेइ पथिक जात मधुवन तन, तिनसौं विथा कहति पाइनि परि।
काहूँ न प्रगट करी जदुपति सौं, दुसह दुरासा गई अवधि टरि॥
धीर न धरत प्रेम व्याकुल चित, लेत उसाँस नीर लोचन भरि।
'सूरदास' तन थकित भई अब, इहि वियोगसागर न सकति तरि॥३२९५॥

राग सारग॥ ३९१४॥

ब्रज मैं दोउ विधि हानि भई।
इक हरि गए कलपतरु, दूजे उपजो विरह जई॥
जैसै हाटक लै रसाइनी, पारहि आगि दई।
जब मन लग्यो दृष्टि तब बोल्यौ, सीसी फूटि गई॥
जैसै बिनु मल्लाह सुदगी, एक नाउ चढई।
बूड़त देह थाह नहि चितवत, मिलनहु पति न दई॥
लरि मरि झगरि भूमि कछु पाई, जस अपजस बितई।
अब लै 'सूर' कहति है उपजी, सब ककरी करुई॥ ३२९६॥

राग मलार॥ ३९१५॥ पावस प्रसंग

ब्रज तै पावस पै न टरी।
सिसिर बसंत सरद गत सजनी, बीती औधि करी॥
उनै उनै घन बरसत चख, उर सरिता सलिल भरी।
कुमकुम कज्जल कीच बहै जनु, कुच जुग पारि परी॥
तामैं प्रगट बिपम ग्रीपम रितु, तिहि अति ताप धरी।
'सूरदास' प्रभु कुमुद बंधु बिनु, विरहा तरनि जरी॥ ३२९७॥

॥ ३९१६॥

ये दिन रुसिबे के नाही।
कारी घटा पौन झकझोरै, लता तरुन लपटाही॥
दादुर मोर चकोर मधुप पिक, बोलत अमृत बानी।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस बिनु, बैरिनि रितु नियरानी॥ ३२९८॥

राग मलार॥ ३९१७॥

अब बरपा कौ आगम आयौ।
ऐसे निठुर भए नँदनदन, सदेसौ न पठायौ॥
बादर जोरि उठे चहूँ दिसि तै, जलधर गरजि सुनायौ।
एकै मूल रही मेरै जिय, बहुरि नही ब्रज छायौ॥
दादुर मोर पपीहा बोलत, कोकिल सब्द सुनायौ।
'सूरदास' के प्रभु सौ कहियौ, नैननि है झर लायौ॥ ३२९९॥

राग मलार॥ ३९१८॥

सँदेसनि मधुवन कूप भरे।
अपने तौ पठवत नहि मोहन, हमरे फिरि न फिरे॥

जिते पथिक पठए मधुवन कौं, बहुरि न सोध करे।
कै वै स्याम सिखाइ प्रमोधे, कै कहुँ बीच मरे॥
कागद गरे मेघ, मसि खूटी, सर दव लागि जरे।
सेवक 'सूर' लिखन कौ आँधौ, पलक कपाट अरे॥ ३३०० ॥

राग मलार ॥ ३६१६ ॥

माई री ये मेघ गाजै।
मनहु काम कोपि चढ्यौ, कोलाहल कटक बढ्यौ,
बरहा पिक चातक जय जय निशान बाजै॥
दामिनि करवार करनि, कंपत सब गात डरनि,
जलधर समेत सेन इंद्र धनु साजै।
अबलनि अकेली करि, अपनी कुल नीति बिसरि,
अवधि मग सकल 'सूर' भहराइ भाजै॥
॥ ३३०१ ॥

राग मलार ॥ ३६२० ॥

ब्रज पर बदरा आए गाजन।
मधुवन कोप ठए मुनि सजनी, फौज मदन लाग्यौ गाजन॥
ग्रीवा गंध्र नैन चातक जल, पिक मुख बाजे बाजन।
चहुँदिसि तै तन बिरहा घेरयौ, कैसैं पावति भाजन॥
कहियत हुते स्याम पर पीरक, आए संकट काजन।
'सूरदास' श्रीपति की महिमा, मथुरा लागे राजन॥ ३३०२ ॥

राग मलार ॥ ३६२१ ॥

देखियत चहूँ दिसि तै घन घोरे।
मानौ मत्त मदन के हथियनि, बल करि बंधन तोरे॥
स्याम सुभग तन चुवत गंडमद, बर तै थोरे थोरे।
रुकत न पवन महावतहू पै, मुरत न अकुस मोरे॥
मनौ निकसि बग पक्ति दंत, उर अवधि सरोवर फोरे।
बिनु बेला बल निकसि नयन जल, कुच कंचुकि बँद बोरे॥
तब तिहि समय आनि ऐरावति, ब्रजपति सौं कर जोरे।
अब सुनि 'सूर' कान्ह केहरि बिनु, गरत गात जैसैं ओरे॥ ३३०३ ॥

राग मलार ॥ ३६२२ ॥

ब्रज पर सजि पावस दल आयौ।
धुरवा धुंध उठी दसहूँ दिसि, गरज निसान बजायौ॥
चातक, मोर, इतर पैदर गन, करत आवाजैं कोयल।
स्याम घटा गज, असनि बाजि रथ, बिच बगपाँति सँजोयल॥
दामिनि कर करवाल, बूंद सर, इहि विधि साजे सैन।
निधरक भयौ चल्यौ ब्रज आवत, अग्र फौजपति मैन॥
हम अबला जानियै तुमहि बल, कहौ कौन विधि कीजै।
'सूर' स्याम अबकै इहि अवसर, आनि राखि ब्रज लीजै॥ ३३०४ ॥

राग मलार ।। ३९२३ ।।

सखी री पावस सैन चलाग्यौ।
पायौ बीच इंद्र अभिमानी, सूनौ गोकुल जाग्यौ ।।
दसहूँ दिसा सधूम देखियत, कपति है अति देह।
मनो चलत चतुरंग चमू, नभ बाढ़ी है खुर खेह ।।
बोलत मोर सैल द्रुम चढ़ि चढ़ि बग जु उडत तरु डारैं।
मनु सहिया फरहरा फिरावत, भाजत कहत पुकारैं ।।
गरजत गगन गयंद गुंजरत, दल दादुर दलकार।
'सूर' स्याम अपने या ब्रज कौ, लागत क्यौं न गुहार ।। ३३०५ ।।

राग मलार ।। ३९२४ ।।

बदरिया बधन बिरहिनी आई।
मारू मोर ररत चातक पिक, चढ़ि नग टेर सुनाई ।।
दामिनि कर करवालै गहै, अरु सायक बूँद बनाई।
मनमथ फौज जोरि चहुँ दिसि तैं, ब्रज सन्मुख ह्वै धाई ।।
नदी सुभर सँदेस क्यौं पठऊँ, बाट बिननहूँ छाई।
इक हम दीन हुती कान्हर बिनु, औ इनि गरज सुनाई ।।
सूनौ घोष बैर तकि हमसौं, इंद्र निसान बजाई।
'सूरदास' प्रभु मिलहु कृपा करि, होति हमारी घाई ।। ३३०६ ।।

राग बिहागरौ ।। ३९२५ ।।

स्याम बिना उनए ये बदरा।
आजु स्याम सपने मैं देखे, भरि आए नैन ढरकि गयौ कजरा ।।
चंचल चपल अतिहिं चित चोरैं, निसि जागत मोकौ भयौ पगरा।
'सूरदास' प्रभु कबहि मिलौगे, तजि गए गोकुल मिटि गयौ झगरा ।।
।। ३३०७ ।।

राग मलार ।। ३९२६ ।।

बरु ए बदरौ बरषन आए।
अपनी अवधि जानि नँदनंदन, गरजि गगन घन छाए ।।
कहियत हैं सुरलोक बसत सखि, सेवक सदा पराए।
चातक पिक की पीर जानि कै, तेउ तहाँ तैं धाए ।।
द्रुम किए हरित हरषि बेली मिली, दादुर मृतक जिवाए।
साजे निबिड नीड़ तृन सँचि सँचि, पछिनहूँ मन भाए ।।
समुझति नहीं चूक सखि अपनी, बहुतै दिन हरि लाए।
'सूरदास' प्रभु रसिक सिरोमनि, मधुबन बसि बिसराए ।। ३३०८ ।।

राग मलार ।। ३९२८ ।।

बहुरि हरि आवहिंगे किहि काम।
रितु बसंत अरु ग्रीषम बीते, बादर आए स्याम ।।
छिन मंदिर छिन द्वार ठाढ़ी, यौं सूखति है धाम।
तारे गनत गगन के सजनी, बीतैं चारौ जाम ।।
औरौ कथा सबै बिसराई, लेत तुम्हारौ नाम।
'सूर' स्याम ता दिन तैं बिछुरे, अस्थि रहै कै चाम ।। ३३०९ ।।

राग मलार ॥ ३६२८ ॥

किधौं घन गरजत नहिं उन देसनि।
किधौं हरि हरषि इंद्र हठि बरजे, दादुर खाए सेषनि ॥
किधौं उहिं देस बगनि मग छाँडे, घरनि न बूँद प्रवेसनि।
चातक मोर कोकिला उहिं बन, बधिकनि बधे बिसेषनि ॥
किधौं उहिं देस बाल नहिं झूलति गावति सखि न सुदेसनि।
'सूरदास' प्रभु पथिक न चलहीं, कासौं कहौं सँदेसनि ॥ ३३१० ॥

राग मलार ॥ ३६२६ ॥

घटा मधुवन पर बरषे जाइ।
हरि घन स्याम बिना सब बिरहिनि बेलि गई कुम्हिलाइ ॥
उग्र तेज जनु भानु तपत ससि, व्याकुल मन अकुलाइ।
करै कहा उपचार सखी री, नैंकु न तपनि बुझाइ ॥
कमल नयन की मुरति जु आवत, तबहि उठति तन ताइ।
'सूर' सुमिरि गुन स्याम सुदर के, सखी रही मुरझाइ ॥ ३३११ ॥

राग मलार ॥ ३६३० ॥

देखौ माई स्याम सुरति अब आवै।
दादुर मोर कोकिला बोलैं, पावस अगम जनावै ॥
देखि घटा घन चाप दामिनी, मदन सिंगार बनावै।
बिरहिनि देखि अनाथ, नाथ बिनु, चढ़ि चटि ब्रज पै आवै ॥
कासौं कहौ जाइ को हरि पैं, यह सदेस सुनावै।
'सूरदास' प्रभु मिलौ कृपा करि, ब्रजबनिता सचुपावै ॥ ३३१२ ॥

राग मलार ॥ ३६३१ ॥

तुम्हारौ गोकुल हो ब्रजनाथ।
घेरचौ है अरि मन्मथ लै, चतुरंगिनि सेना साथ ॥
गरजत अति गंभीर गिरा मनु, मयगल मत्त अपार।
धुरवा धूरि उडत रथपायक, घोरनि की खुरतार ॥
चपला चमचमाति आयुध, बग धुजा अकार।
परत निसाननि घाउ तमकि घन, तरपत जिहिं जिहिं बार ॥
मारू मार करत भट दादुर, पहिरे बिबिध सनाह।
हरे कवच उबरे दिखियत हैं, बरहनि धार्नी धाह ॥
चारे पट धारे चातक पिक, कहत भाजि जनि जाहु।
उनरि उनरि वे परत आनि कैं, जोधा परम उछाहु ॥
अति घायल धीरज दुबाहियौ, तेजहुँ दुरजन दालि।
टूक टूक ह्वै सुभट मनोरथ, आने भाली घालि ॥
यह्यौ अहँकार सुखेत सूरमा, सकति रही उर सालि।
ह्वकत हाथ परै नाही गहि, रहे नाटमल भालि ॥
निसि बासर कै बिग्रह आयो, अति सकेतहिं गाउँ।
कापै करौ पुकार नाथ अब, नाहिन तुम बिनु ठाउँ ॥
नंदकुमार स्याम घन सुदर, कमलनयन सुख धाम।
पठवहुँ बेगि गुहार लगावन, 'सूरदास' जिहिं नाम ॥ ३३१३ ॥

राग मलार ॥ ३६३२ ॥

ऐसौ जो पावस रितु प्रथम सुरति करि माधौ जू आवहि।
बरन बरन अनेक जलधर, अति मनोहर वेष॥
तिहिं समय सखि गगन सोभा, सबहिं तैं सुविसेष।
उड़त खग बग बृंद राजत, रटत चातक मोर॥
बहुत विधि चित रुचि बढ़ावत, दामिनी घन घोर।
धरनि तन तृन रोम पुलकित, पिय समागम जानि॥
द्रुमनि कर बल्ली बियोगिनि, मिलति पति पहिचानि।
हंस सुक पिक सारिका, अलि गुंज नाना नाद॥
मुदित मंडल मेघ बरषत, गत बिहग बिषाद।
कुटज, कुंद, कदंब, कोविद, करनिकार सुकंज॥
केतकी, करवीर बेला, बिमल बहु विधि मंजु।
सघन दल, कलिका अलंकृत, सुमन सुकृत सुबास॥
निकट नैन निहारि माधौ, मन मिलन की आस।
मनुज, मृग, पसु पंछि परिमित, और अमित जु नाम॥
सुमिरि देस, बिदेस परिहरि, सकल आवहिं धाम।
यहै चित्त उपाय सोचति कछु न परत बिचार॥
कौन हित ब्रज बास बिसरयौ, निकट नंद कुमार।
परम सुहृद सुजान सुंदर, ललित गति मृदु हास॥
चारु लोल कपोल कुंडल, डोल ललित प्रकास।
वेनुकर बहु विधि बजावत, गोप सिसु चहुँ पास॥
सुदिन कब जब आँखि देखै, बहुरि बाल बिलास।
बार बार सु बिरहिनी अति, बिरह व्याकुल होति॥
बात बेग बिलोल जैसे, दीन दीपक जोति।
सुनि बिलाप कृपालु 'सूरजदास' करि परतीति॥
दरस दै दुख दूरि कीजे, प्रेम कौ यह रीति॥ ३३१४॥

राग मलार ॥ ३६३३ ॥

आजु घन स्याम की अनुहारि।
आए उनइ साँवरे सजनी, देखि रूप की आरि॥
इंद्र धनुष मनु पीत बसन छवि, दामिनि दसन बिचारि।
जनु बगपाँति माल मोतिनि की, चितवत चित्त निहारि॥
गरजत गगन गिरा गोविंद मनु, सुनत नयन भरे बारि।
'सूरदास' गुन सुमिरि स्याम के, बिकल भई ब्रजनारि॥ ३३१५॥

राग मलार ॥ ३६३४ ॥

कैसे कै भरिहै री दिन सावन के।
हरित भूमि भरे सलिल सरोवर, मिटे मग मोहन आवन के॥
दादुर मोर सोर चातक पिक, सूही, निसा सिरावन के।
गरज चहूँ घन घुमड़ि दामिनी, मदन धनुष धरि धावन के॥
पहिरि कुसुम सारी कंचुकि तन, झुंडनि झुंडनि गावन के।
'सूरदास' प्रभु दुसह घटत क्यों, सोक त्रिगुन सिर रावन के॥ ३३१६॥

राग मलार ॥ ३६३५ ॥

वरषा रितु आई, हरि न मिले माई।
गगन गरजि घन दइ दामिनी दिखाई॥
मोरन वन बुलाइ, दादुरहुँ जगाई।
पपिहा पुकार सखि, सुनतहिं बिकलाई॥
इंद्र धनुष सायक, लै छाँड्यौ रिसाई।
विषम बूंद तातैं रीं, सहि नहिं जाई॥
पथिक लिखाइ पाति, बेगिहि पहुँचाई।
'सूर' विथा जानैं तो, आवैं जदुराई॥ ३३१७॥

॥ ३६३६ ॥

घन गरजत माधौ बिनु माई।
इंद्र कोप करि पहिलैं दाव लियौ, पावस रितु ब्रज खवरि जनाई॥
पिय पिय सब्द चातकहु बोल्यौ, मधुर वचन कोकिला सुनाई।
हरि सँदेस सुनि हमहिं निदरि पुनि, चमकि दामिनी देत दिखाई॥
बाल चरित भावते जी के, सुमिरि स्याम की सुरति जु आई।
'सूरदास' प्रभु बेगि मिलौ किन, विरह सूल कैसैं करि जाई॥३३१८॥

राग मलार ॥ ३६३७ ॥

हरिसुत पावस प्रगट भयौ री।
मारुत सुत-बधू-पितु-प्रोहित, ता प्रतिपालन छाँड़ि गयौ री॥
हर-सुत-वाहन-असन सनेही, सो लागत अँग अनल मयौ री।
मृगमद मोद नहिं भावत दधिसुत भानु-समान भयौ री॥
वारिज-सुत-पति क्रोध कियौ सखि, मेटि मकार दकार दयौ री।
'सूरदास' बिनु सिंधु-सुता-पति, कोपि समर कर चाप लयौ री॥ ३३१९॥

राग मलार ॥ ३६३८ ॥

ऐसे बादर ता दिन आए, जा दिन स्याम गोवर्धन धार्‌यौ।
गरजि गरजि घन बरषन लागे, मानौं सुरपति बैर सँभार्‌यौ॥
भवैं सँजोग जुरे हैं सजनी, चाहत हठ करि घोष उजार्‌यौ।
अब को सात दिवस राखैगो, दूरि गयौ ब्रज कौ रखवारौ॥
जब बलराम हुते या ब्रज मैं, काहू देव न ऐसौ डार्‌यौ।
अब यह भूमि भयानक लागै, बिधना बहुरि कंस अवतार्‌यौ॥
अब वह सुरति करै को हमरी, या ब्रज मैं कोउ नाहिं हमारौ।
'सूरदास' अति बिकल बिरहिनी, गोपिनी पछिलौ प्रेम सँभार्‌यौ॥ ३३२०॥

राग मलार ॥ ३६३९ ॥

जो पै नंदसुवन ब्रज होते।
तौ पै नृप पावस सुनि बिनती, कहत न डरतीं तोतैं॥
अब हम अबला जानि स्याम बिनु, हय गय रथ वर जोते।
हम पर गरजि गरजि घन पठवत, मदन मनावत पोते॥
जो पै गोकुल कर लागत है, लेत न सकल सबोते।
'सूरदास' प्रभु सैलधरन बिनु, कहा सिराइ अब मोते॥ ३३२१॥

राग मलार ॥ ३६४० ॥

अब ब्रज नाहिन नंद कुमार।
इहै जानि अजान मघवा, करी गोकुल आर॥
नैन जलद, निमेष दामिनि, आँसु बरषत धार।
दरस रवि-ससि दुरचौ धीरज, स्वास पवन अकार॥
उरज गिरि मैं भरत भारी, असम काम अपार।
गरज विकल वियोग बानी, रहति अवधि अधार।
पथिक हरि सौं जाइ मथुरा, कहौ बात विचार।
सत्रु सेन सुधाम घेरचौ 'सूर' लगौ गुहार॥ ३३२२॥

राग मलार ॥ ३६४१ ॥

मानौ माई सबनि यहै है भावत।
अब उहिं देस स्याम सुंदर कहँ, कोउ न समौ सुनावत॥
धरत न बन नव पत्र फूल फल, पिक बसंत नहिं गावत।
मुदित न सर सरोज अलि गुंजत, पवन पराग उड़ावत॥
पावस विविध-बरन वर बादर, उमड़ि न अंबर छावत।
दादुर मोर कोकिला चातक, बोलत बचन दुरावत॥
ह्याँ हीं प्रगट निरंतर निसि दिन, हठ करि विरह बढ़ावत।
'सूर' स्याम पर पीर न जानत, कत सरवज्ञ कहावत॥ ३३२३॥

राग मलार ॥ ३६४२ ॥

सखि कोउ नई बात सुनि आई।
यह ब्रजभूमि सकल सुरपति सौं, मदन मिलिक करि पाई॥
घन धावन बगपाँति पटोसिर, बैरख तड़ित सुहाई।
बोलत पिक चातक ऊँचे सुर, फेरत मनौ दुहाई॥
दादुर मोर चकोर मधुप सुक, सुमन समीर सुहाई।
चाहत बास कियौ वृंदावन, विधि सौं कछु न बसाई॥
सीव न चाँपि सक्यौ तब कोऊ, हुते बल कुँवर कन्हाई।
'सूरदास' गिरिधर बिनु गोकुल, ये करिहै ठकुराई॥ ३३२४॥

राग मलार ॥ ३६४३ ॥

बहुरि बन बोलत लागे मोर।
करत सँभार नंद नंदन की, सुनि बादर की घोर॥
जिनके पिय परदेस सिधारे, सो तिय परी निठोर।
मोहिं बहुत दुख हरि बिछुरे कौ, रहत विरह कौ जोर॥
चातक पिक दादुर चकोर ये, सबै मिले हैं चोर।
'सूरदास' प्रभु बेगि न मिलहू, जनम परत हैं ओर॥ ३३२५॥

राग मलार ॥ ३६४४ ॥

(इहि बन) मोर नहीं ए कामवान।
विरह खेत, धनु पुहुप, भृंग गुन, केरिल तरैया रिपु समान॥

लयौ घेरि मन मृग चहुँ दिसि तै, अचुक अहेरी नहिं अजान।
पुहुप सेज घन रचित जुगल बन, क्रीड़त कैसौ वन निधान।।
महा मुदित मन मदन प्रेम रस, उमँग भरे मैमंत जान।
इही अवस्था मिलै 'सूर' प्रभु नाना गद दै जीव दान।। ३३२६।।

राग मलार।। ३९४५।।

आजु बन मोरनि गायौ आइ।
जब तै स्रवन परयौ सुनि सजनी, तब तै रह्यौ न जाइ।।
ब्रज तै बिछुरे मुरलिमनोहर, मनहुँ व्याल गयौ खाइ।
औषद बैद गरुडियौ हरि नहि, मानै मंत्र दुहाइ।।
चातक पिक दुख देत रैनि दिन, पिय पिय वचन सुनाइ।
'सूरदास' हम तौ पै जीवहि, जौ मिलिहै हरि आइ।। ३३२७।।

राग मलार।। ३९४६।।

सिखिनि सिखर चढ़ि टेर सुनायौ।
बिरहिनि सावधान ह्वै रहियौ, सजि पावस दल आयौ।।
नव बादर बानैत, पवन ताजी चढ़ि, चुटक दिखायौ।
चमकत बीजु सेल्ह कर मंडित, गरज निसान बजायौ।।
चातक, पिक, झिल्ली गन दादुर, सब मिलि मारू गायौ।
मदन सुभट कर बान पंच लै, ब्रज सन्मुख ह्वै धायौ।।
जानि बिदेस नंदनंदन कौ, अबलनि त्रास दिखायौ।
'सूर' स्याम पहिले गुन सुमिरै, प्रान जात बिरमायौ।। ३३२८।।

राग मलार।। ३९४७।।

घन गरजत बरज्यौ नहिं मानत, त्यौ त्यौ रटत खरे।।
करि करि प्रगट पंख हरि इनके, लै लै सीस धरे।
याही तै न बदत बिरहिनि कौ, मोहन ढीठ करे।।
को जानै काहे तै सजनी, हमसौ रहत अरे।
'सूरदास' परदेस बसे हरि, ये बन तै न टरे।। ३३२९।।

राग मलार।। ३९४८।।

कोउ माई बरजै री इन मोरनि।
टेरत बिरह रह्यौ न परे छिन, सुनि दुख होत करोरनि।।
चमकत चपल चहूँ दिसि दामिनि, अंबर घन की घोरनि।
बरषत बूँद बान सम लागत, क्यौ जीवै इन जोरनि।।
'सूरदास' तौ ही पै जीवहि, मिलिहै नंद किसोरनि।। ३३३०।।

राग मलार।। ३९४९।।

रहु रहु रे बिहंग बनवासी।
तेरे बोलत रजनी बाढ़ति, स्रवननि सुनत नींद हू नासी।।
कहा कहौ कोउ मानत नाही, इक चंदन अरु चंद तरासी।
'सूरदास' प्रभु जौ न मिलैंगे, तौ अब लैहौ करवट कासी।। ३३३१।।

राग मलार।। ३९५०।।

बहुरि पपीहा बोल्यौ माई।
नींद गई चिंता चित बाढी, सुरति स्याम की आई।।

सावन मास मेघ को बरषा, हौ उठि आँगन आई।
चहुँ दिसि गगन दामिनी कौधति, तिहिं जिय अधिक डराई॥
काहूँ राग मलार अलाप्यौ, मुरलि मधुर सुर गाई।
'सूरदास' बिरहिनि भइ व्याकुल, धरनि परी मुरझाई॥ ३३३२॥

राग मलार॥ ३६५१॥

सारँग स्यामहिं सुरति कराइ।
पौढ़े होहिं जहाँ नँदनंदन, ऊँचे टेरि सुनाइ॥
गइ ग्रीषम पावस रितु आई, सब काहूँ चित लाइ।
तुम बिनु ब्रजवासी यौं डोलैं, ज्यौं करिया बिन नाइ॥
तुम्हरी कहौ मानिहै मोहन, चरण पकरि लै आइ।
अब की बेर 'सूर' के प्रभु को, नैननि आनि दिखाइ॥ ३३३३॥

राग मलार॥ ३६५२॥

सखी री चातक मोहिं जियावत।
जैसहि रैनि रटति हौ पिय पिय, वैसहि वह पुनि गावत॥
अतिहि सुकंठ, दाह प्रीतम कै, तारू जीभ न लावत।
आपुन पियत सुधा रस अंमृत, बोलि बिरहिनी प्यावत॥
यह पंछी जु सहाइ न होतौ, प्रान महा दुख पावत।
जीवन सुफल 'सूर' ताही कौ, काज पराए आवत॥ ३३३४॥

राग सारंग॥ ३६५३॥

चातक न होइ कोउ बिरहिनि नारी।
अजहूँ पिय पिय रजनि सुरति करि, झूठै ही मुख माँगत बारि॥
अति कृस गात देखि सखि याकौ, अहनिसि बानी रटत पुकारि।
देखौ प्रीति बापुरे पसु की, आन जनम मानत नहिं हार॥
अब पति बिनु ऐसौ लागत है, ज्यौं सरवर सोभित बिनु बारि।
त्यौं ही 'सूर' जानिये गोपी, जौ न कृपा करि मिलहु मुरारि॥३३३५॥

राग आसावरी॥ ३६५४॥

अब मेरी को बोलै साखि।
कैसैं हरि के संग सिधारैं, अब लौ यह तन राखि॥
प्रान उदान फिर बन बीथिनि अवलोकनि अभिलाषि।
रूप रंग रस रासि परान्यौ, बचन न आवै भाषि॥
'सूर' सजीवन मूरि मुकंदहिं, लै आई ही आँखि।
अब सोइ अंजन देति सुरचि करि, जिहिं जीजै मुख चाखि॥ ३३३६॥

राग मलार॥ ३६५५॥

बहुत दिन जीवौ पपिहा प्यारौ।
बासर रैनि नाम लै बोलत, भयौ बिरह जुर कारौ॥
आपु दुखित पर दुखित जानि जिय, चातक नाम तुम्हारौ।
देख्यौ सकल बिचारि सखी जिय, बिछुरन कौ दुख न्यारौ॥
जाहि लगै सोई पै जानै, प्रेम बान अनियारौ।
'सूरदास' प्रभु स्वाति बूँद लगि, तज्यौ सिंधु करि खारौ॥ ३३३७॥

राग मलार ॥ ३६५६ ॥

(हौं तौ मोहन के) बिरह जरी रे तू कत जारत।
रे पापी तू पखि पपीहा, पिय पिय करि अधराति पुकारत॥
करी न कछु करतूति सुभट की, मूठि मृतक अवलनि सर मारत।
रे सठ तू जु सतावत औरनि, जानत नहिं अपने जिय आरत॥
सब जग सुखी दुखी तू जल बिनु, तऊ न उर की व्यथा बिचारत।
'सूर' स्याम बिनु ब्रज पर बोलत, काहे अगिलौ जनम बिगारत॥३३३८॥

राग नट ॥ ३६५७ ॥

जौ तू नैंकहूँ उड़ि जाहि।
कहा निसि बासर बकत बन, बिरहिनी तन चाहि॥
बिबिध बचन सुदेस बानी, इहाँ रिझवत काहि।
पति बिमुख पिक परुष पसु लौ इतौ कहा रिसाहि॥
नाहिन कोउ सुनत समुझत, बिकल बिरह-बिथाहि।
राखि लै तनु वा अवधि लौ, मदन मुख जनि खाहि॥
तुहूँ तौ तन दग्ध देखियत, बहुरि कह समुझाहि।
करि कृपा ब्रज 'सूर' प्रभु बिनु, मौन मोंहि बिमाहि॥ ३३३९॥

राग सारंग ॥ ३६५८ ॥

कोकिल हरि कौ बोल सुनाउ।
मधुबन तै उपहारि स्याम कौ, इहिं ब्रज कौ लै आउ॥
जा जस कारन देत सयाने, तन मन धन सब काज साज॥
सुजस बिकात बचन के बदलै, क्यौं न बिसाहतु आज॥
कीजै कछु उपकार परायौ, इहै सयानौ काज।
'सूरदास' पुनि कहँ यह अवसर, बिनु बसंत रितुराज॥ ३३५०॥

राग सारंग ॥ ३६५६ ॥

सुनि री सखी समुझि सिख मेरी।
जहाँ बसत जदुनाथ जगतमनि, बारक तहाँ आउ दै फेरी॥
तू कोकिला कुलीन कुसल मति, जानति बिथा बिरहिनी केरी।
उपवन बैसि बोलि बर बानी, बचन सुनाइ हमहिं करि चेरी॥
कहियौ प्रगट सुनाइ स्याम सौं, अबला आनि अनँग अरि घेरी।
तो सी नहीं और उपकारिनि, यह बसुधा सब बुधि करि हेरी॥
प्राननि के बदलै न पाइयतु, सेंत बिकाइ सुजस की ढेरी।
ब्रज लै आउ 'सूर' के प्रभु कौं, गाऊँगी कल कीरति तेरी॥३३४१॥

राग मलार ॥ ३६६० ॥

अब यह बरषौ बीति गई।
जनि सोचहि, सुख मानि सयानी, भली रितु सरद भई॥
फुल्ल सरोज सरोवर सुंदर, नव बिधि नलिनि नई।
उदित चारु चंद्रिका किरन, उर अंतर अमृत-मई॥
घटी घटा अभिमान मोह मद, तमिता तेज हई।
सरिता संजम स्वच्छ सलिल सब, फाटी काम कई॥

यहै सरद संदेस 'सूर', सुनि करुना कहि पठई।
यह सुनि सखी सयानी आई, हरिरति अवधि हई॥ ३३४२॥

राग मारू॥ ३६६१॥

सरद समै हू स्याम न आए।
को जानै काहे तै सजनी, किहि बैरिनि बिरमाए॥
अमल अकास कास कुसुमित छिति, लच्छन स्वच्छ जनाए।
सर सरिता सागर जल उज्ज्वल, अति कुल कमल सुहाए॥
अहि मयंक, मकरंद कज अलि, दाहक गरल जिवाए।
प्रीतम रंग संग मिलि सुदरि, रचि सचि सीचि सिराए॥
सूनी सेज तुषार जमत चिर, बिरह सिधु उपजाए।
अब गइ आस 'सूर' मिलिवे की, भए ब्रजनाथ पराए॥३३४३॥

राग नट॥ ३६६२॥

गोविंद बिनु कौन हरै नैननि की जरनि।
सरद निसा अनल भई, चंद भयौ तरनि॥
तन मै सताप भयौ, दुरयौ अनद घरनि।
प्रेम पुलक बार बार, अँसुअन की ढरनि॥
वै दिन जो सुरति करौ, पाइनि की परनि।
'सूर' स्याम क्यौ बिसारी, लीला बन करनि॥ ३३४४॥

राग देसकार॥ ३६६३॥

सबै रितु औरै लागति आहि।
सुनि सखि वा ब्रजराज बिना सब, फीकौ लागत चाहि॥
वै घन देखि नैन बरषत हैं, पावस गऐ सिरात।
सरद सनेह सँचै सरिता उर, मारग ह्वै जल जात॥
हिम हिमकर देखे उपजत अति, निसा रहति इहि जोग।
सिसिर बिकल कांपत जु कमल उर, सुमिरि स्याम रस भोग॥
निरखि बसंत बिरह बेली तन, वे सुख दुख ह्वै फूलत।
ग्रीषम काम निमिष छाँडत नहि, देह दसा सब भूलत॥
षट् रितु ह्वै इक ठाम कियौ तनु, उठे त्रिदोष जुरै।
'सुर' अवधि उपचार आजु लौ, राखे प्रान भुरै॥ ३३४५॥

राग नट॥ ३६६४॥

मै सब लिखि सोभा जु बनाई।
सजल-जलद तन, बसन कनक रुचि, उर बहु दाम सुराई॥
उन्नत कँध, कटि खीन, बिसद भुज, अंग अंग सुखदाई।
सुभग कपोल नासिका की छबि, अलक हिलत दुति पाई॥
जानति ही यह लोल लेख करि, ऐसैहि दिन बिरमाई।
'सूरदास' मृदु बचन स्रवन कौ, अति आतुर अकुलाई॥ ३३४६॥

राग आसावरी॥ ३६६५॥

इक दिन मुरली स्याम बजाई।
मोहे सुर नर औंर सकल मुनि, उनै बदरिया आई॥

जमुना नीर प्रवाह थकित भयौ, चलै नही जु चलाई।
गाइनि के मुख दाँतनि तृन रहे, वच्छ न छीर पिवाई॥
द्रुम वेली अनुराग पुलकि तनु, ससि थकि निसि न घटाई।
'सूरदास' प्रभु मिलिवै कारन, चली सखी सुधि पाई॥ ३३४७॥

राग मलार॥ ३९६६।

मुरली कौन वजावै आज।
वै अक्रूर क्रूर करनी करि, लै जु गए व्रजराज॥
कंस केसि मुष्टिक संहारचौ, कियौ सुरनि कौ काज।
उग्रसेन राजा करि थापे, सवहिन के सिरताज॥
कृष्नहिं छाँड़ि नद गृह आए, क्यौंऽव जिये उन वाज।
'सूरज' प्रभु विष मूरि खाइहै, यहै हमारौ साज॥ ३३४८॥

राज सारंग॥ ३९६७॥

हरि विनु मुरली कौन वजावै।
सुंदर स्याम कमल लोचन विनु, को मधुरे सुर गावै॥
ये दोउ स्रवन सुधा रस पोषै को व्रज फेरि वसावै।
ऐसौ निठुर कियौ हरि जू मन, पंथी पंथ न आवै॥
छाँड़ी सुरति नंद जसुमति की, हमरी कौन चलावै।
'सूर' स्याम कौ प्रीति पाछिली, को अव सुरति करावै॥ ३३४९॥

राग मलार॥ ३९६८॥

माई वहुरि न वाजी वेन।
को जैहै मेरे खरिक दुहावन, गाइनि, रही फिरि ऐन।
सूनौ घर सूनी सुख सेज्या, जहाँ करत सुख सैंन।
सूने ग्वालवाल सव गोपी, नही कहूँ उन चैन॥
व्रज की मनि, गोकुल कौ नायक, कियो मधुपुरी गैन।
'सूरदास' प्रभु के दरसन विनु, तृषित न मानत नैन॥ ३३५०॥

राग कान्हरौ॥ ३९६९॥ चंद्रोपालंभ

छूटि गई ससि सीतलताई।
मनु मोहि जारि भसम कियौ चाहत. साजत सोइ कलक तनु काई॥
याही तैं स्याम अकास देखियत, मनौ धूम रह्यौ लतटाई।
ता ऊपर दव देति किरनि उर, उडुगन कनी उचटि इत आई॥
राहु केतु दोउ जोरि एक करि, नीद समै जुरि आवहिं माई।
ग्रसै तै न पचि जात तापमय, कहत 'सूर' विरहिनि दुखदाई॥३३५१॥

राग केदारौ॥ ३९७०॥

यह ससि सीतल काहैं कहियत।
मीनकेत अंवुज आनंदित, तातै ता हित लहियत॥
एक कलक मिट्यौ नहिं अजहूँ, मनौ दूसरौ चहियत।
याही दुख तैं घटत वढ़त नित, निसा नीद रिपु गहियत॥
विरहिनि अरु कमलिनि त्रासत कहुँ, अपकारी रथ नहियत।
'सूरदास' प्रभु मधुवन गौने, तौ इतनौ दुख सहियत॥ ३३५२॥

राग केदारौ ॥ ३९७१ ॥

सखि कर धनु लै चंदहि मारि।
तव तो पै कछुवै न सिरैहै, जव अति जर जैहै तनु जारि॥
उठि हरुवाइ जाइ मँदिर चढ़ि, ससि सनमुख दरपन विस्तारि।
ऐसी भाँति वुलाइ मुकुर मैं, अति बल खंड खड करि डारि॥
सोई अवधि निकट आई है, चलत तोहि जो दई मुरारि।
'सूरदास' विरहिनि यौ तलफति, जैसै मीन नदी विनु वारि॥ ३३५३॥

राग सारग ॥ ३९७२ ॥

हर कौ तिलक हरि बिनु दहत।
वै कहियत उडुराज अमृत मय, तजि सुभाव सो मोहिं निवहत॥
कत रथ थकित भयौ पच्छिम दिसि, राहु गहनि लौ मोहिं गहत।
छयौ न छीन होत सुनि सजनी, भूमि-भवन-रिपु कहाँ रहत॥
सीतल सिंधु जनम जा केरौ, तरनि तेज होइ कह धौ चहत।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे मिलन बिनु, प्रान तजति, यह नाहिं सहत॥ ३३५४॥

राग मारू ॥ ३९७३ ॥

या विनु होत कहा ह्याँ सूनौ।
लै किन प्रगट कियौ प्राची दिसि, विरहिनि कौ दुख दूनौ॥
सव निरदै सुर असुर सैल, सखि सायर सर्प समेत।
काहु न कृपा करी इतननि मैं, व्रिय तनवन दव देत॥
धन्य कुहू, बरषा रितु, तमचुर, अरु कमलनि कौ हेत।
जुग जुग जीवै जरा वापुरी, मिलै राहु औ केत॥
चितै चंद तन मुरति स्याम की, विकल भई व्रजवाल।
'सूरदास' अजहूँ इहि औसर, काहे न मिलत गुपाल॥ ३३५५॥

राग जैतश्री ॥ ३९७४ ॥

सिंधु मथत काहै विधु काढ़ौ।
गिरि अरु नाग असुर सुर मिलि करि, गरजि गरजि किन वाढ़ौ॥
टोटौ हतौ रतन तेरह तौ, कियौ चौदहौ पूरौ।
कहा सौपि दीन्ही अमरनि क्यौ, विरहिनि पर भयौ सूरौ॥
उपजत वैर जदपि काहू सौं, निकट आड करि मारै।
यह नभ पर भूपर क्यौ चितकै उहही तै अरि जारै॥
दोष कहा सुनिकै वडवानल, अंसु जु विष से भाई।
क्रोधी ईस सीस वैठारचौ, तातै यह मति पाई॥
मथुरा कौ प्रभु मोहन नागर, किए सगुन जग जातै।
ताकी प्रिया 'सूर' निसि वासर, सहति विरहदुख गातैं॥ ३३५६॥

राग मारू ॥ ३९७५ ॥

दूरि करहि वीना कर धरिबौ।
रथ थाक्यौ, मानौ मृग मोहे, नाहिन होत चंद्र चौ ढरिवौ॥
वीतै जाहि सोइ पै जानै, कठिन सु प्रेम पास कौ परिवौ।
प्राननाथ संगहि तैं विछुरे, रहत न नैन नीर कौ भरिबौ॥

सीतल चंद अगिन सम लागत, कहिए धीर कौन विधि धरिवौ।
'सूर' सु कमलनयन के बिछुरैं, झूठौ सब जतननि कौ करिवौ॥
॥ ३३५७॥

राग केदारौ॥ ३६७६॥
विधु बैरी सिर पर बसै, निसि नींद न परई।
हरि सुरभानु सुभट बिना इहि को बस करई?
गगन सिखर उतरै चढ़ै, गर्वहिं जिय धरई।
किरनि सकति भुज भरि हनै, उर तैं न निकरई॥
उडु परिवार पिसुन सभा अपजसहि न डरई।
सोइ परपंच करै सखी, अवला ज्यौं बरई॥
घटै बढ़ै इहि पाप तैं, कालिमा न टरई।
'सूरदास' समुझावहीं, त्यौं त्यौं जिय खरई॥ ३३५८॥

राग मलार॥ ३६७७॥
कोउ माई बरजै री या चंदहिं।
अति ही क्रोध करत है हम पर, कुमुदिनि कुल आनंदहिं॥
कहाँ कहौ बरषा रवि तमचुर, कमल बलाहक कारे।
चलत न चपल रहत थिर कै रथ, विरहिनि के तन जारै॥
निंदति सैल उदधि पन्नग कौं, श्रीपति कमठ कठोरहिं।
देति असीस जरा देवी कौं, राहु केतु किन जोरहिं॥
ज्यौं जल हीन मीन तन तलफति, ऐसी गति ब्रजबालहिं।
'सूरदास' अब आनि मिलावहु, मोहन मदन गुपालहिं॥ ३३५९॥

राग बिहागरौ॥ ३६७८॥
माई मोकौ चंद लग्यौ दुख दैन।
कहँ वै स्याम कहाँ वै बतियाँ, कहँ वै सुख की रैन॥
तारे गनत गनत हौं हारी, टपकन लागे नैन।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस बिनु, बिरहिनि कौं नहिं चैन॥ ३३६०॥

राग मलार॥ ३६७९॥
अब हरि कौने सौं रति जोरी।
काके भए, कौन के ह्वैहै, बँधे कौन की डोरी॥
त्रेता जुग इक पतिनीव्रत कियौ, सोऊ बिलपत छोरी।
सूपनखा बन ब्याहन आई, नाक निपात बहोरी॥
पय पीवत जिन हती पूतना, श्रुति मरजादा फोरी।
बहुतै प्रीति बढाइ महरि सौं, छिनक माँझ दै तोरी॥
आरजपंथ छिडाइ गोपिकनि, अपने स्वारथ भोरी।
'सूरदास' करि काज आपनौ, गुडी डोर ज्यौं तोरी॥ ३३६१॥

राग मलार॥ ३६८०॥
अब या तनहिं राखि कह कीजै।
सुनि री सखी स्याम सुंदर बिनु, बाँटि विषम विष पीजै॥
कै गिरिऐ गिरि चढ़ि सुनि सजनी, सीस संकरहि दीजै।

कै दहिऐ दारुन दावानल, जाइ जमुन धँसि लीजै ॥
दुसह बियोग विरह माधौ के, को दिन ही दिन छीजै।
'सूर' स्याम प्रीतम विनु राधे, सोचि सोचि कर मीजै ॥ ३३६२ ॥

राग भोपाल ॥ ३६८१ ॥

हमहिं कहा सखि तन के जतन की, अब या जसहिं मनोहर लीजै।
सकल त्रास सुख याही वपु लौं, छाँड़ि दिए तैं कछू न छीजै ॥
कुसुमित सेज कुसुमसर सर वर, हरि कै प्रान प्रानपति जीजै।
विरह थाह जदुनाथ सवनि दै, निधरक सकल मनोरथ कीजै ॥
सबनि कहति मन रीस रिसाए, नहिन बसाइ प्रान तजि दीजै।
'सूर' सुपति सौं चरचि चतुरई, तुम यह जाइ वधाई लीजै ॥
॥ ३३६३ ॥

राग केदारौ ॥ ३६८२ ॥

जियहि क्यौं कमलिनि काँदौ हीन।
जिनसौं प्रीति हुती री सजनी, तिनहुँ विछुरि दुख दीन ॥
सागर कूल मीन तरफति है, हुलस होत जल जी न।
स्याम वारिविधि लई विरद तजि, हम जु मरति लव लीन ॥
ससि चंदन अरु अंभ छाँड़ि गुन, वपु जु दहत मिलि तीन।
'सूरदास' प्रभु मौन सवै व्रज, बिनु जत्री ज्यौं वीन ॥ ३३६४ ॥

साग सारंग ॥ ३६८३ ॥

वैसी सारँग करहि लिए।
सारंग कहत सुनत वै सारँग, सारँग मनहि दिए ॥
सारँग थकित वैठि व्रह सारँग, सारँग विकल हिए।
सारँग धुकि, सारँग पर सारँग, सारँग क्रोध किए ॥
सारँग है भुज करनि विराजत, सारँग रूप दिए।
'सूरदास' मिलही वै सारँग, तौ पै सुफल जिए ॥ ३३६४ ॥

राग मलार ॥ ३६८४ ॥

ऐसौ सुनियत है द्वै माह।
इतने मै सब बात समभवी चतुर सिरोमनि नाह ॥
आवन कह्यौ वहुत दिन लाए, करी पाछिली गाह।
हमहिं छाँड कुबिजा मन बाँध्यौ, कौन वेद की राह ॥
एतेहुँ पर संतोष न मानत, परे हमारे डाह।
'सूरदास' प्रभु पूरौ दीजै, दिन दस मानी साह ॥ ३३६६ ॥

राग सारंग ॥ ३६८५ ॥

ऐसौ सुनियत है द्वै सावन।
वहै सूल फिरि फिरि सालत जिय, स्याम कह्यौ हो आवन ॥
तव कत प्रीति करी अब त्यागी, अपनौ कीन्हौ पावन।
इहिं दुख सखी निकसि तहँ जइयै, जहँ सुनियै कोउ नावँ न ॥
एकहिं बेर तजी मधुकर ज्यौं, लागे नेह बढावन।
'सूर' सुरति क्यौं होति हमारी, लागी नीकी भावन ॥ ३३६७ ॥

राग कान्हरौ ।। ३६८६ ।।

काहे कौ पिय पियहि रटति हौ, पियकौ प्रेम तेरौ प्रान हरैगौ।
काहे कौ लेति नयन जल भरि भरि, नैन भरे कैसै सूल टरैगौ ।।
काहे कौ स्वास उसास लेति हौ, बैरी बिरह कौ दवा बलैगौ।
छार सुगंध सेज पुहपावलि, हार छुवैइ हिय हार जरैगौ ।।
बदन दुराइ बैठि मंदिर मै, बहुरि निसापति उदय करैगौ।
'सूर' सखी अपने इन नैननि, चंद चितै जनि चंद जरैगौ ।।३३६८।।

राग सारंग ।। ३६८७ ।।

अब हरि निपटहि निठुर भए।
फिरि नहि सुरति करी गोकुल की, जिहि दिन तै मधुपुरी गए ।।
कबहुँ न सुन्यौ सदेस स्रवन हम, करत फिरत नित नेह नए।
ऐसी बधू चतुर वा पुर की, छल बल करि मोहन रिझए ।।
हम जानति है स्याम हमारे, कहा भयौ जौ अनत रए।
'सूरदास' हरि कछ् न लागै, छद बद कुबिजा सिखए ।।३३६९।।

राग मलार ।। ३६८८ ।।

हौ कछु बोलनि नाही लाजन।
एक दाउँ मारिबो पै मरिबौ, नंदनँदन के काजन ।।
तजि ब्रज बाल आपनौ गोकुल, अब भाए सुख राजन।
कागद लिखि पतियौ नहि पठवत, पायौ जिय कौ भाजन ।।
जे गृह देखि परम सुख होतौ, बिनु गोपाल भय भाजन।
कासौ कहौ सुनै को यह दुख, दूरि स्याम सौ माजन ।।
कारी घटा देखि धुरवा जनु, बिरह लयौ कर ताजन।
'सूर' स्याम नागर बिनु अब वह, कौन सहै सिर गाजन ।। ३३७० ।।

राग गौरी ।। ३६८९ ।।

वहु दिन ऐसोई हो री।
ह्वै जाते मेरे आँगन मोहन, यह बिरियाँ सो री ।।
बाल दसा की प्रीति निरतर, परी रहति ही डोरी।
राधा राधा नदनँदन मुख, लागि रहति यह लौ री ।।
बेनु पानि गहि मोहि सिखावत, मोहन गावत गौरी।
'सूरजदास' स्याम सारँग तजि, वह सुख बहुरि न भौ री ।। ३३७१ ।।

राग सारंग ।। ३६९० ।।

गौरि पूत रिपु ता सुत आयुध, प्रीतम ताहि निनारे।
सिव बिरचि जाके दोउ बाहन, तिन हरे प्रान हमारे ।।
मोहि बरजत उठि गवन कियौ हठि, स्वाद लुब्ध रस आल।
कुती नंद तात मुख जोवति, अरु बारति अति चाल ।।
उगवै 'सूर' छूटै पसु बंधन, तौ बिरहिनि रति मानै।
इहि बिधि मिलै 'सूर' के स्वामी, चतुर होइ सो जानै ।। ३३७२ ।।

राग गौरी ।। ३६९१ ।।

माधौ दरसन की अवसेरि।
लै जु गए मन संग आपने, बहुरि न दीन्हौ फेरि ।।

तुम्हरे विना भवन नहि भावे, मन राखै अवढेरि।
कमलिनि हती हेम ज्यौं हम अति, कासौं कहै दुख टेरि॥
तुम विछुरे सुख कवहुँ न पायौ, सव जग देखति हेरि।
'सूरदास' सव नातौ व्रज कौ, आए नंद निवेरि॥ ३३७३॥

राग आसावरी॥ ३९९२॥

सखि री विरह यह विपरीति।
विरहिनी व्रज वास क्यौं करै, पावसहि परतीति॥
नित्य नवला साजि नव सत, अरु सु भावक राखि।
नाहि जानौं नृपति प्राननिपति, कहा रुचि आँखि॥
'सूरदास' गुपाल की सव, अवधि गई वितीति।
वहुरि कव देखिवौ वह मुख, यह तुम्हारी नीति॥ ३३७४॥

राग विलावल॥ ३९९३॥

तऊ गुपाल गोकुल के वासी।
ऐसी वातैं वहुतैं कहि कहि, लोग करत है हाँसी॥
मथि मथि सिंधु सुरनि कौं पोपे, शंभु भए विष आसी।
इनि हति कंस राज औरहिं दै, चाहि लई इक दासी॥
विसरौ हमैं विरह दुख अपनौ, चली चाल औरासी।
ऐसी विहँगम प्रीति न देखी, प्रगट न परखी खासी॥
आरज पंथ छुड़ाइ गोपिका, कुलमरजादा नासी।
आजु करत सुखराज 'सूर' प्रभु, हमै देत दुख गाँसी॥ ३३७५॥

राग सारंग॥ ३९९४॥

उन व्रजदेव नैकु चित करते।
कछु जिय आस रहति विधि वस जौ, वहुरह फिरि-फिरि मिलते॥
कह कहिऐ हरि सव जानत है, या तन की गति ऐसी।
'सूरदास' प्रभु हित चित मिलियौ, नातरु हम गरियै सी॥३३७६॥

राग विलावल॥ ३९९५॥

स्याम विनोदी रे मधुवनियाँ।
अव हरि गोकुल काहे कौं आवत, भावति नव जोवनियाँ॥
वै दिन माधौ भूलि गए जव, लिऐ फिरावति कनियाँ।
अपनै कर जसुमति पहिरावति, तनक काँच की मनियाँ॥
दिना चारि तैं पहिरन सीखे, पट पीतांवर तनियाँ।
'सूरदास' प्रभु वाकैं वस परि, अव हरि भए चिकनियाँ॥ ३३७७॥

राग मलार॥ ३९९६॥

मथुरा मोहिनी मैं जानी।
मोहन स्याम, मोहन जादव जन, मोहन जमुना पानी॥
मोहन नारि सवै घर घर की, वोलति मोहन वानी।
मोहन 'सूरदास' कौ ठाकुर, मोहन कुविजा रानी॥ ३३७८॥

राग विलावल॥ ३९९७॥

देखौ री, लोग-चतुर मधुवन के।
वातनि ही गोविंद विमोह्यौ, गुन जानौं मैं तिनि के॥

जब हरि गवन कियौ मधुबन कौं, छाड़े हेत सबनि के।
'सूरदास' प्रभु बेगि मिलावौ, गोबिंद प्रिय प्राननि के ॥ ३३७९ ॥

राग धमार ॥ ३९९८ ॥

कहौ री जो कहिबे की होइ।
प्राननाथ बिछुरे की बेदन, और न जानै कोइ ॥
तब हम अधर सुधा रस लै लै, मगन रहीं मुख जोइ।
जो रस सिव सनकादिक दुरलभ, सो रस बैठी खोइ ॥
कहा कहौं कछु कहत न आवै, सुख सपना भयौ सोइ।
हमसौं कठिन भए कमलापति, काहि सुनाएँ रोइ ॥
बिरह बिथा अंतर की बेदन, सो जानै जिहिं होइ।
'सूरदास' सुख मूरि मनोहर, लै जु गए मन गोइ ॥ ३३८० ॥

राग सानुत ॥ ३९९९ ॥

बिछुरे री मेरे बाल सँघाती।
निकसि न जात प्रान ये पापी, फाटति नाहिन छाती ॥
हौं अपराधिनि दही मथति ही, भरी जोबन मदमाती।
जो हौं जानति हरि कौ चलिबौ, लाज छाँड़ि सँग जाती ॥
ढरकत नीर नैन भरि सुंदरि, कछु न सोह दिन राती।
'सूरदास' प्रभु दरसन कारन, सखियनि मिलि लिखि पाती ॥ ३३८१ ॥

राग मलार ॥ ४००० ॥

हरि परदेस बहुत दिन लाए।
कारी घटा देखि बादर की, नैन नीर भरि आए ॥
बीर बटाऊ पथी हौ तुम, कौन देस तैं आए।
यह पाती हमरी लै दीजौ, जहाँ साँवरे छाए ॥
दादुर मोर पपीहा बोलत, सोवत मदन जगाए।
'सूर' स्याम गोकुल तैं बिछुरे, आपुन भए पराए ॥ ३३८२ ॥

राग मलार ॥ ४००१ ॥

हमारे हिरदै कुलिसहु जीत्यौ।
फटत न सखी अजहुँ उहि आसा, बरष दिवस परि बीत्यौ ॥
हमहूँ समुझि परी नीकैं करि, यह असितन की रीत्यौ।
बहुरि न जीवन मरन सौं साझौ, करी मधुप की प्रीत्यौ ॥
अब तौ बात घरी पहरन की, ज्यौं उदवस की भीत्यौ।
'सूर' स्याम दासी सुख सोवहु, भयौ उभै मन चीत्यौ ॥ ३३८३ ॥

राग सारंग ॥ ४००२ ॥

एक द्यौस कुंजनि मैं माई।
नाना कुसुम लेइ अपनैं कर, दिए मोहिं सो सुरति न जाई ॥
इतने मैं घन गरजि वृष्टि करी, तनु भीज्यौ मो भई जुड़ाई।
कंपत देखि उढाइ पीत पट, लै करुनामय कंठ लगाई ॥
कहँ वह प्रीति रीति मोहन की, कहँ अब धौं एती निठुराई।
अब बलबीर 'सूर' प्रभु सखि री, मधुबन बसि सब रति बिसराई ॥ ३३८४ ॥

राग कान्हरौ ॥ ४००३ ॥

हौ जानौ माधौ हित कियौ।
अति आदर आतुर अलि ज्यौ मिलि, मुख मकरंद पियौ॥
वरु वह भली पूतना जाकौ, पय सँग प्रान लियौ।
मनु मधु अँचै निपट सूने तन, यह दुख अधिक दियौ॥
देखि अचेत अमृत अवलोकनि, चले जु सींचि हियौ।
'सूरदास' प्रभु वा अधार तैं, अब लौं परत जियौ॥ ३३८५॥

राग सारग ॥ ४००४ ॥

नाहिनै अब ब्रज नंद कुमार।
परम चतुर सुदर सुजान सखि, या तनु के प्रतिहार॥
रूप लकुट रोके जु रहत अलि, अनु दिन नैननि द्वार।
ता दिन तै उरभवन भयौ सखि सिवरिपु को सचार॥
दुख आवत कछु अटक न मानत, सूनौ देखि अगार।
असु उसास जात अंतर तैं, करत न कछू विचार॥
निसा निमेष कपाट लगे विनु, ससि मूसत सत सार।
'सूर' प्रान लटि लाज न छाँड़त, सुमिरि अवधि आधार॥ ३३८६॥

राग सारंग ॥ ४००५ ॥

ऐसे समय जो हरि जू आवहिं॥
निरखि निरखि वह रूप मनोहर, नैन बहुत सुख पावहि॥
तैंसिय स्याम घटा घन घोरनि, विच वगपाँति दिखावहि।
तैंसेइ मोर कुलाहल सुनि सुनि, हरषि हिंडोरनि गावहि॥
तैसीयै दमकति दामिनि अरु, मुरलि मलार बजावहि।
कवहुँक संग जु हिलि मिलि खेलहि, कवहुँक कुज बुलावहि॥
विछुरे प्रान रहत नहिं घट मैं, सो पुनि आनि जियावहिं।
अवकै चलत जानि 'सूरज' प्रभु, सव पहिलै उठि धावहि॥ ३३८७॥

राग रामकली ॥ ४००६ ॥

ब्रज कहा खोरी।
छत अरु अछत एक रस अंतर, मिटत नही कोउ करौ करोरी॥
वालक ही अभिलाषनि लीला, चकित भई कुल लाजनि छोरी।
विरुधविवेक गोपरस परि करि, विरहसिधु मारत तै ओरी॥
जद्यपि हौ त्रैलोक के ईश्वर, परसि दृष्टि चितवत न बहोरी।
'सूरदास' प्रभु प्रीति रीति कत ते, तुम सवै रहे अब तोरी॥ ३३८८॥

राग सारंग ॥ ४००७ ॥

हरि मोकौ हरिभख कहि जु गयौ।
हरि दरसन हरि मुदित उदित हरि, हरि ब्रज हरि जु लयौ॥
हरिरिपु ता रिपु ता पति कौ सुत, हरि विनु प्रजरि दहै।
हरि कौ तात परस उर अंतर, हरि विनु अधिक वहै॥
हरितनया सुधि तहाँ वदति हरि, हरि अभिमान न ठायौ।
अव हरि दवन दिवा कुविजा कौ, 'सूरदास' मन भायौ॥ ३३८९॥

राग सारंग ।। ४००८ ।।

हरि बिनु कौन सौ कहियै ।
मनसिज बिथा अरनि लौ जारति, उर अंतर दहियै ।।
कानन भवन रैनि अरु बाहर, कहूँ न सचु रहियै ।
मूक जु भए जज्ञ के पसु लौ, कौलौ दुख सहियै ।।
कबहुँक उपजै जिय मै ऐसी, जाइ जमुन बहियै ।
'सूरदास' प्रभु कमलनैन बिनु, कैसै ब्रज रहियै ।। ३३९० ।।

राग मारू ।। ४००९ ।।

किते दिन हरि दरसन बिनु बीते ।
एक न फुरत स्याम सुंदर बिनु, बिरह सबै सुख जीते ।।
मदन गुपाल बैठि कंचन रथ, चितै किए तन रीते ।
सुफलक सुत लै गए दगा दै, प्राननिहूँ तै प्रीते ।।
कहि धौ घोष कबहि आवहिंगे, हरि बलभद्र सहीते ।
'सूरदास' प्रभु बहुरि कृपा करि, मिलहु सुदामा मीते ।। ३३९१ ।।

राग नट ।। ४०१० ।।

ग्वालिनि छाँड़ि दै बिरह खरयौ ।
नेरै बिरह बिरहिनी व्याकुल भुवन काज बिसरयौ ।।
कर पल्लव उडुपति रथ खैंच्यौ, मृग पति बैर करयौ ।
पखी पति सबही सकुचाने, चातक अनँग भरयौ ।।
सारँग सुर सुनि भयौ वियोगी, हिमकर गरब टरयौ ।
'सूरदास' सायर-सुत-हित-पति, देखत मदन हरयौ ।। ३३९२ ।।

राग सारंग ।। ४०११ ।।

बिरह भरयौ घर आँगन कोने ।
दिन दिन बाढ़त जात सखी री, ज्यौं कुरुखेत के सोने ।।
तब वह दुख दीन्हौ जब बाँधे, ताहू कौ फल जानि ।
निज कृत चूक समुझि मन ही मन, लेति परस्पर मानि ।।
हम अबला अति दीनहीन मति, तुम सबही बिधि जोग ।
'सूर' बदन देखतहि अहूठै, यह सरीर कौ रोग ।। ३३९३ ।।

राग मलार ।। ४०१२ ।।

जौ पै कोउ माधौ सौ कहै ।
तौ यह बिथा सुनत नँदनंदन, कत मधुपुरी रहै ।।
पहिलै ही सब दसा बनावै, पुनि कर चरन गहै ।
यह प्रतीति मेरै चित अंतर, सुनत न प्रेम सहै ।।
यहै सँदेस 'सूर' के प्रभु सौ, को कहि जसहि लहै ।
अबकी बेर दयालु दरस दै, यह दुख आनि दहै ।। ३३९४ ।।

राग नट ।। ४०१३ ।।

मेरे मन इतनी सूल रही ।
वे बतियाँ छतियाँ लिखि राखी, जे नँदलाल कही ।।
एक द्यौस मेरैं गृह आए, हौ ही महत दही ।
रति माँगत मैं मान कियौ सखि, सो हरि गुसा गही ।।

सोचति अति पछिताति राधिका, मुरछित धरनि ढही।
'सूरदास' प्रभु के बिछुरे तैं, बिथा न जाति सही ॥ ३३९५ ॥

राग गौरी ॥ ४०१४ ॥

सुरति करि ह्वाँ की रोइ दियौ।
पंथी एक देखि मारग मै, राधा बोलि लियौ ॥
कहि धौ बीर कहाँ तै आयौ, हम जु प्रनाम कियौ।
पा लागौ मंदिर पग धारौ, सुनि दुखियान त्रियौ ॥
गद्गद कंठ हियौ भरि आयौ, बचन कह्यौ न दियौ।
'सूर' स्याम अभिराम ध्यान मन, भरि भरि लेत हियौ ॥ ३३९६ ॥

राग मलार ॥ ४०१५ ॥

हरि कहँ इते दिन लाए।
आवन कौ कहि गए सु तौ, अवहूँ नहिं आए ॥
चलत चितै मुसकाइ कै, मृदु बचन सुनाए।
तेई ठग-मोदक भऐ, धीरज छिटकाएँ ॥
जग मोहन जदुनाथ के, गुन जानि न पाए।
मनहुँ 'सूर' इहि लाज तैं, नहिं चरन दिखाए ॥ ३३९७ ॥

राग मलार ॥ ४०१६ ॥

यह दुख कौन सौ कहौ।
जोइ बीतति सोइ कहति सयानी, नित नय सूल सहौ ॥
जे सुख स्याम संग सब कीन्हे, गहि राखे इहि गात।
ते अब भये सीत या तनु कौ, साखा ज्यौं द्रुम पात ॥
जो हुती निकट मिलन कौ आसा, सो तौ दूरि गई।
जथा जोग ज्यौं होत रोगिया, कुपथी करत नई ॥
यह तन त्यागि मिलन यौ बनिहै, गंगा सागर संग।
अब सुनि 'सूर' ध्यान ऐसौ है, स्याम राम इक रंग ॥ ३३९८ ॥

राग सारंग ॥ ४०१७ ॥

गोविंद अजहूँ नहिं आए री, जान एउ दिन लागे।
उनकौ दोप कहा सखि दीजै, व्रज के लोग अभागे ॥
प्रीतिहिं के माते जे सोये, सरबस हरत न जागे।
अब कहि 'सूर' कहा बसाइ हम, अनत कहूँ अनुरागे ॥ ३३९९ ॥

राग सारंग ॥ ४०१८ ॥

हम सरधा ब्रजनाथ सुधानिधि, राखे बहुत जतन करि सचि सचि।
मन मुख भरि भरि, नैन ऐन ह्वै, उर प्रति कमल कोस लौ खचि खचि ॥
सुभग सुमन सब अंग अमृतमय, तहाँ तहाँ राखति चित रचि रचि।
मोहन मदन सुरूप सुजस रस, करत सु गुप्त प्रेम रस पचि पचि ॥
'सूरदास' पीयूष लागि तिहिं, पठयौ नृपति तेउ गए बचि बचि।
अब सोई मधु हरयौ सुफलक सुत, दुसह दाह जु उठत तन तचि तचि ॥ ३४०० ॥

राग बिलावल ॥ ४०१९ ॥

तुम्हरी रीति हरि पूरब जनम की, अब जु भए मेरे जियहु के गरजी।
बहुत दिननि तैं बिरमि रहे हौ, संग बिछोहि हमहिं गए बरजी ॥

जा दिन तै तुम प्रीति करी ही, घटति न बढति तौलि लेहु नरजी।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे मिलन बिनु, तन भयौ ब्यौंत बिरह भयौ दरजी ? ३४०१॥

राग सारंग ॥ ४०२० ॥

(माई) वै दिन इहिं देह अछत, बिधिना जौ आनै री।
स्याम सुदर संग रग, जुवति बृंद ठानै री॥
जद्यपि अक्रूर मूर परम गति पठावै री।
प्रान नाथ कमल नैन, बाँसुरी बजावै री॥
कहा कहौ कहत कठिन, कहैं कौन मानै री।
'सूरदास' प्रेम पीर, बिरहि, मिलै जानै री॥ ३४०२॥

राग मलार ॥ ४०२१ ॥

हरि कौ मारग दिन प्रति जोवति।
चितवत रहत चकोर चंद ज्यौं, सुमिरि सुमिरि गुन रोवति॥
पतियाँ पठवति मसि नहिं खूटति, लिखि मानहु धोवति।
भूख न दिन निसि नींद हिरानी, एकौ पल नहिं सोवति॥
जे जे बसन स्याम सँग पहिरे, ते अजहूँ नहिं धोवति।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस बिनु, बृथा जनम सुख खोवति॥३४०३॥

राग सारग ॥ ४०२२ ॥

बिनु माधौ राधा तन सजनी, सब बिपरीत भई।
गई छपाइ छपाकर की छबि, रही कलकमई॥
अलक जु हुती भुवगम हू सी, बट लट मनहु भई।
तनु तरु लाइ बियोग लग्यौ जनु, तनुता सफल हुई॥
अँखियाँ हुतीं कमल पँखुरी सी, सुछबि निचोरि लई।
आँच लगै च्यौंनो सोनो सौ, यौ तनु धातु धई॥
कदली दल सी पीठि मनोहर, मानौ उलटि ठई।
संपति सब हरि हरी 'सूर' प्रभु, बिपदा देह दई॥ ३४९४॥

राग कान्हरौ ॥ ४०२३ ॥

कर कपोल भुज धरि जघा पर, लेखति माइ नखनि की रेखनि।
सोच बिचार करति वह कामिनि, धरति जु ध्यान मदन-मुख-भेषनि॥
नैन नीर भरि भरि जु लेति है, धिक धिक जे दिन जात अलेखनि।
कमल नयन मधुपुरी सिधारे, जाने गुन न सहस मुख सेषनि॥
अवधि झुठाई कान्ह सुनु री सखि, क्यौ जीवैं निसि दामिनि देखनि।
'सूरदास' प्रभु चेटक करि गए, नाना बिधि नाचति नट पेषनि॥३४०५॥

राग कान्हरौ ॥ ४०२४ ॥

सोचति राधा लिखति नखनि मैं, बचन न कहति कंठ जल त्रास।
छिति पर कमल, कमल पर कदली, ता पर पंकज कियौ प्रकास॥
ता पर अलि सारँग पर सारँग, सारँगरिपु लै कीन्हौ बास।
तहँ अरि पंथ पिता जुग उदित, बारिज बिबि रँग भयौ अमास॥
सारँग मुख तै परत अंबु ढरि, मनु सिव पूजति तपति बिनास।
'सूरदास' प्रभु हरि बिरहा रिपु, दाहत अंग दिखावत बास॥३४०६॥

राग जैतश्री ॥ ४०२५ ॥

इहि दुख तन तरफत मरि जैहै।
कबहुँ न सखी स्यामसुंदर घन, मिलिहैं आइ अंक भरि लैहै ?
कबहुँ न बहुरि सखा सँग ललना, ललित त्रिभंगी छबिहिं दिखैहै ?
कबहु न बेनु अधर धरि मोहन, यह मति लै लै नाम बुलैहै ?
कबहुँ न कुंज भवन सँग जैहै, कबहुँ न दूती लैन पठैहै ?
कबहुँ न पकरि भुजा रस बस ह्वै, कबहुँ न पग परि मान मिटैहै ?
याही तै घट प्रान रहत है, कबहुँक फिरि दरसन हरि दैहै ?
'सूरदास' परिहरत न यातैं, प्रान तजैं नहि पिय ब्रज ऐहै ॥३४०७॥

राग सोरठ ॥ ४०२६ ॥

सबै सुख लै जु गए ब्रजनाथ।
बिलखि बदन चितवति मधुबन तन, हम न गईं उठि साथ ॥
वह मूरति चित तैं बिसरति नहि, देखि साँवरे गात।
मदन गोपाल ठगौरी मेली, कहत न आवै बात ॥
नंदनँदन जु बिदेस गवन कियौ, बैसी मींजति हाथ।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरैं बिछुरे, हम सब भईं अनाथ ॥ ३४०८ ॥

राग मलार ॥ ४०२७ ॥

करिहौ मोहन कहूँ, सँभारि गोकुल-जन-सुखहारे।
खग, मृग, तृन, बेली बृन्दावन, गैया ग्वाल बिसारे ॥
नंद जसोदा मारग जोवैं, निसि दिन दीन दुखारे।
छिन छिन सुरति करत चरननि की, बाल बिनोद तुम्हारे ॥
दीन दुखी ब्रज रह्यौ न परि है, सुंदर स्याम ललारे।
दीनानाथ कृपा के सागर, 'सूरदास' प्रभु प्यारे ॥ ३४०९ ।

राग मलार ॥ ४०२८ ॥

उनकौ ब्रज बसिबौ नहिं भावै।
ह्वाँ वै भूप भए त्रिभुवन के, ह्याँ तक ग्वाल कहावैं ॥
ह्वाँ वै छत्र सिंहासन राजत, को बछरनि सँग धावै।
ह्वाँ तौ बिबिध बस्त्र पाटंबर, को कमरी सचु पावै ॥
नंद जसोदा हूँ कौ बिसर्‍यौ, हमरी कौन चलावै।
'सूरदास' प्रभु निठुर भए री, पातिहु लिखि न पठावै ॥ ३४१० ॥

राग बिलावल ॥ ४०२९ ॥ उद्धव ब्रज आगमन

अंतरजामी कुँवर कन्हाई।
गुरु गृह पढ़त हुते जहँ बिद्या, तहँ ब्रजबासिन की सुधि आई ॥
गुरु सौं कह्यौ जोरि कर दोऊ, दछिना कह्यौ सो देउँ मँगाई।
गुरुपतनी कह्यौ पुत्र हमारे, मृतक भये सो देहु जिवाई ॥
आनि दिए गुरुसुत जमपुर तैं, तब गुरुदेव असीस सुनाई।
'सूरदास' प्रभु आइ मधुपुरी, ऊधौ कौं ब्रज दियौ पठाई ॥ ३४११ ॥

राग मलार ।। ४०३० ।।

जदुपति सखा ऊधौ जानि।
लगे मन मन यहै सोचन, भली नहिं यह बानि ।।
अंस भुज धरि होत ठाढ़ौ, निठुर जैसौ काठ।
संग यह नहिं बनत नीकौ, होइ कैसैहु साँठ ।।
जौ कहौ तौ करै क्यौ यह, निंदिहै अरु मोहि।
देखिबे कौ परम सुदर, रहत नैननि जोहि ।।
कनक कलस अपान जैसें, तैसोई यह रूप।
'सूर' कैसैहु प्रेम पावै, तबहि होइ सुरूप ।। ३४१२ ।।

राग नट ।। ४०३१ ।।

जदुपति जानि उद्धव रीति।
जिहिं प्रगट निज सखा कहियत, करत भाव अनीति ।।
बिरह दुख जहँ नाहि नैकहुँ, तहँ न उपजै प्रेम।
रेख, रूप न बरन जाकै, इहिं धर्यौ वह नेम ।।
त्रिगुन तन करि लखत हमकौ, ब्रह्म मानत और।
बिना गुन क्यौ पुहुमि उधरै, यह करत मन डौर ।।
बिरस रस किहिं मंत्र कहिऐ, क्यौ चलै संसार।
कछु कहत यह एक प्रगटत, अति भर्यौ अहँकार ।।
प्रेम भजन न नैकु याकै, जाइ क्यौ समुझाइ।
'सूर' प्रभु मन यहै आनी, ब्रजहि देउँ पठाइ ।। ३४१३ ।।

राग नट ।। ४०३२ ।।

यह अद्वैत दरसी रंग।
सदा मिलि इक साथ बैठत, चलत बोलत संग ।।
बात कहत न बनत यासौ, निठुर जोगी जंग।
प्रेम सुनि बिपरीत भाषत, होत है रस भंग ।।
सदा ब्रज कौ ध्यान मेरै, रास रंग तरंग।
'सूर' वह रस कहौ कासौ, मिल्यौ सखा भुरंग ।। ३४१४ ।।

राग नट ।। ४०३३ ।।

सग मिलि कहौ कासौ बात।
यह तौ कहत जोग की बातै, जामै रस जरि जात ।।
कहत कहा पितु मातु कौन के, पुरुष नारि कह नात।
कहाँ जसोदा सी है मैया, कहाँ नंद सम तात ।।
कहँ वृषभानुसुता सँग कौ सुख, वह बासर वह प्रात।
सखी सखा सुख नहिं त्रिभुवन मै, नहिं बैकुंठ सुहात ।।
वै बातै कहिऐ किहि आगै, यह गुनि हरि पछितात।
'सूरदास' प्रभु ब्रज महिमा कहि, लिखी बदत बल भ्रात ।। ३४१५ ।।

राग धनाश्री ।। ४०३४ ।।

कहाँ सुख ब्रज कौसौ संसार।
कहाँ सुखद बंसी बट जमुना, यह मन सदा बिचार ।।

कहँ वन धाम कहाँ राधा सँग, कहाँ संग ब्रज वाम।
कहँ रस रास वीच अंतर सुख, कहाँ नारि तन ताम॥
कहाँ लता तरु तरु प्रति वूझनि, कुंज कुंज नव धाम।
कहाँ विरह सुख विन गोपिन सँग, 'सूर' स्याम मन काम॥३४१६॥

राग धनाश्री॥ ४०३५॥

वह सुख कहाँ काकैं साथ।
सखा हमकौ मिले ऊधौ, वकन मारत माथ॥
भजन भाव विना नहीं सुख, कहाँ प्रेमऽरु जोग।
काग हंसहि संग जैसौ, कहाँ दुख कहँ भोग॥
जगत मैं यह संग देखौ, वचन प्रति कहै ब्रह्म।
'सूर' ब्रज की कथा कासौं, कहाँ यह करै दंभ॥ ३४१७॥

राग कान्हरौ॥ ४०३६॥

हंस काग कौं संग भयौ।
कहँ गोकुल कहँ गोप गोपिका; विधि यह संग दयौ॥
जैसैं कंचन काँच संग, ज्यौं चंदन संग कुगंधि।
जैसै खरी कपूर एक सम यह भइ ऐसी संधि॥
जल विन मीन रहति क्यौं न्यारी, यह सोइ रीति चलावत।
जव ब्रज की वातैं इहिं कहियत, तवही तव उचटावत॥
याकौ ज्ञान थापि ब्रज पठवौं, और न याहि उपाउ।
सुनहु 'सूर' याकौं ब्रज पठएँ, भलौ वनैगौ दाउँ॥ ३४१८॥

राग मलार॥ ४०३७॥

याहि और नहि कछू उपाइ।
मेरौ प्रगट कह्यौ नहिं वदिहै, ब्रज ही देउँ पठाइ॥
गुप्त प्रीति जुवतिनि की कहि कै, याकौं करौं महंत।
गोपिनि के परमोधन कारन, जैहै सुनत तुरंत॥
अति अभिमान करैगौ मन मैं जोगिनि की यह भाँति।
'सूर' स्याम वह निहचै करिकै, वैठत है मिलि पाँति॥ ३४१९॥

राग बिलावल॥ ४०३८॥

तवहिं उपँगसुत आइ गए।
सखा सखा कछु अंतर नाहीं, भरि भरि अंक लए॥
अति सुंदर तन स्याम सरीखो, देखत हरि पछिताने।
ऐसे वै वैसी वुधि होती, ब्रज पठऊँ मन आने॥
या आगैं रस कथा प्रकासौं, जोगकथा प्रगटाऊँ।
'सूर' ज्ञान याकौ दृढ करिकै, जुवतिन्ह पास पठाऊँ॥ ३४२०॥

राग धनाश्री॥ ४०३९॥

जवही यह कहौगौ याहि।
मोहिं पठवत गोपिकनि पै, हरष ह्वैहै ताहि॥
जोग कौ अभिमान करिहै, ब्रजहिं जैहै धाइ।
कहैगौ मोहिं स्याम मानत, करौ यह चतुराइ॥

आइ गए तेहि समैं ऊधौ, सखा कहि लियौ बोलि।
कंध धरि भुज भए ठाड़े, करत बचन निठोलि॥
बार बार उसाँस डारत, कहत ब्रज की बात।
'सूर' प्रभु के बचन सुनि सुनि, उपँगसुत मुसकात॥ ३४२१॥

राग धनाश्री॥ ४०४०॥

हरि गोकुल की प्रीति चलाई।
सुनहु उपँगसुत मोहि न बिसरत, ब्रजबासी सुखदाई॥
यह चित होत जाउँ मैं अबही, इहाँ नही मन लागत।
गोपी ग्वाल गाइ बन चारन, अति दुख पायौ त्यागत॥
कहँ माखन रोटी, कहँ जसुमति, जेवहु कहि कहि प्रेम।
'सूर' स्याम के बचन हँसत सुनि, थापत अपनौ नेम॥ ३४२२॥

राग रामकली॥ ४०४१॥

जदुपति लख्यौ तिहि मुसुकात।
कहत हम मन रही जोई, भई सोई बात॥
बचन परगट करन कारन, प्रेम कथा चलाइ।
सुनहु ऊधौ मोहि ब्रज को, सुधि नही बिसराइ॥
रैनि सोवत, दिवस जागत, नाहिनै मन आन।
नंद जसुमति नारि-नर-ब्रज तहाँ मेरौ प्रान॥
कहत हरि सुनि उपँगसुत यह, कहत हौ रस रीति।
'सूर' चित तै टरति नाही, राधिका की प्रीति॥ ३४२३॥

राग रामकली॥ ४०४२॥

सखा सुनि एक मेरी बात।
वह लतागृह संग गोपिन, सुधि करत पछितात॥
बिधि लिखी नहि टरत क्यौ हूँ, यह कहत अकुलात।
हँसि उपँगसुत बचन बोले, कहा हरि पछितात॥
सदा हित यह रहत नाही, सकल मिथ्या जात।
'सूर' प्रभु यह सुनौ मोसौं, एक ही सौं नात॥ ३४२४॥

राग रामकली॥ ४०४३॥

जब ऊधौ यह बात कही।
तब जदुपति अति ही सुख पायौ, मानी प्रगट सही॥
श्री मुख कह्यौ जाहु तुम ब्रज कौ, मिलहु जाइ ब्रज लोग।
मो बिन ,बिरह भरी ब्रजबाला, जाइ सुनावहु जोग॥
प्रेम मिटाइ ज्ञान परबोधहु, तुम हौ पूरन ज्ञानी।
'सूर' उपँगसुत मन हरषाने, यह महिमा इन जानी॥ ३४२५॥

राग गौरी॥ ४०४४॥

ऊधौ तुम यह निहचै जानौ।
मन, बच, क्रम मैं तुमहि पठावत, ब्रज कौ तुरत पलानौ॥
पूरन ब्रह्म अकल अबिनासी, ताके तुम हौ ज्ञाता।
रेख न रूप जाति कुल नाही, जाके नहिं पितु माता॥

यह मत दै गोपिनि कौं आवहु, विरह नदी मैं भासत।
'सूर' तुरत तुम जाइ कहौ यह, ब्रह्म विना नहिं आसत।। ३४२६।।

राग सारंग।। ४०४५।।

ऊधौ वेगिही व्रज जाहु।
सुति सँदेस सुनाइ मेटौ वल्लभिनि कौ दाहु।।
काम पावक, तूल तन मैं, विरह स्वास समीर।
जरि भसम नहिं होन पावै, लोचननि के नीर।।
आजु लौं इहि भाँति है, वै कछुक सजग सरीर।
इते पर विनु समाधानहिं, क्यौं धरै तिय धीर।।
वार वार कहा कहौ, तुम सखा साधु प्रवीन।
'सूर' सुमति विचारिऐ, जिहिं जिऐं जल विनु मीन।। ३४२७।।

राग धनाश्री।। ४०४६।।

ऊधौ व्रज कौं गमन करौ।
हमहिं विना गोपिका विरहिनी, तिनके दुःख हरौ।।
जोग ज्ञान परवोधि सवनि कौं, ज्यौं सुख पावै नारि।
पूरन ब्रह्म अकल परिचै करि, डारै मोहिं विसारि।।
सखा प्रवीन हमारे तुम हौ, तुम तें नही महंत।।
'सूर' स्याम इहि कारन पठवत, ह्वै आवैगौ संत।। ३४२८।।

राग नट।। ४०४७।।

ऊधौ मन अभिमान वढ़ायो।
जदुपति जोग जानि जिय साँचौ, नैन अकास चढ़ायौ।।
नारिनि पैं मोकौ पठवत है, कहत सिखावन जोग।
मन ही मन अप करत प्रसंसा, यह मिथ्या सुख भोग।।
आयसु मानि लियौ सिर ऊपर, प्रभु अज्ञा परमान।
'सूरदास' प्रभु गोकुल पठवत, मैं क्यौं कहौ कि आन।। ३४२९।।

राग कान्हरौ।। ४०४८।।

तुम पठवत गोकुल कौं जैहौं।
जौ मानिहै ब्रह्म की वातैं, तौ उनसौं मै कैहौं।।
गदगद वचन कहत मन प्रफुलित, वार वार समुझैहौं।
आजु नही जो करौं काज तुव, कौन काज पुनि लैहौं।।
यह मिथ्या संसार सदाई, यह कहिकै उठि ऐहौं।
'सूर' दिना द्वै व्रजजन सुख दै, आइ चरन पुनि गैहौं।। ३४३०।।

राग केदारौ।। ४०४९।।

सुनु सखा हित प्रान मेरै, नाहिनै सम तोहि।
कैसैंहू करि उरिन कीजै, गोपिकनि सौ मोहिं।।
रैनि दिन मम भक्ति उनकैं, कछू करत न आन।
और सरवस मोहिं अरप्यौ, तरुनि तन धन प्रान।।
व्याज मैं ये रतन दीन्हे, वृथा गोपकुमारि।
सालोकता सामीपता सारूपता, भुज चारि।।

इक रही सायुज्जता सो, सिद्ध नहिं विनु ज्ञान।
सोइ तुम उपदेसियौ जिहिं, लहै पद निर्वान॥
जौ न अंगीकृत करै वै होइ हौ रिन दास।
'सूर' गाइ चराइहौ मैं, वहुरि वसि व्रजवास॥ ३४३१॥

राग विहागरौ॥ ४०५०॥

तुरत व्रज जाहु उपँगसुत आजु।
ज्ञान वुझाइ खवरि दै आवहु, एक पंथ द्वै काज॥
जव तै मधुवन कौ हम आए, फेरि गयौ नहिं कोइ।
जुवतिन पै ताही कौ पठवै, जो तुम लायक होइ॥
इक प्रवीन अरु सखा हमारे, ज्ञानी तुम सरि कौन।
सोइ कीजौ जातै व्रजवाला, साधन सीखै पौन॥
श्रीमुख स्याम कहत यह वानी, ऊधौ सुनत सिहात।
आयसु मानि 'सूर' प्रभु जैहौ, नारि मानि हैवात॥ ३४३२॥

राग गौरी॥ ४०५१॥

ऊधौ व्रज जनि गहरु लगावहु।
तुम व्रजनारि जानि मन सकुचत, कहि धौं जोग सुनावहु॥
वानी कहत समुझि वै लैहै, कही हमारी मानौ।
विरह दाह यह सुनत वुझैहै, मानौ अनलहिं पानौ॥
अवही जाहु विकल सव गोपी, जोग वचन कहि पोपौ।
'सूर' नंद वावा जसुमति कौ, वेगि जाइ सतोषौ॥ ३४३३॥

राग सोरठ॥ ४०५२॥

हलधर कहत प्रीति जसुमति की।
कहा रोहिनी इतनी पावै, वह वोलनि अति हित की॥
एक दिवस हरि खेलत मो सँग, झगरौ कीन्हौ पेलि।
मोकौ दौरि गोद करि लीन्हौ, इनहिं दियौ कर ठेलि॥
नंद ववा तव कान्ह गोद करि, खीझन लागे मोकौ।
'सूर' स्याम नान्हौ तेरौ भैया, छोह न आवत तोकौ॥ ३४३४॥

राग रामकली॥ ४०५३॥

जसुमति करति मोकौ हेत।
सुनौ ऊधौ कहत वनत न, नैन भरि भरि लेत॥
दुहुँनि कौ कुसलात कहियौ, तुमहिं भूलत नाहिं।
स्याम हलधर सुत तुम्हारे, और के न कहाहिं॥
आइ तुमकौ धाइ मिलिहै, कछूक कारज और।
'सूर' हमकौ तुम विना सुख कौ नही कहुँ ठौर॥ ३४३५॥

राग विहागरौ॥ ४०५४॥

स्याम कर पत्नी लिखी वनाइ।
नद वावा सौ विनै, कर जोरि जसुदा माइ॥
गोप ग्वाल सखानि कौ हिलिमिलन कठ लगाइ।
और व्रज-नर-नारि जे है, तिनहिं प्रीति जनाइ॥

गोपिकनि लिखि जोग पठयो, भाव जानि न जाइ।
'सूर' प्रभु मन और यह कहि, प्रेम लेत दिढ़ाइ ॥ ३४३६ ॥

राग विहागरौ ॥ ४०५५ ॥

उपँगसुत हाथ दई हरि पाती।
यह कहियौ जसुमति मैया सौ, नहिं विसरत दिन राती ॥
कहत कहा वसुदेव देवकी, तुमकौ हम हैं जाये।
कंस त्रास सिसु अतिहि जानिकै, व्रज मैं राखि दुराये ॥
कहै वनाइ कोटि कोउ वातै, कही वलराम कन्हाई।
'सूर' काज करिकै दिन कछु मैं, वहुरि मिलैगे आई ॥ ३४३७ ॥

राग विलावल ॥ ४०५६ ॥

ऊधौ इतनी कहियो जाइ।
हम आवैगे दोऊ भैया, मैया जनि अकुलाइ ॥
याकौ विलग वहुत हम मान्यौ, जो कहि पठयौ धाइ।
वह गुन हमको कहा विसरिहै, वड़े किए पय प्याइ ॥
अरु जव मिल्यौ नंद वावा सौ, तव कहियो समुझाइ।
तौ लौ दुखी होन नहि पावै, धौरी धूमरि गाइ ॥
जद्यपि इहाँ अनेक भाँति सुख, तदपि रह्यौ नहि जाइ।
'सूरदास' देखौ व्रजवासिनि, तवही हियौ सिराइ ॥ ३४३८ ॥

राग सारंग ॥ ४०५७ ॥

नीकै रहियौ जसुमति मैया।
आवैगे दिन चारि पाँच मैं, हम हलधर दोउ भैया ॥
नोई, वेंत, विपान, वाँसुरी, द्वार अवेर सवेरै।
लै जनि जाइ चुराइ राधिका, कछुक खिलौना मेरे ॥
जा दिन तै हम तुमतै विछुरे, कोउ न कहत कन्हैया।
उठि न सवेरे कियौ कलेऊ, साँझ न चापी धैया ॥
कहिये कहा नद वावा सौ, जितौ निठुर मन कीन्हौ।
'सूरदास' पहुँचाइ मधुपुरी, फेरि न सोधौ लीन्हौ ॥ ३४३९ ॥

राग आसावरी ॥ ४०५८ ॥

ऊधौ जननी मेरी कौ मिलि अरु कुसलात कहौगे।
वावा नंदहि पालागन कहि, पुनि पुनि चरन गहौगे ॥
जा दिन तै मधुवन हम आए, सोध नही तुम लीन्हौ।
दै दै सौंह कहोगे हित करि, कहा निठुरई कीन्हौ ॥
यह कहियौ वलराम स्याम अव, आवैगे दोउ भाई।
'सूर' करम की रेख मिटै नहिं, यहै कह्यौ जदुराई ॥ ३४४० ॥

राग केदारौ ॥ ४०५९ ॥

विधना यहै लिख्यौ संजोग।
कहाँ तै मधुपुरी आए, तज्यौ माखन भोग ॥
कहाँ वै व्रज के सखा सव, कहाँ मथुरा लोग।
देवकी वसुदेव सुत सुनि, जननि करिहै सोग ॥

रोहिनी माता कृपा करि, उछँग लेती रोग।
'सूर' प्रभु मुख यह वचन कहि, लिखि पठायौ जोग ॥ ३४४१ ॥

राग विहागरी ॥ ४०६० ॥

ऊधौ जात ब्रजहिं सुने।
देवकी वसुदेव सुनि कै, हृदै हेत गुने ॥
आपु सौं पाती लिखी, कहि धन्य जसुमति नंद।
सुत हमारे पालि पठए, अति दियौ आनंद ॥
आइकै मिलि जात कबहूँ न, स्याम अरु वलराम।
इहौ कहत पठाइहौं अब, तबहिं तन विस्राम ॥
वाल सुख सब तुमहिं लूट्यौ, मोहि मिले कुमार।
'सूर' यह उपकार तुम तै, कहत वारंवार ॥ ३४४२ ॥

राग गौरी ॥ ४०६१ ॥

पाती लिखि उधौ कर दीन्हीं।
नंद जसोदहि हित करि दीजौ, हँसि उपगसुत लीन्ही ॥
मुख वचननि कहि हेत जनायौ, तुम ही हितू हमारे।
वालक जानि पठए नृप डर सौं, तुम प्रति पालनहारे ॥
कुविजा सुन्यौ जात ब्रज ऊधौ, महलहि लियौ बुलाइ।
अपने कर पाती लिखि राधेहिं, गोपिनि सहित वड़ाइ ॥
मोकौ तुम अपराध लगावति, कृपा भई अनयास।
भुकति कहा मो पर ब्रज नारी, सुनहु न 'सूरजदास' ॥ ३४४३ ॥

राज मलार ॥ ४०६२ ॥

हम पर काहे भुकति ब्रजनारी।
साझे भाग नही काहू कौ, हरि की कृपा निनारी ॥
कुविजा लिख्यौ सँदेस सवनि कौ, अरु कीन्ही मनुहारी।
हौ तौ दासी कंसराइ की, देखौ मनहिं विचारी ॥
फलनि मांझ ज्यौ करुइ तोमरी, रहत घुरे पर डारी।
अब तौ हाथ परी जंत्री के, वाजत राग दुलारी ॥
तनु तै टेढी सब कोउ जानत, परसि भई अधिकारी।
'सूरदास' स्वामी करुनामय, अपने हाथ सँवारी ॥ ३४४४ ॥

राग गौरी ॥ ४०६३ ॥

ऊधौ ब्रजहि जाहु पालागौ।
यह पाती राधा कर दीजौ, यह मै तुमसौ मांगौ ॥
गारी देहि प्रात उठि मोकौ, सुनति रहति यह वानी।
राजा भए जाइ नँदनंदन, मिली कूवरी रानी ॥
मोपर रिस पावति काहे कौ, वरजि स्याम नहि राख्यौ ?
लरिकाई तै बाँधति जसुमति, कहा जु माखन चाख्यौ ॥
रजु लै सबै हजूर होति तुम, सहित सुतावृषभान।
'सूर' स्याम बहुरौ ब्रज जैहै, ऐसे भए अजान ॥ ३४४५ ॥

राग धनाश्री ॥ ४०६४ ॥

ऊधौ यह राधा सौं कहियौ।
जैसी कृपा स्याम मोहि कीन्ही, आप करत सोइ रहियौ॥
मो पर रिस पार्वति विनु कारन, मैं हौं तुम्हरी दासी।
तुमहीं मन मैं गुनि धौं देखौ, विनु तप पायौ कासी॥
कहाँ स्याम को तुम अरधंगिनि, मैं तुम सरि की नाहीं।
'सूरज' प्रभु कौ यह न वूझिऐ, क्यौं न उहाँ लौं जाहीं॥ ३४४६ ॥

राग केदारौ ॥ ४०६५ ॥

सुनियत ऊधौ लए सँदेसौ, तुम गोकुल कौ जात।
पाछै करि गोपिनि सौं कहियौ, एक हमारी वात॥
मातु पिता कौ नेह समुझि कै, स्याम मधुपुरी आए।
नाहिन कान्ह तुम्हारे प्रीतम, ना जसुदा के जाए॥
देखौ वूझि आपने जिय मै, तुम धौं कौन सुख दीन्हे।
ये वालक तुम मत्त ग्वालिनी, सवै मूँड करि लीन्हे॥
तनक दही माखन के कारन, जसुदा त्रास दिखावै।
तुम हँसि सव वाँधन कौं दौरीं, काहू दया न आवै॥
जो वृषभानसुता उत कीन्ही, सो सव तुम जिय जानौ।
ताही लाज तज्यौ व्रज मोहन, अव काहै दुख मानौ॥
'सूरदास' प्रभु सुनि सुनि वातैं, रहे भूमि सिर नाए।
इत कुविजा उत प्रेम गोपिकनि, कहत न कछु वनि आए॥ ३४४७ ॥

राग विलावल ॥ ४०६६ ॥

तव ऊधौ हरि निकट वुलायौ।
लिखि पाती दोउ हाथ दई तिहिं, औ मुख वचन सुनायौ॥
व्रजवासी जावत नारी नर, जल थल द्रुम वन पात।
जो जिहिं विधि तासौं तैसैंही, मिलि कहियौ कुसलात॥
जो सुख स्याम तुमहिं तैं पावत, सो त्रिभुवन कहुँ नाहिं।
'सूरज' प्रभु दइ सौंह आपुनी, समुझत हौ मन माहिं॥ ३४४८ ॥

राग सारंग ॥ ४०६७ ॥

पहिलैं प्रनाम नँदराइ सौं।
ता पाछै मेरौ पालागन, कहियौ जसुमति माइ सौं॥
वार एक तुम वरसाने लौं, जाइ सवै सुधि लीजौ।
कहि वृषभानु महर सौं मेरौ, समाचार सव दीजौ॥
श्रीदामाऽदि सकल ग्वालनि कौं मेरौ कौतौ भेटचौ।
सुख संदेस सुनाइ सवनि कौं, दिन दिन कौ दुख मेटचौ॥
मित्र एक मन वसत हमारैं, ताहि मिलैं सुख पाइहौ।
करि करि समाधान नीकी विधि, मोकौं माथौ नाइहौ॥
डरपहु जनि तुम सघन कुंज मैं, है तहँ के तरु भारी।
वृंदावन मति रहति निरंतर, कवहुँ न होति निनारी॥
ऊधौ सौं समुझाइ प्रगट करि, अपने मन की वीती।
'सूरदास' स्वामी सौं छल सौं, कही सकल व्रज प्रीती॥ ३४४९ ॥

राग रामकली ।। ४०६८ ।।

कही हरि ऊधौ सौं ब्रज प्रीति ।
वै लै चले जोग गोपिनि कौं, तहाँ करन विपरीति ।।
तुरत अंक भरि रथहिं चढ़ायौ, विनै कह्यो करि ताहि ।
विरह जँजाल मेटि गोपिनि कौ, आवहु काज निवाहि ।।
लै रज चरन सीस वंदन करि, ब्रज रैहौं दिन द्वैकु ।
'सूरज' प्रभु श्री मुख कहि पठवत, तुम विनु रहौं न नैकु ।। ३४५० ।।

राग गौरी ।। ४०६९ ।।

गहरु जनि लावहु गोकुल जाइ ।
तुमहिं विना व्याकुल हम ह्वैहैं, जदुपति करी चतुराइ ।।
अपनौ ही रथ तुरत मँगायौ, दियौ तुरत पलनाइ ।
अपने अंग अभूषन करिकरि, आपुन ही पहिराइ ।।
अपनौ मुकुट पितंवर अपनौ, देत सवै सुख पाइ ।
'सूर' स्याम तदरूप उपँगसुत, भृगुपद एक बचाइ ।। ३४५१ ।।

राग विलावल ।। ४०७० ।।

ऊधौ चले स्याम आयसु सुनि, ब्रज नारिनि कौं जोग कह्यौ ।
हरि के मन यह प्रेम लहैंगी, वह तौ जिय अभिमान गह्यौ ।।
आतुर चल्यौ हरष मन कीन्हे, कृष्न महत करि पठै दियौ ।
स्यंदन उहै स्याम सव भूषन, जानि परै नँदसुवन वियौ ।।
जुवती कहा ज्ञान समुझैंगी, गर्व वचन मन कहत चल्यौ ।
'सूर' ज्ञान कौ मान वढाए, मधुवन के मारगहिं मिल्यौ ।। ३४५२ ।।

राग विलावल ।। ४०७१ ।।

जवहिं चले ऊधौ मधुवन तैं, गोपिनि मनहिं जनाइ गई ।
वारवार अलि लागे स्रवननि, कछु दुख कछु हिय हर्ष भई ।।
जहँ तहँ काग उड़ावन लागी, हरि आवत उडि जाहि नहीं ।
समाचार कहि जवहिं मनावति, उड़ि बैठत सुनि औचकहीं ।।
सखी परस्पर यह कही वातैं, आजु स्याम कै आवत हैं ।
किधौं 'सूर' कोऊ ब्रज पठयौ, आजु खवरि कै पावत हैं ।। ३४५४ ।।

राग सारंग ।। ४०७२ ।।

भुज फरकत अँगिया तरकति, कोउ मीठी वात सुनावै ।
स्याम सुंदर कौ आगम जानिय, वै निसचय घर आवै ।।
इनि सगुननि कौ यहै भरोसौ, नैननि दरस दिखावै ।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस कौं, नव जोवन धनि भावै ।। ३४५४ ।।

राग विलावल ।। ४०७३ ।।

आजु कोउ नीकी वात सुनावै ।
कै मधुवन तैं नंद लाड़िलौ, कैऽव दूत कोउ आवै ।।
भौर एक चहुँ दिसि तें उड़ि उडि, कानन लगि लगि गावै ।
उत्तम भाषा ऊँचे चढि चढि, अंग अंग सगुनावै ।।
भामिनि एक सखी सौं विनवै, नैन नीर भरि आवै ।
'सूरदास' कोऊ ब्रज ऐसौ, जो ब्रजनाथ मिलावै ।। ३४५५ ।।

राग धनाश्री ॥ ४०७४ ॥

तौ तू उड़ि न जाइ रे काग।
जौ गुपाल गोकुल कौ आवै, तौ ह्वैहै वड़भाग॥
दधि ओदन भरि दोनौ दैहौ ,अरु अचल की पाग।
मिलि हौ हृदय सिराइ स्रवन सुनि, मेटि विरह के दाग॥
जैसै मातु पिता नहिं जानत, अतर कौ अनुराग।
'सूरदास' प्रभु करैं कृपा जव, तव तैं देह सुहाग॥ ३४५६॥

राग कल्यान ॥ ४०७५ ॥

ऊधौ रथ वैठि चले, व्रज तन समुहाइ।
मथुरा तैं निकसि परे, गैल माझ आइ॥
वहै मुकुट पीतावर, स्याम रूप काछे।
भृगुपद इक वंचित उर, और अग आछे॥
ज्ञान कौ अभिमान किए, मोकौं हरि पठयौ।
मेरोई भजन थापि, माया सुख झुठयौ॥
मधुवन तैं चल्यौ तवहिं, गोकुल नियरान्यौ।
देखत व्रज लोग स्याम, आयौ अनुमान्यौ॥
राधा सौं कहति नारि, काग सगुन टेरौ।
मिलिहै तोहिं स्याम आजु, भयौ वचन मेरौ॥
वैसोइ रथ देखति सव, कहति हरष वानी।
'सूरज' प्रभु से लागत, तरुनी मुसुकानी॥ ३४५७॥

राग विलावल ॥ ४०७६ ॥

राधेहिं सखी वतावत री।
वैसोई रथ लागत मोकौ, उतही तैं कोउ आवत री॥
चढ़ि आयौ अक्रूर जाहि पर, स्यंदन व्रज तन धावत री।
वैसियै ध्वजा पताका वैसोइ घर घर सवद सुनावत री॥
कोउ कहै स्याम, कहति को ए है, व्रज तरुनी हरषावत री।
'सूर' स्याम जेहिं मग पग धारे, तेहि मारग दरसावत री॥ ३४५८॥

राग सारंग ॥ ४०७७ ॥

है कोउ वैसी ही अनुहारि।
मधुवन तन तैं आवत सखि री,, देखौ नैन निहारि॥
वैसोइ मुकुट मनोहर कुंडल, पीत वसन. रुचिकारि।
वैसहि वात कहत सारथि सौं, व्रज तन वाहैं पसारि॥
केतिक वीच कियौ हरि अंतर, मनु वीते जुग चारि।
'सूर' सकल आतुर अकुलानी, जैसैं मीन विनु वारि॥ ३४५९॥

राग कल्यान ॥ ४०७८ ॥

वैसोइ रथ वैसोइ कोउ आवत उतही तैं।
झुरिझुरि सव मरति विरह गोपी जित कीतैं॥
देखौ री मुकुट झलक, कुंडल की ओभा।
वैसोइ पट पीत अंग सुंदर अति सोभा॥

आए री नंदभुवन राधा हरषानी।
'सूर' मरत मीन तुरत मिलै अगम पानी॥ ३४६०॥

राग नट॥ ४०७६॥

देखत हरष भई ब्रजनारी। वै निहचै आए बनवारी॥
जो जैसै सो तैसै धाई। घरघर लोगनि सुनै कन्हाई॥
रथ ही तन सब निरखन लागे। सपने कौ सुख लूटत आगे॥
कृपा करी आए गोपाला। गोपिनि जानी बिरह बिहाला॥
ज्यौं ही ज्यौं रथ आतुर आवै। त्यौं ही त्यौं तनु पट फहरावै॥
'सूर' भई सुख व्याकुल नारी। प्रेम बिवस आनँद उर भारी॥ ३४६१॥

राग बिलावल॥ ४०८०॥

घर घर इहै सब्द परचौ।
सुनत जसुमति धाइ निकसी, हरष हियौ भरचौ॥
नद हरषित चले आगै, सखा हरषित अंग।
झुंड झुंडनि नारि हरषित, चली उदधि तरंग॥
गाइ हरषित ते स्रवति थन, चौकरत गौ बाल।
उमँगि अंग न मात कोऊ, बिरध तरुनऽरु बाल॥
कोउ कहत बलराम नाहीं, स्याम रथ पर एक।
कोउ कहत प्रभु 'सूर' दोऊ, रचित बात अनेक॥ ३४६२॥

राग बिलावल॥ ४०८१॥

सुने ब्रज लोग आवत स्याम।
जहँ तहाँ तै सबै धाईं, सुनत दुर्लभ नाम॥
मनु मृगी बन जरत व्याकुल, तुरत बरष्यौ नीर।
बचन गदगद प्रेम व्याकुल, धरति नहिं मन धीर॥
एक इक पल जुग सबनि कौं, मिलन कौ अतुरात।
'सूर' तरनी मिलि परस्पर, भई हरषित गात॥ ३४६३॥

राग धनाश्री॥ ४०८२॥

नंद गोप हरषित ह्वै, गए लैन आगै।
आवत बलराम स्याम, सुनत दौरि चली बाम, मुकुट झलक पीतांबर मन मन अनुरागै॥
निहचै आए गुपाल आनंदित भई बाल, मिटचौ बिरह कौ जँजाल, जोवत तिहिं काला।
गदगद तन पुलक भयौ, बिरहा कौ सूल गयौ, कृस्न दरस आतुर अति प्रेम कै बिहाला॥
ज्यौं ज्यौं रथ निकट भयौ, मुकुट पीत बसन नयौ, मन मैं कछु सोच भयौ स्याम किधौं कोऊ।
'सूरज' प्रभु आवत है, हलधर कौ नहीं लखति, झखति कहति होते तौ संग बीर दोऊ॥
॥ ३४६४॥

राग आसावरी॥ ४०८३॥

आजु कोउ स्याम की अनुहारि।
आवत उतै उमँग सौ सबही, देखि रूप की पारि॥
इंद्र धनुष की उर बनमाला, चितवत चित्त हरै।
मनु हलधर अग्रज मोहन के, स्रवननि सब्द परै॥

गई चलि निकट न देखे मोहन, प्रान किये बलिहारि।
'सूर' सकल गुन सुमिरि स्याम के, बिकल भई ब्रजनारि।। ३४६५ ।।

राग बिलावल ।। ४०८४ ।।

कोउ माई आवत है तनु स्याम।
वैसे पट वैसिय रथ बैठनि, वैसीयै उर दाम।।
जो जैसैं तैसैं उठि धाई, छाँड़ि सकल गृह काम।
पुलक रोम गदगद तेही छन, सोभित अँग अभिराम।।
इतने बीच आइ गए ऊधौ, रही ठगी सब बाम।
'सूरदास' प्रभु ह्याँ कत आवैं, बँधे कुबिजा रसदाम।। ३४६६ ।।

राग बिलावल ।। ४०८५ ।।

उमँगि ब्रज देखन कौं सब धाए।
एकहिं एक परस्पर बूझति, मोहन दूलह आए।।
सोई ध्वजा पताका सोई, जा रथ चढ़ि जु सिधाए।
श्रुति कुंडल अरु पीत बसन छबि, वैसोइ साज बनाए।।
आइ निकट पहिचाने ऊधौ, नैन जलज जल छाए।
'सूरदास' मिटी दरसन आसा, नूतन बिरह जनाए।। ३४६७ ।।

राग बिलावल ।। ४०८६ ।।

जबहिं कह्यौ ये स्याम नहीं।
परी मुरछि धरनी ब्रजबाला, जो जहँ रही सु तहीं।।
सपने की रजधानी ह्वै गइ, जो जागी कछु नाहीं।
बारबार रथ ओर निहारहि, स्याम बिना अकुलाहीं।।
कहा आइ करिहै ब्रज मोहन, मिली कूबरी नारी।
'सूर' कहत सब ऊधौ आए, गई कामसर मारी।। ३४६८ ।।

राग रामकली ।। ४०८७ ।।

तरुनी गईं सब बिलखाइ।
जबहिं आए सुने ऊधौ, अतिहि गईं मुराइ।।
परी व्याकुल जहाँ जसुमति, गईं तहँ सब धाइ।
नीर नैनन बहति धारा, लई पोंछि उठाइ।।
इक भई अब चलौ मारग सखा पठयौ स्याम।
सुनौ हरि कुसलात ल्यायौ महरि सौं कहै बाम।।
जबहि लौ रथ निकट आयौ, तबहुँ तैं परतीति।
वह मुकुट कुंडल पितबर, 'सूर' प्रभु अँगरीति।। ३४६९ ।।

राग बिलावल ।। ४०८८ ।।

भली भई हरि सुरति करी।
उठौ महरि कुसलात बूझिऐ, आनँद उमँग भरी।।
भुजा गहे गोपी परबोधति, मानहु सुफल घरी।
पाती लिखि कछु स्याम पठायौ, यह सुनि मनहि ढरी।।
निकट उपँगसुत आइ तुलाने, मानौ रूप हरी।
'सूर' स्याम कौ सखा यहै री, स्रवननि सुनी परी।। ३४७० ।।

राग धनाश्री ।। ४०९८ ।।

निरखत ऊधौ कौ सुख पायौ।
सुंदर सुलज सुबंस देखियत, यातैं स्याम पठायौ ।।
नीकैं हरिसंदेस कहैगौ, स्रवन सुनत सुख पैहै।
यह जानति हरि तुरत आइहैं, यह कहि हृदै सिरैहै ।।
घेरि लिए रथ पास चहूँघा, नंद गोप ब्रजनारी।
महर लिवाइ गए निज मंदिर, हरषित लियौ उतारी ।।
अरघ देत भीतर तिहि लीन्हौ, धनि धनि दिन कहि आज।
धनि धनि 'सूर' उपँगसुत आए, मुदित कहत ब्रजराज ।। ३४७१ ।।

राग मलार ।। ४६०० ।। नंदवचन

कबहुँ सुधि करत गुपाल हमारी।
पूछत पिता नंद ऊधौ सौं, अरु जसुदा महतारी ।।
बहुतै चूक परी जनजानत, कहा अबकैं पछिताने।
बासुदेव घर भीतर आए, मैं अहीर करि जाने ।।
पहिलैं गर्ग कह्यौ हुतौ हमसौं, संग दु:ख गयौ भूल।
'सूरदास' स्वामी के बिछुरैं, राति दिवस भयौ सूल ।। ३४७२ ।।

राग सारंग ।। ४०९१ ।। उद्धववचन

कह्यौ कान्ह सुनि जसुदा मैया।
आवहिंगे दिन चारि पाँच मैं, हम हलधर दोउ भैया ।।
मुरली बेंत बिषान हमारौ, कहूँ अबेर सबेरौ।
मति लै जाइ चुराइ राधिका, कछुव खिलौना मेरौ ।।
जा दिन तैं हम सौं बिछुरे, काहु न कह्यौ कन्हैया।
प्रात न कियौ कलेऊ कबहूँ, साँझ न पय पियौ धैया ।।
कहा कहौं कछु कहत न आवै, जननी जो दुख पायौ।
अब हमसौं बसुदेव देवकी, कहत आपनौ जायौ ।।
कहिऐ कहा नंद बाबा सौं, बहुत निठुर मन कीन्हौ।
'सूर' हमहिं पहुँचाइ मधुपुरी, बहुरि न सोधौ लीन्हौ ।। ३४७३ ।।

राग सारंग ।। ४०९२ ।।

हमतैं कछु सेवा न भई।
धोखैं ही धोखैं जु रहे हम, जाने नाहिं त्रिलोकमई ।।
चरन पकरि कर बिनती करिबौ, सब अपराध छमा कीबै।
ऐसौ भाग होइगौ कबहूँ, स्याम गोद पुनि मैं लीबै ।।
कहै नंद आगैं ऊधौ के, एक बेर दरसन दीबे।
'सूरदास' स्वामी मिलि अबकैं, सबै दोष निज गत कीबे ।। ३४७४ ।।

राग मलार ।। ४०९३ ।।

ऊधौ कहौ साँची बात।
दधि, मह्यौ नवनीत माधव, कौन के घर खात ।।
किन सखा सँग संग लीन्हे, गहे लकुटी हाथ।
कौन की गैयाँ चरावत, जात को धौं साथ ।।

कौन गोपी कूलजमुना, रहत गहिगहि घाट।
दान हठ कै लेत कापै, रोकि किनकी वाट॥
कौन ग्वालनि साथ भोजन, करत किनतै वात।
कौन कै माखन चुरावन, जात उठिकै प्रात॥
इतौ बूझत माइ जसुमति, परी मुरछित गात।
'सूरदास' किसोर मिलवहु, मेटि हिय की तात॥ ३४७५॥

राग विलावल॥ ४०९४॥

भली वात सुनियत है आज।
कोऊ कमल नैन पठयौ है, तन वनाइ अपनौ सौ साज॥
पूछत सखा कहौ कैसे है, अव नाही करिवै कछु काज।
कंस मारि वसुद्यौ गृह आए, उग्रसेन कौ दीन्हौ राज॥
राजा भए कहाँ है यह सुख, सुरभी सँग वन गोप समाज।
अव सुनि 'सूर' करै को कौतुक, व्रज मैं नाहि बसत ब्रजराज॥ ३४७६॥

राग नट॥ ४०९५॥

वातै सुनियत है मनभावन।
वैसेइ ग्वाल गोप गोपी सव, वैसोइ भेष वनावन॥
नंननँदन पतिया लिखि पठई, आजु कालि हरि आवन।
वैसेइ कुज गलिन मै फिरि फिरि, वैसेइ वेनु वजावन॥
वैसेइ विहँसि विहँसि मृदु टेरनि, वैसोइ अनँद वढ़ावन।
'सूरदास' वैसियै विधि विहरनि, वैसेइ खरिक दुहावन॥ ३४७७॥

राग सारंग॥ ४०९६॥ व्रज-नर-नारी वचन

वैसोइ रथ वैसोइ सव साज।
मानहु वहुरि विचारि कछू मन, सुफलक सुत आयौ व्रज आज॥
पहिलैइ गमन गयौ लै हरि कौ, परम सुमति रापौ रति राज।
अजहूँ कहा कियौ चाहत है, यातै अधिक कंस कौ काज॥
व्याध जु मृगनि वधत सुनि सजनी, सो सर काढ़ि संग नहि लेत।
यह अक्रूर कठिन की नाई, हिऐ विषम इतनौ दुख देत॥
ऐसे वचन वहुत विधि कहि कहि, लोचन भरि सोंचति उर गात।
'सूरदास' प्रभु अवधि जानि कै, चली सवै पूछन कुसलात॥३४७८॥

राग रामकली॥ ४०९७॥

व्रज घरघर सव होति वधाइ।
कंचन कलस दूव दधि रोचन लै वृंदावन आइ॥
मिलि व्रजनारि तिलक सिर कीनौ, करि प्रदच्छिना तासु।
पूछत कुसल नारिनर हरषत, आए सव व्रजवास॥
सकलकात तन धक धकात उर, अकवकात सव ठाढे।
'सूर' उपँगसुत वोलत नाही, अति हिरदै ह्वै गाढ़े॥ ३४७९॥

राग धनाश्री॥ ४०९८॥

आजु व्रज कोऊ आयौ है।
किधौ वहुरि अक्रूर क्रूर ह्वै, जियत जानि उठि धायौ है॥

मैं देख्यौ ताकौ रथ ठाढ़ौ, तुमकौं सोध बतायौ है।
कै करि कृपा दुखित दीननि पै, हरि संदेस पठायौ है॥
चली मिलि सिमिट सखी पूछन कौं, ऊधौ दरस दिखायौ है।
तब पहिचानि जानि प्रभु कौ भृत, करनि जोरि सिर नायौ है॥
हरि है कुसल कुसल हौ तुमहूँ, कुसल लोग सब भायौ है।
है वह नगर कुसल 'सूरज' प्रभु, करि सुदृष्टि जहँ छायौ है॥ ३४८०॥

राग धनाश्री॥ ४०९९॥

देखौ नंदद्वार रथ ठाढौ।
बहुरि सखी सुफलक सुत आयौ, परयौ सदेह जिय गाढ़ौ॥
प्रान हमारे तबहिं लै गयौ, अब किहि कारन आयौ।
मैं जानी यह बात सुनत प्रभु, कृपा करन उठि धायौ॥
इतने अंतर आइ उपँगसुत, तेहि छन दरसन दीन्हौ।
तब पहिचानि सखा हरि जू कौ, परम सुचित मन कीन्हौ॥
तिहिं परनाम कियौ अति रुचि सौं, अरु सबहिनि कर जोरे।
सुनियत हुते तैसेई देखे, परम सुहृद जिय भोरे॥
तुम्हरौ दरसन पाइ आपनौ, जनम सुफल करि मान्यौ।
'सूर' सु ऊधौ मिलत भयौ सुख, ज्यौं भख पायौ पान्यौ॥ ३४८१॥

राग धनाश्री॥ ४१००।

बोलक इनहू कौ सुनि लीजै।
कैसी उठनि उठै धौं ऊधौ, तैसोइ उत्तर कीजै॥
यामैं कछू खरचियत नाहीं, अपनौ मतौ न दीजै।
कहि री सखी भागिऐ किहि डर, चलै जाइ सुख छीजै॥
दोउ कर जोरि भई सब संमुख, बचन कह्यौ ज्यौं जीजै।
'सूर' सुमति सोई दीजै, हरि बदनसुधा रस पीजै॥ ३४८२॥

राग नट॥ ४१०१॥

ऊधौ कहौ हरि कुसलात।
कह्यौ आवन किधौं नाहीं, बोलिऐ सुख बात॥
एक छिन जुग जात हमकौं, बिनु सुने हरि प्रीति।
आपु आए कृपा कीन्ही, अब कहौ कछु नीति॥
तब उपँगसुत सबनि बोले, सुनौ श्रीमुख जोग।
'सूर' सुनि सब दौरि आईं, हटकि दीन्हौ लोग॥ ३४८३॥

राग सारंग॥ ४१०२॥

गोपी सुनहु हरि कुसलात।
कंस नृप कौ मारि छोरे आपने पितुमात॥
बहुत बिधि मनुहार करि, दियौ उग्रसेनहिं राज।
नगर लोग सुखी बसत हैं, भए सुरनि के काज॥
मोहि यह पाती दई लिखि, कह्यौ कछु संदेस।
'सूर' निर्गुन ब्रह्म उर धरि, तजहु सकल अदेस॥ ३४८४॥

राग केदारौ॥ ४१०३॥

गोपी सुनहु हरि संदेस।
गए संग अक्रूर मधुबन, हत्यौ कंस नरेस॥

रजक मार्‍यौ बसन पहिरे, धनुष तोर्‍यौ जाइ।
कुवलया चानूर मुष्टिक, दिए धरनि गिराइ॥
मातु पितु के बद छोरे, वासुदेव कुमार।
राज दीन्हौ उग्रसेनहिं, चोर निज कर ढार॥
कह्यौ तुमकौ ब्रह्म ध्यावन, छाँडि विषय विकार।
'सूर' पाती दई लिखि मोहि, पढ़ौ गोपकुमारि॥ ३४८५॥

राग सारंग॥ ४१०४॥ गोपीवचन

पाती मधुबन ही तैं आई।
सुदर स्याम आपु लिखि पठई, आइ सुनौ री माई॥
अपने अपने गृह तैं दौरी, लै पाती उर लाई।
नैननि निरखि निमेप न खंडित प्रेमतृषा न बुझाई॥
कहा करौं सूनौ यह गोकुल, हरि बिनु कछु न सुहाई।
'सूरदास' ब्रज कौन चूक तैं, स्याम सुरति बिसराई॥ ३४८६॥

राग सारंग॥ ४१०५॥

निरखति अंक स्याम सुदर के बारबार लावति छाती।
लोचन जल कागद मसि मिलि कैं ह्वै गइ स्याम स्याम जू की पाती॥
गोकुल बसत नंदनदन के, कबहु बयारि न लागी ताती।
अरु हम उती कहा कहै ऊधौ, जब सुनि बेनु नाद सँग जाती॥
उनकै लाड़ बदति नहिं काहू, निसि दिन रसिक-रास-रस राती।
प्राननाथ तुम कबहि मिलौगे, 'सूरदास' प्रबु बाल सँघाती॥ ३४८७॥

राग सारंग॥ ४१०६॥

पाती मधुबन तैं आई।
ऊधौ हरि के परम सनेही, ताकै हाथ पठाई॥
कोउ पढ़ति, कोउ धरति नैन पर, काहूँ हृदै लगाई।
कोउ पूछति फिरि फिरि ऊधौ कौं, आपुन लिखा कन्हाई?
बहुरौ दई फेरि ऊधौ कौ, तब उन बाँचि सुनाई।
मन मै ध्यान हमारौ राख्यौ, 'सूर' सदा सुखदाई॥ ३४८८॥

राग सारंग॥ ४१०७॥

लिखि आई ब्रजनाथ की छाप।
ऊधौ बाँधे फिरत सीस पर, बाँचत आवै ताप॥
उलटी रीति नंदनंदन की, घर घर भयौ सताप।
कहियौ जाइ जोग आराधौ, अविगत अकथ अमाप॥
हरि आगै कुबिजा अधिकारिनि, को जीवै इहिं दाप।
'सूर' सँदेस सुनावन लागे, कहौ कौन यह पाप॥ ३४८९॥

राग मलार॥ ४१०८॥

कोउ ब्रज बाँचत नाहिंन पाती।
कत लिखि लिखि पठवत नँदनंदन कठिन बिरह की काँती॥
नैन सजल कागद अति कोमल, कर अँगुरी अति ताती।
परसैं जरै, बिलोकैं भीजै, दुहूँ भाँति दुख छाती॥

को बाँचै ये अंक 'सूर' प्रभु, कठिन मदन-सर-घाती।
सब सुख लै गए स्याम मनोहर, हमकौं दुख दै थाती।। ३४९०।।

राग मलार।।४१०९।।

ब्रज मैं पाती पढ़न न आवै।
सुंदर स्याम लाल लिखि पठई, कोउ न बाँचि सुनावै।।
जो निरखत सो लेत स्वास भरि, लोचन नीर बहावै।
ना जानौं का है इहि महियाँ, लै उर सौं लपटावै।।
गूँगे कौ गुर कियौ सबनि मिलि, अबलनि कौं जु भुलावै।
'सूरदास' गोकुल के बासी, बिरही क्यौं सचु पावै।। ३४९१।।

राग सोरठ।। ४११०।।

ऊधौ नीकी लाँबी चीठी।
गोपीनाथ लिखी कर अपनै, यामैं जोग बसीठी।।
आँजहु भस्म जु मुद्रा सेल्ही, हियैं लगत सब सीठी।
हम राती मोहन मूरति सौं, अरु मुरली धुनि मीठी।।
एजू तुम तौ स्याम सनेही, ह्याँ मिलवत सब ईठी।
यह कलक तुमही कौ चढ़िहै, जैसैं रंग मजीठी।।
हम दासिनि की बिनती कहियौ, जो नैननि तुम दीठी।
'सूरदास' प्रभु दीन बधु है, करिहै कहा उबीठी।। ३४९२।।

राग मलार।। ४१११।।

काहे कौं लिखि पठवत कागर।
मदन गुपाल प्रगट दरसन बिनु, क्यौं राखै मन नागर।।
ऊधौ जोग कहा लै कीजै, बिनु जल सूखौ सागर।
कहि धौं मधुप काँच के बदलै, को दैहै बैरागर।।
कहियौ मधुप सँदेस सुचित दै, मधुबन स्याम उजागर।
'सूर' स्याम बिनु क्यौं मन राखै, तन जीवन के आगर।। ३४९३।।

राग धनाश्री।। ४११२।।

ऊधौ कहा करैं लै पाती।
जौ लौ मदनगुपाल न देखैं, बिरह जरावत छाती।।
निमिप निमिप मोहि बिसरत नाही, सरद सुहाई राती।
पीर हमारी जानत नाही, तुम हौ स्याम सँघाती।।
यह पाती लै जाहु मधुपुरी, जहँ वै बसैं सुजाती।
मन जु हमारे जहाँ लै गए, काम कठिन सर घाती।।
'सूरदास' प्रभु कहा चहत है, कोटिक बात सुहाती।
एक बेर मुख बहुरि दिखावहु, रहै चरन-रज-राती।। ३४९४।।

।। ४११३।।

हरि की ब्रज तन दीठि रुखौही।
याही तैं लिखि पठवत अलि कर, बातैं प्रेम छकौही।।
नातरु कहा करे हमसौ तब, मिलि मिलि बात लगौही।
कै अब प्रगट करी करुनामय, या ढँग करत हँसौही।।

कै वुलाइ लीन्हे हम घर तै, तरल भौह मुसकौही।
कै अव डारि दई मन वच क्रम, पतरी ज्यौहि जुठौही ।।
जहाँ रहौ तहँ कोटि वरष लगि, जियौ स्याम सुख सौही।
वे कुविजा वस हम जु लोग वस, 'सूर' आपनी गौ ही ।। ३४६५ ।।

राग मलार ।। ४११४ ।।

आए नंदनँदन के भेव।
गोकुल माँझ जोग विस्तारयौ, भली तुम्हारी टेव ।।
जव वृंदावन रास रच्यौ हरि, तवहिं कहा तुम हेव।
अव यह ज्ञान सिखावन आए, भस्म अधारी सेव ।।
अवलनि कौ तुम सो व्रत ठान्यौ, जो जोगिनि कौ जोग।
'सूरदास' यह सुनत दुसह दुख, आतुर विरह वियोग ।। ३४६६ ।।

राग सारंग ।। ४११५ ।। भ्रमरगीत

इहिं अतर मधुकर इक आयौ।
निज स्वभाव अनुसार निकट ह्वै, सुंदर सव्द सुनायौ ।।
पूछन लागी ताहि गोपिका, कुविजा तोहि पठायौ।
कीधौ 'सूर' स्याम सुंदर कै, हमै सँदेसौ लायौ ।। ३४६७ ।।

राग ललार ।। ४११६ ।।

मधुप कहा ह्याँ निरगुन गावहि।
यह प्रिय कथा नगरनारिनि सौ कहहि जहाँ कछु पावहि ।।
जानति मरम नंदनदन कौ, और प्रसग चलावहि।
हम नाही कमला सी भोरी, करि चातुरी मनावहि ।।
अति विचित्र लरिका की नाई, गुर दिखाइ वौरावहि।
जौ तू कितक सुमन रस लै, तजि जाइ वहुरि नहिं आवहि ।।
सुंदर मधु आनन अनुरागी, नैननि आनि पिवावहि।
नागर रतिपति 'सूरदास' प्रभु किहि विधि आनि मिलावहि ।। ३४६८ ।।

राग धनाश्री ।। ४११७ ।।

जाके गुन गावत दिनरात।
ताकौ निरगुन कहत मधुप तुम, नई सुनी यह वात ।।
जौ वादर जल वरपै निसि दिन, उमड़ि भरै नद खात।
स्वाति विना नहि कल मधुकर सुनि, खग चातक के गात ।।
वंसी मधुर सुनाइ हरयौ मन, दधि खायौ लै पात।
'सूर' स्याम नृप राज भए अव, गोपिनि देखि लजात ।। ३४६९ ।।

राग विलावल ।। ४११८ ।।

(मधुप तुम) कहौ कहाँ तै आए हौ।
जानति हौ अनुमान आपनै, तुम जदुनाथ पठाए हौ ।।
वैसेइ वसन, वरन तन सुंदर, वेइ भूषन सजि ल्याए हौ।
लै सरवसु सँग स्याम सिधारे, अव कापर पहिराए हौ ।।
अहो मधुप एकै मन सवकौ, सु तौ उहाँ लै छाए हौ।
अव यह कौन सयान वहुरि व्रज, ता कारन उठि धाए हौ ।।

मधुवन की मानिनी मनोहर, तहीं जात जहँ भाए हौ।
'सूर' जहाँ लौ स्याम गात हैं, जानि भले करि पाए हौ॥ ३५००॥

राग गौरी॥ ४११९॥

मधुकर जो हरि कह्यौ सु कहियै।
तव हम अव इनही की दासी, मौन गहे क्यौं रहियै॥
जो तुम जोग सिखावन आए, निरगुन क्यौं करि गहियै।
जो कछु लिख्यौ सोइ माथे पर, आनि परै सव सहियै॥
सुंदर रूप लाल गिरिधर कौ, विनु देखे क्यौ रहियै।
'सूरदास' प्रभु समुझि एक रस, अव कैसैं निरवहियै॥ ३५०१॥

राग धनाश्री॥ ४१२०॥ उद्धववचन

सुनौं गोपी हरि कौ सदेस।
करि समाधि अतरगति ध्यावहु, यह उनको उपदेश॥
वै अविगत अविनासी पूरन, सवघट रहे समाइ।
तत्व ज्ञान विनु मुक्ति नही है, वेद पुराननि गाइ॥
सगुन रूप तजि निरगुन ध्यावहु, इक चित इक मन लाइ।
यह उपाइ करि विरह तरौ तुम, मिलै ब्रह्म तव आइ॥
दुसह सँदेस सुनत माधौ कौ, गोपी जन विलखानी।
'सूर' विरह की कौन चलावै, वूडति मनु विनु पानी॥ ३५०२॥

राग मलार॥ ४१२१॥ गोपीवचन

मधुकर हमही क्यौं समुझावत।
वारंवार ज्ञान गीता कौ, अवलनि आगै गावत॥
नँदनंदन विनु कपट कथा कत, कहि कहि रुचि उपजावत।
एक चंदन जो अंग छुधारत, कहि कैसैं सचु पावत॥
देखि विचारि तुही जिय अपने, नागर है जु कहावत।
सव सुमननि फिरिफिरि जु निरस करि, काहे कमल वधावत॥
चरन कमल, कर नयन वदन छवि, वहै कमल मन भावत।
'सूरदास' मन अलि अनुरागी, कहि कैसैं सुख पावत॥ ३५०३॥

राग मलार॥ ४१२२॥

रहु रे मधुकर मधु मतवारे।
कौन काज या निरगुन सौं, चिर जीवहु कान्ह हमारे॥
लोटत पीत पराग कीच मैं, नीच न अंग सम्हारे।
वारंवार सरक मदिरा की, अपरस रटत उघारे॥
तुम जानत हौ वैसी ग्वारिनि, जैसे कुसुम तिहारे।
घरी पहर सवहिनि विरमावत, जेते आवत कारे॥
सुंदर वदन कमलदल लोचन, जसुमति नंददुलारे।
तन मन 'सूर' अरपि रही स्यामहिं, कापै लेहि उधारे॥ ३५०४॥

राग मलार॥ ४१२३॥

मधुकर कौन देस तैं आए।
जव तैं क्रूर गए लै मोहन, तव तैं भेद न पाए॥

जाने सखा स्यामसुंदर के, अवधि वध उठि धाए।
अंगविभाग नंदनंदन के, इहि सुरूप दसराए।।
आसन, ध्यान, वायु-आराधन, अलि मन चित तुम ताए।
अतिहि विचित्र सुबुद्धि सुलच्छन, गुनी जोग मत गाए।।
मुद्रा, भस्म, विषान, त्वचामृग, व्रज जुवतिनि नहिं भाए।
अतिसी कुसुम वरन मुख मुरली, 'सूरज' प्रभु किन ल्याए।। ३५०५।।

राग मलार।। ४१२४।।

मधुकर काके मीत भए।
त्यागे फिरत सकल कुसुमावलि, मालति भुरै लए।।
छिनु के बिछुरै कमल रति मानी, केतिक कत विधए।
छाँड़ि जु देह नेह नहिं जान्यौ लै गुन प्रगट नए।।
नूतन कदंब, तमाल, वकुल, वट परसत जनम गए।
भुज भरि नलिनि उड़त उदास होइ, गत स्वारथ समए।।
भटकत फिरत पात द्रुम बेलिनि, कुसुमाकर रमए।
'सूर' विमुख पदअंबुज छाँड़ै, विषयनि विवर छए।। ३५०६।।

राग जैतश्री।। ४१२५।।

मधुकर काके मीत भए।
द्यौस चारि करि प्रीति सगाई, रस लै अनत गए।।
डहकत फिरत आपने स्वारथ, पाषँड अग्र दए।
चाँड़ सरै पहिचानत नाही, प्रीतम करत नए।।
मूड़ उचाट मेलि बौराए, मन हरि हरि जु लए।
'सूरदास' प्रभु धूति धर्म ढिग, दुख के बीज वए।। ३५०७।।

राग सारंग।। ४१२६।।

मधुकर हम न होहिं वै बेलि।
जिन भजि तजि तुम फिरत और रँग, करत कुसुमरस केलि।।
बारे तै वर बारि बढी है, अरु पोषी पिय पानि।
विनु पिय परस प्रात उठि फूलत, होति सदा हित हानि।।
ये बेली बिरही वृंदावन, उरझी स्याम तमाल।
प्रेम-पुहुप-रस बास हमारे, विलसत मधुप गोपाल।।
जोग समीर धीर नहि डोलति, रूप डार दृढ़ लागी।
'सूर' पराग न तजति हिए तै, श्री गुपाल अनुरागी।। ३५०८।।

राग सारंग।। ४१२७।।

मधुकर कहाँ पढ़ी यह नीति।
लोक वेद सब ग्रंथ रहित यह, कथा कहत विपरीति।।
जनम भूमि ब्रज सखी राधिका, केहिं अपराध तजी।
अति कुलीन गुन रूप अमित सुख, दासी जाइ भजी।।
जोग समाधि वेदगुनि मारग, क्यौं समुझै जु गँवारि।
जो पै गुन अतीत व्यापक है, तौ हम काहैं न्यारि।।

रहि अलि ढीठ कपट स्वारथ हित, तजि वहु वचन विसेपि।
मन क्रम वचन बचति इहि नातैं, 'सूर' स्याम तन देखि॥ ३५०९॥

राग मलार॥ ४१२८॥

मधुकर काहे कौ गोकुल आए।
हम वैसी ही सचु अपने मैं, दूने विरह जगाए॥
जानति है तुम जिनहि पठाए, स्याम सँदेसौ लाए।
जन्म जन्म के दूत तिरोवन, कौनहि लार लगाए॥
कहा करहि कहँ जाहि सखी री, हरि बिनु कछु न सुहाए।
जनम सुफल 'सूरज' तिनको, जे काज पराए धाए॥ ३५१०॥

राग मलार॥४१२९॥

आए माई दुरँग स्याम के सगी।
जो पहिलै रँग रँगे स्याम के, तिनही की वुधि रगी॥
हमरी उनकी सी मिलवत हौ, तातै भए विहंगी।
सूधी कहि सविहिनि समुझावत, ते साँचे सरवंगी॥
औरनि कौ सरवस लै मारत, आपुन भए अभंगी।
'सूर' सुनाम सिलीमुख जो पै, वेधन कवच उपगी॥ ३५११॥

राग मलार॥ ४१३०॥

कोउ माई मधुवन तैं आयौ।
सखी सिमिट सव सुनौ सयानी, हित करि कान्ह पठायौ॥
जो मोहन विछुरे तैं गोकुल, इते दिवस दुख पायौ।
सो इन कमलनैन करुनामय, हिरदै माँझ वतायौ॥
जाकौ जोगी जतन करत है, नैकहुँ ध्यान न आयौ।
सो इन परम उदार मधुप ब्रज वीथिनि माँझ वहायौ॥
अति कृपालु आतुर अवलनि कौ, व्यापक अगह गहायौ।
समुझि 'सूर' सुख होत स्रवन सुनि, नेति जु निगमनि गायौ॥ ३५१२॥

राग सारंग॥ ४१३१॥

परी पुकार द्वार गृह गृह तैं, सुनी सखी इक जोगी आयौ।
पवन सधावन, भवन छुड़ावन, रवन रसाल गोपाल पठायौ।
आसन बाँधि, परम ऊरध चित, वनत न तिनहिं कहा हित ल्यायौ।
कनकवेलि, कामिनि ब्रजवाला जोग अगिनि दहिवे कौ धायौ॥
भवभय हरन, असुर मारन हित, कारन कान्ह मधुपुरी छायौ।
जादव मैं ब्रज एकौ नाही, काहै उलटौ जस विथरायौ॥
सुथल जु स्याम थाम मैं वैठी, अवलनि प्रति अधिकार जनायौ।
'सूर' विसारी प्रीति साँवरे, भली चतुरता जगत हँसायौ॥ ३५१३॥

राग सारंग॥ ४१३२॥

देन आए ऊधौ मत नीकौ।
आवहु री मिलि सुनहु सयानी, लेहु सुजस कौ टीकौ॥
तजन कहत अंवर आभूषन, गेह नेह सुत ही कौ।
अंग भस्म करि सीस जटा धरि, सिखवत निरगुन फीकौ॥

मेरे जान यहै जुवतिनि कौ, देत फिरत दुख पी कौ।
ता सराप तैं भयौ स्याम तन, तउ न गहत डर जी कौ॥
जाकी प्रकृति परी जिय जैसी, सोच न भली बुरी कौ।
जैसैं 'सूर' व्याल रस चाखै, मुख नहिं होत अमी कौ॥ ३५१४॥

राग नट॥ ४१३३॥

(ऊधौ) नैकु सुजात हरि कौ स्रवननि सुन।
कंकन काँच, कपूर करर सम, सुख दुख, गुन औगुन॥
नाम उनहिं कौ सुनत गेह तजि, जाइ वसत नर कानन।
परमहंस वहुतक देखियत है, आवत भिच्छा माँगन॥
वालि, कपिन कौ राउ, सँहारयौ, लोक-लाज-डर डारी।
सूपनखा की नाक निपाती, तिय वस भए मुरारी॥
वलि, सो वाँधि पताल पठायौ, कीन्है जग्य वनाइ।
'सूर' प्रीति जानी नइ हरि की, कथा तजी नहिं जाइ॥ ३५१५॥

राग सोरठ॥ ४१३४॥

ऊधौ स्याम सखा तुम साँचे।
की करि लियौ स्वाँग बीचहि तैं, वैसहिं लागत काँचे॥
जैसी कही हमहिं आवत ही, औरनि कहि पछिताते।
अपनौ पति तजि और वतावत, मेहमानी कछु खाते॥
तुरत गमन कीजै मधुवन कौ, इहाँ कहा यह लाए।
'सूर' सुनत गोपिनि की वानी, ऊधौ सीस नवाए॥ ३५१६॥

राग नट॥ ४१३५॥

ऊधौ वेगि मधुवन जाहु।
जोग लेहु सँभारि अपनौ, वेचियै जहँ लाहु॥
हम विरहिनी नारि, हरि विनु कौन करै निवाहु।
तहीं दीजै मूल पूरै, नफौ तुम कछु खाहु॥
जो नहीं व्रज मैं विकानौ, नगर नारि विसाहु।
'सूर' वै सव सुनत लैहै, जिय कहा पछिताहु॥ ३५१७॥

राग धनाश्री॥ ४१३६॥

ऊधौ और कछू कहिवै कौं?
मन मानै सोऊ कहि डारौ, हम सव सुनि सहिवे कौं॥
यह उपदेस आजु लौं ऐसौ, काननि सुन्यौ न देख्यौ।
नीरस कटुक तपत अति दारुन, चाहत हम उर लेख्यौ॥
निसि दिन वसत नैकु नहिं निकसत, हृदय मनोहर ऐन।
याकौं यहाँ ठौर नाही है, लै राखौ जहँ चैन॥
व्रजवासी गोपाल उपासी, हमसौ वातैं छाँड़ि।
'सूर' जोगधन राखि मधुपुरी, कुविजा के घर गाड़ि॥ ३५१८॥

राग सोरठ॥ ४१३७॥

ऊधौ कहौ कहन जौ पारौ।
नाही वलि कछु दोष तिहारौ, सकुचि साध जनि मारौ॥

नाही ब्रज बसि नंदलाल की, बालविनोद निहारौ।
नाही रास रसिकरस चाख्यौ, तातैं डरौं सो टारचौ॥
जौ नहि गयौ 'सूर' प्रीतम सँग, प्रान त्यागि तन न्यारौ।
तौ अब बहुत देखिबै सुनिबै, कहा करम सौं चारौ॥ ३५१९॥

राग नट॥ ४१३८॥

जाहु जाहु ऊधौ जाने हौ।
जैसे हरि तैसे तुम सेवक, कपट चतुरई साने हौ॥
निरगुन ज्ञान कहाँ तुम पायौ, कौन गाँव ब्रज आने हौ।
यह उपदेश देहु लै कुबिजहि, जाकै रूप लुभाने हौ॥
कहँ लगि कहौ जोग की बातैं, बाँचत नैन पिराने हौ।
'सूरदास' प्रभु हम सब खोटी, तुम तौ बारह बाने हौ॥ ३५२०॥

राग गौरी॥ ४१३९॥

ऊधौ जाहु तुमहि हम जाने।
स्याम तुमहि ह्याँ कौ नहि पठयौ, तुम हौ बीच भुलाने॥
ब्रजनारिनि सौ जोग कहत हौ, बात कहत न लजाने।
बड़े लोग न बिवेक तुम्हारे, ऐसे भए अयाने॥
हमसौ कही लई हम सहि कै, जिय गुनि लेहु सयाने।
कहँ अबला कहँ दसा दिगंबर, सम्ह करौ पहिचाने॥
साँच कहौ तुमकौ अपनी सौं, बूझति बात निदाने।
'सूर' स्याम जब तुमहि पठायौ, तब नैकहु मुसकाने॥ ३५२१॥

राग काफी॥ ४१४०॥

जोग उलटि लै जाहु (ऊधौ) भजिहै नंदकिसोर।
हमहि तहाँ लै जाहु (ऊधौ) जहाँ बसै चित चोर॥
मोहन मूरति साँवरी, चित मैं रही समाइ।
देखौ ऊधौ न्याउ कै, जोग कियौ क्यौं जाइ॥
पूरन पूरन तुम कहौ, ह्याँ पूरन ह्याँ कौन।
ऊधौ जो जिय जानि कै, देत जरे पर लौन॥
जोगहि जोग मिलाइयै, हम या जोग अजोग।
ऊधौ करनी सार है, आपु जोग यह जोग॥
मधुर बचन जे तुम कहौ, ते हम चित न समाहि।
ऊधौ जोगहि ना छुएँ छुएँ तौ प्रेम लजाहि॥
हमैं जु आसा कृष्न की, देखै जीवन प्रान।
'सूरदास' प्रभु साँवरौ, नागर चतुर सुजान॥ ३५२२॥

राग गौरी॥ ४१४१॥

कहति कहा ऊधौ सौ बौरी।
जाकौ सुनति, रहे हरि के ढिग, स्याम सखा यह सो री?
कहा कहति री मै पत्याति नहि, सुनी तुही कहनावति।
हमकौ जोग सिखावन आए, यह तेरै मन आवति॥
करनी भली भलेई जानै, कुटिल कपट की बानि।
हरि कौ सखा नही री माई, यह मत निहचै जानि॥

कहाँ रासरस कहाँ जोग धरि, इतने अंतर भाषत।
'सूर' सबै तुम भई बावरी, याकी पति कह राखत ।। ३५२३ ।।

राग कान्हरौ ।। ४१४२ ।।

ऐसे जन धूत कहावत ।
मोकौ एक अचंभौ आवत, यामैं वै कछु पावत ।।
वचन कठोर कहत कहि दाहत, अपनौ महत गँवात ।
ऐसी प्रकृति परी काहू की, जुवतिनि ज्ञान बतावत ।।
आपुन निलज रहत नख सिख लौं, एते पर पुनि गावत ।
'सूर' करत परसंसा अपनी, हारेहुँ जीति कहावत ।। ३५२४ ।।

राग मलार ।। ४१४३ ।।

ऐसे जन बेसरम कहावत ।
सोच विचार कछू इनकै नहि, कहि डारत जो आवत ।।
अहि के गुन इनमैं परिपूरन, यामैं कछू न पावत ।
लघुता लहत महत करि यौ हँसि, नारिनि जोग जतावत ।।
ब्रज मैं हीन भए अब जैहै, अनतहुँ ऐसेहि गावत ।
'सूर' स्वभाव परयौ जिहि जैसौ, सो कैसै बिसरावत ।। ३५२५ ।।

राग कान्हरौ ।। ४१४४ ।।

प्रकृति जो जाकै अग परी ।
स्वान पूँछ कोउ कोटिक लागै, सूधी कहूँ न करी ।।
जैसै काग भच्छ नहिं छाँडै, जनमत जौन घरी ।
धोए रंग जात नहिं कैसेहुँ, ज्यौं कारी कमरी ।।
ज्यौ अहि डसत उदर नहिं पूरत, ऐसी धरनि धरी ।
'सूर' होइ सो होइ सोच नहिं, तैसेइ एऊ री ।। ३५२६ ।।

राग सारंग ।। ४१४५ ।।

ऊधौ होउ आगे तैं न्यारे ।
तुम देखत तन अधिक दहत है, अरु नैननि के तारे ।।
अपनौ जोग सैंति किन राखहु, इहाँ देत कत डारे ।
सो को जो अपने सुख खैहै, मीठे तजि फल खारे ।।
हम गिरिधर के नाम गुननि बस, और काहि उर धारे ।
'सूरदास' हम सब एकै मत, तुम सब खोटे कारे ।। ३५२७ ।।

राग कल्याण ।। ४१४६ ।।

जाहु जाहु आगे तैं ऊधौ, हौ तौ पति राखति हौं तेरी ।
काहे कौं अब रोष दिखावत, देखत आँखि बरति है मेरी ।।
तुम जू कहत संतत है गोविद, सुनियत है कुबिजा उन घेरी ।
दोउ मिले तैसेई तैसे, वै अहीर, वह कंस की चेरी ।।
तुम सारिखे बसीठ पठाए, कहिए कहा बुद्धि उन केरी ।
'सूर' स्याम वह सुधि बिसराई, देत फिरत ग्वालनि सँग हेरी ।। ३५२८ ।।

राग सारंग ।। ४१४७ ।।

समुझि न परति तिहारी ऊधौ ।
ज्यौ त्रिदोष उपजै जक लागत, बोलत बचन न सूधौ ।।

आपुन कौ उपचार करौ अति तब औरनि सिख देहु।
बड़ौ रोग उपज्यौ है तुमकौं भवन सवारैं लेहु॥
ह्वाँ भेषज नाना भाँतिन के, अरु मधुरिपु से बैद।
हम कातर डरपति अपनै सिर, यह कलंक है खेद॥
साँची बात छाँड़ि अलि तेरी, झूठी को अब सुनिहैं।
'सूरदास' मुक्ताहल भोगी, हंस ज्वारि क्यौं चुनिहैं॥ ३५२९॥

राग सोरठ॥ ४१४८॥

हम अलि गोकुलनाथ अराध्यौ।
मन, क्रम, बच हरि सौं धरि पतिव्रत, प्रेमजोग तप साध्यौ॥
मातु पिता हित, प्रीति, निगम पथ तजि, दुख सुख भ्रम नास्यौ।
मानऽपमान परम परितोषी, सुस्थल थिति मन राख्यौ॥
सकुचासन कुल सील करपि करि, जगतबंद्य करि बंदन।
मौनऽपवाद पवन आरोगन, हित क्रम काम निकंदन॥
गुरुजन कानि अगिनि चहुँ दिसि, नभ तरनि ताप बिनु देखे।
पिवत धूम उपहास जहाँ तहँ, अपजस स्रवन अलेखे॥
सहज समाधि सारि बपु बानक निरखि, निमेष न लागत।
परम ज्योति प्रति अंग माधुरी, धरति यहै निसि जागत॥
त्रिकुटि संग भ्रूभंग, तराटक, नैंन नैंन लगि लागैं।
हँसनि प्रकास सुमुख कुंडल मिलि, चंद सूर अनुरागैं॥
मुरली अधर स्रवन धुनि सो सुनि, सबद अनाहद कानैं।
बरषत रस रुचि बचन संग सुख, पद आनंद समानैं॥
मंत्र दियौ मन जात भजन लगि, ज्ञान ध्यान हरि ही कौ।
'सूर' कहौ गुरु कौन करै अलि, कौन सुनै मत फीकौ॥३५३०॥

॥ ४१४९॥

मैं मन मोल गुपालहिं दीन्हौ।
अंबुज बदन रसिक गिरिधर कौ, रूप नयन निरखन कौं लीन्हौ॥
इन तौ कर गहि लियौ आपनौ, उन तौ बातैं कछू न कीन्हौ।
वै लै गए चुराइ मोहि कैं, इन चितवन चितवत पल छीनौ॥
अब वै पलक न देत अपुन तैं इन जान्यौ यातैं भयौ हीनौ।
'सूरदास' मनमोहन पिय तैं, तोरि सनेह बिघातैं दीनौ॥३५३१॥

राग धनाश्री॥ ४१५०॥

ऊधौ हम आजु भई बड़ भागी।
जिन अँखिनि तुम स्याम बिलोके, ते अँखियाँ हम लागी॥
जैसैं सुमन बास लै आवत, पवन मधुप अनुरागी।
अति आनंद होत है तैसैं, अंगअंग सुख रागी॥
ज्यौं दरपन मैं दरस देखियत, दृष्टि परम रुचि लागी।
तैसैं 'सूर' मिले हरि हमकौं, बिरहबिथा तनत्यागी॥ ३५३२॥

राग सारंग॥ ४१५१॥

बिलग जनि मानौ हमरी बात।
डरपति बचन कठोर कहत अलि, मति बिनु पति उठि जात॥

जो कोउ कहै जरै कछु अपनै, फिरि पाछै पछितात।
जो प्रसाद पावत तुम ऊधौ, कृष्न नाम लै खात।।
मन जु तिहारौ हरि चरननि तर, अचल रहत दिन प्रात।
'सूर' स्याम तैं जोग अधिक है, कत कहि आवै बात।। ३५३३ ।।

राग सारंग ।। ४१५२ ।।

(अलि-हौं) कैसैं कहौं हरि के रूप रसहिं।
अपने तन मैं भेद वहुत विधि, रसना जानै न नैन दसहिं।।
जिन देखे ते आहिं वचन विनु, जिनहिं वचन दरसन न तिसहिं।
विनु वानी ये उमँगि प्रेम जल, सुमिरि सुमिरि वा रूप जसहिं।।
वारवार पछितात यहै कहि, कहा करौ जौं विधि न वसहिं।।
'सूर' सकल अंगनि की यह गति, क्यौं समुझावै छपद पसुहिं।। ३५३४ ।।

राग केदारौ ।। ४१५३ ।।

हम तौ सव वातनि सचु पायौ।
गोद खिलाइ पिवाइ देह पय, पुनि पालनै झुलायौ।।
देखति रही फनिग की मनि ज्यौं, गुरुजन ज्यौं न भुलायौ।
अव नहिं समुझति कौन पाप तैं, विधना सो उलटायौ।।
विनु देखैं पल पल नहिं छन छन, ये ही चित ही चायौ।
अवहिं कठोर भए व्रजपतिसुत, रोवत मुँह न धुवायौ।।
तव हम दूध, दही के कारन, घर घर वहुत खिझायौ।
सो अव 'सूर' प्रगट ही लाग्यौ, योगऽरु ज्ञान पठायौ।। ३५३५ ।।

राग सारंग ।। ४१५४ ।।

सो को जिहि नाही सचु पायौ, वलि गुपाल कै राज।
ऊधौ इहै सपदा हरि की, आवै सवकै काज।।
धनुष तोरि, गज मारि, मल्ल मथि, किए निडर जदुवंस।
इन औरौ अमरनि सुख दीन्हौ, करषि केस सिर कंस।।
कुविजहिं रूप दियौ नँदनंदन, माली कौ हित काम।
उग्रसेन वसुदेव देवकी, आने अपने धाम।।
दीनदयाल दयानिधि मोहन, हैं हमरे इक आस।
'सूर स्याम' हरिहैं जू कृपा करि, इन नैननि की प्यास।। ३५३६ ।।

राग धनाश्री ।। ४१५५ ।।

मधुकर कहिऐ काहि सुनाइ।
हरि विछुरत हम जिते सहे दुख, जिते विरह के घाइ।।
वरु माधौ मधुवन ही रहते, कत जसुदा कै आए।
कत प्रभु गोपवेष व्रज धरि कै, कत ये सुख उपजाए।।
कत गिरि धर्यौ, इंद्रमद मेट्यौ, कत वन रास वनाए।
अव कहा निठुर भए अवलनि कौं, लिखि लिखि जोग पठाए।।
तुम परवीन सवै जानत हौ, तातैं यह कहि आई।
अपनी को चालै सुनि 'सूरज' पिता जननि विसराई।। ३५३७ ।।

॥ ४१५६ ॥

कहौ तौ दुख आपनौ सुनाऊँ।
जुवतिनि सौं कहि कथा जोग की, सामग्री कहँ पाऊँ॥
ऊधौ कहँ सृंगी अरु सेली, केती भस्म जराऊँ।
सोलह सहस सुंदरी काजैं, मृगछाला कहँ पाऊँ॥
रूप न रेख वरन वपु जाके कैसे ध्यान धराऊँ।
'सूरदास' स्वामी विनु मुख तैं, कहौ काके गुन गाऊँ॥ ३५३८॥

राग धनाश्री ॥ ४१५७ ॥ उद्धववचन

जानि करि बावरी जनि होहु।
तत्व भजै वैसी ह्वै जैहौ, पारस परसैं लोहु॥
मेरौ वचन सत्य करि मानौ, छाँड़ौ सबकौ मोहु।
तौ लगि सब पानी की चुपरी, जौ लगि अस्थित दोहु॥
अरे मधुप! बातैं ये ऐसी, क्यौं कहि आवति तोहू।
'सूर' सुबस्ती छाड़ि परम सुख, हमैं बतावत खोहू॥ ३५३६॥

राग सारंग ॥ ४१५८ ॥ गोपीवचन

कहिवै जिय न कछू सक राखौ।
लाँबी मेलि दई है तुमकौं, बकत रहौ दिन आखौ॥
जाकी बात कहौ तुम हमकौं, सु धौं कहौ को काँधी।
तेरी कहौ पवन कौ भुस भयौ, वह्यौ जात ज्यौं आँधी॥
कत स्रम करत सुनत को ह्याँ है, होत जु वन को रोयौ।
'सूर' इते पर समुझत नाहीं, निपट दई को खोयौ॥ ३५४०॥

राग धनाश्री ॥ ४१५६ ॥

तुम तौ कहत सँदेसौ आनि।
कहा कहै वा नंदनँदन सौं, होत नहीं हित हानि॥
जुगुति मुकुति किहिं काज हमारैं, जदपि महा सुख खानि।
सनी सनेह स्याम सुंदर सौं, हिलि मिलि कै मन मानि॥
सोहत लोह परसि पारस कौं, ज्यौं सुवरन वर वानि।
पुनि वह कहा चारु चुंवक सौं, लटपटाइ लपटानि?
रूप रहित निरगुन नीरस नित, निगमहु परत न जानि।
'सूरजदास' कौन विधि तासौं, अब कीजै पहिचानि॥ ३५४१॥

राग सारंग ॥ ४१६० ॥

मधुकर भली सुमति यह खोई।
हाँसी होन लगी है ब्रज मैं, जोगहिं राखहु गोई॥
आतम ब्रह्म लखावत डोलत, घट घट व्यापक जोई।
चाँपे काँख फिरत निरगुन गुन, इहाँ न गाहक कोई॥
प्रेमकथा सोई पै जानै, जा पै बीती होई।
तू नीरस एती कह जानै, बूझि देखियै लोई॥
बडौ दूत तू बड़ी ठौर कौ, बड़ी बुद्धि सु बड़ोई।
'सूरदास' पूरौ दै षटपद, कहत फिरत है सोई॥ ३५४२॥

राग सारंग ॥ ४१६१ ॥

ऊधौ हम है हरि की दासी।
काहे कौं कटु वचन कहत हौ, करत आपनी हाँसी॥
हमरे गुनहिं गाँठि किन बाँधौ, हम कह कियौ बिगार।
जैसी तुम कीन्ही सो सबही, जानत है संसार॥
जो कुछ भली बुरी तुम कहिहौ, सो सब हम सहि लैहै।
आपन कियौ आपही भुगतहि, दोष न काहू दैहै॥
तुम तौ बडे बड़े कुल जनमे, अरु सबके सरदार।
यह दुख भयौ 'सूर' के प्रभु सौ, कहत लगावन छार॥ ३५४३॥

राग देवगंधार ॥ ४१६२ ॥

ऊधौ हरिगुन हम चकडोर।
गुन सौ ज्यौ भावै त्यौ फेरौ, यहै बात कौ ओर॥
पैंड़ पैड़ चलियै तौ चलियै, ऊबट रपटै पाइ।
चकडोरी की रीति यहै फिरि, गुन ही सौ लपटाइ॥
'सूर' सहज गुन ग्रंथि हमारै, दई स्याम उर माँहि।
हरि के हाथ परै तौ छूटै, और जतन कछु नाँहि॥ ३५४४॥

राग धनाश्री ॥ ४१६३ ॥

मधुप कहि जानत नाही बात।
फूँकि फूँकि हियरौ सुलगावत, उठि न इहाँ तै जात।
जिहिं उर बसत जसोदानंदन, निरगुन कहाँ समात।
कत भटकत डोलत पुहुपनि कौं, पान करत किन पात॥
जदपि सकल बेली बन बिहरत, बसत जाइ जलजात।
'सूरदास' ब्रज मिलवन आए, दासी की कुसलात॥ ३५४५॥

॥ ४१६४ ॥

मधुप तुम्हारी बात अटपटी, सुनि आवति है हाँसी।
कहिधौ कौन अग अबलनि सौ, कथत जोग अबिनासी॥
तिनकौ कहा आन सौ नातौ, जे है घर की दासी।
अपने प्रान प्रेम पोपन लगी, मीन नीर लौ बासी॥
नेम न तजत तजत वरु तन कौ, बधिक न छोरत फाँसी।
'सूरदास' गोपाल दरस बिन, क्यौ जीवै ब्रजबासी॥ ३४४६॥

राग धनाश्री ॥ ४१६५ ॥

मधुकर छाँडि अटपटी बातै।
फिरि फिरि बार बार सोइ सिखवत, हम दुख पावति जातै॥
हम दिन देति असीस प्रात उठि, बार खसौ मत न्हातै।
तुम निसि दिन उर अंतर सोचत, ब्रज जुवतिनि की घातै॥
पुनि पुनि तुमहि कहत कत आवै, कछुक सकुच है नातै।
'सूरदास' जे रँगी स्याम रँग, फिरि न चढ़ै रँग यातै॥ ३५४७॥

राग सारंग ॥ ४१६६ ॥

एक बात दुहुँ भाँति अटपटी, कहि अलि कहा बिचारै।
हरि मधुपुरी रहे जौ थिर ह्वै, हम दिन क्यौ करि टारै॥

व्रजवनिता गति और भई है, पूरव दसा निहारैं।
सुखकर सब प्रतिकूल भए है, क्यौ हरि इत पगु धारै ॥
मधुर सकल खग कटुक वदत है, चंद अगिनि अनुसारैं।
सुमन वान सम,, गुहा कुंज गृह, धूम मरुत तन जारैं ॥
पलट भयौ व्यौहार देखियत, को धौं दुख तैं तारैं।
समाधान नहिं होत किहूँ विधि, करत बहुत उपचारैं ॥
हम सी बहुत बहुत या व्रज मै, कहियौ नंदकुमारैं।
'सूरदास' प्रभु तौलौ रहियौ, जौ लौ दुरति निवारैं ॥ ३५४८ ॥

राग मलार ॥ ४१६७ ॥

क्यों मन मानत है इन बातनि।
पाए जानि सकल गुन मधुकर, वेइ साँवरे गातनि ॥
प्रथम प्रेम निसिहू न तजत अब, सकुचत हो जलजातनि।
नीरस जानि निकट नहि आवत, देखि पुराने पातनि ॥
सुनियत कथा काग कोकिल की, कपट रंग की रातनि।
निसि दिन स्रम सेवा कराइ उड़ि, अत मिले पितु मातनि ॥
वेनु वजाइ सुधाकर हरि मुख, वन बोली अधरातनि।
अति रति लोभ तजत नहिं इक छिन, पठैं सकत नहि प्रातनि ॥
वालि जीति जिन वलि वधन किए, लुब्धक की सो घातनि।
को पतियाइ सु धौं 'सूरज कहि, संकरषन के भ्रातनि ॥ ३५४९ ॥

राग सारंग ॥ ४१६८ ॥

उलटी रीति तिहारी ऊधौ. सुनै सो ऐसी को है।
अलप वयस अवला अहीरि सठ तिनहिं जोग कत सोहै ॥
वूची खुभी आँधरी काजर, नकटी पहिरै वेसरि।
मुंड़ली पटिया पारौ चाहै, कोढ़ी लावै केसरि ॥
वहिरी पति सौं मतौ करै तौ, तैसोइ उत्तर पावै।
सो गति होइ सवै ताकी जो, ग्वारिनि जोग सिखावै ॥
सिखई कहत स्याम की वतियाँ, तुमकौं नाही दोष।
राज काज तुम तैं न सरैगी, काया अपनी पोष ॥
जाते भूलि सवै मारग मैं, इहाँ आनि का कहते।
भली भई सुधि रही 'सूर', नतु मोह धार मैं वहते ॥ ३५५० ॥

राग सारंग ॥ ४१६९ ॥

सौति धरौ यह जोग आपनौ, ऊधौ पाइँ परौ।
कहँ रसरीति, कहाँ तनसोधन, सुनि सुनि लाज मरौ ॥
चदन छाँडि विभूति वतावत, यह दुख कौन जरौ।
सगुन रूप जु रहत उर अंतर, निरगुन कहा करौ ॥
निसि दिन रसना रटत स्याम गुन, का करि जोग भरौ।
नासा कर गहि ध्यान सिखावत, वेसरि कहाँ धरौ ॥
मुद्रा न्यास अंग आभूषन, पतिव्रत तैं न टरौ।
'सूरदास' यहै व्रत मेरै, हरि पल नहिं विसरौ ॥ ३५५१ ॥

॥ ४१७० ॥

मधुकर जुवती जोग न जानै।
एक पतिव्रत हरि रस जिनकै, और हृदै नहिं आनै ॥
जिनके रँग रस रस्यौ रैनिदिन, तन मन सुख उपजायौ।
जिन सरबस हरि लियौ रूप धरि, वहै रूप मन भायौ ॥
तू अति चपल आपनै रस कौ, या रस मरम न जानै।
पूछौ 'सूर' चकोर चंद, चातक घन केवल मानै ॥ ३५५२ ॥

राग सारंग ॥ ४१७१ ॥

मधुकर हम अजान मति भोरी।
यह मत जाइ तहाँ उपदेसौ, नागरि नवल किसोरी ॥
कंचन कौ मृग कौनै देख्यौ, किन बाँध्यौ गहि डोरी।
कहि धौ मधुप बारि तै माखन, कौनै भरी कमोरी ॥
बिनुही भीत चित्र किन कीन्हौ, किन नख घाल्यौ कोरी।
कहौ कौन पै बढत कनूका, जिन हठि भुसी पछोरी ॥
निरगुन ज्ञान तुम्हारौ ऊधौ, हम अबला मति थोरी।
चाहति 'सूर' स्याम मुख चंदहि, अखियाँ तृषित चकोरी ॥ ३५५३ ॥

राग बिहागरौ ॥ ४१७२ ॥

ऊधौ कैसे है वे लोग।
करि वहु प्रेम गह्यौ अविवेकहिं लिखि लिखि पठवत जोग ॥
कीजै कहा नही वस काहू, व्यापत विरहवियोग।
'सूरदास' प्रभु मिलौ कृपा करि, गोपिनि व्यापत रोग ॥ ३५५४ ॥

राग मारू ॥ ४१७३ ॥

ऊधौ काल चाल औरासी।
मन हरि मदनगुपाल हमारौ, बोलत बोल उदासो ॥
अब हम कहा करैं एते पर, जोग कहत अविनासी।
गुप्त गोपाल करी रस लीला, हम लूटी सुख रासी ॥
नैन उमंगि चले हरि के हित, बरषत है बरषा सी।
रसना 'सूर' स्याम के रस बस, चातक हू तै प्यासो ॥ ३५५५ ॥

॥ ४१७४ ॥

मधुकर ब्रज कौ बसिबौ नीकौ।
बछरा धेनु चरावत बन मै, कान्ह सबनि कौ टीकौ ॥
वृंदावन मैं होत कुलाहल, गरजत सुर मुरली कौ ॥
ठाढ़ौ जाइ कदम की छहियाँ, माँगत दान मही कौ ॥
उपजत प्रेम प्रीति अंतरगत, गावत जस हरि पी कौ।
'सूरदास' प्रभु इतनोइ लेखौ, प्रान हमारे जी कौ ॥ ३५५६ ॥

राग धनाश्री ॥ ४१७५ ॥

अँखियाँ हरि दरसन की भूखी।
कैसै रहति रूपरस राँची, ये बतियाँ सुनि रूखी ॥
अवधि गनत, इकटक मग जोवत, तव इतनौ नहिं भूखी।
अब यह जोग सँदेसौ सुनि सुनि अति अकुलानी दूखी ॥

वारक वह मुख आनि दिखावहु, दुहि पय पिवत पतूखी।
'सूर' सु कत हठि नाव चलावत, ये सरिता है सूखी॥ ३५५७॥

राग धनाश्री॥ ४१७६॥

अँखियाँ हरि दरसन की प्यासी।
देख्यौ चाहति कमलनैन कौ निसिदिन रहति उदासी॥
आए ऊधौ फिरि गए आँगन, डारि गए गर फाँसी।
केसरि तिलक मोतिनि की माला, वृंदावन के वासी॥
काहू के मन की कोउ जानत, लोगनि के मन हाँसी!
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस कौं, करवत लैहौं कासी॥ ३५५८॥

॥ ४१७७॥

हमरे प्रथमहि नेह नैन कौ।
वह रस रूप नीर कहँ पैयत, यह पय ज्ञानऽरु बैन कौ॥
जानति लोचन भरि नहि देखे, तन रस कोटिक मैन को।
तू बकवाद करै केतौ ही, नहि सुख निमिषहु रैन कौ॥
कह जानै रस सागर की गति, पट्पद बसज ऐन कौ।
'सूरदास' प्रभु इतने कोमल, अलि उपज्यौ दुख दैन कौ॥ ३५५९॥

राग धनाश्री॥ ४१७८॥

नैननि उहै रूप जौ देखौं।
तौ ऊधौ यह जीवन जग कौ साँच सुफल करि लेखौं॥
लोचन चपल चारु खंजन, मनरंजन हृदय हमारे।
सुरंग कमल मृग मीन मनोहर, सेत, अरुन अरु कारे॥
रत्न जटित कुंडल स्रवननि वर परति कपोलनि झाँई।
मनु दिनकर प्रतिबिंब मुकुर महँ, ढूँढ़त यह छवि पाई।
मुरली अधर विकट भौंहैं करि, ठाढ़ौ होन त्रिभंग।
मुक्त माल उर नील सिखर तैं, धँसी धरनि जनु गंग॥
और वेष कौ कहै बरनि सब, अँग अँग केसरि खौर।
देखै बने, कहत रसना सौं, 'सूर' बिलोकत और॥ ३५६०॥

राग धनाश्री॥ ४१७९॥

नैननि नदनंदन ध्यान।
तहाँ यह उपदेस दीजै, जहाँ निरगुन ज्ञान॥
पानि पल्लव रेख गनि गुन, अवधि बिबिध बिधान।
इते पर इन कटुक वचननि, क्यौं रहैं तन प्रान॥
चंद कोटि प्रकास मुख, अवतंस कोटिक भान।
कोटि मन्मथ वारि छवि पर, निरखि दीजत दान॥
भृकुटि कोटि कोदंड रुचि, अवलोकनी संधान।
कोटि वारिज वक्र नैन कटाच्छ कोटिक बान॥
मनि कंठ हार, उदार उर, अतिसय बन्यौ निरमान।
संख, चक्र, गदा धरे कर पद्म सुधा निधान॥
स्याम तनु पट पीत की छवि, करै कौन बखान।
मनहु नृत्यत नील घन मैं, तड़ित देती भान॥

रास रसिक गुपाल मिलि, मधु अधर करती पान।
'सूर' ऐसे स्याम बिनु, को इहाँ रच्छक आन॥ ३५६१॥

राग गूजरी ॥ ४१८० ॥

ऊधौ इन नैननि नेम लियौ।
नंदनँदन सौं पतिव्रत राख्यौ, नाहिन दरस बियौ॥
चंद चकोर स्वाति सौं चातक, जैसैं बध्यौ हियौ
ऐसैंही इन नैननि इकटक, हरि सौं प्रेम दियौ।
आए पुहुप ज्ञान लै इन दृग, मधुपनि रुचि न कियौ।
हरि-मुख-कमल-अमी-रस 'सूरज', चाहत वहै पियौ॥ ३५६२॥

राग कान्हरौ ॥ ४१८१ ॥

ऊधौ नैननि यह व्रत लीन्हौ।
स्वाति बिना ऊसर सब भरियत, ग्रीव रंध्र मत कीन्हौ॥
मुरली गरज तात मुकता तनु मेघ ध्यान जल दीन्हौ।
बरु ये प्रान जाइँ ऐसैं हीं, बचन होइँ क्यौं हीनौ॥
तुम आए लै जोग सिखावन, सुनत महा दुख दीनौ।
कैसैं 'सूर' आगोचर लहियै, निगम न पावत चीनौ॥ ३५६३॥

राग सारंग ॥ ४१८२ ॥

जब तैं सुंदर बदन निहारचौ।
ता दिन तैं मधुकर मन अटक्यौ, बहुत करी निकरे न निकारचौ॥
मातु, पिता, पति, बंधु, सुजन नहिं, तिनहूँ कौ कहिबौ सिर धारचौ।
रही न लोक लाज मुख निरखत, दुसह क्रोध फीकौ करि डारचौ॥
ह्वैवौ होइ सु होइ कर्मबस, अब जी कौ सब सोच निवारचौ।
दासी भई जु 'सूरदास' प्रभु, भलौ पोच अपनौ न बिचारचौ॥३५६४॥

॥ ४१८३ ॥

माई मेरे नैननि भेद दियौ।
ता दिन तैं उन स्याम मनोहर, चित बित चोरि लियौ॥
जैसैं कनक कटोरी मदिरा, आरतवंत पियौ।
बिसरी देह गेह सुख संपति, पर बस प्रान कियौ॥
तजि ब्रज बास चले मधुबन कौ, हरि बिनु बृथा जियौ।
'सूरदास' बिछुरत नहिं दरक्यौ, बज्र समान हियौ॥ ३५६५॥

राग सारंग ॥ ४१८४ ॥

हरि मुख निरखि निमेष बिसारे।
ता दिन तैं ये भए दिगंबर, इन नैननि के तारे॥
तजी सीख सब सास ससुर की, लाज जनेऊ जारे।
घूँघट घर छाँड़े बन बीथिनि, अह निसि रहत उघारे॥
सहज समाधि रूप रुचि कारन, टरत न टक तैं टारे।
ताकैं बीच बिघन करिबे कौं, मातु पिता पचिहारे॥
कहत सुनत समुझत मन महियाँ, ऊधौ बचन तुम्हारे।
'सूरदास' ये हटक न मानत, लोचन हठी हमारे॥ ३५६६॥

राग केदारौ ॥ ४१८५ ॥

नैननि निपट कठिनई ठानी।
जा दिन तैं बिछुरे नँदनंदन, ता दिन तैं नहिं नैकु सिरानी ॥
पलक न लावत रहत ध्यान धरि, बारबार दुरावत पानी।
लाल गुपाल मिले ऊधौ, मैं करमहीन कछुवै नहिं जानी ॥
समुझि समुझि अनुहार स्याम की, अति सुंदर वर सारगपानी।
'सूरदास' ये मोहि रहे अति, हरि मूरति मन माहँ समानी ॥ ३५६७ ॥

राग धनाश्री ॥ ४१८६ ॥

हरि बिनु पलक न लागति मेरी।
पात पात बृंदावन ढूढ़्यौ, कुंज गली सब हेरी ॥
हम दुखिया दुख ही कौं सिरजी, जनम जनम की चेरी।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस कौ, भई भसम की ढेरी ॥ ३५६८ ॥

राग सारंग ॥ ४१८७ ॥

ऊधौ क्यौं राखौं ये नैन।
सुमिरि सुमिरि गुन अधिक तपत हैं, सुनत तुम्हारे बैन ॥
ये जु मनोहर बदन इंदु के, सादर कुमुद चकोर।
परम तृषा रत सजल स्याम घन तन के चातक मोर ॥
मधुप मराल जु पद पंकज के, गति बिलास जल मीन।
चक्रवाक दुति मनि दिनकर के, मृग मुरली आधीन ॥
सकल लोक सूनौ लागत है, बिनु देखे वह रूप।
'सूरदास' प्रभु नंदनँदन के नख सिख अंग अनूप ॥ ३५६९ ॥

राग धनाश्री ॥ ४१८८ ॥

और सकल अंगनि तैं ऊधौ, अँखियाँ अधिक दुखारी।
अतिहिं पिराति सिराति न कबहूँ, बहुत जतन करि हारी ॥
मग जोवत पलकौ नहिं लावतिं, बिरह बिकल भईं भारी।
भरि गइ बिरह बयारि दरस बिनु, निसि दिन रहतिं उघारी ॥
ते अलि अब ये ज्ञान सलाकैं, क्यौ सहि सकतिं तिहारी।
'सूर' सु अंजन आँजि रूप रस, आरति हरहु हमारी ॥ ३५७० ॥

राग नट ॥ ४१८९ ॥

स्याम बियोग सुनौ हो मधुकर, अँखियाँ उपमा जोग नहीं।
कज, खंज, मृग, मीन होहिं नहिं, कबि जन बृथा कही ॥
कंजनहूँ की लगति पलक दल, जामिनि होति जहीं।
खंजनहूँ उड़ि जात छिनक मैं, प्रीतम जही तहीं ॥
मृग होते रहते सँग ही सँग, चंद बदन जितहीं।
रूप-सरोवर के बिछुरे कहुँ, जीवत मीन महीं?
ये झरना सी झरत सदा हैं, सोभा सकल बही।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस बिनु, अब कत साँस रही ॥ ३५७१ ॥

राग मलार ॥ ४१९० ॥

उपमा नैन न एक रही।
कबि जन कहत कहत सब आए, सुधि करि नाहिं कही ॥

कहि चकोर विधुमुख विनु जीवत, भ्रमर नही उड़ि जात।
हरिमुख कमल कोष बिछुरे तै, ठाले कत ठहरात॥
ऊधौ बधिक व्याध ह्वै आए, मृग सम क्यौ न पलात।
भागि जाहि वन सघन स्याम मै, जहाँ न कोऊ घात॥
खजन मनरंजन न होहि ये, कबहु नही अकुलात।
पंख पसारि न होत चपल गति, हरि समीप मुकुलात॥
प्रेम न होइ कौन विधि कहियै, झूठै ही तन आड़त।
'सूरदास' मीनता कछू इक, जल भरि कबहु न छाँड़त॥ ३५७२॥

राग मलार॥ ४१६१॥

ऊधौ इन नैननि अंजन देहु।
आनहु क्यौ न स्याम रँग काजर, जासौ जुरयौ सनेहु॥
तपत रहति निसि वासर मधुकर, नहि सुहात वन गेहु।
जैसै मीन मरत जल विछुरत, कहा कहौ दुख एहु॥
सब विधि वानि ठानि करि राख्यौ, खरि कपूर कौ रेहु।
वारक स्याम मिलाइ 'सूर' सुनि, क्यौ न सुजस जग लेहु॥ ३५७३॥

राग मलार॥ ४१६२॥

नैना नाहिनै ये रहत।
जदपि मधुप तुम नँदनंदन कौ, निपटहि निकट कहत॥
हृदै माँझ जौ हरिहि बतावत, सीखौ नाहि गहत।
परी जु प्रकृति प्रगट दरसन की, देख्यौइ रूप चहत॥
यह निरगुन उपदेस तुम्हारी, सुनै न सह्यौ परत।
'सूरदास' प्रभु विनु अवलोके, कैसैहु सुख न लहत॥ ३५७४॥

राग सारंग॥ ४१६३॥

अब अलि नैननि प्रकृति परी।
हरि मुख कमल विना निरखे तै, रहत न एक घरी॥
सूखे सर सरोज संपुट भए, कौन अधार जिऐ।
मधु मकरंद पियत मधुकर ते, कैसै गरल पिऐं॥
तुमहू जात प्रेम के लालच, कानि सूल जिय जानि।
तन त्यागे नीकौ लागत पै, सहत न परसन पानि॥
हरि हित वारि कहू व्रज वरषन, वारिज करै विकास।
'सूर' अंबु लौ जरत मरत नहि, करत भँवर की आस॥ ३५७५॥

राग सारंग॥ ४१६४॥

पूरनता इन नैननि पूरे।
तुम पुनि कहत सुनति हम समुझति, येही दुख अति मरत विसूरे॥
हरि अंतरजामी सब बूझति, बुद्धि विचारि सु वचन समूरे।
वै हरि रतन रूप सागर के, क्यौ पाइयै खनावत घूरे॥
रे अलि चपल मोदरस लंपट, कटु संदेस कथत कत चूरे।
कह मुनि ध्यान कहाँ व्रजवासिनि कैसै जात कुलिस कर चूरे॥
देखि विचारि प्रगट सरिता सर, सीतल सजल स्वाद रुचि रूरे।
'सूर' स्वाति की बूँद लगी जिय, चातक चित लागत सब झूरे॥३५७६॥

राग मलार ॥ ४१९५ ॥

ऊधौ अँखियाँ अति अनुरागी।
इकटक मग जोवति अरु रोवति, भूलेहुँ पलक न लागी ॥
विनु पावस पावस करि राखी, देखत हौ विदमान।
अब धौ कहा कियौ चाहत हौ, छाँड़ौ निरगुन ज्ञान ॥
तुम हौ सखा स्याम सुदर के, जानत सकल सुभाइ।
जैसैं मिलैं 'सूर' के स्वामी, सोई करहु उपाइ ॥ ३५७७ ॥

राग विहागरौ ॥ ४१९६ ॥

मधुकर सुनो लोचन बात।
रोकि राखे अग अगनि, तऊ उड़िउड़ि जात ॥
ज्यौ कपोत वियोग व्याकुल, जात है तजि धाम।
जात यौ दृग गिरि न आवत, विना दरसन स्याम ॥
मूँदि नैन कपाट पल दै, किए घूँघट ओट।
स्वातिसुत ज्यौ जात कतहूँ, निकसि मनि नग फोट ॥
स्रवन सुनि जस रहत हरि कौ, मन रहत धरि ध्यान।
रहति रसना नाम रटि रटि, कंठ करि गुनगान ॥
कछुक दियौ सुहाग इनकौ, तौ सबै ये लेत।
'सूर' स्याम विना बिलोकैं, नैन चैन न देत ॥ ३५८७ ॥

राग सारंग ॥ ४१९७ ॥

मधुकर ये नैना पै हारे।
निरखि निरखि मग कमलनैन के, प्रेम मगन भए भारे ॥
ता दिन तै नीदौ पुनि नासी, चौंकि परत अधिकारे।
सुपन तुरी जागन पुनि वेई, बसत जु, हृदय हमारे ॥
यह निरगुन लै ताहि बतावहु, जानैं याकी सारे।
'सूरदास' गोपाल छाँड़ि, को, चूसै टेंटा खारे ॥ ३५७९ ॥

राग धनाश्री ॥ ४१९८ ॥

अँखियाँ अब लागी पछितान।
जब मोहन उठि चले मधुपुरी, तब क्यौ दीन्हे जान ॥
पथ चलैं सँदेस न आनैं, धीरज धरै न प्रान।
जा दिन तै बिछुरे नँदनंदन, अँग अँग लागे बान ॥
ऊधौ अब तुम जाइ सुनावहु, आवैं सारँगपान।
'सूरदास' चातकि भई गोपी, अंतरगति की जान ॥ ३५८० ॥

राज जैतश्री ॥ ४१९९ ॥

कमलनैन कान्हर की सोभा, नैननि तै न टरै।
ऊधौ आए जोग सिखावन, को जजाल करै ॥
जब मोहन गाइनि लै आवत, ग्वालनि संग धरै।
बलदाऊ अरु संग सखा सब, कहि कैसैं बिसरै ॥
बंसीवट जमुना तट ठाढे, मुरली अधर धरै।
सुख समूह बिनोद जे कीन्हे, को इहिं ढरनि ढरै ॥
ब्रजबासी सब भए उदासी, को संताप भरै।
'सूरदास' के प्रभु बिनु ऊधौ, को तन तपति हरै ॥ ३५८१ ॥

राग सारंग ॥ ४२०० ॥

आँखिनि तैं छिनक कान्ह करि सकै न न्यारे।
कहाँ रहै नैना जो निकसि जाहिं तारे॥
निकसत नहिं अँग तैं हरि, जतननि करि हारे।
फैलि जाइ अंग जैसैं, नसनि के निकारे॥
जब तैं अलि वचन 'सूर' कूर से उचारे।
तब तैं नहिं रहत, बहत अँसुअनि के तारे॥ ३५८२ ॥

राग सारंग ॥ ४२०१ ॥

स्याम राम कौ संगी यह अलि, कीजत कहु संन्यास।
मोहन नागर नायक की मनि तजी और की आस॥
कर्मसूत्र ठाने अरु सुनियत, रसना संधि प्रकास।
भए विदा व्रज प्रेम नेम के ठोंकि हाथ गहि नास ॥
इतने भऐं नैन नहिं मानत, प्रथम परे जे पास ।
टेक न छाँड़त 'सूर' अजहुँ लौं, वीच वसीठ दुभास ॥ ३५८३ ॥

राग नट ॥ ४२०२ ॥

सुंदर स्याम के सँग आँखि
प्रथम ऊधौ आनि दै हम, सगुन डारै नाखि ॥
द्वै तीन सप्त अनंत जे स्रुति, कहै सुम्रिति भाषि।
हृदय विद्या, ज्ञान, धर्म सुलोचननि अभिलाषि॥
जहाँ, जहँ किए केलि हरि पिय, सर सु चकई पाँखि।
हारि हेरि अहेरिया हरि, रही झुकि झुकि झाँखि॥
राति ज्यौं अक्रूर दिन अलि, मदन की मधु माखि।
कमल कुमुदिनि इंदु उड़गन, मिलन 'सूरज' साखि॥ ३५८४॥

राग मलार ॥ ४२०३ ॥

कहियौ मधुप जाइ तुम हरि सौं मेरौ मन अटक्यौ नैननि लेखैं।
यहै दोष दे दै झगरत है ,निरखत मुख क्यौं लगी निमेषैं॥
ते अब सब इन पै भरि चाहत, विधि जो लिखे दरस सुख रेखै।
कै तौ मोहिं बताइ देहु अब, लगी पलक जड़ जाके पेखैं॥
ईंहिं विधि अनुदिन जुरत जतन करि, गनत गए अगुरिनि अवसेसैं।
'सूरदास' सुनि इन झगरनि तैं, नहिं चित छुटत वदन बिनु देखैं॥३५८५॥

राग सारंग ॥ ४२०४ ॥

या जुवती के गोरस कौ हरि, इक दिन बहुत अरे।
ऊधौ ने बातैं क्यौं बिसरति, छाँड़ि न हठहिं परे॥
ता दिन कौ देखौ यह अचल, ऐंचत ओप भरे।
आपु सिखाइ ग्वाल सबहिनि कौं, न्यारे रहे खरे॥
सो मूरति नैननि मैं लगि रही, अँग अँग चपल परे।
'सूर' स्याम देखैं सचु पइयै, राखि संदेस धरे॥ ३५८६॥

राग मलार ॥ ४२०५ ॥

सखी री मथुरा मैं द्वै हंस।
वे अक्रूर और ये ऊधौ, जानत नीकैं गंस॥

ये दोउ नीर गंभार पैरिया, इनहिं वधायौ कंस।
इनकै कुल ऐसी चलि आई, सदा उजागर वंस॥
अव इन कृपा करी ब्रज आए, जानि आपनो अंस।
'सूर' सुज्ञान सुनावत अवलनि, सुनत होत मति भ्रंस॥ ३५८७॥

राग सारंग॥ ४२०६॥

मनौ दोउ एकहि मते भए।
ऊधौ अरु अक्रूर वधिक मति, ब्रज आखेट ठए॥
वचन फाँस वाँदिधे मृग माधौ, उन रथ लाइ लए।
इनहीं हेरि मृगी गोपी सव, सायकज्ञान हए॥
जोग अगिनि की दवा देखियत, चहु दिसि लाइ दए।
अव धौं कहा कियौ चाहत हैं, करि उपचार नए॥
परमारथी परम कैतव चित, विरिहिनि प्रेम रए।
कैसैं जिऐं 'सूर' के प्रभु विनु, चातकु मेघ गए॥ ३५८८॥

राग सारंग॥ ४२०७॥

मनौ गढ़े दोउ एकहि साँचे।
नख सिख कमलनैन की सोभा, एक भृगु लता वाँचे॥
दारुजात के से गुन इनमैं, ऊपर अंतर स्याम।
हम जु तपति उर अधिक प्रीति के, वचन कहत निहकाम॥
ये सखि असित देह धरे जेते, ऐसेई सव जानि।
'सूर' एक तैं एक आगरे, वा मथुरा की खानि॥ ३५८९॥

राग सारंग॥ ४२०८॥

सव खोटे मधुवन के लोग।
जिनके संग स्याम सुंदर सखि, सीखे है अपजोग॥
आए है ब्रज के हित ऊधौ, जुवतिनि कौं लै जोग।
आसन, ध्यान नैन मूंदे सखि, कैसैं कढै वियोग॥
हम अहीरि इतनी का जानैं, कुविजा सौं संजोग।
'सूर' सुवैद कहा लै कीजै, कहैं न जानैं रोग॥ ३५९०॥

राग नट॥ ४२०९॥

मधुवन लोगनि को पतियाइ।
मुख औरै अंतरगति औरैं, पतियाँ लिखि पठवत जु वनाइ॥
ज्यौं कोइलसुत काग जियावै, भाव भगति भोजन जु खवाइ।
कुहुकि कुहुकि आऐ वसत रितु, अंत मिलै अपने कुल जाइ॥
ज्यौं मधुकर अंवुजरस चाख्यौ, वहुरि न वूझै वातैं आइ।
'सूर' जहाँ लगि स्याम गात हैं, तिनसौं कीजे कहा सगाइ॥ ३५९१॥

॥ ४२१०॥

तुम अलि स्यामहिं जनि पतियाहु।
वहुरोचक इन कपट कहानी, तजे किए तैं व्याहु॥
सुरपति, असुर, विप्र जीते ब्रज, कित दुख निमिष निवारी।
ते अव कहि पठवत ये वातें, जोग की हृदयविदारी॥

करनी कान्ह करी जग जानी, कुल गन आन सँभारे।
'सूर' सुदेस होत नहिं गारुड़, कुटिल विकट अहि कारे॥ ३५६२॥

राग नट॥ ४२११॥

माई मधुपनि की यह रीति।
नीरस जानि तजत छिन भीतर, नवल कुसुम रस प्रीति॥
तिनही के संगिन कौं कैसैं, चित आवत परतीति।
हमहिं छाँड़ि बिरमहि कुबिजा सँग आए न रिपु रन जीति॥
जनि पतियाहु मधुर सुनि बातैं, लागे करन समीति।
ऐसी संगति 'सूर' स्याम की, ज्यों भुस पर की भीति॥ ३५६३॥

राग मलार॥ ४२१२॥

मधुवन सब कृतज्ञ धरमीले।
अति उदार परहित डोलत है, बोलत बचन सुसीले॥
प्रथम आइ गोकुल सुफलकसुत, लै मधुरिपुहि सिधारे।
उहाँ कंस ह्याँ हम दीननि कौ, दूनौं काज सँवारे॥
हरि कौ सिखे सिखावन हमकौं, अब ऊधौ पग धारे।
ह्वाँ दासी रति की कीरति कै, इहाँ जोग बिस्तारे॥
अब तिहि बिरह समुद्र सबै हम, बूड़ी चहु तन ही।
लीला सगुन नाव ही सुनु अलि, तिहिं अवलंब रही॥
अब निरगुनहिं गहैं जुवतीजन, पारहिं कहा गई।
'सूर' अक्रूर छपद के मन मैं, नाहिंन त्रास दई॥ ३५६४॥

राग धनाश्री॥ ४२१३॥

हमकौं नीकैं समुझि परी।
जिन लगि हुती बहुत उर आसा, सोउ बात निबरी॥
वै सुफलकसुत ये सखि ऊधौ, पढ़े एक परिपाटी।
उन वैसी कीन्ही इन ऐसी, रतन छोरि दियौ माटी॥
ऊपर मृदु भीतर जु कुलिस सम, देखत के अति भोरे।
जोइ जोइ आवत वा मथुरा तैं, एक डार के तोरे॥
यह मैं पहिलैं ही कहि राखी, असित न अपने होहिं।
'सूर' काटि जौ माथौ दीजै, चलैं आपनी गौंहिं॥ ३५६५॥

राग आसावरी॥ ४२१४॥

ऊधौ ऐसे काम न कीजै।
एकहि रंग रँगे तुम दोऊ, धाइ स्वेत करि लीजै॥
फिरिफिरि दुख अवगाहि हमारे, हम सब करी अचेत।
कित तटपर गोता मारत हौ, आप भूड़ के खेत॥
आपुन कपट, कपट कुल जनम्यौ, कहा भलाई जानैं।
फोरत बाँस काटि दाँतनि सौं, बारबार ललचानैं॥
छाँडि हेत कमलिनि सौं अपनौ, तू कित अनतहि जाइ।
लंपट, ढीठ बहुत अपराधी, कैसे मन पतियाइ॥
यहै जु बात कहति हैं तुम सौं, इहिं ब्रज फिरि मति आवै।
एक बार समुझावहु 'सूरजं', अपनौ ज्ञान सिखावै॥ ३५६६॥

राग धनाश्री ॥ ४२१५ ॥

(ऊधौ) प्रेम भक्ति रहित निरस जोग कहा गायौ।
निठुर वचन श्रवलनि सौ, कहे कहा पायौ?
जिहिं नैननि कमलनैन, मोहन मुख हेर्यौ।
मूंदन ते नैन कहत, कौन ज्ञान तेरयौ॥
तामैं सुनि मधुकर, हम कहा लेन जाहीं।
जामैं प्रिय प्राननाथ, नंदनँदन नाहीं॥
जिनके तुम सखा साधु, कहौ बात तिनकी।
जीवति करि प्रेमकथा, दासी हम उनकी॥
निरगुन अविनासी मत, कहा आनि भाष्यौ।
'सूरदास' जीवनधन, कान्ह, कहाँ राख्यौ? ॥ ३५६७ ॥

राग नट ॥ ४२१६ ॥

(ऊधौ) प्रेम गएं प्रान रहै, कौन काज आवै।
जैसे ससि निसा गएं, सोभा नहिं पावै॥
विविध खग जु एक रूप, बोलत मृदु बानी।
नैन अछत चातक की, प्रीति जगत जानी॥
औरै जग जीवन कौ, नाम न कोउ जानै।
एक प्रेम लीन मीन, कीरति जग बखानै॥
अति सुवास सुमन सबै, देखत जिय भावै।
वै सु प्रेम पंकज कौ, सब तजि कित गावै॥
जिन नैननि मोहन मुख, कमलनैन हेरौ।
मूंदौ ते नैन कहत, कौन ज्ञान तेरौ॥
अविनासी निर्गुन कहा, ब्रजहि आनि भाष्यौ।
'सूरदास' जीवनधन स्याम, कहा राख्यौ॥ ३५६८ ॥

राग सारंग ॥ ४२१७ ॥

जनि चालहि अलि बात पराई।
नहिं कोउ सुनत न समुझत ब्रज मै, नई कीरति सब जाति हिराई॥
जाने समाचार सुख पाए, मिलि कुल की आरति बिसराई।
भले सग बसि भई भली मति, भले ठौर पहिचानि कराई॥
मीठी कथा कटुक सी लागति, उपजत है उपदेस खराई।
उलटी न्याउ 'सूर' के प्रभु कौ, बही जाति माँगत उतराई॥३५६६॥

राग मलार ॥ ४२१८ ॥

याकी सीख सुनै ब्रज को रे।
जाकी रहनि कहनि अनमिल अलि, कहत समुझियत थोरे।
आपुन पदमकरंद सुधारत, हृदय रहत नित बोरे।
हमसौ कहत बिरहस्रम जैहै, गगन कूप खनि खोरै॥
धान कौ गाँव पयार तैं जानौ, ज्ञान विषय रस भोरे।
'सूर' सु बहुत कहे न रहै रस, गूलर कौ फल फोरे॥ ३६०० ॥

राग धनाश्री ॥ ४२१९ ॥

उधौ जोग सिखावन आए, अब कैसै धीरज धरौं।
जोरि जोरि चित जोरि जुरान्यौ, जोरयौ जोरि न जान्यौ॥

तब धौ जोग कहाँ हो ऊधौ, जब यह जोग दृढ़ान्यौ।
उन हरि हमसौं प्रीति जु कान्हीं, जैसैं मानऽरु पानी॥
तलफि तलफि जिय निकसन लाग्यौ, पाना पीर न जानी।
निसि बासर मोहिं पलक न लागे, कोटि जतन करि हारी।
ज्यौं भुवंग तजि गयौ केंचुली, सो गति भई हमारी।
एक समय हरि अपने हाथनि, करनफूल पहिराए॥
अब कैसैं माटी के मुद्रा, मधुकर हाथ पठाए।
बेनी सुभग गुही अपने कर, चरननि जावक दीन्हौ॥
कहा कहौ वा स्याम सुंदर सौं, निपट कठिन मन कीन्हौ।
चोवा चंदन और अरगजा, जा सुख मैं हम राखी॥
अब तन कौ हम भस्म चढ़ावैं, तुम मधुकर हौ साखी।
तुम जो बसत हौ मथुरा नगरी, हम जु बसति इहि गाउँ॥
ऊधौ हरि सौं जाइ कहीजै, प्रान तजैं कै ठाउँ।
प्रीतम प्यारे प्रान हमारे, रहे अधर पर आइ॥
'सूरदास' हरि जू के आगे, कौन कहै दुख जाइ॥ ३६०१॥

॥ ४२२०॥

विरहिनि क्यौं धीरज मन धरै।
वह चितवनि, वह चलनि मनोहर, संत समाधि टरै॥
दसन बज्र दुति वदन, लाल, मृदु, ससि गन पुंज हरै।
खंजन नैंन किधौं अलि बारिज, कछू न समुझि परै॥
उज्ज्वल स्याम अरुन चंचलता, मुनि मन निरखि हरै।
'सूरदास' प्रभु देखि थकित भइ, को स्तुति सिंधु तरै॥ ३६०२॥

राग जैतश्री॥ ४२२१॥

ऊधौ जोग सिखावन आए।
सृंगी भस्म अधारी मुद्रा, दै ब्रजनाथ पठाए।
जो पै जोग लिख्यौ गोपिनि कौ, कत रस रास खिलाए।
तबही क्यौं न ज्ञान उपदेस्यौ, अधर सुधारस प्याए॥
मुरली सब्द सुनत बन गवनी, सुत, पति गृह बिसराए।
'सूरदास' सँग छाँड़ि स्याम कौ, हमहिं भए पछिताए॥ ३६०३॥

राग नट॥ ४२२२॥

आए जोग सिखावन पाँड़े।
परमारथी पुराननि लादे, ज्यौं बनजारे टाँड़े॥
हमरे गतिपति कमलनयन की, जोग सिखैं ते राँड़े।
कहौ मधुप कैसे समाहिंगे, एक म्यान दो खाँड़े॥
कहु षट्पद कैसैं खैयतु है हाथिनि कैं सग गाँड़े।
काकी भूख गई बयारि भषि बिना दूध घृत माँड़े॥
काहे कौ झाला लै मिलवत, कौन चोर तुम डाँड़े।
'सूरदास' तानौ नहिं उपजत, धनिया, धान, कुम्हाँड़े॥ ३६०४॥

राग धनाश्री॥ ४२२३॥

बहुत दिन गए ऊधौ, चरन कमल सुख नहीं।
दरस हीन दुखित दीन, छिनछिन बिपदा सही॥

रजनी अति प्रेम पीर, वन गृह मन धरै न धीर।
वासर मन जोवत उर, सरिता वही नैननीर॥
नलिनी जनु हेम घात, कंपित तन कदलि पात।
लोचन जल पावस भयौ, रही री कछु समुझि वात॥
जौ लौ रही अवधि आस, दिन गनि घट रही स्वास।
अव वियोग विरहिनि तन, तजि है कहि 'सूरदास'॥ ३६०५॥

राग धनाश्री॥ ४२२४॥ उद्धववचन

ज्ञान विना कहुँवै सुख नाहीं।
घट घट व्यापक दारु अगिनि ज्यौं, सदा वसै उर माहीं॥
निरगुन छाँडि सगुन कौ दौरति, सु धौं कहौ किंहि पाहीं।
तत्व भजौ जो निकट न छूटै, ज्यौं तनु तै परछाहीं॥
तिहि तै कहौ कौन सुख पायौ, जिहिं अव लौं अवगाहीं।
'सूरदास' ऐसै करि लागत, ज्यौं कृषि कीन्हे पाहीं॥ ३६०६॥

राग सोरठ॥ ४२२५॥

ऊधौ कही सु फेरि न कहिऐ।
जौ तुम हमैं जिवायौ चाहत, अनवोले ह्वै रहिऐ॥
प्रान हमारे घात होत है, तुम्हरे भाऐं हाँसी।
या जीवन तै मरन भलौ है, करवत लैहैं कासी॥
पूरव प्रीति सँभारि हमारी, तुमकौं कहन पठायौ।
हम तौ जरि वरि भस्म भई तुम, आनि मसान जगायौ॥
कै हरि हमकौं आनि मिलावहु, कै लै चलियै साथै।
'सूर' स्याम विनु तजति हैं, दोष तुम्हारे माथै॥ ३६०७॥

राग धनाश्री॥ ४२२६॥

मधुकर कहा सिखावन आयौ।
ए तौ नैन रूप रस राँचे, कह्यौ न करत परायौ॥
जोग जुगति हम कछू न जानैं, ना कछु ब्रह्मज्ञानौ।
नवकिसोर मोहन मृदु मूरति, तासौं मन उरझानौ॥
भली करी तुम आए ऊधौ, देखौ दसा विचारी।
दाउँ उपाउ मिलाइ 'सूर प्रभु, आरति हरौ हमारी॥ ३६०८॥

राग धनाश्री॥ ४२२७॥

मधुकर कहा कियौ अव चाहत।
हम तौ भई चित्र की पुतरी, सुन्न सरीरहिं दाहत॥
हमसौं तुमसौं वैर कहा अलि, स्याम अजान भुराहत।
झारि झूरि मत कन तौ लै गए, वहुरि पयारहिं गाहत॥
अव तौ है मारुत कौ गहिवौ, वहु स्रम करि का लैहौ।
'सूरज' जौ उन हमहिं हते तौ, अपनौ कीन्हौ पैहौ॥ ३६०९॥

राग केदारौ॥ ४२२८॥

मधुकर अव यह आइ रही।
वारिध जोग अपार अगम कौ, निगम न थाह लही॥

बुधि विवेक बोहित चढि स्रम करि, तौ सिव चेत परी।
जीवन अति सुकुमार अधीरज जुगुति न जात तरी॥
अब निरास कछु चलै न आवै लहरनि उठै समाइ।
भ्रामक भँवर भेद दिखियत है, मनसा तहाँ न जाइ॥
गुन अवलंब कहै नहिं कोऊ, निरगुन तुमहुँ सुनावहु।
प्रेम प्रतीति प्रीति जिनही मन, कित आधार छँड़ावहु॥
साधन किए लाल मन मानिक, हीरा रतन अमोल।
प्रेम वृच्छ पर चारि सदा फर, निरभय अमित अडोल॥
सुमिरन ध्यान आस छाया करि, मन मोहन प्रभु नागर।
दुस्तर तरहिं 'सूर' क्यौं अवला, चख जल सरिता सागर॥ ३६१०॥

राग केदारौ॥ ४२२९॥

ऊधौ तुम अपनौ जतन करौ।
हित की कहत कुहित की लागति, कत बेकाज ररौ॥
जाइ करौ उपचार आपनौ, हम जु कहति हैं जी की।
कछुवै कहत कछुक कहि आवत, धुनि दिखियत नहि नीकी॥
साधु होइ तिहिं उत्तर दीजै, तुमसौं मानी हारि।
यह जिय जानि नंदनँदन तुम, इहाँ पठाए टारि॥
मथुरा गहौ बेगि इन पाइनि, उपज्यौ है तन रोग।
'सूर' सु बैद बेगि टोहौ किन, भए मरन के जोग॥ ३६११॥

राग नट॥ ४२३०॥

कह्यौ तुम्हारौ लागत काहै।
कोटिन जतन कहौ जो उधौ, हम न वहकिहैं वाहैं॥
काहे कौ अपनै जिय भूलत, करि करि मन की लाहैं।
यह भ्रम तौ अवही भजि जैहै, ज्यौ पयार के गाहैं॥
कासी के लोगनि लै सिखवहु, जे समुझैं या माहैं।
'सूर' स्याम विहरत व्रज भीतर, जीजत है मुख चाहैं॥ ३६१२॥

राग सारंग॥ ४२३१॥

आपु देखि पर देखि रे मधुकर, तब औरनि सिख देहु।
बीतैगी तबहीं जानैगौ, महा कठिन है नेहु॥
मन जु तुम्हारौ हरि करननि है, तन लै गोकुल आयौ।
नंदनँदन के बिछुरे, कहि कौनैं सचु पायौ॥
गोकुल रहहु जाहु जनि मथुरा, झूठौ माया मोहु।
गोपी कहै 'सूर' सुनि ऊधौ, हमसे तुमसे होहु॥ ३६१३॥

॥ ४२३२॥

गोविंद के बिछुरे तैं ऊधौ जानी बिरह की बात।
हौं सूखी वहु भाँति गात अति, ज्यौं तरुवर के पात॥
भूल्यौ भोजन भाव सफल कृत, वचत न नैंकु सुहात।
उडुगन गिनत जाम चारौ निसि, क्रमक्रम करि जु बिहात॥
जे गुरुजन के वचन न मानत, ते ऐसेइ डहकात।
ये दुख मो पै न टरत विरहिनी, जे बीतत मो गात॥

वे दिन दसा वीति गइ लेखे, पलपल जुग सम जात।
सहज वहत लोचन जल सरिता, 'सूर' वुड़त उतरात॥ ३६१४॥

राग सारंग॥ ४२३३॥

तू अलि कहा परचौ है पैंड़े।
व्रज तू स्याम अजा भयौ हमकौ, यहऊ वचत न वैंड़े॥
यह उपदेस सँत नहिं भाए, जो चढि कहौं वरैंड़े।
राखति जतन जसोदानंदन, हृदै माँझ सव मैंडे॥
छाँड़ि राजमारग यह लीला, कैसै चलहिं कुपैंड़े।
या आदर पर अजहूँ वैठ्यौ, टरत न 'सूर' पलैंड़े॥ ३६१५॥

राग सारंग॥ ४२३४॥

घर हीं के वाढ़े रावरे।
नाहिन मीतवियोग वस परे, अनव्यौगें अलि वावरे॥
वरु मरि जाइ चरै नहि तिनुका, सिंह को यहै स्वभाव रे।
स्रवन सुधामुरली के पोषे, जोग जहर न खवाव रे॥
ऊधौ हमहिं सीख कह दैहौ, हरि विनु अनत न ठाँव रे।
'सूरदास' कहा लै कीजै, थाही नदिया नाव रे॥ २६३६॥

राग सारंग॥ ४२३५॥

तुम अलि कासौ कहत वनाइ।
विनु समुझैं हम फिरि फिरि वूझति, वारक वहुरौ गाइ॥
कहु किहिं गमन कियौ स्यंदन चढ़ि, सुफलकसुत के संग।
किहिं वधि रजक लिए नाना पट, पहिरे अपने अंग॥
किहिं हति चाप निदरि गज निज वल, किहिं मल्लनि मथि जाने।
उग्रसेन वसुदेव देवकी किहिऽव निगड़ तैं आने॥
काकी करत प्रसंसा निसि दिन, कौनैं घोष पठाए।
किहिं मातुल हति कियौ जगत जस, कौन मधुपुरी छाए॥
माथै मोर मुकुट उर गुंजा, मुख मुरली कल वाजै।
'सूरदास' जसुदानँदनंदन, गोकुल कान्ह विराजै॥ ३६१७॥

राग सारंग॥ ४२३६॥

हमकौ हरि की कथा सुनाउ।
ये आपनी ज्ञानगाथा अलि, मथुरा हीं लै जाउ॥
नागरि नारि भलैं समझैंगी, तेरौ वचन वनाउ।
पा लागौं ऐसी इन वातनि, उनही जाइ रिझाउ॥
जौ सुचि सखा स्याम सुंदर कौ, अरु जिय मैं सति भाउ।
तौ वारक आतुर इन नैननि, हरि मुख आनि दिखाउ॥
जौ कोउ कोटि करै कैसिहु विधि, वल विद्या व्यवसाउ।
तउ सुनि 'सूर' मीन कौ जल विनु, नाहिन और उपाउ॥ ३६१८॥

॥ ४२३७॥

उधौ वानी कौन ढरैंगी, तोसौ उत्तर कौन करैंगौ।
या पाती के देखत ही अव, जल सावन कौ नैन ढरैंगौ॥

विरहअगिनि तन जरत निसादिन, करहि छुवत तुव जोग जरैगौ।
नैन हमारे सजल है तारे, निरखत ही तेरौ ज्ञान गरैगौ॥
हमहिं वियोगऽरु सोग स्याम कौ, जोग रोग सौ कौन अरैगौ।
दिन दस रहौ जु गोकुल महियाँ, तव तेरौ सव ज्ञान मरैगौ॥
सिंगी सेल्ही भसमऽरु कथा, कहि अलि काके गरैं परैगौ।
जे ये लट हरि सुमननि गूँधी, सीस जटा अव कौन धरैगौ॥
जोग सगुन लै जाहु मधुपुरी, ऐसे निरगुन कौन तरैगौ।
हमहिं ध्यान पल छिन मोहन कौ, विनु दरसन कछुवै न सरैगौ॥
निसि दिन सुमिरन रहत स्याम कौ, जोग अगिनि मैं कौन जरैगौ।
कैसहु प्रेम नेम मोहन कौ, हित चित तै हमरैं न टरैगौ॥
नित उठि आवत जोग सिखावन, ऐसी बातनि कौन भरैगौ।
कथा तुम्हारी सुनत न कोऊ, ठाड़े ही अब आप ररैगौ॥
वादिहि रटत उठत अपने जिय, को तोसौ वेकाज लरैगौ।
हम अँगअंग स्याम रँग भीनी, को इन बातनि 'सूर' डरैगौ॥३६१९॥

राग भूपाली ॥ ४२३८ ॥

(ऊधौ) हरि विनु व्रज रिपु वहुरि जिए।
जे हमरे देखत नँदनंदन, हत्ति हति ते सु दूरि किए॥
निसि कौ रूप वकी वनि आवति, अति भय करति सु कंप हिए।
तापहि तैं तन प्रान हमारे, रविहूँ छिनक छँड़ाइ लिए॥
उर ऊँचे उछ्वास तृनावर्त, तिहि सुख सकल उड़ाइ दिए।
कोटिक काली सम कालिंदी परसत सलिल न जात पिए॥
वन वक रूप अघासुर सम गृह, कतहूँ तौ न चितै सकिए।
केसी कठिन करम कैसौ विनु, काकौ 'सूर' सरन तकिए॥३६२०॥

राग सोरठ ॥ ४२३९ ॥

ऊधौ तुम व्रज की दसा विचारौ।
ता पाछै यह सिद्ध आपनी, जोग कथा विस्तारौ॥
जा कारन तुम पठए माधौ, सो सोचौ जिय माही।
केतिक वीच विहर परमारथ, जानत हौ किधौं नाही॥
तुम परवीन चतुर कहियत हौ, संतत निकट रहत हौ।
जल बूडत अवलंव फेन कौ, फिरि फिरि कहा गहत हौ॥
वह मुसकान मनोहर चितवनि, कैसैं उर तैं टारौं।
जोग जुक्ति अरु मुक्ति परम निधि, वा मुरली पर वारौं॥
जिहि उर कमल नयन जु वसत है, तिहि निरगुन क्यौं आवै।
'सूरदास' सो भजन वहाऊँ, जाहि दूसरौ भावै॥३६२१॥

राग आसावरी ॥ ४२४० ॥

ऊधौ कहँ की प्रीति हमारैं। अजहु रहत तन हरि के सिधारैं॥
छिदि छिदि जात विरह सर मारैं। पुरि पुरि आवत अवधि विचारैं॥
कटत न हृदय सदेस तुम्हारैं। कुलिस तैं कठिन धुकत दोउ तारे॥

बरषत नैन महा जल धारैं। उर पषान विदरत न विदारैं॥
जीवन मरन भए दोउ भारे। कहियत 'सूर' लाज पति हारे॥
॥ ३६२२ ॥

॥ ४२४१ ॥

ऊधौ इतने मोंहि सतावत।
कारी घटा देखि बादर की, दामिनि चमकि डरावत॥
हेम-सुता-पति कौ रिपु व्यापै, दधिसुत रथ न चलावत।
अंबू खंडन सव्द सुनत ही, चित चक्रत उठि धावत॥
कंचनपुरपति कौ जो भ्राता, ता प्रिय वलहिं न आवत।
संभूसुत कौ जो वाहन है, कुहुकै असल सलावत॥
जद्यपि भूषन अंग वनावति, सो भुजंग ह्वै धावत।
'सूरदास' विरहिनि अति व्याकुल, खगपति चढ़ि किन आवत॥ ३६२३॥

राग धनाश्री ॥ ४२४२ ॥

हमकौ तुम विनु सवै सतावत।
कहियौ मधुप चतुर माधौ सौं, तुमहू सखा कहावत॥
जाकौ तन हरि हरचौ दीन सुनि, कुल सरनागत दीन्ही।
सोइ मारत करवारि धारि कर, हमकौं कानि न कीन्हीं॥
काढ़ि सिंधु तैं सिव कर सौंप्यौ, गुनहगार की नाईं।
सो ससि प्रगट प्रधान काम कौ, चहु दिसि देत दुहाई॥
अमरनाथ अपराध छमा करि, पीठि ठोंकि मुकरायौ।
सो अव इंद्र कोप जलधर लै, व्रजमंडल पर छायौ॥
पच्छ पुच्छ सिर धारि सिखनि के, इहिं विधि दई वड़ाई।
तिन अव वोलि छोलि तन डारचौ, उपल खौर की नाईं॥
वच्छ चोरि अलि स्वच्छ पच्छ करि, तिनहूँ कोप जनायौ।
परी जो रेख ललाट अधिक सुख, मेटि दुकार वनायौ॥
कौन कौन सौ विनती कीजै, कही जितक कहि आई।
'सूर' स्याम अपने या व्रज की, इहि विधि कानि घटाई॥ ३६२४॥

राग नट ॥ ४२४३ ॥

ऊधौ यह हित लागत काहैं।
निसि दिन नैन तपत दरसन कौ, तुम जु कहत हिय माहै॥
पलक न परत चहूँ दिसि चितवति, विरहानल के दाहै।
इतनी आरति काहे न मिलही, जौ पै स्याम इहाँ है॥
पा लागौ ऐसीहिं रहन दै, अवधि आस जल थाहै।
जनि वोरहि निरगुन समुद्र मै, वहुरि न पैहै चाहैं॥
जासौं उपजी प्रीति रीति अलि, तासौं वनै निवाहै।
'सूर' कहा लै करै पपीहा, एते सर सरिता है॥ ३६२५॥

राग मलार ॥ ४२४४ ॥

ह्याँ तुम कहत कौन की वातै।
अहो मधुप हम समुझति नाही फिरि वूझति हैं तातैं॥

को नृप भयौ कंस किन मार्‌यौ, को वसुद्यौ सुत आहि।
ह्याँ जसुदासुत परम मनोहर, जीजतु है मुख चाहि॥
दिन प्रति जात धेनु ब्रज चारन, गोप सखनि कै संग।
वासर गत रजनी मुख आवत, करत नैन गति पग॥
को अविनासी अगम अगोचर, को विधि वेद अपार।
'सूर' वृथा वकवाद करत कत, इहिं ब्रज नंदकुमार॥ ३६२६॥

॥ ४२४५॥

कहत अलि मोहन मथुराराजा।
नेव अक्रूर वदत वंदी तुम, गावत हौ नृपसाजा॥
सुरभी जूथ जाम स्रम चारत, अरु तकि जात अहीर।
या अभिमान आनि उर कवहूँ, नहिं जानत परपीर॥
गुन अनुरूप समान भेपता, मिले दुआदस वानी।
मधुवन देस कान्ह कुविजा सँग, वनी 'सूर' पटरानी॥ ३६२७॥

राग सारंग॥ ४२४६॥

कहा जौ, राजा जाइ भयौ।
हमकौं कहत और की औरै, पायौ भेव नयौ॥
अवलौं तौ छोटे अँग भोजन, घर घर माँगि लयौ।
कैसै सह्यौ जात हम पै यह, जोग जु पठै दयौ॥
वन वन धेनु चराइ वाल सँग, मथि मथि पियौ घयौ।
'सूरज' प्रभु अव व्रज विसरायौ, उन यह मतौ दयौ॥ ३६२८॥

राग मलार॥ ४२४७॥

ऊधौ हरि काहे के अंतरजामी।
अजहुँ न आइ मिलत इहिं अवसर, अवधि वतावत लामी॥
अपनी चोप आइ उड़ि वैठत, अलि ज्यौं रस के कामी।
तिनकौ कौन परेखौ कीजै, जे है गरुड़ के गामी॥
आई उघरि प्रीति कलई सी, जैसी खाटी आमी।
'सूर' इते पर अनखनि मरियत, ऊधौ पीवत मामी॥ ३६२९॥

राग मलार॥ ४२४८॥

मधुकर यह जानी तुम साँची।
पूरन ब्रह्म तुम्हारौ ठाकुर, आगै माया नाची॥
यह इहिं गाउँ न समुझत कोऊ, कैसौ निरगुन होत।
गोकुल ओट परे नँदनंदन, वहै तुम्हारौ पोत॥
को जसुमति ऊखल सौ वाँध्यौ, को दधि माखन चोरे।
किन ये दोऊ रूख हमारे, जमला अर्जुन तोरे॥
को लै वसन चढ्यौ तरु साखा, मुरली मन आकरषे।
को रस रास रच्यौ वृंदावन, हरपि सुमन सुर वरषे॥
जौ डाकौ तौ कत विनु वूड़े, काहै जीभि पिरावत।
तव जु 'सूर' प्रभु गए क्रूर लै, अव क्यौ नैन सिरावत॥ ३६३०॥

राग कान्हरौ ॥ ४२४९ ॥

निरगुन कौन देस कौ वासी ?
मधुकर कहि समुझाइ सौंह दै, बूझति साँच न हाँसी ॥
को है जनक, कौन है जननी, कौन नारि, को दासी ?
कैसो बरन, भेप है कैसो, किहि रस मैं अभिलापी ?
पावैगौ पुनि कियौ आपनौ, जो रे करैगौ गाँसी ।
सुनत मौन ह्वै रह्यौ बावरौ, 'सूर' सबै मति नासी ॥ ३६३१ ॥

राग कल्यान ॥ ४२५० ॥

ऊधौ हम हरि कत बिसराए !
एक द्यौस बृंदावन भीतर, कर करि पत्र डसाए ॥
सुमिरि सुमिरि गुन ग्राम स्याम के, नैंन सजल ह्वै आए ।
बिछुरे पलक किते दिन बीते, प्रीतम भए पराए ॥
बिकल पंथ जोवति हम निसि दिन, कित बिरहिनि बिरमाए ।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे मिलन बिनु, मदन के ताप सताए ॥ ३६३२ ॥

राग सारंग ॥ ४२५१ ॥

वे, हरि, बातैं क्यौं बिसरी ।
आवत राधा पंथ चरन रज, हित सौं अंक भरी ॥
भाँति भाँति किसलय कुसुमावलि, सेज्या सोभ करी ।
निमिष-'वियोग'होत तन तलफत, ज्यौं जल बिनु मछरी ॥
सुरति स्रमित स्यामा रसरंजित सोवति रंग भरी ।
आपुन कुसुम व्यजन कर लीन्हे, करत मरुत लहरी ॥
गोचारन मिस जात सघन बन, मुरली अधर धरी ।
नाद प्रनालि प्रवेस घोष मैं, रिझवत तिय सिगरी ॥
प्रकृति पुरुप तामैं ताको सँग, 'सूर' प्रगट जस री ।
ऊधौ सुनत सुनत मन बिथकित, सुफलित करनघरी ॥ ३६३३ ॥

राग धनाश्री ॥ ४२५२ ॥

ऊधौ अब चित भए कठोर ।
पूरब प्रीति बिसारी गिरिधर, नूतन राँचे और ॥
जनम जनम की दासी तुम्हरी, नागर नंदकिसोर ।
चितवन बान लगाए मधुकर, निकसि गए दुहु ओर ॥
जब हरि मधुबन कौं जु सिधारे, धीरज धरत न ठौर ।
'सूरदास' चातक भइ गोपी, कहाँ गए चित चोर ॥ ३६३४ ॥

राग बिहागरौ ॥ ४२५३ ॥

ऊधौ हमरौ कछू दोष नहिं, वै प्रभु निपट कठोर ।
हम हरि नाम जपति हैं निसिदिन, जैसे चंद चकोर ॥
हम दासी बिन मोल की ऊधौ, ज्यौं गुड़िया बिनु डोर ।
'सूरदास' प्रभु दरसन दीजै, नाही मनसा और ॥ ३६३५ ॥

राग गौरी ॥ ४२५४ ॥

मधुकर उनकी बात हम जानी ।
कोऊ हुती कंस की दासी, कृपा करी भइ रानी ॥

कुबिजा नाउ मधुपुरी बैठी, लै सुवास मनमानी।
कुटिल कुचील जन्म की टेढ़ी, सुंदरि करि घर आनी॥
अब वह नवल वधू ह्वै बैठी, ब्रज की कहति कहानी।
'सूर' स्याम अब कैसैं पैयै, जिनसौं मिली सयानी॥ ३६३६॥

राग सारंग॥ ४२५५॥

कहियौ ठकुराइति हम जानी।
अब दिन चारि चलहु गोकुल मैं, सेवहु आइ बहुरि रजधानी॥
हमकौं हौंस बहुत देखन की, संग लिए कुबिजा पटरानी।
पहुनाई ब्रज कौ दधि माखन, बड़ौ पलँग, अरु तातौ पानी॥
तुम जनि डरौ उखल तैं तोरचौ, दाँवरिहू अब भई पुरानी।
वह बल कहाँ जसोमति कै कर देह रावरैं सोच बुढ़ानी॥
सुरभी बाँटि दई ग्वालिनि कौं, मोर चंद्रिका सबै उड़ानी।
'सूर' नंद जू के पालागौं, देखहु आइ राधिका स्यानी॥ ३६३७॥

राग गौरी॥ ४२५६॥

बरु उन कुबिजा भलौ कियौ।
सुनि सुनि समाचार ये मधुकर, अधिक जुड़ात हियौ॥
जिनके तन मन प्रान रूप गुन हरचौ, सु फिरि न दियौ।
तिन अपनौ मन हरत न जान्यौ, हँसि हँसि लोग जियौ॥
'सूर' तनक चंदन चढ़ाइ उर, श्रीपति बस जु कियौ।
और सकल नागरि नारिनि कौं, दासी दाउँ लियौ॥ ३६३८॥

राग केदारौ॥ ४२५७॥

ऊधौ अब कछु कहत न आवै।
सिर पर सौति हमारैं कुबिजा, चाम के दाम चलावै॥
कछू इक मंत्र करचौ चंदन तैं, तातैं स्यामहि भावै।
अपनै ही रँग रचे साँवरे, सुक ज्यौं बैठि पढावै॥
तब जो कहत असुर की दासी, अब कुल वधू कहावै।
नटिनी लौ कर लिए लकुटिया, कपि ज्यौं नाच नचावै॥
टूटचौ नातौ या गोकुल कौ, लिखि लिखि जोग पठावै।
'सूरदास' प्रभु हमहि निदरि, दाढ़े पर लोन लगावै॥ ३६३९॥

॥ ४२५८॥

देखौ माई इहि कुबिजा हम जारी।
किरचक चंदन दै बिरमाए, हम तन करी निनारी॥
कत हम संखचूड तैं राखी, दावानलहि उबारी।
एक संदेसौ कहियौ ऊधौ, प्रान तजति ब्रजनारी॥
कत हम सिरजी चतुर विधाता, कत गढ़ि छोलि सँवारी।
'सूरदास' प्रभु जल के सुत ज्यौं, क्यौं बिरहिनि तन गारी॥ ३६४०॥

राग बिहागरौ॥ ४२५९॥

ऊधौ जानी रे मैं जानी।
राजा भये तिहारे ठाकुर, अरु कुबिजा पटरानी॥

भली भई जु सुनी नई बतियाँ, मोहन मुख की बानी।
'सूरदास' मधुबन के बासी, कबतैं भए गुरु ज्ञानी॥ ३६४१॥

॥ ४२६० ॥

ऊधौ यहै अचंभौ बाढ।
आपु कहाँ ब्रजराज मनोहर, कहाँ कूबरी राढ॥
जिहिं छिन करत कलोल संग रति, गिरिधर अपनो चाढ़।
काटत न परजंक ताहि छिन, कै धौं खोदत खाढ॥
किधौं सदा बिपरीत रचत है, गहि-गहि आसन गाढ।
'सूर' सयान भए हरि, बाँधत, माँस खाउ, गल हाड़॥ ३६४२॥

राग कान्हरौ ॥ ४२६१ ॥

सुनि-सुनि ऊधौ आवति हाँसी।
कहँ वै ब्रह्मादिक के ठाकुर, कहाँ कंस की दासी॥
इंद्रादिक की कौन चलावै, संकर करत खवासी।
निगम आदि बंदीजन जाके, सेष सीस के बासी॥
जाकैं रमा रहति चरननि तर, कौन गनै कुबिजा सी।
'सूरदास' प्रभु दृढ करि बाँधे, प्रेम पुंज की पासी॥ ३६४३॥

राग मलार ॥ ४२६२ ॥

तबतैं बहुरि दरस नहिं दीन्हौ।
ऊधौ हरि मथुरा कुबिजा गृह, वहैं नेम ब्रत लीन्हौ॥
चारि मास बरषा कै आगम, मुनिहुँ रहत इक ठौर।
दासीधाम पवित्र जानि कै, नहिं देखत उठि और॥
ब्रजबासी सब ग्वाल कहत हैं, कत ब्रज छाँड़ि गये।
'सूर' सगुनई जात मधुपुरी, निर्गुन नाम भये॥ ३६४४॥

राग जैतश्री ॥ ४२६३ ॥

कुबरी सौं न्याऊ री जासौं गोविंद बोलै।
वे त्रैलोकनाथ चाहत हैं, काहू न निठौ डोलै॥
जिनसौं कृपा करी नंदनंदन, क्यौं नहिं करनि कलोलै।
कारौ कुटिल कपट अलि कान्हर, अंतर ग्रन्थ न खोलै॥
हम बौरी बकवाद करति हैं, वृथा रागति यह जोलै।
दीपक देखि पतंग जरत ज्यौं, मीन सुजल बिनु भोलै॥
प्रीति पुरातन पारि जिनहिं सौं, नेह कसौटी तोलै।
'सूर' स्याम उपहास चल्यौ ब्रज, आप आपने टोलै॥ ३६४५॥

राग जैतश्री ॥ ४२६४ ॥

काम गँवारी सौं परच्यौ।
रूपहीन कुलहीन कूबरी, तासौं मन जु ढरच्यौ॥
उनकौ सदा सुभाउ सलिल कौ, खोरनि खार भरच्यौ।
सकुच्यौ नही जानि ऊँचौ तन, उमँगि तहँउँ पसरच्यौ॥
फेरे फिरत असुर दासी के, जनु जड़ भाँड़ धरच्यौ।
'सूरदास' गोपाल रसिक मनि, अकरन करन करच्यौ॥ ३६४६॥

राग मलार ॥ ४२६५ ॥

काहे कौ गोपीनाथ कहावत।
जौ मधुकर वै स्याम हमारे, क्यौं न इहाँ लौं आवत ॥
सपने कौ पहिचानि मानि जिय, हमहिं कलंक लगावत।
जो पै कृष्न कूवरी रीझे, सोइ किन विरद वुलावत ॥
ज्यौं गजराज काज के औरै, औरै दसन दिखावत।
ऐसैं हम कहिवे सुनिवे कौ, 'सूर' अनत विरमावत ॥ ३६४७ ॥

राग मलार ॥ ४२६६ ॥

कहियत कुविजा कृष्न निवाजी।
छुवत अटपटी चाल गई मिटि, नवसत कंचुकि साजी ॥
मिली जाइ आगै दरवाजैं, दै चंदन ठग वाजी।
पायौ सुरति सुहाय सवनि कौ, विमल प्रीति उपराजी ॥
सुफल भयौ पछिलौ तप कीन्हौ, लखि सुरूप रति भाजी।
जग के प्रभु वस किये 'सूर' सिर, सकल सुहागिनि गाजी ॥ ३६४८ ॥

॥ ४२६७ ॥

वैद मिल्यौ कुविजा कौ नीकौ।
कवहुँ छुवत न पानि पानि सौ, उपकारी नित.ी कौ ॥
चल्यौ जु चलन नगर नारिनि मैं, रोग न रह्यौ कहीं कौ।
वनी तिहारी उनकी ऊधौ, आयौ जस कौ टीकौ ॥
रँग पर रग लग्यौ रे मधुकर, मधुप भयौ जु तहीं कौ।
'सूरदास' प्रभु समुझि न देखौ, मँमनी चढ़ौ चहीं कौ ॥ ३६४९ ॥

राग विहागरौ ॥ ४२६८ ॥

वाजी ताँति राग हम वूझौ।
नृप हति छाँडि सकल व्रज वनिता, कान्ह कूवरी रीझौ ॥
आपुन जाइ मधुपुरी छाए, जोग लिखत हम सूझौ।
दासी लै पटरानी कीन्ही, कौन न्याव यह वूझौ ॥
घर घर माखन चोरत डोलत, तिनके सखा तुम ऊधौ।
'सूर' परेखौ काकौ कीजै, आप कियौ जिन दूजौ ॥ ३६५० ॥

॥ ४२६९ ॥

साँवरौ साँवरी रैनि कौ जायौ।
आधी राति कंस के त्रासनि, वसुद्यौ गोकुल ल्यायौ ॥
नंद पिता अरु मातु जसोदा, माखन नहीं खवायौ।
हाथ लकुट कामरि काँधे पर, वछरुन साथ डुलायौ ॥
कहा भयौ मधुपुरी अवतरे, गोपीनाथ कहायौ।
व्रज वधुअनि मिलि साँट कटीली, कवि ज्यौं नाच नचायौ ॥
अव लौं कहाँ रहे हो ऊधौ, लिखि लिखि जोग पठायौ।
'सूरदास' हम यहै परेखौ, कुवरी हाथ विकायौ ॥ ३६५१ ॥

राग सारंग ॥ ४२७० ॥

ऊधौ जाके माथैं भाग।
बिलपत छाँड़ि सकल गोपीजन, चेरी चपल सुहाग ॥

आए जोग की वेलि लगावन, काटि प्रेम की बाग।
कुबिजा कौ पटरानी कीन्ही, हमैं देत बैराग॥
लौंड़ी की डौड़ी जग बाजी, बढ़यौ स्याम अनुराग।
निलज भए दोऊ खेलत हैं, बारहमासी फाग॥
जोरी भली बनी है उनकी, राजहंस अरु काग।
'सूरदास' प्रभु ऊख छाँड़ि कै, चतुर चचोरत आग॥ ३६५२॥

राग गौरी॥ ४२७१॥

ऊधौ जू जाइ कहौ दूरि करै दासी।
गोकुल की नागरी सब नारि करै हाँसी॥
हेम काँच, हंस काग, खरि कपूर जैसौ।
कुबिजा अरु कमल नैन, संग बन्यौ ऐसौ॥
जाति हीन, कुल बिहीन, कुबिजा वै दोऊ।
ऐसेनि कै संग लागै, 'सूर' तैसौ सोऊ॥ ३६५३॥

राग मलार॥ ४२७२॥

ऊधौ कहा हमारी चूक।
वे गुन ये अवगुन सुनि हरि के, हृदय उठति है हूक॥
बिनहीं काज छाँडि गए मधुबन, हम घटि कहा करी।
तन, मन, धन आतमा निवेदन, सौ उन चितहि धरी॥
रीझे, जाइ सुदरी कुबिजा, इहि दुख आवति हाँसी।
जद्यपि कूर, कुरूप, कुदरमन, तद्यपि हम ब्रजवासी॥
एते ऊपर प्रान रहत घट, कहौ कौन सौं कहियै।
पूरब कर्म लिखे बिधि अच्छर, 'सूर' सबै सो सहियै॥ ३६५४॥

राग मलार॥ ४२७३॥

स्याम की यहै परेखौ आवै।
तब वह प्रीति चरन जावक सिर, अब कुबिजा मन भावै॥
तब कत पानि धरयौ गोवरधन, कत ब्रज बिपति छँड़ावै।
अब वह रूप अनूप कृपा करि, नैननि क्यौ न दिखावै॥
तब कत बेनु अधर धरि मोहन, लै लै नाम बुलावै।
अरु कत लाड़ लड़ाइ राग, रस, हँसि हँसि कंठ लगावै॥
जे मुख संग समीप रैनि-दिन ,तिन कत जोग सिखावै।
जिहि मुख अमृत पियौ रसना भरि, तिहि क्यौं बिषहि पियावै॥
कर मीड़ति पछिताति मनहि मन, क्रम क्रम करि समुझावै।
सोइ सुनि 'सूरदास' अब बिरहिनि, इहि दुख दुख अति पावै॥ ३६५५॥

राग सोरठ॥ ४२७४॥

यह अलि हमैं अंदेसौ आवै।
कौन गुनाह जोग लिखि पठयौ, सो तू कहि समुझावै॥
जे अँग रचे बसन आभूषन, कैसे भस्म चढ़ावै।
कबरी केस सुमन गहि राखे, सो क्यौं जटा बनावै॥
सब बिपरीत कहत तू हमसौं, सो कैसै चित आवै।
सुंदर स्याम कमल दल लोचन, 'सूरदास' मोहिं भावै॥ ३६५६॥

राग सारंग ॥ ४२७५ ॥

यह संदेश कहत हौ ऊधौ, कहौ कौन पै पाए।
करियत है अनुमान एक मन, इहिं मिस हौ ह्याँ आए॥
हरि जू प्रथम नंदजसुमति गृह, नाना लाड़ लड़ाए।
उर उच्छंग कन्हैया लै लै, माखन खान सिखाए॥
सुवल श्रीदामा के सँग सब, व्रज वीथिनि वीथिनि धाए।
कछु इक जान भए खेलन तब, गोधन संग पठाए॥
वेनु मधुर धुनि बोलत थेइ थेइ, सर्वहि नाच नचाए।
जल थल नित नूतन लीला करि, केते जुग विरमाए॥
इहि विधि विविध कुतूहल, छन छन किए आपने भाए।
कव मधुवन चले कव मार्यौ रिपु, वचन अचंभ जनाए॥
पाछे रहे सुनत मोहन प्रिय, उझकि उरस्थल लाए।
'सूरदास' प्रभु बूझत बतियाँ, सखियनि सैन बताए॥ ३६५७ ॥

राग सोरठ ॥ ४२७६ ॥

मेरै जिय यहै परेखौ आवै।
सरवस लूटि हमारौ लीन्हौ, राज कूबरी पावै॥
तापै एक सुनौ री अजगुत, लिखि लिखि जोग पठावै।
'सूर' कुटिल कुबिजा के हित कौ, निर्गुन वेद सुनावै॥ ३६५८ ॥

राग मलार ॥ ४२७७ ॥

ऊधौ आवै यहै परेखौ।
जब बारे तब आस बडे की, बड़े भएँ यह देखौ॥
जोग, यज्ञ, तप, नेम, दान, व्रत, यहै करन तब जात।
क्यौ हूँ बालक बढ़ै कुसल सौं, कठिन मोह की बात॥
करी जु प्रगट कपट पिक कीरति, आपु काज लगि तीर।
काज सरै उड़ि मिले आपु कुल, कहा वयस की पीर॥
जहँ जहँ रहौ राज करौ तहँ तहँ, लेहु कोटि सिर भार।
यहै असीस 'सूर' प्रभु सौं कहि, न्हात खसै जनि बार॥ ३६५९ ॥

राग मलार ॥ ४२७८ ॥

हरि व्रज कवहि कह्यौ है आवन।
वेगि सु वचन सुनाइ मधुप मोहि, विरह विथा विसरावन॥
हौ यह बात कहा जानौ पिय जात, मधुपुरी छावन।
पछिली चूक समुझि उर अंतर, अब लागी पछितावन॥
सब निसि 'सूर' सेज भई बैरिनि, ससि सीरौ तन तावन।
कब वै अंचल उर कर गहिहै, दुसह वियोग नसावन॥ ३६६० ॥

राग मलार ॥ ४२७९ ॥

कमल नैन की अवधि सिरानी, अजहूँ भयौ न आवन।
निसि वासर हौ सगुन मनावति, मिलहु कृपा करि भावन॥
सबै स्वदेस विदेसी आए, वृच्छ पखेरू छावन।
मानौ विरह विवाहन आयौ, क्रीड़ा मंगल गावन॥

ता महँ मोर घटा घन गरजहि, संग मिलै तिहि सावन।
भरि भादौं वै छाइ घोषपति, नारिनि दुख बिसरावन।।
बिनु देखे कल परै न इक छिन, वह मूरति चित चावन।
'सूरदास' प्रभु ठानी ऐसी, बैरी कंस ज्यौं रावन।। ३६६१।।

राग सारंग।। ४२८०।।

तुम्हारी प्रीति, किधौं तरवारि।
दृष्टि धार धरि हती जु पहिलैं, घायल सब ब्रजनारि।।
गिरी सुमार खेत बृंदावन, रन मानी नहिं हारि।
बिह्वल बिकल सँभारति छिनु छिनु, बदन सुधा निधि वारि।।
अब यह, कृपा जोग लिखि पठयौ, मनसिज करी गुहारि।
कछु इक सेष बच्यौ 'सूरज' प्रभु, सोउ जनि डारहु मारि।। ३६६२।।

राग नट।। ४२८१।।

ऊधौ तुम ब्रज मैं पैंठ करी।
लै आए हौ नफा जानि कै, सबै वस्तु अकरी।।
हम अहीर माखन मथि बेचैं, सगुन टेक पकरी।
यह निर्गुन निरमोल गाठरी, अब किन करत घरी।।
यह व्यौपार उहाँ जु समातौ, हुतीं बड़ी नगरी।
'सूरदास' गाहक नहिं कोऊ, देखियत गरे परी।। ३६६३।।

राग धनाश्री।। ४२८२।।

जोग ठगौरी ब्रज न बिकैहै।
मूरी के पातनि के बदलैं, को मुक्ताहल दैहै।।
यह व्यौपार तुम्हारौ ऊधौ, ऐसैं ही धरयौ रैहै।
जिन पै तै लै आए ऊधौ, तिनहि के पेट समैहै।।
दाख छाँड़ि कै कटुक निबौरी, को अपने मुख खैहै।
गुन करि मोही 'सूर' साँवरै, को निरगुन निरबैहै।। ३६६४।।

राग सारंग।। ४२८३।।

मीठी बातनि मैं कहा लीजै।
जो पै वै हरि होंहि हमारे, करन कहैं सोइ कीजै।।
जिन मोहन अपनैं कर काननि, करनफूल पहिराए।
तिन मोहन माटी के मुद्रा, मधुकर हाथ पठाए।।
एक दिवस बेनी बृंदावन, रचि पचि बिबिध बनाइ।
ते अब कहत जटा माथे पर, बदलौ नाम कन्हाइ।।
लाइ सुगंध बनाइ अभूषन, अरु कीन्ही अरधंग।
सो वै अब कहि कहि पठवत हैं भसम चढावन अंग।।
हम कहा करैं दूरि नँदनंदन, तुम जु मधुप मधुपाती।
'सूर' न होंहि स्याम के मुख की, जाहु न जारहु छाती।। ३६६५।।

।। ४२८४।।

ऊधौ कहत न कछू बनै।
अधरामृत आस्वादिनि रसना, कैसैं जोग सनै।।

जिहिं लोचन अवलोके नख सिख, सुंदर नंदतनै।
ते लोचन क्यौं जाहिं और पथ, लै पठये अपनै॥
रागिनि राग तरंग जानि चित, जे स्रुति मुरलि सुनै।
ते स्रुति जोग सँदेस सुनत कित, काँकर मेलि हनै॥
'सूरजदास' स्याम मोहन के, गुन गन भेद गुनै।
कनकलता तैं उपज न मुकता, पटपद रंग चुनै॥ ३६६६॥

राग सारंग॥ ४२८५॥

ऊधौ भूलि भले भटके।
कहत कही कछु बात लड़ैतै, तुम ताही अटके॥
देख्यौ सकल सयान तिहारौ, लीन्हे छरि फटके।
तुमहिं दियौ वहराइ इतहिं कौं, वै कुबिजा अटके॥
लीजौ जोग सँभारि आपनौ, जाहु तहीं टटके।
'सूर' स्याम तजि कोउ न लैहै, या जोगहिं कटुके॥ ३६६७॥

राग नट॥ ४२८६॥

ऊधौ तुम ही निकट के वासी।
यह निरगुन लै तिनहिं सुनावहु, जे मुड़िया वसैं कासी॥
मुरलीधरन सकल अंग सुंदर, रूपसिंधु की रासी।
जोग बटोरे लिए फिरत हौ, ब्रजवासिन की फाँसी॥
राजकुमार भलै हम जाने, घर मैं कंस की दासी।
'सूरदास' जदुकुलहिं लजावत, ब्रज मैं होति है हाँसी॥ ३६६८॥

राग सारंग॥ ४२८७॥

ऊधौ तुम जु निकट के वासी।
यह परमारथ बूझि कहाँ किन, नाम बड़ौ की कासी॥
जोग न ज्ञान ध्यान अवराधन, साधन मुक्ति उदासी।
आन प्रकार कहा रुचि मानहिं, जे गोपाल उपासी॥
परमारथी जहाँ लौ जेते, बिरहिनि के दुखदाई।
'सूरदास' प्रभु रँगी प्रेम रँग, जारहिं जोग सगाई॥ ३६६९॥

राग मलार॥ ४२८८॥

मधुप बिराने लोग बटाऊ।
दिन दस रहे आपने स्वारथ, तजि फिरि मिले न काऊ॥
प्रथम सिद्धि हमकौं हरि पठई, आयौ जोग अगाऊ।
हमकौं जोग, भोग कुबिजा कौं, उहिं कुल यहै सुभाऊ॥
जान्यौ प्रेम नंदनंदन कौ, कीजै कौन उपाऊ।
'सूर' स्याम कौं सरबस दीन्हौ, प्रान रहौ कै जाऊ॥ ३६७०॥

राग सारंग॥ ४२९८॥

बटाऊ होहिं न काके मीत।
संग रहत सिर मेलि ठगौरी, हरत अचानक चीत॥
मोहे नैन रूप दरसन के, स्रवन मुरलिका गीत।
देखत ही हरि लै जु सिधारे, बाँधि पिछौरी पीत॥

याहि तैं भृकुति, यहै मग चितवति, सुख जु भए विपरीत।
'सूरदास' वरु भली पिंगला, आसा तजि परतीत ॥ ३६७१ ॥

राग सोरट ॥ ४२९० ॥

ऊधौ प्रीति नई नित मीठी।
आपुन जाइ मधुपुरी छाए, हमकौं जोग वसीठी ॥
काटे ऊपर लौन लगावत, लिखि लिखि पठवत चीठी।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस विनु, जरि वरि भई अँगीठी ॥ ३६७२ ॥

राग मलार ॥ ४२९१ ॥

दिन दिन प्रीति देखियत थोरी।
सुनहु मधुप मधुवन वसि, मधुरिपु कुल मरजादा छोरी ॥
गोकुल कौ मनि त्रिभुवन नायक, दासी सौं रति जोरी।
तापर लिखि लिखि जोग पठावत, विसरी माखन चोरी ॥
काकौ मान परेखौ कीजै, वँधी प्रेम की डोरी।
'सूरदास' विरहिनी विरह जरि, भई साँवरी गोरी ॥ ३६७३ ॥

राग आसावरी ॥ ४२९२ ॥

जा दिन तैं गोपाल चले।
ता दिन तैं ऊधौ या व्रज के, सब स्वभाव वदले ॥
घटे अहार विहार हरप हित, सुख सोभा गुन गान।
ओज तेज सब रहित सकल विधि, आरति असम समान ॥
वाढी निसा, वलय आभूपन, उर कंचुकी उसास।
नैननि जल अंजन अंचल प्रति, आवन अवधि की आस ॥
अव यह दसा प्रगट या तन की, कहियौ जाइ सुनाइ।
'सूरदास' प्रभु सो कीजौ जिहि, वेगि मिलहि अव आइ ॥ ३६७४ ॥

राग सारंग ॥ ४२९३ ॥

सुनि रे मधुकर चतुर सयाने।
सुख की साँज उठी ता दिन तैं, पठए स्याम विनाने ॥
नैननि तेज गयौ ता दिन तैं, सावन ज्यौं वरपाने।
उर तैं हास विलास दोऊ मिलि, ये दुरि कहूँ लुकाने ॥
ता दिन तैं पछी भए वैरी, भाषा वैर वुलाने।
वन के वास निवास सकल ये, भए भयानक थाने ॥
मोहन प्रान हरे ता दिन तैं, फेरि न यह गति आने।
विरह अनंग अनल तन दाहत, को या परिहिं जाने ॥
अव ये अंक देखियत ऐसे, रहे जु चित्र लिखाने।
'सूर' सजीवन होहिं सु नव तन, रूप माधुरी साने ॥ ३६७५ ॥

राग गौरी ॥ ४२९४ ॥

हमारी पीर न हरि विनु जाइ।
जौ सोऊँ तौ मोहि हरि मिले, जागे तैं अति दाइ ॥
कमलनैन मधुपुरी सिधारे, हमहि न संग लगाइ।
अव यह विथा कौन विधि भरियै, कोऊ देइ वताइ ॥

उन्मद जोवन आनि ठाठि कै, कैसै रोकी जाइ।
'सूरदास' स्वामी के मिलिवै, तन की तपनि वुभाइ॥ ३६७६॥

॥ ४२६५॥

हमारी नाँहि जानत पीर।
हास विलास प्रेम रस रहि गयौ, वा जमुना के तीर॥
जा दिन तै ऊधौ हरि विछुरे, प्रान धरत नही धीर।
हमरी विथा जाइ तुम कहियौ, सूखी सकल सरीर॥
जो पाती तुम आनि दई है, देखि चल्यौ दृग नीर।
'सूरदास' प्रभु आनि मिलावहु, प्रान रहै वलवीर॥ ३६७७॥

राग मलार॥ ४२६६॥

गोपालहि वारे हीं की टेव।
जानति नही कहाँ तै सीखे, चोरी के छल छेव॥
तव कछु दूध दह्यौ लै खाते, करि रहती हम कानि।
कैसै सही परति अव हम पै, मन मानिक की हानि॥
ऊधौ नँदनदन सो, कहियौ, राजनीति समुझाइ।
राजहु भये तजत नहि लोभहि, जोग नही जदुराइ॥
वुधि विवेक अरु वचन चातुरी, पहिलै लई चुराइ।
'सूरदास' प्रभु के गुन ऐसे, कासौ कहिऐ जाइ॥ ३६७८॥

राग सारंग॥ ४२६७॥

विसरसति क्यौ गिरिधर की वातै।
अवधि आस लगि रह्यौ, मधुप, मन, तजि न गयौ घट तातै॥
हरि कै विरह छीन भइ ऊधौ, दोउ दुख परे सघातै।
तन रिपु काम, चित्त रिपु लीला, ज्ञान गम्य नहि तातै॥
स्रवन सुन्यौ चाहत गुन हरि कौ, जा है कथा पुरा तै।
लोचन रूप ध्यान धरचौ निसि दिन, कहौ घटै को कातै॥
ज्यौ नृप प्रान गए सुत अपनै, राँचि रह्यौ जो जातै।
'सूर' सुमति तौ ही पै उपजै, हरि आवै मथुरा तै॥ ३६७९॥

राज विलावल॥ ४२६८॥

ऊधौ कहौ हमैं क्यौ विसरै, श्री गुपाल सुखदाई।
सुंदर वदन नैन देखे विनु, निसि दिन कछु न सुहाई॥
अति सुरूप सोभा की सीवा, अखिल लोक चतुराई।
मृदु मुसकान रोम आनंदत, कह लौ करै वडाई॥
जिन हम काज धरचौ कर गिरिवर, वहुत विपति विसराई।
सोइ इहि देह हमारै मन वसि, 'सूरदास' वलि जाई॥ ३६८०॥

राग मलार॥ ४२६९॥

ऊधौ कुलिस भई यह छाती।
मेरौ मन रसिक लग्यौ नदलालहि झखत रहत दिन राती॥
तजि व्रज लोग पिता अरु जननी, कठ लाइ गए काँती।
ऐसे निठुर भए हरि हमकौ, कवहु न पठई पाती॥

पिय पिय कहत रहै जिय मेरौ, ह्वै चातक की जाती।
'सूरदास' प्रभु प्रानहिं राखौ, ह्वै करि बूँद सिवाती ॥ ३६८१ ॥

राग गौरी ॥ ४३०० ॥

हम तौ कान्ह केलि की भूखी।
कहा करैं लै निर्गुन तुम्हरौ, बिरहिनि बिरह विदूषी ॥
कहियै कहा यहै नहिं जानत, कहौ जोग किहि जोग।
पालागौं तुमहीं सेवा पुर, वसत वावरे लोग ॥
चंदन, अभरन, चीर चारु वर, नेकु आपु तन कीजै ॥
दंड, कमंडल, भसम अधारी, तव जुवतिनि कौं दीजै ॥
'सूर' देखि दृढ़ता गोपिन की, ऊधौ दृढ व्रत पायौ।
करी कृपा जदुनाथ मधुप कौं, प्रेमहिं पढ़न पठायौ ॥ ३६८२ ॥

राग गौरी ॥ ४३०१ ॥

तुमहिं मधुप गोपाल दुहाई।
कवहुँक स्याम करत ह्याँ कौ मन, किधौं प्रीति विसराई ॥
सोई बात कहौ किन साँची, छाँड़ौ दुसह दुराई।
कहि कव हरि आवेंगे ऊधौ, करैं केलि सुखदाई ॥
हम अवला अज्ञान, अल्प मति, वरजत प्रीति लगाई।
करहु कृपा जन 'सूर' आपने, वारक दरस दिखाई ॥ ३६८३ ॥

॥ ४३०२ ॥

(ऊधौ) कवहुँ सुरति करैं कान्ह तुम्हारे।
हरिमुख कमल नैन ये मधुकर विलसत रहत हमारे ॥
तव वह कृपा केलि वृंदावन, निमिप न होत निनारे।
सो चरनारविंद विनु देखैं, द्यौस अनेक सिधारे ॥
तुम सँदेस लै आए ऐसौ, वचन वान कर मारे।
'सूरदास' प्रभु तन दावानल, रहे हते, फिरि धारे ॥ ३६८४ ॥

राग विहागरौ ॥ ४३०३ ॥ उद्धववचन

गोपी सुनहु हरि सदेस
कह्यौ पूरन ब्रह्म ध्यावहु, त्रिगुन मिथ्या भेप ॥
मैं कहौ सो सत्य मानहु, सगुन डारहु नाखि।
पच त्रय गुन सकल देही, जगत ऐसौ भापि ॥
ज्ञान विनु नरमुक्ति नाही, यह विपय संसार।
रूप रेख, न नाम जल थल, वरन अवरन सार ॥
मातु पितु कोउ नाहिं नारी, जगत मिथ्या लाइ।
'सूर' सुख दुख नही जाकैं, भजौ ताकौ जाइ ॥ ३६९५ ॥

राग सारंग ॥ ४३०४ ॥ गोपीवचन

कमलनैन की कानि करति है, आवत वचन न सूधौ ॥
वातनि ही उडि जाहिं और ज्यौं, त्यौं नाही हम काँची।
मन, वच, कर्म सोधि एकै मत, नंदनँदन रँगराँची ॥
सो कछु जतन करौ पालागौं, मिटै हियै की सूल।
मुरलीधरहि आनि दिखरावहु, ओढ़े पीत दुकूल ॥

इनही बातनि भए स्याम तनु, मिलवत हौ गढ छोलि।
'सूर' वचन सुनि रह्यौ ठगौसौ, बहुरि न आयौ बोलि ॥ ३६८६ ॥

राग धनाश्री ॥ ४३०५ ॥

मधुकर समुझि कहौ किन बात।
पर मद पियें मत्त न हूजियत, काहे कौ इतरात ॥
बीच जो परै सत्य सो भाषै, बोलै सत्य स्वरूप।
मुख देखे कौ न्याउ न कीजै, कहा रंक कह भूप ॥
कछुवै कहत कछू मुख निकसत, पर निंदक व्यभिचारी।
ब्रज बनितनि कौं जोग सिखावत, कीरति आनि पसारी ॥
हम जानैं जु भँवर रस भोगी, जोग जुगुति कहँ पाई।
परम गुरू सिर मूँड़ि बापुरे, कर मुख छार लगाई ॥
यहै अनीति विधाता कीन्ही, तौ वै पूछत नाही।
जौ कोउ पर हित कूप खनावै, परै सु कूपहि माही ॥
तब अक्रूर अबै हौ ऊधौ, दुहुँ मिलि छाती जारी।
'सूर' सोइ प्रभु अंतरजामी, कासौ कहैं पुकारी ॥ ३६८७ ॥

राग सोरठ ॥ ४३०६ ॥

फिरि फिरि कहा बनावत बात।
प्रात काल उठि खेलत ऊधौ घर घर माखन खात ॥
जिनकी बात कहत तुम हमसौ, सो है हमसौ दूरि।
ह्याँ है निकट जसोदानंदन, प्रान सजीवन मूरि ॥
बालक संग लिऐं दधि चोरत, खात खवावत डोलत।
'सूर' सीस नीचौ कत नावत, अब काहे नहि बोलत ॥ ३६८८ ॥

॥ ४३०७ ॥

तुम्ह कहि आवत ऊधौ बात!
या ब्रज मैं कोउ जानत नाहीं, जोग कथा उतपात ॥
हम तौ जोग जुगुति जिय सीखी, स्यौ सिंगार अरविंद।
तातैं जीवन मुक्त भई हम, भेंटति है गोविंद ॥
जोगी जरै मरै उठि सीसी, निरगुन क्यौ ठहरात।
तातैं सगुन सुरूप सिंधु तजि, दृग भरमन नहि जात ॥
निरगुन सगुन 'सूर' प्रभु आगैं, जाइ मधुपुरी भाषि।
जोई भली सोइ ब्रज पैहौ, तुम्हैं हमारी साखि ॥ ३६९८ ॥

राग सारग ॥ ४३०८ ॥

फिरि फिरि कहा सिखावत मौन।
वचन दुसह लागत अलि तेरे, ज्यौ पजरे पर लौन ॥
सृंगी, मुद्रा, भस्म, त्वचामृग, अरु अवराधन पौन।
हम अबला अहीरि सठ मधुकर, धरि जानहिं कहि कौन ॥
यह मत जाइ तिनहि तुम सिखवहु, जिनहिं आजु सब सोहत।
'सूरदास' कहुँ सुनी न देखी, पोत सूतरी जोहत ॥ ३६९० ॥

राग केदारौ ॥ ४३०९ ॥

रहि रहि देख्यौ तेरौ ज्ञान।
सुफलकसुत सरवस्व लै गयौ, तू करत अब न्यान ॥
वृथा कत अपलोक लावत, कहत यह सदेस।
डरपि कातर होहु जनि कहुँ, कहत वैन वलेस ॥
जोग मत अति बिसद कीरति, होहि वाछित काम।
सदा तनमयता भरे है, वे पुरुष तुम धाम ॥
चरन कज सुवास लै लै, जियति ऐसी रीति।
कहत तिनसा धूम घूटन, नाहि चालन प्रीति ॥
अजहुँ नाहिन कहि सिरानी, यह कथा को छेउ।
'सूर' धोखा तनक हो हम, देखि लीन्हौ तेउ ॥ ३६६१ ॥

राग धनाश्री ॥ ४३१० ॥

ऊधौ हमहि न जोग सिखैयै।
जिहि उपदेस मिलै हरि हमकौ, सो व्रत नेम बतैयै ॥
मुक्ति रहौ घर वैठि आपने, निर्गुन सुनि दुख पैयै।
जिहि सिर केस कुसुम भरि गूँदे, कैसें भस्म चढैयै ॥
जानि जानि सब मगन भई है, आपुन आपु लखैयै।
'सूरदास' प्रभु सुनहु नवौ निधि, बहुरि कि इहि ब्रज अइयै ॥ ३६६२ ॥

राग मलार ॥ ४३११ ॥

हम तौ तबहि तै जोग लियौ।
जबही तै मधुकर मधुवन कौ, मोहन गौन कियौ ॥
रहित सनेह सिरोरुह सब तन, श्री खंड भसम चढाए।
पहिरि मेखला चीर पुरातन, फिरि फिरि फेरि सियाए ॥
श्रुनि नाटक मेलि मुद्रावलि, अवधि अधार अधारी।
दरसन भिच्छा माँगत डोलति, लोचन पात्र पसारी ॥
बाँधे वेनु कठ सिगी, पिय, सुमिरि सुमिरि गुन गावत।
करतल बेत दंड डर डरत न, सुनत स्रान दुख धावत ॥
रहत जु चित्त उदास फिरति, बन बीथिनि दिन अरु राति।
बारक आवत कुटुब जातरा, सोऊ अब न सुहाति ॥
भोग भुगति भूलै नहि भावत, भरी बिरह बैराग।
गोरख सब्द पुकारत आरत, रस रसना अनुराग ॥
भोगी को देखत इहि ब्रज मै, जोग देन जिहि आए।
जानी सिद्धि तुम्हारे सिध की, जिन तुम इहाँ पठाए ॥
परम गुरू रतिनाथ हाथ सिर, दियौ मत्र उपदेस।
चतुर चेटकी मथुरानाथ सौ, जाइ करौ आदेस ॥
'सूर' सुमति प्रभु तुमहि लखायौ, सोई हमरै ध्यान।
अलि चलि औरै ठौर दिखावहु, अपनौ फोकट ज्ञान ॥ ३६६३ ॥

राग मलार ॥ ४३१२ ॥

ऊधौ करि रहीं हम जोग।
कहा एतौ वाद ठान्यौ, देखि गोपी भोग ॥

सीस सेलीकेस, मुद्रा, कानवीरी बीर।
विरह भस्म चढाइ बैठी, सहज कथा चीर।।
हृदय सिंगी टेर मुरली, नैन खप्पर हाथ।
चाहती हरि दरस भिच्छा, देहि दीनानाथ।।
जोग की गति जुगति हम पै, 'सूर' देखौ जोइ।
कहत हम सौं करन जोग, सु जोग कैसौ होइ।। ३६६४।।

राग मलार।। ४३१३।।

ब्रज मैं जोग करत जुग बीते।
बिना स्याम सुंदर के सजनी, मदन दूत तन जीते।।
ज्यौं ज्यौं निठुर वचन सुनियत है, जरत हमारे पीते।
अब किन सुरति करै गोकुल की, क्यौं त्यागीं हम जी तैं।।
सरवस दयौ स्याम कैं कारन, हम अपनैं तब हीं तैं।
'सूरजदास' हमारे लोचन, भए कान्ह बिनु रीते।। ३६६५।।

राग मलार।। ४३१४।।

उधौ जोग तबहिं तैं जान्यौं।
जा दिन तैं सुफलक सुत कै सँग, रथ ब्रजनाथ पलान्यौं।।
ता दिन तैं सब छोह मोह गयौ, सुतपति हेत भुलान्यौं।
तजि माया संसार सबनि कौ, ब्रज जुवतिन ब्रत ठान्यौं।।
नैन मूँदि, मुख मौन रहीं धरि, तन तप तेज सुखान्यौं।
नदनँदन मुरली मुख धारै, वहै ध्यान उर आन्यौ।।
सोइ रूप जोगी जिहिं भूले, जो तुम जोग बखान्यौ।।
ब्रह्मा हू पचि मुए ध्यान करि, अजहु नहि पहिचान्यौ।।
कहौ सु जोग कहा लै कीजै, निरगुन जो नहि जान्यौ।
'सूर' वहै निज रूप स्याम कौ, है मन माहँ समान्यौ।। ३६६६।।

राग सारंग।। ४३१५।।

ए अलि कहा जोग मैं नीकौ।
तजि रस रीति नंदनंदन की, सिखवत निरगुर फीकौ।।
देखत सुनत नाहिं कछु स्रवननि, जोति जोति करि धावत।
सुंदर स्याम कृपालु दयानिधि, कैसै हौं बिसरावत।।
सुनि रसाल मुरली की सुर धुनि, सुर मुनि कौतुक भूले।
अपनी भुजा ग्रीव पर मेली, गोपिन के मन फूले।
लोक कानि कुल के भ्रम छाँड़े, प्रभु सँग घर बन खेली।
अब तुम 'सूर' खवावन आए, जोग जहर की बेली।। ३६९७।।

।। ४३१६।।

ऊधौ किहिं विधि कीजै जोग।
जे रस रसी स्यामसुंदर के, ते क्यौं सहैं वियोग।।
पूछहु जाइ चकोर चंद हित, दरसन जौ सुख पावत।
चातक स्वाति बूँद चित बाँध्यौ, जलनिधि मनहिं न आवत।।

अरु रस कमल सिलीमुख जानत, कंटक सूल सहै जो।
जानै रसिक मैन विछुरन दुख, मरतहुँ प्रीति लहै जो ।।
तुमहूँ रसिक कहावत मधुकर, आपु स्वारथी जैसौ।
कहा करै ये 'सूर' प्रेम वस, विनु हित जीवन कैसौ ।। ३६९८ ।।

।। ४३१७ ।।

ऊधौ तुम क्यौ नहिं जोग करौ।
ऐसी सिद्धि छाँड़ि कित डोलत, औरनि सीख धरौ ।।
हरि कौ रूप सु रूप अनूपम, यही हमारै ध्यान।
निसि वासर नहिं टरत हृदय तैं, व्रज के जीवनप्रान ।।
कहा भयौ जौ निकट वसत हौ, हरि के सखा कहावत।
तन तजि 'सूर' ज्ञान उर रोहत, यह नीरस किहिं भावत ।। ३६९९ ।।

राग गौरी ।। ४३१८ ।।

ऊधौ जोग जोग कहत, कहा जोग कीऐं।
स्याम सुदर कमलनैन, वसौ मेरे जीऐ ।।
जोग जुगुति साधन तप, जोगि जुग सिरायौ।
ताकौ फल सगुन मूर्ति, प्रगट दरस पायौ ।।
मकराकृत कुंडल छवि, राजति सु कपोलै।
मोर मुकुट पीत वसन, बाँसुरि कर वोलै ।।
ऐसे प्रभु गुननिधान, दरस देखि जीजै।
राम स्याम निधिपियूप, नैननि भरि पीजै ।।
जाकौ अयन जल मैं, तिहि अनल कैसे भावै।
'सूरज' प्रभु गुननिधान, निरगुन क्यौं गावै ।। ३७०० ।।

।। ४३१९ ।।

ऊधौ हम कह जानै जोग।
नंदनँदन कारन जिन छाँड्यौ, कुल लज्जा अरु लोग ।।
को आसन सम बैठे ऊधौ, प्रान वायु कौ साधै।
को धरि ध्यान धारना मधुकर, निरगुन पथ अराधै ।।
काकै जिय मैं नेम तपस्या, काकै मन सतोप।
काकै सव आचार फलौ वरु, को चाहत है मोष ।।
निसि दिन कछु चित्त चेत न जानौ, नदनँदन की आस।
को खनि कूप मरै वालू थल छाँड़ि, 'सूर' सरि पास ।। ३७०१ ।।

राग मलार ।। ४३२० ।।

मधुकर स्याम हमारे ईस।
तिनकौ ध्यान धरै निसि वासर, औरहिं नवै न सीस ।।
जोगिनि जाइ जोग उपदेसहु, जिनके मन दस वीस।
एकै चित एकै वह मूरति, तिन चितवति दिन तीस ।।
काहे निरगुन ग्यान आपनौ, जित कित डारत खीस।
'सूरदास' प्रभु नंदनँदन विनु, हमरे को जगदीस ।। ३७०२ ।।

राग सोरठ ॥ ४३२१ ॥

जोग की गति सुनत मेरैं, अंग लागि वई।
सुलगि तन हम जरति हीं, तुम आनि फूंकि दई॥
भोग कुबिजा कूबरी कौं, कौन बुद्धि भई।
सिंह भख तजि चरत तिनुका, सुनी बात नई॥
ध्यान धरति न टरति मूरति, त्रिविधि ताप तई।
'सूर' हरि की कृपा जापर, सकल सिद्धि मई॥ ३७०३॥

राग धनाश्री ॥ ४३२२ ॥

जोग ज्ञान की बातैं ऊधौ, तुमही पै वनि आई।
स्रोता कंठ कुसुम की माला, वक्ता लइ ठकुराई॥
वै ज्ञानी गुरु सब जग जानत, जिन दासी रति पाई।
कनक रतन रथ ऊपर चढ़ि कै, संग चले ब्रज धाई॥
तुम तौ परम साधु उपदेसक, कथनी कथत बनाई।
हम हरिनी नैनी की संगति, ज्ञान पथ मै गाई॥
याकौ मरम न जानत कछुवै, कहि सुदरि समुझाई।
'सूरदास' प्रभु सौं कहियौ जब, वैठै सभा जुराई॥ ३७०४॥

राग सारंग ॥ ४३२३ ॥

जोग जुगुति जद्यपि हम लीनी, लीला काकौ दैहौ।
उलटि जाहु मथुरा मधुकर तुम, वूझि वेगि ब्रज ऐहौ॥
रास समय कालिंदी के तट, तव तुव वचन न माने।
यह को सुनै कुपथ की वतियाँ, प्रभुहि पराए जाने॥
नगर वसत गुन ज्ञान बढ़त, पै मूलहु विसरयौ ज्ञान।
चारि बाहु पद भए मधुपुरी, खरे सुहाए कान॥
आपुन फेरि कियौ दिखियत है, तुम भूलौ हम भूलति।
'सूर' स्याम वल्लभ वेली विनु, दरस सलिल उन्मूलति॥ ३७०५॥

राग मलार ॥ ४३२४ ॥

मधुकर रह्यौ जोग लौं नातौ।
कतहि वकत है काम काज विनु, होहि न ह्याँ तैं हातौ॥
जव मिलि-मिलि मधुपान करत है, तव तू कहि धौं कहा तौ।
अव आयौ निरगुन उपदेसन, जो नहि हमहि सुहातौ॥
काँचे गुन करि तूनहि लपेटत, लै वारिज कौ ताँतौ।
मेरै जान गह्यौ चाहत हौ, फेरि कि मैंगल मातौ॥
यह लै देहु 'सूर' के प्रभु कौं, आयौ जोग जहाँ तौ।
जब चहिहैं तब माँगि पठैहै, जो कोउ आवत जातौ॥ ३७०६॥

राग सारंग ॥ ४३२५ ॥

ऊधौ जोग किधौं यह हाँसी।
कीन्हीं प्रीति हमारे ब्रज सौं, दई प्रेम की फाँसी॥
तुम हौ बड़े जोग के पालक, संग लए कुबिजा सी।
'सूरदास' सोई पै जानै, जा उर लागै गाँसी॥ ३७०७॥

॥ ४३२६ ॥

ऊधौ जा हरि जोग सिखावत।
जोग जुगुति बुधि ज्ञान प्रगट करि, कहि कहि कहा बतावत ॥
विद्या दान दुराइ स्त्रवन मैं, गुप्त मन्त्र गुरु देत।
हम गोकुल वै मधुवन माधौ, होत सँदेसनि खेत ॥
जौ हरि कृपा करी दीननि पै, तौ ह्याँ लगि पग धारैं।
करि उपदेस क्यौं न दृढ हमकौ, फिरि ब्रजनाथ सिधारैं ॥
दरसन पाइ परसि पद पावन, प्रथम पवित्र करैं।
तौ फल सिद्धि होइ 'सूरज' गुरु माथैं हाथ धरैं ॥ ३७०८ ॥

राग धनाश्री ॥ ४३२७ ॥

सतगुरु चरन भजे बिनु विद्या, कहु कैसे कोउ पावै।
उपदेसक हरि दूरि रहे तैं, क्यौ हमरे मन आवै ॥
जौ हित कियौ तौ अधिक करहिं किन, आपुन आनि सिखावै।
जोग बोझ तैं चलि न सकै तौ, हमही क्यौं न बुलावै ॥
जोग ज्ञान मुनि नगर तजे वरु, सघन गहन बन धावै।
आसन मौन नेम मन संजम, विपिन मध्य बनि आवै ॥
आपुन कहै करै कछु औरै हम मवहिनि दहकावै।
'सूरदास' ऊधौ सौ स्यामा अति संकेत जनावै ॥ ३७०९ ॥

राग मारू ॥ ४३२८ ॥

जागविधि मधुवन सिखिहै जाइ।
मन-वच-कर्म सपथ सुनि ऊधौ सगहि चलौ लिवाइ ॥
सब आसन, रेचक अरु पूरक, कुंभक सीखहि भाइ।
हम जो करत देखिहै कुबिजहिं, तेई करब उपाइ ॥
श्रद्धासहित ध्यान एकहि सँग, कहत जाहि जदुराइ।
'सूर' सुप्रभु की जापर रुचि है, सो हम करिहैं आइ।
आज्ञाभंग करैं हम क्यौं करि, जौ पतिव्रत बिनसाइ ॥ ३७१० ॥

राग धनाश्री ॥ ४३२९ ॥

जोग सँदेसौ ब्रज मैं लावत।
थाके चरन तुम्हारे ऊधौ, बार बार के धावत ॥
सुनिहै कथा कौन निरगुन की, रचि पचि बात बनावत।
सगुर सुमेर प्रगट देखियत, तुम तृन की ओट दुरावत ॥
हम जानति परपंच स्याम के, बातनि ही बौरावत।
देखी सुनी न अब लगि कबहूँ, जल मथि माखन आवत।
जोगी जोग अपार सिंधु मैं, ढूँढ़ेहू नहिं पावत।
ह्याँ हरि प्रगट प्रेम जसुमति कैं, ऊखल आपु बँधावत ॥
चुप करि रहौ ज्ञान ढकि राखौ, कत हौ बिरह बढ़ावत।
नंदकुमार कमलदल लोचन, कहि को जाहि न भावत ॥
काहे कौं विपरीत बात कहि, सबके प्रान गवाँवत।
सोहत कित 'सूरज' अबलनि कौं, निगम नेति जिहि गावत ॥ ३७११ ॥

राग सारंग ।। ४३३० ।।

सुनियत ज्ञान कथा अलि गावत।
जिहिं मुख सुधा वेनु रस पूरत, यह व्रत तिनहिं सुनावत ।।
जहँ लीला रस सखी समाजहिं, कहत कहत दिन जात।
विधना फेर कियौ अब दिखियत, तहँ षटपद समुझात ।।
विद्यमान रस रास लडैते, कत मन इत अरुझात।
रूप रहित कछु वदत वदन तैं, मति कोउ ठग भरकात ।।
साधुवाद स्रुति सार जानि कोउ, तन मन कित बिसरात।
नंदनंदन कर कमल सुमिरि छवि, मुख ऊपर परसात ।।
एक एक तैं सवै सयानी, व्रजसुंदरि न सँख्यात।
'सूर' स्याम रस-सिंधु-कामिनी, नहिं वह दसा हिरात ।। ३७१२ ।।

राग गौरी । ४३३१ ।।

व्रज की वात भई अब न्यारी।
तिहिं सुंदरि मधि जोग गाइयतु, जहँ गावत गिरिधारी ।।
रिपु रन मारि रहे सव दिसि त्यौं, भिच्छु कथा विस्तारी।
'सूर' व्यथित दिन सकुचि कुमुदिनी, निसि हेमत प्रजारी ।। ३७१३ ।।

राग सारंग ।। ४३३२ ।।

मधुकर यह निहचै हम जानी।
खोयौ गयौ नेह नग उनपै, प्रीति कायरी भई पुरानी ।।
पहिलैं अधर सुधा रस सींचे, कियौ पोष वहु लाड लड़ानी।
वहुरौ खेल कियौ सिसु कैसौ, गृह रचना ज्यौं चलत पिछानी ।।
ऐसे हित की प्रीति दिखाई, पन्नग कँचुरी ज्यौं लपटानी।
वहुरौ सुरति लई नहिं जैसै, भ्रमर लता त्यागत कुँभिलानी ।।
वहुरंगी जित जाइ तितहिं सुख, इक रंगी दुख देह दिझानी।
'सूरदास' पसुधनी चोरि कै, खायौ चाहत चारा पानी ।। ३७१४ ।।

राग मलार ।। ४३३३ ।।

मधुकर कहि कैसैं मन मानै।
जिनकौ इक अनन्य व्रत सूझै, क्यौं दूजौ उर आनै ।।
यह तौ जोग स्वाद अलि ऐसौ, पाइ सुधा खरि सानै।
कैसैं धौं यह वात पतिव्रता, सुनै सठ पुरुष विरानै ।।
जैसैं मृगिनी ताकि वधिक दृग, कर कोदंड गहि तानै।
हिंसा करि पोषत तन मन सुख, उर अपराध न आनै ।।
वड़े विचित्र कुविजा रँग रँगे हम निर्गुन लिखि ठानै।
'सूर' स्याम सगुन रतिमानी, मधुप प्रान जनि छानै ।। ३७१५ ।।

राग मलार ।। ४३३४ ।।

कहाँ लौं राखैं मन मैं धीर।
सुनौ मधुप अपनैं इन नैननि, विनु देखैं वलवीर ।।
घर आँगन न सुहात रैन दिन, भूले भोजन, चीर।
दाहत देह चंद चंदन सुख, औरौ मलय समीर ।।

छिन छिन वहै सुरति आवति, जब चितवति जमुना तीर।
'सूरदास' गड़ि रहे हिये मैं, सुंदर स्याम सरीर॥ ३७१६॥

॥ ४३३५॥

(ऊधौ) इन बतियनि कैसे मन दीजै।
बिनु देखे वा स्याम सुंदर के, पल पल ही तन छीजै॥
जो कर आनि हमारै दीनौ, सो अपने कर लीजै।
बाँचि सुनावहु लिख्यौ कहा है, हम बाँचत यह भीजै॥
बड़ौ मतौ है जोग तिहारे, सो हमरैं कह कीजै।
अच्छर चारिक आनि सुनावहु, तिनहिं आस करि जीजै॥
उर कौ सूल तबै भल निकसै, नैन बान जौ कीजै।
'सूरदास' प्रभु प्रान तजति ही, मोहन मिलै तौ जीजै॥ ३७१७॥

राग केदारौ॥ ४३३६॥

बिनु हरि क्यौ राखै मन धीर।
एक बेर हरिदरस दिखावहु, सुंदर स्याम सरीर॥
तुम जु दयाल दयानिधि कहियत, जानत हौ पर पीर।
बिछुरै प्रान, नाथ ब्रज आवै, कटित हम कत जदुबीर॥
मत अपजस आनौ सिर अपनै, कठिन मदन की पीर।
'सूरदास' प्रभु मिलन कहत हे, रवितनया के तीर॥ ३७१८॥

राग धनाश्री॥ ४३३७॥

ऊधौ मन नहिं हाथ हमारै।
रथ चढाइ हरि संग गए लै, मथुरा जबहिं सिधारे॥
नातरु कहा जोग हम छाँड़हि अति रुचि कै तुम ल्याए।
हम तौ झँखति स्याम की करनी, मन लै जोग पठाए॥
अजहूँ मन अपनौ हम पावै, तुम तैं होइ तो होइ।
'सूर' सपथ हमैं कोटि तिहारी, कही करैगी सोइ॥ ३७१९॥

राग सारंग॥ ४३३८॥

मन तौ मथुरा ही जु रह्यौ।
तब कौ गयौ बहुरि नहि आयौ, गहनि गुपाल गह्यौ॥
इन नैननि को मर्म न जान्यौ, किन भेदिया कह्यौ।
राख्यौ हुतौ चोरि चित अंतर, हरि सोइ सोध लह्यौ॥
आये ओल मिलावन ऊधौ, मनि दै लेहु मह्यौ।
निरगुन साटि गोपालहिं चाहत, क्यौ दुख जात सह्यौ॥
इहि आधार आजु लौ यह तन ऐसैं ही निवह्यौ।
सोई लेत छुड़ाइ 'सूर' अब, चाहत हृदय दह्यौ॥ ३७२०॥

राग सारग॥ ४३३९॥

कहा भयौ हरि मथुरा गए।
कहि ऊधौ कैसैं सचु पावत, तन दोउ भाँति भए॥
इहाँ अटक अति प्रेम पुरातन, ह्वाँ निज नेह नए।
ह्वाँ कहियत है राजकाज बस, ह्याँ कर बेनु लए॥

कह गथ हाथ परयौ सुफलकसुत, यह ठग ठाठ ठए।
अब क्यौ कान्ह रहत गोकुल बिनु, लोगनि के सिखए।।
राजा राज करत गृह अपनै, माथै छत्र दए।
चिरजीवौ अब 'सूर' नंदसुत, जीअत मुख चितए।। ३७२१।।

राग सारंग।। ४३४०।।

अपनी सी करत कठिन मन निसि दिन।
कहि कहि क्या मधुप समुझावत, तदपि न रहत नदनंदन बिनु।।
स्रवन सदेस नयन बरसत जल, मुख बतियाँ कछु और चलावत।
भाँति अनेक धरत मन निठुरइ, सब तजि सुरति वहै जिय आवत।।
कोटि स्वर्ग सम सुख अनुमानत, हरि समीप समता नहिं पावत।
थकित सिंधु नौका के खग ज्यौ, फिरि फिरि फेरि वहै गुन गावत।।
जेइ जेइ बात बिचारति अंतर, तेइ तेइ अधिक अनल उर दाहत।
'सूरदास' परिहरि न सकत तन, बारक बहुरि मिल्यौई चाहत।।३७२२।।

राग सारंग।। ४३४१।।

मधुकर ह्याँ नाही मन मेरौ।
गयौ जु संग नदनंदन के, बहुरि न कीन्हौ फेरौ।।
उन नैननि मुसकानि मोल लै, कियौ परायौ चेरौ।
जाकै हाथ परयौ ताही कौ, बिसरयौ बास बसेरौ।।
को सीखे ता बिनु सुनि 'सूरज', जोग जु काहू केरौ।
मदौ परयौ सिधाहु अनत लै, यह निरगुन मत तेरौ।। ३७२३।।

राग सारंग।। ४३४२।।

मुक्ति आनि मंदे मैं मेली।
समुझि सगुन लै चले न उधौ, यह तुम पै सब पुंजी अकेली।।
कै लै जाहु अनत ही बेचौ, कै लै राखु जहाँ बिष बेली।
याहि लागि को मरै हमारै, बृन्दावन चरननि सौ ठेली।।
धरे सीस घर घर डोलत हौ, एकै मति सब भई सहेली।
'सूरदास' गिरिधरन छबीलौ, जिनकी भुजा कंठ धरि खेली।। ३७२४।।

राग सारंग।। ४३४३।।

ऊधौ मन तौ एकहि आहि।
सो तौ हरि लै संग सिधारे, जोग सिखावत काहि।।
सुनि सठ कुटिल वचन रस लंपट, अबलनि तन धौ चाहि।
अब काहे कौ लौन लगावत, बिरह अनल क दाहि।।
परमारथ उपचार कहत हौ, बिरह-व्यथा कै जाहि।
जाकौ राजरोग कफ व्यापत, दह्यौ खवावत ताहि।।
सुंदर स्याम सलोनी मूरति पूरि रही हिय माहिं।
'सूर' ताहि तजि निरगुन सिधुहि, कौन सकै अवगाहि।। ३७२५।।

राग सारंग।। ४३४४।।

ऊधौ मन न भए दस बीस।
एक हुतौ सो गयौ स्याम सँग, को अवराधै ईस।।

इंद्री सिथिल भईं केसव बिनु, ज्यौं देही बिनु सीस।
आसा लागि रहति तन स्वासा, जीवहिं कोटि बरीस॥
तुम तौ सखा स्याम सुंदर के, सकल जोग के ईस।
'सूर' हमारैं नंदनंदन बिनु, और नाहिं जगदीस॥ ३७२६॥

राग सारंग॥ ४३४५॥

ऊधौ जो मन होत बियौ।
तौ तुम्हरे निरगुन कौ दीजै, सो बिधना न दियौ॥
एक जो हुतौ मदन मोहन कौ, सो छबि छीन लियौ।
अब वा रूप रासि बिनु मधुकर, कैसैं परत जियौ॥
जो तुम कह्यौ सोइ सिर ऊपर, 'सूर' स्याम पठयौ।
नाहिंन मीन जिअत जल बाहर, जौ घृत मैं सजियौ॥ ३७२७॥

राग सारंग॥ ४३४६॥

ऊधौ यह मन और न होइ।
पहिलैं हीं चढ़ि रह्यौ स्याम रँग, छुटत न देख्यौ धोइ॥
कैतव बचन छाँडि अलि हमसौं, सोइ कहौ जो मूल।
जोग हमहिं ऐसौ लागत ज्यौं, तुहिं चंपे कौ फूल॥
अब क्यौं मिटति हाथ की रेखै, कहौ कौन बिधि कीजै।
'सूर' स्याम मुख आनि दिखावहु, जिहिं देखैं दिन जीजै॥ ३७२८॥

राग सारंग॥ ४३४७॥

मधुकर मो मन अधिक कठोर।
बिगसि न गयौ कुंभ काँचे लौं, बिछुरत नंदकिसोर॥
हम तैं भली जलचरी बपुरी, अपनौ नेह निबाह्यौ।
जलतैं बिछुरि तुरत तन त्याग्यौ, पुनि जल हीं कौ चाह्यौ॥
जौ हम प्रीति रीति नहिं जानति; तौ ब्रजनाथ तजी।
हमरे प्रेम नेम कौ ऊधौ, सब रस रीति लजी॥
अचरज एक सुनौ हो ऊधौ, जल बिनु मीन रह्यौ।
'सूरदास' प्रभु अवधि आस लगि, मन बिस्वास गह्यौ॥ ३७२९॥

राग मलार॥ ४३४८॥

मधुकर ये मन बिगरि परे।
समुझत नहीं ग्यान गीता कौ, मृदु मुसुकानि अरे॥
हरि-पद-कमल बिसारत नाहीं, सीतल उर सँचरे।
जोग गँभीर कूप आँधे सौ, ताहि जु देखि डरे॥
बाँकी भौंह बक्र दृग राँचे, तातैं बक्र परे।
सूधे होत न स्वान पूँछ ज्यौं, पचि पचि बैद मरे॥
कमल नैन अनुराग भाग भरि, अमी रस गलित गरे।
'सूरदास' हम ऐसैंहि रहिहैं, कान्ह बियोग भरे॥ ३७३०॥

राग मलार॥ ४३४९॥

इहि उर माखन चोर गड़े।
अब कैसैं निकसत सुनि ऊधौ, तिरछे ह्वै जु अड़े॥

जदपि अहीर जसोदानंदन, कैसैं जात छँड़े।
ह्वाँ जादौंपति प्रभु कहियत हैं, हमैं न लगत बड़े।।
को वसुदेव देवकीनदन, को जाने को बूझै,
'सूर' नदनंदन के देखत, और न कोऊ सूझै।। ३७३१।।

राग केदारौ।। ४३५०।।

मन मैं रह्यौ नाहिन ठौर।
नंदनंदन अछत कैसैं, आनियै उर और।।
चलत चितवत दिवस जागत स्वप्न सोवत राति।
हृदय तैं वह मदन मूरति, छिन न इत उत जाति।।
कहत कथा अनेक ऊधौ, लोक लोभ दिखाइ।
कह करौ मन प्रेमपूरन, घट न सिंधु समाइ।।
स्याम गात सरोज आनन, ललित मृदु मुख हास।
'सूर' इनकैं दरस कारन, मरत लोचन प्यास।। ३७३२।।

८। ४३५१।।

ऊधौ यह मन डौर न आवैं।
विलपत लोचन हरि दरसन कौ, मारग कौन वतावै।।
वीति गए जुग ढूँढत वन वन, कठिन स्याम की वाट।
नहिं बनि आयौ जो हम ठाटौ, भयौ कुठारन ठाट।।
हमकौ छाँड़ि गए सुखरासी, लीन्ही कुबिजा ढूँढ़।
"सूरदास' प्रभु आग चचोरत, छाँड़ि ऊख कौ मूँढ़।। ३७३३।।

राग सारंग।। ४३५२।

मधुकर स्याम हमारे चोर।
मन हरि लियौ तनक चितवनि मैं, चपल नैन की कोर।।
पकरे हुते हृदय उर अंतर, प्रेम प्रीति कै जोर।
गए छँड़ाइ तोरि सब बंधन, दै गए हँसनि अँकोर।।
चौंकि परी जानत निसि बीती, दूत मिल्यौ इक भौर।
"सूरदास' प्रभु सरवस लूट्यौ, नागर नवलकिसोर।। ३७३४।।

राग सारंग।। ४३५३।।

अलि ब्रजनाथ कछू करौ।
जा कारन यह देह धरी है, तिहिं कै लेखे परौ।।
प्रथमहिं अरपि दियौ हम सरबस, विरहिनि योहिं जरौ।
कोटि मुकुति वारौ मुसुकनि पर, वपुरौ जोग सरौ।।
'सूर' सगुन बाँट्यौ गोकुल मैं, अव निरगुन ओसरौ।
ताकी छटा छार कँठहरिया, ब्रज जानौ दुसरौ।। ३७३५।।

राग सारंग।। ४३४५।।

ऊधौ भली करी गोपाल।
आपुन तौ हरि आवत नाहीं, विरमि रहे इहिं काल।
चदन, चंद हुते सब सीतल, कोकिल सब्द रसाल।
अब समीर पावक सम लागत, सब ब्रज उलटी चाल।।

हार, चीर, कंचुकि, कंटक भये, तरनि तिलक भयौ भाल।
सेज सिंह, गृह तिमिर कंदरा, सर्प सुमन की माल॥
हम तौ न्याइ इतौ दुख पावैं, ब्रज बसि गोपी ग्वाल।
'सूरदास' स्वामी सुख सागर, भोगी भँवर भुवाल॥ ३७३६॥

राग आसावरी॥ ४३५५॥

सब दिन एकहिं से नहिं होते।
तब अलि ससि सीरौ अब तातौ, भयौ विरह जरि मो तैं॥
तब षट मास रास-रस-अंतर, एकहु निमिष न जाने।
अब औरै गति भई कान्ह बिनु, पल पूरन जुग माने॥
कह मति जोग ज्ञान साखा स्रुति, ते किन कहे घनेरे।
अब कछु और सुहाइ 'सूर' नहिं, सुमिरि स्याम गुन केरे॥ ३७३७॥

राग सारंग॥ ४३५६॥

हमकौ इती कहा गोपाल।
नंदकुमार कमलदल लोचन, सुंदर बाहु बिसाल॥
इक ऐसेही बिरह रही लटि, बिनु घनस्याम तमाल।
तापर अलि पठये हैं सिखवन, अबलनि उलटी चाल॥
लोचन मूँदि ध्यान चित चिनवत, धरि आसन मृगछाल।
क्यौं सहि जाइ जरे पर चूनौ, दूनौ दुख निहि काल॥
डारि न दिये कमल कर तैं गिरि, दबि मरती तिहिं काल।
'सूर' स्याम अब यह न बूझियै, बिछुरि करी बेहाल॥ ३७३८॥

राग सारंग॥ ४३५७॥

सुरति जब होति है यह बात।
सुनौ मधुप वा बेदन की गति, मन जानै की गात॥
रोकै रहत नहीं उर अंतर, कहैं नहीं कहि जात।
भई रीति हठि उरग, छछूंदरि, छांड़े बनै न खात॥
याही भाँति सदा इहिं ब्रज मैं बीतत है दिन रात।
'सूरदास' प्रभु की मिलि बिछुरनि, सुमिरि सुमिरि पछितात॥ ३७३६॥

राग सारंग॥ ४३५८॥

यह बात हमारे कौन सुनै।
जिन चाह्यौ हरि रूप सुरति करि, भूलि अँगारनि को न चुनै॥
ह्याँ सेवनि को ठौर न देखति, तातैं मुनि मन मैं न गुनै।
केसुक बिरह बयारि पैन की, बैठे ठाढ़े को धुनै॥
तब उन भाँतिनि लाड़ लड़ाये, अब बूझियै न यह उनै।
बालि छाँडि कै 'सूर' हमारै, अब नरवाई को लुनै॥ ३७४०॥

राग नट॥ ४३५९॥

ऊधौ बात कही नहिं जाइ।
मदन गुपाल लाल के बिछुरे, प्रान रहे मुरझाइ॥
जब स्यंदन चढ़ि गवन कियौ हरि, फिरि चितए गोपाल।
तबहीं परम कृतज्ञ सबै उठि, संग लगीं ब्रजबाल॥

अब यह औरै सृष्टि विरह की, बकत बाइ बौरानी।
तिनसौं कहा देत फिरि उत्तर, तुम हौ पूरन ज्ञानी॥
अब सो साधन घट का कीजै, क्यौं उपजै परतीति।
'सूरदास' कछु बरनि न आवै, कठिन विरह की रीति॥ ३७४१॥

॥ ४३६० ॥

मधुकर जौ तू हितू हमारौ।
तौ प्यावहि हरिवदन सुधारस, छाँड़ि जोगजल खारौ॥
सुनि सठ नीति सुरभि पयदायक, क्यौं जु लेति हल भारौ।
जे भयभीत होहिं स्रक देखै, क्यौऽव छुवहिं अहि कारौ॥
निज कृत समुझि बेनु दसनन हति, धाम सजत नहिं हारौ।
ता बल अछत निसा पंकज भ्रमि, दल कपाट नहिं टारौ॥
रे अलि चपल मोद रस लपट, कतहिं बकत बेकाज।
'सूर' स्याम छवि क्यौं बिसरति है, नखसिख अंग बिराज॥ ३७४२॥

राग सारग॥ ४३६१॥

हमारे बोल बचन परतीति।
सुनि ऊधौ हम नाहिन जानति, तुम्हरे गाँव की रीति॥
हमरे प्रीतम तुम जु लै गए, आवन कह्यौ रिपु जीति।
तुम्हरे बोलनि कौन पतीजै, ज्यौं भुस पर की भीत॥
आवन अवधि बदी हरि हम सौं, सोऊ गई व्यतीति।
'सूरदास' प्रभु मिलहु कृपा करि, सुमिरि पुरातन प्रीति॥ ३७४३॥

राग सारंग॥ ४३६२॥

ऊधौ जो तुम हमहि सुनायौ।
सो हम निपट कठिनई हठ करि, या मन कौं समुझायौ॥
जुक्ति जतन करि जोग अगह गहि, अपथ पथ लौं लायौ।
भटकि फिर्‌यौ बोहित के खग लौं, पुनि हरि ही पै आयौ॥
हमकौ सब अनहित लागत है, तुम सब हितहि जनायौ।
सुरसरिता जल होम किए तैं, कहा अगिनि सचु पायौ॥
अब सोई उपाय उपदेसौ, जिहिं जिय जाइ जिवायौ।
बारक मिलहिं 'सूर' के स्वामी, कीजै अपनौ भायौ॥ ३७४४॥

राग मलार॥ ४३६३॥

ऊधौ हरि कहियै प्रतिपालक।
जे रिपु तुम पहिलै हति छाँड़े, बहुरि भए मम सालक॥
अघ, बच, बकी, तृनावर्त, केसी, ए सब मिलि ब्रज घेरत।
सूनौ जानि नंदनंदन बिन, बैर आपनौ फेरत॥
अरु अपनौ परिहास मेटिवै, इंद्र रह्यौ करि घात।
सत्वर 'सूर' सहाइ करै को, रही छिनक की बात॥ ३७४५॥

राग कल्यान॥ ४३६४॥

ऊधौ तुम जानत गुप्तहि चारी।
सब काहू के मन की बूझत, बाँधे मूड़ फिरत ठगवारी॥

पीत धुजा उनकी मनरंजन, लाल धुजा कुबिजा व्यभिचारी।
जस की धुजा स्वेत व्रज बाँधे, अपजस की ऊधौ पै कारी॥
वै तौ प्रेमपुंज मन रंजन, हमतौ सीस जोग व्रतधारी।
'सूर' सपथ मिथ्या, लँगराई, ए बातैं ऊधौ की प्यारी॥ ३७४६॥

राग मलार॥ ४३६५॥

ऊधौ अब नहिं स्याम हमारे।
मथुरा गए पलटि से लीन्हे, माधौ मधुप तुम्हारे॥
अब मोहि आवत यह पछितावौ, क्यौं गुन जात बिसारे।
कपटी कुटिल काग अरु कोकिल, अंत भए उड़ि न्यारे॥
करि करि मोह मगन व्रजवासी, प्रेम प्रान सुन वारे।
'सूर' स्याम कौं कौन पत्यैहै, कुटिल गात तन कारे॥ ३७४७॥

राग धनाश्री॥ ४३६६॥

(ऊधौ) जाहु कहा बूझै कुसलात?
जाकैं ज्ञान न होइ सो मानै, कहीं तिहारी बात॥
कारे नाम रूपहूँ कारे, संग सखा सब गात।
जौ पै भले होहिं कहुँ कारे, बदलि सुता लै जात?
हमकौ जोग भोग कुबिजा कौ, काकैं हियैं समात॥
'सूरजदास' प्रीति करि पाले, तेऊ अब पछितात॥ ३७४८॥

राग मलार॥ ४३६७॥ स्याम रंग पर तर्क

सखी री स्याम सबै इक सार।
मीठे बचन सुहाए बोलत, अंतर जारनहार॥
भँवर कुरंग काक अरु कोकिल, कपटिन की चटसार।
कमलनैन मधुपुरी सिधारे, मिटि गयौ मंगलचार॥
सुनहु सखी री दोष न काहू, जो विधि लिख्यौ लिलार।
यह करतूति उनहिं की नाहीं, पूरब विविध विचार॥
कारी घटा देखि बादर की, सोभा देति अपार।
'सूरदास' सरिता सर पोषत, चातक करत पुकार॥ ३७४९॥

राग मलार॥ ४३६८॥

मधुकर स्याम कहा हित जानै।
कोऊ प्रीति करै, कैसेहू, वह अपनी गुन ठानै॥
देखौ या जलधर की करनी, बरसत पोषै आनै।
चातक सदा स्त्रवन कौ सेवक, दुखित बिना जल पानै॥
भँवर भुजंग काक कोकिल कौ, कबिगन कपट बखानै।
'सूरदास' सरबस जौ दीजै, कारौ कृतहिं न मानै॥ ३७५०॥

राग सारंग॥ ४३६९॥

तिनहिं न पतीजै री जे कृतहिं न मानै।
ज्यौं भौंरा रस चाखि चाहि कै, तहाँ जाइ जहाँ नव तन जानै॥
कोइल काक पालि कह दीन्हौ, मिले कुलहिं जब भए सयाने।
सोइ बात भइ नंद महर की, मधुबन तैं माधौ जौ आने॥

तब तौ प्रेम बिचारि न कीन्हौ, होत कहा अबकैं पछिताने।
'सूरदास' जे मन के खोटे, अवसर परैं जाहिं पहिचाने॥ ३७५१॥

राग सारंग॥ ४३७०॥

कहा होत गइके पछिताने।
खेलत खात हँसत एकहि सँग, हम न स्याम गुन जाने॥
को बसुदेव कौन के थापे, को है साधि उन आने।
सो बतलाइ देउ ऊधौ हमै, तुमहूँ निपट सयाने॥
सुनियत कथा काग कोकिल की, मन महँ कपट समाने।
'सूर' समै रितुराज बिराज्यौ मिलि निज कुल पहिचाने॥ ३७५२॥

राग धनाश्री॥ ४३७१॥

मधुकर कह कारे की न्याति।
ज्यौं जल मीन कमल मधुपनि की, छिन नहि प्रीति घटाति॥
कोकिल कपट कुटिल बायस छलि, फिरि नहि उहिं बन जाति।
तैसेहि रास केलि रस अँचयौ, बैठि एक ही पाँति॥
सुत हित जोग जग्य व्रत कीजत, बहु विधि नीकी भाँति।
देखौ अहि मन मोह मया तजि, ज्यौं जननी जनि घाति॥
तिनकौ क्यौं मन विस्मय कीजै, औगुन लौं सुख साँति।
तैसेइ 'सूर' सुने जदुनंदन, बजी एक ही ताँति॥ ३७५३॥

राग धनाश्री॥ ४३७२॥

स्याम सखी कारेहु मै कारे।
तिनसौ प्रीति कहा कहि कीजै, मारग छाँड़ि सिधारे॥
लोक चतुरदस विभव कहत है, पदुमपत जल न्यारे।
सरवर त्यागि बिहग उड़ै ज्यौ, फिरि पाछै न निहारै॥
तब चित चोरि मोरि ब्रजवासिनि, प्रेम नेम व्रत टारे।
लै सरबस नहिं मिले 'सूर' प्रभु, कहियत कुटिल बिचारे॥ ३७५४॥

॥ ४३८३॥

ऐसे नंदराइ के बारे।
इतननि जनि पतियाइ सखी री, जेते है तन कारे॥
खेलत रंग सग वृंदावन, निमिष न होत निनारे।
पहिलै सुख दारुन भए हमकौ, दै जु गए दुख भारे॥
उर ऊपर भीजत सारँग रिपु, नैन नीर बहु ढारे।
'सूरदास' प्रभु वेगि मिलहु किन, टरत नही दुख टारे॥ ३७५५॥

कोकिल, काग, कुरंग, स्याम घन, हमहिं न देखे भावत।
'सूरदास' अनुहारि स्याम की, फिरि फिरि सुरति करावत ॥ ३७५६ ॥

राग मलार ॥ ४३७५ ॥

मधुकर देखि स्याम तन तेरौ।
या मुख की सुनि मीठी बातैं, डरपत है मन मेरौ ॥
काहै चरन छुवत रस लपट, बरजत ही बे काज।
परसत गात स्रवत कुच कुंकुम, यहऊ करि कछु लाज ॥
बुधि विवेक अरु बचन चातुरी, सरबस चित्त चुरायौ।
ऐसौ धौं उन कहा बिचारयौ, जा लगि तू ब्रज आयौ ॥
अब कहि किहिं आगो गावत हौ, हम आगैं यह गीत।
'सूर' इते सौ बार कहा है, जौ पै त्रिगुन अतीत ॥ ३७५७ ॥

राग मलार ॥ ४३७६ ॥

मधुप तुम देखियत हौ अति कारे।
कालिंदी तट पार बसत हौ, सुनियत स्याम सखा रे ॥
मधुकर, चिकुर, भुअंग, कोकिला, अवधि नहीं दिन टारे।
वै अपने सुख ही के राते तजियत यह अनुहारे ॥
कपटी कुटिल निठुर, निरमोही, दुख दै दूरि सिधारे।
बारक बहुरि कबहुँ आवहुगे, नैननि साध तिवारे ॥
उनकी सुनै सो आप बिगोवै, चित चोरत बटपारे।
'सूरदास' प्रभु क्यौं मन मानै, सेवक करत निनारे ॥ ३७५८ ॥

राग बिहागरौ ॥ ४३७७ ॥

तुम अलि बातनि बैर बढ़ावत।
कारे रूप ज्ञान उपदेसत, मुदित कहत हौ गावत ॥
वेद पुरान जानि मान्यौ जस, जलनिधि लौं नहिं भावत।
चातक उदय और जौ जाँचै, तौ कुल आन कहावत ॥
सुनि जड जीव नेह के कारन, बपु सौ निज सुख मानत।
सोइ अब 'सूर' मैन की करनी, जग जस प्रगट बखानत ॥ ३७५९ ॥

राग सारंग ॥ ४३७८ ॥

भूलति हौ कत मीठी बातनि।
ए तौ अलि उनही के संगी, चंचल चित्त साँवरे गातनि ॥
वै मुरली धुनि जग मन मोहत, इनकी गुंज सुमन मधु पातनि।
ए षट्पद, वै द्विपद चतुर्भुज, काहू भाँति भेद नहिं भ्रातनि ॥
वे नव निसि मानिनिगृह बासी, एउ बसत निसि नव जल जातनि।
वे उठि प्रात अनत मन रंजत, ये उडि करत अनत रस रातनि ॥
स्वारथनिपुन मद्य रस भोगी, जनि पतियाहु बिरह-दुख-दातनि।
वे माधौ ए मधुप 'सूर' कहि, दुहूँ मैं नाहिन कोउ घटि घातनि ॥ ३७६० ॥

राग केदारौ ॥ ४३७९ ॥

मधुकर ये सुनि तन मन कारे।
कहूँ न सेत सिद्धताई तन परखे अंग तिहारे ॥

कीन्हौ कपट कुंभ विच पूरन, पय मुख प्रगट उघारे।
वाहर देखि मनोहर दरसत, अंतरगत जु ठगारे।।
अव तुम चले ज्ञान विप व्रज दै हरन जु प्रान हमारे।
ते क्यौ भले होहिं 'सूरज' प्रभु, रूप वचन कृत कारे।। ३७६१।।

राग मलार।। ४३८०।।

विलग जनि मानौ ऊधौ कारे।
वह मथुरा काजर की ओवरि, जे आवै ते कारे।।
तुम कारे सुफलकसुत कारे, कारे कुटिल भँवारे।
कमलनैन की कौन चलावै, सवहिनि से मनियारे।।
मानौ नील माठ तै काढे, जमुना आइ पखारे।
तातै स्याम भई कालिंदी 'सूर' स्याम गुन न्यारे।। ३७६२।।

राग मलार।। ४३८१।।

ऊधौ तुम सव साथी भोरे।
मेरे कहै विलग जनि मानहु, कोटि कुटिल लै जोरे।।
वे अक्रूर क्रूर कृत जिनके, रीते भरि, भरि ढोरे।
आपुन स्याम स्याम अतर मन, स्याम काम मैं वोरे।।
तुम मधुकर निरगुन निजु नीके, देखे फटकि पछोरे।
'सूरदास' कारेन की संगति, को जावै अव गोरे।। ३७६३।।

।। ४३८२।।

(ऊधौ) कह वूझत तन की दुवराई।
वह थोरी जौ जियत रही है, विछुरत कुँअर कन्हाई।।
जव ही कृपा नंननदन की, मिलि रस रास खेलाई।
अव अदया देखति जादौपति, पाती लिखि जु पठाई।।
कौन जोग लै आए ऊधौ, कैसै जीजै माई।
'सूरज' स्याम विरह की वेदन, मो पै सही न जाई।। ३७६४।।

राग भोपाली।। ४३८३।।

ऊधौ हम दूवरी वियोग।
प्रीतम हमें सो उठि गये मधुवन रहे वटाऊ लोग।।
जो तुम वूझहु व्यथा हामरी, कहे वनै तुम आगै।
देह विहार सिंगार न भावै, मन तरसै हरि काजै।।
कारी घटा देखि अँधियारी, सारँग मद्द न भावै।
दिवस रैनि मैं विरह सतावै, कव गुपाल घर आवै।।
'सूरदास' स्वामी मनमोहन, अव करि गए अनाथ।
मन क्रम वचन उहाँइ वसत हैं, जहाँ वसत जदुनाथ।। ३७६५।।

राग सोरठ।। ४३८४।।

ऊधौ यह हरि कहा करयौ।
राज काज चित दियौ साँवरै, गोकुल क्यौ विसरयौ?
जौ लौ रहे घोप मैं, तौलौ संतत सेवा कीन्ही।
छिन इक परस भएँ ऊखल सौ, वहुत मानि जिय लीन्ही।।

अब किन कोटि वरै ब्रजनायक, अनतहिं राजकुमारि।
कहियौ नंद पिता कहँ पैहै, कहँ जसुमति महतारी ॥
कहँ गोधन, कहँ गोपवृंद सब, कहँ माखन कौ खइबौ।
'सूरदास' अब सोइ करौ जिहिं, होइ कान्ह कौ अइबौ ॥ ४७६६ ॥

राग नट ॥ ४३८५ ॥

जदपि मैं बहुतै जतन करे।
तदपि मधुप हरिप्रिया जानि कै, काहुँ न प्रान हरे ॥
सौरभजुत सुमननि लै निज कर, सतत सेज धरे।
सनमुख सहति सरद ससि सजनी, ताहु न अंग जरे ॥
मधुकर, मोर, कोकिला, चातक, मुनि मुनि स्रवन भरे।
सादर ह्वै निरखति रतिपति दृग, नैकु न पलक परे ॥
निसि दिन रटति नदनंदन कौ, उर तै छिन न टरै।
अति आतुर गुन सहित चमू सजि, अगनि सर सँचरे ॥
जानत नही कौन गुन इहिं तन, जातै मन्न बिडरे।
'सूरदास' सकुचनि श्रीपति की, सुभटनि बल बिसरे ॥ ३७६७ ॥

राग केदारौ ॥ ४३८६ ॥

जिहिं दिन तजी ब्रज की भीर।
कहौ ए अलि लेखि तुमसौ, सखा सुंदर धीर ॥
काम नृप ससि नेव अवलनि, दुर्ग दूत समीर।
बिपिन सेना साजि नवदल, वदत वंदी कीर ॥
लता लघु जनु कुसुम कर सर, कली कोटि तुनीर।
बरन बान बसत कर लै, बधत है आभीर ॥
मध्य द्रुम है फूल मानौ, कवच चित्रित कीर।
कुभ कुंजर बिटप भारी, चँवर चारु मईर ॥
चमू चंचल चलति नाही, रही है पुर तीर।
समर मारू कीट की रट, सहति त्रिया अधीर ॥
जन्म जातक व्याधि व्यापक, कहौ कासौ पीर।
'सूर' रसिक सिरोमनिहिं बिनु, जरत जमुना नीर ॥ ३७६८ ॥

राग कान्हरौ ॥ ४३८७ ॥

हरि बिछुरन की सूल न जाइ।
वलि वलि जाऊँ मुखारविंद की, वह मूरत चित रही समाइ ॥
एक समै वृंदावन महियाँ, गहि अंचल मेरी लाज छड़ाइ।
कबहुँक रहसि देत आलिंगन, कबहुँक दौरि वहोरत गाइ ॥
वै दिन ऊधौ बिसरत नाही, अंबर हरे जमुन तट जाइ।
'सूरदास' स्वामी गुन सागर, सुमिरि सुमिरि राधे पछिताइ ॥ ३७६९ ॥

राग नट ॥ ४३८८ ॥

मोहन माँग्यौ अपनौ रूप।
इहिं व्रज बसत अँचै तुम बैठीं, ता बिनु उहाँ निरूप ॥
मेरौ मन, मेरे अलि लोचन, लै जु गए धपि धूप।
ता ऊपर तुम लैन पठाए, मनौ धरयौ करि सूप ॥

अपनौ काज सँवारि 'सूर' सुनि, हमैं वतावत कूप।
लेवा देइ धराधरि मै है, कौन रंक को भूप॥ ३७७०॥

राग सारंग॥ ४३८८॥

पठवत जोग कछू जिय लाज न।
सुनियत जंत्र तांत तै जानी; कपट राग रुचि वाजन॥
जिय गहि लई क्रूर के सिखए, मोह होत नहिं राजन।
सव सुधि परी वचन कन टोए, ढके रह्यौ मुख भाजन॥
यह नृप नीति रह्यौ कौनैहु जुग, नेह होत जस आजन।
ताहूँ तजौ सुरति नहिं आवत, दुख पाए जन माजन॥
करि दासी दुलहिनि भए दूलह, फिरत व्याह सू साजन।
'सूर' वड़े भुवभूप कस हन, वा कुविजा के काजन॥ ३७७१॥

राग मलार॥ ४३९०॥

सँदेसनि विरह विथा क्यौ जानि।
जव तै दृष्टि परी वह मूरति, कमल वदन की काँति॥
अव तौ जिय ऐसी वनि आई, कहौ कोउ किहुँ भाँति।
जो वह कहै सोइ सो मुनि सखि, जुग वर रैनि विहाति॥
जौलौ नहिं भेटौ भुज भरि हरि, उर कचुकि न सुहाति।
'सूरदास' प्रभु कमलनयन विनु, तलफति अरु अकुलाति॥ ३७७२॥

राग मलार॥ ४३९१॥

सँदेसनि क्यौ निघटति दिन राति ?
कवहुँक स्याम कमल दल लोचन व्रज मिलिहैं उहि भाँति॥
खजरीट मृग मीन मधुप मिलि उपमा कौ अकुलात।
सहस भाँति अर्पित कीन्है सव, एकौ चित न सुहात॥
वार वार मै वरज्यौ ग्वालिनि, अपने मारग जात।
'सूरदास' प्रभु संतत हित तै, कहे सुनत नहिं वात॥ ३७७३॥

राग सारंग॥ ४३९२॥

सँदेसनि सुनत प्रीति गति जानी।
चातक स्वाति वूँद लौ, सागर भरे देखियत पानी॥
दिन, दिन मोह वँध्यौ सुक नल ज्यौ वंसी धुनि कल कीन्ही।
उरझ्यौ मन पठयौ हम देखन, यही सुरति हम लीन्ही॥
निरगुन के ऐसे गुन सुमिरत, सुनि अलि सखा सनेही।
जिय हरि लियौ कौन ऐसौ हित, 'सूर' सुपोपत देही॥ ३७७४॥

राग मलार॥ ४३९३॥

गोपालहिं लै आवहू मनाइ।
अव की वार कैसैंहू ऊधौ, करि छल वल चतुराइ॥
दीजौ उनहिं उरहनौ मधुकर, सनै सनै समुझाइ।
जिनहिं छाँड़ि मथुरा तुम आए, ते कहा करैं जदुराइ॥
वार वार हौं वहुत कहा कहौं, विनती वहुत वनाइ।
पाँइ पकरि 'सूरज' प्रभु ल्यावहु, नद की सोहैं दिवाइ॥ ३७७५॥

राग केदारौ ॥ ४३६४ ॥

ऊधौ स्याम इहाँ लै आवहु।
ब्रजजन चातक मरत पियासे, स्वाति बूँद बरषावहु ॥
ह्याँ तैं जाहु बिलब करौ जनि, हमरी दसा जनावहु।
घोष सरोज भयौ है संपुट, ह्वै दिनकर बिगसावहु ॥
जौ ऊधौ हरि इहाँ न आवहिं, तौ हमैं उहाँ बुलावहु।
'सूरदास' प्रभु हमहि मिलावहु, तौ तिहुँपुर जस पावहु ॥ ३७७६ ॥

राग केदारौ ॥ ४३६५ ॥

कहहु कहा हम तैं बिगरी।
कीनैं न्याउ जोग लिखि पठए, हँसि सेवा कछुवै न करी ॥
पापँड प्रीति करी नँदनदन, अवधि अधार हुती सो टरी।
मुद्रा जटा ऊधौ लै आए, ब्रजवनिता पहिरी सगरी ॥
जाति सुभाउ मिटै नहि सजनी, अत तऊ उबरी कुबरी।
'सूरदास' प्रभु बेगि मिलहु अब, नातरु प्रान जात उगरी ॥ ३७७७ ॥

राग केदारौ ॥ ४३६६ ॥

बिरही कहँ लौ आपु सँभारैं।
जब तैं गंग परी हरि पग तैं, बहिबौ नहीं निवारैं ॥
नैननि तैं बिछुरे जु भ्रमत हैं, ससि अजहूँ तन गारैं।
रोम ते बिछुरि, कमल कंटक भए, सिंधु भए जल छारैं ॥
बैन ते बिछुरि, अबिधि बिधिहूँ भई, बेदहि को निरवारै।
'सूरदास' जे सब अग बिछुरी, तिनहिं कौन उपचारैं ॥ ३७७८ ॥

राग मलार ॥ ४३६७ ॥

बहुत दिन बीते हरि बिनु देखैं।
गननहिं गनत गईं सुनि सजनी, कर अँगुरिनि की रेखैं ॥
अब यह बिरह अमर जु करी हम, बिसरी नैन निमेषैं।
हौ डरपति सुनि 'सूरदास' जनि, पारहिं उनहि के लेखैं ॥ ३७७९ ॥

राग नट ॥ ४३६८ ॥

ऊधौ जू त्रिभंगी छबि फेरि नही दीठी।
देख्यौ चाहैं नैन मेरे, मूरति वह मीठी ॥
काहैं तुम करत मधुप, ऐसियै बसीठी।
मानत नहि बातैं मन, लागति हमैं सीठी ॥
'सूरदास' प्रभु सौं यह, कहियौ तुम ढीठी।
सेवाहूँ करत कितहि, दीन्हौ है पीठी ॥ ३७८० ॥

राग धनाश्री ॥ ४३६९ ॥

ऊधौ भली भई ब्रज आए।
बिधि कुलाल कीन्हे काँचे घट, ते तुम आनि पकाए ॥
रँग दीन्हौ हौ कान्ह साँवरैं, अँग अँग चित्र बनाए।
यातैं गरे न नैन नेह तैं, अवधि अटा पर छाए ॥
ब्रज करि अँवा जोग ईंधन करि, सुरति आनि सुलगाए।
फूँक उसास बिरह प्रजरनि सँग, ध्यान दरस सियराए ॥

भरे संपूरन सकल प्रेम जल, छुवन न काहू पाए।
राज काज तै गए 'सूर' प्रभु, नंदनंदन कर लाए।। ३७८१।।

राग मलार ।। ४४०० ।।

ऊधौ भली करी ह्यां आए।
तुम देखे जनु माधौ देखे, दुख त्रै ताप नसाए।।
नंद जसुदा कौ नात न छूटत, वेद पुराननि गाए।
हम अहीर तुम अहिर लाख दस, निरगुन कहा कहाए।।
तब इहिं घोष खेल बहु खेले, ऊखल भुजा बँधाए।
'सूरदास' प्रभु इहै सूल जिय, बहुरि न दरस दिखाए।। ३७८२।।

राग मलार ।। ४४०१ ।।

ऊधौ कहि मधुवन की रीति।
राजा होइ जदुनाथ तिहारे, कहा चलाई नीति।।
निसिकर करत दाह दिनकर लौं, हुतौ सदा ससि सीत।
पूरब पवन कह्यौ नहिं मानत, गयौ सहज बपु जीति।।
कंस काज कुबिजा कौं मारयौ, भई निरंतर प्रीति।
'सूर' विरह ब्रज भलौ न लागत, जहाँ ब्याह तहँ गीति।। ३७८३।।

राग केदारौ ।। ४४०२ ।।

हरि बिनु नाहिन परत रह्यौ।
उत गिरि दुर्गम इत दव दारुन, क्यौं दुख जात सह्यौ।।
उठत जु विरह धूम पावक भ.र, बरि बरि वायु बह्यौ।
जारि जारि फिरि फूँकि प्रजारत, पलकनि हृदय दह्यौ।।
जद्यपि घृत आए लै ऊधौ, जोग सँदेस कह्यौ।
तद्यपि भस्म न होति 'सूर' सुनि, चलत गोपाल चह्यौ।। ३७८४।।

राग मलार ।। ४४०३ ।।

माधौ जू नैकु दिखाई देहु।
या तनु मैं तै ताके बदलै, जो चाहौ सो लेहु।।
भूली फिरति ठगी सी तब तै, बिनु बल मति गुन गेहु।
जब तैं इन अपराधी नैननि, बरजत कियौ सनेहु।।
कहियौ जाइ मधुप पा लागौं, बिरह कियौ तन खेहु।
'सूरदास' प्रभु प्रान पथिक कौ, तुमहिं निहोरौ एहु।। ३७८५।।

राग मलार ।। ४४०४ ।।

एक बार ब्रज आइकै, हरि दरसन देते।
तन की तपन मिटाइ कै, जग मैं जस लेते।।
सुख समीप जननी किए, अवगुन भए तेते।
मधुकर कौ बेली भई, बिनु गाहक लेते।।
छाँड़नहार जु हरि भए, कछुवै गुन देते।
'सूरदास' हम कह कियौ, कंचन कसि लेते।। ३७८६।।

राग सारंग ।। ४४०५ ।।

(ऊधौ जौ) हरि आवहिं तौ प्रान रहैं।
आवत जात उलटि फिरि बैठत, जीवत अवधि गहैं।।

जब वे दाम उखल सौं बाँधे, बदन नवाइ रहे।
चुभि जु रही नवनीत चोर छबि, भुलति न ज्ञान कहे॥
तिनसौ ऐसी क्यौ कहि आवति, जिन कुल त्रास सह्रे।
'सूर' स्याम गुन रस निधि तजि कै, क्यौं यह घट निबहे॥ ३७८७॥

राग नट॥ ४४०६॥

जब लगि ज्ञान हृदै नहिं आवै।
तब लगि कोटि जतन करै कोऊ, बिनु बिवेक नहिं पावै॥
बिना बिचार सबै सुपनौ सौ, मैं देख्यौ जग जोइ।
नाना दारु बसै ज्यौं पावक, प्रगट मथे तैं होइ॥
तुमही कहत सकल घट व्यापक, और सबहिं तैं नियरे।
नख सिख लौ तन जरत निसा दिन, निकसि करत किन सियरे॥
साँची बात सबै बोलत हौ, मुख मैं मेले तुरसी।
'सूर' सु औषध हमै बतावहु, पितजुर ऊपर गुरसी॥ ३७८८॥

राग सारग॥ ४४०७॥

तुम जु कहत हरि हृदय रहत है।
कैसे होइ प्रतीति मधुप सुनि, ये इतनी जु सहत है॥
बासर रैनि कठिन बिरहागिनि, अंतर प्रान दहत है।
प्रजरि प्रजरि मनु निकसि धूम अनि, नैननि नीर बहत है॥
कठिन अवज्ञा होति देह दुख, मरजादा न गहत है।
कहि अब क्यौ माने मन 'सूरज' ये बातैं जु कहत है॥ ३७८९॥

राग सारग॥ ४४०८॥

जौ पै हिरदै माँझ हरी।
तौ कहि इती अवज्ञा उनपै, कैसै सही परी॥
तब दावानल दहन न पायौ, अब इहि बिरह जरी।
उर तैं निकसि नंदनदन हम, सीतल क्यौ न करी॥
दिन प्रति नैन इद्र जल बरषत, घटत न एक घरी।
अति ही सीत भीत तन भीजत गिरि अंचल न धरी॥
कर कंकन दरपन लै देखौ, इहि अति अनख मरी।
क्यौ अब जियहिं जोग सुनि 'सूरज' बिरहिनि बिरह भरी॥ ३७९०॥

राग सारंग॥ ४४०९॥

तुम घट ही मै स्याम बताए।
लीजै सँभारि सकल सुख अपने, रास रंग जे पाए॥
जौ समदृष्टि आदि निर्गुन पद, तौ कत चित्त चुराए।
मोहन बदन बिलोकि मानि रुचि, हँसि हँस कंठ लगाए॥
हम मति हीन अजान अल्प बुधि, तुम अनुभौ पद ल्याए।
'सूरदास' तिहिं बनिज कौन गुन, मूलहू माँझ गँवाए॥ ३७९१॥

राग सारंग॥ ४४१०॥

इन बातनि के मारै मरियत।
निरगुन ज्ञान मधुप लै आए, बिनु गुपाल कैसै निस्तरियत॥

सबै अटपटी कहै रे मधुकर, सुनी देखी मधुवन की नीति।
कौन हाल हमरैं ब्रज बीतत, जानत नहीं विरह की रीति॥
बुझी अगिनि बहुरौ सुलगाई, अंतरगति विरहानल जारत।
'सूरदास' स्वामी सुख सागर, मिलि काहै न तन ताप निवारत॥ ३७९२॥

॥ ४४११॥

बातैं कहत बनाइ बनाइ।
रचक विरह हुतौ इहिं गोकुल, मधुकर मेटयौ आइ॥
कमलनैन मोहन की लीला, रहति रहीं गुन गाइ।
ओछी पूँजी हरै जु तस्कर, रक मलै पछिताइ॥
भली करी हमकौं लै आए, पठए जोग सिखाइ।
'सूरदास' स्वामी यह घाली, निरगुन कथा सुनाइ॥ ३७९३॥

राग नट॥ ४४१२॥

ऐसौ जोग न हम पै होइ।
आँखि मूंदि कह पावै ढूंढ़, अँधरे ज्यौं टकटोइ॥
भसम लगावन कहत जु हमकौं, अग कुकुमा धोइ।
सुनि कै वचन तुम्हारे ऊधौ, नैना आवत रोइ॥
कुनल कुटिल मुकुट कुंडल छवि, रही जु चित मैं पोइ।
'सूरज' प्रभु बिनु प्रान रहै नहि, कोटि करौ किन कोइ॥ ३७९४॥

राग केदारौ॥ ४४१३॥

ऊधौ तौ हम जोग करैं।
जौ हरि वेगि मिलैं अब हमकौं, वैसे भेष धरैं॥
कर मुरली उर गुंजनि माला, बाल वच्छ लिए सग।
वैसेहि दान जु मागैं हम पै, बाढ़ै अति रस रग॥
वैसेई हम मान करैंगी, वै गहि चरन मनावैं।
यातैं भली कहा 'सूरज' जौ, स्याम जोग धरि पावैं॥ ३७९५॥

॥ ४४१४॥

जोग भलौ जौ मोहन पावै।
कहि मति भाव कपट तजि ऊधौ, तो निहचै चित्त लावै॥
करै तपस्या विधि सजोगी, एक ध्यान धरि ध्यावै।
मन करि हाथ आपनैं राखै, चित्त न कहूँ डुलावै॥
एकै 'सूर' कठिन लागत है, नैना जौ ढंग आवै।
है रस रसे साँवरे हरि के, सो रस जौ बिसरावै॥ ३७९६॥

॥ ४४१५॥

मधुकर कह्यौ सँदेस सिधारौ।
बिनु उपदेस सहजहीं जोगी, सुधरि रह्यौ ब्रज सारौ॥
जाकौ ध्यान धरत गौरीपति, जोग जुक्ति करि हारौ।
सो हरि बसत सदा उर अंतर, नैकु टरत नहिं टारौ॥
यह उपदेस आपनौ ऊधौ, राखौ ढाँपि सँवारौ।
'सूर' स्याम जानत है जी की, जो निज हितू हमारौ॥ ३७९७॥

राग सारंग ॥ ४४१६ ॥

ऊधौ हमहिं कहा समुझावहु।
पसु पंछी सुरभी ब्रज कौ सब, देखि स्रवन सुनि आवहु ॥
बिन न चरत गो, पिवत न सुत पय, ढूँढ़त बन बन डोलैं।
अलि कोकिल दै आदि विहंगम, भाँति भयानक बोलैं॥
जमुना भई स्याम स्यामहिं बिनु, इदु छीन छय रोगी।
तरुवर पत्र बसन न सँभारत, बिरह वृच्छ भए जोगी॥
गोकुल के सब लोग दुखित है, नीर बिना ज्यौं मीन।
'सूरदास' प्रभु प्रान न छूटत, अवधि आस मैं लीन॥ ३७९७ ॥

राग नट ॥ ४४१७ ॥

हमसौं उनसौं कौन सगाई।
हम अहीर अबला ब्रजवासी, वै जदुपति जदुराई॥
कहा भयौ जु भए जदुनंदन, अब यह पदवी पाई।
सकुच न आवत घोष बसत की, तजि ब्रज गए पराई॥
ऐसे भए उहाँ जादौपति, गए गोप बिसराई।
'सूरदास' यह ब्रज कौ नातौ, भूलि गए बलभाई॥ ३७९९ ॥

राग सोरठ ॥ ४४१८ ॥

प्रीति करि निरमोहि हरि सौं, काहि नहिं दुख होइ।
कपट की करि प्रीति कपटी, लै गयौ मन गोइ॥
सींचि आल मजीठ जैसैं, निठुर काटी पोइ।
हमरे मन की सोइ जानै, जाहि बीती होइ॥
काल कर तैं राखि लीन्ही, इंद्र गर्व जु खोइ।
'सूर' गोपिनि ऊधौ आगैं, डर्कांक दीन्हौ रोइ॥ ३८०० ॥

राग सारंग ॥ ४४१९ ॥

ऊधौ तुम यह मति लै आए।
इक हम जरति खिझावन आए, मानौ सिखै पठाए॥
तुम उनके वै नाथ तुम्हारे, प्रान एक इक सारे।
मित्र के मित्र सजन के सज्जन, तातैं कहति पुकारे॥
रे सुनि मूढ़ जरति अबलनि कौ, पर दुख तू नहिं जानै।
निपट गँवार होइ जो मूरख, सो तेरी बातै मानै॥
हम रुचि करी 'सूर' के प्रभु कौ, दूजौ मन न सुहाइ।
उलटि जाहु अपनै पुर माहीं, बादिहिं करत लराइ॥ ३८०१ ॥

राग मारू ॥ ४४२० ॥

हरि मुख देखैं ही परतीति।
हम जौ तुम कोटि भाँति परमोधौ, जोग ध्यान की रीति॥
'सूर' नाही कछू सयान ज्ञान मैं, यह नीकैं हम जानैं।
४४१ जौ कहा कहिऐ अनभव कौं, कैसैं मन मैं आनैं॥
मन एक, एक वह मूरति, भृंगी कीट समानै।
'सूर' निरगुन ज्ञ' सपथ दै ऊधौ पूछौ, इहिं बिधि कौन सयानै॥ ३८०२ ॥

राग सारंग ॥ ४४२१ ॥

(ऊधौ) बात तिहारी को सुनै।
हरि-पद-पंकज मन मधुकर गह्यौ, मन बिनु बात न कछू बनै ॥
जोग जुगुति बिस्तार बड़ौ है, ऐसो ठौर नही अपनै।
ब्रजबासिन इतनोइ हियौ है, कृष्न बसत संकोच बनै ॥
तहाँ जाहु जहँ बैठे जोगी, इहाँ काम रस रह्यौ घुनै।
हम जु अहीर कृष्न मतमाते, मूरख सौ क्यौं मंत्र बनै ॥
जो तुम जानत तप करि पायौ, मौन रहौ तुम घर अपनै।
घर घर फिरत पुकारत ल्यौ ल्यौ, ताही वस्तु कौ मोल हनै ॥
भूख न प्यास नीद गइ हरि बिनु, पति, सुत, गृह की कौन गनै।
माया और छूटि गइ ममता, अधिक कहा लौ लोग बनै ॥
सो हरि प्रान, प्रान तै बल्लभ, मोहन की लीला अगनै।
आवत है तौ कही 'सूर' प्रभु, नही रहौ तुम मौन बनै ॥ ३८०३ ॥

राग रामकली ॥ ४४२२ ॥

तौ हम मानैं बात तुम्हारी।
अपनौ ब्रह्म दिखावहु ऊधौ, मुकुट पितांबर धारी ॥
मनिहैं तब ताकौ सब गोपी, सहि रहिहैं बरु गारी।
भूत समान बतावत हमकौ, डारहु स्याम बिसारी ॥
जे मुख सदा सुधा अँचवत है, ते बिष क्यौ अधिकारी।
'सूरदास' प्रभु एक अंग पर, रीझि रही ब्रजनारी ॥ ३८०४ ॥

राग मलार ॥ ४४२३ ॥

बातनि को परतीति करै।
को अब कमलनैन मूरति, तजि निरगुन ध्यान धरै ॥
जो मत वेद कहत जुग बीते, रूप रेख बिनु जाने।
सो मत मूढ कहत अबलनि सौ, नाहि सो हृदै समाने ॥
जिहिं रस काज देव मुनि चिंतत, ध्यान पलक नहिं आवत।
सोइ रस 'सूर' गाइ ग्वालनि सँग, मुरली लै कर गावत ॥ ३८०५ ॥

राग सारंग ॥ ४४२४ ॥

नहीं हम निरगुन सों पहिचानि।
मन मनसा रस रूप सिंधु मे, रही अपुनपौ सानि ॥
जदपि आनि उपदेसत ऊधौ, पूरन ज्ञान बखानि।
चित चुभि रहीं मदन मोहन की, चितवनि मृदु मुसकानि ॥
जुरचो सनेह नंदनंदन सौ, तजि परिमिनि कुलकानि।
छूटत नहीं सहज 'सूरज' प्रभु, दुख सुख लाभ कि हानि ॥ ३८०६ ॥

॥ ४४२५ ॥

(ऊधौ) जौ कोउ यह तन फेरि बनावै।
तौऊ नंदनँदन तजि मधुकर, और न मन मै आवै ॥
जौ या तन की त्वचा काटि कै, लै करि दुंदुभि साजै।
मधुर उतंग सुर निकसै, कान्ह कान्ह करि बाजै ॥

निकसै प्रान परै जिहि माटी, द्रुम लागै तिहि ठाम।
अब सुनि 'सूर' पत्र, फल, साखा, लेत उठै हरि नाम ।। ३८०७ ।।

राग सारंग ।। ४४२६ ।।

ऊधौ जाइ बहुरि सुनि आवहु, कह्यौ जो नंदकुमार।
यह न होइ उपदेस स्याम कौ, कहत लगावन छार ।।
निरगुन जाति कहाँ उन पाई, सिखवत बारबार।
काल्हिहि करत हुते हमरे, अँग, अपनै हाथ सिंगार ।।
व्याकुल भई गोपालहि बिछुरे, गयौ गुन ज्ञान सँभार।
तातै जो भावै सो बकत हौ, नाहिन दोष तुम्हार ।।
बिरह सहन कौ हम सिरजी है, पाहन हृदय हमार।
'सूरदास' अंतरगति मोहन, जीवन प्रान अधार ।। ३८०८ ।।

राग सारंग ।। ४४२७ ।।

ऊधौ जोग बिसरि जनि जाहु।
बाँधौ गाँठि छूटि परिहै कहूँ, फिरि पाछे पछिताहु ।।
ऐसी बहुत अनूपम मधुकर, मरम न जानै और।
ब्रज बनितनि के नही काम की, है तुम्हरेई ठौर ।।
जो हित करि पठयौ मनमोहन, सो हम तुमकौ दीनौ।
'सूरदास' ज्यौ बिप्र नारियर, करही बदन कीनौ ।। ३८०९ ।।

राग सारंग ।। ४४२८ ।।

ज्ञान जोग अबलनि अहीरि सौ कहत न आवै लाज।
ऊधौ सखा स्याम के कहियत, पठए हौ बेकाज ।।
जा लायक जो बात होइ सो, तैसिये तासौ कहिऐ।
बीना नाद सँगीत सुधानिधि, मूढ़हि कहा सुनैऐ ।।
हम जानी बिचारि पठऐ हौ, सखा अग परबीन।
मुख देहौ मोहन कहि बतियाँ, करत जोग आधीन ।।
मुरली अधर मोर की पाँखै, जिन यह मूरति देखी।
सोऽब कहा जानै निरगुन कौ, भीति चित्र अवरेखी ।।
पा लागौ तुम बडे सयाने, अनबोले ही रहियौ।
सिखए जोग 'सूर' के प्रभु के, उनही सौ फिरि कहियौ ।। ३८१० ।।

।। ४४२९ ।।

ऊधौ कह्यौ तिहारौ कीन्हौ।
जिहि जिहि भाँति सिखावन दीन्हौ, सोइ बिचारन लीन्हौ ।।
नैन मूँदि धरि ध्यान निरंतर, मन देख्यौ दौराइ।
अरुझि रह्यौ नँदलाल प्रेम रस, निमिष न इत उत जाइ ।।
जो हम हाथ आवते जानति, लेती सीस चढाइ।
यह लै देहु ताहि फिरि मधुकर, जिन पठए हित गाइ ।।
मेरे जान 'सूर' के प्रभु तौ, फेरि न लैहैं ओऊ।
देखियत परी तिहारे माथै, यह हाँसी दुख दोऊ ।। ३८११ ।।

राग धनाश्री ॥ ४४३० ॥

ऊधौ काहे कौं भक्त कहावत।
जु पै जोग लिखि पठवौ हमकौं, तुमहुँ न भस्म चढावत॥
शृंगी मुद्रा भस्म अधारी, हमहीं कहा सिखावत।
कुबिजा अधिक स्याम की प्यारी, ताहि नहीं पहिरावत॥
यह तौ हमकौ तबहि न सिखयौ, जब तैं गाइ चरावत।
'सूरदास' प्रभु कौ कहियौ अब, लिखि लिखि कहा पठावत॥ ३८१२॥

राग नट ॥ ४४३१ ॥

(ऊधौ) ना हम बिरहिनि ना तुम दास।
कहत सुनत घट प्रान रहत है, हरि तजि भजहु अकास॥
बिरही मीन मरै जल बिछुरै, छाँड़ि जियन की आस।
दास भाव नहिं तजत पपीहा, बरषत मरत पियास॥
पंकज परम कमल मैं बिहरत, बिधि कियौ नीर निरास।
राजिव रवि कौ दोष न मानत, ससि सौं सहज उदास॥
प्रगट प्रीति दसरथ प्रतिपाली, प्रीतम कै बनवास।
'सूर' स्याम सौं दृढ व्रत राख्यौ, मेटि जगत उपहास॥ ३८१३॥

राग नट ॥ ४४३२ ॥

ऊधौ बिनति सुनौ इक मेरी।
जब तैं बिछुरि गए नँदनंदन, काम के दल रहे घेरी॥
देखौ हृदै बिचारि तुमहिं अब, प्रीति रीति सब केरी।
जहँ जाकी निधि तहँ सब सौंपै, ज्यौं मृग नाद अहेरी॥
वै दस मास रतन रस बस तैं, ससि बिनु रैनि अँधेरी।
'सूरदास' स्वामी कब आवहिं, बास करन ब्रज फेरी॥ ३८१४॥

राग सारंग ॥ ४४३३ ॥

मधुकर कहा प्रवीन सयाने।
जानत तीनि लोक की महिमा, अबलनि काज अयाने॥
जे कच कनक कटोरा भरि भरि, मेलत तेल फुलेल।
तिन केसनि क्यौं भस्म चढ़ावत, होरी कैसे खेल॥
जिन केसनि कबरी गुहि सुंदर, अपनै हाथ बनाई।
तिनकौं जटा कहा नीकी हैं, कछु कैसै कहि आई॥
जिन स्रवननि ताटंक खुभी, औ करनफूल खुटलाऊ।
तिन स्रवननि कसमीरी मुद्रा, लै लै चित्र झुलाऊ॥
भाल तिलक, काजर चख, नासा नकबेसरि नथ फूली।
ते सब तजि हमरे मुख मेलत, उज्ज्वल भस्मी खूली॥
जिहिं मुख गीत सुभाषित गावति, करति जु हास बिलास।
तिहिं मुख मौन गहे क्यौं जीजै, घूंघट ऊरध स्वास॥
कंठ सुमाल हार मुकता के हीरा रतन अपार।
ताहीं कंठ बाँधिबे कारन, सिंगी जोग सिंगार!
कंचुकि झीनि झीनि पट सारी, चंदन सरस सछंद।
अब कंथा एकै अति गुदरी, क्यौं उपजी मतिमंद॥

ऊधौ उठी सबै पा लागैं, देख्यौ ज्ञान तुम्हारौ।
'सूर' सु प्रभु मुख फेरि देखिहै, चिरजियौ कान्ह हमारौ॥ ३८१५॥

राग सारंग ॥ ४४३४ ॥

हमतौ दुहूँ भाँति फल पायौ।
जौ गोपाल मिलै तौ नीकौ, नतरु जगत जस छायौ॥
कहँ हम या गोकुल की गोपी, बरनहीन घटि जाति।
कहँ वै श्री कमला के वल्लभ, मिलि बैठी इक पाँति॥
निगम ज्ञान मुनि ध्यान अगोचर, ते भए घोष निवासी।
ता ऊपर अब कहौ देखि धौं, मुक्ति कौन की दासी॥
जोग कथा ऊधौ पालागौ, मति कहौ वारबार।
'सूर' स्याम तजि आन भजै जो, ताकौ जननी छार॥ ३८१६॥

राग मारू ॥ ४४३५ ॥

मोहि अलि दुहूँ भाँति फल होत।
तब रस अधर लेति ही मुरली, अब भइ कुबिजा सौत॥
तुम जु जोग मत सिखवन आए, भस्म चढ़ावन अंग।
इन बिरहिनि मैं कहुँ तुम देखी, सुमन गुहाए मंग॥
काननि मुद्रा पहिरि मेषला, धरे जटा जु अधारी।
ह्याँ है तरल तरचौना कानै, अरु तनसुख की सारी॥
परम वियोगिनि रटत रैनि दिन, धरि मन मोहन ध्यान।
तुम तौ चलौ बेगि मधुबन कौ, जहाँ जोग कौ ज्ञान॥
निसि दिन जीजत है या ब्रज मैं, देखि मनोहर रूप।
'सूर' जोग लै घर घर डोलौ, लेहु लेहु ज्यौं सूप॥ ३८१७॥

राग नट ॥ ४४३६ ॥

ऊधौ मथुरा ही लै जाहु।
आरति हरौ स्रवन नैननि की, मेटहु उर की दाहु॥
बुधि बल बचन जहाज बाहँ गहि, बिरहसिंधु अवगाहु।
पार लगावहु मधुरिपु कै तट, चद तज्यौ जनु राहु॥
देखहिं जाइ रूप कुबिजा कौ, सहि न सकत यह दाहु।
जीवन जनम सुफल करि लेखहिं, 'सूर' सबनि उत्साहु॥ ३८१८॥

राग नट ॥ ४४३७ ॥

लै चलि ऊधौ अपने देस।
मदनगुपाल मिलन मन उमह्यौ, कौन बसै ह्यौं जदपि सुदेस॥
वह मूरति मो हृदै बसति है, मुरलि अधरपुट कुंतल केस।
कुंडल लोल तिलक मृगमद रुचि, गावत नृत्यत नटवर बेस॥
कहा करौं मोपै रह्यौ न जाइ छिन, सब सुखदायक बसत बिदेस।
'सूरज' स्याम मिलन कब ह्वैहैं, दूरि गमन ब्रजनाथ नरेस॥ ३८१९॥

राग गौरी ॥ ४४३८ ॥

सब तैं वहै देस अति नीकौ।
जहँ वै मदन गुपाल हमारे, तहँ जाइ दुख जी कौ॥

सुंदर कमल वदन मुरली धुनि, कित सुख सब्द सुनायौ।
तब तैं थक्यौ मधुप मन उहई, बहुरि न उर मैं आयौ ॥
जैसैं देह स्वास बिनु औरै, त्यौं ब्रज लागत फीकौ।
कहि कहि जतन प्रान राखे, बिनु 'सूर' स्याम प्रिय जी कौ ॥ ३८२० ॥

राग बिहागरौ ॥ ४४३९ ॥

ऊधौ लै चल लै चल।
जहँ वै सुंदर स्याम बिहारी, हमकौं तहँ ले चल ॥
आवन आवन कहि गए ऊधौ, करि गए हमसौं छल।
हृदय की प्रीति स्याम जू जानत, कितिक दूरि गोकुल ॥
आपुन जाइ मधुपुरी छाए, उहाँ रहे हिलि मिल।
'सूरदास' स्वामी के बिछुरै, नैननि नीर प्रबल ॥ ३८२१ ॥

राग सारंग ॥ ४४४० ॥

गुप्त मते की बात कहौ, जो कहौ न काहू आगैं।
कै हम जानैं कै हरि तुमहूँ, इतनी पावहि माँगैं ॥
एक बेर खेलत बृंदावन, कटक चुभि गयौ पाइ।
कंटक सौं कंटक लै काढ्यौ, अपनैं हाथ सुभाइ ॥
एक दिवस बिहरत बन भीतर, मैं जु सुनाई भूख।
पाके फल वै देखि मनोहर, चढे कृपा करि रूख ॥
ऐसी प्रीति हमारी उनकी, बसतैं गोकुल बास।
'सूरदास' प्रभु सब बिसराई, मधुबन कियौ निवास ॥ ३८२२ ॥

राग मलार ॥ ४४४१ ॥

ऊधौ कत ये बातैं चालीं।
कछु मीठी कछु मधुरी हरि की, ते उर अंतर सालीं ॥
तब ये बेली सींचि स्याम घन, अपनौ करि प्रतिपालीं।
अब ये बेली सूखति हरि बिनु, छाँड़ि गए बनमाली।
जबहीं कृपा हुती जदुपति की, सँग रम रास सुखालीं।
'सूरदास' प्रभु तब न मुईं हम, जीवहि बिरह की जालीं ॥ ३८२३ ॥

राग नट ॥ ४४४२ ॥

ऊधौ यहै बिचार गहौ।
कै तन गए भलौ मानैं, कै हरि ब्रज आइ रहौ ॥
कानन देह बिरह दौ लागी, इंद्री जीव जरैं।
बुझैं स्यामघन प्रेम कमल मुख, मुरली बूँद परैं ॥
चरन सरोवर माहिं मीन मन, रहत एकरस रीति।
तुम निरगुन बारु पर डारत, 'सूर' कौन यह नीति ॥ ३८२४ ॥

राग सारग ॥ ४४४३ ॥

ऊधौ हम लायक सिख दीजे।
यह उपदेस अगिनि तैं तातौ, कहौ कौन बिधि लीजै ॥
तुमहीं कहौ इहाँ इतननि मैं, सीखनहारी को है।
जोगी जती रहित माया तैं, तिनहीं यह मत सोहै ॥

कहा सुनत विपरीत लोक मैं, यह सब कोउ कैहै।
देखौ धौ अपने मन सब कोउ, तुमही दूषन दैहै।।
स्रक चंदन वनिता विनोद रस, क्यों विभूति वपु माँजै।
'सूरदास' सोभा क्यों पावत, आँखि आँधरी आँजै।। ३८२५।।

।। ४४४४।।

ऊधौ तुम हौ चतुर सुजान।
हमकौं तुम सोई सिख दीजौ, नदसुवन की आन।।
आमिष है भोजन हित जाकौं, सो क्यों सागहि मान।
ता मुख सेम पात क्यों परसत, जा मुख खाए पान।।
किंगरी स्वर कैसैं सचु मानत, सुनि मुरली की तान।
सुख तौ ता दिन होइ 'सूर' ब्रज, जा दिन आवैं कान्ह।। ३८२६।।

।। ४४४५।।

ऊधौ कहि न सकति इक बात।
जोग सुनत उर ऐसौ लागत, ज्यौं तरु टूटे पात।।
दधि अरु भात हाथ करि लेते, लै कुंजनि मैं खात।
अब सुनियत है धोती पहिरे, चढ़े खराऊँ न्हात।।
अरु कुबिजा पटरानी कीन्ही, कूबर पै इतरात।
कहौ तौ जाइ जहाँ हौ झगरौं, दै कूबर पर लात।।
कुल की लाज कहाँ लौं राखौं, सुनि सुनि हृदय दुखात।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस कौं, गुन मेटे फल जात।। ३८२७।।

राग सारंग।। ४४४८।।

जा दिन स्याम मिलैं सोइ नीकौ।
जोतिष निगम पुरान बड़े ठग, फाँसत जे जिय ही कौ।।
जौ बूझौ तौ ऊतर दीजै, बिनु बूझै रस फीकौ।
अपनैं अपनैं ठौर सबै गृह, हरन भयौ क्यौं सी कौ।।
सुनि रे मधुप मूढ़ ब्रज आयौ, लै सरजस कौ टीकौ।
सुनि रे मधुप मूढ ब्रज आयौ, लै अपजस कौ टीकौ।
चातक मीन कमल घन चाहत, कब मन करत अमी कौ।।
भद्रा भली, भरनि भय हरनी, चलत मेष अरु छींकौ।
'सूर' धरम धरि लाल गुनै जौ, तौ प्रेमी कौड़ी कौ।। ३८२८।।

राग सारंग।। ४४४७।।

ऊधौ हम लायक हमसौं कहौ।
बात विचारि सुहाती कहिऐ, कै अनबोल रहौ।।
भली कहै तुमकौं अति सोभा, अरु पदवी सु लहौ।
यह विपरीति बूझियै तुमकौ, जूवा सुरभि नहौ।।
एते पर फिरि फिरि सिखवत हौ, दृढ करि जोग गहौ।
'सूर' कहै अलि पूरी दीजै, बातनि ही न बहौ।। ३८२९।।

राग सारंग।। ४४४८।।

कबहूँ ऐसौ बात कहौ।
तजहु सोच मिलिहै नँदनंदन, हित करि दुखहि दहौ।।

तुम हरि समाधान कौं, पठए हमसौं कहन सँदेस।
आनि अधिक आरति उपजाई, कहि निरगुन उपदेस॥
इक अति निकट रहत हौ उनकैं, जानत सकल सुभाइ।
सोइ करहु जिहिं पावहिं दरसन, मेटहु अगम उपाइ॥
हम किंकरी कमललोचन की, बस कीन्हीं मृदु हास।
'सूरदास' अब क्यौं विसरत हैं, नख सिख अंग विलास॥ ३८३०॥

राग मलार॥ ४४४९॥

सब जल तजे प्रेम के नातैं।
चातक स्वाति बूँद नहि छाड़त, प्रगट पुकारत तातैं॥
समुझत मीन नीर की बातैं, तऊ प्रान हठि हारत।
सुनत कुरंग प्रेम नहि त्यागत, जदपि ब्याध सर मारत॥
निमिष चकोर नैन नहि लावत, ससि जोवत जुग बीते।
ज्योति पतंग देखि बपु जारत, भये न प्रेम घट रीते॥
कहि अलि क्यौं बिसरत वै बातैं, संग जु करि ब्रजराज।
कैसैं 'सूर' स्याम हम छाँड़ैं, एक देह के काज॥ ३८३१॥

॥ ४४५०॥

मधुकर मधु माधव की जानी।
अरथ सुनत ही प्रान हमारे, हम सनेह घृत सानी॥
जैसैं दीपक तेल तूल बल, अति दीपति परकासैं।
रूप लोभ जोतिहि दरसत हीं, कीट कृपन तन नासैं॥
जैसैं मीन छीन आमिष रस, ग्रसत बाँस अनियारे।
अटकत कंटक कुटिल हृदय मैं, तब नहि जात निकारे॥
जैसैं नाद सुनाइ पारधी, धन कुरंग कौं मोहैं।
कठिन बान संधान तुरत हो, तीखे सर उर पोहैं॥
जैसैं ठग खवाइ मदमोदक, पथिकनि कौं सुख दीन्हौ।
रस बिस्वास बढाइ चाइ सौं, प्रान सहित अथ लीन्हौ॥
ऐसैं मधुकर हरि जी हमसौं, कपट प्रीति बिस्तारी।
रस की ऊँख उखारि 'सूर' प्रभु, बई बिरह की बारी॥ ३८३२॥

राग भैरव॥ ४४५१॥

ऊधौ को हरि हितू हमारे।
वै राजा ह्वै रहे मधुपुरी, दासी कहत दुलारे॥
तब लौं आस हुती आवन की, सुने न वचन तिहारे।
केहिं कैं रूप आनि उर अंतर, जोग जुगुति गहि डारे॥
नृप अभिमान जानि छाँड्यौ ब्रज, कित अहीर बेचारे।
मार्‌यौ कंस काज कुबिजा के, 'सूर' कहावत भारे॥ ३८३३॥

राग मलार॥ ४४५२॥

ऊधौ जौ हरि हितू तुम्हारे।
तौ तुम कहियौ जाइ कृपा करि, ए दुख सबै हमारे॥
तन तरिवर उर स्वास पवन मैं, बिरह दवा अति जारे।
नहिं सिरात नहिं जात छार ह्वै सुलगि सुलगि भए कारे॥

जद्यपि प्रेम उमँगि जल सीचे, बरपि बरपि घन हारे।
जौं सींचे इहिं भाँति जतन करि, तौ एतै प्रतिपारे॥
कीर कपोत कोकिला चातक, वधिक बियोग बिडारे।
क्यौ जीवै इहिं भाँति 'सूर' प्रभु, ब्रज के लोग विचारे॥ ३८३४॥

राग धनाश्री॥ ४४५३॥

हमै तौ इतनै ही सौ काज।
कैसैहू अलि कमलनैन कौ, लै आवहु ब्रज आज॥
और अनेक उपाइ तुम्हारै, करौ सकल मुख राज।
कैसे वै निवहत अवलनि पै, कठिन जोग के साज॥
नख सिख सुभग स्याम दरसन बिनु, जीवन जनम वृथा जु।
'सूरदास' मन रहत कौन विधि, बदन बिलोकै बाजु॥ ३८५३॥

राग धनाश्री॥ ४४५४॥

अब हरि कौन के रस गिधे।
सकल नहि निरवारि ऊधौ, बदरी ज्यौ समि बिधे॥
वार तिहिं बन बन डुलाई, तजि सकल कुलकानि।
अध करि अब छाँड़ि गए हम, बिनु लकुट बिनु पानि॥
जतन गुन निरगुन भए सब, मरन की अभिलाप।
बिना चरनसरोज देखै, जरै देह जु राख॥
परी फद वियोग सूनै, तजति कुमुद निवास।
बिना पुष्कर मीन कैसै, जियै 'सूरजदास'॥ ३८३६॥

राग देवगिरि॥ ४४५५॥

अब हरि कैसे कै है रहत।
सुनि यह दसा दुसह गोकुल की, ऊधौ का जु कहत॥
देखि सखी करुना अति इनकी, उलटे चरन गहत।
तुमकौ चाहि अधिक करि माई, अँखियाँ आँसु वहत॥
सुनियत है यह बात जु पर दुख, नाही कबहुँ सहत।
उपजी परम प्रतीति 'सूर' यह, दुसह दई सु लहत॥ ३८३७॥

राग कान्हरौ॥ ४४५६॥

हरि ठाकुर लोगनि सौ ऊधौ, कहि काहे की प्रीति।
जौ कीजै तो ह्वैहै जलधर, रवि की ऐसी रीति॥
जैसै मीन कमल चातक कौ, ऐसै दिन गए बीति।
तरफत, जरत, पुकारत, निसिदिन नाहिन ह्याँ कछु नीति॥
मन हठि परयौ कबंध जुद्ध ज्यौ, हारहुँ मानत जीति।
रुकत न प्रेम समुद्र 'सूर' प्रभु, बारू ही की भीति॥ ३८३८॥

राग सारंग॥ ४४५७॥

को गोपाल कहाँ के वासी, कासौ है पहिचानि।
तुम धौं जोग कौन के सिखए, इहाँ कहत हौ आनि॥
अपनी चोप मधुप उडि बैठत, भोर भलौ रस जानि।
पुनि वह बेलि बढ़ौ कै सूकौ, वाहि कहा हित हानि॥

प्रथम वेनु धुनि करत हरत मन, राग रागिनी ठानि।
पुनि वह व्याध बिसास विवस करि, हनत विषम सर तानि ।।
पय प्यावत पूतना सँहारी, छले जु वलि से दानि।
सूपनखा नासिका निपाती, 'सूर' सदा यह वानि ।। ३८३९ ।।

राग मलार ।। ४४५८ ।।

मधुकर कौन मनायौ मानै।
अविनासी अति अगम तुम्हारौ, कहा प्रीति रस जानै ।।
सिखवहु जाइ समाधि जोग रस, जे सब लोग सयाने।
हम अपनै व्रज ऐसहिं रहिहै, विरह वाइ बौराने ।।
जागत सोवत सपन रैन दिन, उहै रूप परवाने।
वालमुकुंद किसोरी लीला, सोभा सिंधु समाने ।।
जिनके तन मन प्रान 'सूर' सुनि, मृदु मुसकानि विकाने।
परी जु पयनिधि अल्प बूंद जल, सु पुनि कौन पहिचानै ।। ३८४० ।।

राग सारंग ।। ४४५६ ।।

अब तौ जोर कटक कौ पायौ।
वाजी ताँत राग पहिचान्यौ, जो निरगुन लिखि ल्यायौ ।।
जोगी जहाँ होइ अगवानी, तुवा तहाँ वुवावै।
जाकै कुल जैसी चलि आई, तैसी रीति चलावै ।।
कुबिजा जहाँ होइ पटरानी, तुमसे होंड वजीर।
'सूरदास' व्रज जुवतिनि ऊपर, क्यौ न करौ उपचीर ।। ३८४१ ।।

राग सारंग ।। ४४६० ।।

हरिसुत सुत हरि के तन आहि।
ह्याँ को कहै कौन की बातै, ज्ञान ध्यान कौ काहि ।।
को मुख भ्रमर तासु जुवती का, को-जिन कस हते।
हमरे तौ गोपतिसुत अधिपति, वन्नि न औरनि तै ।।
मोरज रंध्र रूप रुचिकारी, चितै चितै हरि होत।
कवहूँ कर करनी समेति लै, नैकु मान कै सोत ।।
ता रिपु समै संग सिसु लीन्हे, आवत है तन घोप।
'सूरदास' स्वामी मन मोहन, कत उपजावत दोप ।। ३८४२ ।।

राग सारंग ।। ४४६१ ।।

अब हरि और भए है माई, वसति इतनियै दूरि।
मधुकर हाथ सदेसौ पठयौ, चतुर चातुरी चूरि ।।
रूप रासि सव गुन की परिमिति, स्याम सजीवन मूरि।
तिनसौ कहत मनहि मन समुझहु, है सवही भरि पूरि ।।
इक सुनि 'सूर' ऐसही या तन, रही विरह झकझूरि।
तापर छपय कियौ चाहत है, कोड़लाहू तै धूरि ।। ३८४३ ।।

राग विहागरौ ।। ४४६२ ।।

अब अलि सुनत स्याम की वात।
नूतन नेह कियौ कुविजा सन, तज्यौ पुरातन नात ।।

परसत जाइ कपट स्वारथ तजि, कमल कोप निसि बासो।
भ्रमत भ्रमर सुख श्रौर सुमन सँग, मधुप एक इक रासी॥
इती दूरि मुख अवधि बदी निज, सोऊ भई न साँची।
कीजति कहा प्रतीति सँदेसनि, 'सूर' विरह को काँची॥ ३८४४॥

राग केदारौ॥ ४४६३॥

कहा कोऊ जानै पर पीर।
नदनँदन कै बिछुरे सखि री, जेती सही सरीर॥
कहि कहि कथा मधुप समुझावत, मन राखहु धरि धीर।
नैन मीन कैसै सचु पावत, बिनु हरि-दरसन-नीर॥
जोग समाधि कहा हम जानै, ब्रजवासिनी अहीर।
सोइ कीजै ज्यौं मिलहि 'सूर' प्रभु, बहुरि तरंगिनि तीर॥ ३८४५॥

राग कान्हरौ॥ ४४६४॥

हम तिय मृतक जियत ससि साखी।
तुम अलि रबि हित कमल बिसेषी हरे बिकल मधु माखी॥
मुरली अधर सुधा धुनि सुनि, सुख सच्यौ स्रवन दुवार।
मधुहारी अक्रूर बधिक सुख अवधि लगाई छार॥
मन कौ बिरह नैन कह जानै स्तुति मन तुही सुनावै।
'सूर' भस्म अँग लगी कुटिलता, तउ जोगै गुन गावै॥ ३८४६॥

राग कान्हरौ॥ ४४६५॥

हमकौ दुख भई ये सेजै।
ऊधौ कमलनयन की बतियाँ छिदि छिदि जाति करेजै॥
बृंदावन, गोवर्धन यह बन, फिरि फिरि सुरति दिवावै।
जिहि निसि जहाँ स्याम खेलत हे, बल सँग गऊ चरावै॥
देखे बनै पखान महूरी, मोरपखा मनि गुंज।
'सूरदास' प्रभु स्याम खिलौना, सकल प्रेम के पुंज॥ ३८४७॥

राग रामकली॥ ४४६६॥

हमरी सुरति लेत नहिं माधौ।
तुम अलि सब स्वारथ के गाहक, नेह न जानत आधौ॥
निसि लौ कोप अभ्यंतर जो हित कहौ सो थोरी।
भ्रमत भोर सुख श्रौर सुमन सँग, कमल देत नहिं कोरी॥
राका रास मास रितु जेती रजनि प्रीति नहि थाही।
बँस-सधि-सुख तज्यौ 'सूर' हरि, गए मधुपुरी माही॥ ३८४८॥

राग धनाश्री॥ ४४६७॥

(कैसे जीवै) ऊधौ हरि परदेस रहे।
गरजि गरजि घन बरषन लागे, नदिया नार बहे॥
कहि पठयौ मधुपुरी सखी री, मेरे हुतै चरन गहे।
बासर गए निहारत मारग चातक रैनि डहे॥
कासौ कहौ तपत मन निसि दिन, का यह पीर लहै।
हमहूँ किन लै जाहि 'सूर' प्रभु को ब्रज बिपति सहै॥ ३८४९॥

राग भैरवी ॥ ४४६८ ॥

अब कैसै ब्रज जात बस्यौ।
हृदय दहत जमुना बिनु देखे जहाँ जहाँ नँदलाल हँस्यौ॥
तब वै धेनु रहति प्रमुदित चित प्रभुहि बिमुख तृन दंत कस्यौ।
ते अब बिलख बदन कुस डारति मनहु निकट केहरि दरस्यौ॥
नैन नीर मोचति सोचति है खजरीट जल पवन खस्यौ।
'सूरदास' बिनु ललित गोपालहि, गोकुल कुल अहि बिरह डस्यौ॥ ३८५० ॥

राग धनाश्री ॥ ४४६९ ॥

हरि हमकौ यौ काहे बिसारी।
प्रेम तरँग बूड़त ब्रजबासी तरत स्याम सौ इहाँ री॥
रिपु माधव, पिक बचन, सुधाकर, मरुत मद गति भारी।
सहि न सकति अति बिरह त्रास तन, आगि सलाकनि जारी॥
ज्यौ जल थाकै मीन कहा कर, त्यौ हरि मेलि अडारी।
बिनै अधोमुख नैन 'सूर' प्रभु, कहियौ बिपत्ति हमारी॥ ३८५१ ॥

राग धनाश्री ॥ ४४७० ॥

जौ पै इहै हुती उनकै मन।
तौ तब कमलनैन हम कारन, कहा किए वै जतन।
बिष जल, ब्याल, बरुन, बरषानल, अखिल असुभ हति राखे।
संतत संग रहत काहू मिस, निठुर बचन नहि भाषे॥
उन बिपदनि कुंचित जौ करते, तौ नहिं जीवित रहती।
बिधि बस नाव बहुरि फिरि मिलती, इतौ बिलँब कत सहती॥
कहिऐ कहा जु सब जानत है, या तनु की गति ऐसी।
'सूरदास' प्रभु हित सूचित कै, बेगि प्रगटवी तैसी॥ ३८५२ ॥

राग मलार ॥ ४४७१ ॥

मधुकर दीन्ही प्रीति दिनाई।
बातनि सुहृद कर्म कपटी के, चलनि-चार के भाई॥
प्रेम बीच बघबार सुधा रस, अधर, माधुरी प्याई।
सो अब जाइ खग्यौ उर अतर, औषधि कछु न बसाई॥
गरल दान देते बरु नीकौ, सावधान ह्वै खाई।
कै मारै कै काज सरै पै, दुःख न देख्यौ जाई॥
कहि मारै स॰ 'सूर' कहावै, मित्र द्रोह न भलाई।
'सूरदास' ऐसे अलि जग मै, तिनकी गति नहिं गाई॥ ३८५३ ॥

राग धनाश्री ॥ ४४७२ ॥

मोहन सौ मुख बनत न मोरे।
जिन नैननि मुख चंद बिलोक्यौ, ते नहिं जात तरनि सौ जोरे॥
मुनि मन मंडन जोग कमठ बिनु, मंदर भार सहत कहि कोरे।
बँधत नही है कमल के बंधन, कुंजर क्यौऽब रहत बिनु तोरे॥
नीलांबुज, तन नील, बसन, मनि, चितै न जात धूप के भोरे।
'सूर' भृंग जे कमल के बिरही, चंपक बन लागत चित थोरे॥ ३८५४ ॥

॥ ४४७३ ॥

ऊधौ यह न होइ रस रीति।
सोऊ सठ जो कमलनयन कौ, कहत बात विपरीति॥
सत जुग सुनत प्रगट गुन गावत, कहि कुबिजा के मीत।
सोधि न परत भरे भाजन मैं, जो टोहै इक सीत॥
तुम उपदेस नीति लै आए, हुती या ब्रजहि अनीत।
देह नेह पहिलै मन बाँध्यौ, 'सूर' स्याम के गीत॥ ३८५५॥

राग सोरठ ॥ ४४७४ ॥

बिलग हम मानैं ऊधौ काकौ।
तरसत रहे वसुदेव देवकी, नहि हित मातु पिता कौ॥
काके मातु पिता को काकौ, दूध पियौ हरि जाकौ।
नंद जसोदा लाड़ लडायौ, नाहि भयौ हरि ताकौ॥
कहियौ जाइ बनाइ बात यह, को हित है अबला कौ।
'सूरदास' प्रभु प्रीति है कासौं, कुटिल मीत कुबिजा कौ॥ ३८५६॥

राग सोरठ ॥ ४४७५ ॥

उघरि आए कान्ह कपट की खानि।
सरबस हरचौ बजाइ बाँसुरी, अब छाँड़ी पहिचानि॥
जिन पय पियत पूतना मारी, दानव करी न हानि।
बलि छलि बाँधि पताल पठाए, नैकु न कीन्ही कानि॥
जसैं बधिक अधिक मृग बिधवत, राग रागिनी ठानि।
अवधि आस परतीति ओट दे, हनत विषम सर तानि॥
जैसे नटमल टरत न उर तैं, त्यौं ऊधौ तुम जानि।
'सूरदास' प्रभु कौं जो भावै, आयसु माथैं मानि॥ ३८५७॥

राग सारंग ॥ ४४७६ ॥

जीवन मुख देखे कौ नीकौ।
दरस, परस दिन राति पाइयत, स्याम पियारे पी कौ॥
सूनौ जोग कहा लै कीजै, जहाँ ज्यान है जी कौ।
नैननि मूँदि मूँदि कह देखौं, बंधौ ज्ञान पोथी कौ॥
आछे सुदर स्याम हमारे, और जगत सब फीकौ।
खाटी मही कहा रुचि मानै, 'सूर' खवैया घी कौ॥ ३८५८॥

राग सारंग ॥ ४४७७ ॥

मधुकर को मधुबनहि गयौ।
काकैं कहे सँदेसौ ल्याए, किन लिखि लेख दयौ॥
को वसुदेव देवकीनंदन, को जदुबंस उजागर।
ह्याँ तिनसौं पहिचानि न काहू, फिरि लै जैयै कागर॥
गोपीनाथ राधिका वल्लभ, जसुमति कुँअर कन्हाई।
दिन प्रति लेत दान बृंदावन, दूनी रीति चलाई॥
मधुकर तुम हौ चतुर सयाने, कहत और की और।
'सूर' सपथ काहू बहकायौ, कै भूलै वह ठौर॥ ३८५९॥

राग केदारौ ।। ४४७८ ।।

नेह न होइ पुरानो रे अलि।
जल प्रवाह ज्यौं सोभा सागर, नित नव तन व्रजनाथ इहाँ वलि ।।
जीवत हैं आनंद रूप रस, विनु प्रतीति क्यौ मीन चढ़ै थल।
अमी अगाध सिंधु सर विहरत, पीवतहू न अघात इते जल ।।
दिन दिन बढत नीर नलिनी ज्यौ, स्याम रंग मैं नैन रहे रलि।
'सूर' गुपाल प्रीति जिय जाकैं, छूटति नाहिन नेह सती सलि ।। ३८६० ।।

राग धनाश्री ।। ४४७९ ।।

अपने सगुन गोपालहिं माई इहि विधि काहै देति।
ऊधौ की इन मीठी वातनि, निर्गुन कैसैं लेति ।।
धर्म, अर्थ, कामना सुनावत, सब सुख मुक्ति समेति।
काकी भूख गई मन लाड़ू, सो देखहु चित चेति ।।
जाकौं मोक्ष विचारत बरनत, निगम कहत है नेति।
'सूर' स्याम तजि को भुस पटकै, मधुप तुम्हारे हेति ।। ३८६१ ।।

राग धनाश्री ।। ४४८० ।।

हमरी सुधि भूली अलि आए।
अब कछु कान्ह कहत हैं औरै, समुझि सखा गुन गाए ।।
निज स्वारथ रस रीति समुझ उर, विकल निमेप न चाहे।
कहतहिं सुगम सबै कोउ जानत, कठिन हेत निरबाहे ।।
अब परतीति वात को मानै, कहत है स्याम पराए।
कब लौ चलै कपट कौ नातौ, 'सूर' सनेह बनाए ।। ३८६२ ।।

राग धनाश्री ।। ४४८१ ।।

मधुकर हम सब कहा करैं।
पठए हौ गोपाल हेत करि, आयसु त न टरैं ।।
रसना उर वारौ ऊधौ पर, इहिं निरगुन कै साथ।
यह पै नैकु विलग जनि मानहु अँखियाँ नाहिन हाथ ।।
कौन भाँति गुन कहौ तिहारे, चित कौ धार धरावौं।
महा विचित्र नीर विनु नौका जल विनु मीन जियावौं ।।
सेवा हीन अपूरब दरसन, कब आवैंगे फेरि।
'सूरदास' प्रभु सौं यौं कहियौ, केरा पास ज्यौं वेरि ।। ३८६३ ।।

राग गौर. ।। ४४८२ ।।

रे अलि जनम करम गुन गाइ।
हम अनुरागिनि जसुमतिसुत की, नीरस कथा न भाइ ।।
कैसै कर गोवरन धारयौ, कैसैं केसी मारयौ।
काली दमन कियौं कैसैं, अरु बक कौ वदन विदारयौ ।।
किहिं विधि नंद महोत्सव कीन्हौं, किहि विधि गोपी धाई।
पट भूषन नाना भाँतिनि के, जुवती जन पहिराई ।।
दधि-माखन-भाजन कैसैं करि, गोप सखा लै आए।
वन की धातु चित्र अँग कीन्हे, नाचत भेष सुहाए

गृह बन कछु न सुहात स्याम बिनु, जुग सम बीतत जाम।
'सूर' मरहिंगी बिकल बियोगिनि, रटि रटि माधौ नाम ॥ ३८६४ ॥

राग नट ॥ ४४८३ ॥

मधुप आए जोग गथ लै, हाँसि औ दुख को सहै।
दंड मुद्रा भस्म कथा मृग त्वचा, आसन दहै ॥
स्याम तैं कोऊ निठुर नाहीं, सखा जिन के रावरे।
जगे ऊपर लौन लावहि, कौन तिनतैं बावरे ॥
स्याम के गुन कह बखानो, जल बँधे जिन थल किए।
संग खेल खिलाइ हमकौं, सोच तौ इतने दिए ॥
एक दिन बैकुंठवासी, रास बृंदावन रच्यौ।
सोइ सुरूप बिलोकि माधौ, आइ ईहि बिधि तन सँच्यौ ॥
सरद जामिनि इंदु सोभा, लाज तजि कुंजन गईं।
बाँसुरी के सब्द सुनि, बधिक का मृगिनी भईं ॥
साँवरी सी मदन मूरति, हृदय माही रमि रही।
और तौ कछु चित न आवत, कठिन ब्रत दृढ़ करि गही ॥
मंदभागिनि करमहीनी, दोष काहि लगाइयै।
प्रानपति सौं नेह कीन्हौ, भाग लिख्यौ सु पाइयै ॥
हम न जान्यौ जनम रैनी, रैनि कौ सुपनौ भयौ।
अँजुली जल घटत जैसैं, तैसैं ही यह तन गयौ ॥
बेद आगैं भेद कैसौ, छेद तौ छाती किए।
प्रान दिए हम जगत जानत, सुख सबै कुबिजा लिए ॥
जोग जप तप ध्यान पूजा, यह हृदै नहिं आवई।
सुधा रस जिन स्वाद चाख्यौ, तिन्हैं और न भावई ॥
ज्ञान दृढ़ तप ध्यान पूजा, हरि चरन जिनके हिऐं।
बिमुख है जे 'सूर' स्वामी, फल कहा तिनके जिऐं ॥ ३८६५ ॥

राग मलार ॥ ४४८४ ॥ उद्धववचन

वे हरि सकल ठौर के बासी।
पूरन ब्रह्म अखंडित मंडित, पंडित मुनिनि बिलासी ॥
सप्त पताल ऊरध अध पृथ्वी, तल नभ बरुन बयारी।
अभ्यंतर दृष्टी देखन कौं, कारन रूप मुरारी ॥
मन बुधि चित अहंकार दसेंद्रिय प्रेरक थभनकारी।
ताकै काज वियोग बिचारत, ये अबला ब्रजनारी ॥
जाकौं जैसौ रूप मन रुचै, सो अपबस करि लीजै।
आसन बैसन ध्यान धारना, मन आरोहन कीजै ॥
षट दल अठ द्वादस दल निरमल, अजपा जाप जपाली।
त्रिकुटी संगम ब्रह्म द्वार भिदि, यौं मिलिहैं बनमाली ॥
एकादस गीता स्रुति साखी, जिहिं बिधि मुनि समुझाए।
ते सँदेस श्रीमुख गोपिनि कौं, 'सूर' सु मधुप सुनाए ॥ ३८६६ ॥

राग कर्नाटी ॥ ४४८५ ॥ गोपीवचन

देखि रे प्रगट द्वादस मीन।
ऊधौ एक बार नँदलाल राधिका, आवत सखी सहित रस भीन ॥

गए नव कुंज, कुसुमनि के पुंज, करै अली गुंज, सुख हम लवलीन।
पट उडुगन, पट मनिधरहू राजत हैं, चौबिस धातु चित्र केहि कीन।।
पट इंदु द्वादस पतंग मनु मधुप सुनि, खग चौवन माधुरि रस पीन।
द्वादस बिंब, सौ बानवे बज्र कन, षट दामिनि, जलजनि हँसि दीन।।
द्वादस धनुष द्वादसै बिपका मोहन मन पट चिबुक चिन्ह चित चीन।
द्वादस व्याल अधोमुख झूलत, मानौ कंज दल सौबीस बंसीन।।
द्वादसै मृनाल द्वादस कदली खंभ, द्वादस दारिम सुमन प्रवीन।
चौबीस चतुस्पद ससि सौबीस मधुकर, अंग अग रस कंज नवीन।।
नील नीलै मिली घटा दामिनि मनौ, सब सिगार सोभित हरि हीन।
फिरि फिरि चक्र गगन मैं अमी बतावत, जुवती जोग मौन कहु कीन।।
बचन रचन रसरास नदनँदन तै, जोग पौन हिरदै लवलीन।
नंद जसुदा दुखित गोपी ग्वाल गोसुत, मलिन दिन ही दिन दुखीन।।
बकी बका सकटा तृना केसी बृषभ, बिन गोपाल बैर इन कीन।
ऊधौ परै पाइँ 'सूरज' प्रभु मिलाइ, आरति हरै भईं तन छीन।।३८६७।।
ऊधौ परै पाइँ 'सूरज' प्रभु मिलाइ, आरति हरै भईं तन छीन।।

राग गौरी।। ४४८६।।

मधुकर ल्याए जोग सँदेसौ।
भली स्याम कुसलात सुनाई, सुनतहिं भयौ अँदेसौ।।
आस रही जिय कबहुँ मिलन की, तुम आवत ही नासी।
जुवतिनि कहत जटा सिर बाँधौ, तौ मिलिहै अबिनासी।।
तुमकौ निज गोकुलहिं पठाए, ते बसुदेव कुमार।
'सूर' स्याम हमतै कहुँ न्यारे, होत न करत बिहार।। ३८६८।।

राग मलार।। ४४८७।।

मधुकर बादि बचन कत बोलै।
आपुन चपल चपल कौ संगी, चपल चहूँ दिसि डोलै।।
इन बातनि कौ कौन पत्यैहै, अंतर कपट न खोलै।
कंचन काँच कपूर कटु खरी, एकहि सँग क्यौ तोलै।।
अब अपनी सी हमहिं सिखावत, मति भूलहु यह जोलै।
'सूर' स्याम बिनु रटत बिरहिनी, बिरह दाग जनि छोलै।। ३८६९।।

राग नट।। ४४८८।।

ऊधौ सुनत तिहारे बोल।
ल्याए हरि कुसलात धन्य तुम, घर घर, पार्यौ गोल।।
कहन देहु कह करै हमारौ, बरु उठि जैहै झोल।
आवत ही याकौं पहिचान्यौ, निपटहिं ओछौ तोल।।
जिनकै सोच नही कहिबे कौ, ये बहु गुननि अमोल।
जानी जाति 'सूर' हम इनकी, बतचल चंचल लोल।। ३८७०।।

।। धनाश्री।। ४४८९।।

मीठी बात हमारे आगै, बार-बार अलि कहा सुनावहु।
हमहिं खिझाइ आपु पति खोवत, यामैं कहौ कहा तुम पावहु।।

कह्यौ न जाइ नगर नारिनि सौं वै सुनिहै उनकौं समुझावहु।
व्रजवासिनी अहीरि विरहिनी, तिन आगैं तुम काहे गावहु॥
लोचन गए स्याम सँग ही सँग, वडे चतुर तौ उनहिं वुलावहु।
'सूर' चकोर चंद्र दरसन तजि, कैसे जियैं तरनि दरसावहु॥३८७१॥

राग धनाश्री॥ ४४९०॥

मधुकर कहा करन व्रज आए।
जोग ज्ञान हमकौं परमोधन, हरि तौ नहीं पठाए॥
जिहिं मुख मुरली धरि अद्भुत सुर, गाइ वजाइ रिझाए।
तिहिं मुख स्याम कहैंगे ऐसे, यह तौ तुमहिं वनाए॥
अंग अग आभूपन अपने, कर करि हमहि वनाए।
'सूरदास' प्रभु कैसैं तुम कर, कंथा जोरि पठाए॥ ३८७२॥

राग विलावल॥ ४४९१॥

मधुकर तू काहैं उठि धायौ।
और वैर कवहूँ नहि देख्यौ, हरि जासूसी आयौ॥
हमरैं कहा देखिहै रे तू, अपनौ ही मन सोधौ।
स्याम स्याम तन सवै एक से, वै अक्रूर तुम ऊधौ॥
तू तौ वहुत पुहुप कौ लंपट, वै कुविजा गृहवासी।
ह्याँ तौ उनकौ कछू न विगरचौ, 'सूर' सदा हिय वासी॥ ३८७३॥

राग विलावल॥ ४४९२॥

क्यौं अलि गवन कियौ मथुरा, तैं कहि धौ कौन विचार।
जनियत है सोई मुख मृदु छवि, देखत नंदकुमार॥
सभा समिति गुन ज्ञान ध्यान मैं, नहिं व्रज भजन प्रकार।
यह सूच्छम पथ घोष नारि कौ, तुम सिर जदुकुल भार॥
कहा वूझियत प्राननाथ विनु, सोधि वचन स्रुति सार।
सुनि सुनि मुख झूठनि के झूर्टान, पढ़त वड़ौ विस्तार॥
इहाँ जोग अरु अगम अगोचर, सैलधरन आधार।
'सूरदास' सुख कहँ लौ कहिऐ, आवै अतिथि अकार॥ ३८७४॥

राग धनाश्री॥ ४४९३॥

कहा कहत रे मधु मतवारे?
आयौ धाइ जोग उपदेसन, प्रेम भजन गहि डारे॥
जिहिं सुख सुधा स्याम रस अँचवत, अव पीवै जल खारे!
यह अक्रूरहु तैं अति खोटौ, डरति जु हौ अहि कारे॥
हम जान्यौ यह स्याम सखा है, यह तौ औरैं न्यारे।
'सूर' कहा याके मुख लागत, कौन याहि अव गारे॥ ३८७५॥

राग रामकली॥ ४४९४॥

उधौ कहा कहत विपरीत।
जुवतिनि जोग सिखावन आए, यह तौ उलटी रीति॥
जोतत धेनु दुहत पय वृप कौं, करन लगे जु अनीति।
चक्रवाक ससि कौं क्यौं जानै, रवि चकोर कहँ प्रीति॥

पाहन तरैं सोलह जौ वूड़ै, तौ हम मानैं नीति।
'सूर' स्याम प्रति अंग माधुरी, रही गोपिका जीति॥ ३८७६॥

राग रामकली॥ ४४९५॥

उत्तर कत न देत अलि नीच?
ग्रीषम तेज सहति क्यौ वेली वढ़ी कमल कर सीच॥
मुरली अधर-सुधा-रस आनन, दैं पोपी दिन रात।
अव ये काम धाम दासी के, सुरति रीति की वात॥
समुझी, स्याम करी स्वारथ की, रचि गुन कपटी साज।
'सूर' एक राखत जो नाता, जगत कहत व्रजराज॥ ३८७७॥

राग कल्यान॥ ४४९६॥

सुरि उत्तर किन दै रे मधुकर, वात सखी आनन की?
निकट रहत यातैं वूझति हौ, कथा चलत कानन की?
कैसैं वेप रहत मनमोहन, कौन प्रिया प्रानन की?
को छवि निरखत वदन कमल की, कासौं मन मानन की?
तुम अक्रूर, वसुदेव, देवकी, सभा भरी ज्ञानन की।
क्यौं करि सकैं विपय जल तीरथ, काहु चितै चानन कीं॥
कहिहौ सवैं प्रान नायक सौं, तुम्हरे गुन गानन की।
'सूर' सुनत फीकौ भयौ जोग जु, गोपी मन ध्यानन की॥ ३८७८॥

राग आसावरी॥ ४४९७॥

मधुकर जाहि कह्यौं करि मेरौ।
पीत वसन तन स्याम लाज करि, राखति परदा तेरौ॥
इहिं व्रज कौ उपदेसन आयौ, कत जु रह्यौ करि डेरौ।
इते मान ये सखी महा सठ, छाँड़ति नाहीं घेरौ॥
ऐसी वात कहौ तुम तिनसौं, होइ जु कहिवै लायक।
इहाँ जसोदा कुँअर हमारे, छिन छिन प्रति सुखदायक॥
जौं तू पुहुप पराग छाँड़ि कैं, करैं ग्राम वसि वास॥
तौ हम 'सूर' यहौ करि देखैं, निमिप न छाँड़ैं पास॥ ३८७९॥

॥ ४४९८॥

ऊधौ हमरी सौं तुम जाहु।
यह गोकुल पूनौ कौ चंदा, तुम ह्वै आए राहु॥
ग्रह के ग्रसे गुसा परगास्यौ, अव लौं करि निरवाहु।
सव रस लै नँदलाल सिधारे, तुम पठए वड़ साहु॥
जोग वेचि कै तंदुल लीजै, वीच वसेरे खाहु।
'सूरदास' जवहीं उठि जैहौ, मिटिहै मन कौ दाहु॥ ३८८०॥

॥ ४४९९॥

ऊधौ कहत वात ह्वै ढीठ।
मोहन क्यौं न होइँ निरमोही, तुमसे संग वसीठ॥
मधुवन नाम फँदा करि राख्यौ, रचे सकल ठग ईठ।
स्त्रवन सुनत ऐसी लागत है, गरल कहत ज्यौं मीठ॥

अति सुकुमारि कूवरी रीझै, मति कोउ लावै दीठ।
'सूर' स्याम यातैं नहिं आवत, समुझि दई ब्रज पीठ॥ ३८८१॥

राग रामकली॥ ४५००॥

ऊधौ मौन साधि रहे।
जोग कहि पछितात मन मन, वहुरि कछु न कहे॥
स्याम कौ यह नहीं बूझै, अतिहि रहै खिसाइ।
कहा मैं कहि कहि लजानौ, नार रह्यौ नवाइ॥
प्रथम ही कहि वचन एकै, रह्यौ गुरु करि मानि।
'सूर' प्रभु मोकौं पठायौ, यहै कारन जानि॥ ३८८२॥

राग कल्यान॥ ४५०१॥

कहा न कीजै अपने काजैं।
दिन दस ऐसैहू करि देखौ, जौ हरि मिलैं जोग के साजैं॥
माथै जटा पहिरि उर कथा, ल्यावहु भस्म अग मुख माजैं।
सिंगी दंड मेखला सेली, लोचन मूँदि रहौ विनु आँजैं॥
सनमुख ह्वै सर सहौ सयानी, नाहिन वचत आजु कै भाजैं।
जोग विरह के वीच परम दुख, मरियत है इहिं दुसह दुराजैं॥
ऊधौ कहै सत्य करि मानहु, वृथा वदति सजनी वेकाजैं।
ज्यौं जमुनाजल छाँड़ि 'सूर' प्रभु, लीन्हे वसन तजौ कुल लाजैं॥ ३८८३॥

राग सारंग॥ ४५०२॥

कहा मत दीन्ही हमहिं गुपाल।
आवहु री सखि सव मिलि सोधैं, जो पावैं नँदलाल॥
घर वाहर तैं वोलि लेहु सव, जावदेक ब्रजवाल।
कमलासन वैठहु री माई, मूँदहु नैन विसाल॥
षटपद कही सोउ करि देखी, हाथ कछू नहिं आई।
सुंदर स्याम कमल दल लोचन, नैंकु न देत दिखाई॥
फिरि भई मगन विरह सागर मैं, काहूँ सुधि न रही।
पूरन प्रेम देखि गोपिनि कौ, मधुकर मौन गही॥
स्रवननि सुनि पुनि धुनि चातक की, प्रान पलटि तन आए।
'सूर' सु अवकैं टेरि पपीहा, विरही मरत जिवाए॥ ३८८४॥

राग सारंग॥ ४५०३॥

मधुकर भलैंहि आए वीर।
दरस दुर्लभ सुलभ पाए, जानिहौ पर पीर॥
कहत वचन बिचार विनु वहु, सोधिहौ मन माहिं।
प्रानपति की प्रीति ऊधौ, है कि हमसौ नाहिं॥
कौन तुमसौं कहै मधुकर, कहत जोग जु नाहिं।
प्रीति की कछु रीति न्यारी, जानिहौ मन माहिं॥
नैन नींद न परै निसि दिन, विरह दाही देह।
कठिन निरदै नंद कै सुत, जोरि तोरयौ नेह॥
कौन तुमसौं कहै मधुकर, गुप्त प्रगटित वात।
'सूर' के प्रभु क्यौं वनै, जौ करै अवला घात॥ ३८८५॥

राग संकराभरन ॥ ४५०४ ॥

मधुकर भली करी तुम आए।
वै बातैं कहि कहि या दुख मैं, ब्रज के लोग हँसाए॥
मोर मुकुट मुरली पीतांबर, पठवहु सौज हमारी।
आपुन जटाजूट, मुद्रा धरि, लीजै भस्म अधारी॥
कौन काज वृंदावन कौ सुख, दही भात की छाक।
अब वै स्याम कूबरी दोऊ, बने एक ही ताक॥
वैं प्रभु बड़े सखा तुम उनके, जिनकैं सुगम अनीति।
या जमुना जल कौ सुभाव यह, 'सूर' विरह की प्रीति॥ ३८८६॥

राग षटपदी ॥ ४५०५ ॥

ऐसे मधुप की बलि जाउँ।
मधुबन की बातैं कही, लै लै हरि नाउँ॥
जाकौ रूप सब्द नीकौ, प्रिय के गुन गावै।
जद्यपि यह प्रेम-हीन, बहुरौ समुझावै॥
स्रवन कथा हित हमारैं, सुनि सुनि नित जीजै।
'सूरज' प्रभु आवैंगे, इन जान न दीजै॥ ३८८७॥

राग सारंग ॥ ४५०६ ॥

ऊधौ ते कत चतुर कहावत।
जे नहिं जानैं पीर पराई, ह्वै सरबज्ञ जनावत॥
जो पैं मीन नीर तैं बिछुरैं, को करि जतन जिवावत।
प्यारे प्रान जात जल बिनु, तिहिं सुधा समुद्र बतावत॥
हम बिरहिनी स्याम सुंदर की, तुम निरगुनहिं गहावत।
जोग भोग, रस रोग, सोग सुख, जाने जगत सुनावत॥
ये दृग मधुप सुमन सब परिहरि, कमल बदन रस भावत।
सोवत जागत सुपन रैंन दिन ,वह मूरति मन ध्यावत॥
कहि कहि कपट सँदेसनि मधुकर, कत बकवाद बढ़ावत।
कूर कुटिल कपटी चित अंतर, 'सूरदास' कवि गावत॥ ३८८८॥

राग सारंग ॥ ४५०७ ॥

मधुकर समुझायौ सौ बेरनि।
अहो मधुप निसि दिन मरियत है, कान्ह कुँवर औसेरनि॥
चित चुभि रही मनोहर मूरति, चपल दृगनि की हेरनि।
तन मन लियौ चुराइ हमारौ, वा मुरली की टेरनि॥
बिसरत नाहिं सुभग भुज सोभा, पीतांबर की फेरनि।
कहत न बनै कान्ह कामरि छवि, बन गैयनि की घेरनि॥
तुम प्रवीन ह्वै हमहिं बतावत, आँखि मूँदि भट भेरनि।
नंदकुमार छाँड़ि को लैहै, जोग दुखनि की घेरनि॥
जहाँ न परम उदार नंदसुत, मुकुति परौ किन भेरनि।
'सूर' रसिक बिनु क्यौं जीवतु है, निरगुन कठिन करेरनि॥ ३८८९॥

राग बिलावल ॥ ४५०८ ॥

काहे कौ रोकत मारग सूधौ।
सुनहु मधुप निरगुन कंटक तैं, राजपंथ क्यौं रूँधौ॥

कै तुम सिखि पठए हौ कुविजा, कह्यौ स्यामघनहूँ धौं।
वेद पुरान सुमृति सब ढूँढ़ी, जुवतिनि जोग कहूँ धौं॥
ताकौं कहा परेखौ कीजै, जानै छाँछ न दूधौ।
'सूर' मूर अक्रूर गयौ लै, व्याज निवेरत ऊधौ॥ ३८९०॥

राग धनाश्री॥ ४५०९॥

तुम तौ अपनैं ही मुख झूठे।
निरगुन छवि हरि बिनु क्यौं पावैं, क्यौं आँगुरी अँगूठे॥
निकट रहत पुनि दूरि बतावत, हौ रस माहँ अपूठे।
द्वै तरंग द्वै नाव पाँव धरि, ते कहि कौन न मूठे॥
हमकौं मिले बरष द्वादस, दिन चारिक तुमसौं तूटे।
'सूर' आपने प्राननि खेलै, ऊधौ खेलै हूँठे॥ ३८९१॥

राग मलार॥ ४५१०॥

ऊधौ बूझति हैं अनुमान।
देखियत नाहिं जतन जीवे कौं, इतहिं विरह उत ज्ञान॥
इतहिं चंद चदन समीर मिलि, लागत अनल निधान।
उत निरगुन अवलोकन मन कौ, कठिन निरोधन प्रान॥
इत भूषन भय करत अंग कौं, सब निसि जागि बिहान।
उत कहुँ सुन्न समाधि कछु नहिं, गढ़ जोग कौ ज्ञान॥
दुसह दुराज नृपति बड़े दोऊ, दुख कौ उभै समान।
को राखे 'सूरज' इहिं अवसर, कमलनयन बिनु आन॥ ३८९२॥

राग सारंग॥ ४५११॥

मधुकर राखि जोग की बात।
कहि कहि कथा स्यामसुंदर की, सीतल करि सब गात॥
जे निरगुन गुनहीन गनैगो, सुनि सुदरि अकुलात।
दीरघ नदी नाव कागर की, किहि देख्यौ चढ़ि जात॥
हम तन हेरि चितै अपनौ पट, देखि पसारहि लात।
'सूरजदास' बास बन बसि कै, कैसैं कलप बिहात॥ ३८९३॥

राग मलार॥ ४५१२॥

जोग सौं कौनै हरि पाए।
निज आज्ञा तप कियौ विधाता, कब रस रास खिलाए॥
जोग जुगुति संकर आराधी, परम तत्त्व लव लाए।
भुज धरि ग्रीव कबहिं नँदनंदन, हिलि मिलि कल सुर गाए॥
वृकदालव्य महारिषि कबहूँ, तृन छाया न कराए।
बरषत दुखित जानि नँदनंदन कब गिरिवर कर छाए॥
अति तपपुंज विप्र दुर्वासा, दुर्वा तृन नित खाए।
चक्र सुदर्सन तपत महामुनि, कब मुख अनल समाए॥
बहु तप कियौ मारकंडे द्विज, आइ सिंधु भरमाए।
सप्त कल्प बीते कब कहि हरि, बरुन पास मुकराए?
भक्त-बिरह-कातर करुनामय, वेद निरंतर गाए।
को है जोग सुनत ह्याँ ऊधौ, 'सूर' स्याम मन भाए॥ ३८९४॥

राग मलार ॥ ४५१३ ॥

हमरै कौन जोग विधि साधै।
बटुआ, झोरी, दंड, अधारी, इतननि को आराधै ॥
जाकौ कहूँ थाह नहि पैये, अगम अधार अगाधै।
गिरिधर लाल छबीले मुख पर, इते बाँध को बाधै ॥
सुनु मधुकर जिनि सरवस चाख्यौ, क्यौं सचु पावत आधै।
'सूरदास' मानिक परिहरि कै, छार गाँठि को बाँधै ॥ ३८९५ ॥

राग मलार ॥ ४५१४ ॥

जिहि तन गोकुलनाथ भज्यौ।
ऊधौ हरि बिछुरत तैं बिरहिनि, सो तन तबहि तज्यौ ॥
अब या औरै सृष्टि बिरह की, बकत बाइ बौरानी।
तिनसौ उत्तर कहा देत हौ, तुम तौ पूरन ज्ञानी ॥
जब स्यदन चढ़ि गमन कियौ हरि, फिर चितयौ गोपाल।
तबही परम कृतज्ञ प्रान सँग, उठि लागे तिहिं काल ॥
अब औसान घटत कहि कैसै, उपजौ मन परतीति।
'सूरदास' कछु कहत न आवै, कठिन बिरह की रीति ॥ ३८९६ ॥

राग गौरी ॥ ४५१५ ॥

(मधुप) बार बार काहे कौं, और कथा कहत।
प्रभु की परतीति गएे, नाहिन कछु रहत ॥
पवन, तेज अरु अकास, पृथ्वी अरु पान्यौ।
तामै तैं नंदनंदन, कहाँ घालि सान्यौ ॥
कमलनयन स्याम सुंदर कौनै नहि भावै।
ताकौ तू गुप्त करै, आनै कछु गावै ॥
'सूर' नंदसुत दयाल, लीला-वपु-धारी।
निरगुन तैं सगुन भए, संतन हितकारी ॥ ३८९७ ॥

राग सारंग ॥ ४५१६ ॥

कहिएे तासौ होइ विवेकी।
एतौ अलि उनही के संगी, अपनी गौ के टेकी ॥
ऐसी को ठाली बैठी है, तुमसौं मूड़ झुरावै।
झूठी बात तुसी सी बिन कन, फटकत हाथ न आवै ॥
ऐसी बात कहौ तुम उनसौ, जा नहि जानै बूझै।
'सूरदास' प्रभु नंदनँदन बिनु, देखै और न सूझै ॥ ३८९८ ॥

राग कान्हरौ ॥ ४५१७ ॥

ऊधौ निरगुनहिं कहत तुमही सो लेहु।
सगुन मूरति नंदनँदन, हमहिं आनि देहु ॥
अगम पंथ परम कठिन, गौन तहाँ नाहिं।
सनकादिक भूलि फिरे, अबला कहँ जाहिं ॥
पच तत्व प्रकृति परे, अपर कैसै जानी।
मन बच अरु कर्म रहित, बेदहु की बानी ॥

कहिऐ जो निवहे की, अकथ न कहुँ सोही।
'सूर' स्याम मुख सुचद, जुवति नलिनि मोही ॥ ३८९९ ॥

राग मलार ॥ ४५१८ ॥

ऊधौ सूधैं नैंकु निहारौ।
हम अवलनि कौ सिखवत आए, सुन्यौ सयान तिहारौ ॥
निरगुन कहौ कहा कहियत है, तुम निरगुन अति भारी।
सेवत सुलभ स्याम सुंदर कौ, मुक्ति लही हम चारी ॥
हम सालोक्य, सरूप, सायुज्यौ, रहति समीप सदाई।
सो तजि कहत और की औरै, तुम अलि वडे अदाई ॥
हम मूरख तुम वडे चतुर हौ, वहुत कहा अव कहिऐ।
वे ही काज फिरत भटकत कत, अव मारग निज गहिऐ ॥
तुम अज्ञान कतहि उपदेसत, ज्ञान रूप हमही।
निसि दिन ध्यान 'सूर' प्रभु कौ अलि, देखत जित तितही ॥ ३९०० ॥

राग मलार ॥ ४५१९ ॥

ऊधौ कोउ नाहिन अधिकारी।
लै न जाहु यह जोग आपनौ, कत तुम होत दुखारी ॥
यह तौ वेद उपनिषद मत है, महा पुरुष व्रतधारी।
हम अवला अहीरि व्रजवासिनि, नाही परत सँभारी ॥
को है सुनत कहत हौ कासौं, कौन कथा विस्तारी।
'सूर' स्याम कैं संग गयौ मन, अहि कॉंचुली उतारी ॥ ३९०१ ॥

राग केदारौ ॥ ४५२० ॥

ऊधौ राखियै यह वात।
कहत हौ अनगढी अनहद, सुनत ही चपि जात ॥
जोग अलि कुपमाड जैसौ, अजा मुख न समात।
वार वार न भाषियै, कोउ अमृत तजि विष खात ?
नैन प्यासे रूप जल के, दिऐ नाहि अघात।
'सूर' प्रभु मन हर्यौ जव लगि, नाहि तन कुसलात ॥ ३९०२ ॥

राग सारंग ॥ ४५२१ ॥

ऊधौ औरै कथा कहौ।
तजिऐ ज्ञान सुनत तावत तन, वरु गहि मौन रहौ ॥
रुचि द्रुम प्रीति रीति नैननि जल, सींचि ध्यान झर लागी।
ताकैं प्रेम फल सुक मन लावत, स्याम सुरँग अनुरागी ॥
ग्रीषम अलि आए उपजी व्रज, कठिन जोग रवि हेरौ।
वन मुरझात 'सूर' को राखै, मेह नेह विनु तेरौ ॥ ३९०३ ॥

राग सोरठ ॥ ४५२२ ॥

कै तुमसौं छूटै लरि ऊधौ, कै रहियै गहि मौन।
इक हम जरी, जरे पर जारत, वोलि विगूचै कौन ॥
एकै अंग मिले दोउ कारे, काकौ मन पतिआइ।
तुमसौ होइ सो तुमसौं वोलै, लैहै जोगहिं आइ ॥

जा काहू की जोग चाहिए, सो लै भस्म लगावै।
जिहिं उर ध्यान नंदनंदन कौ, तिहिं क्यौं निरगुन भावै॥
कहौ सँदेस 'सूर' के प्रभु कौ, यह निरगुन अँधियारौ।
अपनौ बोय आप लुनौ तुम, आपै ही निरवारौ॥ ३९०४॥

राग केदारौ॥ ४५२३॥

कहा रस वरियाई की प्रीति।
जौ न गडै उर अतर ऊधौ, भुस पर की सो भीति॥
नैन वैन अरु हृदय मिलत तन, बाढ़त प्रेम प्रतीति।
ए दोउ हंस होत जब सन्मुख, लेत मनहि मन जीति॥
ऊधौ यहे सँदेसौ कहियौ, मधुवन कैसी रीति।
'सूरदास' सोई जन जानै, गई जिनहिं मैं वीति॥ ३९०५॥

राग मलार॥ ४५२४॥

जो पै यहै प्रेम की वात।
तौ ऊधौ तुम निकट रहत कत, निरखि साँवरौ गात॥
वात कहत भरि लेत नैन जल, सुरति करत अकुलात।
जौ घट घट हरि रहत निरंतर, कतहिं मधुपुरी जात॥
सगुन प्रीति ऐसी प्रतिपालत, दुखित होत अति गात।
तुम निरगुन सौ प्रीति करत नित, 'सूर' समुझि पछितात॥ ३९०६॥

राग सारंग॥ ४५२५॥

मधुकर जनि मधुवन तन देखौ।
कछुक दिवस औरौ व्रज वसिकै, जनम सुफल करि लेखौ॥
कहा जाइ लैहौ ह्याँ, जामै राज काज की वात।
वाल कुमार किसोर निरखि ह्याँ, घर घर माखन खात॥
तुम निरगुन नित कहत निरंतर, निगम वखानत नीति।
प्रगट रूप मद मत्त नैन क्यौ, छाँड़ै दरसन प्रीति॥
सिव विरंचि सनकादिक मुनि जन, सुनियत, जाकौ ध्यावत।
'सूर' सोइ प्रभु ग्वाल सुतनि सँग, गोधन वृंद चरावत॥ ३९०७॥

राग मलार॥ ४५२६॥

ऊधौ लहनौ अपनौ पैयै।
सोइ होइ जो रच्यौ विधाता, और न दोष लगैयै।
कीजै कहा कहत नहिं आवै, सोचि हृदै पछितैयै।
मोहन सौ वर कुविजा पायौ, हमकौ जोग वतैयै॥
आज्ञा होइ सोइ पै कीजै, विनती यहै सुनैयै।
'सूरदास' प्रभु तृपा वढ़ी अति, दरसन सुधा पियैयै॥ ३९०८॥

राग धनाश्री॥ ४५२७॥

ऊधौ धनि तुम्हारौ व्यौहार।
धनि वै ठाकुर धनि तुम सेवक, धनि हम वर्तनहार॥
काटहु अंव वव्र लगावहु, चंदन की करि वारि।
हमकौ जोग भोग कुविजा कौ, ऐसी समुझ तुम्हारि॥

तुम हरि पढ़े चातुरी विद्या, निपट कपट चटसार।
पकरी साह चोर कौ छाँड़ो, चुगलनि कौ इतवार।।
समुझि न परै तिहारी मधुकर, हम ब्रज नारि गँवार।
'सूरदास' ऐसी क्यौं निबहै, अंध धुंध सरकार।। ३९०९।।

राग केदारौ ।। ४५३८ ।।

(ऊधौ) खरी जरी हरि सूलनि की।
कुंज कलोल किए बन ही बन, सुध बिसरी उन फूलनि की।।
तब हौ आनि अंक भरि लिन्ही, देखि छाँहैं नव मूलनि की।
अब वह प्रीति कहाँ लौ बरनौ, वा जमुना जल कूलनि की।।
वह छबि छाके है अति लोचन, बाहँ गहि गहि झूलनि की।
खरकति है वह 'सूर' हिये मैं, माल दई मोहि फूलनि की।। ३९१०।।

राग सारंग ।। ४५२९ ।।

हरि बिनु इहिं बिधि है, ब्रज रहियतु।
पर पीरहि तुम जानत ऊधौ, तातैं तुमसौं कहियतु।।
चंदन चंदकिरनि पावक सम, इन मिलि कै तन दहियतु।
रजनी जात गनत ही तारे जतन नहीं निरबहियत।।
बासर हू या बिरहसिंधु कौ, क्योंहू पार न लहियत।
फिरि फिरि वहै अवधि अवलंबन, बूड़त ज्यौं तृन गहियत।।
एक जु हरि दरसन की आसा, ता लगि दुख यह सहियत।
मन क्रम बचन सपथ सुनि 'सूरज', और नहीं कछु चहियत।। ३९११।।

राग सारंग ।। ४५३० ।।

हरि बिनु ऐसी बिधि ब्रज जीजै।
कज्जल बरपि बरपि उर ऊपर, सारँग रिपु जल भीजै।।
तारापति अरि के सिर ठाढ़ी, निमिप चैन नहिं कीजै।
वायस अजा सब्द की मिलवनि, याही दुख तन छीजै।।
चौथै चंद जात गोपिनि कौ, मधुप राखि जस लीजै।
'सूरदास' प्रभु बेगि कृपा करि, प्रगट दरस हम दीजै।। ३९१२।।

राग सारंग ।। ४५३१ ।।

हमारे जीवनधन कृष्ण मुकुंद।
परम उदार कृपानिधि कोमल, पूरन परमानंद।।
निठुर बचन सुनि फटत हियौ यह, रहि रे अलि मति मंद।
ब्रजजुवतिनि कौ सुगम जनावत, जोग जुगुति दुख दद।।
यह तौ जाइ उनहिं उपदेसहु, सनकादिक स्वच्छंद।
बारक हमैं दरस दिखरावहु, 'सूर' स्याम नँदनंद।। ३९१३।।

राग सारंग ।। ४५३२ ।।

वै बातैं जमुना तीर की।
कबहुँक सुरति करत है मधुकर, हरन हमारे चीर की।।
लीन्हे बसन देखि ऊँचे द्रुम, रवकि चढन बलबीर की।
देखि देखि सब सखी पुकारति, अधिक जुड़ाई नीर की।।

दोऊ हाथ जोरि माँगै, ध्वाई नद अहीर की।
सूरदास' प्रभु सब दुख दाता, जानत है पर पीर की ॥ ३९१४ ॥

राग धनाश्री

अब हरि क्यौं बसै, गोकुल गवईं।
बसत नगर नागर लोगनि मैं, नइ पहिचानि भई ॥
इक हरि चतुर हुते पहिलै हीं, अब उन गुरु सिखई।
हम सब गर्व गँवारि जानि जड़, अधपर छाँड़ि दई ॥
ऊधौ मुख जोवत कुबिजा कौ, हम सब बिसरि गई।
याहि तैं चतुर मुजान 'सूर' प्रभु, ग्वाली सँग न लई ॥ ३९१५ ॥

राग गौरी ॥ ४५३३ ॥

प्रेम न रुकत हमारे बूतैं।
किहि गयंद बाँध्यौ सुनि मधुकर, पदुम नाल के काँचे सूतैं ?
सोवत मनसिज आनि जगायौ, पठै सँदेस स्याम के दूतैं।
बिरहसमुद्र सुखाइ कौन बिधि, रचक जोग अगिनि के लू तैं ॥
सुफलक मुत अरु तुम दोऊ मिलि, लीजै मुकुति हमारे हूतैं।
चाहति मिलन 'सूर' के प्रभु कौं, क्यौं पतियाहि तुम्हारे धूतैं ॥ ३९१६ ॥

राग धनाश्री ॥ ५४३४ ॥

यह कछु नाहिं नेह नयौ।
मधुप माधौ सौं जू इहि ब्रज, बिधि तैं प्रथम भयौ ॥
बीज मन माली मदन, उर आलवाल बयौ।
प्रेमपय सींच्यौ अहरनिसि, सुभ जवारि जयौ ॥
इते स्रम तन स्यामसुदर, बिमल बृच्छ बढ़्यौ।
मुरलि मुख छबि पल्ल साखा, दृग द्विरेफ चढ्यौ ॥
कमल तजि तन रुचत नाहीं, आक कौ आमोद।
'सूर' जोग न बचन परसहिं, बिनु गुपाल बिनोद ॥ ३९१७ ॥

राग मलार ॥ ४५३५ ॥

ऊधौ अब हम समुझि भई।
नंदनँदन के अग-अंग-प्रति, उपमा न्याय दई ॥
कुंतल कुटिल भँवर भामिनि त्रर, मालति भुरै लई।
तजत न गहरु कियौ तिन कपटी, जानी निरस भई ॥
आनन इंदु बिमुख संपुट तजि, करषे तैं न नई।
निर्मोही नव नेह कुमुदिनी, अंतहु हेम हई ॥
तन-घन-सजल सेइ निसिबासर, रटि रसना छिजई।
'सूर' बिवेकहीन चातक मुख, बूदौ तौ न स्रई ॥ ३९१८ ॥

राग सारंग ॥ ४५३६ ॥

ऐंसौ एक कोंद कौ हेत।
जैसैं बसन कुसुम रँग मिलि कै, नैकु चटक पुनि सेत ॥
जैसैं करनि किसान बापुरौ, नव नव बाहै देत।
ग्नेहूँ पर नीर निठुर भयौ, उमँगि आपु ही लेत ॥
सब गोपी पूछहि ऊधौ सौं, सुनियौ बात सचेत।
'सूरदास' प्रभु जन तैं बिछुरे, ज्यौं कृत राई रेत ॥ ३९१९ ॥

राग सारंग ॥ ४५३७ ॥

मुख देखे की कौन मिताई।
जैसैं कृपनहिं दान माँगनौ, लालच लीन्हे करत बड़ाई ॥
प्रीतम सो जो रहै एक रस, निसि बासर बढ़ि प्रेम सवाई।
चित मैं और कपट अंतरगति, ज्यौ फल खीर नीर चिकनाई ॥
तब वह करी नंदनंदन अलि, बन बोली रस रास खिलाई।
अब यह केतिक दूरि मधुपुरी, ज्यौ उड़ि मधुप बेलि तजि जाई ॥
जोग सिखाए क्यौ मन मानै, क्यौं जु ओस कन प्यास बुझाई।
'सूरजदास' उदास भई हम, पापँड प्रीति उघरि सब आई ॥ ३६२० ॥

राग मलार ॥ ४५३८ ॥

मधुकर मन सुनि जोग डरै ॥
तुमहूँ चतुर कहावत अतिही, इतौ न समुझि परै ॥
औरौ सुमन अनेक सुगंधित, सीतल रुचि जु करै।
क्यौ तुमकौ अलि बिना सरोजहि, उर अंतर न अरै ॥
दिनकर महा प्रताप पुंज बल, सबकौ तेज हरै।
क्यौ न चकोर छाँड़ि मृगअर्कहि, वाकौ ध्यान धरै ॥
उलटौइ ज्ञान सकल उपदेसत, सुनि सुनि हृदै जरै।
जंबू बृच्छ कहौ क्यौ लंपट, फल बर अब करै ॥
मुक्ता अवधि मराल प्रान मम, जौ लगि ताहि चरै।
निघटै निपट 'सूर' ज्यौ जल बिनु, व्याकुल मीन मरै ॥ ३६२१ ॥

राग सारंग ॥ ४५३६ ॥

ऊधौ सुनहु नैकु जो बात।
अबलनि कौ तुम जोग सिखावत, कहत नहीं पछितात ॥
ज्यौ ससि बिना मलीन कुमुदिनी, रवि बिनुहीं जलजात।
त्यौं हम कमलनैन बिनु देखे, तलफि तलफि मुरझात ॥
जिन स्रवननि मुरली सुर अँचयौ, मुद्रा सुनत डरात।
जिन अधरनि अमृत फल चाख्यौ, ते क्यौं कटु फल खात ॥
कुंकुम चंदन घसि तन लावतिं, तिहिं न बिभूति सुहात।
'सूरदास' प्रभु बिनु हम यौ है, ज्यौं तरु जीरन पात ॥ ३६२२ ॥

राग धनाश्री ॥ ४५४० ॥

ऊधौ जोग जोगहि देहु।
हम अबुधि कह जोग जानैं, सपथ हमसौ लेहु ॥
चंद उदय चकोर चाहै, मोर चाहै मेहु।
हमहुँ चाहै मदन मूरति, स्याम संग सनेहु ॥
दंड मुद्रा भसम कंथा, को करै बन गेहु।
लाइ चंदन अगर केसर, क्यौं चढ़ावै खेहु ॥
स्यामगात सरोज आनन, करत पावक येहु।
'सूर' अब तौ दरस दुर्लभ, रह्यौ बचन सनेहु ॥ ३६२३ ॥

राग आसावरी ॥ ४५४१ ॥

ऊधौ जोग जोग हम नाही।
अबला सारज्ञान कह जानै, कैसै ध्यान धराही ॥

तेई मूँदन नैन कहत हौ, हरि मूरति जिन माहीं।
ऐसी कथा कपट की मधुकर, हमतै सुनी न जाही।।
स्रवन चीरि सिर जटा बँधावहु, ये दुख कौन समाहीं।
चंदन तजि अँग भस्म बतावत, विरह-अनल अति दाहीं।।
जोगी भ्रमत जाहि लगि भूले, सो तौ है अप माहीं।
'सूर' स्याम तै न्यारी न पल छिन, ज्यौ घट तै परछाहीं।। ३९२४।।

राग मलार।। ४५४२।।

ऊधौ कहियै वात सोहती।
जाहि ज्ञान सिखवन तुम आए, सो कहि व्रज मैं को हती।।
अंतहु सिख तुम सुनहु हमारी, कहियत वात विचारि।
फुरत न वचन कछू कहिबे कौ, रहे सोचि पचि हारि।।
देखियत हौ करुना की मूरति, सुनियत हौ पर पीरक।
सोइ करौ ज्यौ मिटै हृदै कौ दाहु, परै उर सीरक।।
राजपथ तैं टारि वतावत, ऊजर कुचल कुपैंड़ौ।
'सूरदास' सो समाइ कहाँ लौ, छेरी वदन कुम्हैड़ौ।। ३९२५।।

।। ४५४४।।

मधुकर निरगुन ज्ञान तिहारौ।
तीच्छन तेज तपस्या यामै, का पै जात जु धारौ।।
हम अवला मति की सव भोरी, सहज गुपाल उपासी।
मन रमि रही मनोहर मूरति, को सुमिरै अविनासी।।
मन मैं मोहन रूप विराजत, हृदय मनोहर मूरति।
न्यारी होति न चित तै कवहूँ, छिन पल घरी महूरति।।
अंग अंग छवि वसी साँवरी, खाली ठौर न कोऊ।
जौ कहूँ ठौर जोग कौ होतौ, लै धरती हम सोऊ।।
खेलत सौह करी नँदनंदन, हमसौ कछु न दुरायौ।
निसि दिन रह्यौ समीप हमारै, जोग मन्त्र कहँ पायौ।।
रस की रीति साँवरौ वूझै, विरह जोग नहिं जानै।
परमारथ की वात सुनै नहिं, छुवत प्रेम की खानै।।
उन पापी हमही कौ पठयौ, अनत नही सुख वाँटौ।
'सूरदास' प्रभु सीख वतावै, सहद लाइ कै चाँटौ।। ३९२६।।

राग सारंग।। ४५४५।।

हम तौ नंदघोप के वासी।
नाम गुपाल जाति कुल गोपक, गोप गुपाल उपासी।।
गिरिवर धारी गोधन चारी, वृंदावन अभिलाषी।
राजा नंद जसोदा रानी, सजल नदी जमुना सी।।
मीत हमारे परम मनोहर, कमलनैन सुखरासी।
'सूरदास' प्रभु कहौ कहाँ लौं, अष्ट महासिधि दासी।। ३९२७।।

राग सारंग।। ४५४५।।

यह गोकुल गोपाल उपासी।
जे गाहक निरगुन के ऊधौ, ते सव वसत ईसपुर कासी।।

जद्यपि हरि हम तजि अनाथ करि, तदपि रहति चरननि रस रासी।
अपनी सीतलता नहिं छाँड़त, जद्यपि विधु भयौ राहु गरासी॥
किहिं अपराध जोग लिखि पठवत, प्रेमभगति तैं करत उदासी।
'सूरदास' ऐसी को विरहिनि, माँगि मुक्ति छाँड़ै गुनरासी॥३९२८॥

राग मलार॥ ४५४६॥

व्रज जन सकल स्याम व्रतधारी।
विना गुपाल और जिहिं भावैं, तिहिं कहियैं व्यभिचारी॥
जोग मोट सिर बोझ आदि तुम, कत धौं घोप उतारी।
इतनिक दूरि जाहु चलि कासी, जहाँ बिकति है प्यारी॥
यह सदेस सुनै को मधुकर, प्रीति अनन्य हमारी।
जो रसरीति करी हरि हमसौं, सो क्यौं जाति विसारी॥
महा मुक्ति कोऊ नहि बूझै, जदपि पदारथ चारी।
'सूरदास' स्वामी मनमोहन मूरति की वलिहारी॥ ३९२९॥

॥ ४५४७॥

ऊधौ अब कोउ कछू कहौ।
जैसैं होइ सु होइ सबै किन, हरि की प्रीति रहौ॥
जप तप संजम नेम धरम की, नदिया जाइ बहौ।
जोग जुगुति किहिं काज हमारैं, आपुहिं ले निवहौ॥
इक हम जरति विरह की जारी, तुम कत दहन दहौ।
'सूरदास' प्रभु नैंकु मिलावहु, जग मैं सुजस लहौ॥ ३९३०॥

राग धनाश्री॥ ४५४८॥

कह लै कीजै बहुत बड़ाई।
अति अगाध स्रुति वचन अगोचर, मनसा तहाँ न जाई॥
जाकैं रूप न रेख वरन वपु, संग न सखा सहाई।
ता निरगुन सी नेह निरंतर, क्यौं निवहै री माई॥
जल विनु तरँग चित्र विनु भीतिहिं, बिनु चेतहिं चतुराई।
अब या व्रज मैं नई रीति, इन ऊधौ आनि चलाई॥
मन हरि लियौ माधुरी मूरति, रोम रोम अरुझाई।
स्याम सुभग तन सुंदर लोचन, 'सूर' निरखि वलि जाई॥ ३९३१॥

राग नट॥ ४५४९॥

ऊधौ कछुक समुझि परी।
तुम जु हमकौ जोग ल्याये, भली करनी करी॥
इक विरह जरि रही हरि कैं, सुनत अतिहिं जरी।
जाहु, जनि अब लोन लावहु, देखि तुमहिं डरी॥
जोग पाती दई तुमकौ, बडे चतुर हरी।
आनि आस निरास कीन्ही, 'सूर' सुनि हहरी॥ ३९३२॥

राग कान्हरौ॥ ४५५०॥

कहत अलि तेरैं मुख वातौ।
कमलनैन की कपट कहानी, सुनत भयौ तन तातौ।

कत ब्रजराज काज गोकुल के, सबै किए गहि नातौ।
तब नहिं निमिष वियोग सहत उर, करत काम नहिं हातौ॥
मधुबन जाइ कान्ह कुबिजा सँग, मति भूलीं सुधि सातौ।
ज्यौं गज जूथ नैंकु नहिं बिछुरत, 'सूर' मदन मदमातौ॥ ३६३३॥

राग सारंग॥ ४५५१॥

दिन दिन तोरन लागे नातौ।
मधुबन वसि गोपाल पियारे, प्रेम कियौ हठि हातौ॥
सीतलता उर कहूँ न दीसति, सब ब्रज लागत तातौ॥
नंदलाल गोकुल आवन की, चालत नाहिन वातौ।
पहिली प्रीति कितै गइ सजनी, मन न रहत बहरातौ।
'सूरदास' प्रभु के बिछुरे तैं, भूलि गईं सुधि सातौ॥ ३६३४॥

॥ ४५५२॥

मधुकर सुनि मोहन कौ नातौ।
राखि समीप सदा सुख दीन्हौ, अब हमसौं कियौ हातौ।
ज्यौं चातक व्रत नेम धारि कै, जल बरपत रहै प्यासौ।
जाइ नहीं सर दूजे क्यौ हूँ, स्वाति बूँद की आसौ॥
ज्यौ पतंग तन-मन-धन अरपै, प्रेम सहित मरि जानै।
नैंकु न प्रीत धरै चित अंतर, दीपक दया न आनै॥
जासौं हित ताकी गति ऐसी, यह अँदेस मन माहीं।
'सूरदास' हरि प्रान हमारे, हरि की हम कछु नाही॥ ३६३५॥

राग धनाश्री॥ ४५५३॥

तुम अलि कमलनैन के साथी।
देखत भले, काज के औसर होत धूम के हाथी॥
सुंदर स्याम दंड मदऽलंकृत, श्रम-जल-कन छवि छाजै।
जोग ज्ञान दोउ दसन भोग रद, करिनी कुंभ विराजै॥
जब सिसु हते कुमार असुर हति, यातै प्रीतम जाने।
अब भए जाइ विवस दासी के, ब्रज तैं प्रगट पराने॥
करि कै कपट तुच्छ विद्या वस, भग्न करत अँग भट ज्यौ।
'सूर' अवधि पढि मंत्र सजीवन, मारि जियावत नट ज्यौ॥ ३६३६॥

राग सारंग॥ ४५५४॥

ऐसौ सुनियत द्वै वैसाख।
देखति नही ब्यौत जीवे की, जतन करौ कोउ लाख॥
मृगमद मलय कपूर कुमकुमा, केसर मलियै साख।
जरत अगिनि मैं ज्यौ घृत नायौ, तन जरि ह्वै है राख॥
ता ऊपर लिखि जोग पठावत, खाहु नीम, तजि दाख।
'सूरदास' ऊधौ की बतियाँ, सब उड़ि बैठी ताख॥ ३६३७॥

राग नट॥ ४५५५॥

जानी ऊधौ की चतुराई।
बार बार तुम कहत अध्यातम, पावत कौन बडाई॥

जौ तुम कहत अगाध अगोचर, हरि रस तज्यौ न जाई।
कै तुम कहत उक्ति अपनी तैं, कै तुम कहत कहाई।।
वाहर भीतर ध्यान सगुन विनु, सुनियत दूरि भलाई।
'सूरदास' प्रभु विरह जरी है, विनु पावक दव लाई।। ३९३८।।

राग सारंग।। ४५५६।।

जानी ऊधौ की चतुराई।
ब्रजमंडल की दसा देखि कै, कथा न वै विसराई।।
परम प्रिया पथ देखन पठए, कहि गति जोग बनाई।
इनकौ आन भाव विछुरन कौ, लै बातनि हम लाई।।
कहा कह्यौ हरि, कहा सुन्यौ इन, कह लीला मुख गाई।
जद्यपि विबुध वडे जदुकुल के, नैकु न वड़ी वड़ाई।।
गुन महिमत सदा श्रीपति के, मुक्ति पुरी अवगाई।
नहि देखी ब्रज वन की लीला, 'सूर' स्याम लरिकाई।। ३९३९।।

राग सारंग।। ४५५७।।

मधुकर बात तिहारी जानी।
पालागौ मुख मौन गहौ अव, कटुक लगति है वानी।।
जौ पै स्याम रहत घट, तौ कत विरह विथा न परानी।
झूठी वातनि क्यौ मन मानत, चल मति अलप गियानी।।
जोग जुगुति की नीति अगम, हम ब्रजवासिनि कह जानै।
सिखवहु जाइ जहाँ नटनागर, रहत प्रेम लपटाने।।
दासी घेरि रहे हरि तुम ह्याँ, गढ़ि गढ़ि कहत वनाई।
निपट निलज्ज अजहूँ न चलत उठि, कहत 'सूर' समुझाई।। ३९४०।।

राग नट।। ४५५८।।

ऊधौ जानि परचौं सयान।
नारियनि कौं जोग लाए, भले जान सुजान।।
निगम नहि जिहि पार पायौ, कहत सोई ज्ञान।
नैन त्रिकुटी जोरि सगम, जिहि करत अनुमान।।
पवन धरि रवि तन निहारत, मनहि राखत मारि।
'सूर' सो मन हाथ नाही, गयौ संग विसारि।। ३९४१।।

राग मलार।। ४५५९।।

इहिं विधि पावस सदा हमारैं।
पूरब पवन स्वास उर ऊरध, आनि मिले इकठारैं।।
वादर स्याम सेत नैननि मैं, वरपि आँसु जल ढारैं।
अरुन प्रकास पलक दुति दामिनि, गरजनि नाम पियारैं।।
चातक दादुर मोर प्रकट ब्रज, बसत निरतर धारैं।
ऊधव ये तब तैं अटके ब्रज, स्याम रहे हित टारैं।।
कहियै काहि सुनै कत कोऊ, या ब्रज के व्यौहारैं।
तुमही सौं कहि कहि पछितानी, 'सूर' विरह के धारैं।। २९४२।।

राग केदारौ ॥ ४५६० ॥

जो पै कोउ मधुवन लौं जाइ।
पतिया लिखी स्याम सुंदर कौं, कंकन देहौं ताइ ॥
नैननीर सारँगरिपु भीजत, जुग सम रैनि विहाइ।
अब यह भवन भयौ पावक सम, हरि बिनु मोहिं न सुहाइ ॥
पछिलौ प्रीति कहा भइ ऊधौ, मिलते बेनु बजाइ।
'सूरदास' प्रभु प्रान गए तैं, कहा करौगे आइ ॥ ३९४३ ॥

राग बिलावल ॥ ४५६१ ॥

वै गोपाल कहाँ गए, मेरे मन के चोर।
जौ कोउ उनसौं सुधि कहै, देऊँ प्रान अकोर ॥
छिन आँगन छिन भवन मैं, छिन मीड़ौं ही हाथ।
बिरह बिथा तन अधिक है, मोहीं कछु न सुहात ॥
वेइ द्रुम बेली वेइ लता, वेई हैं सब अंग।
एक लाल गिरिधर बिना, फीके भए सब रंग ॥
बास गई, सोभा गई, अब कुम्हिलाने फूल।
'सूरदास' प्रभु तुम बिना, उकठे सब जर मूल ॥ ३९४४ ॥

राग गजरी ॥ ४५६२ ॥

तुम जु दयाल दयानिधि कहियत, जानत हौ पर पीर।
बिछुरे प्राननाथ ब्रज ऐहैं, कित हम कित जदुबीर ॥
मत अपजस आनौ सिर अपने, कठिन मदन की पीर।
'सूरदास' प्रभु मिलन कहत हे, रवि तनया के तीर ॥ ३९४५ ॥

राग बिलावल ॥ ४५६३ ॥

ऊधौ कोकिल कूजत कानन।
तुम हमकौ उपदेस करत हौ, भस्म लगावन आनन ॥
औरौ सिखी सखा सँग लै लै, टेरत चढ़े पखानन।
बहुरौ आइ पपीहा कै मिस, मदन हनत निज बानन ॥
हमतौ निपट अहीरि बावरी, जोग दीजिए जानन।
कहा कथत मासी के आगै, जानत नानी नानन ॥
तुम तौ हमैं सिखावन आए, जोग होइ निरबानन।
'सूर' मुक्ति कैसैं पूजति है, वा मुरली के तानन ॥ ३९४६ ॥

राग सारंग ॥ ४५६४ ॥

ऊधौ हरि के औरै ढंग।
जहँ न अनंग रस रूप नेह कौ, तहँ दइ गति जु अनंग ॥
जो अनंग वपु, असुर दासिका, सो भइ नूतन अंग।
आपु बिषमता तजि दोऊ सम, बानक ललित त्रिभंग ॥
मनौ मरीचि देखि तन भूल्यौ, भू पथ सुरभि कुरंग।
तजि कुसुमाकर कंटक बन भ्रमि, नहिं कीन्हौ भ्रूभंग ॥
कनक बेलि सत दल सिर मंडित, दृढ तर लता लवंग।
स्यामासदन बिसारि भजे पुर, चंचल नारि पलंग ॥

ते सुख बहुत बहुत पावैंगे, जे करिहैं अँग संग।
काके होहिं जो नांहि गोकुल के, 'सूरज' प्रभु श्रीरंग ॥ ३९४७ ॥

राग आसावरी ॥ ४५६५ ॥

ऊधौ हम दोउ कठिन परीं।
जौ जीवैं तौ मुनि जड़ ज्ञानी, तन तजि रूप हरी ॥
गुन गावैं तो सुक सनकादिक, लीला धाइ फिरी।
आसा अवधि विचारि रहैं तौ, धरम न ब्रज सुंदरी ॥
सखी मंडली सब जु सयानी, बिरहा प्रेम भरी।
सोक सिंधु तरिबैं कौ नौका, जे मुख मुरलि धरी ॥
निसि बासर अति रहत निरकुस, मातौ मदन करी।
ढाहैगौ सब धाम 'सूर' जो चितै न हरि केसरी ॥ ३९४८ ॥

राग केदारौ ॥ ४५६६ ॥

ऊधौ बात सुनी इक नैसी।
प्रेम बान की चोट कठिन है, लागी होइ कही कत ऐसी ॥
तुमकौ खोरि कहा कहि दीजै, आनि कहत हौ बातैं जैसी।
जानै कहा बाँझ ब्यावर दुख, जातक जनै न पीर है कैसी ॥
हम बावरी आनि बौरावत, कहत न तुम्हैं बूझियै ऐसी।
'सूरजदास' न्याइ कुबिजा कौ, सरबस लेइ हमारौ वैसी ॥ ३९४९ ॥

राग सोरठ ॥ ४५६७ ॥

जाकैं लगी होइ सु जानैं।
हौं कासौं समुझाइ कहति हौं, मधुकर लोग सयाने ॥
बन कुसुमावलि देखि बसत हौ, नित्य सदा रसभोगी।
भली बुरी कछु समुझत नाही, अनदेखे के जोगी ॥
बूझौ जाइ जिनहिं तुम पठए, को यह पीर सँहारी।
कीजै कहा होइ जौ ऐसी, चंद चकोरहिं जारी ॥
तुम बड़े लोग बड़े के संगी, भाग बड़े गृह आए।
कीजै कृपा दास 'सूरज' कौ, जौ जदुनाथ पठाए ॥ ३९५० ॥

॥ ४५६८ ॥

जासौं लगन लागी होइ।
कठिन पीर सरीर ब्यापै, जानिहै पै सोइ ॥
बिरह बाइ बबूर बिरवा, गए है हरि बोइ।
उठत अंग अनग चिनगी, दृगनि सींचौ रोइ ॥
मधुप हरि सौं जाइ कहियौ, मति बिसारैं मोइ।
'सूर' जैसैं मीन जल बिनु, गति हमारी सोइ ॥ ३९५१ ॥

राग केदारौ ॥ ४५६९ ॥

ऊधौ उदित भए दुख तरनि।
ब्रज बेली सब सूखन लागी, बात कही नँदघरनि ॥
कुमुदबदन कुम्हिलात सबनि के, गइयनि छाँडी चरनि।
सुख संपति बिति गई सबनि की, अँखियनि लागी झरनि ॥
देखैं चारु चंद मुख सीतल, बिन क्यौं मिटिहै जरनि।
सुत सनेह 'सूरज' प्रभु जसुमति, परति जु फिरि फिरि धरनि ॥ ३९५२ ॥

राग सारंग ।। ४५७० ।।

(ऊधौ) पूछति है ते बावरी।
गोकुल तज्यौ कूबरी कारन, नेह न होत जोरावरी ।।
जैसौ वैयै तौसोइ लुनियैं, काहै करत दुरावरी।
ज्यौ गजराज काज के औसर, औरै दसन दिखावरी ।।
वै तौ कुबिजा असुर की दासी, हम जु सुहागिल रावरी।
'सूरदास' प्रभु पारस परसै, लौहौ कनक बराबरी ।। ३९५३ ।।

।। ४५७१ ।।

हरि जू सुनियत मधुवन छाए।
संग लिऐं कुबिजा दुलहिनि कौ, करत फिरत मन भाए ।।
भोग भुगत दासी कौ दीन्हौ, अरु सृंगार सुहाए।
हमकौ जोग जुगति लिखि मोहन, मधुकर हाथ पठाए ।।
कहा करैं कित जांहि सखी री, प्रीतम भए पराए।
'सूर' निठुर निरमोही कहा कियौ, फिरि नहि गोकुल आए ।। ३९५४ ।।

राग गौरी ।। ४५७२ ।।

मधुकर देखौ दीन दसा।
इती बात तुमसौ कहियत है, जौ तुम स्याम सखा ।।
जे कारे ते सबै कुटिल है, मृतकनि कै जो हता।
तुम विरहिनी विरह दुख जानत, कहियौ गूढ़ कथा ।।
मन बस भयौ स्रवन सुनि मुरली, कुंज निकुज वसा।
अब तौ एक न भए 'सूर' प्रभु, घर वन लोग हँसा ।। ३९५५ ।।

राग सारंग ।। ४५७३ ।।

जैसौ कियौ तुम्हारै प्रभु अलि, तैसौ भयौ ततकाल।
ग्रंथित सूत धरत तिहिं ग्रीवा, जिहि धरते वनमाल ।।
टेर देत श्रीदमाा द्रुम चढ़ि, सरस वचन गोपाल।
ते अब स्रवन अक्रूर प्रमुख सव, कहत कंस-कुल-साल ।।
कोमल नील कुटिल अलकावलि, रेखा राजति भाल।
तहँ अव लगत धूम वेदी कौ, पूजा भस्म कपाल ।।
जहँ मनि काँकर, सुधा, सरस जल, सत दल कमल विसाल।
ऐसे सर मागै सुनि 'सूरज', फंदा न्याइ मराल ।। ३९५६ ।।

राग मलार ।। ४५७४ ।।

विरचि मन वहुरि राँचौ आइ।
टूटी जुरै वहुत जतननि करि, तऊ दोप नहिं जाइ ।।
कपट हेत की प्रीति निरंतर, नाथि चुपाई गाइ।
दूध फाटि जैसैं ह्वै काँजी, कौन स्वाद करि खाइ ।।
केरा पास जु वैरि निरंतर, हालत दुख दै जाइ।
स्वाति बूँद ज्यौं परै फनिक मुख, परत विषै ह्वै जाइ ।।
एती कतो तुम जो उनकी, कहत वनाइ वनाइ।
'सूरजदास' दिगंबरपुर तैं, रजक कहा व्यौसाइ ।। ३९५७ ।।

राग धनाश्री ॥ ४५७५ ॥

ऊधौ तुम हौ अति बड़ भागी।
अपरस रहत सनेह तगादै, नाहिन मन अनुरागी ॥
पुरइनि पात रहत जल भीतर, ता रस देह न दागी।
ज्यौं जल माहँ तेल की गागरि, बूँद न ताकौ लागी ॥
प्रीति नदी मै पाउँ न बोरयौ, दृष्टि न रूप परागी।
'सूरदास' अबला हम भोरी, गुर चींटी ज्यौं पागी ॥ ३९५८ ॥

राग धनाश्री ॥ ४५७६ ॥

हमतै हरि कबहूँ न उदास।
रास खिलाइ पिलाइ अधर रस, क्यौ बिसरत ब्रज बास ॥
तुमसौ प्रेम कथा कौ कहिबौ, मनौ काटिबौ घास।
बहिरौ तान स्वाद कह जानै, गूँगौ बात मिठास ॥
सुनि री सखी बहुरि हरि ऐहै, वह सुख वहै बिलास।
'सूरदास' ऊधौ अब हमकौ, भए तेरहौ मास ॥ ३९५९ ॥

राग धनाश्री ॥ ४५७७ ॥

तेरो बुरौ न कोऊ मानै।
रस की बात मधुप नीरस सुनि, रसिक होइ सो जानै ॥
दादुर बसै निकट कमलनि के, जनम न रस पहिचानै।
अलि अनुराग उड़त मन बाँध्यौ, घैर सुनत नहिं कानै ॥
सरिता चली मिलन सागर कौ, कूल सबै द्रुम भानै।
कायर बकै लोह तै भागै, लरै सो 'सूर' बखानै ॥ ३९६० ॥

राग धनाश्री ॥ ४५७८ ॥

हम सब जानति हरि की घातै।
तुम जु कहत वै राज करत नहिं, जानत हौ कछु कातै ॥
मारे कंस सुरनि सुख दीन्हौ, असुर जरे सिर पा तै।
उग्रसेन बैठारि सिहासन, लोग कहत कुल नातै ॥
तप तै राज, राज तै आगे, तुम सब समुझत बातै।
'सूर' स्याम इहिं भाँति सयाने, हमसौ मिलवत सातै ॥ ३९६१ ॥

राग धनाश्री ॥ ४५७९ ॥

जान्यौ नंदसुवन कौ हेत।
राजनीति की रीति सुनौ हो, चरत बारिचर खेत ॥
जिनके संग बिहार किए, ते जोग सँदेसौ देत।
इन बातनि सोई पै भूले, जाके मन नहि चेत ॥
रीझे जाइ कंसदासी पर, सुधि ब्रजवधू न लेत।
'सूरदास' मनिभूषन ऊपर, संख धरत है सेत ॥ ३९६२ ॥

राग नट ॥ ४५८० ॥

ऊधौ है तू हरि के हित कौ।
हम निरगुन तबही तै जान्यौ, गुन मेटयौ जब पितु कौ ॥
समुझहु नैकु स्रवन दै सुनियै, प्रगट बखानौ नित कौ।
कूप रतनघट कहि क्यौ निकसै, बिनु गुन बहुतै बित कौ ॥

पूरनता तौ तबही बूड़ी, संग गए लै चित कौ।
हम तौ खिझहिं 'सूर' सुनि षट्पद, लोग बटाऊ हित कौ॥ ३९६३॥

॥ ५४८१॥

मधुकर अनरुचि कैसे गावै।
चौपद होइ ताहि समुझैयै, षटपद को समुझावै॥
मुख औरै अंतरगति औरै, औरै ज्ञान दृढ़ावै।
दारु काटि अलि सदन संचरे, सतपत्रहिं न सतावै॥
ल्याए जोग बेंचिबे कारन, ब्रज मैं नाहिं विकावै।
'सूरदास' ऐसौ को गाहक, लै सिवपुरी पठावै॥ ३९६४॥

राग काफी॥ ४५८२॥

आयौ घोष बड़ौ ब्यौपारी।
खेप लादि गुरु ज्ञान जोग की, ब्रज मैं आनि उतारी॥
फाटक दै कै हाटक माँगत, भोरौ निपट सुधारी।
धुरही तैं खोटौ खायौ है, लिये फिरत सिर भारी॥
इनकै कहे कौन डहकावै, ऐसी कौन अनारी।
अपनौ दूध छाँड़ि को पीवै, खार कूप कौ बारी॥
ऊधौ जाहु सवारैं ह्याँ तैं, वेगि गहरु जनि लावहु।
मुख माग्यौ पैहौ 'सूरज' प्रभु, साहुहि आनि दिखावहु॥ ३९७५॥

राग धनाश्री॥ ४५८३॥

ऊधौ जोग कहा है कीजतु।
ओढ़ियत है कि बिछैयत है, किधौं खैयत है किधौं पीजत॥
कीधौं कछु खिलौना सुंदर, की कछु भूषन नीकौ।
हमरे नंदनँदन जो चहियतु, मोहन जीवन जी कौ॥
तुम जु कहत हरि निगुन निरंतर, निगम नेति है रीति।
प्रगट रूप की रासि मनोहर, क्यौं छाँडे परतीति॥
गाइ चरावन गए घोष तैं, अबही है फिरि आवत।
सोई 'सूर' सहाइ हमारे, बेनु रसाल बजावत॥ ३९६६॥

राग मलार॥ ४५८४॥

ऊधौ जान्यौ ज्ञान तिहारौ।
जानै कहा राजगति लीला, अंत अहीर बिचारौ॥
भली भई हम सबै अयानी, स्यानी सौ मन मान्यौ।
लाज भए प्रभु आवत नाहीं, ह्वै जु रहे खिसियानौ॥
लै आवौ हम कछु न कैहै, मिलिहै, प्रान पियारे।
व्याहौ बीस धरौ दस कुबिजा, अंतहू स्याम हमारे॥
सुनि री सखी कछू नहिं कहियै, माधौ आवन दीजै।
'सूरदास' प्रभु आन मिलै जौ, हाँसी करि करि लीजै॥ ३९६७॥

राग मलार॥ ४५८५॥

मधुकर तुम हौ स्याम सखाई।
पा लागौं यह दोष बकसियौ, सनमुख करति ढिठाई॥

कौनै रंक संपदा विलसी, सोवत सपनै पाई।
किहिं सोने की उड़त चिरैया, डोरा बाँधि उड़ाई॥
धाम धुवाँ के कहौ कौन के, कौनै धाम उठाई।
किहिं अकास तै तोरि तरैया, आनि धरे धरनाई॥
ओलनि की माला कर अपनै, कौनै गूँथि वनाई।
किहिं कागद की तरनी कीन्ही, कौन तर्यौ सर जाई॥
कौनै अवला नैन मूँदि कै, जोग समाधि लगाई।
इहिं उर आन रूप देखन कौं, आगि उठी अनखाई॥
सुनि ऊधौ तुम फिरि फिरि गावत, यामै कौन वडाई।
'सूरदास' प्रभु व्रज जुवतिनि कौ, प्रेम कह्यौ नहिं जाई॥ ३९६८॥

॥ ४५८६ ॥

मधुकर पीत वदन किहिं हेत।
जनियत है मुख पांडु रोग भयौ, जुवतिनि कौ दुख होत॥
रसमय तन मन स्याम राम कौं, जो उचरै सकेत।
कमलनयन के वचन सुधा सम, करन घूँट भरि लेत॥
कुत्सित कटु वायक सायक से, को वोलत रसखेत।
इनहिं चातुरी लोग वापुरे, कहत धरम की सेत॥
माथे परौ जोग पथ ताकै ,वक्ता छपद समेत।
लोचन ललित कटाच्छ मोच्छ विनु महिमा जिऐ निकेत॥
मनसा वाचा और कर्मना स्याम सुदर सौ हेत।
'सूरदास' मन की सव जानत, हमरे मनहिं जितेत॥ ३९६९॥

राग गौरी ॥ ४५८७ ॥

मन की मन ही माँझ रही।
कहिऐ जाइ कौन पै ऊधौ, नाही परत कही॥
अवधि अधार आस आवन की, तन मन विथा सही।
अव इन जोग सँदेसनि सुनि सुनि, विरहिनि विरह दही॥
चाहति हुती गुहारि जितहिं तै, उत तै धार वही।
'सूरदास' अव धीर धरहिं क्यौ, मरजादा न लही॥ ३९७०॥

राग गौरी ॥ ४५८८ ॥

तुमहिं दोप नहि हम अति वौरी। रूप निरखि दृग लागे ठौरी॥
चित चोराइ लियौ मूरति सो री। सुभग कलेवर कुंकुम खौरी॥
गुंज माल उर पीत पिछौरी। गहत सोइ जु समात अँकौरी॥
'सूर' स्याम सौ कहि इक ठौरी। यह उपदेस सुनै ते औरी॥३९७१॥

राग नट ॥ ४५८९ ॥

स्याम तुम ठग सौ प्रीति करी।
काटे नाक पिछौरे पोछत, तातै सव सुधरी॥
ह्याँ ऊधौ काहे कौ आए, कौन सी अटक परी।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे मिलन विनु. सव पाती उघरी॥ ३९७२॥

राग सारंग ॥ ४५९० ॥

ऊधौ नूतन राज भयौ।
नए गुपाल नई कुविजा बनी, नूतन नेह ठयौ॥
नए सखा जोरे जादवकुल, अरि नृप कंस हयौ।
नूतन नारि नए पुर कीन्हौ, तिन अपनाइ लियौ॥
विसरे रास विलास कुंज सव, अपनी जाति गयौ।
'सूरदास' प्रभु वहुत वटोरी, दिन दिन होत नयौ॥ ३९७३ ॥

राग सारंग ॥ ४५९१ ॥

अव तुम कापर कपट वनावत।
नाहिंन कंस कान्ह नहि गोकुल, को पठवत कहँ आवत॥
जिन मोहन वंसी वारिज कर, सुख तन सींचि वढ़ायौ।
सो पुनि ऊधौ कर कारन क्यौं, जोग कुठार पठायौ॥
यह इतनौ मानुष हूँ जानै, जिनकै है मति थोरी।
धोखै ही विरवा लगाइ कै, काटत नाहिं वहोरी॥
वै प्रवीन अति नागर ऊधौ, जानि परस्पर प्रेम।
कैसे कै पठवत वै आवत, टारन कौ हित नेम॥
स्वर्गहुँ गए कंस अपराधी, परचौ हमारै खोज।
दृष्टि टारि, ध्यानहुँ तै टारत, वाउ सवनि कौ चोज॥
विद्यमान आए जे छल करि, तिन अपनौ फल पायौ।
ह्याँ है हृदै 'सूर' के स्वामी, वनत न स्वाँग वनायौ॥ ३९७४ ॥

राग सारंग ॥ ४५९२ ॥

अपने स्वारथ के सव कोऊ।
चुप करि रहौ मधुप रसलंपट, तुम देखे अरु ओऊ॥
जो कछु कह्यौ कह्यौ चाहत हौ, कहि निरवारौ सोऊ।
अव मेरै मन ऐसियै पटपद, होनी होउ सु होऊ॥
तव कत रास रच्यौ वृंदावन, जौ पै ज्ञान हुतोऊ।
लीन्हे जोग फिरत जुवतिनि मैं, वडे सुपत तुम दोऊ॥
छुटि गयौ मान परेखौ रे अलि, हृदै हुतौ वह जोऊ।
'सूरदास' प्रभु गोकुल विसरचौ, चित चिंतामनि खोऊ॥ ३९७५ ॥

राग नट ॥ ४५९३ ॥

कहत कत परदेसी की वात।
मंदिरअरध अवधि वदि हमसौं, हरि अहार चलि जात॥
ससिरिपु वरष, सूररिपु जुग वर, हररिपु कीन्हौ घात।
मघपंचक लै गयौ साँवरौ, तातैं अति अकुलात॥
नखत, वेद, ग्रह, जोरि अर्ध करि, सोइ वनत अव खात।
'सूरदास' वस भईं विरह के, कर मीजैं पछितात॥ ३९७६ ॥

राग मलार ॥ ४५९४ ॥

ऊधौ जानी न हरि यह वात।
वैठे रथ ऊपर चढ़ि भोरहिं, हँसत मधुपुरी जात॥
सुफलकसुत मिलि ठग ठान्यौ है, साधु वेष मन घात।
जेते वडे धरम धुज मानी, संग प्रेम पथ पात॥

जदुकुल मै दोउ संत सवै कहै, तिनके ये उतपात।
एकनि हरे प्रान गोकुल के, अपर जोग कुसलात।।
जद्यपि 'सूर' प्रताप स्याम कौ, दानव दुष्ट दुरात।
तद्यपि भवन भाव नहि ब्रज विनु, खोजौ दीपै सात।। ३६७७।।

राग मलार।। ४५९५।।

हम अलि कैसे कै पतियाहि।
वचन तुम्हारे हृदय न आवत, क्यौ करि धीर धराहि।।
वपु आकार वेप नहि जाकै, कौन ठौर मन लागै।
क्यौ करि रहै कंठ मैं मनियाँ, बिना पिरोये धागै।।
तुमही कहत आहि वह निरगुन, कहा सरै तिहि काज।
'सूरजदास' सगुन मिलि मोहन, रोम रोम सुख राज।। ३६७८।।

राग मलार।। ४५९६।।

मधुकर जानत है सब कोऊ।
जैसे तुम अरु सखा तुम्हारे, गुननि आगरे दोऊ।।
सुफलकसुत कारे नख सिख तै, कारे तुम अरु ओऊ।
सरवस हरत करत अपने सुख, कोउ किनौ गुन होऊ।।
प्रेम कृपन थोरे वित वपुरौ, उवरत नाहीं सोऊ।
'सूर' सनेह करै जो तुमसौ, सो पुनि आपु विगोऊ।। ३६७९।।

राग भैरव।। ४५९७।।

मधुकर कहियत चतुर सयाने।
तैसे तुम तैसेइ वै ठाकुर, एकहि मोल विकाने।।
पहिली प्रीति पिवाइ सुधा रस, पाछै जोग बखाने।
ज्यौ ठग मीठी कहि संतोषत, फिरि प्राननि गहकानै।।
एक समय पकज-रस-वस ह्वै, दिनकर अस्त न जानै।
यह गति भई 'सूर' ह्याँ हरि विनु, हाथ मीजि पछितानै।। ३६८०।।

राग मलार।। ४५९८।।

मधुकर तुम रसलंपट लोग।
कमल कोप वस रहत निरंतर, हमहिं सिखावत जोग।।
अपने काज फिरत वन अंतर, निमिप नही अकुलात।
पुहुप गएँ वहुरौ बल्लिन के, नैकु निकट नहि जात।।
तुम चचल वै चोर सकल अँग, वातनि को पतियात।
'सूर' विधाता दोउ रचे है, मधुप स्याम इक गात।। ३६८१।।

राग केदारौ।। ४५९९।।

मधुकर मीत नही संसार।
जहँ जाकौ सुख लौस बढत है, तहँ ताकौ अनुसार।।
तौ लौ लिपटि रहत अंबुज पर, हिमकर जनित तुषार।
नैसुक प्रभा प्रगट दिनकर की, तच्छन तजत विहार।।
मृदुल मल्लिका ऐसी सुनि अलि, कुसुम करत जिहि भार।
तिहि मर्दन करि गंध लेत पुनि, सदन रचत टकसार।।

नाना स्वाद करत नित भोजन, एकहि दिवस अवार।
तच्छन हस्त चरन गति सिथिलित, पंथ न पैंड़ पसार।।
विषयी भजत त्रिया अँग जवहीं, तव त्यागत उर हार।
भोर भएँ निकसत अंतर करि, गिरि सरिता आकार।।
कहि धौ कौन हेत हरि गोकुल, प्रगट कियौ अवतार।
किनकै हेत लई कर मुरली, अंग रूप सत मार।।
'सूर' स्याम ऐसी न वूझियै, जहँ नित अटल विहार।
विरद घटत किहि कौ तुम देख्यौ, यह कछु करौ विचार।। ३६८२।।

राग सारंग।। ४६००।।

मधुप रावरी यह पहिचानि।
वास रस लै अनत वैठत, पुहुप की तजि कानि।।
वाटिका वहु विपिन जाकैं, एक वै कुम्हिलानि।
तहाँ अगनित पुहुप फूले, कौन ताकैं हानि।।
काम पावक जरत छाती, लौंन लायौ आनि।
जोग पाती हाथ दीन्ही, विप लगायौ सानि।।
सीस की मनि हरी जिनकी, कौन तिनकी वानि।
निठुर ह्वै तुम 'सूर' के प्रभु, व्रज तज्यौ यह जानि।। ३६८३।।

राग सारंग।। ४६०१।।

तो कहै हरि सौ वात हमारी।
यह तौ हम तव ते जिय जानी, जव तैं भए मधुप अधिकारी।।
एक प्रकृति एकै कैतव गति, तिहि गुन ऐसी नहिं जिय भावै।
प्रगटे नित नव कज मनोहर, व्रज की सरक करन कित आवै।।
जो नित नव वेली रस चाखत, अरु जाकी सव तैं गति न्यारी।
ता अलि की संगति वसि मधुपुरि, 'सूरदास' प्रभु सुरति विसारी।।३६८४।।

साग रारंग।। ४६०२।।

ऊधौ तुम अति चतुर सुजान।
जे पहिलैं मन रँगे स्याम रँग, अव न चढ़ै रँग आन।।
ए दोऊ लोचन विराट के, स्रुति कहैं एक समान।
भेद चकोर कियौ ताहू मै, विधु प्रीतम रिपु भान।।
विरहिनि विरह भजै पा लागौं, तुम हौ पूरन ज्ञान।
दादुर जल विनु जियै पवन भखि, मीन तजै हठि प्रान।।
वारिज वदन नैन मेरे पट्पद, कव करिहैं मधुपान।
'सूरदास' गोपिन परतिज्ञा, छुवहि न जोग विरान।। ३६८५।।

राग सारंग।। ४६०३।।

ऊधौ विरहौ प्रेम करै।
ज्यौ विनु पुट पट गहत न रँग कौं, रंग न रसै परै।।
ज्यौ घर दहै वीज अंकुर गिरि, तौ सत फरनि फरै।
ज्यौ घट अनल दहत तन अपनौ, पुनि पय अमी भरै।।
ज्यौ रन 'सूर' सहै सर सन्मुख, तौ रवि रथहूँ अरै।
'सूर' गुपाल प्रेमपथ चलि करि, क्यौ दुख सुखनि डरै।। ३६८६।।

राग मलार ॥ ४६०४ ॥

मधुकर प्रीति किये पछितानी।
हम जानी ऐसैंहिं निबहैगी, उन कछु औरै ठानी ॥
वा मोहन कौ कौन पतीजै, बोलत मधुरी बानी।
हमकौ लिखि लिखि जोग पठावत, आपु करत रजधानी ॥
सूनी सेज सुहाइ न हरि बिनु, जागत रैनि बिहानी।
जब तै गवन कियौ मधुबन कौ, नैननि बरषत पानी ॥
कहियौ जाइ स्यामसुदर कौ, अंतरगत की जानी।
'सूरदास' प्रभु मिलि कै बिछुरे, तातै भई दिवानी ॥ ३९८७ ॥

राग मलार ॥ ४६०५ ॥

हमारैं हरि हारिल की लकरी ।
मनक्रम बचन नंदनंदन उर, यह दृढ़ करि पकरी ॥
जागत सोवत स्वप्न दिवस निसि, कान्ह कान्ह जक री।
सुनत जोग लागत है ऐसौ, ज्यौं करुई ककरी ॥
सु तौ व्याधि हमकौ लै आए, देखी सुनी न करी।
यह तौ 'सूर' तिनहिं लै सौंपौ, जिनके मन चकरी ॥ ३९८८ ॥

राग सारंग ॥ ४६०६ ॥

बात हमारी मानौ जौ तौ।
आवत कह्यौ हुतौ हम जीवति, तातै उनही कौ तौ ॥
एक बोल के लीन्हे अपनी, खोई देहीं देवति।
तातै खरी मरति इहिं ठाहर, वाहीं बचनहिं सेवति ॥
इतनौ कह्यौ करौ, धरि राखौ जोग आपने घर कौ।
पैंज खैंचि मेटन आए हौ, तनक उजारौ खर कौ ॥
नंदनंदन लै गए हमारौ, सब ब्रजकुल कौ ऊब।
'सूर' स्याम तजि और न सूझै, ज्यौं खेरे की दूब ॥ ३९८९ ॥

राग मलार ॥ ४६०७ ॥

स्याम मुख देखैं ही परतीति।
जौ तुम कोटि जतन करि सिखवहु, जोग ध्यान की रीति ॥
नाहिन कछू सयान ज्ञान मैं, यह हम कैसै मानैं।
कहौ कहा गहियै अनभव कौ, कैसै उर मैं आनैं ॥
यह मन एक, एक वह मूरति, भृंगी कीट समानैं।
'सूर' सपथ दै पूछौ ऊधौ, इहिं ब्रज लोग सयानैं ॥ ३९९० ॥

राग सारंग ॥ ४६०८ ॥

हरि है राजनीति पढि आए।
समुझी बात कहत मधुकर के, समाचार सब पाए ॥
इक अति चतुर हुते पहिलै हीं, अब गुरुग्रंथ पढ़ाए ॥
बढ़ी बुद्धि जानी जो उनकी, जोग सँदेस पठाए ॥
ऊधौ भले लोग आगे के, परहित डोलत धाए।
अब अपने मन फेर पाइहै, चलत जु हुते चुराए ॥

ते क्यौं अनीति करैं आपुन, जे और अनीति छुड़ाए।
राजधरम तौ यहै 'सूर', जो प्रजा न जाहिं सताए॥ ३९९१॥

॥ ४६०९॥

अब हरि भलैं जाइ पढ़ि आए।
अबलनि हूँ कौ जोग सिखावन, तुमसे गुनी पठाए॥
जौ पै ऊधौ यही बतावत, रस मैं काहे न गाए।
करी करतूति कहत नहिं आवै, जोग नीति लै आए॥
वै अक्रूर वेइ हरि ऊधौ, आन्यौ जोगहि बाँचै।
हम तौ 'सूर' तबहिं सचु पावैं, जौ फिरि गोकुल नाचै॥ ३९९२॥

राग सारंग॥ ४६१०॥

बारक मिलत कहा है होत।
एते मान कहा उहिं कुबिजा, पाए है परि पोत॥
इतनिक दूर भए कछु औरै, बिरसयौ गोकुल गोत।
कैसैं जियहिं बदन बिनु देखे, बिरहिनि बिरह निसोत॥
आए जोग देन अबलनि कौ, सुरभि कंध वृष जोत।
'सूरदास' प्रभु तौ पै जीवहिं, देखहिं मुख उद्योत॥ ३९९३॥

राग सारंग॥ ४६११॥

बारक कान्ह करी किन फेरौ?
दरसन दै मधुबनहिं सिधारौ, मेरे लेखे सुख इतनौ बहुतेरौ॥
भलेहिं मिले वसुदेव, देवकी, जननि जनक निज कुटुँब घनेरौ।
किहिं अवलंबि रहैं हम ऊधौ, देखि दुख नँद जसुमति केरौ॥
तुम बिन को अनाथ प्रति पालक, जाजरि नाव कुसंग सम्हेरौ।
गए सिंधु को पार उतारैं अब यह, 'सूर' थक्यौ ब्रज बेरौ॥ ३९९४॥

॥ ४६१२॥

कहा होत जो हरि हित चित धरि, एक बार ब्रज आवते।
तरसत ब्रज के लोग दरस कौ, निरखि निरखि सुख पावते॥
मुरली सब्द सुनावत सबहिनि, हरते तन की पीर।
मधुरे बचन बोलि अमृत मुख, बिरहिनि देते धीर॥
सब मिलि जग जस गावत उनकौ, हरप मानि उर आनत।
नासत चिंता ब्रज बनितनि की, जनम सुफल करि जानत॥
दुरी दुरा कौ खेल न कोऊ, खेलत हैं ब्रज महियाँ।
बाल दसा लपटाइ गहत हे, हँसि हँसि हमरी बहियाँ॥
हम दासी बिनु मोल की उनकी, हमहिं जु चित्त बिसारी।
इत तैं उत हरि रमि रहे अब तौ, कुबिजा भई पियारी॥
हिय मैं बातैं समुझि समुझि कै, लोचन भरि भरि आए।
'सूर' सनेही स्याम प्रीति के, ते अब भये पराए॥ ३९९५॥

राग मलार॥ ४६१३॥

मधुकर नाहिन काज सँदेसौ।
इहिं ब्रज कौनैं जोग लिख्यौ है, कोटि जतन उपदेसौ॥

रवि के उदय मिलन चकई कौ, ससि कैं समैं अँदेसौ।
चातक क्यौं वन वसत बापुरौ, बधिकहिं काज बधे सौ ।।
नगर आहि नागर विनु सूनौ, कौन जु काज बसे सौ।
'सूर' सुभाव मिटै क्यौं कारैं, फनिकहि काज डसे सौ ।। ३९९६ ।।

राग कल्यान ।। ४६१४ ।।

ऊधौ जोग जानै कौन।
हम जुवति कह जोग जानै, जियत जाकौं रौन ।।
जोग हम पै होइ न आवै, धरि न आवै मौन।
बाँधिहै क्यौं मन पखेरू, साधिहैं क्यौं पौन ।।
पहिरि अंबर पात के मृगछाल ओढै कौन।
गुरु हमारे कूवरी कर, मंत्र माला जौन ।।
मदनमोहन बिनु हमारैं, परै बातनि कौन।
'सूर' प्रभु कब आइहै वे, स्याम दुख के दौन ।। ३९९७ ।।

राग मलार ।। ४६१५ ।।

ऊधौ हम वह कैसे मानैं।
धूत धौल लंपट जैसे हरि, तैसे औरनि जानैं ।।
सुनत सँदेस अधिक तन कंपत, जनु कोउ उर तहँ आनैं।
जैसैं वधिक गवहिं तैं खेलत, अंत धनुहियाँ तानैं ।।
निरगुन वचन कहहु जनि हमसौं. ऐसी करत न कानैं।
'सूरदास' प्रभु की हौं जानौ, कछू कहै कछु ठानैं ।। ३९९८ ।।

राग मलार ।। ४६१६ ।।

ऊधौ अब कछु कही न जाइ।
रानी भई कूवरी दासी, कापै वरनी जाइ ।।
जोइ जोइ मंत्र कहत कुबिजा है, सोइ सोइ लिखत बनाइ।
अत अहीर प्रीति दासी सौं, मिटत न सहज सुभाइ ।।
छुटत नही गुन औगुन जाकौ, काहूँ जतन बनाइ।
'सूर' स्वभाव तजै नहि कारौ, कीजै कोटि उपाइ ।। ३९९९ ।।

।। ४६१७ ।।

(ऊधौ) हरि हीं पै ऐसी बनि आवत।
हम तौ भोग जनम नहि जानति, तापर जोग सिखावत ।।
जौ पै कृपा तजी मन माही, मुख कहि कहा जनावत।
पावक वचन सँदेस सुनत, उर सुलगि सुलगि दव लावत ।।
रीझे तौ कुबिजा सी दासी, आपुहि आपु हँसावत।
परिमिति जानी 'सूर' रावरी, तजि अमृत विप भावत ।। ४००० ।।

राग मलार ।। ४६१८ ।।

वदले कौ वदलौ लै जाहु।
उनकी एक हमारी है, तुम वडे जनैया आहु ।।
तुम अलि जानि हमहिं अति भोरी, सारौ चाहत दाउँ।
अपनी वेर मुकर ह्वै भागत, हियै चौगुनो चाउ ।।

अब तुम साखि बदौ तहँ जैयै, मेटौ उर कौ दाहु।
'सूरदास' व्यौहार निवेरहु, हम तुम दोऊ साहु॥ ४००१॥

राग मलार॥ ४६२९॥

ऊधौ इहिं ब्रज बिरह बढ्यौ।
घर बाहर, सरिता, बन, उपवन देखहु द्रुमनि चढ़्यौ॥
दिन अरु रैन, सधूम भयानक, दिसि दिसि तिमिर मढ़्यौ।
दुद करत अति प्रबल होत पुरपंथहुँ अनल दढ़्यौ॥
जरि नहिं भई भस्म ताहीं छिन, जौ हरि नाम रढ़्यौ।
'सूरदास' प्रभु नदनँदन बिनु, नाहिन जात कढ़्यौ॥ ४००२॥

राग मलार॥ ४६३०॥

ऊधौ जौ तुम बात कहीं।
ताकौ कछू न उत्तर आवै, समुझि बिचारि रहीं॥
पा लागौ तुमहीं बूझति हौ, तुम पर बुधि उमहीं।
कैसैं सीतल होइँ पवन जल पियैं, बियोग दही॥
कुबिजा सौ पढ़ि तुमहि पठाए, नागर नवल लही।
अब जोई पद देहिं कृपा करि, सोइ हम करैं सही॥
बिछुरत बिरह अगिनि नाही जरि, नैननि जल निवही।
अब सुनि सूल सहति सब 'सूरज', कुल मरजाद ढही॥ ४००३॥

॥ ४६२१॥

मेरे लेखैं मधुबन बसत उजारि।
अपने कुल की कानि करति हौ, कासौ कहौ पुकारि॥
सहज भाव बूझहि सब गोपी, क्यौ जीवहि ब्रजनारि।
आपुन जाइ मधुपुरी बैठे, हमै चले जिय मारि॥
जोग जुगुति हमकौ लिखि पठयौ, मुद्रा भस्म अधारि।
'सूरदास' प्रभु कब धौ मिलौगे, लै गए प्रीति निवारि॥ ४००४॥

राग मलार॥ ४६२२॥

गयौ मिटि पतियाहू व्यौहार।
मधुबन बसि मधुरिपु सुनि मधुकर, छाँडे ब्रज आभार॥
धरनीधर गिरिधर कर धरि कै, मुरलीधर सुख सार।
अब लिखि जोग सँदेसौ पठवत, व्यापक अगम अपार॥
हाँसी अरु दुख सुनहु सखी सुठि, स्रवन दसा सचार।
'सूर' प्रान तन तजत न यातैं, सुमिरि अवधि आधार॥ ४००५॥

॥ ४६२३॥

काहे करति हौ संदेह।
ऊधौ के सदेसनि छाती होन चहत है बेह॥
जिनकै बिरह रैनि औ बासर, बन समान भयौ गेहु।
तिन गुपाल कौ निकट बतावत, खोजि हृदै मैं लेहु॥
जीवत रही आजु लौ सोचनि, अचरज मानहु एहु।
रोकै हियौ जु 'सूर' पुरातन, कान्ह कुँवर कौ नेहु॥ ४००६॥

राग सोरठ ॥ ४६२४ ॥

ऊधौ हरि यह कहा बिचारी।
सदा समीप रहत वृंदावन, करत बिहार विहारी ॥
अब तौ रग रँगे कुबिजा के, बिसरि गई व्रजनारी।
कछु इक मंत्र कियौ उन दासी, तिहिं बिनोद अधिकारी ॥
दिन दस और रहौ तुम व्रज मै, देखौ दसा विचारी।
प्रान रहत है आसा लागे, कब आवैं गिरिधारी ॥
तुम जो कहत जोग है नीकौ, कहौ कौन विधि कीजै।
हम तन ध्यान नदनंदन कौ, निरखि निरखि सो जीजै ॥
सुदर स्याम कठ वैजंती, माथै मुकुट बिराजै।
कमलनैन मकराकृत कुडल, देखत ही भव भाजै ॥
तातै जोग न मन मै आवै, तू नीके करि राखि।
'सूरदास' स्वामी के आगै, निगम पुकारत साखि ॥ ४००७ ॥

राग सारंग ॥ ४६२५ ॥

मधुकर आपुन होहिं विराने।
बाहर हेतु हितू कहवावत, भीतर काज सयाने ॥
ज्यौं सुक पिंजर माहिं उचारत, ज्यौ ज्यौ कहत वखाने।
छूटत ही उडि मिलै अपुन कुल, प्रीति न पल ठहराने ॥
जद्यपि मन नहिं तजत मनोहर, तद्यपि कपटी जाने।
'सूरदास' प्रभु कौन काज कौ, माखी मधु लपटाने ॥ ४००८ ॥

राग सोरठ ॥ ४६२६ ॥

हरि तै भलौ सुपति सीता कौ।
जाकै विरह जतन ए कीन्हे, सिंधु कियौ बीता कौ ॥
लंका जारि सकल रिपु मारे, देख्यौ मुख पुनि ताकौ।
दूत हाथ उन लिखि जु पठायौ, ज्ञान कह्यौ गीता कौ ॥
तिनकौ कहा परेखौ कीजै, कुबिजा के मीता कौ।
चढे सेज सातौ सुधि बिसरी, ज्यौ पीता चीता कौ ॥
करि अति कृपा जोग लिखि पठयौ, देखि डराउँ ताकौ।
'सूरजदास' प्रीति कह जानै, लोभी नवनीता कौ ॥ ४००९ ॥

राग मारू ॥ ४६२७ ॥

सव सुख लै करि स्याम सिधारे।
सुफलकसुत कछु भली न कीन्ही, वैठैं ही अपडारे ॥
चलत पीत पट गहि नहि राखे, यह जिय सोच हमारे।
भूख नीद छुटि गई सुवासर, सुनहु न ऊधौ प्यारे ॥
महा प्रलय तै कत व्रज राख्यौ, कर धरि सैल उवारे।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस विनु, क्यौ जु रहै ये तारे ॥ ४०१० ॥

राग सारंग ॥ ४६२८ ॥

ऊधौ हम व्रजनाथ विसारे।
जव तै गवन कियौ मधुवन कौ, चितवत लोचन हारे ॥

महा प्रलय तैं काहै राखी, इंद्र त्रास प्रभु टारे।
छूटत नही त्रास हिरदै तैं तव न मुई अव मारे।।
अवधि वदी हरि ते सव वीती, आवन कहि जु सिधारे।
'सूरदास' प्रभु कव धौ मिलैंगे, लै गए प्रान हमारे।। ४०११।।

राग सारंग ।। ४६२९ ।।

(पहिलैं) प्रीति करि कहा पोच लागे करन।
ऊधौ कमलनयन सौं कहियौ, गोवरधन की धरन।।
अव दै विरह अनल लगे वारन, तव न दई दौ जरन।
सकट विपति परे पर राखे, लई प्रीति करि सरन।।
तुम्हरी वालदसा व्रजनायक सुमिरि सुमिरि अति भुरन।
'सूरज' स्याम प्रान अव तजिहौ, वेगि दिखावहु चरन।। ४०१२।।

राग मलार ।। ४६३० ।।

प्रीति उहि देस न कोऊ जानत।
तू तौ वात कहत अलि ऐसी, विथा नही पहिचानत।।
जे गुपाल व्रज मैं गृह गृह तैं, दूध दही लै खात।
ते अव दु.ख देत व्रजवासिनि, निठुर भए पुर जात।।
'सूर' कुटिलता जे सुनियत है, लोग पुरातन गावत।
नखसिख लौ विप रूप वसत, पै मधुवन नाम कहावत।। ४०१३।।

राग सारंग ।। ४६३१ ।।

तुम अलि वात नही, कहि जानत।
निरगुन कथा वनाइ कहत नहिं, विरह विथा उर आनत।।
प्रफुलित कमल देखि उड़ि धावत, सव कुल संग लिए।
और सुमन सौ मधु जाँचत हौ, फाटि न जात हिए।।
चातक स्वाति वूँद कौ गाहक, सदा रहत इक रूप।
कह जानैं दादुर जल कौ व्रत, सागर औ सम कूप।।
वात कहौ अव ऐसी जासौ, ताकैं मन तुम भावहु।
'सूर' वचन जैसौ उपदेसत तैसोई तुम पावहु।। ४०१४।।

राग सारंग ।। ४६३२ ।।

कुटिल विनु और न कोई आवै।
तौ व्रजराज प्रेम की वातैं, ताकैं हाथ पठावै।।
प्रीति पुरातन सुमिरि साँवरे, सुरति सँदेसे दीन्हे।
ते अलि कहत और की औरै, स्रुति की मति उर लीन्हे।।
एऊ सखा कह्यौ नहि मानत, गहे जोग की टेक।
ऐसे 'सूर' वहुत मधुवन मैं, कहा दोष हरि एक।। ४०१५।।

राग धनाश्री ।। ४६३३ ।।

वतिअनि सव कोऊ समुझावै।
ऐसौ कोउ नाहिं है प्रीतम, लै व्रजनाथ मिलावै।।
आयौ दूत कपट कौ वासी, निरगुन ज्ञान वतावै।
सखा हमारे स्याम मनोहर, नैननि भरि न दिखावै।।

ज्ञान ध्यान कौ मरम न जानैं, चतुरहिं चतुर कहावैं।
'सूरदास' सबही काहू कौ, अपनौ ही हित भावैं ॥ ४०१६ ॥

राग मलार ॥ ४६३४ ॥

ऊधौ क्यौं बिसरत वह नेह।
हमरैं हृदय आनि नँदनंदन, रचि रचि कीन्हे गेह ॥
एक दिवस गई गाइ दुहावन, वहाँ जु बरष्यौ मेह।
लिए उढ़ाइ कामरी मोहन, निज करि मानी देह ॥
अब हमकौ लिखि लिखि पठवत हैं जोग जुगुति तुम लेहु।
'सूरदास' बिरहिनि क्यों जीवै कौन सयानप एहु ॥ ४०१७ ॥

राग नट ॥ ४६३५ ॥

बातनि क्यौं ब्रजनाथ मिलन कौ बिसरत है अलि नेह।
बंसी-नाद-स्वाद-रस-लपट, मानत नहिं स्रुति एह ॥
को मातुलवध कियौ मधुपुरी, को पति परिजन गेह।
को ऊधौ को जोग निरूपन, नवकिसोर बिनु खेह ॥
कोटि जतन जुगवौ बन बेली, बिनु सींचे बिनु मेह।
हीरा हार चीर सोंधा मिलि, नीर बिना सब देह ॥
कुंभज कुंभ समान ज्ञानपथ, बिनु गुन पानिप बेह।
'सूर' स्यामरस सहज माधुरी, रसकनि कौ अवलेह ॥ ४०१८ ॥

राग मलार ॥ ४६३६ ॥

(ऊधौ) नंद कौ गोपाल मोसौं गयौ तृन ज्यौं तोरि।
मीन जल कौ प्रीति कीन्ही, नाहिं निबही ओर ॥
अबकै जौ हम दरस पावैं, देहिं लाख करोर।
हरि सौ हीरा खाइ कै हम, रहीं समुद्र झकोर ॥
ऊधौ हमरौ दोष नाहीं, वै जु निपट कठोर।
हम जपति हैं नाम निसि दिन, जैसैं चंद चकोर ॥
दासी हम बिनु मोल की अलि, ज्यौं गुड़ी बस डोर।
'सूर' के प्रभु दरस दीजै, नहीं मनसा और ॥ ४०१९ ॥

राग सोरठ ॥ ४६३७ ॥

ऊधौ औरे कान्ह भए।
जब तैं यह ब्रज छाँडि मधुपुरी, कुबिजा धाम गए ॥
कै वह प्रीति रीति गोकुल बसि, दुख सुख सब निरबाहत।
अब यह करत बियोग देह द्रुम, सुनत काम दव दाहत ॥
जहँ स्वारथ तहँ सगुन साँवरौ, निरगुन कपट सुनावत।
'सूर' सुमिरि ब्रजनाथ आपनैं, कत न परेखौ आवत ॥ ४०२० ॥

राग धनाश्री ॥ ४६३८ ॥

ऊधौ मन माने की बात।
दाख छुहारा छाँडि अमृत फल, बिषकीरा बिष खात ॥
ज्यौं चकोर कौं देइ कपूर कोउ, तजि अंगार अघात।
मधुप करत घर कोरि काठ मैं, बँधत कमल के पात ॥

ज्यौ पतंग हित जानि आपनौ, दीपक सौं लपटात।
'सूरदास' जाकौ मन जासौ सोई ताहि सुहात॥ ४०२१॥

राग सोरठ॥ ४६३९॥

बातैं कहत सयाने की सी।
कपट तुम्हारौ प्रगट देखियत, ज्यौ जल नाये सीसी॥
हौ तौ कहत तिहारे हित कौ, एते मैं कत भरमत।
हमहूँ कृपा तिहारी तैं कछु थोरौ थोरौ मरमत॥
घाइ बसाइ गए सुफलक सुत, नैकहु लागी बार न।
'सूर' कृपा करि आए ऊधौ, तापर टेवा टारन॥ २०४२॥

राग बिलावल॥ ४६४०॥

ऊधौ ऐसी हम गुपाल बिनु। सबहीं तैं जैसैं हरवौ तृनु॥
सोचत गनत जाइ इहिं बिधि दिनु। जुग समान निसि होत एक छिनु॥
कहियौ 'सूर' सँदेस स्याम तिनु। जनि राखौ प्रभु पोच बचन रिनु॥
॥ ४०२३॥

॥ ४६४१॥

मधुकर तोहिं कौन सौं हेत।
जो पै चढ़त रंग तुव ऊपर, तौ पै होत स्याम तैं सेत॥
मोहन मनि नहि उर मेली तैं, करि आयौ मुख प्रीति।
अति हठ ढीठ वसीठ स्याम कौ, हमैं सुनावत गीति॥
जौ कारिख तन मेटयौ चाहत, कमल वदन तन चांहि।
'सूर' गुपाल सुधा रस मै मिलि, या मन संग समाहि॥ ४०२४॥

॥ ४६४२॥

ऊधौ सुनौ बिथा तुम तात।
पारधि मारि भाल क्यौ काढ़ै, है उरझ्यौ हृद गात॥
ऐसैं वधिक मृगनि मारन कौ, माथै बाँधे पात।
सुदर स्याम नाद वंसी कै, वँधी काम-सर-घात॥
यह तौ पीर बिरहिनी जानै, बहुत जियै दिन सात।
'सूर' स्याम अपने मारे कत, पूछत हैं कुसलात॥ ४०२५॥

॥ ४६४३॥

जौ पै कृष्न हमहिं जिय भावत।
तौ सुनि मधुप जसोदानंदन, अवही गोकुल आवत॥
जिन नैननि मोहन मुख निरख्यौ, निसि दिन रूप बिचारयौ।
तेई नैन रहत सूने गृह, प्रीति न हियौ बिदारयौ॥
जिहि तन आसन सैन सग सुख, हरि समीप रुचि मानी।
तिहिं तन बिरह न छूटत सुमिरि गुन, नैकहुँ बिथा न जानी॥
जिन स्रवननि सुनि वचन मनोहर, मुरली कल मुख बाजत।
तिन स्रवननि अब सुनति मधुपुरी, देत सँदेसनि लाजत॥

अति प्रचड यह मदन महाभट, जाहि सवै जग जानत।
सो मद हीन दीन ह्वै वपुरो, कोपि धनुप नहिं तानत॥
सर सौरभ ससि अनिल त्रिविध गुन वैसियै प्रकृति निवाहत।
विपम विरह निजु जानि मानि मिति, ते या तनहिं न दाहत॥
वनविलास, व्रजवास, रासमुख, देखि देखि सुचि पावत।
'सूरदास' वहुरो वियोग गति, कुकवि निलज ह्वै गावत॥ ४०२६॥

राग मलार॥ ४६४४॥

अव हरि औरै ही रँग राँचे।
तुम अलि सखा स्याम सुदर के, मतो सयानप काँचे॥
वालापन तै सग रहत हो, सुन्यो न एक पपानी।
जैसे वास वसत है कोऊ, तैसो होत सयानो॥
अरु अपने मुख तुम जु कहत हो, प्रभु सवही भरि पूरि।
आवागमन करत हो कापै, को लागत को दूरि॥
जे उपमा पटतर लै दीजै, ते सव उनहि न लायक।
जो पै अलख रह्यो चाहत, तो वादि भए व्रजनायक॥
अरु जे वुद्धि सिखावहु हमको, ते सव हमहि अलेखै।
'सूर' सुमनसा तव सुख मानै, कमलनयन मुख देखै॥ ४०२७॥

राग मलार॥ ४६४५॥

हरि विनु जान लगे दिन ही दिन । कैसै कै राखै प्रान कान्ह विन॥
करत सु जतन कहा छिन ही छिन । सिह जीभ कैसै धरै हरे तृन॥
जौ पै नहिं मानत जु वचन रिन । तौ का कहियै 'सूर' स्याम सिन॥४०२८॥

॥ ४६४६॥

हरि दरसन को तलफत नैन।
अरु जो चाहत भुजा मिलन को, स्रवन सुनन को वैन॥
जिय तलफत है वन विहरन को, तुम मिलि अरु सव सखियाँ।
कल न परत तुम विनु हम इक छिन, रोवति दिन अरु रतियाँ॥
जव तै तुम हरि विछुरे हम तै, निसि वासर नहिं चैन।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस को, काग उडावति सैन॥ ४०२६॥

राग सोरठ॥ ४६४७॥

हमको नँदनदन को गारो।
इद्र कोप व्रज वह्यौ जात हो, गिरि धरि सकल उवारो॥
राम कृप्न वल वदत न काहू निडर चरावत चारो।
सगरे विगरे के सिर ऊपर वल को वीर रखवारो॥
तवही हमहि भरोसो आयो केसि तृना जव मारो।
'सूरदास' प्रभु रंगभूमि मै हरि जीत्यो नृप हारो॥ ४०३०॥

राग मलार॥ ४६४८॥

यहै प्रकृति परि आई ऊधौ अनुदिन या मन मेरै।
जौ कोउ कोटि जतन करौ कैसैहु, फिरति नही मति फेरै॥
जा दिन तै जसुदा गृह जनमे, सुंदर कुँअर कन्हाई।
ता दिन तै वा दरस परस विनु, और न कछु सुहाई॥

क्रीड़त हँसत कृपा अवलोकत, छिनु समान दिन जाते।
परम तृप्ति सवही अँग होती, लोचन पै न अघाते॥
जागत सोवत सपन स्याम घन, सुदर तन अति भावै।
सु कहि 'सूर' ता कमलनैन विनु, वातनि क्यौं वनि आवै॥ ४०३१॥

राग मलार॥ ४६४९॥

ऐसी सुनियत हिरदै माहँ।
याही में सव वात वूझिवी, चतुर सिरोमनि नाह॥
आवन कह्यो वहुत दिन लाए, करी पाछिली गाह।
हमहिं छाँड़ि कुविजहिं मन दीन्हौ, मेटि वेद की राह॥
एते पर लिख जोग पठावत. सिद्धि वतावत थाह।
'सूर' स्याम अव व्रज किन आवहु, दिन दस मानी साह॥ ४०३२॥

॥ ४६५०॥

कहियै कहा कहत नहिं आवै, सोचनि हृदय पचैयै।
मोहन सो वर कुविजा पावै, हमकौ जोग वतैयै॥
आज्ञा होइ सोइ लै कीजै, विनती यहै सुनैयै।
'सूरदास' प्रभु तृपा वढ़ी अति, दरसन सुधा पियैयै॥ ४०३३॥

राग मलार॥ ४६५१॥

इहिं डर वहुरि न गोकुल आए।
सुनि री सखी हमारी करनी, समुझि मधुपुरी छाए॥
अधरातक तै उठि सव वालक, मोहिं टेरैंगे आइ।
मातु पिता मोकौ पठवैंगे, वनहि चरावन गाइ॥
सूने भवन आइ रोकैंगी, दधि चोरत नवनीत।
पकरि जसोदा पै लै जैहै, नाचहु गावहु गीत॥
ग्वारिनि मोहिं वहुरि वाँधैगी, कैतव वचन सुनाइ।
वै दुख 'सूर' सुमिरि मन ही मन, वहुरि सहै को जाइ॥ ४०३४॥

राग मलार॥ ४६५२॥

ऊधौ वेद वचन प्रमान।
कमलमुख पर नैनखजन, निरखि है क्यौं आन॥
श्रीनिकेत, समेत सव गुन, सकल रूप निधान।
अधर सुधा पियाइ विछुरे, पठै दीन्हौ ज्ञान॥
दूरि नहीं कृपाल केसौ, ये जु हिये समान।
निकरि क्यौ न गोपाल वोलत, दुखिन के दुख जान॥
रूप रेख न देखिऐ तहँ, स्वाद सव्द भुलान।
इच्छुदंड अडारि हरि गुन, गहत पानि विपान॥
वीतराग सुजान जोगिनि, भक्त जननि निवास।
निगम वानी मेटि, कहि क्यौं सकै 'सूरजदास'॥ ४०३५॥

॥ ४६५३॥

ऊधौ हम कत हरि तै न्यारी।
तव तौ वेद रिचा वौरानी, अव व्रजवास दुलारी।
तव हरि निरगुन अगम अगोचर, चले जु चाल हमारी।
अव निज ध्यान हमारौ मोहन, उनहूँ हम न विसारी॥

चाम के दाम चलावत तुम तौ, कुविजा के अधिकारी।
'सूर' स्याम हम सब दिन एकै, भुरै लेहु दिन चारी॥ ४०३६॥

राग मलार॥ ४६५४॥

माधौ मन मरजाद तजी।
ज्यौ गज मत्त जानि हरि तुमसौ, वात विचारि सर्जी॥
माथै नही महावत सतगुरु, अकुस ज्ञानहु टूटचौ॥
धावत अधअवनी आतुर तजि, साँकर सत्सँग छूटचौ।
इद्री जूथ संग लिए विहरत, तृस्ना कानन माहि॥
क्रोध, सोच जल सौ रति मानी, काम भच्छ हित जाहि।
और अधार नही कछु सूभत, भ्रम गहि गुहा रह्यौ॥
'सूर' स्याम केहरि करुनामय, कव नहि विरद गह्यौ॥ ४०३७॥

राग सारंग॥ ४६५५॥

माधौ छाँडि दई पहिचानि।
तव तै विरह कुटिल या गोकुल, कीन्हौ है निज खानि॥
तनु गिरि जानि आनि अवनी उर, इहि भय भीत रहे।
गमन कान्ह छन छन जु काम ससिकिरनि कुदार गहे॥
रज अंजन जल नैन द्वार ह्वै, रह्यौ हृदय भरि पूरि।
निकसत नाहि उपाइ रतन ज्यौ, गयौ स्याम सँग दूरि॥
तुम सो वात और अलि भाषे, उलटि ध्यान वपु जीति।
द्वै नृप लरत प्रजा इंद्री गति, 'सूर' कौन यह नीति॥ ४०३८॥

राग नट॥ ४६५६॥

सखी री पूरनता हम जानी।
याहीं तै अनुमान करति है, पटपद से अगवानी॥
प्रथमहि गाइ ग्वाल सँग रहते, भए छाँछ के वानी।
अव तौ राजनीति सुनियत है, कुविजा सी पटरानी॥
मन हरि लियौ वजाइ वाँसुरी, अव ह्वै वैठे ज्ञानी।
महा मल्ल मारत मन मोहन, काहे न संका आनी॥
अर्ध निसा व्रजनारि संग लै, वन वसि लीला ठानी।
'सूरदास' ये कलपति वनिता, कहै कौन अव मानी॥ ४०३९॥

राग विलावल॥ ४६५७॥

जनि कोऊ वस परौ पराऐं।
सरवस दियौ आपनौ उनकौ, तऊ न कछू कान्ह के भाऐ॥
सहज समाधि रहत जोगी ज्यौ, मुद्रा जटा विभूति लगाऐं।
राज करौ यह दान तुम्हारौ, जौ पै देत वहुत तरसाऐं॥
ना जानौ अव भलौ मानिहै, ऊधौ किहि विधि नाचे गाऐ।
'सूरदास' प्रभु दरसन कारन, मानौ फिरति धतूरा खाऐं॥ ४०४०॥

॥ ४६५८॥

ऊधौ अति ओछे की प्रीति।
वाहर मिलत कपट भीतर यौं, ज्यौ खीरा की रीति॥

मै अपनौ अभिमान जानि कै, चंद चकोरी चीत।
मन, बच, क्रम तन मन सब अरप्यौ लोक लाज कुल जीत॥
इतौ सँदेस कह्यौ हरि सौ तुम, हम जु तजी किहिं नीत।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस कौ, मन जोवत जुग बीत॥ ४०४१॥

राग मलार॥ ४६५६॥

जौ कोउ विरहिनि कौ दुख जानै।
तौ तजि सगुन साँवरी मूरति, कत उपदेसै ज्ञानै॥
कुमुद चकोर मुदित विधु निरखत, कहा करै लै भानै।
चातक सदा स्वाति कौ सेवक, दुखित होत बिनु पानै॥
भौर, कुरंग, काग, कोइल कौ, कविजन कपट बखानै।
'सूरदास' जौ सरबस दीजै, कारे कृतहि न मानै॥ ४०४२॥

राग मलार॥ ४६६०॥

स्याम बिनु क्यौ जीवै ब्रजवासी।
इहिं घट प्रान रहत क्यौ ऊधौ, बिछुरै कुजबिलासी॥
कुबिजा बर पायौ मोहन सौ, मानौ तप कियौ कासी।
'सूर' स्याम कौ यहै परेखौ, इक दुख दूजै हाँसी॥ ४०४३॥

राग नट॥ ४६६१॥

(ऊधौ) कैसै जीवै कमलनयन बिनु।
तब तौ पलक लगत दुख पावत, अब जु बरप एकहु छिनु॥
ज्यौ ऊजर खेरे की पुतरी, को पूजै को मानै।
त्यौ हम बिनु गोपाल भईं ऊधौ, कठिन पीर को जानै॥
तुम तै होइ करौ सो ऊधौ, हम अबला बलहीन।
'सूर' बदन देखै हम जीवै, ज्यौ जल पाऐं मीन॥ ४०४४॥

॥ ४६६२॥

ऊधौ सुधि नाही या तन की।
जाइ कहौ तुम कित हो भूले, हमऽब भई बन बन की॥
इक बन ढूँढ़ि सकल बन ढूँढ़े, बन बेली मधुबन की।
हारि परी बृंदावन ढूँढ़त, सुधि न मिली मोहन की॥
किए बिचार उपचार न लागत, कठिन बिथा भइ मन की।
'सूरदास' कोउ कहै स्याम सौ, सुरति करै गोपिनि की॥ ४०४५॥

राग धनाश्री॥ ४६६३॥

लरिकाई कौ प्रेम कहौ अलि कैसे छूटत।
कहा कहौ ब्रजनाथ चरित, अंतरगति लूटत॥
वह चितवनि वह चाल मनोहर, वह मुसुकानि मंदधुनि गावनि।
नटवर भेष नंदनदन कौ वह बिनोद, वह बन तै आवनि॥
चरन कमल की सौह करति हौ, यह सँदेस मोहि बिष सौ लागत।
'सूरदास' पल मोहिं न बिसरति, मोहन मूरति सोवत जागत॥ ४०४६॥

॥ ४६६४॥

हरि रस तौ ब्रजवासी जानै।
बदन-सुधा-रस पियत मधुप ज्यौ, चरन कमल रुटि मानै॥

ब्रह्मलोक सिवलोक नाहिं सुख, निगम जु नेति बखानैं।
सो रस गिरिवरधारी के सँग, जिह्वा सेप कहानैं॥
नैन बिसाल स्यामसुदर के, खंजन भृकुटी तानैं।
'सूरदास' प्रभु वलि सोभा की, मैन अवधि सकुचानैं॥ ४०४७॥

॥ ४६६५॥

मधुकर यह सुख तुमतैं दूरि।
देख्यौ, सुन्यौ न परस्यौ रचक, उड़िहु न लागी धूरि॥
अव तौ जोग सिखावन आए, तजि हरि जीवन मूरि।
चितवनि मद हँसनि, गति परसनि, हृदय रही भरपूरि॥
मो मन जो घट होत तिहारे, मुक्ति चलै पग चूरि।
मथुरा जाइ 'सूर' प्रभु पूछहि, मरिहौं तबहि बिसूरि॥ ४०४८॥

राग धनाश्री ॥ ४६६६॥

यह सदेस कह्यौ है माधौ। करि विचार जिय साधन साधौ॥
इडा, पिगला सुपमन नारी। सुन्य सहज मैं बसत मुरारी॥
ब्रह्म भाव करि सव मैं देखौ। अलख निरंजन ही कौ लेखौ॥
पदमासन इक चित मन ल्यावौ। नैन मूँदि अतरगति ध्यावौ॥
हृदैकमल मैं ज्योति प्रकासी। सोइ अच्युत अविगत अविनासी॥
इहिं उपाइ विरहा तुम तरिहौ। जोगपंथ क्रम क्रम अनुसरिहौ॥
दुसह सँदेस सुनत ब्रजवाल। मुरछि परी धरनी वेहाल॥
रे मधुकर लपट अन्याई। यह सँदेस कत कहै कन्हाई॥
श्री वृंदावन भवन विराजै। नटवर भेष सदा हरि साजै॥
रास विलास करत वृंदावन। विच गोपी विच कान्ह स्यामघन॥
अलि आयौ हो जोग सिखावन। देखि प्रीति लाग्यौ सिर नावन॥
भँवर गीत जो दिन दिन गावै। परम भक्ति सो हरि की पावै॥
'सूर' जोग की कथा न भाई। सदा भक्ति गोपी जन गाई॥ ४०४९॥

राग धनाश्री ॥ ४६६७॥

ह्याँ हरि जू वहु क्रीड़ा करी। सो तौ चित तै जात न टरी॥
ह्याँ पय पीवत बकी सँहारयौ। सकट तृनावर्त ह्याँ हरि मारयौ॥
वच्छासुर कौ इहाँ निपात्यौ। वका, अघा ह्याँ हरि जू घात्यौ॥
हलधर मारयौ धेनुक कौ इहाँ। देखौ ऊधौ हतौ प्रलव जहाँ॥
ह्याँ तैं ब्रह्मा वच्छ गयौ हरि। और किए हरि लागी न पल घरि॥
ते सव राखे सैति नरहरी। तव ह्याँ ब्रह्मा अस्तुति करी॥
ह्याँ हरि काली उरग निकास्यौ। लग्यौ जरावन अनल सु नास्यौ॥
वस्त्र हमारे हरि जू ह्याँ हरे। कहँ लगि कहियै जे कौतुक करे॥
हरि, हलधर ह्याँ भोजन किए। विप्र तियनि कौ अति सुख दिए॥
इहाँ गोवर्धन कर हरि धारयौ। मघवा रिस तै हमै उवारयौ॥
सरद निसा मैं रास रच्यौ इहँ। सो सुख हम पै वरनि जात कहँ॥
वृषभासुर कौ इहाँ सँघारयौ। भौमऽरु केसी इहाँ पछारयौ॥
ह्याँ हरि खेलत आँख मिचाई। कहँ लगि वरनै लीला गाई॥

सुनि सुनि ऊधौ प्रेम मगन भयौ । लोटत धर पर ज्ञान गरब गयौ ॥
निरखत ब्रज भू अति सुख पावै । 'सूरज' प्रभु गुन पुनि पुनि गावै ॥४०५०॥

राग धनाश्री ॥ ४६६८ ॥

(ऊधौ) ज्यौ करि कृपा पाउँ धारत हौ, त्यौ ही तुम्है जवाऊँ।
मौन गहे तुम वैठि रहौ, हौ मुरली सव्द सुनाऊँ॥
अवहिं सिधारे वन गोचारन, हौ वैठी जस गाऊँ।
निसि आगम श्रीदामा कै सँग, नाचत प्रभुहि दिखाऊँ॥
को जानै द्विविधा सँकोच वस, तुम डर निकट न आवै।
तव यह दुंद वढ़ै अति दारुन, सखियनि प्रान छुड़ावै॥
छिन न रहै नँदलाल इहाँ विनु, जौ कोउ कोटि सिखावै।
'सूरदास' ज्यौ मन तै मनसा, अनत कहूँ नहि धावै॥ ४०५१॥

॥ ४६६९ ॥

सखी री मो मन धोखै जात।
ऊधौ कहत रहत हरि मधुपुरी, गत आगत न थकात॥
इत देखौ तौ आगे मधुकर, मत्त न्याय सतरात।
फिरि चाहौ तौ प्राननाथ उत, सुनत कथा मुसुकात॥
हरि साँचे ज्ञानी सव झूठे, जे निरगुन जस गात।
'सूरदास' जिहि सव जग डहक्यौ, ते उनकौ डहँकात॥ ४०५२॥

राग सारंग ॥ ४६७० ॥ उद्धव वचन

मैं ब्रजवासिन की वलिहारी।
जिनके सग सदा क्रीडत है, श्री गोवरधनधारी॥
किनहूँ कै घर माखन चोरत, किनहूँ कै सँग दानी।
किनहूँ कै सँग धेनु चरावत, हरि की अकथ कहानी॥
किनहूँ कै सँग जमुना कै तट, वसी टेरि सुनावत।
'सूरदास' वलि वलि चरननि की, यह सुख मोहि नित भावत॥ ४०५३॥

राग सारंग ॥ ४६७१ ॥

हौ इन मोरनि की वलिहारी।
जिनकी सुभग चंद्रिका माथै, धरत गोवरधनधारी॥
वलिहारी वा वाँस वस की, वसी सी सुकुमारी।
सदा रहति है कर जु स्याम कै, नैकहुँ होति न न्यारी॥
वलिहारी वा गुंज जाति की, उपजी जगत उज्यारी।
सुंदर हृदय रहत मोहन कै, कवहूँ टरत न टारी॥
वलिहारी कुल सैल सरित जिहि, कहत कलिंददुलारी।
निसि दिन कान्ह अंग आलिगन आपुनहूँ भई कारी॥
वलिहारी वृंदावन भूमिहि, सुतौ भाग की सारी।
'सूरदास' प्रभु नाँगे पाइनि, दिन प्रति गैया चारी॥ ४०५४॥

राग मारू ॥ ४६७२ ॥ गोपीवचन

अलि तुम जाहु फिरि उहिं देस।
चीर हम करिहै भगौहै, सीख सिखि लवलेस॥

भाल लोचन चंद चमकनि, कठिन कंठहि सेष।
नाद, मुद्रा, भूति भारी, करैं राउर भेष ॥
उहाँ जाइ सँदेस कहियौ, जटा धारे केस।
कौन कारन नाथ छाँड़ी, 'सूर' इहै अँदेस ॥ ४०५५ ॥

राग मलार ॥ ४६७३ ॥

हम पर हेत किए रहिवौ।
या ब्रज कौ ब्यौहार सखा तुम, हरि सौं सब कहिवौ ॥
देखे जात आपनी अँखियनि, या तन कौं दहिवौ।
तन की विथा कहा कहौं तुमसौं, यह हमकौं सहिवौ ॥
तब न कियौ प्रहार प्राननि कौ, फिरि फिर क्यौं चहिवौ।
अब न देह जरि जाइ 'सूर' इनि नैननि कौं बहिवौ ॥ ४०५६ ॥

॥ ४६७४ ॥

स्वामी पहिलौ प्रेम सँभारौ।
ऊधौ जाइ चरन गहि कहियै, जौ तैं हित न उतारौ ॥
जो तुम मधुवन राज काज भए, गोकुल हम न अधारौ।
कमलनयन सो चैन न देखौ, नित उठि गोधन चारौ ॥
ये ब्रजलोग मया के सेवक, तिनसौं क्यौं न विहारौ।
'सूरदास' प्रभु एक बार मिलि, सकल विरह दुख टारौ ॥ ४०५७ ॥

राग मलार ॥ ४६७५ ॥

अपनैं जिय सुरति किए रहिवौ।
ऊधौ इतनी विनय स्याम सौं, समय पाइ कहिवौ ॥
घोष बसत की चूक हमारी, कछू न चित गहिवौ।
परम दीन जदुनाथ जानि कै, गुन विचारि सहिवौ ॥
अबकी बेर दयालु दरस दै, दुख की रासि दहिवौ।
'सूरदास' प्रभु बहुत कहा कहै, वचन लाज वहिवौ ॥ ४०५८ ॥

राग कल्यान ॥ ४६७६ ॥

जदुपति कौ संदेस सखी री कैसैं कैःव कहौं।
विन हीं कहे आपने मन मैं, कब लगि सूर सहौं ॥
जो कछु बात बनाऊँ चित मैं, रचि पचि सोचि रहौं।
मुख आनत ऊधौ तन चितवत, नवौ विचार वहौं ॥
सो कछु सीख देहु मोहिं सजनी, जातैं धीर गहौं।
'सूरदास' प्रभु के सेवक सौं, विनती करि निवहौं ॥ ४०५९ ॥

राग बिलावल ॥ ४६७७ ॥

कर कंकन तैं भुज टाड़ भई।
मधुवन चलत स्याम मनमोहन, आवन अवधि जु निकट दई ॥
पूजत गौरि मनावत संकर, वासर निसि मोहिं गनत गई।
पाती लिखत विरह तन व्याकुल, कागर ह्वै गयौ नीर मई ॥
ऊधौ मुख कै वचननि कहियौ, हरि की सूल नितप्रति जु नई।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस विनु, मानौं वंसी मीन हई ॥ ४०६० ॥

राग संकराभरन ॥ ४६७८ ॥

इतनी वात अलि कहियौ हरि सौ कव लगि यह मन दुख मैं गारै।
पथ जोहत तन कोकिल वरन भई, निसि न नीद पिय पियहिं पुकारै॥
जा दिन तै विछुरे नँदनंदन, अति दुख दारुन क्यौ निरवारै।
'सूरदास' प्रभु विनु यह विपदा, काकौ दरसन देखि विसारै॥४०६१॥

॥ ४६७९ ॥

ऊधौ जू, कहियौ तुम हरि सौ जाइ, हमारे हिय कौ दरद।
दिन नहिं चैन, रैन नहि सोवति, पावक भई जुन्हाई सरद॥
जवतै लै अक्रूर गए है, भई विरह तन वाइ छरद।
काम प्रवल जाके अति ऊधौ, सोचत भई जस पीत हरद॥
सखा प्रवीन निरंतर हरि के, तातै कहति है खोलि परद।
ध्यावति रूप दरस तजि हरि कौ, 'सूर' मूरि विनु होति मुरद॥ ४०६२॥

राग कल्यान ॥ ४७८० ॥

कहियौ मुख संदेस जु हरि कैं, हाथ दीजियौ पाती।
समय पाइ व्रज वात चालिवी, सुख ही माँझ सुहाती॥
हम प्रतीति करि सरवस अरप्यौ, गन्यौ नही दिन राती।
नंदनँदन यह जुगुति न होई, लै जु रहे मन थाती॥
जौ तव साखि दीजतौ काहू, तौ अव कत पछितातीं।
'सूरदास' प्रभु मुकर जानती, तौ सँग लीन्हे जाती॥ ४०६३॥

॥ ४६८१ ॥

ऊधौ इक पतिया हमरी लीजै।
चरनलागि गोविंद सौ कहियौ, लिखौ हमारी दीजै॥
हमतौ कौन रूप गुन आगरि, जिहिं गुपाल जू रीझै।
निरखत नैन नीर भरि आए, अरु कचुकि पट भीजै॥
तलफत रहति मीन चातक ज्यौ, जल विनु तृषा न छीजै।
अति व्याकुल अकुलाति विरहिनी, सुरति हमारी कीजै॥
अँखियाँ खरी निहारति मधुवन, हरिविनु व्रज विष पीजै।
'सूरदास' प्रभु कवहि मिलैगे, देखि देखि मुख जीजै॥ ४०६४॥

राग जैतश्री ॥ ४६८२ ॥

हम मतिहीन कहा कछु जानै, व्रजवासिनी अहीर।
वै जु किसोर नवल नागर तन, वहुत भूप की भीर॥
वचन की लाज सुरति करि राखौ, तुम अलि इतनौ कहियौ॥
भली भई जौ दूत पठायौ, इतनौ वोल निवहियौ॥
एक वार तौ मिलौ कृपा करि, जौ अपनौ व्रज जानौ।
यहै रीति ससार सवनि कौ, कहा रंक कह रानौ॥
हम अनाथ तुम नाथ गुसाईं, राखौ क्यौ नहिं सोई।
षट रितु व्रज पै आनि पुकारैं, 'सूरदास' अव कोई॥ ४०६५॥

राग धनाश्री ॥ ४६८३ ॥

नंदनँदन सौ इतनी कहियौ।
जद्यपि व्रज अनाथ करि डार्‌यौ, तद्यपि सुरति किए चित रहियौ॥

तिनका तोर करहु जनि हम सौं, एक बास की लाज निबहियौ।
गुन औगुननि दोष नहि कीजतु, हम दासिनि की इतनी सहियौ ॥
तुम बिनु प्रान कहा हम करिहै, यह अवलंब न सुपनेहु लहियौ।
'सूरदास' पाती लिखि पठई, जहाँ प्रीति तहँ ओर निबहियौ ॥४०६६॥

राग नट ॥ ४६८४ ॥

ऊधौ इतनी जाइ कहौ।
सबै बिरहिनी पा लागति है, मथुरा कान्ह रहौ ॥
भूलिहुँ जनि आवहु इहि गोकुल, तपति तरनि ज्यौं चंद।
सुंदर बदन स्याम कोमल तन, क्यौं सहिहै नँदनंद ॥
मधुकर, मोर, प्रबल पिक, चातक, बन उपबन चढ़ि बोलत।
मनहु सिंह की गरज सुनत गो बच्छ दुखित तन डोलत ॥
आसन असन अनल विष अहि सम, भूषन विविध बिहार।
जित तित फिरत दुसह द्रुम द्रुम प्रति, धनुष धरे सत मार ॥
तुम हौ संत सदा उपकारी, जानत हौ सब रीति।
'सूर' स्याम कौ क्यौं बोलै ब्रज, बिनु टारे यह ईति ॥ ४०६७ ॥

राग सारंग ॥ ४६८५ ॥

बिनु गुपाल बैरनि भई कुंजै।
तब वै लता लगति तन सीतल, अब भई विषम ज्वाल की पुंजै ॥
वृथा बहति जमुना, खग बोलत, वृथा कमल फूलनि अलि गुंजै।
पवन, पान, घनसार, सजीवन, दधिसुत किरनि भानु भई भुंजै ॥
यह ऊधौ कहियौ माधौ सौं, मदन मारि कीन्ही हम लुंजै।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस कौं, मग जोवत अँखियाँ भई छुंजै ॥ ४०६८ ॥

राग धनाश्री ॥ ४६८६ ॥

ऊधौ इतनी कहियौ बात।
मदनगुपाल बिना या ब्रज मैं, होन लगे उतपात ॥
तृनावर्त, बक, बकी, अघासुर, धेनुक, फिरि फिरि जात।
व्योम, प्रलंब, कंस केसी इत, करत जियनि की घात ॥
काली काल रूप दिखियत है, जमुना जलहि अन्हात।
बरुन फाँस फाँस्यौ चाहत है, सुनियत अति मुरझात ॥
इंद्र आपने परिहँस कारन, बार बार अनखात।
गोपी, गाइ, गोप, गोसुत सब, थर थर काँपत गात ॥
अंचल फारति जननि जसोदा, पाग लिए कर तात।
लागौ बेगि गुहारि 'सूर' प्रभु, गोकुल बैरिनि घात ॥ ४०६९ ॥

राग मलार ॥ ४६८७ ॥

ऊधौ इतनी कहियौ जाइ।
अति कृस गात भईं ये तुम बिनु, परम दुखारी गाइ ॥
जल समूह बरषति दोउ अँखियाँ, हूँकति लीन्है नाउँ।
जहाँ जहाँ गो दोहन कीन्हो, सूँघति सोई ठाउँ ॥
परति पछार खाइ छिन-ही छिन, अति आतुर ह्वै दीन।
मानहु 'सूर' काढि डारी है, बारि मध्य तैं मीन ॥ ४०७० ॥

राग धनाश्री ॥ ४६८८ ॥

तुम कहियौ जैसैं गोकुल आवैं।
दिन दस रहे भली सो कीन्हीं, अब जनि गहरु लगावैं॥
नहि न सुहात कछू हरि तुम बिनु, कानन भवन न भावैं।
धेनु बिकल अति चरति नहीं तृन, बच्छ न पीवन धावैं॥
देखत अपनी आँखिनि तुमहीं, हम कहि कहा जनावैं।
'सूरदास' प्रभु कठिन होत कत, वै ब्रजनाथ कहावैं॥ ४०७१॥

॥ ४६८९ ॥

ऊधौ हरि बेगहिं देउ पठाइ।
नंदनंदन दरस बिनु, रटि मरैं ब्रज अकुलाइ॥
मातु जसुमति सहित ब्रजपति, परे धर मुरझाइ।
अति बिकल तन, प्रान त्यागत, करैं कछु गति आइ॥
सकल सुरभी जूथ दिन प्रति, रुदत पुर दिसि धाइ।
जहाँ जहाँ दुहि बन चराईं, मरति तहँ बिललाइ॥
परम प्यारी सरद राका, रही गृह दुख छाइ।
तजत चक्र न वक्र चख बिनु, करैं कोटि उपाइ॥
जोग पद लै देहु जोगिहिं, हमहिं जोग मिलाइ।
मधुप बिछुरे बारि मीनहिं, अनत कहा सुहाइ॥
अग्जु जिहि बिधि स्याम आवहिं, कहौ तिहिं बिधि जाइ।
'सूर' दावा बिरह ब्रज जन, जरत लेहु बुझाइ॥ ४०७२॥

राग जैतश्री ॥ ४६९० ॥

अति मलीन वृषभानुकुमारी।
हरि स्रम जल भीज्यौ उर अंचल, तिहिं लालच न धुवावति सारी॥
अध मुख रहति अनत नहिं चितवति, ज्यौं गथ हारे थकित जुवारी।
छूटे चिकुर बदन कुम्हिलाने, ज्यौं नलिनी हिमकर की मारी॥
हरि सँदेस सुनि सहज मृतक भइ, इक बिरहिनि, दूजे अलि जारी।
'सूरदास' कैसैं करि जीवै, ब्रजबनिता बिन स्याम दुखारी॥४०७३॥

॥ ४६९१ ॥

ऊधौ देखे ही ब्रज जात।
जाइ कहियौ स्याम सौं यौं, बिरह के उत्पात॥
नैन नहि कछु और सूझै, स्रवन कछु न सुहात।
स्याम बिनु आँसुअनि बूड़त, दुसह धुनि भइ गात॥
आइबै तौ आइए हरि, पुनि सरीर समात।
'सूर' प्रभु पछिताहुगे तुम, अंतहूँ गए जात॥ ४०७४॥

राग बिहागरौ ॥ ४६९२ ॥

ऊधौ तुमहि स्याम की सौंहैं।
मुख देखत कहियौ तुम उनसौं, जित तित लगीं मदन की दौंहैं॥
जो मन जोग जुगुति आराधै, सो मन तौ सबकौ उन मौं है।
जैसैं बसन तजत है पन्नग, सो गति करी कान्ह हमकौं है॥

हम बावरी त्यौ न चलि जान्यौ, ज्यौ गज चलत आपनी गौहै।
'सूरदास' कपटी चित माधव, कुबिजा मिली कपटी की खौहें॥४०७५॥

राग सारंग ॥ ४६९३ ॥

मधुकर कहियौ सुचित सँदेसौ।
समय पाइ समुझाइ स्याम सौ, हम जिय बहुत अँदेसौ॥
एक बार रस रास हमारे, मन मुरली जो हरे सौ।
तब उन बेनु बजाइ बुलाई, अब निरगुन उपदेसौ॥
और बार उन जोग जुगुति कौ, भेद न कह्यौ परै सौ।
तब पतिव्रत तुम करन कहत, अब उघरी ज्ञान गढ़े सौ॥
और कहाँ लौ हम कहैं ऊधौ, अबलनि कौ दुख ऐसौ।
'सूरदास' इन पर हम मरियत, कुबिजा के बस कैसौ॥४०७६॥

राग काफी ॥ ४६९४ ॥

मधुप जाइ कहियौ तुम हरि सौ, बहुरि जु आइ दूसरी होरी।
ए सब नवल नारि गोकुल की, खेलि फाग मुख माँड़ति रोरी॥
पग पग पर नाचति गावति है, चंद्र वदनि तन राजति गोरी।
'सूरदास' प्रभु कबहिं देखिहौ, मोहन, राधा बाहा जोरी॥४०७७॥

राग सारंग ॥ ४६९५ ॥

ऊधो कहियौ यह सदेस।
लोग कहत कुबजा की प्रभुता, तुम सकुचहु जनि लेस॥
कबहुँक इत पग धारि सिधारहु, हरि उहि सुखद सुवेस।
हमरे मनरजन कीन्हे तै, ह्वैहौ भुवन नरेस॥
तब तुम इत ठहराइ रहौगे, देखौगे सब देस।
नहि वैकुंठ अखिल ब्रह्माडहु, व्रज बिनु सब कृत क्लेश॥
यह किहि मत्र दियौ नँदनंदन, ब्रज तजि भ्रमन विदेस।
जसुमति जननी प्रिया राधिका, देखे औरहुँ देस॥
इतनी कहत कहत स्यामा पै, कछु न रह्यौ अवसेस।
मोहनलाल प्रवाल मृदुल मन, तच्छन करी सुहेस।
को ऊधौ को दुसह विरह ज्वर, को नृप नगर सुरेस।
कैसौ ज्ञान कह्यौ कहि कासौ, किहिं पठयौ उपदेस॥
मुख मृदु छवि मुरली रव पूरत, गोरज करबुर केस।
नटनायक गति विकट लटक तब, बन तै कियौ प्रवेस॥
अति आतुर अकुलाइ धाइ पिय, पोछत नयन कुसेस।
कुम्हिलानौ मुखपद्म परस करि, देखति छविहि बिसेस॥
'सूर' सोम सनकादि इंद्र अज, सारद निगम महेस।
नित्य बिहार सकल सुर भ्रम गति, कह गावै मुख सेस॥४०७८॥

राग नट ॥ ४६९६ ॥ उद्धववचन

अब अति चकितवंत मन मेरौ।
आयौ हो निरगुन उपदेसन, भयौ सगुन कौ चेरौ॥
जो मैं ज्ञान कह्यौ गीता कौ, तुमहिं न परस्यौ नेरौ।
अति अज्ञान कछु कहत न आवै, दूत भयौ हरि केरौ॥

निज जन जानि मानि जतननि तुम, कीन्हौ नेह घनेरौ।
'सूर' मधुप उठि चले मधुपुरी, बोरि जोग कौ बेरौ ॥ ४०७९ ॥

राग केदारौ ॥ ४६९७ ॥ गोपीवचन

ऊधौ तिहारे पा लागति हौं, बहुरिहुँ इहिं ब्रज करबी भाँवरी।
निसि न नींद भोजन नहि भावै, चितवत मग भइ दृष्टि भाँवरी ॥
वहै वृंदावन वहै कुंजघन, वहै जमुना वहै सुभग साँवरी।
एक स्याम बिनु कछू न भावै, रटति फिरति ज्यौं बकति बावरी ॥
चलि न सकति मग डुलत धरत पग, आवति बैठत उठत ताँवरी।
'सूरदास' प्रभु आनि मिलावहु, जग मैं कीरति होइ रावरी ॥ ४०८० ॥

॥ ४६९८ ॥

दिन कछु औरहु बहुरि इहाँ ऐबौ।
बलि हौं गुपाल मिलि जाहिं संगहि सग, इतनी कहि बात सुख बहुत पैबौ ॥
महाराज भए सुनि सबनि आनँद भयौ, तौ बचन एक हमहि दीजै।
देखि वह नाउँ बन खरिक जमुना पुलिन, नंदनंदन नाथ कृपा कीजै ॥
बिरह व्याकुल भई इहाँ गोपी सकल, कीरति न छाँड़ै गोपाल न्यारे।
ते क्यौं जिएँ 'सूर' स्याम ! दरसन बिना, जिनहिं तुम प्रान तैं अधिक प्यारे ॥
॥ ४०८१ ॥

राग धनाश्री ॥ ४६९९ ॥ यशोदा जी का संदेश

ऊधौ पा लागति हौं कहियौ, स्यामहि इतनी बात।
इतनी दूर बसत क्यौं बिसरे, अपने जननी तात ॥
जा दिन तैं मधुपुरी सिधारे स्याम मनोहर गात।
ता दिन तैं मेरे नैन पपीहा, दरस प्यास अकुलात ॥
जहँ खेलन के ठौर तुम्हारे, नंद देखि मुरझात।
जौ कबहूँ उठि जात खरिक लौं, गाइ दुहावन प्रात ॥
दुहत देखि औरनि के लरिका, प्रान निकसि नहिं जात।
'सूरदास' बहुरो कब देखौं, कोमल कर दधि खात ॥ ४०८२ ॥

राग बिहागरौ ॥ ४७०० ॥

मैं नँदनंदन सौं कछु न कह्यौ।
सुनि ऊधौ हरि ऐसी कीन्ही, मधुपुरि बसि जु रह्यौ ॥
चलत कह्यौ हो मोहन आवन, मैं बिस्वास गह्यौ।
'सूर' वियोग नदनँदन कौ, अब नहिं जात सह्यौ ॥ ४०८३ ॥

राग मलार ॥ ४७०१ ॥

तब तुम मेरैं काहे कौं आए।
मथुरा क्यौं न रहे जदुनंदन, जौ पै कान्ह देवकी जाए ॥
दूध, दही काहे कौं चोरयौ, काहे कौं बन बच्छ चराए।
अघ अरिष्ट, काली फनि काढ्यौ, बिष जल तैं सब सखा जिवाए ॥
पय पीवत हरे प्रान पूतना, सदा किए जसुमति के भाए।
'सूरदास' लोगनि के भुरए, काहैं कान्ह, अब होत पराए ॥ ४०८४ ॥

राग सोरठ ॥ ४७०२ ॥

ऊधौ हम ऐसी नहीं जानी।
सुत कै हेत मरम नहिं पायौ, प्रगटे सारँगपानी ॥
निसि वासर छतिया सौं लाई, वालक लीला गाऊँ।
ऐसे कवहूँ भाग होहिंगे, वहुरौ गोद खिलाऊँ॥
को अव ग्वाल सखा सँग लीन्हे, साँझ समै व्रज आवै।
को अव चोरि चोरि दधि खैहै, मैया कौन वुलावै॥
विदरति नाहिं वज्र की छातो, हरि वियोग क्यौं सहियै।
'सूरदास' अव नदनँदन विनु, कहौं कौन विधि रहियै॥ ४०८५॥

राग रामकली ॥ ४७०३ ॥

गोपालहि पठै देहु, हम देखैं।
एक वार मिलि जाहु पाहुनै, जनम सफल करि लेखैं॥
कहियौ जाइ देवकी सौं तुम, कौन घाटि हम कीन्हीं।
मैं तुम्हरे ढोटा के वदलैं, तनया कंस वलि दीन्हीं॥
इतनी सील करै पालागै, यहै निहोरौ मानै।
अपने तैं ह्वैहै न पराए, यह प्रतीति जिय आनै॥
जौं हौं मधुवन देखन आऊँ, सव व्रज लागै साथ।
एक वार मुख देखि पठैहौं, 'सूरदास' के हाथ॥ ४०८६॥

राग धनाश्री ॥ ४७०४ ॥

ऊधौ जी अव कान्ह न ऐहैं।
जिय जानी अरु हृदय विचारी, हम अतिही दुख पैहैं॥
पूछौ जाइ कौन कौ ढोटा, तव कह उत्तर दैहैं।
खायौ खेल्यौ सग हमारैं, ताको कहा वतैहैं॥
गोकुल औ मथुरा के वासी, कहँ लौं भूठौ कैहैं।
अव हम लिखि पठयौ चाहति है, ह्वाँऊ पत नहिं पैहैं॥
इनि गाइनि चरिवौ छाँड़्यौ है, जौ नहिं लाल चरैहैं।
एते पर नहि मिलत 'सूर' प्रभु, फिरि पाछै पछितैहैं॥ ४०८७॥

॥ ४७०५ ॥

(मोहन) अपनी ?यां घेरि लै।
विडरी जाति काहु नहिं मानति, नैकु मुरलि की टेर दै॥
धौरी, धमरि, पीरी, काजरि, वन वन फिरती पीय।
अपनी जानि कै आनि सँभारहु, धरौ चेत अव जीय॥
तुम हौ जगजीवन प्रतिपालक, निठुराई नहि कीजै।
ग्वालऽरु वाल वच्छ गो विलखत, 'सूर' सु दरसन दीजै॥ ४०८८॥

राग सारंग ॥ ४७०६ ॥

तव तै छीन सरीर सुवाहु।
आधौ भोजन सुवल करत है, सव ग्वालनि उर दाहु॥
नंद गोप पिछवारे डोलत, नैननि नीर प्रवाहु।
आनँद मिट्यौ मिटी सव लीला, काहू मन न उछाहु॥

एक बेर बहुरौ ब्रज आवहु, दूध पतूखी खाहु।
'सूर' सपथ गोकुल जौ पैठहु, उलटि मधुपु रीजाहु ॥ ४०८८ ॥

राग नट ॥ ४७०७ ॥

कहियौ जसुमति की आसीस.
जहाँ रहौ तहँ नंद लाड़िलौ, जीवौ कोटि वरीस ॥
मुरली दई दोहनी घृत भरि, ऊधौ धरि लइ सीस।
यह तौ घृत उनही सुरभिनि कौ, जे प्यारी जगदीस ॥
ऊधौ चलत सखा मिलि आए, ग्वाल वाल दस वीस।
अबकैं यह ब्रज फेरि बसावहु, 'सूरदास' के ईस ॥ ४०९० ॥

राग विलावल ॥ ४७०८ ॥

(ऊधौ) देखत हौ जैसे ब्रजवासी।
लेत उसाँस नैनजल पूरत, सुमिरि सुमिरि अविनासी ॥
भूलि न उठत जसोदा जननी, मनौ भुवंगम डासी।
छूटत नहीं प्रान क्यौ अटके, कठिन प्रेम की फाँसी ॥
आवत नहीं नंदमंदिर मैं, भयौ फिरत बनवासी।
परम मलीन धेनु दुर्वल भई, स्याम विरह की त्रासी ॥
गोपी ग्वाल सखा बालक सब, कहूँ न सुनियत हाँसी।
काहे दियौ 'सूर' सुख मै दुख, कपटी कान्ह बिसासी ॥ ४०९१ ॥

राग सारंग ॥ ४७०९ ॥

धन्य नद, धनि जसुमति रानी।
धन्य ग्वाल गोपी जु खिलाए, गोदहि सारँगपानी ॥
धनि ब्रज भूमि धन्य वृंदावन, जहँ अविनासी आए।
धनि धनि 'सूर' आज हमहूँ जो, तुन सब देखे पाए ॥ ४०९२ ॥

राग आसावरी ॥ ४७१० ॥ उद्धव आगमन, भ्रमरगीत संक्षेप

हरिरथ रतन जर्यौ सु अनूप दिखावैं।
जिहि मग कान्ह गयौ तिहि मग तैं आवैं ॥
तिहिं मग आवैं, सखिनि, बुलावैं देखौ आनि विचारी।
मुकुट कुँडल तन, पीत वसन कोउ, गोविद की अनुहारी ॥
वेई भूपन निरखन लागी तब लगि नेरैं आए।
ऊधौ जिन जानी, मन कुम्हिलानी, कृष्न सँदेस पठाए ॥
चलौ चलौ पूछैं कछु वातैं।
कहि कहि ऊधौ हरि कुसलातैं ॥
कहि कुसलातैं साँची वातैं आवन कह्यौ कि नाही।
कै गरवाने राजस वाने अब चित हम न सुहाही ॥
ठाढी तन काँपै, हेरै छाकै, वार वार अकुलाही।
अब जिय कपट कछू जनि राखौ, पूछैं सौहैं दिवाही ॥
कहौ ऊधो तुम क्यौ ब्रज आए।
तब हँसि कह्यौ हम कृष्न पठाए ॥
कृष्न पठाए हम ब्रज आए कहत मनोहर वानी।
सुनौ सँदेसो तजौ अँदेसौ तुम हौ चतुर सयानी ॥

गोप सखा जिय मैं जनि राखौ, अविगत हैं अविनासी।
मोह न माया बैर न दाया, सब घट आपु निवासी॥
ऊधौ जनि कहौ प्रभु की प्रभुताई।
सुनि जिय अलख सही न रिस जाई॥
रिस नहिं जाई अनख बढ़यौ अति, पुनि ह्यौ लौ चतुराई।
दासी कुबिजा नीच कुसंगति, कौन बेदमति पाई॥
तुमहूँ भलौ कहन कौ आए, हमधौ भले सयाने।
जो कछु वस्तु देखियत नैननि, सो किन मनहौ माने॥
गोविंद की बातैं सब जानैं।
परबस भई कहत सोइ मानैं॥
सब कोउ जानैं, क्यौ मन मानैं, अब न कछू कहि आवै।
जो कछु कुबिजा के मन भावै, सोई नाच नचावै॥
वाकौ न्याउ दोष सब हमकौ, कर्मरेख को जानैं।
गोरस देखि जु राख्यौ गाहक, विधना की गति आनैं॥
(ऊधौ) कमलनैन सौ कहियौ जाइ।
एक बेर ब्रज देखौ आइ॥
जिनकी प्रीति निरंतर मन मैं, सो मन क्यौ समुझावै।
संकर, ब्रह्म, सेष अरु सुरपति, कोउ हरि दरस न पावै॥
वैसेइ रास बिलास कुलाहल, घर घर माखन हरियै।
'सूरदास' प्रभु मिलत बहुत सुख, बिरह स्वाम बत जरियै॥ ४०९३॥

राग भैरव॥ ४७११॥ उद्धव वचन

मैं तुम पै ब्रजनाथ पठायौ। आतमज्ञान सिखावन आयौ॥
आपुहि पुरुष आपुही नारी। आपुहि बानप्रस्थ ब्रह्मचारी॥
आपुहि पिता आपुही माता। आपुहि भगिनि आपुही भ्राता॥
आपुहि पंडित आपुहि ज्ञानी। आपुहि राजा आपुहि रानी॥
आपुहि धरती आपु अकास। आपुहि स्वामी आपुहि दास॥
आपुहि ग्वाल आपुही गाइ। आपुहि आपु चरावन जाइ॥
आपुहि भ्रमर आपुही फूल। आतम ज्ञान बिना जग भूल॥
राव रंक दूजा नहिं कोइ। आपुहि आपु निरंजन सोइ॥
इहि प्रकार जाकौ मन लागै। जरा मरन नासै भ्रम भागै॥
जोग समाधि ब्रह्म चित लावहु। परमानंद तबहिं सुख पावहु॥

गोपी वचन

जोगी होइ सो जोग बखानैं। नवधा भक्ति दास रति मानैं॥
भजनानंद हमैं अलि प्यारौ। ब्रह्मानंद सुख कौन बिचारौ॥
बतियाँ रचि रचि कहत सयानी। अँखियाँ हरि के रूप लुभानी॥
ब्यावर ब्यथा न बंध्या जानैं। बिनु देखै कैसैं रुचि मानैं॥
पुनि पुनि वहै वहै सुधि आवै। कृष्ण रूप बिनु और न भावै॥
नव किसोर जिन नैन निहारचौ। कोटि जोग वा छबि पर वारचौ॥
सीस मुकुट कुंडल बनमाला। क्यौं बिसरैं वे नैन बिसाला॥
मृगमद मलय अलक घुँघरारे। उन मोहन मन हरे हमारे॥

भृकुटी कुटिल नासिका राजै । अरुन अधर मुरली कल बाजै ॥
दाड़िम दसन तड़ित द्युति सोहै । मृदु मुसुकानि जुवति मन मोहै ॥
चंद्रक झलक कठ मनि मोती । दूरि करत उडुपति की जोती ॥
कंकन किंकिन पदिक विराजै । गजगति चाल नूपुरनि बाजै ॥
वन की धातु चित्रित तन कीए । श्रीवछ चिह्न विराजत हीए ॥
पीत वसन छवि वरनि न जाई । नखसिख सुदर कुँअर कन्हाई ॥
रूप रासि ग्वारनि कौ संगी । कव देखै वह ललित त्रिभगी ॥
जौ तुम हित की वात वतावहु । मदन गुपालहि क्यौ न मिलावहु ॥

उद्धववचन

जाकै रूप वरन वपु नाही । नैन मूँदि चितवौ मन माही ॥
हृदय कमल तै जोति विराजै । अनहद नाद निरतर वाजै ॥
इड़ा पिंगला सुषमन नारी । सहज सुन्न मै वसहि मुरारी ॥
माता पिता न दारा भाई । जल थल घट घट रह्यौ समाई ॥
इहि प्रकार भव दुस्तर तरिहौ । जोग पंथ क्रम क्रम अनुसरिहौ ॥

गोपीवचन

हम ब्रजवाल गोपाल उपासी । ब्रह्मज्ञान सुनि आवै हाँसी ॥
ब्रज मैं जोग कहाँ तै ल्यायौ । कुविजा कूवर माहि दुरायौ ॥
स्याम सुगाहक पाइ दिखायौ । सो माधव तुम हाथ पठायौ ॥
हम अवला ठगी विवस अहेरी । सो ठग ठग्यौ कंस की चेरी ॥
राम जनम सीता जु दुराई । वधू भई अव कुविजा पाई ॥
तव सीता वियोग दुख पायौ । अव कुविजा पै हियौ सिरायौ ॥
नीरस ज्ञान कहा लै कीजै । जोग मोट दासी सिर दीजै ॥

उद्धववचन

पारब्रह्म अच्युत अविनासी । त्रिगुन रहित प्रभु वरै न दासी ॥
नहिं दासी ठकुराइनि कोई । जहँ देखौ तहँ ब्रह्म है सोई ॥
उर मैं आनौ ब्रह्महि जानौ । ब्रह्म विना दूजौ नहि मानौ ॥

गोपीवचन

खरे करौ अलि जोग सवारौ । भक्ति विरोधी ज्ञान तुम्हारौ ॥
कहा होत उपदेसनि तेरै । नैन सुवस नाही अलि मेरै ॥
हरि पथ जोवै छिन छिन रोवै । कृष्णवियोगी निमिष न सोवै ॥
नंदनँदन कौ देखै जीवै । जोगपंथ पानी नहि पीवै ॥
जव हरि आवै तव सचु पावै । मोहन मूरति कंठ लगावै ॥
दुसह वचन अलि हमै न भावै । जोग कहा ओढै कि विछावै ॥

उद्धववचन

ऊधौ कह्यौ धन्य ब्रजवाला । जिनके सरवस मदन गुपाला ॥
मैं कीन्हौ हो और उपाई । तुम्हरे दरस भक्ति निजु पाई ॥
तुम मन गुरु मैं दास तुम्हारौ । भक्ति सुनाइ जगत निस्तारौ ॥
भ्रमर गीत जो सुनै सुनावै । प्रेम भक्ति गोपिनि की पावै ॥
'सूरदास' गोपी वड़भागी । हरि दरसन की ढोरी लागी ॥
॥ ४०९४ ॥

राग जैतश्री ॥ ४७१२ ॥

ऊधौ कौ उपदेस सुनौ किन कान दै।
हरि निर्गुन संदेस पठायौ आन दै॥
कोउ आवत उहि ओर जहाँ नँदसुवन पधारे।
वहै बेनु धुनि होइ, मनौ आए ब्रज प्यारे॥
धाईं सब गलगाजि कै, ऊधौ देखे जाइ।
लै आईं ब्रजराज गृह, आनँद उर न समाइ॥
अर्घ आरती साजि तिलक दधि माथैं कीन्यौ।
कंचन कलस भराइ और परिकरमा दीन्यौ॥
गोप भीर आँगन भई, मिलि बैठीं सब जाति।
जलझारी आगैं धरी, पूछत हरि कुसलाति॥
कुसल छेम वसुदेव कुसल देवै बलदाऊ।
कुसल छेम अक्रूर कुसल नीकैं कुबिजाऊ॥
पूछि कुसल गोपाल की, रहीं सबै गहि पाइ।
प्रेम मगन ऊधौ भए, देखत ब्रज कौ भाइ॥
मन मन ऊधौ कही, यौ न बूझियै गोपालहिं।
ब्रज कौ हेत बिसारि, जोग सिखवत ब्रजबालहिं॥
उनकी प्रीति पतंग ज्यौं जारति हैं सब देह।
वै हरि दीपक ज्योति ज्यौं नैकु न उनकैं नेह॥
तब ऊधौ कर लई लिखी हरि जू की पाती।
पढ़ी परति नहिं नैकु रहे निठुर करि छाती॥
पाती बाँचि न आवई रहे नैन जल पूरि।
देखि प्रेम गोपिनि कौ ज्ञान गरब गयौ दूरि॥
फिरि इत उत बहराइ नीर नैननि कौ सोख्यौ।
ठानी कथा प्रबोधि बोलि सब घोष समोख्यौ॥
जो ब्रत मुनि जन ध्यावहीं, पावहिं तऊ न पार।
सो ब्रत सिखवौ गोपिका; छाँड़ौ बिषय बिकार॥
सुनि ऊधौ के बैन रहीं नीचैं करि तारे।
मानौ माँगत सुधा आनि बिष ज्वाला जारे॥
हम अहीरि कह जानहिं, जोग जुगति की रीति।
नंदनंदन ब्रत छाँड़ि कै, को लिखि पूजै भीति॥

उद्धववचन

एकै अलख अपार आदि अबिगत है सोई।
आनि निरंजन नाम ताहि रीझै सब कोई॥
नैन नासिका अग्र है तहाँ ब्रह्म कौ बास।
अबिनासी बिनसै नहीं, सहज जोति परकास॥

गोपीवचन

जौ तौ कर पग नहीं कहौ ऊखल क्यौं बाँध्यौ।
नैन नासिका मुखन चोरि दधि कौनैं खाध्यौ॥

तबै खिलाए गोद लै कहे तोतरे बैन।
ऊधौ ताकौ न्याउ यह; जाहि न सूझै नैन।।

उद्धववचन

माया नित्यहि अध, ताहि द्वै लोचन जैसे।
ज्ञानी नैन अनंत ताहि सूझत नहि कैसे।।
बूझहु निगम बुलाइ कै, कहै भेद समुझाइ।
आदि अंत जानौ नही कौन पिता को माइ।।

गोपीवचन

घर लागी अरु घूर कहौ मन कहाँ लगावै।
अपनौ घर परिहरै कहौ को घूर बुझावै।।
मूरख जादव जाति है, हमै सिखावत जोग।
हमसौ भूली कहत है, हम भूली किधौ लोग।।
ऊधौं कहि सति भाइ न्याइ तुम्हरै मुख साँचै।
जोग प्रेम रस कथा कहौ कंचन की काँचै।।
जाके पहरै हूजिए साँचौ ताकौ नेम।
मधुप हमारी सौ कहौ, जोग भलौ कै प्रेम।।
प्रेम प्रेम तैं होइ, प्रेम तै पारहि जइयै।
प्रेम बँध्यौ संसार प्रेम परमारथ लहियै।।
साँचौ निहचै प्रेम कौ, जीवन मुक्ति रसाल।
एकै निहचै प्रेम कौ, जबै मिलै गोपाल।।
सुनि गोपिनि कौ प्रेम, नेम ऊधौ कौ भूल्यौ।
गावत गुन गोपाल, फिरत कुंजनि मैं फूल्यौ।।
छिन गोपिन के पग परै, धन्य तुम्हारौ नेम।
धाइ धाइ द्रुम भेटईं ऊधौ छाके प्रेम।।
धनि गोपी, धनि ग्वाल, धन्य ये सब ब्रजवासी।
धनि यह पावन भूमि, जहाँ बिलसे अविनासी।।
उपदेसन आयौ हुतौ, मोहिं भयौ उपदेस।
ऊधौ जदुपति पै चले, किए गोप कौ भेष।।
भूल्यौ जदुपति नाम, कह्यौ गोपाल गुसाईं।
एक बेर ब्रज जाहु, देहु गोपिनि दिखराईं।।
वृंदावन सुख छाँडि कै, कहाँ बसे हौ आइ।
गोवरधन प्रभु जानि कै, ऊधौ पकरे पाइ।।
ऊधौ ब्रज कौ प्रेम नेम, बरनौ सब आई।
उमग्यौ नैननि नीर बात, कछु कही न जाई।।
'सूर' स्याम भूतल परे, नैन रहे जल छाइ।
पोंछि पीत पट सौ कह्यौ भले, आए जोग सिखाइ।। ४०९५।।

राग सारंग।। ४७१३।। उद्धव प्रत्यागमन

ऊधौ जब ब्रज पहुँचे जाइ।
तबकी कथा कृपा करि कहियै, हम सुनिहै मन लाइ।।

बावा नद जसोदा मैया, मिले कौन हित आइ?
कबहूँ सुरति करत माखन की, किधौं रहे बिसराइ ॥
गोप सखा दधिभात खात बन, अरु चाखते चखाइ।
गऊ बच्छ मुरली सुनि उमड़त, अब जु रहत किहि भाइ ॥
गोपिन गृह व्यवहार बिसारे, मुख सन्मुख सुख पाइ।
पलक ओट निमि पर अनखाती, यह दुख कहाँ समाइ ॥
एक सखी उनमैं जो राधा, लेति मनहि जु चुराइ।
'सूर' स्याम यह बार बार कहि, मनही मन पछिताइ ॥ ४०९६ ॥

राग गौरी ॥ ४७१४ ॥

ब्रज के निकट जाइ फिरि आयौ।
गोपी-नैन-नीर-सरिता तैं, पार न पहुँचन पायौ ॥
तुम्हरी सीख सु नाव बैठि कै, चाहत पार गयौ।
ज्ञान ध्यान ब्रत नेम जोग कौ, सँग परिवार लयौ ॥
इहि तट तैं चलि जात नैकु उत, बिरह पवन झकझोरै।
सुरति वृच्छ सो मारि बाहुबल, टूक टूक करि तोरै ॥
हौं हूँ बूड़ि चल्यौ वा गहिरैं, केतिक बुड़की खाई।
ना जानौ वह जोग बापुरौ, कहँ धौं गयौ गुसाई ॥
जानन हुतौ थाह वा जल की, औ तरिबे कौ धीर।
'सूर' कथा जु कहा कहौं उनकी परचौ प्रेम की भीर ॥ ४०९७ ॥

राग सारंग ॥ ४७१५ ॥

जब मैं इहाँ तैं जु गयौ।
तब ब्रजराज सकल गोपी जन, आगैं होइ लयौ ॥
उतरे जाइ नंद बाबा कै, सबही सोध लह्यौ।
मेरी सौं मोसौं साँची कहि मैया कहा कह्यौ?
बारंबार कुसल पूछी मोहिं, लै लै तुम्हरौ नाम।
ज्यौं जल तृपा बढ़ी चातक चित, कृष्न कृष्न बलराम ॥
सुंदर परम बिचित्र मनोहर, यह मुरली दै घाली।
लई उठाइ सुख मानि 'सूर' प्रभु, प्रीति आनि उर साली ॥ ४०९८ ॥

राग सारंग ॥ ४७१६ ॥

सुनियै ब्रज की दसा गुसाईं।
रथ की धुजा पीत पट भूषन देखत ही उठि धाईं ॥
जो तुम कही जोग की बातैं, सो हम सबै बताईं।
श्रवन मूँदि गुन कर्म तुम्हारे, प्रेम मगन मन गाईं ॥
औरौ कछू सँदेस सखी इक, कहत दूरि लौ आईं।
हुतौ कछू हमहूँ सौं नातौ निपट कहा बिसराईं ॥
'सूरदास' प्रभु बन बिनोद करि, जे तुम गाइँ चराईं।
ते गाईं अब ग्वाल न घेरत, मानौ भईं पराईं ॥ ४०९९ ॥

राग सारंग ॥ ४७१७ ॥

ब्रज के बिरही लोग दुखारे।
बिन गोपाल ठगे से ठाढ़े, अति दुर्बल तन कारे ॥

नंद, जसोदा मारग जोवति, निसि दिन साँझ, सकारे।
चहुँ दिसि कान्ह कान्ह कहि टेरत, अँसुवन वहत पनारे॥
गोपी, ग्वाल, गाइ, गोसुत सब, अतिही दीन विचारे।
'सूरदास' प्रभु विनु यौ देखियत, चंद विना ज्यौ तारे॥ ४१००॥

राग केदारौ॥ ४७१८॥

हरि जू, सुनहु वचन सुजान।
विरह व्याकुल छीन तन मन, हीन लोचन कान॥
यहै है संदेस व्रज कौ, नाथ सुनहु निदान।
मै सवै व्रज दीन देख्यौ, तन विना ज्यौ प्रान॥
तुम विना सोभा नही प्रभु, ज्यौ दिवस विनु भान।
आस साँस उसास घट मै, अवधि आसा मान॥
जगतजीवन, जगतपालक, जगतनाथ, कृपाल।
करि जतन कछु 'सूर' के प्रभु, ज्यौ जियै व्रजवाल॥ ४१०१॥

राग सारंग॥ ४७१९॥

विनती एक सुनौ श्री स्याम।
चलन न देति चल्यौ नहिं भावत, चलत कह्यौ आवन पट याम॥
तुम सर्वज्ञ सकल घट व्यापक, जीवन पद, जन के विस्राम।
संतत रहत कहत ढीठौ दै, स्याम सदा सेवक सुख धाम॥
वह रस रीति प्रीति गोपिन की लिए रहति लीला, गुन, नाम।
'सूरदास' प्रभु सव सुखदाता, तेऊ तौ नियरे नँदग्राम॥४१०२॥

राग जैतश्री॥ ४७२०॥

सुनहु स्याम वै सव व्रजवनिता, विरह तुम्हारै भई वावरी।
नाही वात और कहि आवति, छाँड़ि जहाँ लगि कथा रावरी॥
कवहुँ कहति हरि माखन खायौ, कौन वसै या कठिन गाँव री।
कवहुँ कहति हरि ऊखल वाँधे, घर घर ते लै चलौ दाँवरी॥
कवहुँ कहति व्रजनाथ गए वन, जोवत मग भई दृष्टि झाँवरी।
कवहुँ कहति वा मुरली महियाँ, लै लै वोलत हमरौ नावँ री॥
कवहुँ कहति व्रजनाथ साथ तैं, चंद उयौ है इहै ठाँव री।
'सूरदास' तुम्हरे दरस विनु, अव वह मूरति भई साँवरी॥ ४१०३॥

राग विहागरौ॥ ४७२१॥

हरि जू आए सो भली कीन्ही।
मो देखत कहि उठी राधिका, अंक तिमिर कौ दीन्ही॥
तन अति कप विरह अति व्याकुल, उर धुकधुकि अति कीन्ही।
चलत चरन गहि रही गई गिरि, स्वेद सलिल भइ भीनी॥
छुटी न भुज, टूटी वलयावलि, फटी कंचुकी झीनी।
मनौ प्रेम की परनि परेवा, याही तै पढि लीनी॥
अवलोकत इहि भाँति रमापति, मानौ अहि मनि छीनी।
'सूरदास' प्रभु कहौं कहाँ लौ, भई अयान मतिहीनी॥ ४१०४॥

राग सोरठ ॥ ४७७२ ॥

तुम्हरी भावती कह्यौ।
यह कहियौ नँदनंद आगैं, अति दुख दुसह सह्यौ ॥
लेति उसाँस सोच निसि दिन के, नैकु न रूप रह्यौ।
विगलित केस वदन छवि ऐसी, जनु ससि राहु गह्यौ ॥
माखन काढ़ि कूवरी लीन्हौ, व्रज मैं रह्यौ मह्यौ।
'सूर' स्याम रति जाम प्रेम पय, वहुरौ जम्यौ कह्यौ ॥ ४१०५ ॥

राग मलार ॥ ४७२३ ॥

सुनहु स्याम यह वात और कोउ क्यौ समुझाइ कहै।
दुहुँ दिसि की अति विरह विरहिनी, कैसैं कै जु सहै ॥
जव राधा तवही मुख माधौ, माधौ रटत रहै।
जव माधौ ह्वै जात सकल तन, राधा विरह दहै ॥
उभै अग्र दव दारु कीट ज्यौं, सीतलताहिं चहै।
'सूरदास' अति विकल विरहिनी, कैसैंहु सुख न लहै ॥ ४१०६ ॥

राग केदारौ ॥ ४७२४ ॥

चित दै सुनौ स्याम प्रवीन।
हरि तुम्हारैं विरह राधा, मैं जु देखी दीन ॥
तज्यौ तेल तमोल भूपन, अंग वसन मलीन।
कंकना कर रहत नाही, टाड़ भुज गहि लीन ॥
जव सँदेसौ कहन सुंदरि, गवन मो तन कीन।
छुटी छुद्रावलि चरन अरुझि गिरी वल हीन ॥
कंठ वचन न वोलि आवै, हृदय परिहस भीन।
नैन जल भरि रोइ दीनौ, ग्रसित आपद दीन ॥
उठी वहुरि सँभारि भट ज्यौं, परम साहस कीन।
'सूर' हरि के दरस कारन, रही आसा लीन ॥ ४१०७ ॥

॥ ४७२५ ॥

फिरि व्रज वसौ नंदकुमार।
हरि तिहारे विरह राधा, भई तन जरि छार ॥
विनु अभूपन मैं जु देखी, परी है विकरार।
एकई रट रटत भामिनि, पीव पीव पुकार ॥
सजल लोचन चुअत उनके, वहति जमुना धार।
विरह अगिनि प्रचंड उनकैं, जरे हाथ लुहार ॥
दूसरी गति और नाही, रटति वारंवार।
'सूर' प्रभु कौ नाम उनकैं, लकुट अंध अधार ॥ ४१०८ ॥

सुनहु स्याम सुजान, तिय गजगामिनि की पीर।
विरह सर गंभीर ग्राह जु, ग्रसी काम अधीर ॥
सोच पंक जु सनी सुंदरि, मोच नैननि नीर।
चक्र लै कै वेगि धावहु, करि कृपा वलवीर ॥

नहीं कछु सँभार विह्वल, विकल भई सरीर।
कोटि दुःख समूह फंदनि, काढ़ि आनहु तीर॥
कहा जानि छँड़ाइ लीन्हौ, द्विरद दीनदयाल।
'सूर' प्रभु न विसारियै जू, राधिका सी बाल॥ ४१०९॥

राग केदारौ॥ ४७२७॥

भरि भरि लेति ऊरध स्वास।
साँवरे ब्रजनाथ तुम विन, दुखित मनसिज त्रास॥
अमित पीर अधीर डोलति, सुमिरि नैन विलास।
तेइ सुख दुख भए दारुन, जे किए रस रास॥
निगम गुरुजन लोग निदरत, जग करत उपहास।
'सूर' तुम विनु विकल विरहिनि, मरति दरसन प्यास॥ ४११०॥

राग केदारौ॥ ४७२८॥

भरि भरि लेति लोचन नीर।
तुम विना ब्रजनाथ सुदरि विरह खेद अधीर॥
कमल उर पर धरति छिन छिन छिरकि चंदन चीर।
जाल मग ससि किरन रोकति मलय मंद समीर॥
हौ इहाँ तुम पास आयौ देखि मनसिज भीर।
'सूरदास' सुजान श्रीपति मिलि हरहु तनपीर॥ ४१११॥

राग धनाश्री॥ ४७२९॥

उमँगि चले दोउ नैन विसाल।
सुनि सुनि यह संदेस स्यामघन, सुमिरि तुम्हारे गुन गोपाल॥
आनन अरु उरजनि के अंतर, जलधारा वाढ़ीं तिहि काल।
मनु जुग जलज सुमेरु सृंग तै, जाइ मिले सम ससिहि सनाल॥
भीजे उर अंचल अति राजित, तिन तरहरि मुक्तनि की माल।
मानौ इंदु नवल नलिनी दल, लंकृत अमी अंसु-कन-जाल॥
कहँ वह प्रीति रीति राधा की, कहँ यह करनी उलटी चाल।
'सूरदास' प्रभु कपट वचन तैं, क्यौ जीवै विरहिनि वेहाल॥४११२॥

राग मारू॥ ४७३०॥

तुम्हरे विरह ब्रजनाथ राधिका नैननि नदी वढ़ी।
लीने जात निमेप कूल दोउ, एते मान चढ़ी॥
चलि न सकत गोलक नौका लौ, सीव पलक वल वोरति।
ऊर्ध्व उसाँस समीर तरंगनि, तेज तिलक तरु तोरति॥
कज्जल कीच कुचील किए तट, अंवर अधर कपोल।
रहे पथिक जु जहाँ सु तहाँ थकि, हस्त चरन मुख वोल॥
नाही और उपाय रमापति, विनु दरसन क्यौ लीजै।
आँसुसलिल वूड़त सव गोकुल, 'सूर' स्वकर गहि लीजै॥ ४११३॥

राग मलार॥ ४७३१॥

नैन घन घटत न एक घरी।
कवहुँ न मिटति सदा पावस ब्रज, लागी रहत झरी॥

विरह इंद्र बरषत निसि बासर, इहिं अति अधिक करी।
ऊर्ध उसाँस समीर तेज जल, उर भू उमँगि भरी॥
बूड़त भुजा रोम द्रुम अंबर, अग कुच उच्च थरी।
चलि न सकत पद रेह पंथ की, चंदन कीच खरी॥
सब रितु भई एक सी इहिं ब्रज इहिं विधि उलटि धरी।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे बिछुरे, राव मरजाद टरी॥४११४॥

राग केदारौ॥४७३२॥

देखी मैं लोचन चुवत अचेत।
मनहु कमल ससि त्रास ईस कौं, मुक्ता गनि गनि देत॥
कहुँ कंकन कहुँ गिरी मुद्रिका, कहूँ टाड़ कहुँ नेत।
चेतति नही चित्र की पुतरी, समुझाएँ सचेत॥
द्वार खरी इकटक मग जोवति, ऊर्ध उसाँसनि लेत।
'सूरदास' कछु सुधि नहिं तन की, बँधी तिहारैं हेत॥४११५॥

राग मलार॥४७३३॥

नैननि होड़ बदी बरषा सौं।
राति दिवस बरषत झर लाए, दिन दूनी करषा सौं॥
चारि मास बरषे जल खूँटे, हारि समुझि उन मानी।
ये तेहूँ पर धार न खंडत, इनकी अकथ कहानी॥
एते मान चढ़ाइ चढी अति तजी पलक की सीव।
मै जानी दीनी उन मानौ, महाप्रलय की नीव॥
तुम पै होइ सु करहु कृपानिधि, ये ब्रज के ब्यौहार।
अबकी बेर पाछिले नातैं, 'सूर' लगावहु पार॥४११६॥

राग गौरी॥४७३४॥

ब्रज तैं द्वै रितु पै न गई।
ग्रीषम अरु पावस प्रवीन हरि, तुम बिनु अधिक भई॥
उर्ध उसास समीर नैन घन, सब जल जोग जुरे।
बरषि प्रगट कीन्हे दुख दादुर, हुते जो दूरि दुरे॥
बिषम वियोग जु बृष दिनकर सम, हित अति उदौ करै।
हरि-पद-बिमुख भए सुनि 'सूरज', को तन ताप हरै॥४११७॥

राग कान्हरौ॥४७३५॥

नाही कछु सुधि रही हिए।
सुनहु स्याम वे सखी राधिकहिं, जुगवति जतन किए॥
सैन सूच, नख लिखति किसलयनि, स्रवन न सब्द छिए।
कर कंकन कोकिला उडावति, बिनु मुख नाम लिए॥
ससि संका निसि जालनि के मग, बसन बनाइ सिए।
दिसि दिसि सीत समीरहिं रोकति, अंचल ओट दिए॥
मृगमद मलय परसि तन तलफत, जनु बिष बिषम पिए।
जौ न इते पर मिलहु 'सूर' प्रभु, तौ जानिबी जिए॥४११८॥

राग गौरी ॥ ४७३६ ॥

कहाँ लौ कहिऐ ब्रज की बात।
सुनहु स्याम तुम बिनु उन लोगनि, जैसे दिवस बिहात॥
गोपी ग्वाल गाइ गोसुत सब, मलिन बदन कृस गात।
परम दीन जनु सिसिर हेम हत, अबुजगन बिनु पात॥
जो कोउ आवत देखि दूरि तैं, उठि पूछत कुसलात।
चलन न देत प्रेम आतुर उर, कर चरननि लपटात॥
पिक चातक बन बसन न पावत, बायस बलि नहि खात।
'सूर' स्याम संदेसनि कै डर, पथिक न उहि मग जात॥ ४११९ ॥

राग मलार ॥ ४७३७ ॥

ब्रज की कहि न परति है बातै।
गिरि-तनया-पति-भूपन जैसै, बिरह जरी दिन रातै॥
मलिन बसन हरि हित अंतरगति, तन पीरी जनु पातै।
गदगद बचन नैन जल पूरित, बिलख बदन कृस गातै॥
मुक्तातात भवन तै बिछुरै, मीन मकर बिललातै।
सारँग-रिपु-सुत-सुहृद पति बिना, दुख पावत बहु भाँतै॥
हरि-सुर-भपन बिना बिरहाने, छीन भई तन तातै।
'सूरदास' गोपिनि परतिज्ञा, मिलहु पहिल के नातै॥ ४१२० ॥

राग नट ॥ ४७३८ ॥

कही न परति हरि ब्रज की बात।
नर नारी पंछी द्रुम बेली, दरसन कौ अकुलात॥
जब तुम हे तब बनफल फलते, तहँ अब पुहुप न पात।
कीडत नाहि कपोत कुलाहल, करत नही उठि प्रात॥
गोमृग निकसि नवाइ नैन मुख, अति दुख तृन नहि खात।
गोपी ग्वाल उसास हुतासन, बिरह ज्वाल अकुलात॥
गोकुल की यह बिपति कहा कहौ, तुम बिनु हो जदुनाथ।
'सूरदास' स्वामी दरसन की करत सुरति दिन रात॥ ४१२१ ॥

राग कल्यान ॥ ४७३९ ॥

रहति रैनि दिन हरि हरि हरि रट।
चितवति इकटक मग चकोर लौ, जब तै तुम बिछुरे नागर नट॥
भरि भरि नैन नीर ढारति है, सजल करति अति कचुकि के पट।
मनहु बिरह की बिज्जुरता लगि, लियौ नेम सिव सीस सहस घट॥
जैसै जव के अग्र ओस कन, प्रान रहत ऐसैहि अवधिहि तट।
'सूरदास' प्रभु मिलहु कृपा करि, जे दिन कहे तेउ आए निकट॥४१२२॥

राग सारंग ॥ ४७४० ॥

दिन दस घोप चलहु गोपाल।
गाइनि को अवसेरि मिटावहु, मिलहु आपने ग्वाल॥
नाचत नही मोर ता दिन तै, रटत न बरपा काल।
मृग दुबरे तुम्हरे दरसन बिनु, सुनत न बेनु रसाल॥

वृंदावन हरचौ होत न भावत, देख्यौ स्याम तमाल।
'सूरदास' मैया अनाथ है, घर चलियै नँदलाल ॥ ४१२३ ॥

राग सोरठ ॥ ४७४१ ॥ श्रीकृष्ण वचन

उधौ भली ज्ञान समुझायौ।
तुम मोसौं अब कहा कहत हौ, मैं कहि कहा पठायौ ॥
कहवावत हौ बड़े चतुर पै, उहाँ न कछु कहि आयौ।
'सूरदास' ब्रज बासिन कौ हित, हरि हिय माहँ दुरायौ ॥ ४१२४ ॥

राग सारंग ॥ ४७४२ ॥ उद्धव वचन

मैं समुझाई अति अपनौ सौं।
तदपि उन्हैं परतीति न उपजी, सबै लख्यौ सपनौ सौं ॥
कहौ तुम्हारी सबै कही मैं, और कही कछु अपनी।
स्रवननि वचन सुनत भइ उनकैं, ज्यौ घृत नाएँ अगनी ॥
कोऊ कही बनाइ पचासक, उनकी बात जु एक।
धन्य धन्य ब्रजनारि बापुरी, जिनकी और न टेक ॥
देखत उमग्यौ प्रेम इहाँ कौ, धरे रहे सब ऊलौं।
'सूर' स्याम हौ रह्यौ थक्यौ सौ, ज्यौ मृग चौका भूलौ ॥ ४१२५ ॥

राग सारंग ॥ ४७४३ ॥

बातैं सुनहु तौ स्याम सुनाऊँ।
जुवतिनि सौं कहि कथा जोग की, क्यौ न इतौ दुख पाऊँ ॥
हौ पचि एक कहौ निरगुन की, ताहू मैं अटकाऊँ।
वै उमड़ै वारिधि के जल ज्यौ, क्यौहूँ थाह न पाऊँ ॥
कौन कौन कौ उत्तर दीजै, तातैं भज्यौ अगाऊँ।
वै मेरे सिर पटिया पारै, कंथा काहि उढ़ाऊँ ॥
एक आँधरौ, हिय की फूटी, दौरत पहिरि खराऊँ।
'सूर' सकल पट दरसन वै, हौ बारहखरी पढ़ाऊँ ॥ ४१२६ ॥

राग सारंग ॥ ४७४४ ॥

सुनि लीन्ह्यौ उनही कौ कह्यौ।
अपनी चाल समुझि मन ही मन, गुनि अरगाइ रह्यौ ॥
अबलनि सौ न कही परै जु पै, बात तोरि करि कानि।
अनबोले पूरौ दै निबह्यौ, बहुत दिननि की जानि ॥
जानि बूझि कै कत हौ पठयौ, सठ बावरौ अयानौ।
तुमहूँ बूझ बहुत बातनि के, उहाँ जाहु तौ जानौ ॥
अज्ञाभंग होइ क्यौ मो पैं, गयौ तुम्हारे ठौले।
'सूर' पठावन ही की ओरी, रह्यौ जुगुति सौ लीले ॥ ४१२७ ॥

राग मलार ॥ ४७४५ ॥

हरि हौ बहुत दाउँ दै हारचौ।
अज्ञाभंग होइ क्यौ मोपै, बचन तिहारौ पारचौ ॥
हारि मानि उठि चल्यौ दीन ह्वै मानि अपुन तन खेद।
जानि लियौ थोरै मैं थोरौ, प्रेम न रोकै बेद ॥

ऊतर कौ ऊतर नहिं आवै, तब उनही मिलि जात।
मेरी बात कहा, ब्रह्मा हू, अर्ध बचन मैं मात॥
अपनी चाल जानि मनहीं मन, चल्यौ बसीठी तोरि।
'सूर' एकहू अंग न काँची, मैं देखौ टकटोरि॥ ४१२८॥

राग देवगंधार॥ ४७४६॥

हौं हरि अधर दाउँ दै हार्यौ।
कहौ कहा निरगुन की बातैं, उनकौ प्रेम निन्यारौ॥
जौ हौ कहौं प्रात बातैं वे, निस दिन कथा चलावै।
उनकी प्रीति देखि सब भूलत, कछू मर्म नहि पावै॥
तन, मन, प्रान सबै हरि अरपन, कमल नैन कौ ध्यान।
निसि बासर उनकै यह चरचा, और न दूजौ ज्ञान॥
कौन भाँति करि जोग सिखाऊँ, भूलि गई मुख बातैं।
'सूर' सकल वे स्याम उपासी, मोकौ मारत लातैं॥ ४१२९॥

राग मलार॥ ४७४७॥

कहिबे मै न कछु सक राखी।
बुधि विवेक अनुमान आपनैं, मुख आई सो भाषी॥
हौं मरि एक कहौ पहरक मै, वै पल माहि अनेक।
हारि मानि उठि चल्यौ दीन ह्वै, छाँड़ि आपनी टेक॥
हौं पठयौ कतही वे काजै, सठ मूरख जु अयानौ।
तुमहिं बूझ बहुतैं बातनि की, उहाँ जाहु तौ जानौ॥
श्री मुख के सिखए ग्रंथादिक, ते सब भए कहानी।
एक होइ तौ उत्तर दीजै, 'सूर' सु मठी उफानी॥ ४१३०॥

राग सोरठ॥ ४७४९॥

माधौ जू जोग कौ बोध बह्यौ।
स्याम सुमुख विधु बचन सुधा रस, सो पुनि कछु न कह्यौ॥
नव नव भाव तरंग महोदधि, सखि लोचन उमह्यौ।
तुम जो कह्यौ ज्ञान कौ मारग, पानी ह्वै सु बह्यौ॥
सकल सिंगार हार रस सरबस, ब्रज नवनीत लह्यौ।
छूँछे भाँड़े पर्यौ न पावै, लिखि तुम दियौ मह्यौ॥
मोहि आचरज एक पै लागत, तुम पै जात सह्यौ।
'सूर' स्याम सुनि सखा सयानौ, लै भुज बीच गह्यौ॥ ४१३१॥

राग नट॥ ४७५०॥

कोऊ सुनत न बात हमारी।
मानैं कहा जोग जादवपति, प्रगट प्रेम ब्रजनारी॥
कोउ कहति हरि गए कुंज बन, सैन धाम वै देत।
कोऊ कहति इंद्र बरषा तकि, गिरि गोवर्धन लेत॥
कोऊ कहति नाग काली सुनि, हरि गए जमुना तीर।
कोऊ कहति अघासुर मारन, गए संग बलबीर॥
कोऊ कहति ग्वालबालनि सँग, खेलत बनहिं लुकाने।
'सूर' सुमिरि गुन नाथ तुम्हारे, कोऊ कह्यौ न माने॥ ४१३२॥

राग सारंग ॥ ४७५१ ॥

हरि तुम्है वारंवार सम्हारै।
कहौ तौ सव जुवतिनि के नाम कहौं, जे हित सौं उर धारै॥
कवहुँक आँखि मूँदि कै चाहति, सव सुख अधिक तिहारै।
तव प्रसिद्ध लीला सँग विहरति, अव चित डोर विहारै॥
जाकौ कोऊ जिहि विधि सुमिरै, सोऊ तिहि हित मानै।
उलटी रीति सवै तुम्हरी है, हम तौ प्रगट कहि जानै॥
जो पतिया तुम लिखि पठवत हौ, वाँधि समुझि सव पाउ।
'सूर' स्याम हैं पलक धाम मैं, लखि चित कत विलखाउ॥ ४१३३॥

राग सारंग ॥ ४७५२ ॥

माधौ जू कहा कहौं उनकी गति।
देखत वनै कहत नहि आवै, अति प्रतीति तुम तैं रति॥
जद्यपि हौ पट मास रह्यो ढिग, लही नहीं उनकी मति।
तासौं कहौं सवै एकै वुधि, परमोधी नहि मानति॥
तुम कृपालु करुनामय कहियत, तातैं मिलत कहा छति।
'सूरदास' प्रभु सोई कीजै, जातैं तुम पावहु पति॥ ४१३४॥

राग केदारौ ॥ ४७५३ ॥

अव जनि वाँधिवेहिं डराहु।
दूध दधि माखन मनोहर, डारि देहि अरु खाहु॥
सदा वैठे घोप रहियौ, वन न दैहैं जान।
पलकहूँ भरि दुख न दैहै, राखिहै ज्यौं प्रान॥
सव तिहारौ कह्यौ करिहै, वचन माथै मानि।
परम चतुर सुजान एते, माँझ लीजौ जानि॥
अव न कवहूँ चूक परिहै, यह हमारौ वोल।
किंकिरिनि की लाज धरि, व्रज सुवस करहु निठोल॥
समुझि निज अपराध करनी, नार नावति नीच।
वहुत दिन तैं वरति है, वै आँखि न दीजै सीच॥
मन वचन अरु कर्मना कछु, कहत नाही राखि।
'सूर' प्रभु यह मोल हिरदै, सात राजा साखि॥ ४१३५॥

राग सारंग ॥ ४७५४ ॥

कहत न वनै व्रज की रीति।
कहा मोंं सठ कौ पठायौ, देखि उनकी प्रीति॥
जुवति वल्लभ कत कहावत, करत सकल अनीति।
मोहिं तौ यह कठिन लागत, क्यौं करौं परतीति॥
सुनौ धौं दै कान अपनी, लोक लोकनि रीति।
'सूर' प्रभु अपनी सचाई, रही निगमनि जीति॥ ४१३६॥

राग नट ॥ ४७५५ ॥

परम वियोगिनी सव ठाढ़ी।
ज्यौं जलहीन दीन कुमुदिनि वन, रविप्रकास की डाढ़ी॥

जिहि विधि मीन सलिल तैं बिछुरैं, तिहि अति गति अकुलानी।
सूखे अधरु न कहि आवै कछु, वचन रहित मुख वानी॥
उन्नत स्वास विरह विरहातुर, कमल वदनि कुम्हिलानी।
निंदति नैन निमेप छिनहिं छिन, मिलन कठिन जिय जानी॥
विनु वुधि वल विचित्र कृत सोभित, चलि न सकी पचि हारी।
'सूरदास' प्रभु अवधि लागि ननु, प्रान तजति व्रजनारी॥४१३७॥

राग मारू॥४७५६॥

सबै व्रज घर घर एकै रीति।
ज्यौं कुरुखेत गड़े कौ सोनौं, त्यौं प्रभु तुम्हरी प्रीति॥
वै सव परम विचित्र सयानी, अरु सव ही जग जीति।
उनकौ ज्ञान सुनत हौ सठ भयौ, ज्यौं वारू की भीति॥
एकै गहन गहीं उन हठ करि, मेटि वेद विधि नीति।
गोप वेप भजि 'सूर' स्याम वै, रहीं विश्व वर जीति॥४१३८॥

राग धनाश्री॥४७५७॥

व्रज मैं एकै धरम रह्यौ।
स्रुति सुमृति औ वेद पुराननि, सबै गोविद कह्यौ॥
वालक वृद्ध तरुन अवलनि कौं, एक प्रेम निवह्यौ।
'सूरदास प्रभु छाँड़ि जमुन जल, हरि की सरन गह्यौ॥४१३९॥

राग केदारौ॥४७५८॥

व्रजजन दुखित अति तन छीन।
रटत इकटक चित्त चातक, स्याम-घन-तन-लीन॥
नाहिं पलटत वसन भूपन, दृगनि दीपक तात।
विलख वदन मलीन तन ज्यौं, तरनि विनु जलजात॥
कहन जो तुम कहे सो मत, पच्यौ करि उपदेस।
धरत जल ज्यौं नलिनि दल नहि, वचन उर न प्रवेस॥
धरे मुरली मोर चंद्रिक, पीतपट वनमाल।
रहीं वह छवि अग अगनि, लपटि स्याम तमाल॥
दिवस वितवति सकल जन मिलि, कहत गुन वलवीर।
रैनि उडुपति निरखि तलफति मीन ज्यौं विनु नीर॥
होहु करुनानाथ वंधू, गहे ऊधौ पाइँ।
'सूर' प्रभु अव दरस दै कै, लेहु मरत जिवाइ॥४१४०॥

राग सारंग॥४७५९॥

तव तैं इन सवहिनि सचु पायौ।
जव तैं हरि संदेस तुम्हारौ, सुनत ताँवरौ आयौ॥
फूले व्याल दुरे ते प्रगटे, पवन पेट भरि खायौ।
खोले मृगनि चौक चरननि के, हुतौ जु जिय विसरायौ॥
ऊँचे वैठि विहंग सभा मैं, सुक वनराइ कहायौ।
किलकि किलकि कुल सहित आपनैं, कोकिल मंगल गायौ॥
निकसि कंदराहू तैं केहरि, पूँछ मूड़ पर ल्यायौ।
गहवर तैं गजराज आइकै, अंगहि गर्व वढ़ायौ॥

अब जनि गहरु करहु हो मोहन, जो चाहत हौ ज्यायौ।
'सूर' बहुरि ह्वै है राधा को, सब बैरनि को भायौ ॥ ४१४१ ॥

राग धनाश्री ॥ ४७६० ॥

आजु बिरहिनी बिरह तुम्हारैं, कैसी रटति रही।
चारि जाम निसि तुम्हरोइ सुमिरन, और न बात कही ॥
बासर कथा कठिन करि करि मन, क्रमक्रम व्यथा सही।
सध्या ससि दव जानि चली उठि, रहति न अंक गही ॥
अति स्रम मलय कुंकुमा, सींचत, सरिता सेज बही।
ते क्यौं सीतल होहि 'सूर' अब, पिया बियोग दही ॥ ४१४२ ॥

राग सारंग ॥ ४७६१ ॥

कान्ह तुम्हारी विकल विरहिनी, बिलपति बिरह बिगोयें।
अति आरति न सम्हारति तन मन, इकटक लौ मग जोयैं ॥
काजर मिलि लोचन बरषत अति, दुख मुख की छवि रोयैं।
राहु केतु मानौ सुमीड़ि बिधु, अंक छुड़ावत धोयैं ॥
अबला कहा जोग मत जानैं, मनमथ व्यथा बिलोयैं।
'सूरदास' क्यौं नीर चुवत है, नीरस बसन निचोयैं ॥ ४१४३ ॥

राग सोरठ ॥ ४७६२ ॥

माधौ जू सुनौ ब्रज कौ प्रेम।
सोधि मैं षट मास देख्यौ, गोपिकनि कौ नेम ॥
हृदय तैं नहिं टरत टारे, स्याम राम समेत।
आँसुसलिल प्रवाह मानौ, अर्घ नैननि देत ॥
चँवर अंचल कुच कलस, वर पानि पत्र चढ़ाइ।
सुमिरि तुम्हरी प्रगट लीला, कर्म उठती गाइ ॥
देह गेह सनेह अर्पन कमललोचन ध्यान।
'सूर' उनकौ प्रेम देखैं, फीकौ लागत ज्ञान ॥ ४१४४ ॥

राग सारंग ॥ ४७६३ ॥

माधौ जू सुनियै ब्रज व्यवहार।
मेरी कह्यौ पवन कौ भुस भयौ, गावत नंदकुमार ॥
एक ग्वाल गोसुत ह्वै रेंगत, एक लकुट कर लेत।
एक मंडली करि बैठारत, छाक बाँट इक देत ॥
एक ग्वाल नटवर बपु लीला, एक कर्म गुन गावत।
बहुत भाँति करि मैं समुझायौ, एक न उर मैं आवत ॥
निसि बासर येही ढँग सब ब्रज, दिन दिन नव तन प्रीति।
'सूर' सकल फीकौ लागत है, देखत वह रस रीति ॥ ४१४५ ॥

राग मलार ॥ ४७६४ ॥

बातैं बूझत यौं बहरावति।
सुनहु स्याम वै सखी सयानी, पावस रितु राधेहिं न सुनावति ॥
घन देखत गिरि कहति कुसल मति, गरजत, गुहा सिंह समुझावति।
नहिं दामिनि द्रुम दवा सैल चढ़ि, करि बयारि उलटी झर धावति ॥

नाहिन मोर बकत पिक दादुर, ग्वाल मण्डली खगनि खिलावति।
नहिं नभ वृष्टि झरत झरना जल, परि परि बुंद उचटि इत आवति॥
कबहुंक प्रगट पपीहा बोलत, कहि कुपच्छि कर तारि बजावति।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे मिलन बिनु, सो बिरहिनि इतनौ दुख पावति॥४१४६॥

राग नट॥ ४६६५॥

नैंकहु सोच न काहू कीन्हौं।
सुनि ब्रजनाथ सबनि के औगुन, मिलि मिलि है दुख दीन्हौ॥
रितु बसंत अनसमै अधम मति, पिक सहाइ लै धावत।
प्रीतम संग जानि जुवती रुचि, बोलेहूँ नहि आवत॥
सदा सरद रितु सकल कला लै, सनमुख रहत जुन्हाई।
सो सित पच्छ कुहू सम बीतत, कबहुं न देत दिखाई॥
त्रिविध समीर सुमन सौरभ मिलि, मत्त मधुप गुंजार।
जोइ जोइ रुचै सो कियौ बाँधि बल, तजि तन सकुच बिचारि॥
रति पति अति अनीति करिबे कौं, कोटि धूम धुज मानौ।
लै कर धनुप चितै तुम्हरौ मुख, अब बोले तब जानौ॥
इहिं विधि सबनि बीच पायौ ब्रज, काढ़त बैर दुरासी।
'सूरदास' प्रभु बेगि मिलहु अब, पिसुन करत सब हाँसी॥ ४१४७॥

राग सारंग॥ ४७६६॥

सब तैं परम मनोहर गोपी।
नंदनँदन के नेह मेह जिन, लोक लीक लोपी॥
बरु कुबिजा के रगहिं राँचे, जदपि तजी सोपी।
तदपि न तजे भजे निसि बासर, नैकहुँ नहि कोपी॥
ज्ञान कथा कौं मथि मन देख्यौ, ऊधौ वहु धोपी।
टरति घरी छिन नैंकु न अँखियाँ, स्याम रूप रोपी॥
जिती हुती हरि के अवगुन की, ते सबहीं तोपी।
'सूरदास' प्रभु प्रेम हेम ज्यौ, अधिक ओप ओपी॥ ४१४८॥

राग सारंग॥ ४७६७॥

मो मन उनही कौ जु भयौ।
परयौ प्रभु उनकै प्रेम कोस मैं, तुमहूँ बिसरि गयौ॥
तुमसौं सपथ करि गयौ मोहन, बेगि कह्यौ हो आवन।
तिनहिं देखि वैसोइ मै ह्वै रह्यौ, लग्यौ उनहिं मिलि गावन॥
समुझि परी षट् मास बितीतै, कहाँ हुतौ हो आयौ।
'सूर' अनकही दै गोपिनि सौ, स्रवन मूँदि उठि धायौ॥ ४१४९॥

राग देवगंधार॥ ४७६८॥

उनमैं पाँचौ दिन जौ बसियै।
नाथ तुम्हारी सौ जिय उपजत, बहुरि अपुनपौ कसियै॥
वह बिनोद वह लीला रचना, देखे ही बनि आवै।
मोकौं बहुरि कहाँ वैसौ सुख, बडभागी जो पावै॥
मनसा वाचा और कर्मना, हौं न कहत कछु राखी।
'सूर' काढ़ि डारयौ ब्रज तैं ज्यौं, दूध माँझ तैं माखी॥ ४१५०॥

राग सोरठ ॥ ४७६९ ॥

माधौ जू मै अतिहीं सचु पायौ।
अपनौ जानि सँदेस व्याज करि, व्रज जन मिलन पठायौ ॥
छमा करौ तौ करौ बीनती, उनहि देखि जो आयौ।
श्रीमुख ग्यान पथ जो उचरयौ, सो पै कछु न सुहायौ ॥
सकल निगम सिद्धांत जन्म क्रम, स्यामा सहज सुनायौ।
यहिं स्रुति, सेष, महेस प्रजापति, जो रस गोपनि गायौ ॥
कटुककथा लागी मोहिं मेरी, वह रस सिंधु उम्हायौ।
उत तुम देखे और भाँति मै, सकल तृषा जु बुझायौ ॥
तुम्हरी अकथ कथा तुम जानौ, हम जन नाहि बिसार्यौ।
'सूर' स्याम सुंदर यह सुनि कै, नैननि नीर बहायौ ॥ ४१५१ ॥

राग सारंग ॥ ४७७० ॥

व्रज मै संभ्रम मोहिं भयौ।
तुम्हरौ ज्ञान सँदेसौ प्रभु जू, सबै जु भूलि गयौ ॥
तुमही सौ बालक किसोर वपु, मै घर घर प्रति देख्यौ।
मुरलीधर घन स्याम मनोहर, अद्भुत नटवर पेख्यौ ॥
कौतुक रूप ग्वाल वृंदनि सँग, गाइ चरावन जात।
साँझ प्रभातहि गो दोहन मिस, चोरी माखन खात ॥
नँदनदन अनेक लीला करि, गोपिनि चित्त चुरावत।
वह सुख देखि जु नैन हमारे, ब्रह्म न देख्यौ भावत ॥
करि करुना उन दरसन दीन्हौ, मै पचि जोग कह्यौ।
छन मानहु षट्मास 'सूर' प्रभु, देखत भूलि रह्यौ ॥ ४१५२ ॥

राग सारंग ॥ ४७७१ ॥

व्रज मैं एक अचंभौ देख्यौ।
मोर मुकुट पीतांबर धारे, तुम गाइनि सँग पेख्यौ ॥
गोप बाल सँग धावत तुम्हरे तुम घर घर प्रति जात।
दूध दहीऽरु मही लै ढारत, चोरी माखन खात ॥
गोपी सब मिलि पकरति तुमकौ, तुम छुड़ाइ कर भागत।
'सूर' स्याम नित प्रति यह लीला, देखि देखि मन लागत ॥ ४१६३ ॥

राग मलार ॥ ४७७२ ॥

जौ पै प्रभु करुना के आले।
तौ कत कठिन कठोर होत मन, मोहि बहुत दुख साले ॥
गही बिरद की लाज दीन हित, करि सुदृष्टि व्रज देखौ।
मोसौ बात कहत किन सन्मुख, कहा श्रवनि अवलेखौ ॥
निगम कहत बस होत भक्ति तैं, सोऊ है उन कीनी।
'सूर' उसाँस छाड़ि हा-हा-व्रज, जल अँखिया भरि लीनी ॥ ४१५४ ॥

राग मारू ॥ ४७७३ ॥

सुनि ऊधौ मोहिं नैकु न बिसरत वै व्रजवासी लोग।
तुम उनकौं कछु भली न कीन्ही, निसि दिन दियौ बियोग ॥

जउ वसुदेव देवकी मथुरा, सकल राजसुख भोग।
तद्यपि मनहिं बसत बसीवट, बन जमुना संजोग॥
वै उत रहत प्रेम अवलंबन, इत तै पठयौ जोग।
'सूर' उसाँस छाँड़ि भरि लोचन, बढ्यौ विरह ज्वर सोग॥ ४१५५॥

राग मारू॥ ४७७४॥

ऊधौ मोहि ब्रज बिसरत नाहीं।
वृंदावन गोकुल बन उपवन, सघन कुंज की छाहीं॥
प्रात समय माता जसुमति अरु नंद देखि सुख पावत।
माखन रोटी दह्यौ सजायौ, अति हित साथ खवावत॥
गोपी ग्वाल बाल सँग खेलत, सब दिन हँसत सिरात।
'सूरदास' धनिधनि ब्रजवासी, जिनसौ हित जदुतात॥ ४१५६॥

राग सारंग॥ ४७७५॥

ऊधौ मोहि ब्रज बिसरत नाहीं।
हंससुता की सुंदर कगरी, अरु कुंजनि की छाँहीं॥
वै सुरभी वै बच्छ दोहनी, खरिक दुहावन जाहीं।
ग्वालबाल मिलि करत कुलाहल नाचत गहि गहि बाहीं॥
यह मथुरा कंचन की नगरी, मनिमुक्ताहल जाहीं।
जबहिं सुरति आवति वा सुख की, जिय उमगत तन नाहीं॥
अनगन भाँति करी बहु लीला, जसुदा नंद निबाहीं।
'सूरदास' प्रभु रहे मौन ह्वै, यह कहि कहि पछिताहीं॥ ४१५७॥

राग मलार॥ ४७७६॥

ब्रज सुधि नैकुहूँ नहि जाइ।
जदपि मथुरापुरी मनोहर, बिरद जादौराइ॥
जौ कोऊ कहि कान्ह टेरत, चौंकि चितवत धाइ।
ग्वालिनी अवलोकि पाछै, रहत सीस नवाइ॥
देखि सुरभी बच्छ हित जल रहत लोचन छाइ।
सृंग बेनु बिषान सुनि कै, उठत हेरी गाइ॥
देखि पत्र पलास के अलि, रहत उर लपटाइ।
आनि छवि पै पान कै प्रभु, पिवत जल मुसुकाइ॥
मोर के चँदवा धरनि तैं, स्याम लेत उठाइ।
छाक छवि कै कोस भोजन, हँसत दधि परसाइ॥
कुंज केलि समान नाहीं, सुरपुरी सुखदाइ।
बीसरयौ नहि 'सूर' कबहूँ, नंद जसुदा माइ॥ ४१५८॥

राग बिलावल॥ ४७७७॥

जो जन ऊधौ मोहि न बिसारत, तिहि न बिसारौ एक घरी।
मेटौ जनम जनम के संकट, राखौ सुख आनंद भरी॥
जो मोहि भजै भजौ मैं ताकौ, यह परिमिति मेरे पाइँ परी।
सदा सहाइ करौं वा जनकी, गुप्त हुती सो प्रगट करी॥
ज्यौं भारत भरुही के अंडा, राखे गज के घंट तरी।
'सूरजदास' ताहि डर काकौ, निसि बासर जो जपत हरी॥ ४१५९॥

श्रीकृष्ण का अक्रूर-गृह-गमन ।। ४७७८ ।।　　रागपरज

भक्त बछल बसुदेवकुमार।
चले एक दिन सुफलकसुत कै, पांडव हेत विचार।।
मिल्यौ सु आइ पाइ सुधि मग मै, बार बार परि पाइ।
गयौ लिवाइ सुभग मंदिर मैं, प्रेम न बरन्यौ जाइ।।
चरन पखारि धारि जल सिर पर, पुनि पुनि दृगनि लगाइ।
विविध सुगंध चीर आभूषन, आगै धरे बनाइ।।
धन्य धन्य मै धन्य गेह मम, धनि धनि भाग हमारे।
जो प्रभु ज्ञान ध्यान नहि आवत, तिन मम गृह पग धारे।।
प्रभु तुव माया अगम अगोचर, लहि न सकत कोउ पार।
दीजै भक्ति अनन्य कृपा करि, होइ सु मम उद्धार।।
अरु जिहि कारन प्रभु पग धारे, कहियै सोइ विचार।
करहुँ ताहि तुम्हरी किरपा तैं, आयसु माथैं धार।।
यह अक्रूर दसा जो सुमिरै, सिखै सुनै अरु गावै।
अर्थ धर्म कामना मुक्ति फल, चारि पदारथ पावै।।
हरि जू कह्यौ मनोरथ तुम्हरौ, करिहै श्री भगवान।
जो जाँचत सोई सो पावत, यह निश्चै जिय जान।।
तुम जानत हौ पांडव के सुत, हैं अति हितू हमारे।
कुरुपति अंध मोह वस तिनकौ, देत सदा दुख भारे।।
तात जाइ उनकौ तुम भेटहु, हमरी कुसल सुनावहु।
बहुरौ समाचार सब उनके, लै हम पै चलि आवहु।।
यह कहि स्याम राम ऊधौ मिलि, अपने भवन सिधारे।
सुफलकसुत आयसु माथै धरि, पांडव गृह पग धारे।।
पहिलै कौरव पति सौ भेंटे, पुनि पांडव गृह आए।
पकरि चरन कुंती के पुनि पुनि सब गहि गरै लगाए।।
कुसल भाषि सब जादौकुल की, प्रभु के कहे संदेस।
भयौ परम संतोष मिले सौ, मिटे सकल अंदेस।।
कुंती कह्यौ स्याम सौ कहियौ, हम है सरन तुम्हारी।
कुरुपति अंध जु मम पुत्रनि कौ, देत सदा दुख भारी।।
पुनि कुरुपति सौ मिलि सुफलकसुत, कह्यौ बहुत समुझाइ।
चारि दिवस के जीवन ऊपर, तुम कत करत अन्याइ।।
अन्याई कौ बास नरक मैं, यह जानत सब कोइ।
गर्व प्रहारी है त्रिभुवनपति, जो कछु करै सु होइ।।
कुरुपति कह्यौ मैंहुँ जानत हौ, पै मेरौ न बसाइ।
नमस्कार मेरौ जदुपति सौ, कहियौं परि कै पाइ।।
सुफलकसुत सब कथा तहाँ की, आइ स्याम सौ भाषी।
'सूरदास' प्रभु सुनि सुनि तासौ, हृदय आपनै राखी।। ४१६०।।

।। इति श्री सूरसागर दशम स्कंध पूर्वार्ध समाप्त ।।

——::००::——

दशम स्कंध उत्तरार्द्ध

राग मारू ॥ ४७७६ ॥

स्याम बलराम जब कंस मार्‍यौ।
सुनि जरासंध वृत्तांत सुता बदन तैं, जुद्ध हित कटक अपनौ हँकार्‍यौ।
जोरि दल प्रबल सो चल्यौ मथुरा पुरी, सुन्यौ भगवान अब निकट आयौ ॥
तब दोऊ बीरहू साजि दल आपनौ, नगर तैं निकसि रनभूमि छायौ।
दुहूँ दिसि सुभट बाँके बिकट अति जुरे, मनौ दुहुँ दिसि घटा उमड़ि आयौ ॥
'सूर' प्रभु संख धुनि करत जोधा सकल, जहाँ तहँ करन लागे लराई ॥
॥४१६१ ॥

राग मलार ॥ ४७८० ॥

मानहु मेघ घटा अति बाढ़ी।
बरषत बान बूँद सेना पर, महा नदी रन गाढ़ी ॥
बरन बरन बादर बनैत अरु दामिनि कर करवार।
गरज निसान घोर सखध्वनि, हय, गय हीस, चिघार ॥
उड़त धूरि धुरवा दसहूँ दिसि, सूर सक्ति जलधार।
प्रगटत दुरत देखियत रवि सम, दोउ बसुदेव कुमार ॥
कुजर कूल गिरात रथी रथ, स्रोनित सलिल गँभीर।
धनुष तरंग, भँवर स्यंदन पद, जलचर सुभट सरीर ॥
उड़त जु धुजा पताक छत्र रथ, तरुवर टूटत तीर।
परम निसंक समर सरिता तट, क्रीड़त जादव बीर ॥
सूने किए भवन भूपति के, सुबस किए सुर लोक।
छिनक मध्य हरि हरे कृपा करि, उन सबहिनि के सोक ॥
आनंदे मधुबन के बासी, गुनी नगर के लोक।
जरासिंधु कौ जीति 'सूर' प्रभु, आए अपने ओक ॥ ४१६२ ॥

राग सारंग ॥ ४७८१ ॥ कालयवनदहन

बार सत्तरह जरासंध, मथुरा चढि आयौ।
गयौ सो सब दिन हारि, जात घर बहुत लजायौ ॥
तब खिस्याइ कै कालजवन, अपनै सँग ल्यायौ।
हरि जू कियौ बिचार, सिंधु तट नगर बसायौ ॥
उग्रसेन सब लै कुटुब, ता ठौर सिधायौ।
अमरपुरी तैं अधिक, तहाँ सुख लोगनि पायौ ॥
कालजवन मुचुकुंदहिं सौं, हरि भसम करायौ।
बहुरि आइ भरमाइ अचल रिपु ताहि जरायौ ॥
जरासिंधुहू ह्वाँ तैं पुनि, निज देस सिधायौ।
गए द्वारिका स्याम राम, जस 'सूरज' गायौ ॥ ४१६३ ॥

राग कल्यान ॥ ४७८२ ॥ द्वारिकाप्रवेश

देखो री सखि आजु नैन भरि, हरि के रथ की सोभा।
जोग, जज्ञ, जप, तप, तीरथ व्रत, कीजत है जिहि लोभा ॥
चारु चक्र मनि खचित मनोहर, चचल चँवर पताका।
सोभ छत्र ज्यौं ससि प्राची दिसि, उदय कियौ निसि राका ॥
स्याम सरीर सुदेस पीत पट, सीस मुकुट उर माल।
जनु दामिनि घन रवि तारागन, प्रगट एक हीं काल ॥
उपजति छबि अति अधर सख मिलि, सुनियत सन्द प्रसंस।
मानहु अरुन कमल मंडल मैं, कूजत है कल हंस ॥
मदन गुपालहि देखत हीं अब, सब दुख सोक बिसारे।
बैठे हैं सुफलकसुत गोकुल लैन जु उहाँ सिधारे ॥
आनंदित नर नारि नगर के, बदन बिमल जस गायौ।
'सूरदास' द्वारिका निवासी, प्राननाथ प्रभु पायौ ॥ ४१६४ ॥

राग कल्यान ॥ ४७८३ ॥

दिन द्वारावति देखन आवत।
नारदादि सनकादि महामुनि, तेउ अवलोकि प्रीति उपजावत ॥
विद्रुम फटिक पचीं कंचन खचि, मनि मय मदिर बने बनावत।
जितै तितै नर नारि मीन खग, सबहिनि के प्रतिबिंब दिखावत ॥
जल थल रंग बिचित्र बहुत बिधि, अवलोकत आनद बढ़ावत।
चितै रहे चित चकित चतुर चित, कौन सत्य कछु मरम न पावत ॥
बन उपवन फल फूल सुभग सर, सुक सारिका हंस पारावत।
चातक मोर चकोर बतक पिक, मनहु मदन चटसार पढ़ावत ॥
धाम धाम सगीत सरस गति, बीना बेनु मृदग बजावत।
अति आनद प्रेम पुलकित तन, जहाँ तहाँ जदुपति जस गावत ॥
निसि दिन रहत बिमान रूढ़ रुचि, सुर बनितानि संग सब आवत।
'सूर' स्याम क्रीड़त कौतूहल, अमरनि अपनौ भवन न भावत ॥४१६५॥

राग सारंग ॥ ४७८४ ॥

मन मोहन खेलत चौगान।
द्वारावती कोट कंचन मैं, रच्यौ रुचिर मैदान ॥
जादववीर बराइ बटाई, हरि बल इक इक ओर।
निकले सबै कुँवर असवारी, उचैस्रवा के पोर ॥
नीले सुरँग कुमैत स्याम तेहि, परदे सब मन रंग।
बरन अनेक भाँति भाँतिन के, चमकत चपला ढंग ॥
झीन जराइ जु जगमगाइ रहि, देखत दृष्टि भ्रमाइ।
सुर, नर, मुनि कौतुक सब लागे, इक टक रहे लुभाइ ॥
जबही हरि लै गोइ कुदावत, कंदुक कर सों लाइ।
तबही औचकही करि धावत, हलधर हरि के पाँइ ॥
कुँवर सबै घोड़े फेरे पै, छाँड़त नहिं गोपाल।
बलै अछत छल बल करि जीने, 'सूरदास' प्रभु हाल ॥ ४१६६ ॥

राग बिलावल ॥ ४७८५ ॥ रुक्मिणी-पत्रिका-प्राप्ति

हरि हरि हरि सुमिरन करौ । हरि चरनारबिंद उर धरौ ॥
हरि सुमिरन जब रुकमिनि कर्यौ । हरि करि कृपा ताहि तब बर्यौ ॥
कहौं सो कथा सुनौ चित लाइ । कहै सुनै सो रहै सुख पाइ ॥
कुंडिनपुर को भीषम राइ । बिस्नु भक्ति को तिहिं चित चाइ ॥
रुक्म आदि ताके सुत पाँच । रुक्मिनि पुत्री हरि रँग राँच ॥
नृपति रुक्म सौं कह्यौ बनाइ । कुँवरि जोग बर श्री जदुराइ ॥
रुक्म रिसाइ पिता सौं कह्यौ । जदुपति ब्रज जो चोरत मह्यौ ॥
रुक्मिनि को सिसुपालहि दीजै । करि बिवाह जग मैं जस लीजै ॥
यह सुनि नृप नारी सौं कह्यौ । सुनि ताको अंतरगत दह्यौ ॥
रुक्म चँदेरी बिप्र पठायौ । ब्याह काज सिसुपाल बुलायौ ॥
सो बारात जोरि तहँ आयौ । श्री रुकमिनि के मन नहिं भायौ ॥
कह्यौ मेरे पति श्री भगवान । उनहिं बरौं कै तजौं परान ॥
यह निहचै करि पत्री लिखी । बोल्यौ बिप्र सहज इक सखी ॥
पाती दै कह्यौ बचन सुनाइ । हरि को दै कहियौ या भाइ ॥
भीषम सुता रुकमिनी बाम । 'सूर' जपति निसि दिन तुव नाम ॥४१६७॥

राग कान्हरौ ॥ ४७८६ ॥

द्विज पाती दै कहियौ स्यामहिं ।
कुंडिनपुर की कुँवरि रुकमिनी, जपति तिहारे नामहिं ॥
पालागौं तुम जाहु द्वारिका, नंद नँदन के धामहिं ।
कचन, चीर पटंबर दैहौं, कर कंकन जु इनामहिं ॥
यह सिसुपाल असुचि अज्ञानी, हरत पराई बामहिं ।
'सूर' स्याम प्रभु तुम्हरौ भरोसौ, लाज करौ किन नामहि ॥ ४१६८ ॥

राग कान्हरौ ॥ ४७८७ ॥

पाती दीजौ स्याम सुजानहिं ।
सुख संदेस सुनाइ दीजियौ, मोहि दीन करि जानहिं ॥
श्री हरि जोग रुकमिनी लिखितं, बिनय सुनौ प्रभु कानहि ।
बाँचत बेगि आइयौ माधौ, धरौ, जात मेरे प्रानहिं ॥
समुझत नाहिं दीन दुख कोऊ, हरि भख जंबुक पानिहिं ।
मनि मरकट कौं देत मूढ़ मति, मृगमद रज मैं सानहि ॥
कब लौं दुख सहौं दरसन बिनु, भई मीन बिनु पानिहिं ।
'सूरदास' प्रभु अधर सुधाधर, बरपि देहु जिय दानहिं ॥ ४१६९ ॥

राग सारंग ॥ ४७८८ ॥

द्विज कहियौ हरि कौ समुझाइ ।
सकत सृगाल सिंह कौ भोजन, दुरबल देखि छीनि कै खाइ ॥
काहे कौं नेम धर्म ब्रत कीन्हौं, माघ मास जल सीत अन्हाइ ।
परमिति गऐ लाज तुमही कौं, हंस कौ भाग काग लै जाइ ॥
वै कहियत है चतुर सिरोमनि, सबके ठाकुर जादौराइ ।
'सूरदास' प्रभु बेगि न आवहु, प्रान गऐं कह लैहौ आइ ॥ ४१७० ॥

राग सारंग ॥ ४७८९ ॥

द्विज कहियौ जदुपति सौं बात।
वेद विरुद्ध होत कुंडिनपुर, हंस के अंस काग नियरात ॥
जनि हमरे अपराध विचारहु, कन्या लिख्यौ मेटि गुरु तात।
तन आतमा समरप्यौ तुमकौ, उपजि परी तातैं यह बात ॥
कृपा करहु उठि वेगि चढहु रथ, लगन समै आवहु परभात।
कृष्न सिंह बलि धरी तुम्हारी, लैवे कौं जबुक अकुलात ॥
तातैं मैं द्विज वेगि पठायौ, नेम धरम मरजादा जात।
'सूरदास' सिसुपाल पानि गहै, पावक रचौं करौं अपघात ॥ ४१७१ ॥

राग धनाश्री ॥ ४७९० ॥

हौं प्रभु जनमजनम की चेरी।
भीषम भवन रहित हरिनी ज्यौं, लुब्धक असुर सैन मिलि घेरी ॥
अति संकट द्विज वेगि पठायौ, कहँ लौं कहौं कहौ बहुतेरी।
प्रातकाल सिसुपाल काल तैं, जदुपति आवहिं नैकु सबेरी ॥
कछु विपरीत बात नहिं आवै, उपजी रीति ग्राह गज केरी।
'सूरदास' प्रभु कृष्न नृपति बिनु, प्रान बिना तन लागत पेरी ॥ ४१७२ ॥

राग मारू ॥ ४७९१ ॥

(द्विज) वेगि धावहु कहि पठावहु, द्वारका लौं जाइ।
कुंडिनपुर इक होत अजगुत, स्यार घेरी गाइ ॥
दीन ह्वै करि करौ बिनती, पातौ दीजहु जाइ।
रुक्म बीर विवाह ठान्यौ, गनै पिता न माइ ॥
लगन सोधि विवाह थाप्यौ, उनत मंडप छाइ।
पैंज करि सिसुपाल आयौ, जरासंध सहाइ ॥
हंस की मैं अंस राख्यौ, काग कत मँडराइ।
गरुड़वाहन कृष्न आवहु, 'सूर' बलि बलि जाइ ॥ ४१७३ ॥

राग बिलावल ॥ ४७९२ ॥

जैसैं जन की पैंज न जाइ।
अंगीकार करहु प्रभु मेरे, सुनहु बिहारीराइ ॥
ताड़पत्र पर दियौ लगन लिखि, विजय करहु जदुराइ।
नातरु मेरौ मरन होइगौ, असुर छुवैगौ आइ ॥
राजकुमारि सोचि जिय अपने, कर मीड़ै पछताइ।
'सूरदास' प्रभु कौ रथ आवै, स्वेत धुजा फहराइ ॥ ४१७४ ॥

राग सारंग ॥ ४७९३ ॥

सखी पर होइँ तौ उड़ि जाउँ।
जहँ वै बसत नंद के ढोटा, ढूंढि लेउँ सोइ गाउँ ॥
कीजै कहा भई जौ ऐसी, कहौ तौ विष फल खाऊँ।
हिरदे मेरै दवा जरति है, गहिरे नीर अन्हाउँ ॥
बंधु बैर कहिबौ जदुपति सौं, ठाढ़ी नहिं ठहराउँ।
'सूरदास' प्रभु असुर बिवाही, धरती फाटि समाउँ ॥ ४१७५ ॥

राग आसावरी ॥ ४७६४ ॥

वाल मृगी सी आँगन ठाढ़ी । नव विरहिनि चित चिंता वाढ़ी ॥
तुम्हरौ पंथ निहारै स्वामी । कवहि मिलहुगे अंतरजामी ॥
मंडप देखि उर थर थर करै । मनु चहुँदिसि दौ लागी जरै ॥
नित विवाह के दुंदुभि सुनि सुनि । चकित मानौ महासिंह धुनि ॥
सखिनकी माल जाल जिय जानति । व्याध रूप सिसुपालहि मानति ॥
'सूरदास' जुग भरि वीतत छिनु । हरि नवरंग कुरंग पीय विनु ॥४१७६॥

सारंग ॥ ४७६५ ॥

सुनत हरि रुकमिनि कौ सदेस ।
चढ़ि रथ चले विप्र कौं सँग लै, कियौ न गेह प्रवेस ॥
वारंवार विप्र कौं पूछत, कुँवरि वचन सो सुनावत ।
दीनवंधु करुना निधान सुनि, नैन नीर भरि आवत ॥
कह्यौ हरधर सौं आवहु दल लै, मैं पहुँचत हौ धाइ ।
'सूरज' प्रभु कुंडिनपुर आए, विप्र सो जाइ सुनाइ ॥ ४१७७ ॥

राग सारंग ॥ ४७६६ ॥

कुँवरि सुनि पायौ अति आनंद ।
मनही मन सु विचार करति है, कव मिलिहै नँदनद ॥
हार, चीर, पाटंवर दै करि, विप्रहि गेह पठार्यौ ।
पै यह भेद रुकमिनी निज मुख, काहू कहि न सुनायौ ॥
हरि आगमन जानिकै भीषम, आगे लैन सिधाए ।
'सूरदास' प्रभु दरसन कारन, नगर लोग सव आए ॥ ४१७८ ॥

राग आसावरी ॥ ४७६७ ॥

देखि रूप सव नगर के लोग ।
वारंवार असीस देत है हरि वर वन्यौ रुकमिनी जोग ॥
जौ विधि करि आनत चतुराई, औंर समुझ जग की सव रीति ।
तौ अजहूँ ये राजसुता कौं, लै जैहै सिसुपालहि जीति ॥
जे राजा कौतुक चलि आए, ते मुख निरखि कहत है वात ।
परत न पलक चकोर चंद लौ, अवलोकत लोचन न अघात ॥
मनसा के दाता पूरन है, सुंदर वर वसुदेव कुमार ।
'सूरदास' जाकै जिय जैसी, हरि कीन्हौ तैसौ व्यौहार ॥ ४१७९ ॥

राग विलावल ॥ ४७६८ ॥ सखीवचन

सोच पोच निवारि री उठि देखि, दीन दयाल आयौ ।
निरखि लोचन विपति मोचन, कुँवरि फल वाँछ्यौ सो पायौ ॥
चढ़ि मदन वा वदन की छवि, निरखि दानवदव वुझायौ ॥
लै वुलाइ जु हिय लगायौ, हरपि मंगलचार गायौ ।
नैन आरती अरघ आँसू, भेट तन-मन-धन चढ़ायौ ॥
जानिहौ व्रजनाथ जी की, कियौ सो जो तुम वतायौ ।
अघ हरन पुनि परनवस हरि, जानि हौ किहि जोग भायौ ॥
कृपासागर गुननि आगर, दासि दुख दिन हीं वहायौ ।
भक्त के वस भक्तवत्सल, विदुर सातू साग खायौ ॥

मुदित ह्वै गई गौरि मंदिर, जोरि कर वहु विधि मनायौ।
प्रगटि तिहिं छिन 'सूर' के प्रभु, बाँह गहि कियौ वाम भार्यौ ॥ ४१८० ॥

राग आसावरी ॥ ४७९९ ॥

रुकमिनि देवी मंदिर आई।
धूप दीप पूजा सामग्री, अली संग सब ल्याई ॥
रखवारी कौं वहुत महाभट, दीन्हे रुकम पठाई।
ते सब सावधान भए चहुँ दिसि, पंछी तहाँ न जाई ॥
कुँवरि पूजि गौरी विनती करी, वर देउ जादवराई।
मैं पूजा कीन्ही इहिं कारन, गौरी सुनि मुसकाई ॥
पाइ प्रसाद अंबिका मंदिर, रुकुमिनि बाहर आई।
सुभट देखि सुंदरता मोहे, धरनि गिरे मुरझाई ॥
इहिं अंतर जादौपति आए, रुकमिनि रथ बैठाई।
'सूरज' प्रभु पहुँचे दल अपनैं, तब सुभटनि सुधि पाई ॥ ४१८१ ॥

राग आसावरी ॥ ४८०० ॥

याही तैं सूल रही सिसुपालहिं।
सुमिरि सुमिरि पछितात सदा वह, मानभंग के कालहिं ॥
दुलहिनि कहति दौरि दीजौ द्विज, पाती नंद के लालहिं।
वर सु वरात बुलाइ, बड़े हित, मनसि मनोहर वालहिं ॥
आए हरषि हरन रुकमिनि, रिस लगी दनुज उर सालहिं।
'सूरजदास' सिंह वलि अपनौ, लीन्हौ दलकि सृगालहिं ॥ ४१८२ ॥

राग सोरठ ॥ ४८०१ ॥

स्याम जब रुकमिनी हरि सिधाए।
साल्व, दंतवक्र, बारानसी कौ नृप, चढ़े दल साजि मनौ अभ्र छाए ॥
साँग की झलक चहुँदिसा चपला चमक, गज गरज सुनत दिग्गज डराए।
स्याम वलराम सुधि पाइ सन्मुख भए, बान वरषा लगैं करन सारे ॥
रुकमिनी भय कियौ स्याम धीरज दियौ, बान सौं वान तिनके निवारे।
राम हल मुसल सँभारि धारयौ वहुरि, पेलि कै रथ सुभट वहु सँहारे ॥
रुंड भकरुंड झुकि परे धर धरनि पर, गिरत ज्यौं वेग करि वज्र मारे।
जरासँध जीव लै भज्यौ रनखेत तैं, साल्व दँतवक्र या विधि पराए ॥
प्रात के समय ज्यौं भानु के उदय, तम लै होइ जात उडुगन नसाए।
गह्यौ भगवान सिसुपाल कौं जीवतैं, ताहि सौं वचन या विधि उचारे ॥
पुरुष कौं भाजिवे तैं मरन है भलौ, जाइ सुरलोक द्वारे उघारे।
वहुरि भगवान सिसुपाल कौं छाँडि दियौ, गयौ निज देस कौ सो खिस्याई ॥
सस्त्रधन छाँड़ि कै भाजि नरपति गए, जादवनि लै सु हरि दियौ लुटाई।
रुकुम यह सुनि चल्यौ सौंह करि नृपति सौं, स्याम वलराम कौं वाँधि ल्याऊँ ॥
आइ ह्याँ कह्यौ सिसुपाल सौं मैं नहीं, आपनौ वल तुम्हैं अब दिखाऊँ।
वान वरषा लग्यौ करन इहिं भाँति कै, कृष्न जू तिन्हैं छिन मैं निवारे ॥
आपने वान सौं काटि ध्वज रुक्म कौ, अस्व अरु सारथी तुरत मारे।
रुक्म भू परयौ उठि जुद्ध हरि सौं करयौ, हरि सकल सस्त्र ताके निवारे ॥

बहुरि खिसियाइ भगवान कै ढिग चल्यौ, चलत ज्यौं पतंग दीपक निहारे।
खड्ग लै ताहि भगवान मारन चले, रुकमिनी जोरि कर विनय कीन्हौ ।।
दोष इन कियौ मोहि छमा प्रभु कीजियै, भद्र करि सीस जिव दान दीन्हौ।
राम अरु जादवनि सुभट ताके हने, रुधिर करि नीर सरिता बहाई ।।
सुभट मनु मकर अरु केस सेवार ज्यौ, धनुष मछ चर्म कूरम बनाई।
बहुरि भगवान कै निकट आए सकल, देखि कै रुक्म कौ हँसे सारे ।।
कह्यौ भगवान सौ कहा यह कियौ तुम, छाँड़िबे तै भलौ हुतौ मारे।
मरे तै अप्सरा आइ ताकौ बरति, भाजिहै देखि अब गेह नारी ।।
प्रभु तुम्हरौ मरम रुक्म जान्यौ नहीं, छाँड़ि दीजै याहि अब मुरारी।
रुक्म सिरनाइ या भाँति विनती करौ, बुद्धि बल मर्म तुम्हरौ न जानौ ।।
प्रभु तुम अनंत तुम तुमहि कारन करन मैं कौन भाँति तुमकौ पछानौ।
दीनबधु कृपासिधु करुना करन सुनि विनय दया करि छाँड़ि दीन्हौ ।।
बहुरि निज नगर पैठ्यौ न सो लाज करि तहँ पुनि आपनौ वास कीन्हौ।
आइ भीषम दियौ दाइज ता ठौर बहु, स्याम आनँद सहित पुर सिधाये ।।
सुनत द्वारावती माँहि उत्सव भयौ, 'सूर' जन मंगलाचार गाये।
।। ४१८३ ।।

राग आसावरी ।। ४८०२ ।।

देखहिं दौरि द्वारिकावासी।
सुनत सकल रिपु जीति रुकमिनी लै आए जदुपति अविनासी ।।
नगर निकट रथ आनि अँगमने, राजत रुचिर रूप दोउ रासी।
प्रभु पाछै बैठी श्री सोभित, जनु घन मै चंद्रिका प्रकासी ।।
लेत बलाइ करत न्यौछावरि, वलि भुज दंड कितक अरि त्रासी।
नर नारिनि के नैन निरखि भए, चातकि रितु वरषा की प्यासी ।।
सजि आरती कलस लै धाई, चीन्हि परति कुलवधू न दासी।
देस देस भयौ रहस 'सूर' प्रभु, जरासंध सिसुपाल की हाँसी ।।४१८४।।

राग धनाश्री ।। ४८०३ ।।

आवहु री मिलि मंगल गावहु।
हरि रुकमिनी लिए आवत है, यह आनँद जदुकुलहि सुनावहु ।।
बाँधहु बंदनवार मनोहर, कनक कलस भरि नीर धरावहु।
दधि अच्छत फल फूल परम रुचि, आँगन चंदन चौक पुरावहु ।।
कदली जूथ अनूप किसल दल, सुरँग सुमन लै मंडल छावहु।
हरद दूब केसर मग छिरकहु, भेरि मृदंग निसान बजावहु ।।
जरासंध सिसुपाल नृपति तै, जीते है उठि अरघ चढावहु।
बल समेत तन कुसल 'सूर' प्रभु, आए है आरती बनावहु ।। ४१८५ ।।

राग बिलावल ।। ४८०४ ।।

श्री जादौपति व्याहन आयौ।
धनि धनि रुकमिनि हरि वर पायौ ।।
स्याम घन हरि परम सुंदर, तड़ित बसन विराजई।
अंग भूषन 'सूर' ससि पूरन कला मनु राजई ।।

कमल मुख कर कमल लोचन कमल मृदु पद सोहई।
कमल नाभि कपोल सुदर, निरखि सुर मुनि मोहई॥
सुधा सरोवर चिवुक अनूपम।
ग्रीव कपोत नासिका कीर सम॥
कीर नासा इंद्रधनु भ्रू, भँवर सी अलकावली।
अधर विद्रुम वज्रकन दाड़िम किधौ दसनावली॥
खौरि केसर अति विराजत तिलक मृगमद कौ दियौ।
काम रूप विलोकि मोह्यौ, वास पद अंवुज कियौ॥
वसुद्यो नदन त्रिभुवन वंदन।
मुकुट तरनि मनि कुडल स्रवनन॥
मुकुट कुंडल जरित हीरा लाल सोभा अति वनी
पन्ना पिरोजा लगे विच विच चहूँदिसि लटकत मनी॥
सेहरा सिर मुकुट लटकत कंठ माला राजई।
हाथ पहुँची हीर की नग जरित गुंदरी भ्राजई॥
उर वैजती सोभा अति वनी।
चरननि नूपुर कटि तट किकिनी॥
किंकिनी कटि चरन नूपुर सब्द सुदर कूजई।
कोकिला कल हंस वाल रसाल तिनहि न पूजई॥
तुरी ताजी विना ताजन चपल चपला श्री हरी।
जीन जरित जराव पाखरि लगी सव मुक्ता लरी॥
चढ़े जदुनंदन वनक वनाइ कै।
सजि वरात चले जादव चाइ कै॥

चले साजि वरात जादौ कोटि छप्पन अति वली।
उग्रसेन वसुदेव हलधर करत मन मन अति रली॥
संख भेरि निसान वाजे वजै विविध सुहावने।
भाट वोलै विरद, वार वचन कहै मन भावने॥
सुरपति आयौ सँग आपुन सची।
सोधि महूरत चौरी विधि रची॥
रची चौरी आपु ब्रह्मा जटिल खभ लगाइ कै।
इंद्र सुर घरनी सहित वैठे तहाँ सुख पाइ कै॥
चौक मुक्ताहल पुरायौ, आइ हरि वैठे तहाँ।
निरखि सुर नर सकल मोहे, रहि गए जहँ के तहाँ॥
कुँवरि रुकमिनी कमला औतरी।
ससि सोडष कला सोभ तन धरी॥

कुँअरि ससि सोडष कला सृंगार करि ल्याईं अली।
वेद विधि कियौ व्याह विधि, वसुदेव मन उपजी रली॥
पुहुप वरषहि हरष सुर गंधर्व किन्नर गावही।
सारदा नारद सुजस उच्चार जयति सुनावही॥
विप्रनि गो दीन्ही वहुत जुगुति करि।
किए अजाची जाचक जन वहुरि॥

वहुरि निज मंदिर सिधारे करी सुभद्रा आरती।
देवकी पियौ वारि पानी, दै असीस निहारती ।।
जुवा जुवति खिलाइ कुल ब्यौहार सकल कराइयौ।
'सूर' जन मन भयौ आनँद हरषि मगल गाइयौ ।। ४१८६ ।।

राग सारंग ।। ४८०५ ।।

तोसौ गारि कहा कहि दीजै।
वप जुग नावँ कौन कौ लीजै ।।
वप जुगल काकौ नावँ लीजै, जाति गोत न जानियै।
विनु रूप विनु अनुसार औरै, का वखान वखानियै ।।
सव सोधि रहे नहि सोधि पाए विनु सुने कह कीजियै।
वलि जाउँ जादौपति तुम्हारी, गारि का कहि दीजियै ।।
तेरी माइ सकल जग खोयौ।
सो को जो इहि मिलि न विगोयौ ।।
सो को जु मिलि करि नहि विगोयौ फिरत निसि वासर वनी।
सिर सेत पट कटि नील लहँगा लाल चोली विनु तनी ।।
कछु मंद मुख मुसकाइ सुर नर नाग भुज भीतर लिए।
वलि जाउँ जादौपति तुम्हारी माइ कुल विनु तुम किए ।।
कछु किए न जाइ गति ताकी।
नित रहति मदन मद छाकी ।।
नित रहति मन्मथ मदहि छाकी, निलज कुच झाँपति नही।
ता देखि देखि जु छैल मोहत, विकल ह्वै धावत तही ।।
इक परत उठत अनेक अरुझत, मोह अति मनसा गही।
इहि भाँति कथा अनेक ताकी, कहतहूँ न परै कही ।।
वह तौ नित नूतन रति जोरै।
चित चितवन ही मै सो चोरै ।।
अति चतुर चितवन चित चुरावति चलत ध्रुव धीरज हरै।
फिरि चमक चोप लगाइ चचल, नेह नित आतुर करै ।।
वा भौह की छवि निरखि नैननि, सु को जु न व्रत तै टरै।
इहि भाँति चतुर सुजान समधिनि सकति रति सव सौ करै ।।
इनही भूलि रहे सव भोगी।
वस कीन्हें ब्राह्मन अरु जोगी ।।
वस किए वाह्मन वहुत जोगी, छत्रपति केते कहौ।
औरौ जगत के जीव जल थल, गनत सुनत न सुधि लहौं ।।
ते परम आतुर काम कातर, निरखि कौतुक नित नए।
इहि भाँति समधिनि संग, निसि दिन फिरत भ्रम भूले भए ।।
अव तुम हो परम सयाने।
तुम ठाकुर सव जग जाने ।।
तुम सवनि के ठाकुर कृपानिधि, सुजस सव जग गाइयै।
या लोक के उपहास कारन वरजि ताहि मिटाइयै ।।
यह कही भल वूझिवी जु माधो और अनत न सूझियै।
सुनि 'सूर' स्याम सुजान इहि कुल अव न ऐसी वूझियै ।। ४१८७ ।।

राग जैतश्री ॥ ४८०६ ॥　　　　रुक्मिणीविवाह की दूसरी लीला

दीन बधु ब्रजनाथ कबै मुख देखिहौं।
कहि रुकमिनि मन माहँ सबै सुख लेखिहौं॥
गावहिं सब सहचरी कुँवरि तामस करि हेर्‍यौ।
सब दिन सुख साथिनी आजु कैसे मुख फेर्‍यौ॥
　　मेरै मन कछु और है तुम कछु गावति और।
　　प्रान तजौगी आपनौ, देखि असुर सिर मौर॥
तिहूँ लोक के धनी मनी तुमही कौं सोहै।
सत्य प्रकृति औ पुरुषहि समरथ सबही मोहै॥
पर पुरुषारथ काग हंसिनी के घर आवै।
कामधेनु खर लेइ, काल अमृत उपजावै॥
　　कुटुँब वैर मेरे परे, बरनि बरै सिसुपाल।
　　करनि सिंह तुम्हरी धरी कैसै चपै सृगाल॥
भुवन चतुर्दस राज सकल सुर नर मुनि देवा।
कर जोरे ससि सूर पवन पानी करै सेवा॥
अबहि और की और होति कछु लागै बारा।
तातै पाती लिखी तुमहि मै प्रान अधारा॥
　　कै जदुपति लै आवहु, करौ प्रान लगि घाउ।
　　बाजै सखहि जानि हौं, आए जादवराउ॥
कटै भूख औ नीद जीव हौ जानति नाही।
अनदेखे वै नैन लगे लोचन पथ माही॥
जो माँगौ सो देउँ लेहु माधौ सँग आए।
कोटि जज्ञ फल होइ पिता उन दरसन पाए॥
　　रोइ रुकमिनी यौ कह्यौ धरौ पानि मै माथ।
　　यह पाती लै दीजियौ, प्राननाथ कै हाथ॥
विप्र भवन रथ चढ्यौ, चलत तब बार न लाई।
छप्पन कोटिन मध्य, राजही जादवराई॥
　　छाँड़ि सकुच पाती दई, तब पूछी कुसलात।
　　जानि चीन्ह पहिचानी मन, फूले अंग न मात॥
आपुन भारी माँगि विप्र के चरन पखारे।
इती दूरि स्रम कियौ भए द्विजराज दुखारे॥
　　पाती बाँचि न आवई, माँग्यौ तुरत विमान।
　　लोचन भरि भरि आवही, मानहु कर जलपान॥
लीन्हौ विप्र चढाइ बोलि बल सौ कहि सारा।
सकल सभा जिय जानि कसे साजे हथियारा॥
　　कहहु नाथ कहँ आवई, कियौ कौन पर छोहु।
　　भीषम कै रुकमिनि हरन, सावधान सब होहु॥
आवत देख्यौ विप्र जोरि कर रुकमिनि धाई।
कहा कहैगो आनि हिए धकधकी लगाई॥
　　विप्र आनि माला दई कहे कुसल के बैन।
　　कुँअरि पत्यारौ तब कर्‍यौ जब रथ देख्यौ नैन॥

गए कंचुकिबँद टूटि लूटि हिरदै सौं प्राई।
करति मनहिं मन सब निकट रथ दियौ दिखाई॥
तिहूँ लोक के कंत हौ, हौं दासी प्रभु जानि।
रुकमिनि बिनती करति है, लाज आपुहीं मानि॥
बैठि असुर सब सभा रुक्म सौं मतौ बिचारयौ।
आयौ सुन्यौ अहीर मनौ इहिं काल हँकारयौ॥
गाइ चरावत ग्वाल ह्वै, आयौ मुजरा दैन।
देखौ ढीठौ दूरि तै, आयौ भातहि लैन॥
सब दल ह्वै हुसियार चलौ मठ घेरहि जाई।
परपंची है कान्ह कछू मति करै ढिठाई॥
कुँअरि गौरि पाइनि परी मन वांछित फल जानि।
हौ जदुपति बर पाइहौं चरन धरौ दोउ पानि॥
गौरि कहै सुनि कुँअरि, पाइँ मेरे जनि लागहि।
कहा कुटुंब के बैन नैन, श्रीपति अनुरागहि॥
आधौ श्रीवृषभानु कौ आधौ दीन्हौ तोहि।
राज सुहाग बढ़ौ सबै, कहा निहोरौ मोहि॥
अब गावहु करि सगुन बोलि मुख अंमृत बानी।
दूलह श्रीनँदलाल, दुलहिनी रुकमिनि रानी॥
याकौ जननी दीजियौ, करत सखिनि सौं नेह।
हौं जदुपति घर जाति हौं, जाकी है यह देह॥
अंबर बानी भई सजल बादर दल छाए।
देव तैतिसौं कोटि जु जज्ञ तमासे आए॥
हरन रुकमिनी होत है दुहूँ ओर भइ भीर।
अति अघात सूझत नहीं, चलहि बज्र ज्यो तीर॥
लागे रुक्म गुहार संग सिसुपाल न छोड़ै।
छाँड़ै बान बिसाल जुद्ध ऐसौ को ओड़ै॥
चक्र धरे हरि आवही मुनि असुरनि जिय गाज।
टेरि कह्यौ सिसुपाल सौं, कीजै कंकन लाज॥
सकल सैन संहारि रुक्म हलधर गहि लीन्हौ।
आगै इहि सौं काम रुक्मिनी सौ प्रन कीन्हौ॥
सात सिखा सिर राखि कै तब बूझी कुसलात।
कुंडिनपुर कौ काज सँवारयौ, भूपनि कौ यह ख्यात॥
नगर बधाई बजी नाथ बहुतै सुख मान्यौ।
पूरन कीन्हौ नेह रुक्म तैं सत्यहि जान्यौ॥
कंकन छोरयौ द्वारिका बाज्यौ अनँद निसान।
भुक्ति मुक्ति न्यौछावरी पाई 'सूर' सुजान॥ ४१८८॥

राग बिलावल॥ ४८०७॥ प्रद्युम्न-जन्म

प्रद्युम्नजन्म सुभ घरी लीन्हौ।
काम अवतार लियौ बदत यह बात जग, ताहि सम तुल्य नहिं रूप चीन्हौ॥

पृथी पर असुर सबर भयौ अति प्रवल, तिन उदधि माहिं तिहि डारि दीन्हौ।
मच्छ लियौ भच्छि सो मच्छ मछवी गह्यौ, असुरपति कौ सु लै भेंट कीन्हौ।।
मच्छ के उदर तै बाल परगट भयौ, असुर मायावतो हाथ दीन्हौ।
कह्यौ यह काम परिनाम तेरो पुरुप वचन नारद सुमिरि रति सु लीन्हौ।।
भयौ जब तरुन तब नारि तासो कह्यौ, रुकमिनी मात हरि तात तेरी।
नाम मम रति विदित वात जानत जगत, काम तुव नाम पुनि पुरुप मेरी।।
असुर कौ मारि परिवार कौ देहि सुख, देउँ विद्या तुम्हैं मै बताई।
बिना विद्या ताहिं जीति सकिहै नही, भेद की वात सब कहि सुनाई।।
प्रद्युम्न सकल विद्या समुझि नारि सौ, असुर सौ जुद्ध माँग्यौ प्रचारी।
काटि करवार लियौ मारि ताकौ तुरत, सुरनि आकाश जै धुनि उचारी।।
वहुरि आकास मग जाइ द्वारावती, मातु मन मोद अतिही बढायौ।
भयौ जदुवंस अति रहस मनु जनम भयौ, 'सूर' जन मंगलाचार गायौ।।

।। ४१८६ ।।

राग सारंग ।। ४८०८ ।। जाववंती और सत्यभामा का विवाह

हरि दरसन सत्राजित आयौ।
लोगनि जान्यौ आदित आवत हरि सौं जाइ सुनायौ।।
हरि कह्यौ आयौ है सत्राजित मनि है ताकै पास।
रवि प्रसन्न ह्वै दीन्ही ताकौ, यह ताकौ परकास।।
आइ गयौ सोऊ तिहिं अवसर, हरि तिहिं कह्यौ सुनाइ।
यह मनि अति अनुपम है, सो सुनि दै न सक्यौ ललचाइ।।
इक दिन तासु अनुज लै सो मनि, गयौ अखेटक काज।
ताकौ मारि सिंह मनि लै गयौ सिंह हत्यौ रिछराज।।
रिच्छराज वह मनि तासौ लै, जाववती कौ दीन्ही।
जब प्रसेन कौ विलँव भई तब सत्राजित सुधि लीन्ही।।
जहाँ तहाँ कौ लोग पठाए, काहुँ खोज नहि पायौ।
तब लोगनि सौ कहन लग्यौ, जदुराइ ताहि मरवायौ।।
हरि यह सुनत गए ता वन मैं, सो प्रसेन मृत देख्यौ।
सिंह खोज वहुरौ तहँ पायौ, सिंह वहुरि मृत पेख्यौ।।
वहुरौ जामवंत पग देख्यौ, तहाँ जाइ जदुराई।
द्वादस दिवस अवधि आवन कहि, विल में पैठे धाई।।
जामवंत दिन वीस चारि लौं, जुद्ध, कियौ तव जान्यौ।
हाथ जोरि करि अस्तुति कीन्ही, मैं तुमकौ न पिछान्यौ।।
विहँसि कह्यौ जादवपति तासौं, मनि कारन मैं आयौ।
जाववती समेत मनि दै पुनि अपनौ दोप छमायौ।।
सँग के लोग अवधि के वीते, कह्यौ नगर मैं जाइ।
मातु पिता व्याकुल ह्वै धाए, मग मैं वैठे आइ।।
मनि सत्राजित कौं प्रभु दीन्ही, रह्यौ सु सीस नवाइ।
सतभामा समेत लै आयौ, मनि कौ हरि सिर नाइ।।
और वहुत दायज दीन्हे उन, करि विवाह व्यौहार।
भयौ परम आनंद दुहूँ दिसि, मंगलचार अपार।।

मनि ताकी ताकौ फिरि दीन्ही, सुजस जगत मैं छायौ।
श्रीगुरु चरन प्रताप चरित यह, 'सूरदास' जन गायौ ॥ ४१९० ॥

राग सारंग ॥ ४८०६ ॥ सतधन्वावध

सुकदेव कहत सुनौ राजा।
ज्ञानी लोभ करत नहिं कबहूँ, लोभ बिगारत काजा ॥
करिकै लोभ अमृत जो पीवै, विष समान सो होई।
बिप अमृत होइ जाइ लोभ बिनु यह जानत जन कोई ॥
एक समै जदुपति औ हलधर, पाडवगृह पग धारे।
सतधन्वा अरु सुफलकसुत मिलि, कीन्हौ मंत्र विचारे ॥
सत्राजित कौ हति मनि लीजै, ज्यौ जानै नहिं कोई।
ऐसौ समय बहुरि फिरि नाही, पाछै होइ सु होई ॥
निसि अँधियारी जाइ सुधन्वा, ताहि मारि मनि ल्यायौ।
फैलि गई यह बात नगर मैं, तब मन मै पछितायौ ॥
सतिभामा करि सोक पिता कौ, जदुपति पास सिधाई।
सतधन्वा करतूति करी सो, हरि कौ जाइ सुनाई ॥
सुनि जदुपति हलधर उठि धाए, नैकु बिलंब न लाई।
लैहै बैर पिता तेरै कौ, जैहै कहाँ पराई ॥
तब मनि डारि अक्रूर पास वह, मिथिलापुर कौ धायौ।
सत जोजन मग एक दिवस मैं, तुरत ताहि पहुँचायौ ॥
द्वारावति पैठत हरि सौ सब, लोगनि कह्यौ जनाई।
मिथिलापुरी जाइ तिहि मार्यौ, पै मनि उहाँ न पाई ॥
तब हरि कह्यौ हत्यौ बिन दूषन, हलधर भेद बतायौ।
ह्वाँ पुनि जाइ खोज तुम कीजौ, द्वारावति हरि धायौ ॥
हलधर रहे गदा जुध सीखन, हरि द्वारावति आए।
सतिभामा मन हरप भयौ जब, समाचार ये पाए ॥
सुफलकसुत मन ही मन सकुच्यौ, कहौ कहा अब काजा।
देत न बनै बनै नहिं राखत, डर डरात उठि भाजा ॥
सब जादौ मिलि हरि सौ यह कह्यौ, सुफलकसुत जहँ होई।
अनावृष्टि अति वृष्टि होति नहिं, यह जानत सब कोई ॥
कीजै दोष छमा अब ताकौ, हरि तब ताहि बुलायौ।
कह्यौ कहा कहियै अब तुमसौ, तिन सिर नीचौ नायौ ॥
पुनि कह्यौ मनि सतिभामा कौ दै, जातै भय भयौ तोहि।
मनि उन दई बहुरि तिहिं दीन्हौ, कह्यौ लोभ नहिं मोहि ॥
लोभ भलौ नहिं दोऊपुर मैं, लोभ किऐ पति जाई।
'सूर' लोभ कीन्हौ सो बिगोयौ, सुक यह कहि समुझाई ॥ ४१९१ ॥

राग बिलावल ॥ ४८१० ॥ पच पटरानी विवाह

हरि हरि हरि सुमिरौ सब कोई। हरि हरि सुमिरत सब सुख होई ॥
हरि हरि सुमिरयौ जब जिहिं जहाँ। हरि तिहि दरसन दीन्हो तहाँ ॥
हरि सुमिरन कालिंदी कीन्हौ। हरि तहँ जाइ दरस तिहि दीन्हौ ॥
पानिग्रहन पुनि ताकौ कियौ। सबै भाँति ताकौ सुख दियौ ॥

हरिहिं मित्रविदा जब ध्यायौ। हरि तहँ जात बिलंब न लायौ ॥
करि बिवाह ताकौं लै आए। तासु मनोरथ सकल पुजाए ॥
हरि चरननि सत्या चित दीन्हौ। ताके पिता परन यह कीन्हौ ॥
सात बैल ये नाथै जोई। सत्या ब्याह तासु सँग होई ॥
हरि तहँ जाइ तासु प्रन राख्यौ। धन्य धन्य सब काहू भाष्यौ ॥
ताके पिता ब्याह तब कीन्हौ। दाइज बहु प्रकार तिन दीन्हौ ॥
बहुरौ भद्रा सुमिरे हरी। गए तासु हित बिलँब न करी ॥
ऐसौ है त्रिभुवन पतिराइ। ताके मन की आस पुराइ ॥
बहुरि लछमना सुमिरन कीन्हौ। ताहि स्वयंबर मैं हरि लीन्हौ ॥
पाँचौ नारि ब्याहि घर आए। 'सूरदास' जन मंगल गाए ॥४१६२॥

राग गौरी ॥ ४८११ ॥ श्रीकृष्ण वचन सत्यभामा के प्रति

इती बात तब तै न कही री।
कितिक बात सुरतरु प्रसून की, जा कारन तू रूठि रही री ॥
परमुख स्वमुख जनाइ न दीन्हौ, बिनु काजैं रिस देह दही री।
तेरी सौं सुनि सतिभामा मै, मन बच यह सुधिहूँ न लही री ॥
सूनौ निपट अकेली मंदिर, चंदकला जनु राहु गही री।
तुव वियोग की पीर कठिन अति, नु कहि 'सूर' क्यौं जाति सही री ॥४१६३॥

राग आसावरी ॥ ४८१२ ॥ भौमासुरवध तथा कल्पवृक्ष आनयन

रटति कृष्न गोविंद हरि हरि मुरारी।
भक्त भय हरन असुरतकारी ॥
षष्ठ दस सहस कन्या असुर बंदि मैं, नींद अरु भूख अहनिसि बिसारी।
प्रीति तिनकी सुमिरि भए अनुकूल हरि, सत्यभामा हृदय यह उपाई ॥
कल्पतरु देखिबे की भई साध मोहि, कृपा करि नाथ ल्यावहु दिखाई।
सत्यभामा सहित बैठि हरि गरुड़ पर, भौमासुर नगर कौं तुरत धाए ॥
एक ही बान पापान कौ कोट सब, हुतौ चहुँ ओर सो दियौ ढाए।
गरुड़ चहुँ पास के नाग लीन्हे निगलि, जल बरपि अगिनि ज्वाला बुझाई ॥
स्वास के तेज सौं जल सकल सोपि लियौ, देखि यह लोग सब गए डेराई।
करी हरि संख धुनि जग्यौ तब असुर सुनि, कोप करि भवन सौं निकसि धायौ ॥
देखि कै गरुड कौं लगी ता हृदय दव, कठिन तिरसूल सो गहि चलायौ।
सचिव सिर टेकि तब कह्यौ निज नृपति सौं, नहीं तिहुँ भुवन कोउ सम तुम्हारे।
जुद्ध कौ करत छाजत नहीं है तुम्है, सुनि महाराज प्रच्छत हमारे ॥
कियौ तब जुद्ध उन क्रुद्ध ह्वै स्याम सौं, हरि कह्यौ गरुड़ इहि हति प्रचारी।
गरुड सुनि धाइ गह्यौ जाइ ताकौ तुरत, तीनहूँ सीस डारे प्रहारी ॥
तासु पुत्रनि बहुरि जुद्ध हरि सौं कियौ, मार तै सोउ कायर दुराने।
कोउ कटि कटि परे, कोउ उठि उठि लरे, कोउ डरि डरि दिसिदिसि दिसि पराने ॥
तब असुर अगिनि जल बान डारन लग्यौ, तासु माया सकल हरि निवारी।
असुर के भटनि कौ गरुड़ लाग्यौ गिलन, तुरग गज उड़ि चले लगि बयारी ॥
असुर गज रूढ़ ह्वै गदा मारे फटकि, स्याम अँग लागि सो गिरे ऐसै ॥
बाल के हाथ तै कमल दल नाल जुत, लागि गजराज तन गिरत जैसै ॥

आपु जगदीस सब सीस ता असुर के, मारि तिरसूल सौं काटि डारे।
छाँड़ि सो प्रान निरवान पद कौं गयौ, 'सूर' पुहुप बरषि जै जै उचारे॥
प्रथी गहि पाइ, माल कुंडल छत्र लै, जोरि कर बहुरि अस्तुति सुनाई।
नाथ मम पुत्र कौं दीजिए परमगति, हरि कह्यौ पुत्र तुव मुक्ति पाई॥
बहुरि गए तहाँ कन्या हुती सब जहाँ, निरखि हरि रूप सो सब लुभाई।
चरन रहि लागि बड भाग लखि आपनें, कृपा करि हरि सु निज पुर पठाई॥
बहुरि गए इंद्रपुर इंद्र रह्यौ पाइँ परि, कल्पतरु वृच्छ तासौं मँगाए।
त्रदसपति मात कौ रतन कुंडल दिए, वृच्छ लै आपु निज पुरी आए॥
बहुरि बहु रूप धरि हरि गए सबनि घर, व्याह करि सबनि की आस पूरी।
सबनि कैं भवन हरि रहत सब रैनि दिन, सबनि सौं नैकु नहि होत दूरी॥
सबनि कौं पुत्र दस दस कुँवरि एक इक, दै सकल धर्म के गृह सिखाए।
कोटि ब्रह्मांड नायक सु वसुदेव सुत, 'सूर' सोइ नंदनंदन कहाए॥
॥ ४१९४ ॥

राग बिलावल ॥ ४८१३ ॥ रुक्मिणीपरीक्षा

भक्त वछल हरि भक्त उधारन। भक्त परीच्छा के हित कारन॥
रुकमिनि सौं बोले या भाइ। हम जानी तुम्हरी चतुराइ॥
राउ चँदेरी कौ सिसुपाल। जाकौ सेवत सब भूपाल॥
तासौं तेरी भई सगाई। पै पाती क्यौ हमे पठाई॥
जाति पाँति उन सम हम नाहीं। हम निरगुन सब गुन उन पाहीं॥
उन सम नहिं हमरी ठकुराई। पुरुष भले तैं नारि भलाई॥
निःकिंचन जन मैं मम बास। नारि संग तैं रहौं उदास॥
जौ कहै मोहिं काहे तुम ल्याए। ताके उत्तर द्यौ समुझाए॥
कुंडिनपुर वह भूपति आए। तिनके हृदय गरब सौं छाए॥
बरजोरी मैं तोहि हरि ल्यायौ। उनके मन कौ गरब नसायौ॥
यह सुनि रुकमिनि भई बिहाल। जानि परचौ नहि हरि कौ ख्याल॥
लै उसाँस नैननि जल ढारे। मुख तैं बचन न कछु उचारे॥
ताकी दसा देखि हरि जानी। इन मम भक्ति भलैं पहिचानी॥
हँसि बोले तब सारँगपानी। प्रानप्रिया तुम क्यौ बिलखानी॥
मैं हाँसी की बात चलाई। तुम्हरे मन यह साँची आई॥
आँसू पोंछि निकट बैठारी। हँसी जान बोली तब प्यारी॥
कहँ तुम त्रिभुवन पति गोपाल। कहाँ बापुरो नर सिसुपाल॥
कहाँ चँदेरी कहँ द्वारावति। जाकै सरवरि नहिं अमरावति॥
तुम अनभव वह जनमैं मरै। मूरख वह तुम सरवरि करै॥
तुम सम और नहीं जदुराइ। यहै जानि मैं सरनहि आइ॥
यह सुनि हरि रुकमिनि सौं कह्यौ। जौ तुम मोकौ चित करि गह्यौ॥
त्यौं ही मम चित चाहत तुमकौ। नहि अंतर कछु तुम सौं हमकौ॥
जदुपति कौ यह सहज स्वभाव। जो कोउ भजै भजै तिहि भाव॥
जो यह लीला नित करि गावै। 'सूर' सो प्रेम भक्ति कौ पावै॥
॥ ४१९५ ॥

राग मारू ॥ ४८१४ ॥ प्रद्युम्नविवाह

स्याम बलराम कौ सदा गाऊँ।
यहै मम जप यहै तप यहै नेम व्रत प्रेम मम यहै फल यहै पाऊँ॥
स्याम बलराम प्रद्युम्न के व्याह हित, रुक्म के देस जबही सिधाए।
कलिग कौ राउ अरु रुक्म बलभद्र कौ, कपट करि सार पासा खिलाए॥
दाउँ बलराम कौ देखि उन छल कियौ, रुक्म जित्यौ कहन लगे सारे।
देव बानी भई जीति भई राम की, ताहु पर मूढ़ नाही सम्हारे॥
कलिंग कौ राउ तब हँसी लाग्यौ करन, राम तब हृदै मै क्रोध आन्यौ।
रुक्म अरु कलिग कौ राउ मारयौ प्रथम, बहरि तिनके बहु सुभट मारे।
'सूर' प्रभु स्याम बलराम रनजीत भए, प्रद्युम्न ब्याहि निज पुर सिधारे॥
॥ ४१९६ ॥

राग मारू ॥ ४८१५ ॥ अनिरुद्धविवाह

कुँवर तन स्याम मनुकाम है दूसरौ, सुपन मैं देखि ऊपा लुभाई।
चित्रलेखा सकल जगत के नृपनि कीं छिनक मै मूर्ति तब लिखि दिखाई॥
निरखि जदुवस कौ रहस मन मै भयौ, देखि अनिरुद्ध कौ मूरछाई।
जाइ द्वारावती सोवतै कुँवर कौ, चित्रलेखा तहाँ तुरत ल्याई॥
बान दरवान सौ सुनत आयौ तहाँ, धाइ अनिरुद्ध सौ जुद्ध माँड़यौ।
'सूर' प्रभु ठटी ज्यौ भयौ चाहै सु त्यौ, फाँसि करि कुँवर अनिरुध बाध्यौ॥
॥ ४१९७ ॥

राग मारू ॥ ४८१६ ॥

स्याम बलराम यह सुनत धाए।
आइ नारद कह्यौ द्वारिकानाथ सौ, बानासुर कुँवर अनिरुध बँधाए॥
छोहिनी दोइ दस हुतौ हरि सँग कटक, जात हीं नगर ताकौ लुटायौ।
रुद्र भगवान अरु बान सात्यकि भिरे, राम कुभाड माड़ी लड़ाई।
सैनपति कोपि कै प्रद्युम्न सो भिरयौ साब कूपकरन दोउ भिरे जाई॥
तेज भगवान को पाइ जादव भिरे, असुर दल चल्यौ सबही पराई।
रुद्र तब कोप करि अग्नि बरपा करी, स्याम जल बरपि डारयौ बुझाई॥
पुनि महादेव जो बान सधान कियौ, आपु भगवान ताकौ प्रहारयौ।
देखि यह जुद्ध सुर असुर चक्रित भए, लख्यौ तब बान जो रुद्र धारयौ॥
बान तब आइ भगवान सन्मुख भयौ, बान बरपा लग्यौ करन भारी।
एकहू बान आयौ न हरि कैं निकट, तब गह्यौ धनुप सारंगधारी॥
एक हीं बान संधानि रथ के तुरग, ध्वजा अरु धनुप सब काटि डारे।
संख कौ सब्द करि लियौ असुर तेज हरि, सुधुनि रही फैलि नभ पृथ्वी सारै॥
देखि यह असुर की मातु धाई नगन, कृस्न भगवान कै निकट आई।
नगर तिय देखिवौ जुगत नाही कह्यौ, जानि यह हरि रहे मुख फिराई॥
असुर यह घात तकि गयौ रन तै सटकि, तप्त जुर दियौ तब सिव पठाई।
सीत जुर जुद्ध करि कियौ बिह्वल ताहि, तिन तब आइ बिनती सुनाई॥
प्रान दाता तुम्हीं स्थूल सूछम तुहीं, सर्व आतमा तुही धर्म पालक।
ज्ञान तुहि कर्म तुहि बिस्वकर्मा तुही, तू अखिल सक्ति प्रभु असुर घालक॥

सीत अरु तप्त कौ वल चलै प्रभु तहाँ, जहाँ नहिं होइ सुमिरन तुम्हारौ।
करत दंडवत मैं तुम्है करुना करन, कृपा करि ओर मेरै निहारौ॥
सुनत ये वचन हरि कह्यौ अव भै न करि, मैं कृपा करी तोहि त्रिसिरधारी।
सीत अरु तप्त कौ भय न ह्वैहै, ताहि, सुनै यह कथा जो चित्तधारी॥
तप्त जुर गयौ सिर नाइ हरि कौ तुरत वानासुर वहुरि रणभूमि आयौ।
चक्र परहार हरि कियौ ताकौ निरखि, रुद्र सिर नाइ तव कहि सुनायौ॥
प्रगट तुम गुपत तुम तुमहिं सरवातमा, चक्र तुव अग्नि रुद्र कितक हारे।
वुद्धि विधि चंद्रमा मन अहंकार मैं, धरि चरन रोम सव वृच्छ सारे॥
सांस आकास अरु स्रवन दसहू दिसा, इंद्र कर लोक द्वै वपु तिहारौ।
वान जगदीस मोहि जानि मम ईस तुम, राखि तिहि माथ अव हाथ चारौ॥
विहँसि जगदीस कह्यौ रुद्र जो तुहिं भजै, तहाँ मै जाउँ यह प्रन हमारै।
कियौ प्रहलाद कुल अभय मैं प्रथमही, वान कियौ अमर भाएँ तिहारे॥
करै जो सेव तुम्हरी सु मम सेव है. विष्नु सिव व्रह्म मम रूप सारे।
वान अभिमान मन माहिं धारचौ हुतौ, तव विदित हाथ तातै सँहारे॥
रुद्र अरु वान अनिरुद्ध सनमान करि, तुरत भगवान कै निकट ल्याए।
वहुरि ऊपा दई व्याहि दाइज सहित, हरि हरप करत निज पुरी आए॥
यह सकल कथा जो रुद्र अस्तुति सहित, करै सुमिरन ताहि भय न होई।
कही जो व्यास सुकदेव भागवत मैं, कही अव 'सूर' जन गाइ सोई॥
॥ ४१९८ ॥

राग मारग ॥ ४८१७ ॥ नृग राजा का उद्धार

अविगत गति जानी न परे।
राई तै परवत करि डारै, राई मेरु करै॥
नृग राजा नित गऊ सहस दै, करत हुतौ जल पान।
तनक चूक तै गिरगित कीन्हौ, को करि सकै वखान॥
कूप माहँ तिहि देखि वालकनि, हरि सौ कह्यौ सुनाइ।
कृपानिधान जानि अपनौ जन, आए तहँ जदुराइ॥
अंधकूप तै काढ़ि वहुरि तेहिं, दरसन दै निस्तारा।
'सूरदास सव तजि हरि भजियै, जव कव करै उधारा॥ ४१९९ ॥

राग विलावल ॥ ४८१८ ॥ श्री वलभद्र का व्रज आगमन

स्याम राम के गुन नित गाऊँ। स्याम राम ही सौ चित लाऊँ॥
एक वार हरि निज पुर छए। हलधर जी वृंदावन गए॥
रथ देखत लोगनि सुख पाए। जान्यौ स्याम राम दोउ आए॥
नंद जसोमति जव सुधि पाई। देह गेह की सुरति भुलाई॥
आगै ह्वै लैवे कौ धाए। हलधर दौरि चरन लपटाए॥
वल कौ हित करि गरै लगाए। दै असीस वोले या भाए॥
तुम तौ भली करी वलराम। कहाँ रहे मन मोहन स्याम॥
देखौ कान्हर की निठुराई। कवहूँ पातीहू न पठाई॥
आपु जाइ ह्वाँ राजा भए। हमकौ विछुरि वहुत दुख दए॥
कहौ कवहुँ हमरी सुधि करत। हम तौ उन विनु वहु दुख भरत॥

कहा करैं ह्वाँ कोउ न जात । उन विनु पल पल जुग सम जात ॥
इहि अतर आए सव ग्वार । भेटे सवनि जथा व्यौहार ॥
नमस्कार काहूँ कौं कियौ । काहू कौं अंकम भरि लियौ ॥
पुनि गोपी जुरि मिलि सव आई । तिन हित साथ असीस सुनाई ॥
हरि सुधि करि सुधि वुधि विसराई । तिनकौ प्रेम कह्यौ नहिं जाई ॥
कोउ कह हरि व्याहीं वहु नार । तिनकौ ह्वैहै वहुत परिवार ॥
उनकौं यह हम देति असीस । सुख सौं जीवैं कोटि वरीस ॥
कोउ कहै हरि नाहीं हम चाहैं । विनु चाहैं उनकौ मन दाहैं ॥
निसि दिन रोवत हमै विहाइ । कहा करैं अव कहा उपाइ ॥
कोउ कहै इहाँ चरावत गाइ । राजा भए द्वारिका जाइ ॥
काहे कौ वै आवैं इहाँ । भोग विलास करत नित उहाँ ॥
कोऊ कहै हरि रिपु छै किए । अरु मित्रनि कौं वहु सुख दिए ॥
विरह हमारौ कहँ रहि गयौ । जिन हमकौं अति ही दुख दयौ ॥
कोउ कहै जे हरि की रानी । कौन भाँति हरि कौं पतियानी ॥
कोउ चतुर नारि जो होइ । करै नहीं पतिआरौ सोइ ॥
कोउ कहै हम तुम कत पतियाई । उनकैं हित कुल लाज गवाई ॥
हरि कछु ऐसौ टोना जानत । सवकौ मन अपनै वस आनत ॥
कोउ कहै हरि हम सव विसराई । कहा करैं कछु वहाँ न जाई ॥
हरिकौ सुमिरि नयन जल ढारै । नैकु नहीं मन धीरज धारै ॥
यह सुनि हलधर धीरज धारि । कह्यौ आइहैं हरि निरधारि ॥
जव वल यह संदेस सुनायौ । तव कछु इक मन धीरज आयौ ॥
वल तहँ वहुरि रहे द्वै मास । व्रज वासिनि सौं करत विलास ॥
सव सौं मिलि पुनि निजपुर आए । 'सूरदास' हरि के गुन गाए ॥४२००॥

राग सारंग ॥ ४८१९ ॥

वारुनि वल घूमिति लोचन वन, विहरत मन सचुपाए ।
मनौ मत्त गजराज विराजत, करिनि जूथ सँग लाए ॥
मुकुलित केस सुदेस देखियत, नील वसन लपटाए ।
भरि अपने कर कनक कटोरा, पीवत प्रियहिं चखाए ॥
हँसत रिसात बुलावत वरजत, तरजत भौंह चढाए ।
उदित मुदित उठि चलत डगमगत अनुज सुरति जिय आए ॥
इंदु वदन भुवधरन अमित वल, वर वनितन के भाए ।
सरवस रीझि देव अपनै रस, 'सूरदास' गुन गाए ॥ ४२०१ ॥

राग सारंग ॥ ४८२० ॥

वारुनी वलराम पियारी ।
गौतमसुता भगीरथ धीवर, सवहिनि तैं संदर सुकुमारी ॥
ग्रीवा वाहु गलारत, गाजत, सुख सजनी सतिभाइ सँवारी ॥
संकर्षन कैं सदा सुहागिनि, अति अनुराग भाग वड़ वारी ॥
वसुधातल जु वाम गिरि राजत, भ्राजत सकल लोक सुखकारी ।
प्रथम समागम आनँद आगम, दूलह वर दूलहिनी दुलारी ॥

रति रस रीति प्रीति परगट करि, राम काम पूरन प्रतिपारी।
'सूर' सुभाग उदित गोपिनि के; हरि मूरति भेटे हलधारी ॥ ४२०२ ॥

राग सारंग ॥ ४८२१ ॥

कालिंदी करि कह्यौ हमारौ।
बोली बेगि चलौ वन विहरन, तोहिं अन्हाइ जाइ स्रम भारौ ॥
अतिही सतर होइ जनि सरिता, छाड़ि गर्व या गुन कौ गारौ।
आपनि सौंह कृष्न की कानी, राखत हौं जस मान तुम्हारौ ॥
इतौ महातम मोहिं दिखावति, भँवर तरंग प्रवाह पसारौ।
इन खुनमनि गोपाल दुहाई, हल करि खैंचि करौं नदि नारौ ॥
सुर नर गन गंधर्व जे कहिए, बोल वचन तिनहूँ नहिं टारौ।
'सूर' समुद्र स्याम के भैयहि, निपट नदी जानति मतवारौ ॥४२०३॥

राग सारंग ॥ ४८२२ ॥

जमुना आइ गई बलदेव।
जो तुम कहौ सोइ हौं करिहौं, सतत सादर सेव ॥
सुर नर मुनि जन गन गंध्रव ये, सब चरननि के देव।
'सूर' मनौ यह मान करति हौ, अवलंवनि की टेव ॥ ४२०४ ॥

राग सारंग ॥ ४८२३ ॥

कालिंदी है हरि की प्यारी।
जैसी मोपै स्याम करत हैं, तैसी तुम करौ कृपा निनारी ॥
जमुना जस की रासि चहूँ जुग, जमजेठी जग की महतारी।
'सूर' कहे कौ दुख जनि मानौ, कहा करौं यह प्रकृत हमारी ॥ ४२०५ ॥

राग बिलावल ॥ ४८२४ ॥ पौंड्रकवध

हरि हरि हरि सुमिरौ सब कोइ। हरि कैं सत्रु मित्र नहि दोइ ॥
ज्यौं सुमिरैं त्यौं हीं गति होइ। हरि हरि हरि सुमिरौ सब कोइ ॥
पौंड्रक अरु कासी के राइ। हरि कौ सुमिरयौ वैर सुभाइ ॥
अह निसि रहे यहै लव लाइ। क्यौं करि जीतौं जादवराइ ॥
द्वारावति तिनि दूत पठायौ। ताकौ ऐसी कहि समुझायौ ॥
चारिभुजा मम आयुध चारि। वासुदेव मैं हीं निरधार ॥
यौं ही कहि जदुपति सौं जाइ। कपट तजौं कै करौ लराइ ॥
दूत आइ हरि सौं यह कह्यौ। हरि जू तिहि यह उत्तर दयौ ॥
जौ तैं कही सो सब हम जानी। पौंड्रक की आयुस सियरानी ॥
कहौ जाइ करै जुद्ध विचार। साँच झूठ ह्वै है निरधार ॥
दूत आइ निज नृपहि सुनायौ। तब उन मन मैं जुध ठहरायौ ॥
जहाँ तहाँ तै सैन बुलाई। तब लगि जदुपति पहुँचे जाई ॥
पौंड्रक सुनि तब सन्मुख आयौ। पाँच छोहिनी दल सँग ल्यायौ ॥
सेना देखि सस्त्र सँभारे। जदुपति के लोगनि परहारे ॥
हरि कह्यौ तू अजहूँ संभारि। साँच झूठ जिय देखि विचारि ॥
ताकी मृत्यु आइ नियरानी। जो हरि कहीं सो मन नहि आनी ॥
तब जदुपति निज चक्र सँभारयौ। ताकी सेना ऊपर डारयौ ॥

सैन मारि पुनि ताकौ मारयौ। तासु तेज निज मुख मैं धारयौ॥
ऐसे हैं त्रिभुवन पति राइ। जिनकी महिमा वेदनि गाइ॥
कोउ भजै काहू परकार। 'सूरदास' सो उतरे पार॥
॥ ४२०६ ॥

राग मारू ॥ ४८२५ ॥ सुदक्षिणवध।

नृप सुदच्छिन महादेव ध्यायौ।
नाथ तुव कृपा पितु बैर लीयौ चहौं, पाइँ परि बहुरि यौं कहि सुनायौ॥
अगिनि के कुंड तैं असुर परगट भयौ, द्वारिका देस ताकौं बतायौ।
आइ उन दुंद जब कियौ हरि पुरी मैं, चक्र ताकौं ह्वाँ तैं भगायौ॥
हति सुदच्छिन दई जारि बारानसी, कह्यौ तैं मोहिं ह्याँ क्यौं पठायौ।
'सूर' के प्रभू सौं बैर जिन मन धरयौ, आपुनौ कियौ तिन आपु पायौ॥
॥ ४२०७ ॥

राग मारू ॥ ४८२६ ॥ द्विविदवध

द्विविद करि क्रोध हरि पुरी आयौ।
नृप सुदच्छिन जरयौ, जरी बारानसी, धाइ धावन जबै कहि सुनायौ॥
द्वारिका माहिं उतपात बहु भाँति करि, बहुरि रैवत अचल गयौ धाई।
तहाँ हूँ देखि बलराम की सभा कौं, करन लाग्यौ निडर ह्वै ढिठाई॥
लख्यौ बलराम यह सुभट बलवंत कोउ, हल मुसल सस्त्र अपनी सँभारयौ।
द्विविद लै साल कौ वृच्छ सनमुख भयौ, फुरति करि राम तन फटकि मारयौ॥
राम हल मारि सो वृच्छ चुरकुट कियौ द्विविद सिर फूटि गयौ लगत ताकै।
बहुरि तरु तोरि पापान फेंकन लग्यौ, बल मुसल करत परहार वाकै॥
वृच्छ पापान कौ नास जब ह्वाँ भयौ, मुष्टिका जुद्ध दोऊ प्रचारै।
राम मुष्टिक लगैं गिरयौ सो धरनि पर, निकसि गए प्रान सुधि बुधि बिसारै॥
सुरनि आकास तैं पुहुप बरषा करी, करि नमस्कार जै जै उचारे।
देवता गए सब आपने लोक कौं, 'सूर' प्रभु राम निज पुर सिधारे॥
॥ ४२०८ ॥

राग आसावरी ॥ ४७२७ ॥ सांबविवाह

स्याम बलराम गुन सदा गाऊँ।
स्याम बलराम बिनु दूसरे देव कौं, सपनहूँ मैं नहीं सीस नाऊँ॥
स्यामसुत सांब गयौ हस्तिनापुर तुरत, लछमना तहँ स्वयवर रचायौ।
देखतै सबनि कै ताहि बैठारि रथ, आपने देस कौं पलटि धायौ॥
करन दुरजोधनादिक लियौ घेरि तिहिं, करन ढिग आइ बहु बान मारे।
साब तिहि काटि निज बान संधान करि, तुरँग रथ तासु के सब सँघारे॥
हत्यौ पुनि सारथी एक ही बान करि, परयौ सो धरनि सब सुधि बिसारी।
एक इक बान भेज्यौ सकल नृपनि पै, मनौ सब साथ कीन्ही जुहारी॥
देखि यह फुरति धनि धन्य सबहिंनि कियौ, पुनि करन अस्त्र रथ के सँहारे।
सांब कौं पकरि बैठारि रथ आपनै, सुभट सब हस्तिनापुर सिधारे॥
आइ नारद कह्यौ तुरत भगवान सौं, चले भगवान हलधर निवारे।
कह्यौ मैं जाइ कै ल्याइहौं साब कौं, कौरवनि सौं सदा हित हमारे॥

प्रीति की रीति समझाइहौ प्रथम उन, काज दोउ ओर पूरन सँवारौ।
जौ न मानै कह्यौ राज अभिमान करि, एक ही मुसल सबकौ सँहारौ॥
जाइ बलराम भेटे सकल कौरवनि, बहुरि तिन सबनि यह कहि सुनायौ।
सांव सौ चूक जौ भई बालक हुतौ, तुम्है नहि बूझियै जो बंधायौ॥
कह्यौ दुरजोधन अति कोप इहि दाप नहि, दोप सब लगै पुरुपहि हमारै।
जौ इन्है कियौ सनमान निज सभा मै, बहुरि इहि ओर हित करि निहारे॥
जाँबवंत-सुता-सुत कहाँ कहँ मम सुता, बुद्धिवत पुरुप यह सब बिचारै।
अरु सदा देत जादव सुता कौरवनि, कहत अब बात बल बिनु सँभारै॥
कह्यौ बलराम यह सांव सुत स्याम कौ, रुद्र विधि रेनु जाकी न पावै।
इंद्र सुर सकल दरबार ठाढ़े रहै, सिद्ध गधर्व गुन सदा गावै॥
बहुरि करि कोप हल अग्र पर नग्र धरि, गंग मैं डारि चाहत डुबायौ।
कौरवनि मिलि बहुत भाँति बिनती करी, दोप तिनकौ द्विजनि मिलि छमायो॥
साँव कौ लछमना सहित ल्याये बहुरि, दियौ दाइज अगन गनि न जाए।
'सूर' प्रभु राम बल अतुल को तुलि सकै करत आनद निज पुरी आए॥
॥४२०६॥

राग धनाश्री ॥ ४८२८ ॥ नारदसशय

हरि की लीला देखि नारद चकित भए।
मन यह करत बिचार गोमती तट गए॥
अलख निरजन निराकार अच्युत अविनासी।
सेवत जाहि महेस सेस, सुर माया दासी॥
धर्मस्थापन हेत पुनि, धारयौ नर औतार।
ताकौ पुत्र कलत्र सौ, नहि संभवत पियार॥
हरि कै पोडस सहस, आठ पतिवर्ता नारी।
सबकौ हरि सौ हेत, सबै हरि जू की प्यारी॥
जाकै गृह द्वै नारि है ताहि कलह नित होइ।
हरि बिहार किहिं करत, नैननि देखौ जोइ॥
द्वारावति रिपि पैठि भवन, हरि जी के आए।
आगे ह्वै हरि नारि सहित, चरननि सिर नाए॥
सिंहासन बैठारि के, धोए चरन बनाइ।
चरनोदक सिर धरि कह्यौ, कृपा करी रिपिराइ॥
तब नारद हँसि कह्यौ, सुनौ त्रिभुवनपति राई।
तुम देवनि के देव, देत हौ मोहि बड़ाई॥
विधि महेस सेवत तुम्है, मै बपुरा किहिं माहिं।
कहै तुम्है प्रभु देवता, यामै अचरज नाहि॥
औंर गेह रिपि गए, तहाँ देखे जदुराई।
चँवर दुरावति नारि, करति दासी सेवकाई॥
रिपि कौ आवत देखि हरि कियौ बहुत सनमान।
ह्वाँ हूँ तै नारद चले, करि ऐसौ अनुमान॥
जा गृह मैं हौ जात, स्याम आगै ही आवत।

तातैं छाँड़ि सुभाव जाउ अवकैं मैं धावत ॥
जहँ नारद स्रम करि गए, तहँ देखे घनस्याम।
वालनि सों क्रीड़ा करत, कर जोरे खरी वाम ॥
जहाँ जहाँ रिषि जाइँ तहाँ तहँ हरि कौ देखैं।
कहुँ कछु लीला करत, कहूँ कछु लीला पेखैं ॥
यौं हीं सव गृह मैं गए, लह्यौ न मन विस्राम।
तव ताकौ व्याकुल निरखि, हँसि वोले घनस्याम ॥
नारद मन कौ भरम, तोहि एतौ भरमायौ।
मैं व्यापक सव जगत, वेद चारौ मोहिं गायौ ॥
मै करता मैं भोगता, मो विनु और न कोइ।
जो मोकौ ऐसौ लखै, ताहि भरम नहि होइ ॥
वूझौ सव गृह जाइ, सवै जानत मोहि योंहीं।
हरि कौ हमसौं प्रीति, अनत कहुँ जात न क्योंहीं ॥
मै उदास सव सौं रहौं, यह मम सहज सुभाइ।
ऐसो जानै मोहि जो, मम माया तरि जाइ ॥
तव नारद कर जोरि कह्यौ, तुम अज अनंत हरि।
तुमसे तुम हीं ईस नहीं द्वितिया कोउ तुम सरि ॥
तुव माया तुव कृपा विनु, सकै नहीं तरि कोइ।
अव मोकौ कीजै कृपा, ज्यौं न वहुरि भ्रम होइ ॥
रिषि चरित्र मम देखि, कछू अचरज मति मानौ।
मो तैं द्वितिया और कोउ मन माहँ न आनौ ॥
मैं करता मैं भोगता, नहिं यामैं कछु संदेहु।
मेरे गुन गावत फिरौ, लोगनि कौ सुख देहु ॥
नारद करि परनाम, चले हरि के गुन गावत।
वार वार हरि रूप ध्यान, हिरदै मैं ध्यावत ॥
यह लीला आचरज की, 'सूरदास' कहि गाइ।
ताकौ जो गावै सुनै, सो भवजल तरि जाइ ॥ ४२१० ॥

जरासंधवध

राग कान्हरौ ॥ ४८२९ ॥

राज रवनि गावति हरि कौ जस।
रुदन करत सुत कौ समुझावति, राखति स्रवननि प्याइ सुधारस ॥
तुम जनि जिय डरपहु रे वालक, कृपासिंधु कै सरन सदा वस।
तजि जिय सोच तात अपने कौ, करि प्रतीति निरभय ह्वै कै हँस ॥
जिन प्रभु जनक सुता प्रन राख्यौ, अरु रावन के सीस सकल नस।
सोई 'सूर' सहाइ हमारै, मोचन गोप गयंद महा पस ॥
॥ ४२११ ॥

॥ ४८३० ॥

रे सुत विनु गोविंद कोउ नाहीं।
तुम्हरो दु:ख दूरि करिवे कौ, रिद्धि सिद्धि निधि फिरि फिरि जाहीं ॥
और देव की सेवा ऐसी, तृन की अग्नि मेघ की छाहीं।
जगत पिता जगदीस सरन विनु, अंत अनाथ कहूँ न समाहीं ॥

सिव विरंचि सुर ईस मनुज मुनि, तिनकी भक्ति भजत अवगाही।
'सूरदास' भगवत भजन बिनु, कोटि करौं तउ दुख न जाहीं।।
।। ४२१२ ।।

राग धनाश्री ।। ४८३१ ।।

नाथ और कासौं कहौं गरुडगामी।
दीनबंधे दयासिधु असरन सरन, सत्य सुखधाम सर्वज्ञ स्वामी।।
इहिं जरासंध मद अंध मम मान मथि, बाँधि बिनु काज दल इहाँ आने।
किए अवरोध अति क्रोध गहि गिरि गुहा, रहत भृंगि कीट ज्यौं त्रास माने।।
नाहिनै नाथ जिय सोच धन धरनि कौं, मरन तै अधिक यह दुख सतावै।
भृत्य की रीति हम होत मागध सकल, नाथ जिय दमत उद्वेग पावै।।
मधु कैटभ मथन मुर भौम केसी दलन, कंस कुल काल अरु सालहारी।
जानि जग जूप भय भूप तद्रूपता, बहुरि करिहै कलुष भूमि भारी।।
वदत नृप दूत अनुभूत उर भीरुता, सुनत हरि 'सूर' सारथि बुलायौ।
भयौ आरूढ़ तकि ताहि उत्तर दियौ, जाइ सुधि देहु हौ यहै आयौ।।
।। ४२१३ ।।

राग मारू ।। ४८३२ ।।

चले हरि धर्मसुवन के देस।
संतन हित भू भार उतारन, काटन बंदि नरेस।।
जब प्रभु जाइ संखधुनि कीन्ही, होत नगर परवेस।
सुनि नृपबंधु सहित उठि धाए, झारत पद रज केस।।
आसन दै भोजन विधि पूछी, नारद सभा सुदेस।
तच्छन भीम धनंजय माधौ, धरयौ विप्र कौ भेस।।
पहुँचे जाइ राजगिरि द्वारै, घुरे निसान सुदेस।
माँग्यौ जुद्धहिं जरासिंधु पै, छत्री कुल आवेस।।
जरासंध कौ जुद्ध अर्थ, बल रहत न छत्री लेस।
'सूरज' प्रभु दिन सात बीस मैं, काटे सकल कलेस।। ४२१४ ।।

राग मारू ।। ४८३३ ।।

कंस खल दलन, रन राम रावन हतन, दीन दुख हरन गज मुक्तकारी।
नृपति चहुँ देस के बंदि जरासंघ के, रैनि दिन रहत जिय दुखित भारी।।
सुनी जदुनाथ यह बात जब पथिक तैं, धर्म सुत कै हृदय यह उपाई।
राजसू जज्ञ कौ कियौ आरंभ मैं, जानि कै नाथ तुमकौ सहाई।।
भीम अरजुन सहित विप्र कौ रूप धरि, हरि जरासंध सौं जुद्ध माँग्यौ।
दियौ उन पै कह्यौ तुम कोऊ राजसी, कपट करि विप्र कौ स्वाँग स्वाँग्यौ।।
हरि कह्यौ भीम अरजुन दोऊ सुभट ये, कृष्न मैं देखि लोचन उघारी।
वचन जो कह्यौ प्रतिपाल ताकौ करौ, कै सभा माहि पत जाहु हारी।।
पार्थ तुम नहीं समरत्थ मम जुद्ध कौ, भीम सौं लरौं यह कहि सुनाई।
बीस औ सप्त दिन यौं गदाजुद्ध कियौ, दोउ बलवंत कोउ लियौ न जाई।।
स्याम तृन चीरि दिखराइ दियौ भीम कौं, भीम तब हरषि ताकौं पछारयौ।
जरासंध की संधि जोरयौ हुती, भीम ता संधि कौं चीरि डारयौ।।

नृपनि कौ छोरि सहदेव कौ राज दियौ, देव नर सकल जय जय उचारयौ।
'सूर' प्रभु भीम अरजुन सहित तहाँ तै धर्मसुत देस कौ पुनि सिधारयौ॥
॥ ४२१५॥

राग सारंग॥ ४८३४॥

जीत्यौ जरासंध बँदि छोरी।
जुगल कपाट विदारि बाट करि, जतनहि तै सँधि जोरी॥
बिषम जाल बल बाँधि ब्याध लौ, नृप खग अवलि बटोरी।
जनु सु अहेरी हति जादौंपति, गुहा पीजरा तोरी॥
निकसे देत असीस एक मुख, गावत कीरति गोरी।
जनु उँड़ि चले बिहंगम के गन, कटे कठिन पग डोरी॥
मिटि गए कलह कलेस कुलाहल, जनु बरि बीती होरी।
'सूरदास' प्रभु अगनित महिमा, जो कछु कहौं सो थोरी॥ ४२१६॥

राग मारू॥ ४८३५॥

जीत्यौ जीत्यौ हो जादवपति रिपु दल मारयौ।
तऊ न तजत हठ परम मुगुध सठ, ना जानै कुबुद्धि जड़ को बाहु बिदारयौ।
खर वरि मूठि उठि खेलत बालक सुठि आनत ईधन दौरि दौरि दिसि चारयौ।
ऐसैं यह नृप नर सकल सकेलि घर, कठिन हृदय करि सब कुल जारयौ॥
कह्यौ न काहू कौ करै बहुरि बहुरि अरै, एकहि पाइ दै पग पकरि पछारयौ।
'सूर' स्वामी अति रिस भीम की भुजा कै मिस ब्यौतत बसन जिमि तासु तन फारयौ॥
॥ ४२१७॥

राग बिलावल॥ ४८३६॥ राजाओ की प्रार्थना

जाहि कहाँ अपराध भरे।
तुम माता तुम पिता जगत गुरु, तुमहि सहोदर बधु हरे॥
बसन कुचील देह अति दुरबल, उमँगि प्रेम जल सिथिल भरे।
राजा सबै बदि तै छोरे, आइ कृष्न के पाइँ परे॥
समाधान करि बिदा दई हरि, उभै कमल कर सीस धरे।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरी कृपा तै, भवसागर छन माहि तरे॥ ४२१८॥

राग बिलावल॥ ४८३७॥ पाडवयज्ञ, शिशुपालगति

हरि हरि सुमिरौ सब कोइ। सत्रु मित्र हरि गनत न दोइ॥
जो सुमिरै ताकी गति होइ। हरि हरि हरि सुमिरौ सब कोइ॥
वैर भाव सुमिरयो सिसुपाल। ताहि राजसू मै गोपाल॥
चक्र सुदरसन करि संहारयौ। तेज तासु निज मुख मै धारयौ॥
भक्ति भाव भक्तनि उद्धारत। वैर भाव असुरनि निस्तारत॥
कोऊ सुमिरौ काहू प्रकार। 'सूरदास' हरि नाम उधार॥ ४२१९॥

राग बिलावल॥ ४८३८॥ पाडव सभा, दुर्योधन का क्रोध

भक्त काज हरि जित कित सारे।
जज्ञ राजसू माहि आपु हरि, सब के पाउँ पखारे॥
अष्ट नायिका द्रुपदसुता की, करै तहाँ सेवकाई।
दुर्योधन यह रीति देखि कै, मन मै रह्यौ खिस्याई॥

भक्त संग हरि लागे डोलत, भक्त बछल प्रभु भोरे।
सब विधि काज करत भक्तनि के, गनत नहीं हम को रे॥
जीतैं जीतत भक्त आपनै, हारैं हार विचारत।
'सूरदास' प्रभु रीति सदा यह, प्रन जुग जुग प्रतिपारत॥ ४२२०॥

राग मारू॥ ४८३९॥ शाल्ववध

सुभट साल्व करि क्रोध हरि पुरी आयौ।
हत्यौ सिसुपाल को राजसू माहि हरि, धाइ धावन जवै यह सुनायौ॥
वृच्छ वन काटि महलात ढाहन लग्यौ, नगर के द्वार दीन्हे गिराई।
सर्प पाषान की वृष्टि करि लोक पर, वायु अति वेग सौं पुनि चलाई॥
प्रद्युम्न सात्यकि निकसि सन्मुख भए, बधु सारन सुनत वेगि धाए।
तहाँ चारुदेष्नहूँ साजि दल वल सकल, हाँकि रथ तुरग ता ठौर आए॥
तिमिर कौ वान तव साल्व मार्‍यौ फटकि, प्रद्युम्न बान दीपति चलायौ।
मिट्यौ अंधकार तन बान वरषा करी, तुरँग रथ सारथी स्यौं गिरायौ॥
सैन के लोग पुनि वहुत घायल किए, ध्वजा धर धर पर्‍यौ मूरछाई।
साल्व यह देखि कै चकित सौ ह्वै रह्यौ, सस्त्र के गहन की सुधि भुलाई॥
असुर विद्या समर वहुरि लाग्यौ करन, कवहुँ लघु कवहुँ दीरघ सु होई।
गुप्त ह्वै कवहुँ कवहुँ परगट देखियै, कवहुँ घर कवहुँ नभ वसै सोई॥
अगिनि कवहुँ कवहुँ वारि वरषा करै, प्रद्युम्न सकल माया निवारी।
साल्व परधान द्युमान मारी गदा, प्रद्युम्न मुरछित सुधि विसारी॥
धर्मवित सारथी गयौ एकात लै, उहाँ जब चेत ह्वै सुधि सँभारी।
खीझि कह्यौ ताहि क्यौं मोहिं लायौ इहाँ, मम पिता मातु कौं लगी गारी॥
है कहा कहि मोहि राम भगवान सुनि, नारि मम सुनत अति दुखित होई।
मरै रन सुजस परलोक सुख पाइये, मंद मति तै दोउ बात खोई॥
धर्मवित कह्यौ करि विनय मम चूक नहिं, सारथी धर्म मोहि गुरु सिखायौ।
मूरछित सुभट नहिं राखियै खेत मै, जानि यह बात मैं इहाँ ल्यायौ॥
प्रद्युम्न कह्यौ जो भई सो भई अब, बात जनि काहु सौ यह सुनैयै।
ताहि दै सपथ, करि आचमन पुनि कह्यौ, चलो रनभूमि अब जैयै॥
आइ रनभूमि मैं सवनि धीरज दियौ, साल्व रथतुरग चारो सँहारे।
छत्र धुज तोरि मार्‍यौ वहुरि सारथी, देखि यह सुभट डरि गए सारे॥
हस्तिनापुर गए हुते हरि पांडु गृह, तहाँ ते चले यह बात जानी।
साल्व उत्पात कियौ द्वारिका माहि वहु, हाँकि रथ कह्यौ सारंगपानी॥
सारथी पाइ रुख दये सटकारि हय, द्वारिकापुरी जव निकट आई।
साल्व के भटनि लखि कटक भगवान कौ, आपने नृपति सौं कह्यौ जाई॥
सुनि सो भगवान कै आइ सनमुख भयौ, सारथी ओर वरछी चलाई।
ताहि आवत निरखि स्याम निज साँग सौ, काटि करि साल्व की सुधि भुलाई॥
वहुरि तिहिं कोपि निज बान संधान करि, धनुष भगवान को काटि डार्‍यौ।
टूटतैं धनुष के सब्द आकास गयौ, साल्व निज जिय समुझि यौं उचार्‍यौ॥
रुकमिनी माँग सिसुपाल की तुम हरी, वहुरि तिहिं राजसू मैं सँहारौ।
जाइहौ अब कहाँ दाँव लैहौ इहाँ, छाँडि सो विचार आयौ सँभारौ॥

कह्यौ भगवान सुनि साल्व जे सूर नर ते नहीं करत निज मुख बड़ाई।
जे करैं, सूर तिनको नहीं जानिये, भाषि यह गदा ताकौ चलाई॥
गदा कैं लगत ह्वै गयौ सो गुप्त ह्वै, धारि धावन-रूप यह सुनायौ।
कह्यौ बसुदेव जगदीस आसचर्ज यह, तुम अछत साल्व मोहिं बाँधि लायौ॥
बहुरि करि कपट बसुदेव तहँ प्रकट कियौ, कह्यौ तिन नाथ मैं दुखित भारी।
साल्व करवार लै स्याम के देखतैं, डारि दयौ सीस ताकौ उतारी॥
लख्यौ भगवान करि कपट इन यह कियौ, तासु माया तुरत हरि निवारी।
भागि निज पुर कह्यौ स्याम पहिलै पहुँचि, खैंचि कै गदा ता सीस मारी॥
गदा जुद्ध साल्व कीन्हौ बहुत बेर लौं, बहुरि हरि साँग ताकौं चलाई।
लगत ताकैं गए प्रान वाके निकसि, सुरनि आकास दुंदुभि बजाई॥
सीस ताकौ बहुरि काटि करवार सौं, मगर सम समुद्र मैं डारि दीन्हौ।
'सूर' प्रभु रहे ता ठौर दिन औ कछु, मारि दंतवक्र पुर गवन कीन्हौ॥
॥ ४२२१॥

राग मारू ॥ ४८४० ॥ दंतवक्त्रवध

हरि निकट सुभट दंतवक्र आयौ।
कह्यौ सिसुपाल तुम राजसू मैं हत्यौ, धन्य सोइ हेत मैं दरस पायौ॥
मरत तुम हाथ ससै नहीं कछु हमैं, दोउ बिधि आहि प्रभु हित हमारे।
जिऐं तौ राजसुख भोग पावैं जगत, मुऐं निरवान निरखत तुम्हारे॥
बहुरि लै गदा परहार कियौ स्याम पर, लग्यौ ज्यौं लगै अबुज पहारै।
हरि गदा लगत गए प्रान ताके निकसि, बहुरि हरि निज बदन माँहि धारे॥
अनुज ताकौ बिदूरथ लग्यौ फिरन पुनि, चक्र सौं सीस ताकौ प्रहार्‌यौ।
'सूर' प्रभु जुद्ध निरखि भयौ मुनि जन हरष, सुर पुहुप बरषि जै जै उचार्‌यौ॥
॥ ४२२२॥

राग मारू ॥ ४८४१ ॥

स्याम बलराम कौ सदा ध्याऊँ।
यहै मम ज्ञान यह ध्यान सुमिरन यहै, यहै असनान फल यहै पाऊँ॥
स्याम दंतवक्र अरु साल्व कौं जीति करि, करत आनंद निजपुरी आए।
रामगंगादि, जमुनादि अस्नान करि, नैमिसारण्य पुनि जाइ न्हाए॥
सूत तहँ कथा भागवत की कहत हे, रिषि अठासी सहस हुते स्रोता।
राम कौ देखि सनमान सबही कियौ, सूत नहिं उठे निज जानि वक्ता॥
राम तिहिं हत्यौ तब सब रिषिन मिलि कह्यौ, बिप्र हत्या तुम्हैं लगी भाई।
सूत सुत थापि सब तीर्थ अस्नान करि, पाप जो भयौ सो सब नसाई॥
पुनि कह्यौ रिषिन दानव महा प्रबल ह्यौं, हमैं दुख देत सो सदा आई।
ताहि जौ हतौ तौ होइ कल्यान तुव, हम करैं जज्ञ सुख सौं सदाई॥
राम दिन कितक ता ठौर औरौ रहे, आइ बल्वल तहाँ दई दिखाई।
रुधिर औ माँस की लग्यौ बरषा करन, रिषि सकल यह देखि गए डराई॥
राम हल सौं पकरि मुसल सौं हत्यौ तेहि, प्रान तजि तेहिं सकल सुधि बिसारी।
सुरनि आकास तैं पुहुप बरषा करी, रिषिन आसीस जय धुनि उचारी॥

बहुरि बलराम परनाम करि रिषिन कौं, पृथी परदच्छिना कौं सिधाए।
प्रभु रचि ज्यौंहि ज्यौं होइ सो त्यौंहि त्यौं, 'सूर' जन हरि चरित यहि सुनाए ॥
॥ ४२२३ ॥

राग बिलावल ॥ ४८४२ ॥ सुदामाचरित्र

हरि हरि हरि हरि सुमिरन करौ। हरि चरनारबिंद उर धरौ ॥
बिप्र सुदामा सुमिरे हरी। ताकी सकल आपदा टरी ॥
कहौं सु कथा सुनौ चित धारि। कहै सुनै सु लहै सुख सार ॥
बिप्र सुदामा परम कुलीन। बिष्नु भक्ति सौं अति लवलीन ॥
भिच्छा बृत्ति उदर नित भरे। अह निसि हरि हरि सुमिरन करे ॥
नाम सुसीला ताकी नारि। पतिब्रता पति आज्ञाकारि ॥
पति जो कहै सो करै चित लाइ। 'सूर' कह्यौ इक दिन या भाइ ॥४२२४॥

राग बिलावल ॥ ४८४३ ॥

कहि न सकति सकुचति इक बात।
केतिक दूर द्वारिका नगरी, क्यों नाहीं जदुपति लौं जात ॥
जाके सखा स्याम सुंदर से, श्रीपति सकल सुखनि के दात।
तिनहिं अछत तुम अपने आलस, काहै कत रहत कृस गात ॥
कहियत परम उदार कृपानिधि, अंतरजामी त्रिभुवन तात।
सर्वस देत रीझि भक्तनि कौं, रुचि मानत तुलसी के पात ॥
छाँडो सकुच बाँधि पट तंदुल, 'सूरज' समै चलौ उठि प्रात।
लोचन सफल करौ पिय अपने, हरि मुख कमल देखि बिकसात ॥ ४२२५ ॥

राग नट ॥ ४८४४ ॥

कत सिधारौ मधुसूदन पैं सुनियत है वे मीत तुम्हारे।
बालसखा अरु बिपति बिभंजन, संकट हरन मुकुंद मुरारे ॥
और जु अतिसय प्रीति देखियै, निज तन मन की प्रीति बिसारे।
सरवस रीझि देत भक्तनि कौ, रंक नृपति काहूँ न बिचारे ॥
यद्यपि तुम संतोष भजत हौ, दरसन सुख तैं होत जु न्यारे।
'सूरदास' प्रभु मिले सुदामा, सब सुख दै पुनि अटल न टारे ॥ ४२२६ ॥

राग धनाश्री ॥ ४८४५ ॥

सुदामा सोचत पंथ चले।
कैसै करि मिलिहै मोहि श्रीपति, भए सब सगुन भले ॥
पहुँच्यौ जाइ राजद्वारे पर, काहूँ नहिं अटकायौ।
इत उत चितै धँस्यौ मंदिर मैं, हरि कौ दरसन पायौ ॥
मन मै अति आनंद कियौ हरि, बालमीत पहिचान।
धाए मिलन नगन पग आतुर, 'सूरज' प्रभु भगवान ॥ ४७२७ ॥

राग बिलावल ॥ ४८४६ ॥

दूरिहि तैं देख्यौ बलबीर।
अपने बालसखा जु सुदामा, मलिन बसन अरु छीन सरीर ॥
पौढे हे परजंक परम रुचि, रुकमिनि चौर डुलावति तीर।
उठि अकुलाइ अगमने लीन्हें, मिलत नैन भरि आए नीर ॥

निज आसन बैठारि स्यामघन, पूछी कुसल कह्यौ मति धीर।
ल्याए हौ सु देहु किन हमकौ, कहा दुरावन लागे चीर॥
दरस परस हम भए सभागे, रही न मन मैं एकहु पीर।
'सूर' सुमति तंदुल चावत ही, कर पकरयौ कमला भई धीर॥ ४२२८॥

राग धनाश्री॥ ४८४७॥

जदुपति दीख सुदामा आवत।
बिह्वल बिकल भयौ दारिद बस, करि बिलाप रुकमिनी सुनावत॥
धाइ धाइ हँसि कियौ सभापन, कर गहि भुजा अंग लै लावत।
तंदुल देखि अधिक आनंदित, माँगि सुदामा जो मन भावत॥
मन ही मन मैं कहत गह्यौ कर, सो दीजै जो चित न डुलावत।
'सूरदास' नव निधि के दाता, जाकौ कृपा करत सोइ पावत॥४२२९॥

राग बिलावल॥ ४८४८॥

ऐसी प्रीति की बलि जाउँ।
सिंहासन तजि चले मिलन कौ, सुनत सुदामा नाउँ॥
कर जोरे हरि बिप्र जानि कै, हित करि चरन पखारे।
अंक माल दै मिले सुदामा, अर्धासन बैठारे॥
अधंगी पूछति मोहन सौं, कैसे हितू तुम्हारे।
तन अति छीन मलीन देखियत, पाउँ कहाँ तै धारे॥
संदीपन कै हमऽरु सुदामा, पढे एक चटसार।
'सूर' स्याम की कौन चलावै, भक्तनि कृपा अपार॥ ४२३०॥

राग धनाश्री॥ ४८४९॥

गुरु गृह हम जब बन कौं जात।
तोरत हमरे बदलै लकरी, सहि सब दुख नित गात॥
एक दिवस बरपा भई बन मैं, रहि गए ताहीं ठौर।
इनकी कृपा भयौ नहिं मोहि स्रम, गुरु आए भएँ भोर॥
सो दिन मोहिं बिसरत न सुदामा, जो कीन्हौ उपकार।
प्रति उपकार कहा करौ 'सूरज' भापत आप मुरार॥ ४२३१॥

राग धनाश्री॥ ४८५०॥

बिधि सौं अरघ पाँवडे दीन्हें, अंतर प्रेम बढायौ॥
आदर बहुत कियौ कमलापति, मर्दन करि अन्हवायौ।
चंदन अगर कुमकुमा केसर, परिमल अंग चढायौ॥
मूठिक तंदुल बाँधि कृस्न कौं, बनिता बिनय पठायौ।
पूरब प्रीति जानि कै मोहन, तातैं कछू इक खायौ॥
समदे बिप्र सुदामा घर कौं, सरबस दै पहिरायौ।
'सूरदास' बलि बलि मोहन की, तिहूँ लोक पद पायौ॥ ४२३२॥

राग धनाश्री॥ ४८५१॥

वह सुधि आवत तोहिं सुदामा।
जब हम तुम बन गए लकरियनि, पठये गुरु की भामा॥

चपल समीर भयौ तिहिं रजनी, भीजै चारौ जामा।
काँपत हृदय वचन नहि आवत, आए सत्वर धामा।।
तवहिं असीस दई परसन ह्वै, सफल होहु तुम कामा।
'सूरदास' प्रभु कौ जु मिलन जस, गावत सुर नर नामा।।४२३३।।

राग विलावल ।। ४८५२ ।।

सुदामा गृह कौ गमन कियौ।
प्रगट विप्र कौ कछु न जनायौ, मन मैं वहुत दियौ।।
वेई चीर कुचील वहै विधि, मोकौ कहा भयौ।
धरिहौ कहा जाइ तिय आगैं, भरि भरि लेत हियौ।।
सो संतोप मानि मन ही मन, आदर वहुत लियौ।
'सूरदास' कीन्हे करनी विनु, को पतियाइ वियौ।। ४२३४।।

राग विलावल ।। ४८५३ ।।

सुदामा मदिर देखि डरयौ।
इहाँ हुती मेरी तनक मड़ैया, को नृप आनि छरयौ।।
सीस धुनै दोऊ कर मीडै, अंतर सोच परयौ।
ठाढ़ी पिया जु मारग जोवै, ऊँचे चरन धरयौ।।
तोहिं आदरयौ त्रिभुवन कौ नायक, अव क्यौ जात फिरयौ।
'सूरदास' प्रभु की यह लीला, दारिद दुःख हरयौ।। ४२३५।।

राग विलावल ।। ४८५४ ।।

देखत भूलि रह्यौ द्विज दीन।
मन सुधि परै समुझि नहि आवै, मेरौ गृह प्राचीन।।
किधौ देवमाया मति मोह्यौ, किधौ, अनत ही आयौ।
त्रिनहु की छाँह गई निधि माँगत, वहुत जतन हौ छायौ।।
चितवत चकित चहूँ दिसि वाम्हन, अद्भुत लीला रीति।
ऊँचे भवन मनोहर छाजे, मनि, कंचन की भींति।।
चली कत यह सव हरि किरपा, पाँउ धारिए धाम।
तव पहिचानि धँसे मंदिर मैं, 'सूर' सकल अभिराम।। ४२३६।।

राग विलावल ।। ४८५५ ।।

भूलौ द्विज देखौ अपनौ घर।
औरहिं भाँति रची रचना रुचि, देखतही उपज्यौ हिरदै डर।।
कै वह ठौर छुड़ाइ लियौ किहुँ, कोऊ आइ वस्यौ समरथ नर।
कै हौं भूलि अनतही आयौ, यह कैलास जहाँ सुनियत हर।।
वुधजन कहत द्रुवल घातक विधि; सो हम आजु लही या पटतर।
ज्यौ नलिनी वन छाँडि वसै जल, दाहै हेम जहाँ पानीसर।।
पाछे तैं तिय उतरि कह्यौ पति, चलिए द्वार गह्यौ कर सौ कर।
'सूरदास' यह सव हित हरि कौ, द्वारै आइ भयो जु कलपतर।।४२३७।।

।। ४८५६ ।।

हौ फिरि वहुरि द्वारिका आयौ।
समुझि न परी मोहि मारग की, कोउ वूझौ न वतायौ।।

कहिहै स्याम सत्त इन छाँड्यौ, उतौ राँक ललचायौ।
तृन की छाहँ मिटी निधि माँगत, कौन दुबनि सों छायौ।।
सागर नहो समीप कुमति कै, विधि कह अतं भ्रमायौ।
चितवत चित्त विचारत मेरौ, मन सपनै डर छायौ।।
सुरतरु दासी, दास, अस्व, गज, विभौ विनोद वनायौ।
'सूरज' प्रभु नंदसुवन मित्र ह्वै, भक्तनि लाड़ लड़ायौ।। ४२३८।।

राग विलावल।। ४८५७।।

कहा भयौ मेरौ गृह माटी कौ।
हौ तौ गयौ गुपालहि भेटन, और खरच तदुल गाँठी कौ।।
विनु ग्रीवा कल सुभग न आन्यौ, हुतौ कमंडल दृढ़ काठी कौ।
घुनौ बाँस जुत वुनौ खटोला, काहु कौ पलँग कनक पाटी कौ।।
नूतन छीरोदक जुवती पै, भूपन हुतौ न लोह माटी कौ।
'सूरदास' प्रभु कहा निहोरौ, मानत रंक त्रास टाटी कौ।। ४२३६।।

राग धनाश्री।। ४८५८।।

कैसै मिले पिय स्याम सँघाती।
कहियै कंत कौन विधि परसे, वसन कुचील छीन अति गाती।।
उठिकै दौरि अंक भरि लीन्हौ, मिलि पूछी इत उत कुसलाती।
पटतै छोरि लिए कर तंदुल, हरि समीप रुकमिनी जहाँ ती।।
देखि सकल तिय स्यामसुँदर गुन, पट दै ओट सबै मुसक्याती।
'सूरदास' प्रभु नवनिधि दीन्ही, देत और जो तिय न रिसाती।। ४२४०।।

राग विलावल।। ४८५६।।

ऐसै और कौन पहिचानै।
सुनु सुंदरि वा दीनवंधु विन, कौन मिलई मानै।।
कहँ हम कृपन, कुचील, कुदरसन, कहँ जदुनाथ गुसाईं।
भेटे हृदय लगाइ अंक-भरि, उठि, अग्रज की नाईं।।
निज आसन बैठारि परम रुचि, निज कर चरन पखारे।
पूछी कुसल स्यामसुदरघन सब संकोच निवारे।।
लीन्हे छोरि चीर तै चाउर, गहि मुख मैं मेले।
पूरब कथा सुनाइ 'सूर' प्रभु, गुरु गृह बसे अकेले।। ४२४१।।

राज धनाश्री।। ४८६०।।

हरि विनु कौन दरिद्र हरै।
कहत सुदामा सुनि सुंदरि, हरि मिलन न मन विसरै।।
और मित्र ऐसी गति देखत, को पहिचान करै।
विपति परैं कुसलात न वूझै, वात नही विचरै।।
उठि भेटें हरि तंदुल लीन्हे, मोहि न वचन फुरै।
'सूरदास' लछि दई कृपा करि, टारी निधि न टरै।। ४२४२।।

राग धनाश्री।। ४८६१।।

और को जानै रस की रीति।
कहँ हौं दीन कहाँ त्रिभुवनपति, मिले पुरातन प्रीति।।

चतुरानन तन निमिप न चितवत, इतो राज की नीति।
मोसा बात कहीं हिरदय की, गए जाहि जुग जाति॥
बिन गोविंद सकल सुख सुंदरि, ज्यों भुस पर की भीति।
हौं कहं कहौं 'सूर' के प्रभु कौ, निगम करत है नीति॥ ४२४३॥

राग धनाश्री॥ ४८६२॥

बिनु गुपाल और मोहि, ऐसौ को सँभारे।
आपु हँसत दौरि मिले, उर तें नहि टारे॥
छीन अंग जीर्न वसन, दीन मुख निहारे।
मम तन रज पथहि लगी, पीत पट सु झारे॥
सुखद सेज आसन दै, स्वहथ पग पखारे।
हरि हित हर गंग धरे, पग जल सिर धारे॥
कहि कहि गुरु गेह कथा सकल दुख निवारे।
कहत विप्र 'सूरदास' प्रभु ऊपर वारे॥ ४२४४॥

राग केदारौ॥ ४८६३॥ संक्षिप्त सुदामाचरित्र

दीन द्विज द्वारैं आइ भयौ ठाढ़ौ।
नाम सुदामा कहत नाथ जू, दुखी आहि अति गाढ़ौ॥
सुनतहि वचन कमलदल लोचन, कमलापति उठि धाए।
त्रिभुवननाथ जानि अपनौ प्रिय, हित सौं कंठ लगाए॥
आदरि करि मंदिर मैं ल्याए, कनक पलँग बैठाए।
कथा अनेक पुरातन कहि कहि, गुरु के धाम बताए॥
खैबे कौ कछु भाभी दीन्हौं, श्रीपति श्रीमुख बोले।
फेंट उपर तैं अंजुल तंदुल, बल करि हरि जू खोले॥
द्वै मूठी तंदुल मुख मेले, बहुरौ हाथ पसारयौ।
त्रिभुवन दै करि कह्यौ रुकमिनी, अपनौ हाथ निवारयौ॥
बिदा कियौ पहुँच्यौ निज नगरी, हेरत भवन न पायौ।
मंदिर रही नारि पहिचानी, प्रीति समेत बुलायौ॥
दीनदयाल देवकीनंदन, बेद पुकारत चारयौ।
'सूर' सुदामा कौ जु भेटि हरि, दारिद दुख निवारयौ॥ ४२४५॥

राग मलार॥ ४८६४॥ पथिक के प्रति ब्रजनारी वाक्य

तब तैं बहुरि न कोऊ आयौ।
वहै जु एक बेर ऊधौ सौं, कछु संदेसौ, पायौ॥
छिन छिन सुरति करत जदुपति की, परत न मन समुझायौ।
गोकुलनाथ हमारै हित लगि, लिखि हू क्यौं न पठायौ॥
वहै विचार करौ धौं सजनी, इती गहरु क्यौं लायौ।
'सूर' स्याम अब बेगि न मिलहू, मेघनि अंबर छायौ॥ ४२४६॥

राग गौरी॥ ४८६५॥

बहुरौ हो ब्रज बात न चाली।
वहै सु एक बेर ऊधौ कर, कमल नयन पाती दै घाली॥

पथिक तिहारे पा लागति हौ, मथुरा जाहु जहाँ बनमाली।
कहियौ प्रगट पुकारि द्वार ह्वै, कालिंदी फिरि आयौ काली॥
तब वह कृपा हुती नँदनंदन रुचि रुचि रसिक प्रीति प्रतिपाली।
माँगत कुसुम देखि ऊँचे द्रुम, लेत उछंग गोद करि आली॥
जब वह सुरति होति उर अंतर, लागति काम बान की भाली।
'सूरदास' प्रभु प्रीति पुरातन सुमिरत, दुसह सूल उर साली॥
॥ ४२४७॥

राग धनाश्री ॥ ४८६६ ॥

तुम्हरे देस कागद मसि खूटी।
भूख प्यास अरु नींद गई सब, बिरह लयौ तन लूटी॥
दादुर मोर पपीहा बोले, अवधि भई सब झूठी।
पाछैं आइ तुम कहा करौगे, जब तन जैहै छूटी॥
राधा कहति सँदेस स्याम सौं, भई प्रीति की टूटी।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे मिलन बिनु, सखी करति है कूटी॥ ४२४८॥

राग धनाश्री ॥ ४८६७ ॥ कुरुक्षेत्र मे श्रीकृष्ण, यशोमति, गोपीमिलन

पथिक कह्यौ ब्रज जाइ, सुने हरि जात सिंधु तट।
सुनि सब अंग भए सिथिल, गयौ नहिं बज्र हियौ फट॥
नर नारी घर घरनि सबै यह करति बिचार।
मिलिहैं कैसी भाँति हमैं अब नंदकुमार॥
निकट बसत हुती आस कियौ अब दूरि पयाना।
बिना कृपा भगवान उपाइ न 'सूरज' आना॥ ४२४९॥

राग गौरी ॥ ४८६८ ॥

हमारे हरि चलत कहत है दूरि।
मधुबन बसत आस हुती सजनी, अब तौ मरिहैं झूरि॥
कौनैं कह्यौ कौन सुनि आई, किहिं रुख रथ की धूरि।
संगहिं सबै चलौ माधौ के, ना तरु मरहु बिसूरि॥
दच्छिन दिसि इक नगर द्वारिका, सिंधु रह्यौ भरि पूरि।
'सूरदास' अबला क्यौं जीवैं, जात सजीवन मूरि॥ ४२५०॥

॥ ४८६९ ॥

हमतैं कमल नयन भए दूरि।
चलन कहत मधुबनहु तैं सजनी, इन नयनन की मूरि॥
चलत कान्ह सब देखन लागी, उड़त न रथ की धूरि।
'सूरदास' प्रभु उतर न आवै, नयन रहे जल पूरि॥ ४२५१॥

राग धनाश्री ॥ ४८७० ॥

नैना भए अनाथ हमारे।
मदनगुपाल उहाँ तै सजनी, सुनियत दूरि सिधारे॥
वै समुद्र हम मीन बापुरी, कैसैं जीवैं न्यारे।
हम चातक वै जलद स्याम घन, पियति सुधारस प्यारे॥

मथुरा बसत आस दरसन की, जोइ नैन मग हारे।
'सूरदास' हमकौं उलटी विधि, मृतकहुँ तै पुनि मारे॥ ४२५२॥

राग धनाश्री॥ ४८७१॥

अब निज नैन अनाथ भए।
मधुवन तै माधव सखि सुनियत औरौ दूरि गए॥
मथुरा बसत हुती जिय आसा, औं लगतौ व्यौहार।
अब मन भयौ भीम के हाथी, सुनियत अगम अपार॥
सिंधु कूल इक नगर बसायौ, ताहि द्वारिका नाउँ।
यह तन सौंपि 'सूर' के प्रभु कौ, और जनम धरि जाऊँ॥ ४२५३॥

राग धनाश्री॥ ४८७२॥

उती दूर तै को आवै री।
जासौ कहि संदेस पठाऊँ सो कहि कहन कहा पावै री॥
सिंधु कूल इक देस बसत है, देख्यौ सुन्यौ न मन धावै री।
तहँ नवनगर जु रच्यौ नंदसुत, द्वारावति पुरी कहावै री॥
कंचन के बहु भवन मनोहर, रंक तहाँ नहिं तृन छावै री।
ह्वाँ के बासी लोगनि कौ क्यौ, ब्रज कौ बसिबौ मन भावै री॥
बहु विधि करति बिलाप बिरहिनी, बहुत उपायनि चित लावै री।
कहा करौ कहँ जाउँ 'सूर' प्रभु, को हरि पिय पै पहुँचावै री॥ ४२४५॥

राग सारंग॥ ४८७३॥

हौ कैसै कै दरसन पाऊँ।
सुनहु पथिक उहिं देस द्वारिका जौ तुम्हरै सँग जाऊँ॥
बाहर भीर बहुत भूपनि की, बूझत बदन दुराऊँ।
भीतर भीर भोग भामिनि की, तिहि ठाँ काहि पठाऊँ॥
बुधि बल जुक्ति जतन करि उहिं-पुर हरि पिय पै पहुँचाऊँ।
अब बन बसि निसि कुंज रसिक बिनु, कौनै दसा सुनाऊँ॥
श्रम कै 'सूर' जाउँ प्रभु पासहिं, मन मैं भलै मनाऊँ।
नव-किसोर मुख मुरलि बिना इन नैननि कहा दिखाऊँ॥ ४२५५॥

राग नट॥ ४८७४॥

मानौ विधि अब उलटि रची री।
जानति नही सखी काहे तैं, उही न तेज तची री॥
बूडि न मुई नीर नैननि के, प्रेम न प्रजरि पची री।
बिरह अगिनि अरु जल प्रवाह तैं, क्यौ दुहुँ बीच बची री॥
जो कछु सकल लोक की सोभा, लै द्वारिका सची री।
ह्वाँ के बारिधि बड़वानल मैं, रेतनि आनि खची री॥
कहियै संकर्षन के भ्राता, कीरति कित न मची री।
'सूर' स्याममाया जग मोह्यौ, सोइ मुख निरखि नची री॥ ४२५६॥

राग मारू॥ ४८७५॥

नायौ नहिं माई कोउ तौ।
सुनी री सखो संदेसहु दुर्लभ नैन थके, मग जोइतौ॥

मथुरा छाँड़ि निवास सिंधु कियौ, प्रानजिवन धन सोइ तौ।
द्वारावती कठिन अति मारग, क्यौं करि पहुँचै लोइ तौ॥
मिटी मिलन की आस अवधि गई, ब्रजवनिता कहि रोइ तौ।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे मिलन बिनु, तृप्ति कहूँ नहिं होइ तौ॥ ४२५७॥

राग मलार॥ ४८७६॥

तातैं अति मरियत अपसोसनि।
मथुरा हू तैं गए सखी री, अब हरि कारे कोसनि॥
यह अचरज सु बड़ौ मेरैं जिय, यह छाँडनि वह पोषनि।
निपट निकाम जानि हम छाँड़ीं, ज्यौं कमान बिन गोसनि॥
इक हरि के दरसन बिनु मरियत, अरु कुबिजा के ठोसनि।
'सूर' सुजरनि कहा उपजी जो, दूरि होति करि ओसनि॥ ४२५८॥

राग मारू॥ ४८७७॥

जौ पै लै जाइ कोउ मोहिं द्वारिका कैं देस।
संग ताकौ चलौं सजनी, जटाहूँ करि केस॥
बोलि धौं हरवाइ पूछै, आपनैं उनमेष।
जैसैहीं जो कहै कोऊ, बनै तैसै भेष॥
जदपि हम ब्रजनारि, जुवती-जूथ-नाथ, नरेस।
तदपि 'सूर' कुमोदिनी ससि, बढ़ै प्रीति प्रवेस॥ ४२५९॥

राग सारंग॥ ४८७८॥

उघरि आयौ परदेसी कौ नेहु।
तब जु सबै मिलि कान्ह कान्ह करि फूलति हीं, अब लेहु॥
काहे कौ सखि अपनौ सरबस, हाथ पराएँ देहु।
उन जु महा ठग मथुरा छाँड़ी जाइ समद कियौ गेहु॥
कहु अब करौ अगिनि तनु उपजी बाढ्यौ अति संदेहु।
'सूरदास' बिहवल भई गोपी, नैननि बरषत मेहु॥ ४२६०॥

राग मलार॥ ४८७९॥

माई री कैसैं बनै हरि कौ ब्रज आवन।
कहियत है मधुवन तैं सजनी कियौ स्याम कहूँ अनत गवन॥
अगम जु पंथ दूरि दच्छिन दिसि, तहँ सुनियत सखि सिंधु लवन।
अब हरि ह्वाँ परिवार सहित गए, मग मैं मार्‌यौ कालजवन॥
निकट बसत मतिहीन भई हम, मिलिहुँ न आईं सु त्यागि भवन।
'सूरदास' तरसत मन निसि दिन, जदुपति लौं लै जाइ कवन॥ ४२६१॥

सुनियत कहूँ द्वारिका बसाई।
दच्छिन दिसा तीर सागर कैं, कंचन कोट गोमती खाई॥
पंथ न चलै सँदेस न आवै, इती दूरि नर कोउ न जाई।
सत जोजन मथुरा तैं कहियत, यह सुधि एक पथिक पै पाई॥
सब ब्रज दुखी नंद जसुदाहू, इक टक स्याम राम लव लाई।
'सूरदास' प्रभु के दरसन बिन, भई बिदित ब्रज काम दुहाई॥ ४२६२॥

राग मारू ॥ ४८८१ ॥

उडुपति सौं विनवति मृग नयनी।
तुम कहियत उडुराज अमृत मय, तजि स्वभाव कत वरषत वहनी ॥
उमापर्तारिपु अधिक दहत है, हरि-रिपु-प्रीतम सूख निहैनी।
छपा न छीन होति मुनु सजनी, भूमि-घिसन-रिपु कहा दुरैनी ॥
स्याम सँदेस विचार करति हौं, कहाँ रहे हरि छाइ जु छौनी।
'सूर' स्याम विनु भवन भयानक, जोहत रहति गोपाल की औनी ॥४२६३॥

राग केदारौ ॥ ४८८२ ॥

दधिसुत जात हौ उहिं देस।
द्वारिका है स्यामसुदर, सकल भुवन नरेस ॥
परम सीतल अमृतदाता, करहु यह उपदेस।
कमलनैन वियोगिनी कौं, कह्यौ इक संदेस ॥
नंदनंदन जगत वंदन, धरे नटवर भेष।
काज अपनौ सारि स्वामी, रहे जाइ विदेस ॥
भक्तवच्छल विरद तुम्हरौ, मोहि यह अंदेस।
एक वेर मिलौ कृपा करि, कहै 'सूर' सुदेस ॥ ४२६४ ॥

राग मलार ॥ ४८८३ ॥

वीर वटाऊ पाती लीजौ।
जब तुम जाहु द्वारिका नगरी, हमरे रसाल गुपालहि दीजौ ॥
रंगभूमि रमनीक मधुपुरी, रजधानी व्रज की सुधि कीजौ।
छार समुद्र छाँड़ि किन आवत, निर्मल जल जमुना कौ पीजौ ॥
या गोकुल की सकल ग्वालिनी, देति असीस वहुत जुग जीजौ।
'सूरदास' प्रभु हमरे कोतै, नंदनँदन के पाइँ परीजौ ॥ ४२६५ ॥

राग मलार ॥ ४८८४ ॥

स्याम विनु भई सरद निसि भारी।
हमैं छाँड़ि प्रभु गए द्वारिका, व्रज की भूमि विसारी ॥
निरमल जल जमुना कौ छाँड्यौ, सेव समुद्र जल खारी।
कहियौ जाइ पथिक जैसैं आवैं, चरननि की वलिहारी ॥
अवला कहा जोग की जानै, व्रजवासिनी जु विचारी।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस कौं, रटति राधिका प्यारी ॥ ४२६६ ॥

राग मलार ॥ ४८८५ ॥

व्रज पर मँडर करत है काम।
कहियौ पथिक स्याम सौं राखैं, आइ आपनौ धाम ॥
जलद कमान वारि दारू भरि, तड़ित पलीता देत।
गरजन अरु तड़पन मनु गोला, पहरक मैं गढ लेत ॥
लेहु लेहु सव करत वंदि, जन कोकिल चातक मोर।
दादुर निकर करत जो टोवा, पल पल पै चहुँ ओर ॥
ऊधौ मधुप जमूस देखि गयौ, टूट्यौ धीरज पानि।
राखिवै होइ तौ आनि राखियै, 'सूर' लोक निज जानि ॥ ४२६७ ॥

राग मलार ॥ ४८८६ ॥

ब्रज पर बहुरौ लागे गाजन।
ज्यौं क्यौंहू पति जात बड़े की, मुख न दिखावत लाजन॥
चहुँ दिसि तैं दल बादल उमड़े, सूने लागे बाजन।
ब्रज के लोग कान्ह बल बिनु अब, जित कित लागे भाजन॥
आपुन जाइ द्वारिका छाये, लागे स्याम बिराजन।
'सूरदास' गोपी क्यौं जीवे, बिछुरे हरि के साजन॥ ४२६८॥

राग मारू ॥ ४८८७ ॥

अब मोहिं निसि देखत डर लागै।
बार बार अकुलाइ देह तैं, निकसि निकसि मन भागै॥
प्राची दिसा देखि पूरन ससि ह्वै आयौ तन तातौ।
मानौ मदन बदन बिरहिनि पै, करि लीन्हौ रिस रातौ॥
भृकुटी कुटिल कलक चाप मनु, अति रिस सौं सर साँध्यौ।
चहुँधा किरनि पसारि फाँसि लै, चाहत बिरहिनि बाँध्यौ॥
सुनि सठ सोइ प्रानपति मेरौ, जाकौ जस जग जानै।
'सूर' सिंधु बूड़त तैं राख्यौ, ताहू कृतहिं न मानै॥ ४२६९॥

राग धनाश्री ॥ ४८८८ ॥ रुक्मिनीवचन श्रीकृष्ण के प्रति

रुकमिनि बूझति है गोपालहिं।
कहौ बात अपने गोकुल की कितिक प्रीति ब्रजवालहिं॥
तब तुम गाइ चरावन जाते, उर धरते बनमालहिं।
कहा देखि रीझे राधा सौं, सुंदर नैन बिसालहिं॥
इतनी सुनत नैन भरि आए, प्रेम बिवस नँदलालहिं।
'सूरदास' प्रभु रहे मौन ह्वै, घोप बात जनि चालहिं॥ ४२७०॥

राग धनाश्री ॥ ४८८९ ॥

रुकमिनि मोहिं निमेप न बिसरत, वे ब्रजवासी लोग।
हम उनसौं कछु भली न कीन्हीं, निसि दिन मरत बियोग॥
जदपि कनक मनि रची द्वारिका, बिपय सकल संभोग।
तद्यपि मन जु हरत बंसी बट, ललिता कै संजोग॥
मैं ऊधौ पठयौ गोपिनि पै, दैन सँदेसौ जोग।
'सूरदास' देखत उनकी गति, किहिं उपदेसै सोग॥ ४२७१॥

राग मलार ॥ ४८९० ॥

रुकमिनि मोहिं ब्रज बिसरत नाहीं।
वह क्रीड़ा वह केलि जमुन तट, सघन कदम की छाहीं॥
गोप बधुनि की भुजा कंध धरि, बिहरत कुंजनि माहीं।
और बिनोद कहाँ लगि बरनौं, बरनत बरनि न जाहीं॥
जद्यपि सुखनिधान द्वारावति, गोकुल के सम नाहीं।
'सूरदास' घन स्याम मनोहर, सुमिरि सुमिरि पछताहीं॥ ४२७२॥

राग धनाश्री ।। ४८९१ ।।

एकमिनि चलौ जन्मभूमि जाहिं ।
जद्यपि तुम्हरौ विभव द्वारिका, मथुरा है सम नाहिं ।।
जमुना के तट गाइ चरावत, अमृत जल अँचवाहिं ।
कुंज केलि अरु भुजा कंध धरि, सीतल द्रुम की छाँहिं ।।
सुरस सुगंध मंद मलयानिल, विहरत कुंजन माहिं ।
जो क्रीड़ा श्री वृंदावन मैं, तिहूँ लोक मैं नाहिं ।।
सुरभी ग्वाल नंद अरु जसुमति, मम चित तैं न टराहिं ।
'सूरदास' प्रभु चतुर सिरोमनि, तिनकी सेव कराहिं ।। ४२७३ ।।

।। ४८९२ ।।

सुनि सतभामा सौंह तिहारी ।
जब जब मोहि घोष सुधि आवत, नैननि बहत पनारी ।।
वै जमुना वै सखा हमारे, नित नव केलि विहारी ।
वृंदावन की गुल्म लता हैं, मन मधुकर की प्यारी ।।
वीथी वृच्छ गोप के मंदिर, उपमा कहौं कहा री ।
मानौं अधर सरोवर वासे, जमुदा सी महतारी ।।
माखन खान फेनु द्रुहि पीवन ओदन, सुपति विहारी ।
'सूरदास' प्रभु उनहि मिले ते, मैं सुरपुरी बिसारी ।। ४२७४ ।।

राग सारंग ।। ४८९३ ।। श्रीकृष्ण का कुरुक्षेत्र आगमन

ब्रज वासिनि कौ हेत, हृदय मैं राखि मुरारी ।
सब जादव सौं कह्यौ, बैठि कै सभा मझारी ।।
बड़ौ परब रवि ग्रहन, कहा कहौं तासु बड़ाई ।
चलौ सकल कुरखेत, तहाँ मिलि न्हैयै जाई ।।
तात, मात निज नारि लिए, हरि जू सब संगा ।
चले नगर के लोग, साजि रथ तरल तुरंगा ।।
कुरुच्छेत्र मैं आइ, दियौ इक दूत पठाई ।
नंद जसोमति गोपि ग्वाल सब 'सूर' बुलाई ।। ४२७५ ।।

राग मलार ।। ४८९४ ।।

वायस गहगहात सुनि सुंदरि, बानी बिमल पूर्व दिसि बोली ।
आजु मिलावा होइ स्याम कौ, तू सुनि सखी राधिका भोली ।।
कुच भुज नैन अधर फरकत है, बिनहि बात अचल ध्वज डोली ।
सोच निवारि करौ मन आनँद, मानौ भाग दसा विधि खोली ।।
सुनत बात सजनी के मुख की, पुलकित प्रेम तरकि गई चोली ।
'सूरदास' अभिलाष नंदसुत, हरषी सुभग नारि अनमोली ।। ४२७६ ।।

राग केदारौ ।। ४८९५ ।।

माधौ आवनहार भए ।
अंचल उड़ि मन होत गहगहौ, फरकत नैन खए ।।
बैई देखि सोचि जिय अपनै, परगट सगुन दए ।
रितु बसंत फूली बन बेली, उलटे पान नए ।।

अपनी अपनी अवधि जानि कै, सवनि सिगार ठए।
'सूरदास' प्रभु मिलौ कृपा करि, अवधि आस पुजए ॥ ४२७७ ॥

राज धनाश्री ॥ ४८९६ ॥

हौं इहाँ तेरेहि कारन आयौ।
तेरी सौ सुनि जननि जसोदा, मोहि गोपाल पठायौ ॥
कहा भयौ जो लोग कहत हैं, देवकि माता जायौ।
खान पान परिधान सवै सुख, तैंहीं लाड़ लड़ायौ ॥
इतौ हमारौ राज द्वारिका, मो जी कछू न भायौ।
जव जव सुरति होति उहि हित की, विछुरि वच्छ ज्यौं धायौ ॥
अव हरि कुरुच्छेत्र मैं आए, सो मैं तुम्हें सुनायौ।
सव कुल सहित नंद 'सूरज' प्रभु, हित करि उहाँ वुलायौ ॥ ४२७८ ॥

राग सारंग ॥ ४८९७ ॥ राधिका वचन सखी प्रति

राधा नैन नीर भरि आए।
कव धौं मिलै स्याम सुदर सखि, जदपि निकट है आए ॥
कहा करौ किहि भाँति जाहुँ अव पंख नही तन पाए।
'सूर' स्याम सुंदर घन दरसै, तन के ताप नसाए ॥ ४२७९ ॥

राग केदारौ ॥ ४८९८ ॥

अव हरि आइहै जनि सोचै।
सुनु विधुमुखी वारि नैननि तैं, अव तू काहैं मोचै ॥
लै लेखनि मसि लिखि अपने, संदेसहिं छाँड़ि सँकोचै।
'सूर' सु विरह जनाउ करत कत, प्रवल मदन रिपु पोचै ॥ ४२८० ॥

राग सारंग ॥ ४८९९ ॥ श्रीकृष्ण के प्रति गोपी संदेश

पथिक, कहियौ हरि सौं यह वात।
भक्त वछल है विरद तुम्हारौ, हम सव किए सनाथ ॥
प्रान हमारे संग तिहारै, हमहूँ है अव आवत।
'सूर' स्याम सौं कहत सँदेसौ, नैनन नीर वहावत ॥ ४२८१ ॥

राग सारंग ॥ ४९०० ॥ कुरुक्षेत्र में श्रीकृष्ण मिलन

नंद जसोदा सव व्रजवासी।
अपने अपने सकट साजिकै, मिलन चले अविनासी ॥
कोउ गावत कोउ वेनु वजावत, कोउ उतावल धावत।
हरि दरसन की आसा कारन, विविध मुदित सव आवत ॥
दरसन कियौ आइ हरि जू कौ, कहत स्वप्न कै साँचौ।
प्रेम मगन कछु सुधि न रही अँग, रहे स्याम रँग राँची ॥
जासौं जैसी भाँति चाहियै, ताहि मिले त्यौं धाइ।
देस-देस के नृपति देखि यह, प्रीति रहे अरगाइ ॥
उमँग्यौ प्रेम समुद्र दुहूँ दिसि, परिमिति कही न जाइ।
'सूरदास' यह सुख सो जानै, जाके हृदय समाइ ॥ ४२८२ ॥

राग कान्हरौ ॥ ४६०१ ॥

तेरी जीवन मूरि मिलहि किन माई।
महाराज जदुनाथ कहावत, तवहिं हुते सिसु कुँवर कन्हाई ॥
पानि परे भुज धरे कमल मुख, पेखत पूरव कथा चलाई।
परम उदार पानि अवलोकत, हीन जानि कछु कहत न जाई ॥
फिरि फिरि अव सनमुख ह्वै चितवति, प्रीति सकुच जानी जदुराई।
अव हँसि भेंटहु कहि मोहि निज जन, वाल तिहारी नंद दुहाई ॥
रोम पुलक गद गद तन तीछन, जलधारा नैननि वरपाई।
मिले सु तात, मात, वाधव सव, कुसल कुसल करि प्रश्न चलाई ॥
सासन देइ वहुत करी विनती, सुत धोखै तव वुद्धि हिराई।
'सूरदास' प्रभु कृपा करी अव, चितहिं धरे पुनि करी वड़ाई ॥४२८३॥

राग मलार ॥ ४६०२ ॥

माधव या लगि है जग जीजत।
जातै हरि सौ प्रेम पुरातन, वहुरि नयौ करि लीजत ॥
कहँ ह्वाँ तुम जदुनाथ सिंधु तट, कहँ हम गोकुल वासी।
वह वियोग, यह मिलन कहाँ अव, काल चाल औरासी ॥
कहँ रवि राहु कहाँ यह अवसर, विधि सजोग वनायौ।
उहिं उपकार आजु इन नैननि, हरि दरसन सचुपायौ ॥
तव अरु अव यह कठिन परम अति, निमिपहुँ पीर न जानी।
'सूरदास' प्रभु जानि आपने, सवहिनि सौं रुचि मानी ॥ ४२८४ ॥

राग कान्हरौ ॥ ४६०३ ॥ रुक्मिणी का प्रश्न

हरि सौ वूझति रुकमिनि इनमैं को वृपभानु किसोरी।
वारक हमै दिखावहु अपने, वालापन की जोरी ॥
जाकौ हेत निरंतर लीन्हे, डोलत व्रज की खोरी।
अति आतुर ह्वै गाइ दुहावन, जाते पर घर चोरी ॥
रचते सेज स्वकर सुमननि की, नव पल्लव पुट तोरी।
विन देखै ताके मन तरसै, छिन वीतै जुग कोरी ॥
'सूर' सोच सुख करि भरि लोचन, अंतर प्रीति न थोरी।
सिथिल गात मुख वचन फुरत नहि, ह्वै जु गई मति भोरी ॥ ४२८५ ॥

राग धनाश्री ॥ ४६०४ ॥

वूझति है रुकुमिनि पिय इनमैं को वृपभानु किसोरी।
नैकु हमै दिखरावहु अपनी वालापन की जोरी ॥
परम चतुर जिन कीन्हे मोहन, अल्प वैस ही थोरी।
वारे तै जिहि यहै पढायौ, वुधि वल कल विधि चोरी ॥
जाके गुन गनि ग्रंथित माला, कवहुँ न उर तै छोरी।
मनसा सुमिरन, रूप ध्यान उर, दृष्टि न इत उर मोरी ॥
वह लखि जुवति वृंद मैं ठाढ़ी, नील वसन तन गोरी।
'सूरदास' मेरौ मन वाकी, चितवनि वंक हरयौ री ॥ ४२८६ ॥

राग मारू ॥ ४६०५ ॥

गोविंद परम कृपा मैं जानी।
निगम जो कहत दयालु सिरोमनि, सत्य सोइ बिधि बानी ॥
अब ए स्रवन बरन करि स्वारथ, तुम जु दरस सुख दीन्हौं।
या फल जोग सुकृत नहि समुझत, दीन देखि हित कीन्हौ ॥
यह दिन धन्य धन्य जीवन जस, धन्य भाग प्रभु पाए।
सिव मुनि मन दुर्लभ चरनांबुज, जनहिं प्रगट परसाए ॥
हरषित स्वजन सखा प्रिय बालक, कृष्न मिलन जिए भाए।
'सूरजदास' सकल लोचन जनु, ससि चकोर कुल पाए ॥ ४२८७ ॥

राग सारंग ॥ ४६०६ ॥

हरि जू इते दिन कहाँ लगाए।
तबहि अवधि मै कहत न समुझी, गनत अचानक आए ॥
भली करी जु बहुरि इन नैननि, सुदर दरस दिखाए।
जानी कृपा राज काजहु हम, निमिष नही बिसराए ॥
बिरहिनि बिकल बिलोकि 'सूर' प्रभु, धाइ हूवै करि आए।
कछु इक सारथि सौ कहि पठयौ, रथ के तुरँग छुड़ाए ॥ ४२८८ ॥

राग मलार ॥ ४६०७ ॥

हरि जू वै सुख बहुरि कहाँ।
जदपि नैन निरखत वह मूरति, फिरि मन जात तहाँ ॥
मुख मुरली सिर मोर पखौवा, गर घुघचिनि कौ हार।
आगै धेनु रेनु तन मडित, तिरछी चितवनि चार ॥
राति दिवस सब सखा लिए सँग, हँसि मिलि खेलत खात।
'सूरदास' प्रभु इत उत चितवत, कहि न सकत कछु बात ॥ ४२८९ ॥

राग सारंग ॥ ४६०८ ॥

हौ तौ आई मिलन गुपालहि।
सिधु धरनि यह जुगुति न तेरी, दुख दीन्हौ ब्रजबालहिं ॥
कहा करौ तन स्याम पीट पट, दुइ तै भए भुज चारि।
वह सुख कहाँ जु तब मन होतौ, भेटत स्याम मुरारि ॥
सतत 'सूर' रहत पति संगम, सब जानति रुचि जी की।
तू क्यौ नही धरति या भेषहि, जु पै मुक्ति अति नीकी ॥ ४२९० ॥

राग धनाश्री ॥ ४६०९ ॥

रुकमिनि राधा ऐसै भेटी।
जैसै बहुत दिनन की बिछुरी, एक बाप की बेटी ॥
एक सुभाव एक वय दोऊ, दोऊ हरि कौ प्यारी।
एक प्रान मन एक दुहुनि कौ, तन करि दीसति न्यारी ॥
निज मदिर लै गई रुकमिनी, पहुनाई बिधि ठानी।
'सूरदास' प्रभु तहँ पग धारे, जहँ दोऊ ठकुरानी ॥ ४२९१ ॥

राग धनाश्री ॥ ४६१० ॥

राधा माधव भेंट भई।
राधा माधव, माधव राधा, कीट भृंग गति ह्वै जु गई॥
माधव राधा के रँग राँचे, राधा माधव रंग रई।
माधव राधा प्रीति निरंतर, रसना करि सो कहि न गई॥
बिहँसि कह्यौ हम तुम नहिं अंतर, यह कहिकै उन ब्रज पठई।
'सूरदास' प्रभु राधा माधव, ब्रज विहार नित नई नई॥ ४२६२ ॥

राग धनाश्री ॥ ४६११ ॥

करत कछु नाही आजु बनी।
हरि आए हौ रही ठगी सी, जैसैं चित्र धनी॥
आसन हरषि हृदय नहि दीन्हौ, कमल कुटी अपनी।
न्यौछावर उर, अरघ न नैननि, जलधारा जु बनी॥
कंचुकि तैं कुच कलस प्रगट ह्वै, टूटि न तरकि तनी।
अब उपजी अति लाज मनहिं मन, समुझत निज करनी॥
मुख देखत न्यारी सी रहि गई, बिनु बुधि मति सजनी।
तदपि 'सूर' मेरी यह जडता, मंगल माहिं गनी॥ ४२६३ ॥

राग सारंग ॥ ४६१२ ॥ श्रीकृष्ण वचन ब्रजवासियो के प्रति

ब्रजवासिनि सौ सबनि तैं ब्रज हित मेरैं।
तुमसौं नाही दूरि रहत हौं निपटहि नैरैं॥
भजैं मोहिं जो कोइ, भजौं मैं तेहिं ता भाई।
मुकुर माहिं ज्यौं रूप, आपनें सम दरसाई॥
यह कहि कै समदे सकल, नैन रहे जल छाइ।
'सूर' स्याम कौ प्रेम कछु, मो पै कह्यौ न जाइ॥ ४२६४ ॥

राग सारंग ॥ ४६१३ ॥

सबहिनि तैं हित है जन मेरौ।
जनम जनम सुनि सुबल सुदामा, निबहौ यह प्रन बेरौ॥
ब्रह्मादिक इंद्रादिक तेऊ, जानत बल सब केरौ।
एकहि साँस उसास त्रास उडि, चलते तजि निज खेरौ॥
कहा भयौ जो देस द्वारिका, कीन्हौ दूरि बसेरौ।
आपुन ही या ब्रज के कारन, करिहौ फिरि फिरि फेरौ॥
इहाँ उहाँ हम फिरत साधु हित, करत असाधु अहेरौ।
'सूर' हृदय तैं टरत न गोकुल, अंग छुअत हौ तेरौ॥ ४२६५ ॥

राग सारंग ॥ ४६१४ ॥ ब्रजवासी वचन

हम तौ इतनैं हीं सचु पायौ।
सुंदर स्याम कमल-दल-लोचन, बहुरौ दरस दिखायौ॥
कहा भयौ जो लोग कहत है, कान्ह द्वारिका छायौ।
सुनिकै बिरह दसा गोकुल की, अति आतुर ह्वै धायौ॥
रजक धेनु गज कंस मारि कै, कीन्हौ जन कौ भायौ।
महाराज ह्वै मातु पिता मिलि, तऊ न ब्रज बिसरायौ॥

गोपी गोपऽरु नंद चले मिलि, प्रेम समुद्र चढायौ।
अपने वाल गुपाल निरखि मुख, नैननि नीर बहायौ॥
जद्यपि हम सकुचे जिय अपनैं, हरि हित अधिक जनायौ।
वैसेइ 'सूर' बहुरि नँदनंदन, घर घर माखन खायौ॥ ४२९६॥

॥ ४६१५॥

हरि हरि हरि सुमिरौ दिन रात। नातरु जन्म अकारथ जात॥
सौ बातन की एकै बात। हरि हरि हरि सुमिरौ दिन रात॥
हरि कुरुखेत अन्हान सिधाए। तब सब भूपति दरसन आए॥
हरि तिन सबकौ आदर कियौ। भयौ संतुष्ट सबनि कौ हियौ॥
तब भूपति हरि कौं सिर नाइ। करन लगे अस्तुति या भाइ॥
परम हंस तुम सबके ईस। वचन तुम्हारे सुनि जगदीस॥
तुम अच्युत अविगत अविनासी। परमानंद सकल सुखरासी॥
तुम तन धारि हरयौ भुव भार। नमो नमो तुम्हें वारंवार॥
पुनि रानी रानिनि पै आईं। द्रुपदसुता तब बात चलाई॥
ज्यौं ज्यौं भयौ तुम्हारौ ब्याह। कहौ सुनन कौ मोहि उत्साह॥
कह्यौ सबनि हरि अज अविनासी। भक्तबछल सब जगत निवासी॥
नहि हम गुन नहिं सुंदरताई। भक्त जानिकै सब अपनाई॥
ब्याह सबनि कौ ज्यौं ज्यौं भयौ। बहुरौ तिन त्यौं हीं त्यौं कह्यौ॥
द्रुपदसुता सुनि मन हरपाई। कह्यौ धन्य तुम धनि जदुराई॥
धन्य सकल पटरानी रानी। जिन वर पायौ सारँग पानी॥
धन्य जो हरि-गुन-अह-निसि गावै। 'सूरदास' तिहि कौ रज पावै॥
॥ ४२९७॥

राग बिलावल ॥ ४६१६॥ ऋषिस्तुति

हरि-हरि-हरि सुमिरौ सब कोइ। बिनु हरि सुमिरन मुक्ति न होइ॥
श्रीशुक, व्यास कह्यौ जा भाइ। सोइ अब कहौ सुनौ चित लाइ॥
सूरज ग्रहन पर्व हरि जान। कुरुक्षेत्र मे आए न्हान॥
तहँ ऋषि हरि दरसन हित गए। हरि आगे ह्वै कै सब लए॥
आसन दै पूजाविधि करी। हाथ-जोरि विनती उच्चरी॥
दरस तुम्हारे देवन दुरलभ। हमकौ भयौ सो अतिही सुरलभ॥
यौं कहि पुनि लोगन समुझायौ। जैसैं वेद पुराननि गायौ॥
हरिजन कौं पूजै हरि जान। ताकौ होइ तुरत कल्यान॥
सूर पूजा बहु बिधि सौ कीजै। तीरथ जाइ दान बहु दीजै॥
यह सब किए होइ फल जोइ। सत-संग सो छिन मै होइ॥
यह सुनि कै ऋषि रहे लजाइ। पुनि बोले हरि सौ या भाइ॥
तुम सबके गुरु सबके स्वामी। तुम सबहिनि के अंतरजामी॥
तुम्है ,वेद ब्रह्मन्य बखानत। तातै हमरी अस्तुति ठानत॥
हम सेवक तुम जगत अधार। नमो-नमो तुम्है बारबार॥
तुम परब्रह्म जगत करतार। नर-तनु धरयौ हरन भुव-भार॥
सुर पूजा अरु तीर्थ बतावत। लोगनि की मति कौ भरमावत॥

तुम निज रूप इहि भाँति छिपायौ। काठ माँझ ज्यौं अगिनि दुरायौ॥
वसुदेव तुमकौ जानत नाहि। और लोग वपुरे किहि माहि॥
कोउ पिता पति कोऊ जानति। कोऊ मत्रु मित्र करि मानत॥
सर्व असँग तुम सर्व अधार। तुम्हें भजे सो उतरे पार॥
जैसैं नींद माहिं कोउ होइ। वह विधि सपनौ पावै सोइ॥
पै तिहिं उहाँ न कछू सँभार। किहि देखत को देखनहार॥
यौं जे रहे विषय-रस भोइ। तिनकी बुद्धि सुद्ध नहि होइ॥
जापर कृपा तुम्हारी होइ। रूप तुम्हारौ जानै सोइ॥
घट घट माहि तुम्हारौ वास। सर्व ठौर ज्यौं दीप-प्रकास॥
इहि विधि तुमको जानै जोइ। भक्तऽरु ज्ञानी कहिऐ सोइ॥
नाथ कृपा अव हम पर कीजै। भक्ति आपनी हमको दीजै॥
प्रेम भक्ति विनु कृपा न होइ। सर्व शास्त्र हम देख्यौ जोइ॥
तपसी तुमकौ तप करि पावै। मुनि भागवत गृही गुन गावै॥
कर्म जोग करि सेवत जोइ। ज्यौं सेवै त्यौं ही गति होइ॥
ऋषि इहि विधि हरि के गुन गाइ। कह्यौ होइ आज्ञा जदुराइ॥
हरि तिनकी पुनि पूजा करी। कीरति सकल जगत विस्तरी॥
वेद, पुरान सवनि कौ सार। व्यास कह्यौ भागवत विचार॥
विनु हरि नाम नही उद्धार। 'सूर' जानि यह भज मुरार॥४२६८॥

राग विलावल ॥ ४६१७ ॥ देवकीपुत्र आनयन

श्री गुपाल तुम कहौ सो होइ।
तुमही कर्ता तुमही हर्ता, तुम तै और न कोइ॥
अवलौ मैं तुमकौ नहि जान्यौ, पुत्र भाव करि मान्यौ।
तुम हौ देव सकल देवनि के, अव तुमकौ पहिचान्यौ॥
गुरु सुत आदि दिए तुम जैसैं, कृपा करौ जदुराई।
मम सुतहू जे कंस सँहारे, ते प्रभु देहु जिवाई॥
मेरै जिय यह बड़ी लालसा, देखौं नैननि जोइ।
दूध पिवाइ हृदै सौ ल्यावौ, पाछै होइ सु होइ॥
यह सुनि हरि पाताल सिधारे, जहाँ हुते वलि राइ।
करि प्रनाम वैठारि सिंहासन, हित करि धोए पाँइ॥
तासौ कह्यौ देवकी के सुत, पट्ठ कंस जे मारे।
नैकु मँगाइ देह ते हमकौं, है वे लोक तिहारे॥
तहँ तै आनि दिये हरि वालक, माता लाइ लडाए।
'सूरदास' प्रभु दरस-परस करि, ते वैकुंठ सिधाये॥ ४२६९॥

राग विलावल ॥ ४६१८ ॥ वेदस्तुति

हरि हरि हरि हरि सुमिरन करौ। हरि चरनारविंद उर धरौ॥
हरि के रूप रेख नहिं राजा। अरु हरिसम दूतिया न विराजा॥
अलख रूप कछु कह्यौ न जाइ। वेदनि कछु वेदोक्त वताइ॥
हरि ज कै हिरदै यह आई। देउँ सवनि यह रूप दिखाई॥
तीन लोक हरि करि विस्तार। अपनी जोति कियौ उजियार॥

जैसैं कोऊ गृह सँवारि। दीपक वारि करैं उजियार॥
त्यौं हरि जोति अपनी प्रगटाई। घट घट मैं सोई दरसाई॥
तीनिहु लोक सगुन तन जानौं। जोति सरूप आतमा मानौं॥
स्वासा तासु भए स्रुति चार। करैं सो अस्तुति या परकार॥
नाथ तुम्हारी जोति अभास। करति सकल जग मैं परकास॥
थावर जगम जहँ लगि भए। जोति तुम्हारी चेतन किए॥
तुम सब ठोर सबनि ते न्यारे। को लखि सकै चरित्र तुम्हारे॥
स्वयं प्रकास तुम साक्षी सदा। जीव कर्म करि बधन बँधा॥
सर्वव्यापी तुम सब ठाहर। तुमहिं दूरि जानत नर बाहर॥
तुम प्रभु सबकै अतरजामी। बिसरि रह्यौ जिव तुमकौ स्वामी॥
तुम्हरी माया जग उपजाया। जैसे कौ तैसे मग लाया॥
जुग परमान कियौ ब्यौहार। तुम्हरी लीला अगम अपार॥
अद्‌भुत सगुन चरित्र तुम्हारे। जे करि कै भू भार उतारे॥
तिनकौ समुझि सकत नहिं कोइ। निरगुन रूप लखै क्यौ सोइ॥
नर तन भक्ति तुम्हारी होइ। ज्यौ तन मै जिव आश्रय सोइ॥
भक्ति करै सो उतरै पार। नमो नमो तुम्है बारंबार॥
सुक जैसी विधि अस्तुति गाई। तैसैं ही मै कहि समुझाई॥
जो यह अस्तुति सुनै सुनावै। 'सूर' सु ज्ञान भक्ति को पावै॥ ४३००॥

राग बिलावल॥ ४९१९॥

नमो नमस्ते बारबार। मधुसूदन गोविंद मुरार॥
माया मोह लोभ अरु मान। ये सब नर कौ फाँस समान॥
काल सदा सर साँधे फिरै। कैसैं नर तव सुमिरन करै॥
तुम निरगुन अद्वै निरँकार। सुर अरु असुर रहे पचिहार॥
तुम्हरौ मरम न जानै सार। नर बपुरौ क्यौ करै विचार।
अरुन असित सित पीतअनुहार। करत जगत मैं तुम अवतार॥
सो जग क्यौ मिथ्या कहि जाइ। जहाँ तरै तुम्हरे गुन गाइ॥
प्रेम भक्ति बिनु मुक्ति न होइ। नाथ कृपा करि दीजै सोइ॥
और सकल हम देख्यौ जोइ। तुम्हरी कृपा होइ सो होइ॥
वह तन है प्रभु जैसैं ग्राम। जामै सब्दादिक बिस्राम॥
अधिष्टात्र तुम ही भगवान। जान्यौ जात न तुम्हरौ स्थान॥
तुम स्वासा तै पुहमी नाथ। स्वास रूप हम लख्यौ न जात॥
जगत पिता तुमही हौ ईस। यातैं हम बिनवत जगदीस॥
तुम सरि दुनिया और न आहि। पटतर देहिं नाथ हम काहि॥
सुत जैसैं वेदस्तुति गाई। तैसैं ही मैं कहि समुझाई॥
'सूर' कह्यौ श्रीमुख उच्चार। कहै सुनै सो तरे भाव पार॥ ४३०१॥

राग धनाश्री॥ ४९२०॥ नारदस्तुति

प्रभु तुव मर्म समुझि नहिं परे।
जग सिरजत पालत संहारत, पुनि क्यौ बहुरि करै॥
ज्यौ पानी मैं होत बुदबुदा, पुनि ता माहिं समाइ।
त्यौंही सब जग प्रगटत तुम तै, पुनि तुम माहिं बिलाइ॥

माया जलधि अगाध महाप्रभु, तरि न सकै तिहिं कोइ।
नाम जहाज चढ़ै जो कोऊ, तुव पद पहुँचै सोइ ।।
पापी नर लोहे जिमि प्रभु जू, नाही तासु निबाह।
काठ उतारत पार लोह ज्यौं, नाम तुम्हारौ ताह ।।
पारस परसि होत ज्यौ कंचन, लोहपनौ मिटि जाइ।
त्यौ अज्ञानी ज्ञानहि पावत, नाम तुम्हारौ गाइ ।।
अमर होत ज्यौ ससय नासे, रहत सदा सुख पाइ।
यातै होत अधिक सुख भगतनि, चरनकमल चित लाइ ।।
थावर जंगम सब तुम सुमिरत, सनक सनदन ताही।
ब्रह्मा सिव अस्तुति न सकै करि, मै बपुरा केहि माही ।।
जोग ध्यान करि देखत जोगी, भक्त सदा मोहि प्यारौ।
व्रज वनिता भजियौ मोहि नारद, मैं तिन पार उतारौ ।।
नारद ज्यौ हरि अस्तुति कीन्ही, सुक त्यौ कहि समुझाई।
'सूरज' प्रेम भक्ति की महिमा, श्रीपति श्रीमुख गाई ।। ४३०२ ।।

रागविलावल ।। ४६३१ ।। सुभद्राविवाह

भक्तवछल श्री जादव राइ। भक्त काज हरि करत सदाइ ।।
अर्जुन तीरथ करन सिधाए। फिरत फिरत द्वारावति आए ।।
सुन्यौ विचार करत बल येइ। दुर्जोधनहि सुभद्रा देइ ।।
तव अर्जुन के मन यह आइ। याकौ मैं लै जाउँ दुराइ ।।
भेस तापसी कौ तिन गह्यौ। चारि मास द्वारावति रह्यौ ।।
वलदेव ताकौ नेवति वुलायौ। भोजन हेतु सो वलगृह आयौ ।।
लख्यौ सुभद्रा इहि सन्यासी। राजकुवर कोउ भेप उदासी ।।
मेरे मन मे यह उत्साह। मेरौ या सँग होइ विवाह ।।
इक दिन सो हरि मंदिर गई। तहाँ भेट पारथ सो भई ।।
देखि ताहि रथ ठाढ़ौ कियौ। हरि दुहुँ कौ हिरदै लखि लियौ ।।
धनुप वान अपने तव दए। अर्जुन सावधान ह्वै लए ।।
पारथ लै सो रथहि परायौ। रथ के तुरँगनि वेगि चलायौ ।।
यह सुनि कै हलधर उठि धाए। तव हरि अर्जुन नाम सुनाए ।।
वल कह्यौ तुम मन ऐसी आई। तौ तुम क्यौ कीनी न सगाई ।।
हरि कह्यौ अवहु वुलावहु ताहि। भली भाँति सौ करै विवाह ।।
तव वल पारथ तुरत वुलायौ। सोधि महूरत लगन धरायौ ।।
करि विवाह अर्जुन घर आए। 'सूरदास' जन मंगल गाए ।।४३०३।।

राग नट ।। ४६२२ ।।

विनती करत गुविंद गुसाईं।
दै सब सौज अनंत लोकपति, निपट रंक की नाईं ।।
धरि धन, धाम सजन के आगै, स्याम सकुचि कर जोरे।
टहल जोग यह कुँवरि सुभद्रा, तुम सम नाही कारे ।।
इतनी सुनत पाँडुनंदन कह्यौ, यहै वचन प्रभु दीजै।
'सूरज' दीनवंधु अब इहिं कुल, कन्या जन्म न कीजै ।। ४३०४ ।।

॥ ४६२३ ॥ जनक श्रुतदेव और श्रीकृष्ण मिलाप

हरि हरि हरि सुमिरहु सब कोइ । राव, रंक हरि गिनत न कोइ ॥
जो सुमिरै ताकी गति होइ । हरि हरि हरि सुमिरहु सब कोइ ॥
श्रुतदेव ब्राह्मन सुमिरयौ हरी । ताकी भक्ति हृदै हरि धरी ॥
राज जनक हरि सुमिरन कीनौ । हरि जू सोउ हृदै धरि लीनौ ॥
तब हरि रिषि बहुतक सँग लए । तिनके देस प्रीति बस गए ॥
द्वै स्वरूप धरि दुहुँ कौं मिले । तोपि तिन्है पुनि निजपुर चले ॥
हरि जू कौ यह सहज सुभाउ । रंक होइ भावै कोउ राउ ॥
जो हित करै ताहि हित करै । 'सूरज' प्रभु नहि अंतर धरै ॥४३०५॥

राग कान्हरौ ॥ ४६२४ ॥

घरही बैठे दोऊ दास ।
रिधि सिधि मुक्ति अभय पद दायक, आइ मिले प्रभु हरि अनयास ॥
आए सुने स्याम उपवन मै, भेट लई भुज परम सुवास ।
चर्चित गात चंद्रमुख चितवत, उर सरवर भयौ कमल बिगास ॥
भूपति चँवर विप्र कर बस्तर, करत बाउ अति अंग हुलास ।
आनँद उमँगि चरयौ नैननिजल, सुरत देव, द्विज, नृप बहु लास ॥
जाकौ ध्यान धरत मुनि संकर, सीस जटा दिग अंबर तास ।
काम दहन गिरि कंदर आसन, वा मूरति को तऊ पियास ॥
भक्तबछलता प्रगट करी है, भयौ विप्र घर कर कलि ग्रास ।
'सूरदास' स्वामी सुमिरन बस, अछत निरंजन सेवा पास ॥४३०६॥

राग धनाश्री ॥ ४६२५ ॥ भस्मासुर बध

तेऊ चाहत कृपा तुम्हारी ।
जिनकै बस अनमिष अनेक गन, अनुचर आज्ञाकारी ॥
महादेव बर दियौ असुर कौ, जब उन निज तनु जारयौ ।
सिव कै सीस धरन लाग्यौ कर, सिव बैकुंठ सिधारयौ ॥
विप्ररूप हरि कह्यौ असुर सौ, यह बर सत्य न होइ ।
सिर अपने पर धरौ असुर कर, भस्म होइ गयौ सोइ ॥
सिव कैलास गए अस्तुति करि, आनँद उपरयौ भारी ।
'सूरदास' हरि कौ जस गायौ, श्रीभागवतऽनुसारी ॥ ४३०७ ॥

राग बिलावल ॥ ४६२६ ॥ भृगुपरीक्षा

हरि सौ ठाकुर और न जन कौ ।
तिहूँ लोक भृगु जाइ आइ कहि, या बिधि सब लोगनि सौ ॥
ब्रह्मा राजस गुन अधिकारी, सिव तामस अधिकारी ।
बिस्नु सत्य केवल अधिकारी, विप्र लात उर धारी ॥
मुख प्रसन्न सीतल स्वभाव नित, देखत नैन मिलाइ ।
यह जिय जानि भजौ सब कोऊ, 'सूरज' प्रभु जदुराइ ॥ ४३०८ ॥

राग बिलावल ॥ ४६२७ ॥ अर्जुन को निज रूप दर्शन तथा शंखचूड़ पुत्र आनयन

हरि हरि हरि हरि सुमिरन करौ । हरि चरनारबिंद उर धरौ ॥
हरि इक दिन निज सभा मँझार । बैठे हुते सहित परिवार ॥

अर्जुन हू ता ठौर सिधाए। संखचूड़ तव वचन सुनाए॥
द्वारावती वसत सव सुखी। मैं हीं इक हौ अह निसि दुखी॥
मेरे पुत्र होत है जबही। अतरर्धान होत सो तबही॥
अर्जुन कह्यौ द्वारिका माहीं। ऐसौ कोउ धनुपधर नाहीं॥
जो तुव सुत की रच्छा करै। अरु तेरौ यह दुख परिहरै॥
मैं तुव सुत की रक्षा करौ। अरु तेरौ यह दुख परिहरौ॥
यह परतिज्ञा जौ न निवाहौ। तौ तन अपनौ पावक दाहौ॥
विप्र कह्यौ तुम स्याम कौ राम। कै प्रदुम्न, अनिरुध अभिराम॥
अर्जुन कह्यौ मैं इनमैं नाही। पै हौ इनके दासन माहीं॥
अर्जुन है मेरौ निज नाम। धनुप गाँडीव मम अभिराम।
तू निहचिंत बैठि गृह जाइ। समै होइ कहु मोसौ आइ॥
पुत्र प्रसूत समय जब आयौ। विप्रार्जुन सौ आइ सुनायौ॥
अर्जुन तव सर पिंजर कियौ। पवन सँचार रहन नहि दियौ॥
गृह कौ द्वारौ राख्यौ जहाँ। अर्जुन सावधान भयौ तहाँ॥
ब्राह्मन कह्यौ समै अव भयौ। अर्जुन धनुप वान तव लायौ॥
वालक ह्वै भयौ अंतर्धान। अर्जुन ह्वै रह्यौ चकित समान॥
विप्र नारि तव गारी दई। कह्यौ, प्रतिज्ञा का ह्वै गई॥
तै पुरुपारथ कहँ तै पायौ। मिथ्या ही कहि वाद वढायौ॥
हरि सौ दुख अव कहिहौ जाइ। अर्जुन कह्यौ तासौ या भाइ॥
तेरे सुत कौं मैं अव ल्याऊँ। तेरौ सव सताप नसाऊँ॥
अर्जुन तिहूँ लोक फिरि आयौ। पै सो वालक कहूँ न पायौ॥
अर्जुन विप्र स्याम पै आए। हरि अर्जुन सौ वचन सुनाए॥
तुम वालक काहे नहि राख्यौ। सो वृत्तांत हमैं तुम भाषौ॥
कह्यौ जु मैं परतिज्ञा करी। सो मोसौ पूरी नहिं परी॥
वालक होत कौन लै गयौ। सो मोकौ कछु ज्ञान न भयौ॥
मैं देख्यौ तिहि त्रिभुवन जाई। पै ताकी कहुँ सुधि नहि पाई॥
विप्र काज प्रभु अव तुम करौ। ना तरु मोकौ जानौ मरौ॥
हरि रथ पर अर्जुन वैठाइ। पहुँचे लोकालोकहि जाइ॥
ह्वाहूँ तै पुनि आगै धाए। दारुक हरि सौ वचन सुनाए॥
अंधकार मग नहिं दरसाइ। तातै रथ नहिं सकत चलाइ॥
चक्र सुदरसन आगै कियौ। कोटिक रवि प्रकास तहँ भयौ॥
तव हरि अर्जुन पहुँचे तहाँ। गति नाही काहू की जहाँ॥
तहाँ जाइ देख्यौ इक रूप। ता-सम और न दुतिय स्वरूप॥
नैननि निरखि चकृत ह्वै गए। मन वानी दोऊ थकि रए॥
कहिवै जोग होइ तौ कहै। तहाँ कछू आकार न लहै॥
सेप नाग फन मुकुट स्थान। मनि प्रभा मनु कोटिक भान॥
हरि अर्जुन कियौ निरखि प्रनाम। मनौ तहाँ इक सब्दऽभिराम॥
तुम्हरे हेत चरित यह कियौ। वोझ पृथी कौ हरुऔ भयौ॥
आवहु तुम अव अपनै धाम। पूरन भए सुरनि के काम॥

दसौ पुत्र ब्राह्मण के दिए । हरि अर्जुन प्रनाम तव किए ॥
तहँ तैं पुनि द्वारावति आए । ब्राह्मन के बालक पहुँचाए ॥
अर्जुन देखि चरित्र अनूप । विस्मय बहुत भयौ सुनि भूप ॥
नहिं जान्यौ मै कहाँ सिधायौ । अरु ह्वाँ तैं ह्याँ कैसैं आयौ ॥
हरि अर्जुन कौं जनि जन जान । लै गए तहँ न जहाँ ससि भान ॥
निज स्वरूप अपनौ दरसायौ । जो काहूँ देखन नहिं पायौ ॥
ऐसे है त्रिभुवन पति राइ । कहा सकै रसना गुन गाइ ॥
ज्यौं सुक नृप सौं कहि समुझायौ । 'सूरदास' ताही विधि गायौ ॥
॥ ४३०९ ॥

——:०:——

एकादश स्कंध

उद्धव वचन श्रीकृष्ण प्रति

राग नट ॥ ४६२८ ॥

कैसैं करि आवत स्याम इती।
मन, क्रम, वचन औंर नहिं मेरे, पदरज त्यागि हिती॥
अंतरजामी यहौ न जानत, जो मो उरहि विती।
ज्यौं जुवारि रसवीधि हारि गथ, सोचत पटकि चिती॥
रहत अवज्ञा होइ गोसाईं, चलत न दुखहिं मिती।
क्यौ विस्वास करहिंगी कौरौ, सुनि प्रभु कठिन कृती॥
इतर नृपति जिहिं उचित निकट करि देत न मूठि रिती।
छुटत न अंसु सु नितहि कृपन कैं, प्रीति न 'सूर' रिती॥ १॥

राग केदारौ ॥ ४६२६ ॥

क्यौ करि सकौं आज्ञा भंग।
करुन-मय-पद-कमल लालच, नहिंन छूटत संग॥
यह रजायसु होत मोसन, कहत बदरी जान।
कहु करौ मम पाप पूरन, सुनि न निकसत प्रान॥
मैंऽपराधी ब्रजवधुनि सौं, कहे वचन विप तूल।
मोहिं तजि कै अवर को विच, सहै ऐसे सूल॥
अव न जौ तुम जाहु ऊधौ, मिटै जुग भृत रीति।
हौं जु तेरी सकल जानत, महा मोसन प्रीति॥
सकल ज्ञान प्रवोधि उनसौं, कहि कथा समुझाइ।
जादवन कौ प्रलय सुनि वे, मरहिंगी अकुलाइ॥
अति विपाद सु हृदै करि करि, उठि चल्यौ ह्वै दीन।
'सूर' प्रभु तुम कृपासागर, किन भयौ हौ मौन॥ २॥

नारायण-अवतार-वर्णन

राग विलावल ॥ ४६३० ॥

हरि हरि हरि हरि सुमिरन करौ। हरि चरनारविंद उर धरौ॥
नारायन जव भए अवतार। कहौं सो कथा सुनौ चित धार॥
धर्म पिता अरु मूरति माइ। भए नारायन सुत तेहि आइ॥
वदरीकास्रम रहे पुनि जाइ। जोगऽभ्यास समाधि लगाइ॥
उनके औंर कामना नाहिं। सुख पावैं त्रिभुवन मन माहिं॥
सुरपति देखत गयौ डराइ। काम सैन सँग दियौ पठाइ॥
रितु वसंत फूली फुलवाइ। मंद, सुगंध वयार वहाइ॥
करत गान गंधर्व सुहाइ। मंद, सुगंध वयार वहाइ॥
काम वान पाँचौं संधाने। नारायन ते मनहिं न आने॥
तव तिन सवनि तहाँ भय पायौ। कह्यौ इंद्र हमैं कहाँ पठायौ॥
तव नारायन आँखि उघारी। उन सवकी कीन्ही मनुहारी॥

तुव कछु मन मैं भय मति करौ। अभय हमारैं आस्रम करौ॥
दोष तुम्हारौ है कछु नाहि। तुम्है पठायौ है सुरनाह॥
इंद्रहु कौ कछु दूषन नाहिं। राज हेत डरपत मन माहिं॥
उन कर जोरि विनै उच्चारी। नारायन हरि हरि बनवारी॥
उधरत लोग तुम्हारे नाम। क्यौ हरि मोह सकै तुम्है काम॥
जे नर सेवा न तुम्हरी करैं। अरु ससार मनोरथ धरैं॥
तिन कौ अंतराइ हम करैं। ते सब अहनिसि हमसौ डरैं॥
कबहूँ पुत्र मोह उपजावैं। कबहूँ तिय के रूप लुभावैं॥
भूख, प्यास ह्वै कबहुँ संतापै। ऐसैं विधि हम इनकौ व्यापैं॥
जो कोउ तुम्हरैं सरननि आवैं। सुख ससार सकल बिसरावैं॥
तासौं हमरौ कछु न बसाइ। हमैं जीति सो तुम पै जाइ॥
सहस अप्सरा सुदर रूप। एक एक तैं अधिक अनूप॥
नारायन तहँ परगट करीं। इंद्र अपसरा सोभा हरीं॥
नारायन तहँ परगट करीं। इंद्र अपसरा सोभा हरीं॥
काम देखि चक्रित ह्वै गयौ। रूप दीख हम इनकौ नयौ॥
गुन जेते सबहीं इन माहिं। इन सब इंद्र लोक कोउ नाहिं॥
तब नारायन आज्ञा करीं। इनमैं लेहु एक सुदरीं॥
नाम उर्वसी उन एक लीनीं। पुनि प्रनाम हरि कौ तिन कीनी॥
सो सुरपति कौं दीन्ही जाइ। कह्यौ सकल वृत्तात सुनाइ॥
यौ भयौ नारायन अवतार। 'सूर' कह्यौ भागवतऽनुसार॥ ३॥

राग बिलावल॥ ४६३१॥ हंसावतार वर्णन

हरि हरि हरि हरि सुमिरन करौ। हरि चरनारबिंद उर धरौ॥
हरि ज्यौ धरयौ हस अवतार। कहौ सु कथा सुनौ चित धारि॥
सनकादि ब्रह्मा पै जाइ। करि प्रनाम पूछयौ या भाइ॥
किधौ विषय को चित गहि रह्यौ। कै बिपयनि हीं चित कौ गह्यौ॥
नीरछीर ज्यौ दोउ मिलि गए। न्यारे होत न न्यारे कए॥
हम तौ जतन कियौ बहु भाइ। तुम अब कहौ सु करैं उपाइ॥
ब्रह्मा कौ उत्तर नहि आयौ। तब सनकादिक गर्व बढ़ायौ॥
ज्ञान हमारौ अतिसय जोइ। ब्रह्मा रह्यौ निरुत्तर होइ॥
ब्रह्मा हरिपद ध्यान लगाए। तब हरि हंस रूप धरि आए॥
सबनि सो रूप देखि सुख पायौ। सबहिनि उठि कै माथौ नायौ॥
सनकादिकन कह्यौ या भाइ। हमकौ दीजै प्रभु समुभाइ॥
को तुम क्यौ करि इहाँ पधारे। परम हस तब वचन उचारे॥
यह तौ प्रश्न जोग है नाही। एकै आतम हम तुम माही॥
जौ तुम देह देखि कै पूछौ। तौहू प्रश्न तुम्हारौ छूछौ॥
पंचभूत ते सब तन भए। कहा देखि कै तुम भ्रमि गए॥
यह कहि उनकौ गर्व निवारयौ। बहुरौ या विधि वचन उचारयौ॥
विपय चित्त दोऊ है माया। दोऊ जड ज्यौ तरुवर छाया॥
तरुवर डोलै डोलै सोई। ज्यौ जिय लगि चित चेत न होई॥

फिरि जब चित्त विषय तन जोवै। चित्त विषै सँयोग तब होवै॥
ऐसी भाँति रहै दोउ गोइ। तिन्है न्यारे करि सकै न कोइ॥
ज्यौ सपने मैं सुख दुख जोइ। जानि सत्य राखै चित लोइ॥
जब जागै तब मिथ्या जानै। ज्ञानी इनकौ नित यौं मानै॥
विषय चित्त दोऊ भ्रम जानौ। आतम रूप सत्य करि मानौ॥
स्रवनादिक मैं चित्त लगावहु। प्रेमसहित मम रूपहि ध्यावहु॥
ऐसै करत विषै हू होइ। अरु मम चरन रहै चित गोइ॥
जो ऐसी विधि साधन करै। सो सहजहि मम पद अनुसरै॥
और जु बीचहि तन छुटि जाइ। तौ लै जन्म भक्त गृह आइ॥
ह्वाँ हूँ प्रेमभक्ति कौ ठान। पावै मेरौ परम-स्थान॥
सनकादिक सौं कहि यह ज्ञान। परम हंस भए अंतर्धान॥
जो यह लीला सुनै सुनावै। 'सूर' सो प्रेमभक्ति कौ पावै॥ ४॥

द्वादश स्कंध

राग विलावल ॥ ४६३२ ॥

हरि हरि हरि हरि सुमिरन करौ। हरि चरनारविंद उर धरौ॥
सुकदेव हरि चरननि सिर नाइ। राजा सौं वोल्यौ या भाइ॥
कहौं हरि कथा सुनौ चित लाइ। 'सूर' तरौ हरि के गुन गाइ॥ १॥

राग विलावल ॥ ४६३३ ॥ वुद्ध अवतार वर्णन

हरि हरि हरि हरि सुमिरन करौ। हरि चरनारविंद उर धरौ॥
वौद्ध रूप जैसे हरि धार्यौ। अदिति सुतनि कौ कारज सार्यौ॥
कहौं सु कथा सुनौ चित धार। कहै सुनै सो तरै भव पार॥
असुर इक समै सुक्र पै जाइ। कह्यौ सुरनि जीतैं किहि भाइ॥
सुक्र कह्यौ तुम जग विस्तरौ। करिकै जज्ञ सुरनि सौं लरौ॥
याहीं विधि तुम्हरी जय होइ। या विनु और उपाइ न कोइ॥
असुर सुक्र की आज्ञा पाइ। लागे करन जज्ञ वहु भाइ॥
तव सुर सव हरि जू पै जाइ। कह वृत्तांत सकल सिर नाइ॥
हरि जू तिनकौ दुखित देखि। कियौ तुरत सेवरी कौ भेप॥
असुरनि पास वहुरि चलि गए। तिनसौं वचन ऐसी विधि कए॥
जज्ञ माहिं तुम पसु यौं मारत। दया नहीं आवति सहारत॥
अपनौ सौ जिय सवकौ जानि। कीजै नहि जीवन की हानि॥
दया धर्म पालै जो कोई। मेरी मति ताकी जय होई॥
यह सुनि असुरनि जज्ञहि त्यागि। दया धर्म मारग अनुरागि॥
या विधि भयौ वुद्ध अवतार। 'सूर' कह्यौ भागवतऽनुसार॥ २॥

राग विलावल ॥ ४६३४ ॥ कल्कि अवतार वर्णन

हरि-हरि-हरि-हरि सुमिरन करो। हरि चरनारविंद उर धरौ॥
हरि करिहै कलंकि अवतार। जिहि कारन सो कहौ विचार॥
कलि मैं नृप होइहै अन्याई। कृषी अन्न लैहै वरिआई॥
झूठे नर सौं लेहिं अँकोरि। लावैं साँचे नर कौं खोरि॥
प्रजा न धर्म रत होइ न कोइ। वरन धर्म न पिछानै सोइ॥
दूरि तीरथनि स्रम करि जाहिं। जहाँ रहै तहँ कवहुँ न न्हाहिं॥
जाकै गृह मैं प्रतिमा होइ। तिन तजि पूजैं अनतैं सोइ॥
व्राह्मन पूछे जान्यौ जाइ। सन्यासी फिरैं भेष वनाइ॥
गृही न अपनौ धर्म पिछानै। अतिथि आए को नहि सनमानै॥
दया, सत्य, संतोष नसाइ। दया, धर्म की रीति विलाइ॥
फल सुधर्म कौ जानै सोइ। पै सुधर्म कौ करै न कोइ॥
पापनि कौ फल चाहै नाहीं। अह निसि पाप करत हीं जाहीं॥
वरषा समय न वरपा होई। विना अन्न दुख पावै लोई॥

दान देहिं तौ जस के काज। कलि न होइ पृथ्वीपति राज।।
मन इंद्रिय बस करै न लोग। ज्यौं त्यौं किन्हौ चाहैं भोग।।
सत संवत आयु: कलि होइ। सोऊ जीवै बिरला कोइ।।
नृप ऐसी आवर्दा पाइ। पृथ्वी हित नित करै उपाइ।।
पृथी देखि तिन हाँसी करै। ऐसौ को जो मोकौं वरै।।
मन्वंतर लगि कियौ जिहि राज। तेऊ नृपति गए मोहि त्यागि।।
पृथु से पृथ्वीपति जग भए। तेऊ अंत छाँड़ि मोहि गए।।
तुच्छ आयु पर वे स्रम करत। आपु आपु मैं लरि लरि मरत।।
इनहिं देखि मोहि हाँसी आवत। इनिकौ इतनी समुझ न भावत।।
सतजुग सत त्रेता जग करते। द्वापर पूजा मन में धरते।।
कलिजुग एक बड़ौ उपकार। जो हरि कहै सो उतरै पार।।
कलि मैं पाप करै नित लोइ। कहँ लगि कहिऐ अंत न होइ।।
हरि हरि कहत पाप पुनि जाइ। पवन लागि ज्यौं रुई उड़ाइ।।
अजामील सुत हित हरि भार्ज्यौ। जमदूतनि तैं तिहि हरि राख्यौ।।
कलि मैं राम कहै जो कोइ। निहचै भव जल तरिहैं सोइ।।
जब लगि बढ़ै अधर्म अपार। रहै बिस्नु जस धर्म सँभार।।
ता गृह संभल कलँकी होइ। करै सँहार दुप्ट जन लोइ।।
पृथी अकास तहाँ रहि जाइ। राज देहि सतजुग बैठाइ।।
सम दृप्टी होवै सब सोइ। दुप्ट भाव मन धरै न कोइ।।
यौ होइहै कलंकि अवतार। कलि मैं राम नाम आधार।।
सुक नृप सौं कह्यौ जा परकारु। 'सूर' कह्यौ ताहीं अनुसार।। ३।।

राग बिलावल ।। ४६३५ ।। **राजा परिक्षित हरि-पद-प्राप्ति**

हरि हरि हरि हरि सुमिरन करौ। हरि चरनारबिंद उर धरौ।।
बिनु हरि भक्ति मुक्ति नहि होइ। कोटि उपाइ करौ किन कोइ।।
रहट घरी ज्यौं जग व्योहार। उपजत बिनसत बारबार।।
उतपति प्रलय होति जा भाइ। कहौं सुनौ सो नृप चितलाइ।।
राजा प्रलय चतुर्विधि होइ। आवत जात चहूँ मैं लोइ।।
जुग परलय तौ तुमसौं कही। तीनि और कहिबे कौ रही।।
चतुर जुगौ बीते इकहत्तर। करै राज तब लगि मनवंतर।।
चौदह मनु ब्रह्मा दिन माहि। बीतत तासौ कल्प कहाहिं।।
राति होइ तब परलय होइ। निसि मरजादा दिन सम होइ।।
प्रात भऐं जब ब्रह्मा जागैं। बहुरौ स्रप्टि करन कौं लागैं।।
दिन सौ तीन साठि जब जाहिं। सो ब्रह्मा कौ वर्ष कहाहिं।।
वर्ष पचास परारध कहिए। प्रलय तीसरी या बिधि रहिए।।
बहुरौ ब्रह्मा स्रप्टि उपावै। जब लौं परारध दूजौ आवै।।
सत संवत भए ब्रह्मा मरै। महा प्रलय तब हरि जू करै।।
माया माहिं नित्य लय पावै। माया हरि पद माहिं समावै।।
हरि कौ रूप कह्यौ नहिं जाइ। अलख अखंड सदा इक भाइ।।
फिरि जब हरि की इच्छा होइ। देखै माया की दिसि जोइ।।
माया तब सबहीं उपजावै। ब्रह्मा ह्वै पुनि सृप्टि उपावै।।

उतपति प्रलय सदा यौ होइ। जन्मैं मरै सदाई लोइ।।
हरि कौ भजै सो हरि पद पावै। जनम मरन तिहि ठाँर न आवै।।
नृप मैं तोहि भागवत सुनायौ। अरु तुम सुनि हिय माहि वसायौ।।
मुक्ति माहि संसय नहि कोइ। सुनै भागवत मैं सो होइ।।
सप्तम दिवस आजु है राउ। हरि चरनारविंद चित लाउ।।
यह अच्छेदऽभेद अनिवासी। सर्व गती अरु सर्व उदासी।।
द्रष्टहि द्रष्ट सोइ द्रष्टार। काकौ दीखै को दिखहार।।
हरि स्वरूप सौ रतिहि विचार। मिथ्या तन कौ मोह बिसार।।
नृप कह्यौ तन कौ मोह न कोइ। याकौ जो भावै सो होइ।।
मोहि अब सर्व ब्रह्म दरसावै। तच्छक भय मन मै नहि आवै।।
तुम प्रसाद मै पायौ ज्ञान। छुटि जो मिथ्या देहऽभिमान।।
अब मैं गहि हरि पद अनुराग। करिहौ मिथ्या तन कौ त्याग।।
सुक जान्यौ नृप कौ भयौ ज्ञान। आज्ञा लै करि कियौ पयान।।
तच्छक नृप सरीर कौ डस्यौ। नृप तन तजि हरि पद वस्यौ।।
सूत सौनकनि कहि समुझायौ। मैं हूँ ता अनुसार सुनायौ।।
अंत समय हरि पद चित लावै 'सूरदास' सो हरि पद पावै।। ४।।

राग बिलावल।। ४६३६।। **जन्मेजय कथा**

हरि हरि हरि हरि सुमिरन करौ। हरि चरनारविंद उर धरौ।।
जनमेजय जब पायौ राज। एक बार निज सभा विराज।।
पिता वैर मन मैं सो बिचारि। विप्रनि सौ यौ कह्यौ उचारि।।
मोकौ तुम अब यज्ञ करावहु। तच्छक कुटुम समेत जरावहु।।
विप्रनि सेत कुली जब जारयौ। तब राजा तिन सौ उच्चारयौ।।
तच्छक कुल समेत तुम जारचौ। कह्यौ इंद्र निज सरन उवारचौ।।
नृप कह्यौ इंद्र सहित तिहि जारौ। विप्रनि हूँ यह मतौ विचारौ।।
आस्तीक तिहिं अवसर आयौ। राजा सौ यह वचन सुनायौ।।
कारन करन हार भगवान। तच्छक डसनहार मत जान।।
विनु हरि आज्ञा डुलै न पाति। कौन सकै काकौ संतापि।।
हरि ज्यौ चाहै त्यौही होइ। नृप तामैं संदेह न कोइ।।
नृप कै मन यह निश्चै आयौ। यज्ञ छाँड़ि हरि पद चित लायौ।।
सूत सौनकनि कहि समुझायौ। 'सूरदास' त्यौही कहि गायौ।। ५।।

——:०:——

परिशिष्ट (१)

सूचना—इस परिशिष्ट में सूरसागर की हस्तलिखित और मुद्रित प्रतियों में प्राप्त वे पद दिए जा रहे हैं जिनके 'सूरदास' जी द्वारा रचित होने मे सपादक को संदेह है। इनमें से अधिकतर पद किसी एक प्रति मे ही मिलते है, शेष प्रतियों मे वे नही है। परिशिष्ट के इन पदों की भी दो श्रेणियाँ है। परिशिष्ट (१) मे वे पद रखे गए हैं जो निश्चित रूप से प्रक्षिप्त नही माने गए है। जिनके सबंध में संशय और जिज्ञासा को स्थान है। परिशिष्ट (२) मे वे पद है जो संपादक की दृष्टि मे निश्चित रूप से प्रक्षित हैं। इनके अतिरिक्त प्रक्षिप्त पदों का एक समूह और है जो 'कॉकरोली' की प्रति से संग्रह किया गया है। इस समूह के पद इतने स्पष्ट रूप से अप्रमाणित और गढ़े हुए ज्ञात हुए कि उन्हें परिशिष्ट में रखने की भी आवश्यकता नही जान पड़ी।

—संपादक

राग भोपाली — राजा अंवरीष की कथा

जन कौ हौ आधीन सदाई।
दुरवासा वैकुंठ गये जव तव यह कथा सुनाई॥
विदित विरद ब्रह्मन्य देव तुम करुनामय सुखदाई।
जारत है मोहिं चक्र सुदर्शन हा प्रभु लेहु वचाई॥
जिन तन धन मोहिं प्रान समरपे सील सुभाव वड़ाई।
ताकौं विषम विषाद कहौ मुनि मोपै सह्यौ न जाई॥
उलटि जाहु नृप चरन सरन मुनि वहै राखिहै आई।
'सूरजदास' दास की महिमा श्रीपति श्रीमुख गाई॥ १॥

राग सारंग — हनुमान का सीता समाधान

जानकी मन संदेह न कीजै।
आए राम लपन प्रिय तेरे, काहे प्राननि दीजै॥
जामवंत सुग्रीव वालिसुत आए सकल नरेस।
मोहि कह्यौ तुम जाहु खवरि कौ अब जिनि करौ अँदेस॥
रावन के दस सीस तोरि कै कुटुंब समेत वहैहौं।
तैंतिस कोटि देवता वंधन तिनहिं समस्त छुड़ैहौं॥
आयसु दीजै मातु मोहि अव जाइ प्रभुहिं लै आऊँ।
'सूरदास' हौ जाइ नाथ पहँ तेरी कुसल सुनाऊँ॥ २॥

राग मारू — कुंभकरण रावण संवाद

रावन चल्यौ गुमान भरचौ।
श्री रघुवीर अनाथ वंधु सौं सनमुख खेत खरचौ॥
कोप करचौ रघुवीर धीर सव लछिमन पाइ परचौ।
तुम्हरैं तेज प्रताप नाथ जू मैं कर धनुष धरचौ॥
सारथि सहित अस्व वह मारे रावन क्रोध जरचौ।
इंद्रजीत लीन्ही तव सक्ती देवनि हहा करचौ॥

छूटी तेज विज्जु रासि वह मानौं भूतल वंधु परचौं।
करुना करत 'सूर' कोसलपति नैननि, नीर भरचौं॥ ३॥

राग बिलावल बालकलीला

हरि हरि हरि हरि सुमिरन करौ। हरि चरनारविंद उर धरौं॥
कहौ सु राधा कौ अवतार। 'सूर' टरौं सो भव निधि पार॥
भादौं सुक्ल अष्टमी जानु। ता दिन भयौ अवतार प्रमानु॥ ४॥

राग सारंग

राधा माधौ दोय नही।
प्रकृति पुरुप न्यारे नहि कवहूँ वेद पुरान कहत सवही॥
देह भेद तैं भेद जानि कै मति भ्रम भूलै लोइ।
ब्रह्मा के स्थावर चर माही प्रकृति पुरुष रहे गोइ॥
भक्त हेत अवतार धरचौ ब्रज पूरन पुरुप पुरान।
'सूरदास' राधा माधौ के तन द्वै एकै प्रान॥ ५॥

राग सारंग

छाया तरुवर दोइ नही।
नैन दोइ ज्यौं स्रवन दोइ ज्यौं कहन सुनन कौ दोइ नही॥
दोइ न कंचन भूपन कवहूँ जल तरंग ज्यौं दोइ नही।
त्यौं ही जानि 'सूर' मन वचक राधा माधौं दोइ नहीं॥ ६॥

हेरि रे मैया हेरि रे।
सकल काज पूरन भयौ हो, नैननि देखौ आज॥
नँदरानी ढोटा जायौ हो आयौ ब्रज मैं राज।
दहीं दूव माथै धरै हो रोरी तिलक सुभाल॥
मगल गावैं गोपिका हो रहंसे सवै गुवाल।
कहै नंद उपनंद सौ हो जैसौ जाकौ भाव॥
उठि किन वावा नाचहू हो भलौ वन्यौ है दाव।
उठि वावा ठाढ़े भए हो संग लिए वहु ग्वाल॥
लचकति थोंदिहा हालई हो देखैं सव ब्रजवाल।
नंद कहै उपनंद सौ हो गैयाँ सुकुल मँगाइ॥
जसुमति कै भयौ लाडिलौ हो विप्रनि देहु वुलाइ।
काहू कौ चादर दई हो काहूँ दीनी खोर॥
काहू कौ दीनी दुपटि हो करि करि पीले छोर।
काहू कौ पटुका दियौ हो काहू कुलह कवाइ॥
काहू पीरी पागरी हो वागे सहित मँगाइ।
गोप कहत है नद सौ सदा वसौ ब्रजराइ॥
नंद महर के लाडिले हो 'सूरदास' वलि जाइ॥ ७॥

राग धनाश्री

ढाढी तै पढि नंद रिझायौ।
जसुमतिसुत की कीरति गाई सवहिनि कै मन भायौ॥

नंद सुवागी अपनै गर कौ ढाढी को पहिरायौ।
दीने धेनु धौरहर घोरे अरु भडार खुलायौ॥
ढाढ़िनि कौ सोने को नूपुर गहनौ अगढ़ गढ़ायौ।
रतनजटित खँगवारी गर कौ जसुमति लै पहिरायौ॥
तेरैं भले भलौ या ब्रज कौ या घर मगल आयौ।
'सूरदास' कौ सरवस दीनौ मंगल सुजस सुनायौ॥ ८॥

राग विभास सकटासुरवध

देखौ सखि अकथ रूप अतूथ।
एक अंवुज मध्य देखियत वीस दधि-सुत जूथ॥
एक सुक तहँ दोऊ जलचर उभय अर्क अनूप।
पंच विरचे एकहीं ढिग कहौ कौन सरूप॥
भई सिसुता माँहि सोभा करौ अर्थ विचारि।
'सूर' श्री गोपाल की छवि राखिए उर धारि॥ ९॥

राग विलावल तृणावर्त्त वध

एक समय सुत कौ हलरावति जसुमति मुदित करति मृदु गानै।
विधु सौ वदन कमल-दल-लोचन सुंदर स्याम तवै जँभुआनै॥
तव विलोकि व्याकुल भई जननी तीनहुँ लोक वदन दरसाने।
'सूरदास' प्रभु मंदमंद हँसि तवहिं महरि माया अरुभाने॥ १०॥

राग कलिग घुटुरुवो चलना

घुटुरुवनि घनस्याम चलै रे।
कटि किंकिनि पग नूपुर वाजै नाक वुलाक हलै रे।
किलकत विहँसत दूरि निकसि गए जसुमति कहति भलै रे।
'सूरदास' प्रभु वालकलीला मन आनद रलै रे॥ ११॥

राग सारंग

निरखि छवि पुलकत है ब्रजराज।
उत जसुदा इत आपु परस्पर आडि रहे कर पाज॥
किंकिनि कटितट मध्य प्रसरि भुज उभय मिलत फनि लाज।
झमित लरत अलिसैन कंज पर मनु मकरँद के काज॥
अर्द्ध गिरा मृदु स्रवत सुधा जनु पिवत स्रुतिनि पुट आज।
'सूरदास' प्रभु सुत रति करिकरि लै लै ऊपर आज॥ १२॥

राग धनाश्री

ऐसे दिन विधना कव करिहै।
स्याम सुंदर की सुनियै वाते कव धरती पग धरिहै॥
प्रातहि उठत कलेऊ कारन सीकै वासन टरिहै।
कव मोसौ मैया कहि वोलै पेट पै लोटि भगरिहै॥
'सूर' जसोदा देव मनावति मुख दै सव दुख हरिहै॥ १३॥

राज धनाश्री वालछवि वर्णन

लरिकाई मैं जोवन की छवि देखौ लोचन सदर भरि भरि।
विथुरी अलक वदन छवि छाजति सुरति केलि मनु सीखि लई हरि॥

गंड चखौड़ा मेचक बिंदुली भए चिह्न मनु चुंबन करि करि।
नैन सलोने भ्रमत भ्रमर ज्यौं ललित गिरा सु तौं नहर्जाहि तोतरि॥
आँगन डोलत मत गयंद मनु राखति सखि वर भुज लतिका भरि।
'सूर' स्याम सब समय महा सुख देत लाल पावति सब नागरि॥ १४॥

राग बिलावल खेलन

सोवत ग्वालिनि कान्ह जगाए।
भोर भऐं हम आए दरस कौं जीवन जन्म सफल करि पाए॥
उत्तम सेजऽरु स्वेत बिछौना चहुँदिसि रचि रचि आपु बनाए।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस कौं पूरन चंद्र प्रगट ह्वै आए॥ १५॥

राग रामकली माटी-भक्षण-प्रसंग

मोहन तैं माटी क्यौं खाई।
ठाढ़े बाल कहत सब बालक जे तेरे समुदाई॥
मुकरि गए मैं सुनौं न देखौं झुठई आनि बनाई।
दै परतीति पसारि बदन तब सब बसुधा दरसाई॥
चकित भई जमुमति जिय डरपो मन माया उपजाई।
'सूरदास' उर लाइ लाल कौं लोन उतारति राई॥ १६॥

राग बिलावल प्रथम माखन-चोरी

जसुमति तू जू कहति हँसी माई।
इहै उरहनौं सत्य करन कौं हरिहि पकरि लै आई॥
दिन प्रति देन उरहनौं आवति कहा तिहारौ काई।
देखन चली जु सुत लै अपनौं वह चलि गयौ पराई॥
तेरे हियैं नैन मति नाहिन बदन देखि लखि पाई।
तैं जो नाम कान्ह मेरे कौ सूधौ करि हूँ पाई॥
सुनि री सखी कहति डोलति हौ इहि काहू सिख पाई।
'सूरदास' वा नागर सब मैं उहि कौनैं सिखराई॥ १७॥

ग्वारिनि-जियहिं परस्पर भावै।
खेलत स्याम सखा सग लीन्हें खटकौरी दै गारि दिवावै॥
मिस करि हरषि खिलौना हरि के गेंद उरोजनि माँझ दुरावै।
रह्यौ न परत रसिक मोहन बिन अंग सु कर सौ परस करावै॥
कंचुकि चीर आपुही फारै आपुहि जसुदहिं जाइ दिखावै।
'सूरदास' प्रभु भुज अंतर करि कहै चलै नँदरानि बुलावै॥ १८॥

राग सारंग

अपने नान्हहिं केरि दुहाई।
अबही तैं यह स्याम ढुटौना उलटी करत है माई॥
बासन फोरि गठौना कीनो गोरस कीच मचाई।
हटकौ जसुदा नंदकुँअर कौ घर घर देखौ जाई॥
मानौ कुँअर कछू नहिं जानत बैठि रह्यौ अरगाई।
'सूरदास' बतिआ कहि दहौ जासौं हाहा खाई॥ १९॥

स्याम सबै बतियाँ कहि दैहौ।
सूधै चले जाहु जसुमति सुत, कुटिल भौंह किएँ हौ न डरैहौं।।
उलटि चौर नख रेख उदित करि, छाँड़ि सकुच सब चिन्ह बतैहौं।
जो कुछ कह्यौ तबहि पछितावत, तुम दुराउ पै मैं न दुरैहौं।।
जो तुम लेहु नैन जल भरिभरि, ह्वै दयाल इतउत न चितैहौ।
सूर स्याम गोपी उर लाए, जिनि डरावौ बलि हौ न डरैहौं।। २०।।

मेरे गिरधर जू सो कौन लरी।
पकरि ल्याउ मेरे मुख आगै वारि डारौ सिगरी।।
चलि री मैया तोहि बताऊँ जो मोसौ भगरी।
गौर बरनि नीलाबर ओढ़े चंचल चपल खरी।।
हौ बालक वह बड़े बैस की कैसेक भुज पकरी।
मो कौ देखि ढकेलि चलति है नैननि नेह भरी।।
तीखे वचन सुनति जसुमति के आगै आनि खरी।
'सूरदास' मुख निरखि राधिका रिस सिगरी बिसरी।। २१।।

कहा लौ राखियै माई कानि।
कैसै सहौ परै सुनु सजनी नित उठि गोरस हानि।।
एक दिवस घर कौ दधि ढारयौ मोहि अनतहो जानि।
ता कारन निज हाथ त्रास दै बाँध्यौ ऊखल तानि।।
जैसो अपनो भवन सु त्यौ ही औरनि कौ मन मानि।
'सूरदास' प्रभु बहुत बँचति हौ सुंदर मुख पहिचानि।। २२।।

राग बिलावल उलूखलबंधन

कर तै लकुट डारि नँदरानी।
रोस निवारि आपनै सुत कौ बदन बिलोकि अयानी।।
देखि त्रास तन नमित बदन कियो मलिन ज्योति कुँम्हिलानी।
मानौ हिमकर उदित मुदित अति कुमुद कली सकुचानी।।
कन राजत उर खेद स्वेदजल उपमा जिय यह आनी।
ज्यौ निज पति कौ दुखित देखि श्री रुदन करति अकुलानी।।
क्यौ तोहि भुज पसारि आवत है 'सूर' कठिन करि बानी।
जा मुख मध्य विस्व निरख्यौ तब अब क्यौ ताहि भुलानी।। २३।।

राग धनाश्री

हरधर हरि कौं देखि रिसाने।
अनुज बीर ऊखल सौ बाँधति जननी सौ न बसाने।
त्रिभुवन पलटि धरौ हर गहि कै कितौ घोप मो आगै।
अखिल लोक के हरता करता डरै साँटि के माँगै।।
अजहूँ तू पहिचानति नाही कठिन लकुट दै डारि।
भुवन चतुर्दस तोहि दिखाए आनन माहि पसारि।।
संतत-छीर-समुद्र-सैनि जो दह्यौ चुरावत त्रासी।
'सूर' स्याम की अविगत लीला ब्रजवासी बस जासी।। २४।।

राग धनाश्री — यमलार्जुनोद्धार की दूसरी लीला

हरि क्रीड़ा कापै कहि जाइ।
देखत पेखत लोग नगर के सब बातनि अरुझाइ।।
कबहूँ हँसत स्याम जू कबहूँ समुझि बात समुझाइ।
कबहूँ हरि रोवत अति व्याकुल नैन नीर ढरकाइ।।
प्रगटी रीति स्याम की सोभा क्रीड़ा बरनि न जाइ।
जाकौ नाम अनत संत कहै और सखा नहि माइ।।
जाकी सुरति मुरति आँखिनि मैं नही कबहुँ मुख आनै।
तासौ कौन भवन रब मानत अति अपनौ जिय जानै।।
वह अति अगम अपार महा मुनि बरनत थाह न पावै।
तासौ राज भाग अब कैसौ उपमा बरनि न आवै।।
नदनँदन मुख बदन कमल दल सुख बरनत क्यौ पावै।
'सूरदास' प्रभु अगम अगोचर बात चलत मो आवै।। २५।।

राग नटनारायनी — वत्सासुरबध

चले बछरू चरावन ग्वाल।
वृंदावन सब छाँडि कै ले गए जहँ घन ताल।।
परम सुदर भूमि देखत हरष मनहि बढ़ाइ।
आपु लागे तहाँ खेलन बच्छ दिए बगराइ।।
जानिकै हरधर गए तहँ बाल-बछरा-पास।
रोहिनी नदनहिं देखत हरष भयहु हुलास।।
तालरस बलराम चाख्यौ मन भयौ आनंद।
गोपसुत सब टेरि लीन्हे सुधि भई नँदनद।।
कह्यौ बछरा हाँकि ल्यावहु चलौ जहाँ कन्हाइ।
तालरस के पान तै अति मत्त भए बल राइ।।
तहाँ छल करि दनुज आयौ धरे बछरा भेप।
फिरत ढूँढ़त स्याम कौ अति प्रबल बल कौ देख।।
सबै बछरनि घेरि ल्याए वह न घेरचौ जाइ।
दाउ कहि बालकनि टेरचौ वृपभसुत न धराइ।।
कह्यौ मन इहि अबहि मारौ उठे बलहि सम्हारि।
टेरि लए सब ग्वालबालक गए आपु प्रचारि।।
आगै ह्वै इत कौ बिडारचौ पूछ हाथ लगाइ।
पकरि कै भुज सौ फिरायौ ताल कै तर आइ।।
असुर लै तरु सौ पछारचौ गिरचौ तरु भहराइ।
ताल सौ तरु ताल लाग्यौ उठचौ बन घहराइ।।
बछासुर कौ मारि हरधर चले सबनि लिवाइ।
'सूर' प्रभु के वीर जाकी तिहूँ भुवन बड़ाइ।। २६।।

गोचारण

जसोदा मैया काहे न मंगल गावै।
पूरन ब्रह्म सकल अविनासी ताकौ गोद खिलावै।।

कोटि कोटि ब्रह्मा सिवमुनि जन जाकौ ध्यान लगावै।
ना जानौ यह कौन पुन्य तै सो तुव धेनु चरावै॥
ब्रह्मादिक सनकादिक नारद जप तप ध्यान न आवै।
सेस सहसमुख जपत निरंतर हरि कौ पार न पावै॥
सुंदर वदन कमल-दल-लोचन गोधन कै सँग आवै।
करति आरती मातु जसोदा 'सूरदास' वलि जावै॥ २७॥

ब्रह्मा-वालक-वत्स-हरण

विहरत वृंदावन वनवारी।
तासौं कहत स्याम घन सुदर जाकी जानन वारी॥
ब्वै लै नाम वुलावन गाइनि और गुवर्धन धारी।
हे पीरी हे राती रौछी धौरी धूमरि कारी॥
खात तालफल सखनि खिझावत देत परस्पर गारी।
'सूरदास' प्रभु जाइ जमुनतट करत कुलाहल भारी॥ २८॥

राग रामचली

धेनुकवध

तातै तरकि कह्यौ वनमाली।
पसु तन चपल सरूप न जानति डोलति चाली चाली॥
धरि तन सगुन त्रिपद पूरन प्रभु आपु कमल प्रतिपाली।
जद्यपि वृषभ सुता पति तजि कै फिरति कुमति की घाली॥
अति स्रम भयो सकल वन ढूंढ़त वन वेली दव जाली।
'सूरदास' संतनि जन हरिहित इहि अव सव तै टाली॥ २९॥

ब्रज-प्रवेश-शोभा

वलि वलि जाऊँ सुभग कपोलनि।
गोरज सोभित अलकावृत मुख कूल कलिंदसुता वन डोलनि॥
नैन विसाल वंक भृकुटी, तन अतिसी कुसुम, सुपीत निचोलनि।
दामिनि दसन समान उर्वं रवि मकराकृत कुंडल छवि लोलनि॥
अधर मुरलि धरि, मुद्रिकानिकर, वोलत धेनू मधुर सुर वोलनि।
वच्छ सुचिन्ह प्रकास मुद्रिका गुंजा, मनि आभूष अमोलनि॥
सरनागत जन अभय कमल कर वंद कपाट हृदय की खोलनि।
'सूरदास' करत पुन्य पुंज सव चरन ललित अहि वोलनि॥ ३०॥

राग सारंग

कमलपुष्प मँगाना, कालीदमन लीला

भरोसौ कान्ह कौ है मोहि।
सुनि जसुदा काली के भय तैं, तू जनि व्याकुल होहि॥
प्रथम पूतना आई कपट करि, अस्तन विष जु निचोहि।
मारि, डारि दीन्ही दिन द्वै के, प्रकट दिखाई तोहि॥
अघ, वक, धेनु, तृनाव्रत, केसी कौ वल देख्यौ जोहि।
सात दिवस गिरिवर कर राख्यौ, गयौ इंद्र मद छोहि॥
सुनिसुनि कथा नंदनंदन की, मन आयौ अविरोहि।
'सूरदास' प्रभु जो कछु करिये, आवत है सव सोहि॥ ३१॥

राग कान्हरौ

कृपा जैसैं काली कौ करी।
ऐसैं आदि अंत काहू कौ कबहुँ न चित्त धरी ॥
अंकुस कुलिस कमल धरि फन पर नृत्यत स्याम हरी।
सिव सनकादिक नारदादि मुनि निगमनि रटनि परी ॥
संभुसीस चरनोदक की गति राखी जटा धरी।
'सूरदास' सतनि के कारन गौतम घरनि तरी ॥ ३२ ॥

राग रामकली

(जमुना में कूद पर्यौ) कान्हा तेरौ जमुना मैं कूदि पर्यौ।
अति व्याकुल भई मातु जसोदा नैननि नीर झर्यौ ॥
जल जमुना के कारै पानी पैठत नाहिं डर्यौ।
कसराइ घर होत वधाई माथकलंक टर्यौ ॥
पैठि पताल कालिया नाथ्यौ बाहिर कंस डर्यौ।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे मिलन कौ मोतियनि थार भर्यौ ॥ ३३ ॥

राग टोड़ी

मुनि भइया गइया है पाई।
वंसीबट कै निकट रहति है चरति फिरिति अतुराई।
वोलत सखा सुवल श्रीदामा मुरलीटेर सुनाई।
सुनि मुरली की टेर चतुरदिसि गहे लेति तृन धाई ॥
इतनी सुनत सकल देवनि मिलि पुहुप वृष्टि बरसाई।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरी लीला वेद पुराननि गाई ॥ ३४ ॥

राग विलावल

जवहि वेनुधुनि साँमरै वृंदावन लाई।
मोही तिया जाति जमुनाजल सुधि तनु की विसराई ॥
सुरभी तृन गहि रही मुखनि मैं पंछी रहे चुपाई।
कालिंदी परवाह थकित भयौ गति निज पवन भुलाई ॥
मुनि कौ ध्यान छूटि गयौ तवही जै जै जै जदुराई।
'सूरदास' रविवाजि चलत नहिं तातैं रथ विलमाई ॥ ३५ ॥

राग सारंग

अँचवत अति आदर लोचनपथ मन छन तृपति न पावै।
हरि जू के तन की सोभा, कछु कहत नही कहि आवै ॥
सजल मेघ घन स्याम सुंदर वपु, तडित वसन, वनमाल।
सिखर सिखंडी, धातु विराजत, सुतन, सुरंग प्रवाल ॥
कुंडल करन कपोलनि की छवि, वने कमल दल नैन।
अधर मधुर मुसुक्यानि मनोहर करन मधुर मुख वैन ॥
कछुक कुटिल, कमनीय सुभग सिर, गोरज मंडित केस।
राजत मनु अंवुज-पराग-रस रीझत मधुप सुदेस ॥
प्रति प्रति अंग अनंग-कोटि-छवि सुनि सखि चित्त रही न।
'सूरदास' जहँ दृष्टि परति है नैन रहत ह्वै लीन ॥ ३६ ॥

राग विभास

चलि री मुरली बजाई कान्ह जमुन तीर।
तजि कुल की कानि लाज गुरुजन की भीर॥
जमुना जल थकित भयौ वछ न पियै छीर।
सुर विमान थकित भए थकित कोकिल कीर॥
देह की सुधि विसरि गई विसरयौ तन चीर।
मातु पिता विसरि गए विसरे वालक वीर॥
मुरली धुनि मधुर वजै कैसैं धरौ धीर।
'सूरदास' मदन मोहन जानत हौं पर पीर॥ ३७॥

राग सोरठ

वाँसुरी दीजियै व्रज नारी।
काल्हि सखि इहि ठौर वाँसुरी भूलि विसारी।
तुम जु गई लै धाम वात हम सुनी तिहारी॥
तुम्हरैं काम न आवई वसी हमरी देहु।
हम आतुर ह्वै माँगही तुम नहि नाहि करेहु॥
वंसी कैसी होइ नैन भरि कवहुँ न देखी।
पिता तुम्हारे साधु कान्ह तुम भए विद्वेषी॥
इत उत खेलत तुम फिरौ कितहूँ भूलि गई सु।
सौंह खाति हौ वावा की नाहिं जु नाहिं लई सु॥
वंसी हमरी देहु काहे कौ रारि वढावौ।
समुझि वूझि मन माहिं काहे कौ लोग हँसावौ॥
लोग हँसैं चरचा करैं देखौ मनहि विचारि।
यह वंसी व्रजनाथ की देति, न काहैं गँवारि॥
हम सौ कहत गँवारि आपनी करत वडाई।
मारौ गुलचा गाल तवैं वावा की जाई॥
तुम से केतिक ग्वाल है हमसौ माँगत छाँछि।
फेंटि कमरिया कांध पैं काहे दिखावत आछि॥
या वंसी कौ सार कहा तुम ग्वालिनि जानौ।
तीनलोक पटरानी मेरौ मन यासौ मानौ॥
यह वंसी खोजत फिरैं व्रह्मा सिव मुनिनाथ।
धरे मकुटिया सीस पैं कहा नचावौ हाथ॥
नंद महर के कान्हर तुम कौं कौन पतीजै।
भूले काहू ठौर दोष हमकौं नहि दीजै॥
लै लकरी मुख पर धरी वँसूरी वाकौ नाउँ।
जा घर ऐसैं पूत हैं उजरै ताकौ गाउ॥
वसौ कि ऊजर होउ नही कछु चाह तुम्हारी।
तुम ऐसी लख चारि नंद घर गोवरहारी॥
इक लख मेरे सँग फिरै इक लख आवै जाउँ।
लख ठाढी दरसन करै लख ठाढ़ी ललचाइँ॥

सुदर सुघर सुभाउ नारि वंसी लै दीन्हीं।
मोहन चतुर सुजान साँमरै हँसि कर लीन्हीं॥
लँ वसी ग्वालिनि मिली घूँघट वदन छपाइ।
'सूरज' हारी ग्वालिनी जीते जादवराइ॥ ३८॥

राग नट

ग्रीवा नमित किए जु अधोमुख, कहति ललनु हा हा हँसि खेलि।
चित चटपटी चोप मिलिवे की, परत चरन पर ग्रीवा मेलि॥
परम प्रीति ,रसरीति परस्पर, दंपति रहे सु आनँद झेलि।
'सूरदास' प्रभु हिलि-मिलि नैननि, विहँसि लई उर लाइ नवेलि॥ ३९॥

राग विभास

हौं गई वछरा मिलावन स्याम ने वान मारी।
घरनी मुरछि परी सुनि सजनी तन की सुधिहुँ विसारी॥
सखी एक जव जल मुख धोयौ क्रम क्रम अँचल सम्हारी।
'सूर' के प्रभु वरजौ इनि अँखियनि ये सवही तैं न्यारी॥ ४०॥

राग सूहा विलावल

ए हो मेरी प्रानपियारी। भोरहि खेलन कहाँ सिधारी॥
कुकम भाल तिलक किन कीन्हौं। किन मृगमद कौं विदा दीन्हौं॥

छंद

विदा जु मृगमद दियौ माथै निरखि ससिसंसय परचौ।
इहि सरद निसि के कलापूरन मनौं मनदर्पहिं हरचौ॥
हेरि मुख हसि कहति जननी अलकवेनी किन कई।
'सूर' के प्रभु मोहिं अचरज रची किन मनमथ मई॥
नंदमहर की घरनि जसोवै। फिरि फिरि मेरे मुखतन जोवै॥
खेलत वोलि निकट वैठारी। कछु मन मैं आनँद कियौ भारी॥

छंद

मन मैं जु आनँद कियौ भारी निरखि छवि विह्वल भई।
मेरे ववा कौ नाम लै लै तोहिं हँसि गारी दई॥
पाटी जु पारि सँवारि भपन गोद मैं मेवा भरी।
लखि 'सूर' के प्रभु हरपि हिय मैं विधिना सौं विनती करी॥
इतनी सुनि कीरति मुसुकानी। नँदरानी के जिय की जानी॥
मेरी सुता रूप की रासी। कान्ह उदासी अरु वनवासी॥

छंद

स्याम वनवासी उदासी रंग ढंग न क्यौं हूँ वनै।
नील मनि ढिग नग अमोलिक कांच कंचन क्यौं सनै॥
ललिता विसाखा सौं कह्यौ भुकि लली तजि तुम कित रही।
'सूर' के प्रभु भवन वाहिर जान मति दीजौ कही॥

दिन दस पाँच अटक जव कीन्हे। कुँवरिहिं कान्ह दिखाइ न दीन्हे॥
मुरछि परी तनसुधि न सम्हारै। प्यारी डसी भुअगम कारै॥

छंद

प्यारी भुअंग डस्यौ कारै गारुड़ी थाके सवै॥
श्रीनंद-नंदन-मंत्र विनु यह गरल दावै क्यौ दवै॥
मनुहारि करि मोहन वुलाए सकल विष देखत नसे।
'सूर' के प्रभु जोरि अविचल जियौ जुग जुग जिय वसे॥
उठि सम्हारि तन वदन पखारयौ। निरखि स्यामतनअँचर सम्हारयौ॥
मुरि वैठीं मन भयौ हुलासा। कीर्ति गई अपने पतिपासा॥

छंद

अपने जु पति पै गई कीरति प्रीतिरीति जनाइयौ।
मंत्र कीन्हौ व्याह कौ सव सखिनि मगल गाइयौ॥
रच्यौ वृंदावन स्वयंवर कुंज मंडप छाइयौ।
'सूर' के प्रभु स्याम सुदर राधिका वर पाइयौ॥
तहँ विधिवत विधि विधि सव कीन्हीं। मंगल भरि कै भाँवरि दीन्ही॥
विवुध विविधि कुसुमनि वरखावै। नर नारी मिलि मंगल गावै॥

छंद

आनंद मै व्रजनारि हरषीं कहतिं कंकन छोरियै।
यह नही गिरि जो उचकि लीन्हौ स्याम हँसि मन मोरियै॥
छोरौ न छूटै कंकना दृढ प्रीतिगाँठि हियै भई।
'सूर' के प्रभु जुवति जन मिलि गारि मन भावति दई॥ ४१॥

राग मलार

हरि सँग नीकी लागति वूँदै।
कंचुकि चीर चूनरी भीजी कहूँ परी सिर गूँदै॥
मृगनैनी ससि वदनी वाला कनक-कलस-कुच फूँदै।
करिहै अंग मुदित 'सूरज' प्रभु मेटि विरह की दूँदै॥ ४२॥

राग कान्हरा

कान्ह जगाइ गुपाल मुदित मन हठ री वैठे गिरिवरधारी।
हरधर संग सुवल श्रीदामा गोप ग्वाल सव गए सिंगारी॥
देखन कौ उमहे सुर नर मुनि राउर माँझ भीर भई भारी।
जैजैकार होत चहुँ दिसि तैं सुरपति करत कुसुम वरषा री॥
कंचन रतन जटित हीरानग विसकर्मा रचि सुविधि सँवारी।
परम विचित्र वनी अति सुंदर जगमगाति कुहु तिमिर विदारी॥
नंद भवन भरि धरे विविध पक अगनित मेवा गरी छुहारी।
टेरि टेरि जव देत सवनि कौ सिव ब्रह्मादिक गोद पसारी।
करति आरती मातु जसोदा मंगल गावति सव व्रजनारी।
'सूर' रसिक गिरधर मुख विलसत वरप वरप प्रति परव दिवारी॥ ४३॥

राग बिलावल

कहत गोपाल जु नंद सौं, पूजौ गिरिराइ।
बहु बिधि ब्यंजन साजि कै, पकवान बनाइ।।
करौ मतौ सब गोप तैं, तुम बोलि पठाइ।
उपनँद श्री वृषभानु जू, सब बैठे आइ।।
कान्ह कह्यौ मोसौं सपन मैं, बोले गिरिराइ।
अरपौ बलि मोकौं सबै, बढ़िहैं बछ गाइ।।
सबहिनि मन आनँद भयौ, यह भलौ उपाइ।
याके दीन्हैं बाढिहैं, गोधन सुत पाइ।।
चण सबै मिलि साजि लै, बहु सकट जुराइ।
बिधि सौं पूजा पूजि कै, सब भोग धराइ।।
देखि इंद्र अति कोप करि, मेघनि भरलाइ।
'सूर' स्याम रच्छा करी, गिरि लियौ उठाइ।।४४।।

राग बिलावल

पूजाबिधि गिरिराज की नँदलाल बनावैं।
झुंडनि झुंडनि गोपिका मिलि मंगल गावैं।।
गंगाजल अन्हवाइ पय धौरी कौ नावैं।
बिबिध बसन पहिराइ कै, चंदन लपटावैं।।
धूप दीप करि आरती बहु भोग भगावैं।
तिलक कियौ बीरा दियौ माला पहिरावैं।।
दरकि चले लहुरे बडे बय गाइ खिलावैं।
फिरि गिरिवर भोजन कियौ मुख 'सूर' दिखावैं।।४५।।

राग मलार गिरिधारणलीला

बादर ब्रज पर आनि अरे।
तब तैं बाम करज गिरि राख्यौ, बहुरि फेरि घुमरे।।
सात दिवस मूसल जलधारा, सायर समुद भरे।
नहिं परवाह नंद के ढोटहिं, टेरत बेनु धरे।।
लियौ उठाइ कोपि कै गिरिवर, सकल सरन उबरे।
'सूरदास' बलिबलि चरननि कौ, सुरपति पाइ परे।।४६।।

राग सारंग गोपादि की बातचीत

सबनि मिलि कै कह्यौ पूजौ साँवरे की बाहँ।
गाइ गोपी ग्वाल राखे सात दिन करि छाहँ।।
इंद्र कहा रिसाइ कीन्हौ गयौ अपबल गाहि।
आइ तिनहूँ पाँइ पकरे समुझि कै मन माँहि।।
पूतनादिक कितिक लीला करी है सब चाहि।
हमारे घनस्याम रामऽरु हम न जानैं काहि।।
सबै बात अचर्ज इनकी बिधिहु जानै नाहि।
'सूर' प्रभु की प्रबल माया जानि बूझि भुलाहिं।।४७।।

राग सारग — वरुण से नंद को छुड़ाना

नंद कहत तुम भले कन्हाई।
तुम तौ तिहूँ लोक के ठाकुर हमकौ भले अमाई॥
इंद्र कुवेर वरुन सब दिगपति तिनके तुम हौ साईं।
वरुन हमहिं लै गयौ पतालहि सुमिरत तुमहि गुसाईं॥
तवहिं स्याम यह कही नंद सौं जल कौ यहै सुभाई।
जमुनाजल मैं यहै अचर्भौ भीतर देत दिखाई॥
चलिये फेरि न्हान तुम वावा कैसे चरित दिखाही।
जमुना जाइ नद पुनि देख्यौ वरुनलोक दिखराही॥
'सूर' स्याम सौ कहत नद घर चलियै महर डेराई॥ ४८॥

रास पंचाध्यायी

अति रँग भीनी अति रँग भीनौ। मोहन लाल वन्यौ रँग भीन्यौ॥
गोपिनि सवकौं अति सुख दीन्हौ। सवहिनि कौ मनभायौ कीनौ॥
लालन कैं उर मरगजी माला। निरखत थकित भई व्रजवाला॥
लालन पाग केसरी सोहै। देखत रतिपति कौ मन मोहै॥
लालन पीक कपोल विराजै। अधरनि अंजनरेषा छाजै॥
तापर एक चंद्रिका धारी। अतिहि वने वानक वनवारी॥
अँग अँग सोभा कहै कहा री। छवि पर 'सूरदास' वलिहारी॥
॥ ४९॥

राग नट

मोहन मोहिनि वातैं करै जु मोकौ करत न आवै री।
तन सुख मन सुख नैननिहूँ सुख स्रवन सुधा रस प्यावै री॥
दच्छिन चरन चरन पर राखे मुरली मधुर वजावै री।
मनिमय मकर-मनोहर-कुंडल सिपीसिपड डुलावै री॥
सजल मेघ घन स्यामल सुंदर पीतांवर फहरावै री।
असित अभ्र मनु लसति तड़ितदुति इहि विधि सोभा पावै री॥
उर सुचिगध सुरंग माल पदपकज लौ लटकावै री।
अति उमँगी सुदरता रोकित छवि तरग उपजावै री॥
वन के धातु विचित्र चित्र तनु अंग अनंग लजावै री।
नटवर भेष मनोहर मूरति मधुर मधुर सुर गावै री॥
ककन-किंकिनि-नूपुर-रव जुवतीजन मोद वढावै री।
वाल मराल परस्पर वोलत मुर्छामदन जगावै री॥
काम कमान समान भौंह दोउ मनमथ वान चलावै री।
चंचल नैन सैन रतिपति मनु व्रजललना ललचावै री॥
जगतविमोहन हँसि कवहूँ कै मानहि मान छुड़ावै री।
नैकु-विलोकन-सहज-माधुरी तीनौ ताप नसावै री॥
कैसौ राम रच्यौ वृंदावन वंसी नारि वुलावै री।
मनौ नालमनि-कनक-खंभ-विच मंडल सुभग वनावै री॥
मानौ घन घन अंतर दामिनि मदन के मदहि गँवावै री।
कलानिधान सकल-गुन-सागर निर्तत भेद दिखावै री॥

सीतल मंद सुगंध पवन वहै उड़पति अतिहि थकावै री।
नव किसोर नँदलाल लड़ैतो 'सूरदास' जिय भावै री॥ ५०॥

राग विहागरौ — श्रीकृष्ण का अंतर्धान होना

तुमही धन तुमही मन मेरे।
तुमही प्रान अधार स्याम घन तुम विनु दुतिया और न हेरे॥
कान्ह मन वच तुम्है चाहौ करौ नाहीं मान।
सुन्यौ चाहौ सदा स्रवननि मधुर मुरली तान॥
कुज कुंजनि फिरति फेरति तुम गुननि की माल।
'सूर' के प्रभु वेगि मिलि कै हरौ सव जंजाल॥ ५१॥

राग कान्हरा — गोपी गीत

सुनहु स्याम इक वात नई।
आजु रास राधा अवलोक्यौ मेरे मन मैं भूलि भई॥
हँसि वोलन डोलन वन विरहन वह चितवनि न जाति चितई।
कौन कहै वृपभानु नदिनी प्रगट भई जनु काम जई॥
तुम सम नैन वैन तुमही सम तुम सम आनँद केलि ठई।
तुम्हरौ रूप धरयौ तुमही सौं तुमही सी भई तुमहि मई॥
माथैं मुकुट पीत पट मुरली वनमाला छवि छाति छई।
रचक भेद रह्यौ या तन मै और सकल विधि पलटि लई॥
तिय आलिगन पिय अवलोकन तुरत जु उठि मोहि अंक दई।
फिरि चितवन अरु मुरि मुसुक्यावन उघटन मिस करि नृपति ठई॥
यह कौतुक अनुपम मन मोहन मनहुँ घोप रस वेलि वई।
'सूरदाम' स्वामी के परसत ललिता वलि वलि हारि गई॥ ५२॥

राग विहागरौ — रासनृत्य तथा जल क्रीड़ा

मुरली वजावत स्याम। लखि लजत कोटिक काम॥
हरि मोहिनी-वपु-धरयौ। तव काम को मद टरयौ॥
श्रीमदनमोहन लाल। नव नागरी सँग वाल॥
नव कुंज जमुनाकूल। रहे 'सूर' देखि सु भूलि॥ ५३॥

राग रामकली

(श्री जमुना जी) तिहारो दरस मोहिं भावै।
वंसी वट कै निकट वहति हौ लहरनि की छवि आवै॥
दुख हरनी सुख देनी जमुना प्रातहिं जो जस गावै।
मन मोहन की खरी पियारी पटरानी जु कहावै॥
वृंदावन मैं रास विलासै मुरली मधुर वजावै।
'सूरदास' दंपति छवि निरखत विमल विमल जस गावै॥ ५४॥

ईहि मुरली मन हरयौ हमारौ, कमल नैन जदुराई हो।
एक अचंभौ सखि मैं देख्यौ, वृंदावन मै जाई हो॥
विच गोपी विच माधौ सोभित, रास रच्यौ वन ठाई हो।
वाजत वेनु मृदंग मधुर धुनि, लीला अगम दिखाई हो॥

मोहे नर सुरअसुर नाग मुनि व्योम विमाननि छाई हो।
दीन दयाल 'सूर' के स्वामी, चलु सखि देखि न जाई हो॥ ५५॥

राग बिहागरौ

निसि सरद कोटिक काम। सोभित तहँ घन स्याम॥
मन मोहन रूप धर्यौ। तब काम कौ गर्व हर्यौ॥
श्री मदन मोहन लाल। नव नागरी सँग बाल॥
नव कुंज जमुनाकूल। देखत सु दरसहि फूल॥
मुरली जु अधर धरी। नर नारि बहु बस करी॥ ५६॥

राग बिलावल विद्याधर-शाप-मोचन

राजत जुगल किसोर किसोरी।
प्रात समय देखियत ग्रीवाभुज स्याम सिथिल आलस गति गोरी॥
रहे उघटि बलहीन विलासनि बरनौं कहा मदन रँग बोरी।
मनौ अग अँग सुख फलकै हिन दुति बसंतमारुत झकझोरी॥
ससि मुख सखी स्यामलोचन छबि प्रगटत मिलत उभय पट कोरी।
मनु रवि देखि तरपि कछु सकुचत निरखत जुवति लेति चित चोरी॥
थकित सुभग दृग अरुन उनींदे कुरुप कटाच्छ करति भरि थोरी।
खंजन मृग अकुलात घात डर स्याम व्याध बाँधे रति डोरी॥
नील अलक ताटक अक दै स्याम गड उपटित बर छोरी।
मनहुँ सेस मधुसर कूरम रजु काढत उभय रूप धरि तोरी॥
कोमल कठिन कपोल अमल अति तहँ उपटित क्रीडा-रद-रोरी।
मदन कोप पर सैलसँचारी छाप ताप मोचन मधु घोरी॥
नैन बैन कर चरन चिकुर चल सिथिल उभय स्रव स्वेद निचोरी।
मनु सेना संग्राम मध्य तै प्रीति दै जाइ बहोरी॥
थाके रँगरन की छबि छाजत हार मानि नहिं रहत निहोरी।
'सूर' सुभट दोउ खेत न छाँड़त मनहुँ आइ ठाढ़े दल जोरी॥ ५७॥

राग मलार

देखौ माई सुंदरता की रास।
अति प्रबीन वृषभानु-नंदिनी निरखि बँध्यौ दृगपास॥
अग अग प्रति अमित माधुरी भ्रकुटी मदन बिलास।
जब तै दृष्टि परी सुंदरता बस कियौ बिनहि प्रयास॥
प्रथम समागम की सुनि सुंदरि उपजति है अति त्रास।
अब तौ मन बच क्रम सब दीन्हौ सुनि सुनि 'सूरजदास'॥ ५८॥

राग टोड़ी

क्रीड़त कालिंदी कूल मै कहाँ कोमल मलय समीरे।
संका रहित बिपुल अबलनि सँग बिलसत कुंज कुटीरे॥
कुमकुम अगरु सत सोचित रेखा पंकित भँवर बिसेखे।
मालति मिलित सरिता जल 'सूर' प्रतिकृत अभिसेखे॥ ५९॥

राग सामंत

कुंज मैं बिहरत नवल किसोर।
एक अचँभौ देखि सखी री उयौ सूर बिनु भोर॥
तहँ घन स्याम दामिनी राजत है ससि चारि चकोर।
अंबुज खंजन मधुप मिलि क्रीड़त फनिहिं मोर॥
तहँ द्वै कीर बिंब फल चाखत बिद्रुम मुक्ता चोर।
चारि मुकुर आनन पर झलकत नाचत भौंरनि मोर॥
तामैं एक अधिक छबि सोहै हंस कमल इक ठौर।
हेमलता तमाल गहि है फल मानौ केलि अँकोर॥
कनकलता नीरज राजत उपमा कहँ नव थोर।
'सूरदास' प्रभु इहि बिधि क्रीड़त ब्रज-जुवती-चित-चोर॥ ६० ॥

शंखचूड़वध

जब जब हरि कर बेनु गहत।
पसु मोहैं सुरभी मृग बिथकैं तृन मुख टेकि रहत॥
सुक सनकादि सकल जग मोहै जोगध्यान उपहत।
'सूर' स्याम तेऊ सब मोहे जिनके मुखहिं लहत॥ ६१ ॥

राग पंचम

पनघट लीला

मैया तेरौ मोहन अतिहिं सयानौ देत अटपटी गारी।
कुंज महल मैं अँचरा फार्‌यौ हँसि हँसि दै दै तारी॥
गोरस ढोरै मटुकी छोरै माट दही के फोरै।
उठावैं कौ टेरी कैसे बाँधी जबोटै भव बंध तोरै॥
अधरपान परिरंभन चुंबन कहँ लौं कहौ लजानी।
सुक नारद सो लीला अगोचर 'सूर' गितक बर बानी॥ ६२ ॥

राग बिलावल

दान लीला

तुम कौन घोष तै आए। तेरे बेष देखि जिय भाए॥
तुम कब तै भए दधिदानी। तुव मन की मैं पहिचानी॥
तुम छाँड़ी अरकअरंती। हम हैं गृह-नातन-संती॥
तुम कहियत कुंज बिहारी। हमहूँ वृषभानुदुलारी॥
तुम सेष सहस्रफन सैनी। मो पन्नग लाजति बेनी॥
तेरैं कुटिल अलक अलि मूला। मो सीस बिबिध बिधि फूला॥
तू वृंदावन चंद कहावै। मो मुख सम चंद न पावै॥
तेरौ कमलनयन है नाउँ। हौ अंग अँग कमल गनाऊँ॥
तेरैं मोरपच्छ रतिरंग। मेरैं सिर-मुक्ता-गुन संग॥
तेरैं कुंडल मकर बनाए। मो स्रुति ताटंक लगाए॥
तुम सुंदरता की सींवाँ। मो देखि बिमोहित ग्रीवाँ॥
तुव कटि पीतांबर राजै। मो तुन कटि किंकिनि साजै॥
तुव बाँह बरुन की फाँसी। मो भुज मृनाल सुपासी॥
तेरैं उर कौस्तुभमनि सोहै। मो उर कुच श्रीफल सोहै॥
तू अनुपमता कर अंघ्रा। मो कदलि दखिय जुग जंघा॥

तै करज अग्र गिरि राखी। मैं राखे धरि तुहि आँखी॥
विनु पुन्य सुजस नहि होई। श्रम करौ विविध विधि कोई॥
तेरौ पदप्रताप जन जानै। मौ पद परसत हौ मानै॥
तुम चलहु जमुनजल तीरा। जहँ सीतल मद समीरा॥
करी लागलता हरि केली। हँसि प्रियाग्रंस भुज मेली॥
मिलि सुरति रग रस पायौ। जन 'सूरदास' जस गायौ॥ ६३॥

राग नट

(दधि लूटी) आजु वृंदावन मैं दधि लूटी।
कहुँ मेरौ हार, कहूँ नकवेसरि, कहूँ मोतिनि की लर टूटी॥
वरजि जसोमति अपनै कान्हर, झकझोरत मटुकी फूटी।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस कौ, सरवस दै ग्वालिनि छूटी॥ ६४॥

राग नट

मै तौ आजु करी नँद कानि।
एसौ वास कौन व्रज रैहै नित उटि गोरसहानि॥
प्रात समय गोकुल की गली मैं गही मथानी आनि।
और संग की जानि दई सव हौ लूटी पहिचानि॥
उलटी रीति चली या व्रज मैं कोउ न घटावत कानि।
'सूरदास' प्रभु व्रज जोधा ये सव के है दधिदानि॥ ६५॥
गिरि पर चढि टेरत ग्वालनि सौ कौनै वन तुम गाइ विडारी।
पसु पच्छी अति करति कुलाहल वीथिनि सघन भई उँजियारी॥
कटि किंकिनि-कचन-नूपुर-धुनि तिनके सव्द रहे गुजारी।
कोटि प्रकास भयौ रवि ससि कौ या वन मै कोउ गोप कुमारी॥
आई भलैं जानि जिनि पावै पूरन इच्छा भई हमारी।
माँगौ जाइ दान सवहिनि पै वोलौ वचन मधुर सुखकारी॥
उनमैं तौ वृषभानु नदिनी दैहै स्याम सवनि कौ गारी।
'सूरदास' प्रभु प्रगटि ग्वारिनिनि लेहु दान तुमही अधिकारी॥ ६६॥

क्यौ री तै दधि लीन्हे डोलति।
झूठैही इत उत फिरि आवति इहँहि आनि कै वोलति॥
मही भरी ज्यौ मटुकी त्यौही मोहि देखत भई साँझ।
गोरस कौ न लिवैया जानति हौ इहि वखरा माँझ॥
सुनि री सखी वात इक मेरी कहति वुरौ जिनि मानै।
तेरे घर मै तुही सयानी और वेचि नहि जानै॥
रिझई रसिक स्यामघन सुंदर चितवत चित्त चुरावै।
'सूरदास' ग्वारिनि रसभीजी ससकत आपु वँधावै॥ ६७॥

राग सारंग — ग्रीष्मलीला, सखिग्रो के साथ यमुनाविहार

हरि मुख किधौ मोहिनी माई।
अवलोकत, अघात नहि, मेरे नैना ठगे ठगौरी लाई॥
कुंडल किरनि निकट भ्रू, लोचन अरति मीन दृग सम चपलाई।
स्रवन रंध्र नहि निपुन दास जनु काम कुवैनी कलित वनाई॥

छाजति रदन रदनछद की छवि मंद माधुरी गिरा सुहाई।
जपा कुसुम दल मनहुँ कमल पर तड़ि जुत कोप कोकिला गाई ।।
सब विधि वसीकरण की बाँकी वलित वलाक अनुज वल झाई।
'सूरदास' प्रभुवदन विलोकत जकित थकित चित अनत न जाई ।। ६८ ।।

राग गौरी अनुराग समय

देखन दै पिय वैरिनि पलकैं।
निरखत रूप नंदनंदन कौ बीच परैं मनु ब्रज की सलकैं ।।
वन तैं आवत वेनु बजावत गोरजरजित राजति अलकैं।
चपल कुँडल अरु चपल अंग वलि ललित कपोलनि मंजुल झलकैं ।।
ऐसौ मुख देखन कौ सजनी कौन करै सठ लूटि कमल कैं।
'सूरदास' प्रभु की गति यह जिय मीन मरै भावै नहि जलकैं ।। ६९ ।।

राग केदार

जल-सुत-सुत ताकौ रिपुपति सुत घेरि लई सखि कत हौं धाऊ।
कालनेमि रिपु ताकौ रिपु अरु ता वनिता कौ काहुँ न पाऊँ ।।
धरनि गगन मिलि होइ जु सजनी सो गए ता विनु दिन विलखाऊँ।
दसरथ-तात-सत्रु कौ भ्राता ता प्रिय सुता सु कैरौ पाऊँ ।।
एक उपाय जानि जौ पाऊँ मो खगपति-पितु-दृष्टि चुराऊँ।
'सूरदास' ते गिरिवरभ्राता चिता रहित सकल दिन गाऊँ ।। ७० ।।

राग बिलावल

तैं मेरी लाग गँवाई हो जसुमति के ढोटा।
देह विदेही ह्वै गई मिलि घूँघट ओटा ।।
कमलनयन तुम कुँवर हौ हलधर तैं छोटा।
चपल छबीले रूप मैं भई लोटक पोटा ।।
श्री गुपाल तुम चतुर हौ पै मति के खोटा।
'सूरदास' जानै वहै जिहिं प्रेम की चोटा ।। ७१ ।।

राग विभास

स्याम के भुजनि बीच, राखी है सुरति सीचि, सोई सुकुमारिजागी तमचुर स्वर तैं।
हा हा कान्ह उदै भान, अवहीं होइगौ जान, धूकुर पुकुर छती, गुरजन डर तैं।
मधुर बचन कह्यौ, प्यारे कौ भलौ मनायौ, चुंबन अँकोर देति, निरुवारि गर तैं।
आँगन मैं ठाढ़े आइ, ललिता लेति बलाइ, 'सूर' स्वामिनी राजति आनँद के भर तैं ।।
।। ७२ ।।

राग कान्हरौ यमुनागमन, युगलसमागम

स्यामा निसि मै सरस बनी री।
मृग रिपु लंक, तासु रिपु गज, ता ऊपर मधु केलि ठनी री ।।
कीर कपोत मधुप पिक तंवा, रिपु सत रेख बनी री।
उड़ुपति विंब धरे अति सोभा, सुर वाला जोरि चिनी री ।।
कनकखभ रचि नवसत साजे, जलधर भप जब स्रवन सुनी री।
कर गहि सत्र सात परि सारँग, दंपति हीं की सुरति ठनी री ।।

उमापति रिपु कौ ललचानी, वन रिपु तन मैं अधिक डरी री।
'सूरदास' प्रभु मिले राधिका, तन मन सीतल रोम भरी री॥ ७३॥

राग ललित

भोरहु भए प्रगट स्यामा जू तउ रजनी मन आनति।
पिय-अँग-रुचि लोचनपथ पूरति निसि अँधियारी मानति॥
अलिगन स्रोनि रटत नीरज पर सुनि रसना रव ठानति।
पूरब कृत करनी माधव सौं आनँद सैन सुनावति॥
'सूरदास' सहचरि सब प्रमुदित विहद जतन करि भानति।
दिन पुनि प्रगटि विनोद रजनि के तरनि उदोत न मानति॥ ७४॥

राग विलावल

अति रसवस नैना रतनारे।
छपत न छपे छपावत हौ कित जनु मनमथ सिर वरत अंगारे॥
तव पाले हित जानि भली विधि जे हुते हरि संबर दधि डारे।
जब भए प्रकट प्रवीन तरुन तन तरु तरुनाई तामस जनु तारे॥
पुनि सिव पूरव वैर समुझि करि मदन मुदित मादक बल भारे।
अति रिस भौंह सरासन जुत करि आनि कमल साधत सर न्यारे॥
समुझि परी सखि रति स्वरूप तुम रतिपति ज्यौं निसि विलसनहारे।
'सूरदास' धनि धन्य भामिनी जिहिं अनुराग तिलक हरि सारे॥ ७५॥

राग विभास

आली री पीरी यह भई है निकसि ठाढि भई द्वार कुंज ऐन के।
नथ खैंच्यौ वदन निरखत ही जी मो जान्यौ चंद्रमा तातै धोखे रैन के॥
नैन कुरंग जानि जिय मैं आयौ सतभाव आधौं विद्रुति आधौं इत रह्यौ चैन के।
'सूरदास' साखि स्याम मोती माल तारागन और उपमा को देखि मदन मोहन पीय संग सुख मैन के॥ ७६॥

राग विलावल

सोइ उठी वृषभानु किसोरी।
जम्हुआनी अरसाइ मोरि तनु ठाढी उलटि उभय कर तोरी॥
विविकर वीच वदन यौ राजत मोहे मोहन प्रीति न थोरी।
नाल सहित मनु जलज जुगल निज मधि वाँध्यो विधु वैर वहोरी॥
तिहिं छिन कछुक उरोज उदय भए सोभा सुभग कहै कवि को री।
मनु द्वै कमल सहाइ सहित अलि उठे कोपि जिय संक न जोरी॥
तापर लोचन चारु वने अति अरुन कोर त्रिभुवनछवि छोरी।
'सूरदास' इंदीवर विय मनु विरचि लरे ससि सौं दल जोरी॥ ७७॥

राग विभास लघु मानलीला

जान्यौ जान्यौ री सयन तेरो प्रानेस्वर सौ तै कियौ मान भयौ है विहान।
पिय को तेरोई ध्यान मेरी सिख सुनि कान जामैं वसै प्रान तासौ केसौ धौं गुमान॥
सुनि री मुरलीगान आछी नीकी मीठी तान संकेतसुथल रच्यौ कुसुम वितान।
'सूरदास' प्रभु सव-जान-सिरोमनि मान मदन मोहन तेरे सुख कौ निधान॥७८॥

राग विभास

प्रात समय नँदनंदन स्यामा देखे आवत कुंजगली।
नव घन स्याम तरुन दामिनि मिल राजत रूप अनूप अली॥
लटपटि पाग सीस कर मुरली लोचन घूमत भाँति भली।
सिथिलित चीर मरगजी अँगिया काम कामिनी देखि छली॥
चारि जाम निसि जागत बीते उन उमँग्यो अनुराग बली।
कज्जल अधर नैन बीरी रँग मदन नृपति की चमू दली॥
'सूर' वदन पंकज रस पीके अलक मधुप की पाँति चली।
प्रफुलित प्रीति परस्पर निरखत तरनि उदय ज्यों कमलकली॥ ७९॥

राग सारंग

जौ गिरिधर मुरली हौं पाऊँ।
तेई तान कहौ तेरी सौं कै सुरभेद अनेक उपाऊँ॥
तुम बस करी सकल ब्रजवनिता मैं बस करि हरि तुम्हें लजाऊँ।
जोन गुनी विद्याधर आदिक गुन करि किन्नर कोटि रिझाऊँ॥
अनहद भेद बजाऊँ सारँग तुरग सहित रविरथ बिरमाऊँ।
अब गति मद करौं मारुत की सूरजसुता प्रवाह थकाऊँ॥
सुक-मुनीस-सनकादिक-संकर-ध्यान छुड़ाइ मोहिनी लाऊँ।
'सूर' कहै वृषभानुनंदिनी धरि अधरनि पर अचल चलाऊँ॥ ८०॥

आजु दोउ स्यामा स्याम बने।
विहरत फिरत बाहँ ग्रीवा धरि एकहि प्रेम सने॥
बिबि उर पर बनमाल बिराजति स्रमसीकर जु घने।
मानहुँ चपल होत उड़िबे कहँ चाहत कीर चुने॥
धीर समीर कलिंदी कै तट प्रफुलित कुंज बने।
'सूरजदास' बिलासरूपनिधि अँचवत दृग अपने॥ ८१॥

प्रीतम बने मरगजे बागे।
सुरतकुंज तें चले प्रात उठि धन पाछै प्रिय आगे॥
छूटी लट टूटी मुक्तावलि अध घूँघट पागे।
खंडित अधर पयोधर मंडित अति आलस निसि जागे॥
नखसिख कुसुमबिसिख की सेना मनहुँ छूटे रन लागे।
'सूरदास' निसि रसिक राधिका, बिलसे स्याम सभागे॥ ८२॥

आजु री नीके स्यामा स्याम।
कुंज भवन तें निकसे हैं पिय आगे पाछै बाम॥
लटपट पेच मरगजे बागे सो लखि लज्जित काम।
'सूरदास' प्रभु रैनिउनींदे जागे चारौ जाम॥ ८३॥

राग सारंग

सैन समय के पद

नैना पंकज पंक खचे।
मोहनमदन स्याममुख निरखत, भ्रुवनि बिलास रचे॥
बोलनि हँसनि बिराजमान अति स्रुति अवतंस सचे।
जनु पिनाक की त्रास लागि, सारँग ससि सरन बचे॥

चँद चकोर चातक ज्यौं जलधर हरि पर हगंपि लचे।
पुहुप वास लै मधुप सैल वन घन करि भवन रचे॥
पर प्रीति कौ कुड महागज काढत वहुत पचे।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस कौं मज्जन हेत सचे॥ ८४॥

राग आसावरी

मेरे नैननि हीं सब दोस।
कहा बसाइ अवस है मोतैं हीन हिये कौ सोस॥
वन कल छल इन तकि नहिं पूजति तिनसौं केसौं रोस।
गुपुत हुती पूँजी तन की सब मूसि दिए गुन कोस॥
मानत नहीं नैन ये मेरे इन पायौ परसोस।
'सूरदास' प्रभु कै वस कीन्हीं आपु रहे गहि वोस॥ ८५॥

राग मालव

देखि सखि लोचन फिरत न फेरि।
अंगद मुकुट छुद्र छुद्रावलि जालावलि रहे घेरि॥
छवि विलोल अँग अँग पर उपजति, लेति चहूँ दिसि हेरि।
विसद दाम अभिराम सितासित अलि सावक कुल केरि॥
दुज दामिनि दमकत विरचित चित चातक परनि परे रि।
अंवर धरनि धार आलवित वारिद मगन अरे गि॥
कोसत कोस नैन विवि पंकज रीति तनत उर भेरि।
तन मन पलटि लियौ सखि मेरौ स्यौं दृग मूल अजेरि॥
'सूरदास' प्रभु चतुर सिरोमनि भए वस्य विनु वेरि॥ ८६॥

राग विलावल — खंडिताप्रकरण, मानलीला तथा दंपतिविहार

तहँइ जाहु जहँ रैनि रहे वसि।
तव कत दामिनि पद प्रगटित, आए मारन दुअन वान कसि॥
सिथिल सरोज, रोर सुठि सोभित लीसहु तैं कछु रही धँसि।
जावक रस मनु संवर अरिगन प्रिया मनाई पद ललाट घँसि॥
विनु गुन माल मराल तरुन गति मगन चाल पट परत रहत खसि।
चदन चर्चित कुच उर उपटित मनु नव घन मैं उदित दोइ ससि॥
सखियनि समाचार लिखि पठए तन कागद नख लेख रुधिर मसि।
'सूरदास' प्रभु श्रीगुपाल है मानौं जागत गई निसा नसि॥ ८७॥

राग काफी

कित जदुनंदन रहत पराए।
किहि राकसिनि जावक उर लाए जामिनि जगत जगै न जगाए॥
भूलि गए वै राति की वतिया, वै छतियाँ नखरेख वनाए।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस कौ ये लोचन कवहूँ न अघाए॥ ८८॥

राग विलावल

प्रात समय मेरै मोहन आए।
कुंचित केस कमल मुख ऊपर, हृदै रहे मनु अलि कुल छाए॥

डगमड चलि पग परत न सूधै, इहिं विधि तौ मेरे मन भाए।
कहुँ कहुँ पीक, कहूँ काजर, कहुँ नखरेखा अति बनक सुहाए॥
मो तन, बाँच, निरखि मुसुकाने, छोरि पीत पट अंक दुराए।
'सूरदास' माधौ वलि वलि अब, स्याम जानि जैसै हौ पाए॥ ८९॥

राग बिलावल — राधा का मान

को पतियाइ तुम्हारी सौंहनि।
वा तिय की अनुराग देखियत प्रगट तुम्हारी भौंहनि॥
तुलसी की कह नाम प्रगट कियौ मोही तै करि बोहनि।
प्रात आइ मन पोपन लागे आए घालन खोंहनि॥
मुँहहीं की हम सो मिलवत जिय बसत जहाँ मन मोहनि।
'सूर' सुवस घर छाँड़ि हमारौ क्यों रति मानत खोहनि॥ ९०॥

राधा जी का मध्यम मान

राधे हरि उर लागि हँसी।
हरषित रोम रोम गदगद स्वर छूटति नैन मसी॥
सेत अकास कुमुदपति उड़गन दामिनि मध्य लसी।
अद्भुत वदन जुगल आलिंगन मन्मथ मध्य ग्रसी॥
जैसैं सुभग कसौटी ऊपर कंचनरेख कसी।
'सूरदास' छवि नंदनँदन कै तन मन नैन बसी॥ ९१॥

राग आसावरी — सुखमा के घर सखियों का आगमन

देखि री नखरेख बनी उर।
अँचरा उड़त अधिक छवि उपजत मनहुँ उदित ससिदुति दुतिया वर॥
सोभा कहा कहत बनि आवहिं निरखि निरखि नैननि सचु पावति।
लागत पाइ दसौ दिसि मेलति लिये रजनी कर अलिनि बदावति॥
सुनि स्रवननि उनमान करति हौं निगम नेति यह लखनि लखी री।
मानौं विधु जु विधंत-ग्रहन-डर आयौ तेरैं सरन सखी री॥
मानिनि माल मुकुति मन वांछित हरि हर हरिहिं जु आजु जपत जप।
मनहुँ दच्छ ऋषि-साप-निवारन उभै ईस जिय जानि करत तप॥
छाँडि सकुच साँचौ कहि मोसौं हौं जानति मन मरम पराए।
'सूरदास' प्रभु मिलन प्रगट भयौ पिय कौ परस कैसैं दुरत दुराए॥ ९२॥

राग बिलावल

सुरतसमै के चिह्न राधिका राजत रंग भरे।
जहँ जहँ रतिरन कोप कियौ पिय तहँ कर दसन धरे॥
आड़ मिटी छूटी अलकावलि लोचन अलस खरे।
मानहुँ धनुष धरे कर साज्यौ तून के बान भरे॥
सिंधु-सुता-तनु रोमराजि मिलि राजत वरन खरे।
मानहुँ विधु मनकामना तीरथ तप करि तीर परे॥
दसन अक सहि पीक प्रगट मुख सन्मुख हू न डरे।
'सूर' स्याम सोभा सुखसागर सब अँग भरनि भरे॥ ९३॥

राग गौरी

आजु तोहि काहे आनँद थोर।
यह विपरीत सखी तोहि महियाँ, इंदु कंज इक ठौर॥
हरद्रावन संतत अधिकारी, ज्यों विधि चंद चकोर।
दधिगृह जुगल बनावति क्यों नहि विगसित अंवुज भोर॥
कंपित स्वास त्रास अति मोकति ज्यों मृग केहरिकोर।
'सूरदास' स्वामी रति नागर तौ न हरयौ मन मोर॥ ६४॥

राग केदारौ वड़ी मानलीला

तोहि बोलै री मधु-केसि-मथन।
जमुनकूल अनुकूल तृपारत चकित विलोकत सकल पथन॥
न करु विलँव भूपनकृत दूपन चिहुरविहुर नाना कर न गथन।
समुद कुमुद कमल मलिन दुति पसित भए सव नाथ नथन॥
कुंजनि सेज सजे एकाकी रमत सखी वीथी न सथन।
कुसुम वास सखि आस तुम्हारी हरि जू रचि धरे अपने हथन॥
जुग जु जात पल श्री [illegible]ाल के कुटिल तम करी चढ़े है रथन।
'सूरदास' अति गात कामरत वासर गत भयौ तुम्हरै कथन॥ ६५॥

राग विलावल

धरसुत सहज बनाउ किये।
जल-सुत-पति सुत वाहन ते तिरिया मिलि सीस दिये।
सुर-भप-रिपु-वाहन के वाहन सुरपतिमित्र के सीस निये।
ताहि मध्य राजति कंठावलि मनौ नवग्रह गुदरि दिये॥
सुंदरता सोभा को सीवा बसै सदा यह ध्यान हिये।
धन्य 'सूर' एकौ पल इहि सुख कह इहि विनु सत कल्प जिये॥ ६६॥

राग मलार

राधे तेरौ रूप न आन सौ।
सुरभी-सुत-पति तार्को भूपन उदित न पूजै भान सौ॥
अमी रसाल कोकिला साधे अंवुजचित कुम्हिलात सौ।
विद्रुम अधर दसन दाड़िमविज भ्रकुटी किये सुठान सौ॥
'सूरदास' प्रभु सौ कव मिलिहौ सुफल रूप कल्यान सौ॥ ६७॥

राग केदारौ

लागौ मोहि या वदनवलाइ।
खंजन तेरे भरे कटाच्छनि न्याउ गुपाल विकाइ॥
कह पटतर द्यौ चंद्र कलंकी घटत वढत दिन जाइ।
जा ससि की तुम आरि करति हौ चंद्र निहारौ आइ॥
ढोटा जौ पै खरौ अटपटौ वातै कहत वनाइ।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरै मिलन तै तन की तपनि वुझाइ॥ ६८॥

राग गौरी

किन तू गवन खरिकहि कई री।
अव चलि देखि प्रानपति की गति, तव तै कहा भई री॥

जा छिन तै तू दई दिखाई कर दोहनी लई री।
तब तै तन मन परी चटपटी गाइ न दुहन दई री॥
अब ताको उपचार करै किन, प्रीति की वेलि वई री।
इतने कारज पर सब की चलि लागी प्रेम जई री॥
चलि मिलि बहुरि बहुरि जामन दै दै उर छवि जमई री।
'सूरदास' प्रभु स्याम सुँदर सन भेटत काम रई री॥ ९९॥

राग मलार

विलम तजि भामिनी विलसि व्रजनाथ सौ विकट प्रावृट कटक निकट आयौ।
सघन घनस्याम तन सजत नभ नव वरन कान्हि उर उरनि तै नाथि धायौ॥
कहा कर जलद तन प्रभू बन उपकरन नुग्न विद्युत छटा निगम गायौ।
चलहि अरधाग अँग संग हिलि मिलि हुलसि मै जु सजोग कौ सपथ खायौ॥
न कर मन मान अभिमान गय ग्रहन कौ प्रेम प्राचीत्र इन्द्र धनु चढ़ायौ।
'सूर' वलवीर तेउ न धरि रह धीर भीरु नँदलाल तौ सुजस गायौ॥१००॥

राग सारंग

मानत नहि तोहि कौन मनैहै।
ये दिन चारि गए सुनि नागरि नैननि नीर ढरैहै॥
काठ तै कठिन कठोली हठीली उठि चलि निसा वितैहै।
जोवन छाहँ छाहँ वादर की 'सूर' न ऐसैहि रैहै॥ १०१॥

राधिके वदन की वलि लहु।
कोटि मदन वसत रितु ससि करि निछावर देहु॥
लोल लट सु कपोल राजति खुभी खुटिला चारु।
अकल झलकति झिलमिली अति नील सिर पर सारि॥
भ्रकुटि भंग भिरंग राजति चिवुक साँवल विंद।
'सूर' स्वामी नैन सौ मिलि नैन रसिक गुविंद॥ १०२॥

सुनि हरि हरि पति आजु विराजै।
मधु हरि वसत मंद भयौ हरि वल वल करि हरि दल गाजै॥
हरि की चाल चलन चंचल मति (हरि के) वदन विरह दुख साजै।
'सूरदास' प्रभु कौ भजि इक छन त्रिविध ताप तन भाजै॥ १०३॥

अब लौ किये रहति ही मान।
जोवन-गुन-गरवित सुनि सजनी तज्यौ नही अज्ञान॥
आजु खरिक तै निकरे मोहन अँग अँग रूप निधान।
निरखि वदन छवि अरुझि पर्यौ मन भूली सबै सयान॥
को जानै तब तै नैननि कौ कहा भई गति आन।
'सूर' सु को जु रहै अपनै वल सुनत वेनु करत कान॥ १०४॥

मेह वरसै मंद मंद।
कुसुंभी चीर अंग पर भीजै निरखि हँसे नँदनंद॥
मुरि मुसक्याइ चली फिरि सकुची कर दै आनन चंद।
'सूर' स्याम पट पीत उडावत पुलकत आनँदकंद॥ १०५॥

राग केदार — झूलन

मोहन प्यारे कौ सुरँग हिंडोरना झूलन जैवै हो।
ब्रज रसिक मोहिनी सुदरी सब कहति हँसि हँसि बैन॥
पावस काल गुपाल गोकुल बसत सब सुख चैन।
ते सखी सकल सुहागिनी जे जपति दै दै सैन॥
सावन मास हिंडोरना पिय हमहि देहु गढ़ाइ।
झूलत गोकुल ग्वालिनी गिरिधरन गोकुलराइ।
बोलि बिसकर्मा लियौ तब गढ़त लगी न भेरि।
सोन खंभ सुदेस भौरा बन्यौ मरुवनि मोर॥
पटुली मयारि सकारि कै डाँडी सु आगम केरि।
गावति गुन गोपाल कहि कहि चाह चहुँ दिसि होत॥
रसिक स्याम समीप झूलत देत पहिली पोत।
रमकन रसत हिडोरना पिय पीत पट फहरात॥
राधिका अबर सीस तै खसि गहि रही अचल दाँत।
तहाँ लटकि भुग की ओट भामिनि लटकि ग्रीवा जात।
नैन खजन चपल चचल उड़न कौ अकुलात॥
बेनी भुअंगम भेद निरखि मुरि मुरि मुसुकात।
जैसीय दामिनि लसति घन मै तैसीइ बरसत मेह॥
तैसीयै राधिका नारि भली भीजि लागी देह।
नील कचुकि पीत उन परम स्याम सनेह।
वही होति बृज पति राय सो हँसि हिल कहति कुमारि।
'सूरदास' गोपाल प्यारी प्रीति पगति निहारि॥ १०६॥

राग मलार

सखी री सावन दूलह आयौ।
चारि मास की लगन लिखायौ बदरनि अबर छायौ॥
बिजुरी चपल बराती बगुला कोकिल सबद सुनायौ।
दादुर मोर पपीहा उमँगे इद्र निसान बजायौ॥
हरित भूमि पर जरद देखियत सबूज बिछौना बिछायौ।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस कौ सखियनि मंगल गायौ॥ १०७॥

राग देवगिरि

मदन मोहन जू के मदन सबनही मोहिनि झूलन आई हो।
झूमक नाचति देवगिरि गावति सावन तीज खेलाई हो॥
पहिरि पहिरि सुही सुरग सारी चुहिचुही चुनरि रँगाई हो।
नील लहँगा लाल चोली कसि केसरि उबटि सिगार बनाई हो॥
मनिमय भूषन पट अँग साजे नँदलाल सौ प्रीति लगाई हो।
पूर्नकला मुख चंदा मनु चित चकोर प्रेम रस धाई हो॥
माथै मोर चद्रिका बिराजति कठ बैजंती कमल प्रसाई हो।
कुंडल लोल कपोलनि कै ढिग मनु रवि परकास कराई हो॥

अधर अरुन छवि कोटि वज्र दुति ससि गुन रूप समाई हो।
मनि मय भूषन कठ मुकुताली देखि कोटि अनग लजाई हो॥
है खँभ कचन के सु मनोहर रत्ननि जटित जराई हो।
पटुली आठ हाटक विद्रुम की नव मनि खचित खचाई हो॥
पँच रँग पाट कनक की डोरी अतिही सुघर बनाई हो।
बिसकर्मा सुतहार सुतिधारी सुरलभ सिलप सुहाई हो॥
फटिक सिंहासन मध्य राख्यौ है नवरत्न मनि सजाई हो।
पाँतिनि पाँति प्रवाल लगाए विच विच वज्र पचाई हो॥
षोडस डाँड़ी परगहिं सुदर हीरा रत्न लगाई हो।
मरुव मयारि पिरोजा लाल लटकैं सुदर सुठि सु ढराई हो॥
दंपति झूलत गगन हिंडोलौ व्रज वधु देति झुलाई हो।
कंकन नूपुर कुनित कनक मय कटि किंकिनि झमकाई हो॥
वहाँ त्रिविध सीतल सुगंध मँद पवन सु गवन सुहाई हो।
विहरत उठत सुवास जहाँ वहु उड़त मधुप गन धाई हो॥
जैसी हरी हरी भूमि हुलसावति पावस रितु सुखदाई हो।
तैसियै नान्ही नान्हीं बूँद वारि वारि बरषै मेघवा मधुर गरजाई हो॥
चढ़े विमान त्रिदस पति देखैं जै-जै-धुनि नभ छाई हो।
सखि स्यामा स्याम रमत वृंदावन सुर ललना ललचाई हो॥
सुक सारदा सेस नारदादि विधि सिव ध्यान न पाई हो।
तिहिं देखैं त्रिताप तनु नासहि व्रज वधूनि मन भाई हो॥
झूलति जुवति मदन गुपाल सँग एक वस इकदाई हो।
'सूरदास' प्रभु कुंज विहारी आपुन झूलि झुलाई हो॥ १०८॥

राग हिंडोल

(ऐसे) व्रजपति कौ अति विचित्र हिंडोरन भावै जू।
व्रजललना स्यामा संग देखन कौ आवैं जू॥
कल्पद्रुम के खंभ रोपे मलय गिरि की पाटि।
भँवरा मरुआ कृष्नऽगरु के कनक वहु विधि काँटि॥
डाँड़ि बनई परिजातक कनक पटुली बानि।
बिस्वकर्मा रच्यौ पचि पचि रत्न नाना आनि॥
आनि रत्न सु रच्यौ पचि पचि अति अनूपम भाँति।
जच्छ किन्नर देव नर मिलि देखि मोहै काँति॥
उपमा कौ त्रैलोक नाहिं जु देहुँ पटतर डाँटि।
कल्पद्रुम के खंभ रोपे मलय गिरि की पाटि॥
वृंदावन कालिंदि कैं तट हरित सोभित भूमि।
बिरध लता द्रुम कुसुम मुकुलित रहे झुकि झुकि झूमि॥
तहँ लालमुनियाँ-झुंड बैठे मत्त अलि-कुल गुंज।
हंस - चक्व - चकोर - चातक कीर - कोकिल - गुंज॥
कुंज कुंज तहँ मोर निरतत करत कुलाहल नाद।
हारिल परेवा भृंग पिकऽरु कपोत द्विजकुल वृंद॥

वोलही गहगह मधुर वानी गगन गरजै धूमि।
वृंदावन कालिंदि के तट हरित सोभित भूमि॥ २॥

झूलहिं तहाँ व्रजसुंदरी रति रूप सम वहुरंग।
परम मंगल गीत हरिगुन गावही सव संग॥
तहँ रास हास विलास क्रीडत हरपि सिद्धि कलोल।
मचकहि परस्पर कृष्न सनमुख अलक लोल कपोल॥
अलक लोल कपोल कुंडल ललित फरहरे चीर।
राजत विचित्र सुहावने जनु धुजा मन्मथ कीर॥
वलय कंकन रसन मुकुलित सकल भूपन अंग।
झूलहिं तहाँ व्रज सुंदरी रति-रूप-सम वहु रंग॥ ३॥

तहँ स्याम सुंदर कमल लोचन पीतपट वनमाल।
मोर पक्ष सिर करन कुंडल तिलक ससि-सम भाल॥
अंग कुमकुम खौरि सोहै गुंज हार वनाइ।
कोटि काम लवन्य मूरति वँध्यौ तिहि मन धाइ॥
धाइ तिहि मन वँध्यौ रति-रस-रूप-सागर मे परयौ।
मगन भयौ फिरि नाहि आयौ प्रेम आनँद सों भरयौ॥
भक्त-हित अवतार लीन्हौ संग वाल गुपाल।
'सूर' के प्रभु स्याम सुंदर पीत पट वनमाल॥ १०९॥

नीले नीले वादल असाढ़ सावन के आए उनय गगन धुरि गाढ़े।
वन रमनीक भूमि हरियारी सोहै सर सरितनि जल वाढ़े॥
दादुर मोर पपीहा वोलत चहुँ दिसि सकल चाय अति चाढ़े।
महुअर वेनु विषान वजावत गावत ग्वाल सकल सँग ठाढ़े॥
मंद पवन वहै मंद वूंदकन झूमि रहे झरके वर वाढे।
'सूरदास' प्रभु धेनु चरावत जमुना के कान्ह करारनि ठाढ़े॥११०॥

माथें वने मोरन के चँदवा अरु घुँघुचिनि के हार हिये।
पीतांवर कौ फेंट वाँधि वन-धातु रंग अँग चित्र किये॥
सावन समय संध्या घन घन वन आए इंद्र जु धनुष लिये।
'सूर' उडुपगन दामिनि मानौ वरपत प्रेम-पयोधि पिये॥ १११॥

पीतांवर सिर धरे चूनरी वचावत।
घन वरपत राधे गिरिधर सँग सघन कुंज वन धावत॥
ज्यौं ज्यौं वूंद लगति तिरछौहीं विज्जु छटा डरपावत।
त्यौं त्यौं श्रीवृषभानु नंदिनिहिं हरषित हृदय लगावत॥
राजत जोट कलिंद इंदु दोउ भींजत अति छवि पावत।
हँसि मुसुकाइ चितै इकटक ह्वै अधिकौ प्रेम जनावत॥
विहरत सघन कुंज मै दोऊ यह समयौ मन भावत॥ ११२॥

दोउ जन भींजत अटके वातनि।
स्यामा स्याम कुंज के द्वारैं अंवर लपटे गातनि॥

ललना लाल रूप-रस भींजे वृंद बरावत पातनि।
बरनत 'सूर' परसपर प्रीतम मिल प्रेम रस बातनि ॥ ११३ ॥

हौं समीप लालन के अब घन बरस्यौ क्यौं न करै।
चहूँ दिसि बादर उलहि आए हैं चहुँ दिसि बिज्जु छटा फहरै ॥
नान्हीं नान्ही बूँदनि मेघ रैनि दिन सरित उमड़ि जग नीर भरै।
'सूरदास' गिरिधर में पाए मन्मथ दोउ कर मींजि मरै ॥ ११४ ॥

राग सूही

झूलत सुंदर जुगल किसोर।
नंदनंदन वृषभानुनंदिनी, पियत सुधारस नैनचकोर ॥
भृकुटी बक्र धनुष सी सोभित, तिलक भाल मनु मारक जोर।
मंद मंद मुसुकात स्याम घन, निरखत करत कटाच्छनि ओर ॥
अंजन की पति रजन लागै, राजत अधरनि दसन हमोर।
मृगमद आड बने कर कंकन मोतिनि हार सिंगारनि डोर ॥
लियौ सिर तैं पट झटकि मनोहर उघरि गए कुच कलस कठोर।
'सूर' सु निरखि भए बस प्रीतम तन प्यारी सौं करत निहोर ॥ ११५ ॥

राग केदारौ

ओल्हर आई हो घन घटा हिंडोरे झूलत हैं स्यामा स्याम।
कंचन खंभ जरित डाँडी पटुली धरनोखारी पीत बसन फहरात भृकुटी जितै कोटि काम ॥
बनी है अद्भुत जोरी उपमा को दीजै कोरी कोटा देत सब मिलि बृज की बाम।
आनद बढ्यौ ठौर ठौर नाचत हैं मोर मोर इह छबि निरखि 'सूर' पायौ है सुख धाम ॥
॥ ११६ ॥

राग बसंत बसंतलीला

छिरकत स्याम छबीली राधा चंदन बदन बोरी।
अबिर गुलाल बिबिध रँग सौंधे लोचन भरि रहे गोरी ॥
सरबस कियौ वृषभानु नंदिनी नैननि फँदाहीं डोरी।
'सूर' के प्रभु गिरिधरन लाल भरि, रही प्रेम अँकोरी ॥ ११७ ॥

राग होरी

बिहरत ब्रज बीथिनि बृंदावन, गोपी जमुना वारी।
लाल पाग सिर, लाल छरी कर, जुहीमाल गिरधारी ॥
देखि देखि फूले ब्रज बासी, मुख की रासि बिचारी।
कुसुमावलि बरखत इंद्रादिक, 'सूरदास' बलिहारी ॥ ११८ ॥

राग श्रीहठी

हौं तौ आजु नंदलाल सौं खेलौंगी सखि होरी।
ललिता बिसाखा अँगना लिपावौ चौक पुरावौ रोरी ॥
मलयज मृगमद केसरि लै लै मथि मथि भरौ कमोरी।
नवसत साजि सिंगार करौ सब भरहु गुलालहि झोरी ॥
ज्यौं उडुगन में इंदु सहेलिनि मैं त्यौं राधा गोरी।
इक गोरी अरु इक साँवरि हो इक चंचल इक भोरी ॥

वरजति सखि वरज्यौ नहि मानै लै पिचकारी दौरी।
उन रँग लै पिय ऊपर डार्‌यौ पियहू रँग मैं बोरी ॥
इंद्र देव गन गंध्रव वरखै पुहुप वाटिका खोरी।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे मिलन कौ चिरजीवौ वर जोरी ॥ ११९ ॥

राग मालकौशिक

नागर रसिकऽरु रसिक नागरी।
वलि वलि जाउँ देखि अव दंपति प्रमुदित लीला प्रथम फाग री ॥
राधा दधि मंथान आपनै गेह करति धरि सुकर पाग री।
तव हरि उठि आए औचानक उमसि साँस सचि टरति गागरी ॥
लै उसास अजुरि भरि लीन्ही विदुरित दधि जु अनूप आँगरी।
अति उमँगाति स्याम घन छिरके मनु विछुरी वगपाँति माँग री ॥
मोहन मुसकि गही दौरत मैं छूटी तनी छँद रहित घाँगरी।
जनु दामिनि वादर तै विमुख वपु तरपित तच्छन लई तलाग री ॥
परमानदित दंपति ऐसै पट तै परसत प्रगट दाग री।
'सूरदास' प्रभु रसिक सिरोमनि को वरनौ व्रजजुवति भाग री ॥ १२० ॥

राग रागिनी वंगाली

(श्री मदनमोहन जू) मति डारौ केसरि पिचकारी।
दधि हौं मथति जाहुँ जमुना जल हो मोहन तुम कुंज विहारी ॥
मर्म न गुरुजन पुर जन जानै नहिं या वृंदावन की नारी।
सासु रिसाइ लरै मेरी ननँदी देखै रंग देहि मोहि गारी ॥
मुरली मैं गावत वंगाली अधर चुवत अमृत वनवारी।
मुदित पियत सतनि सुखकारी पूरव खचित नेह गिरिधारी ॥
मृदु मुसुकानि जुवति मन मोहत हो हरि माखनचोर मुरारी।
'सूरदास' प्रभु दोउ चिरजीवौ व्रजनायक वृषभानु दुलारी ॥ १२१ ॥

राग धमार

ठाढ़ी देखी नंददुवारै हो सुंदरि इक दह्यौ लिये।
वढ़ी प्रीति ललना गिरिधर सौं, गुरुजन सवहिनि विसरि दिये ॥
नैननि कज्जल नासिका वेसरि, मुख तमोर अति राजै।
ढार सुढार वन्यौ जाकौ मोती, रहत अधर मुख छाजै ॥
कटि लहँगा पहुँचीवँध अँगिया, फुँदना वहु विधि सोहै।
रतन जराव जरी जाकी जेहरि, हंस चाल गज मोहै ॥
कंचनकलस भराइ जमुनजल, मोतियनि चौक पुराए।
मानहु छौना हंसनि के से चुगन सरोवर आए ॥
तुम तौ कहावत हौ नँदनंदन, सारँग वूझिहै थोरी।
'सूरदास' प्रभु नंदलाल की वनी छवीली जोरी ॥ १२२ ॥

वृन्दावन खेलत हरि होरी।
वाजत ताल मृदंग झाँझ डफ नंदलाल वृषभानकिसोरी ॥
हौं अपनै गृह तै निकसी सखि सासु की त्रास ननद की चोरी।

श्रौर सखी सब छाँड़ि स्याम मो कर मरोरि पहुँची गहि तोरी ॥
स्यामवरन अति सुदर साँवरो कनकवदन राधे तनु गोरी।
'सूरज' के प्रभु दोऊ राजत पारस कंचन की सी जोरी ॥ १२३ ॥

राग गौरी

होरी के खिलार भावते यों ही जान न दैहों।
बागे वीरे जो बनि आये जागे है भाग हमारे नैननि भरि राखो फगुवा न लैहों ॥
न्यारे ह्वै मुख माडिहों अँखिया जु अँजैहों । वीरी पलटि न लेहु औ़र सी काहू की प्यारे औरै भरन न दैहों।

न्यारे ही खिलैहों । लीनी मूरति मधुरी हंसि हृदे लगैहों।
'सूरदास' मदन मोहन सँग हिलि मिलि दोऊ जल की तरग जैसै जलही समैहों ॥ ॥ १२४ ॥

राग पूरबी

ऐसी को खेलै तोसो होरी।
वारंवार पिचकारी मारत ता पर बाहें मरोरी ॥
नंद बाबा की गाइ चरावो हमसो कर बरजोरी।
छाक छीनि खाते ग्वालनि की करने माखन चोरी ॥
चोवा चंदन और अरगजा अबिर लिये भरि झोरी।
उडत गुलाल लाल भए बादर केसरि भरी कमोरी ॥
वृंदावन की कुंजगलिनि मैं गावो राधा गोरी।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस कौ चिरजीवो यह जोरी ॥ १२५ ॥

राग होरी

ब्रज मै हरि होरी मचाई।
इततै आवति कुँवरि राधिका उततै कुँवर कन्हाई ॥
खेलत फाग परस्पर हिलि मिलि यह सुख बरनि न जाई।
सुघर घर बजत बधाई।
वाजत ताल मृदंग झाँझ डफ मर्जारा सहनाई।
उड़ति अबीर कुमकुमा केसरि रहत सदा ब्रज ठाई ॥
मनो मधवा भरि लाई।
राधा जू सैन दियो सखियनि को झुंड झुंड उठि धाई ॥
लपटि झपटि गई स्यम सुदर कौ बरबस पकरि लै आई।
लाल जू को नाच नचाई।
लीन्हौ छोरि पितांबर मुरली सिर सौ चुनरी ओढाई।
वेंदी भाल नैन बिच काजर नक बेसरि पहिराई ॥
मनो नई नारि बनाई।
फगुवा दिए विनु जान न पैहो करिहो कौन उपाई।
लैहों काढि कसरि सब दिन की तुम चितचोर चवाई ॥
बहुत दिन दधि मेरी खाई।
मुसुकत हो मुख मोरि मोरि तुम कहाँ गई चतुराई।
कहाँ गए वे सखा तुम्हारे कहाँ जसोमति माई ॥

तुम्है किन लेति छुडाई।
रास विलास करत वृंदावन ब्रजवनिता जदुराई।
राधे स्याम जुगल जोरी पर 'सूरदास' वलि जाई॥
प्रीति उर रहति समाई॥ १२६॥

राग होरी

स्यामा स्याम सौ आजु वृंदावन खेलति फाग नई॥
नंदनंदन कौ राधे कीन्हौ माधव आपु भई॥
सखा सखी ह्वै सखी सखा ह्वै जुरि नँदभवन गई।
उलटे रूप देखि जसुमति की गति मति भूलि गई॥
गोरे स्याम साँवरी स्यामा दोउ मूरति चितई।
'सूर' स्याम कौ वदन विलोकत उघरि गई कलई॥ १२७॥

राग होरी

भलें गई होरी जो आई घर आए घनस्याम।
धनि मेरौ भाग सुहाग लड़ैते और न दूजौ वाम॥
काजर दै मुख माँड़ि हरद सौ राधा पूरे काम।
'सूरदास' की इच्छा पूजी, सीता मिली श्री राम॥ १२८॥

राग विलावल

नंदसुवन ब्रजभावते संग फाग मिलि खेलौ (जू)।
हमैं तुम्हे यह जानवी नव जुवति दल पेलौ (जू)॥
रसिकसिरोमनि साँवरे स्रवन सुनत उठि धाए।
वल समेत सव टेरि कै घर घर सखा वुलाए॥
विविध भाँति वाजे वजे ताल मृदग उपंग।
डिमडिम झालरि झिल्लरी आउझ वर मुहचंग॥
उततैं नवसत साजि कै निकसी सव ब्रजनारी।
झुंडनि आईं भूमिकै गावति मीठी गारी॥
केसरि कुमकुम घोरि कै भाजन भरि भरि धाई।
छूटी सनमुख स्याम के करनि कनकपिचकाई॥
इतही स्याम गोपाल सँग भरे महा रस खेलै।
चोवा मृगमद घोरि कं जुवति जूथ कर झेलैं॥
सोभित ग्वालनि वृंद मैं हरि हलधर की जोरी।
इतही चतुर चंद्रावली सव गुन राधा गोरी॥
सौंह किये ललिता कहै पग न पिछौंडे डारै।
उत नायक इत नाइका को जीतै को हारै॥
टिके परस्पर देखियै खेल मच्यौ अति भारी।
इत उत हटक न मानही चोख परे नर नारी॥
जुवति दल पेलि कै छेकि सुवल गहि लीनौ।
कंठ उपरना मेलि कै खैंचि आपु वस कीनौ॥
सुनहु सुवल साँची कहौ तौ छूटन भले पावौ।
कल वल वानिक वानि कै हलधर कौ पकरावौ॥

बहुरि सिमिटि सब सुदरी सकर्षन मिलि घेरे।
फेट गही चद्रावली उलटि सखिनि नन हेरे॥
सौंधे नावँ सीस तैं काजर लै भरि आई।
मोहन मुरि हसि कै कहै दाऊ आँखि अँजाई॥
फेरि पुकारी राधिका स्याम जहाँ है ठाढे।
और सखिनि की ओट ह्वै गहे औचकहिं गाढे॥
देखि सबै चहुँ ओर सौ दौरि आइ ललचानी।
अंग अग बहु रग सौ करी बाम मनमानी॥
केसरि सौ पट बोरि कै थी मुख मीडत रोरी।
तारी हाथ बजाइ कै बोलत हो हो होरी॥
नागरि अति अनुराग सौ मुदित वदन तन हेरै।
सरबस वारैं वारने अचल हरि पर फेरै॥
परस-परम-सुख ऊपज्यौ भयौ तृपित कौ भायौ।
मगन भई सब सुदरी रस भीन्यौ हिय आयौ॥
उत अग्रज इत स्याम सौ दुहुनि दिसा रस लीन्हौ।
॥
सूरज-प्रभु-सँग खेलती इहि विधि गोपकुमारी।
सब व्रज छायौ प्रेम सो सुखसागर गिरिधारी॥ १२९॥

राग नदन

वृंदावन परम सुहावनौ राधा खेलै फाग वारे कान्हैया।
मोहन बँसिया बजावै नदि जमुना कै तीर वारे कान्हैया॥
स्रवन सुनत सब धावहीं भोरी भरे अबीर वारे कान्हैया।
उर मोतिनि की माल री पहिरे रातुल चीर वारे कान्हैया॥
व्रज की बधु सब सुदरी स्रवननि झलकै बीर वारे कान्हैया।
चोवा चंदन अरगजा छिरकै सकल सरीर वारे कान्हैया॥
इक तौ राधा सुदरी दूजै परी अबीर वारे कान्हैया।
साँकरि खोरिया विरज की भई चोवा की हील वारे कान्हैया॥
वृँदावन के कुज मै भइ दोऊ दिसि भीर वारे कान्हैया।
इहि विधि होरी खेलही गावै निसि दिन 'सूर' वारे कान्हैया॥ १३०॥

राग धमारि

(प्यारी) नदनँदन वृषभानुकुँवरि सौ खेलत फाग ठह्यौ।
उडत गुलाल कुमकुमा आली अवर छाइ रह्यौ॥
अलिसुत जुग वरन्यौ वकट छवि जलसुत अधर लह्यौ।
खज मीन मुकताहल मानौ रविरथ खैचि रह्यौ॥
हँसि मुसुकात सहज स्वारथ कौ रमनिहिं रूप थह्यौ।
दारौं दरनि अरुन अति सोभा मनु ससि ग्रहन गह्यौ॥
गोपी ग्वाल सिमिटि सब सुदर सज्यौ सिगार नह्यौ।
बरखत कंचन नीर कुसुम जल मनु घन गरजि रह्यौ॥

स्यामा स्याम सबै सुखदाई, सुखसागर सगरी।
'सूरदास' प्रभु मिली कृपा करि जिनि हृदये बिसरी॥ १३१॥

राग सारंग

हो हो होरी खेलै रँग सौं ब्रजराजकुँवर वृषभानु धारि।
सुनि मुरली डफ ताल बेनु चढ़ी अटा अटारिनि द्वारि द्वारि॥
जो प्यारी न्यारी छवि सी देखति जलधर की छवि अपार।
घन घटा अटा मद छटकै ह्वै उदित चंद बादर विदार॥
जो प्यारे की हितू हुतो ते उझकि झरोखै झाँक बार।
करषै भौंह भाव भेदनि वह हरषै बरखै रँग अपार॥
इक प्यारी चंदन घसि छिरकै एक लिये कर मैं गुलाल।
इक प्यारी केसरि छिरकनि है भनत 'सूर' चलि गति मराल॥ १३२॥

राग होरी

आजु हौं होरी हरिहि खेलाऊँ।
ब्रज की खोरि साँकरी घेरी गारी देहुँ दिवाऊँ॥
चोवा चंदन कुमकुम अरगजा मुठी गुलाल उडाऊँ।
अपने अपने घर सौं निकसि लै अबिर भोरि भरि ल्याऊँ॥
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे मिलन कौं गारी गाइ रिझाऊँ॥ १३३॥

राग सारंग

रवितनया कौ सलिल गँभीर, आवहु रे मिलि न्हाइयै।
इहाँ अति समहि गँवाइ देह कौ, पुनि अपनैं घर जाइयै॥
भींजे गात जातहीं नूतन, तब जनुदा पै जाइयै।
लै सेवहीं कौ स्वाद मनोहर, मीठौ होइ सो खाइयै॥
ये भूषन ये बसन मनोहर, सादर 'सूर' दिखाइयै।
जानत हौ हरि बेगि बिदा ब्रज, विमुखनि जाइ चिताइयै॥ १३४॥

राग संकराभरन धनुषभंग लीला

अति नित चंचल जानि लई।
मन भाँवरि करियत नागर पर, रस बस मोल लई॥
परमानंद साँवरे, ऊपर तन मन बिसरि गई।
राधा स्याम प्रीति उर अंतर, सरबस प्रीति हई॥
आवन जान गवन कत कीन्हौ, हरि सब भाँति ठई।
गोपीनाथ प्रान के रसबस, जानी जई दई॥
गिरिधरलाल रसिक के ऊपर, कुबिजा वारि गई।
मान मनाइ लियौ साँवरे कौं, छन मैं प्रीति भई॥
मानिनि मान करत गोपी हम दुख सब भाँति पई।
'सूरदास' चिंतामनि चित धरि, अब कित प्रीति गई॥
मेरे मन बच कम साँवरे, और न मान मई॥ १३५॥

गोपीविरह

प्रीति बटाऊ सौं कत करिऐ।
हिलि मिलि चलैं कान्ह परदेसी, फिरि पछिताए मरिऐ॥

सुनियत कथा स्रवन सीता की, का विचारि अनुसरिऐ।
बिनु अपराध तजै सेवक कौ, ता ठाकुर सौं डरिऐ॥
एक बार वसुद्यौ कौ ढोटा, बातन गोकुल छरिऐ।
बाल विनोद जसोदा आगै, सबहिन कौ मन हरिऐ॥
जाति पाँति बलि सरबस दीन्हौ, तिनकि पीठि पग धरिऐ।
'सूरदास' ऐसे लोगनि तैं, पार न क्यौ हूँ परिऐ॥ १३६॥

बिछुरनि जनि काहू सौं होइ।
बिछुरन भयौ राम सीता कौं, क्रम छत देखे धोइ॥
बिछुरन भयौ मीन अरु जल कौं, तलफि तलफि तन खोइ।
बिछुरन भयौ चकवा अरु चकई, रैनि गँवाई रोइ॥
रुदन करत बैठीं बन महियाँ, बात न बूझत कोइ।
'सूरदासरु स्वामी कौं बिछुरन, बनत उपाइ न कोइ॥ १३७॥
तब काहे को भए उपकारी लिखिलिखि पठवत चीठी।
आपुन जाइ मधुपुरी छाए, हमकौं जोग बसीठी॥
डाढ़े ऊपर लोन लगावत, हग जु भई मति हीठी।
'सूरदास' प्रभु विकल विरहिनी, जरि बरि भई अँगीठी॥ १३८॥

राग रामकली

मरियत देखिबे की हौंसनि।
जिनि सत कलप पलक सम जाते, अब सो रही दुख मैं सनि॥
पलक भरे की ओट न सहती, अब लागे दिन जानि।
इतनैहू पर बिनु साखन घर, तट निकसत नहिं प्रान॥
जदपि मोहिं बहुते समुझावत, सकुचनि लीजत मान।
अंतहकरन जरत बिनु देखैं, कौन बुझावै आन॥
कुबिजा पै आवन क्यौ पावत, अब तौ परिहै जानि।
लीन बड़ी यहऊँ की बातै पाछिलि वै सब गानि॥
आए 'सूर' दिना द्वै तौ कहा, तौ मानिबौ समोसो।
कोटि बेर जल औटि सिरायैं, तऊ कहा पति लोसो॥ १३९॥

राग मलार पावसप्रसंग

ऐसे मै सुध्यौ न करै, अति निठुलाई धरै,
उनै उनै घटा देखौ पावस की आई है।
चहुँ दिसि घोर मोर लागी है मदन रौर,
पिक की पुकार उर आर सी लगाई है॥
दामिनि की दमकनि, बूँदनि की झमकनि,
सेज की तलफ कैसे जीजियतु माई है।
लागे है बिखारे बान, स्याम बिनु जुग जाम,
घायल ज्यौ घूमै मनौ बिषहर खाई है॥
मिटै न जिय कौ सूर, जात है जोवन फूल,
घरी घरी पल पल विरह सताई है।
जगत के प्रभु बिनु कल न परति छिनु,
ऐ रे पापी पिय तोहिं पीर न पराई है॥ १४०॥

अब मेरे नैननि ही झरि लाई, बालम कान्ह विदेसी।
तब तौं निबही बाल सनेही, अब निबहै धौं कैसी॥
घर घर सखी हिंडोला झूलैं, गावैं गीत सुदेसी।
हम अधीन व्याकुल भइ डोलैं, बनी जोगिनी भेषी।
भरि गईं ताल तलैया सागर, बोलन लागे देसी।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस कौं, को घर सहै अँदेसी॥ १४१॥

सखी री बूँद अनाचक लागी।
सोवत हुती मदन मद मातीं, घन गरजत हौं जागी॥
बोलत मोरवा बरषत घुरवा, राग करत अनुरागी।
'सूरदास' प्रभु कब रे मिलौंगे, हौं हूँ होहुँ सभागी॥ १४२॥

सावन (माई) स्याम विना कैसैं भरिऐ।
बादर देखि बिथा उपजति है, चतुर कान्ह विनु मरिऐ॥
काजर तिलक तँबोर तेल सखि, ये सबहीं परिहरिऐ।
सूनी सेज सिंह सम लागति, बिनुही पावक जरिऐ॥
आजु सखी उपजति जिय ऐसी, धाप देस परिहरिऐ।
'सूरदास' प्रभु के मिलिवे कौं, कोटि भाँति जिय धरिऐ॥ १४३॥

राग सारंग

गगन सघन गरजत भयौ द्वंद।
पसरचो भूमंडल केतकि जुत, मारुत मनु मकरंद॥
पर पथ अपथ भयौ सुनि सजनी कियौ वासव तित खेत।
कोउ न जाइ कान्ह परदेसहिं, दोउ तजि निबह अनेत॥
विपति विचारि जानि जदुनंदन दीजै दरस उदार।
'सूर' स्याम भेंटैं अरु मेटैं, बिरह बिथा भरि भार॥ १४४॥

आजु बन बोलन लागे मोर।
कारी घटा घुमड़ि बादर की, बरषति है घन घोर॥
आधी रात कोकिला बोली, बिछुरे नंदकिसोर।
पीउ सु रटत पपीहा बैरी, कीन्हौ मन्मथ जोर॥
दिन प्रति दहत रहत नहि कबहूँ, हा हा किऐ निहोर।
'सूर' स्याम विनु जियत मूढ मन, जिये जाइ सो थोर॥ १४५॥

राग सारंग गोपी-विरह, चंद्रोपालंभ

अब हरि हमको माई री मिलत नाहिन नैकु।
नित उठि जाइ प्रात लै बन सँग, आगैं पाछैं डग नहिं एक॥
बाहाँ जोरी कुसुम चुनत दोउ, मेरे उर लगि इक दिन नख एक।
रसन दसन धरि भरि लिए लोचन, तोरत लइ सुघर बरषे एक॥
लावत हृदय खोंच पूरत पट, फुरहुरी लत परिजन रेक।
अब को ऐसौ है 'सूरज' प्रभु, कौन अधिक जिहि परिदेप॥ १४८॥

राग सारंग

या गति की माई को जानैं।
पंकज सौ पंकज गहि सींचैं, एकौ हू न निदानैं॥

सिवि नृप अरु सनकादिक कवि मुनि, येई पर गति मानै।
करि हारी बहु लोभनि सौं, ये रहत जु इकतारा तानै॥
वपु विचारि अवगनि इन इन तै, भाव कुचित यह ठानै।
'सूरदास' प्रभु सिसु लीला मै, नाना विरैनि जु आनै॥ १४७॥

जो कोउ कहै बात सुनाइ।
तिही छिन ब्रजराज गोकुल, पियहि पानी आइ॥
संग तो अक्रूर ऊधौ, गए जोग बनाइ।
निरखि विरह वियोग सब ब्रज, कहौ तब समुझाइ॥
स्रवन है नहीं समुझ आगै, थके सब गुन गाइ।
'सूर' जिहि कुल रीति जैसी, सोइ सहज सुभाइ॥ १४८॥

राग गूजरी

कुँवर दोउ बैरागी बैरागी।
पलटति वमन करति निसि चोरी, वपु विलसत भई जोग॥
बेसरि देह मूँदि मृगमद मथि, उर धुकधुकी जु धौनी।
चलत चरन चिन गये गलित भरि, स्वेद सलिल मड भौनी॥
छूटी भुजबंद फूटि बराज कर, फटी कंचुकी झीनी।
मनहु प्रेम की परनि परेवा, याही तै पढि लीनी॥
अवलोकत इहि भाँति रमापति, जानि अहि मनि छीनी।
'सूरदास' प्रभु कहि न जाइ कछु, हौ जानौ मति हीनी॥ १४९॥

यहै बहुत जो बात चलावै।
राजकाज मैं स्याम मनोहर, कृपा करै तौ निकट बुलावै।
जादवपति वसुद्यौ के वै सुत, नदनँदन अब कतहि कहावै॥
कुबिजा दासी रस बस कान्ह अब कैसै ब्रज बनिता भावै।
अब सुनियै बनमाल लाल गर, मोरमुकुट नहि देखि सुहावै॥
मुक्तामाल मनोहर कुंडल, दसौ कांति सोभाहि जनावै।
कर कर बेनु विषान गहै अब, सुनियत मुरली देखि लजावै॥
भए छत्रपति त्रिभुवन नायक, अब वै सुरभी काैन चरावै।
चूक परी सेवा न करी कछु, सुमिरत दुख गोपी जन पावै।
'सूरदास' स्वामी सुखसागर, जाकौ जस ब्रह्मादिक गावै॥ १५०॥

पीर न जानी हो निरमोही, अतिही निठुर अहीरा।
हम बावरी विलोकि वदन छवि, भई दीप की कीरा॥
एक दिना हौ सखी सखिन मिलि, गई जमुन जल पानी।
छल करि आनि बीच भए ठाढे, लिए गगरिया पानी॥
मै जानी कोउ घोष पाहुनी, हँसि डर तै उपटानी।
लागत हृदै प्रेम उमगी अलि, हौ दूनौ ललचानी॥
जैसै गरभक सेइ बिरानौ, कागा रह्यौ खिसाइ।
अपनौ जानि मोह मन दीन्हौ, रूप विलोकि पत्याइ॥

अंते मिले उड़ि छाँड़ि गए गोकुल, जूठौ माखन खाइ।
ऐसैं कान्ह छाँड़ि आपनहीं, बोलैं बन में जाइ॥
जल मैं रहे मिलैं नाहीं जथा कमल अरु नीरा।
तासौं प्रीति कौन बिधि निबहै, क्यौं आवै मन धीरा॥
कामी कुटिल क्रूर अपराधी छिन दाता छिन संगा।
ऊपर मिल्यौ हृदय मैं न्यारौ, जैसैं बालम गंगा॥
जैसैं मधुप कोस रस कारन, आनि बसैया लेइ।
जित जित फिरै क्षितिहि तित डोलै, भ्रमि भ्रमि भाँवरि देइ॥
रस कौ मिले चाप अपनी सौ, यातैं खेद करेइ।
ऐसैं तुल्य गोपि सुक ज्यौं, पुनि भूलै सेमर सेइ॥
जैसैं ब्याल छाँडि अपनी बपू, फिरि न बिलोकै सोइ।
टूटी कैं फूटी कैं बिनसी, सदा जात पै खोइ॥
सो गति स्याम हमारी कीन्ही, दिन दस लाड़ लड़ाए।
बारक आनि दिखाई दीन्ही, पारी मूड़ चढ़ाए॥
प्रीति की रीति परेवा जानै, नन लै दई आकासा।
पख पसारि दसहूँ दिसि धावै, ऊरध लेत उसासा।
गिरत न करत सँभार देह कौ, प्रान परेई पासा।
'सूर' सुरति लागी जु प्रीति बस, सब तैं भयौ निरासा॥
नैंसुक धरे मुरलिया कर मैं, मोहे सबके प्राना।
तऊ न भए आपने सजनी, कपटी कान्ह निदाना॥ १५१॥

या ब्रज तैं दव रितु न गई।
ग्रीष्म प्रगट सखी री गोकुल, हरि बिनु अधिक भई॥
बिरह अगिनि अँग अँग सबनि कैं, ग्रीषम प्रबल समान।
नैन नीर उर बहुत रैन दिन, पावस कौ जु प्रमान॥
जा दिन तैं बिछुरे नँदनंदन, बाढ़ौ है तन ताप।
'सूर' स्याम बिनु तपति रैन दिन, अवधि धरैं उर छाप॥ १५२॥

येई हैं जग जीवन माधौ। देवकि मन मन आनँद साधौ॥
कंस मारि पितु बंदि छुड़ाए। उग्रसेन सिर छत्र धराए॥
जननी दरस करन हरि आए। माइ आनँद पकवान मँगाए॥
ग्वाल सकल सँग बल बनवारी। नंद सहित परसत बैठारी॥
उज्ज्वल थार भारि बहुधारी। परसन आप उठी महतारी॥
पापर, पूरी, पेरा फेनी। माठ सुरकुनी दही दहेनी॥
लौंग कपूर खाँड घृत धारे। अँदरसे खटमिठे सिधारे॥
निबुआ लोन तेल तर सूजी। दूध भात बहु पकवान आनी॥
सूरठि सोंठी मठ जिरवानी। राइ करौंदा अरु कलौंजी॥
अगनित स्वाद परत नहिं चीन्हीं। चूक परत हरि गारि न दीन्हीं॥
क्रीडावंत सखिनि कछु राख्यौ। पान दमाल दूसरौ माँग्यौ॥
मेवा आनि भरे धरि थारी। दाख चिरौंजी गरी छुहारी॥

ताजे पान धरे तिहिं तीरा। दिव्य सुगंध सहित बहु बीरा॥
परम मान विनती अनुसारी। हौ बलि चरन कमल पर वारी॥
भोजन अंत आचमन कीन्हौ। 'सूरदास' दीन जन चीन्हौ॥
दै प्रसाद यौं कह्यौ मुरारी। गऊ भक्त हरि सरन तुम्हारी॥ १५३॥

नैंना मेरे तलफि तलफि भए राते।
खग मृग मीन भरे पद पिंजरनि, न तरु मधुवन उड़ि जाते॥
करि सुनि सुरति स्याम सुदर की, उमँगि चले धुरवा ते।
'मूरदास' प्रभु तुम्हरे मिलन कौं, बरषत है बरषा से॥ १५४॥

नंद नँदन मधुपुरी विरमि रहे, कटहि न माइ ये दिन विकट।
असन वमन वा स्याम सुध्यौ गइ, सीस मंजन विनु चिकुर चिकट॥
देति सँदेसौ पथ निहारति, सगुन विचारति बँधी लिकट।
'सूरदास' प्रभु वेगि मिलौ जू, वोलि लेहु कै आवौ निकट॥ १५५॥

तुम्हरी बलैया लागैं नागर।
पहिली रीति भाँति गोकुल की, लिखिहु न पठवत कागर॥
अवनि लोक त्रैलोक जानियत, सुनियत हौ सुखसागर।
आपुन गुप्त ओट ह्वै रहिऐ, हम छाँड़ी ज्यौ बागर॥
पति पितु मातु सकल बंधू जन, सब तजि हम भईं दागर।
'सूरज' स्याम तृषा न बुझाई, हा ब्रज रीती छागर॥ १५६॥

मेरे मन मैं वे गुन गड़े।
तव जु कलोल कियौ कानन मैं, बहु विधि लाड़ लड़े॥
कबहूँ पिय दधि दान लागि कै, झगड़ौ कठिन मड़े।
कहत जु स्याम बाल लीला मैं, वचन कठोर बड़े॥
अब वे बोल ह्वै रहे नाटसल, पुनि पुनि हिए अड़े।
'सूरजदास' उपाव कौन जो, हरि चुंबक बिछुड़े॥ १५७॥

पपीहा माई बोलि, बान भरि मारी।
बिसरी सुरति दिवाइ स्याम की, चमकि उठी निसि कारी॥
तुम बिछुरे घन स्याम मनोहर, कौन करै रखवारी।
तन भयौ लंक, विरह भयौ बनचर, इहिं वियोग हम जारी॥
दादुर मोर कोकिला चातक, ये जीते हम हारी।
कहि अब 'सूर' होत कब आवन, बैठि बिरछ की छाँ री॥ १५८॥

राग सारंग — उद्धव-व्रज-आगमन

ऊधौ कहियौ जाइ राधिकहिं, तुम इतनी सी बात।
आवन दए कहौ काहे कौं फिरि पाछै पछितात॥
अब दुख मानि कहा धौं करिहौ, हाथ रहैगी गारि।
हमैं तुम्हैं अंतर है जेतौ, जानत है बनवारि॥
ये तौ मधुप सद्य रस भोगी, तहीं जहीं रस नीकौ।
जो रस खाइ स्वाद करि छाँड़े, सो रस लागत फीकौ॥

इक कूबर हरि हरयौ हमारौ, जगत माँझ जस लीन्हौ।
ताकौ कहा निहोरौ हमकौं, मैं त्रिभंग करि दीन्हौ॥
तुम सब नारि गँवार अहीरी, कहा चातुरी जानौ।
राखि न सकी आपु बस कै तब, अब काहै दुख मानौ॥
'सूरदास' प्रभु कौ ये बातैं, ब्रह्म लखै नहिं पारै।
जाके चरन पाइ कै कमला, गति आपनी बिसारै॥ १५९॥

गोपीवचन

सखी मैं सुनी बात इक आज।
पाती लै आए हैं ऊधौ, पठई दै ब्रजराज॥
तजि तजि भोग जोग आराधौ, यहै लिख्यौ है मूल।
सही न जाति सुनत मरियत है, उठत करेजे सूल॥
जप तप नेम धरम औ संजम, विधवा कौ व्यौहार।
जुग जुग जियौ हमारे सिर पर, जसुदा नंदकुमार॥
खसम अछत तन भसम लगावै, कहौ कहाँ की रीति।
तुम तौ चतुर सकल विधि ऊधौ, वै तौ करत अनीति॥
हमरे जोग नंदनंदन व्रत, निसि दिन उन गुन गावति।
'सूरदास' प्रभु खोरि तुम्है नहिं, कुबिजा नाच नचावति॥ १६०॥

भ्रमर-गीत

मधुकर निपट हीन मन उचटे।
सूँघत फिरत सकल कुसुमनि कौ, कहूँ न रीझि कटे॥
जे कवि कहत कंज रति मानत, ते सब भ्रमहिं रटे।
अलक, तिलक, दृग, भौह पलक की उपमा तैं न हटे॥
सर सूखे तूखे पराग रस, कमलनि पर प्रगटे।
झूठै हूँ नहिं उझकत झझकत, तब वै छेद जटे॥
जुगति जोग सब्दहिं की बोलत, बहुतै भरम भटे।
'सूर' कहा कहियत ताकी गति, चुरई भले पटे॥ १६१॥

ऊधौ हम लगी साँच के पाछे।
मदन गोपाल चतुर चिंतामनि गोप वेष वपु काछे॥
साँचौ ज्ञान ध्यान मुनि साँचौ, साँचौ जोग उपाई।
हमकौ साँचे नंदनंदन है, गर्ग कह्यौ समुझाई॥
जुवती जाति मोह कौ भाजन, सदा काम अभिलाषी।
ते करील फल क्यौ चाखत है, जिन चाखी रस दाखी॥
ओसनि प्यास जात कहि कैसैं, जब लगि जल नहिं पीजै।
'सूरदास' कौ ठाकुर कान्हा, प्रगट मिलै तौ जीजै॥ १६२॥

राग सारंग

इहि ब्रज सरगुन दीप प्रकास्यौ।
सुनि ऊधौ त्रिकुटी त्रिवेद पर, निसि दिन प्रगट अभास्यौ॥
सबके उर सर बास नेह भरि, सुमन तिली कौ बास्यौ।
गुन अनेक ते गुनि कपूर सम, परिमल बारह मास्यौ॥

विरह अगिनि अंगनि सब कैं, नहिं बुझति परे चौमास्यौ ॥
साधन भोग निरंजन तेरे, अंधकार तम नास्यौ।
वा दिन भयौ तिहारौ आवन, बोलत हौ उपहास्यौ ॥
रहि न सके तुम सौक रूप ह्वै, निरगुन काज उकास्यौ।
वाही जोति सुकेस देस लौ, टूटयौ ज्ञान मवास्यौ ॥
दुर्वासिनी सकल सब जारैं जे, छै रह्यौ अकास्यौ।
तुम तौ विटप निकट के बासी, सुनियत हुते खवास्यौ ॥
गोकुल कछु रस रीति न जानत, देखत नहीं तमास्यौ।
'सूर' करभ कौ ढौर परोस्यौ, फिरिफिरि चरत जवास्यौ ॥ १६३ ॥

ब्रज तैं नीकौ जोवन जीयौ।
जिहिं रस मुनि जन सीख न बोरैं, सो ब्रज नारिनि पीयौ ॥
तिन हित बाम बिधाता कीन्हौ, हे सरबस हरि केरौ।
अब कोउ नीर पियै बसुधा मैं, जूठौ चातक मेरौ।
अब कोउ फूल धरै बसुधा मैं, भ्रमर प्रथम रस लीन्हौ।
'सूरदास' प्रभु कहा भयौ जौ, हरि नहिं आवन कीन्हौ ॥ १६४ ॥

हरि बिनु लोचन मरत पियास।
वृंदावन मैं गाइ चरावत, तोरत पात पलास ॥
जाइ सँदेस कहौ उन आगैं, काहिं कीन्ह बिसास।
चितवत पथ बहुत दिन बीते, अब मन होत उदास ॥
चकई ज्यौं तन मन बिरमावति, अवधि भानु की आस।
'सूरदास' प्रभु आनि मिलावहु, सोहन मदन-बिलास ॥ १६५ ॥

मधुकर की संगति तैं जनियत, बस रैन चितयौ।
कह पूछनि बिनु समुझे सुंदरि, सोइ सुख कमल गह्यौ ॥
व्याध नाद कह जानैं हिरनी, कर सायक की नारि।
आलापहु गावहु कै नाचहु, दावैं परे लै मारि ॥
जुवा कियौ ब्रज मंडल यह हरि, जीति अवधि लौ खेलि।
हाथ पर्यौ सु गयौ चपरि नियं, कहा मदन मैं हेलि ॥
मुनि मतकर्म कियौ मातुल बधि, मदिरा मदन प्रमाद।
'सूर' स्याम एते अँगुन मैं, निरगुन तैं अति स्वाद ॥ १६६ ॥

दिन ही दिन गोपिन तन छीन।
सुनहु हिम रितु बिरह प्रभु कैं, कमलिनी ज्यौं दीन ॥
जोग कथा सँदेस दिनकर किरनि हरि हरि लीन।
अवधि पंक समेत सूखी, सुनहु पाइ कलीन ॥
हम बिवाद सिवार उरझी, प्रेम साहस कीन।
रूप भँवर सिंगार तजि कै, दुखहिं सदा मलीन ॥
चरन पकरि पुकारि बिनती, करति स्याम अधीन।
'सूर' सावन बरषि कै ब्रज, ज्याइवौ परवीन ॥ १६७ ॥

ऊधौ को तुम्हरे कहे लागै।
कहा करैं काकैं मति एती, जोग साधि तन आगैं ॥

हम बिरहिनि बिरहा की जारी, जारे ऊपर दागै।
राज करै यह ज्ञान तुम्हारौ, मुक्ति को तुम सौ माँगै ।।
वह मूरति मन गड़ी हमारै, टरति न सोवत जागै।
वारक मिलै सूर के प्रभु तौ, मन हमरे अनुरागै ।। १६८ ।।

ऊधौ कत हम हरि बिसराई।
सुमिरि सुमिरि गुन जपति स्याम के, नैन सजल भरि आई ।।
एक दिवस वृंदावन भीतर, रति पति प्रीति बढ़ाई।
जमुना हेरि बुलाइ स्याम घन, अंबर रचि पहिराई ।।
दस नख अधरनि धरि मुख अंबुज, पाइँ जु पकरि मनाई।
'सूरदास' प्रभु दीन दयानिधि देहु दरस मन भाई ।। १६९ ।।

(ऊधौ) हरि कुबिजा के मीत भए।
जे जे सुख कीन्हे उन हम सँग, ते सब भूलि गए ।।
सुमिरि सुमिरि गुन ग्राम स्याम के, वहु दुख होत नए।
अवधि आस सोचत दिन बीतत, बिरहा सरनि हए ।।
वृड़त छाँडि बिरह बन महियाँ, मधुवन जाइ छए।
ऐसे भाग हमारे सजनी, कंतहि छीनि लए ।।
हम अनजान हीन मति भोरी, कत उन जान दए।
अब कह होत सोच किऐ सूरज, कठिन बियोग टए ।। १७० ।।

ऊधौ बनि आए की बात।
अब न बनै हमसौ कुबिजा सौ, काहे आवत जात ।।
वह बंसी बट, वह जमुना तट, वे पलास के पात।
'सूर' स्याम हमरे ब्रजबासहिं, मानत नात लजात ।। १७१ ।।

ऊधौ हरि रीझे धौ काहे।
इक चेरी अरु सुनति कूबरी, बाँधे मोर पछाहें ।।
कुटिल कुरूप मध्य तिरबकी, सोवै नाहि उतानी।
सुनि मुनि सोभा हँसत लोग सब, भली स्याम मन मानी ।।
जो कछु रिद्धि सिद्धि कूबर मै, हमहूँ कहि न पठावै।
चलै चाल हमहूँ बनि टेटी, कूबर कनक बनावै ।।
जो हरि कहै करै हम सोई, लोक लाज सब छोडी।
'सूरदास' प्रभु रहै हमारै, कुबिजा तजै निगोड़ी ।। १७२ ।।

बढ़ौ जस ऐसे काज करे तैं।
सो ऊधौ काहे नासत है थोरी बात बुरे तैं ।।
तृनावर्त केसी धेनुक बक, अघासुर बकी ररे तैं।
इन्द्र मान मथि गोकुल उबरयौ, गिरिवर पानि धरे तैं ।।
जमुना तैं काली काढ्यौ हरि, राखे ग्वाल मरे तैं।
ऐसैं हीं जब जतन कियौ है, विधि बछ बाल हरे तैं ।।
कंसराज चानूर कुवलया, जग जस इन्है दरे तैं।
भयौ जस बिमल मलीन 'सूर' प्रभु, दासी अंक भरे तैं ।। १७३ ।।

मधुकर आवत मन पछितायौ।
चेरी सुनी कंस की कुबिजा, करति साँति कौ दायौ ॥
चंदन घसि लै चली नृपति कौं, मारग मैं हरि पायौ।
अब क्यौ कृष्ण परखिहैं हमकौ पढि टोना सिर नायौ ॥
हौ निसि बासर पूजति तुमकौ, चंदन तुम्है चढ़ाऊँ।
बैरी मित्र बसत हिरदै मे, तातै तुम्हैं लगाऊँ ॥
तीनि ठौर तै टेढ़ी कुबिजा, परसि सुदरी कीन्ही।
ठाकुर ह्वै दासी तन परस्यौ, सुधि बुधि मति हरि लीन्ही ॥
लज्जा मान देखि जुवती कौ, कृष्ण कटाच्छन हेरे।
कुबिजा उलटि पीत पट पकर्यौ, चलौ निकट घर मेरे ॥
यह हम सुनी देखि मिलि दोऊ, मोहन मुरि मुसकाने।
ता दिन तै गोपिनि तजि कान्हा, कुबिजा हाथ बिकाने ॥
जीवै लाख करोरनि कुबिजा, कलियुग चलै कहानी।
ज्यौं अँधरनि मैं कानौ राजा, त्यौ कुबिजा पटरानी ॥
हमरै दृढ ब्रत नंदनँदन सौ, निरगुन मरौ न जानै।
परौ छठी मैं छार 'सूर' प्रभु तजिकै आनहिं मानै ॥ १७४ ॥

हमतौ निसि दिन हरि गुन गावैं।
लाल कृपाल कृपा सुख उपजै, जैसैं तुमकौ पावैं ॥
जौ प्रभु तुम्है चोप चंदन की, हमहूँ घसि लै आवैं।
टेढ़ी चाल चलत सुख मानत टेढ़ै चलि दिखरावैं ॥
और अनेक उपाय करैं हम, जे जे तुमकौ भावैं।
जौ पैं 'सूर' कूबरहिं रीझे, आजु कहाँ तैं पावैं ॥ १७५ ॥

ऊधौ कब हरि आवैंगे, साँचौ कहौ न बात।
वै तो रीझे सँग कुबिजा के, कुटिल कुटिल दोउ गात ॥
निसि सब बीतति गिनतहिं उडुगन, वृथा होत परभात।
छिन आँगन छिन गृह बन मधुकर, मग जोवत दिन जात ॥
कठिन बान बेध्यौ तन मन मैं, बिरह बधिक कियौ घात।
करकत घाव बिकल ब्रज बनिता, उन बिनु कछु न सुहात ॥
बालापन की प्रीति पुरातन, क्यौ मोहन बिसरात।
राजा ह्वै कुबिजा सँग माते, आवत ब्रजहिं लजात ॥
कहियत है अधीन दासी के, यहै सुनत अनखात।
'सूर' सुमिरि गुनग्राम स्याम के, निसि दिन नहीं बिहात ॥ १७६ ॥

(ऊधौ) बात कहौ हरि आवन की।
अवधि बदी सो बीत गई है, और सुनी उत सावन की ॥
कहँ लगि बिथा कहौ सुनि मधुकर, निठुराई मन भावन की।
ना जानियै कहाँ तैं सीखी, छतियाँ बिरह जरावन की ॥
निसि दिन नैननि नीर बहत है, जैसैं नदिया सावन की।
'सूरदास' प्रभु सौं अलि कहियौ, बानि खरी तरसावन की ॥ १७७ ॥

मधुकर कहियत चतुर सुजान।
बार बार यह जोग सब्द की, हम पर टूटति तान ॥

वहै सब्द संदीपन पाँड़े, रचि करि वह सुख पायौ।
वहै सब्द उनके मुख सुनि कै, भेट इहाँ लै आयौ॥
भसम भेस उपदेस कह्यौ तुम, सो हमसौं नहिं होइ।
मंत्रहीन नागिन क्यौं पकरै, सो कहि कैसैं कोइ॥
फूलिफूलि कै क्रूर प्रमत मति, निजु निरवारयौ ज्ञान।
'सूरदास' ते घर क्यौं बसिहै, जिनके तुम परधान॥ १७८॥

मधुकर लागत हौ सुठि भारे।
अलक कलीन-कोक रस पीवत, उड़पति जैसे तारे॥
जो तुम पथिक दूर के बासी, गुंजत गुंजत हारे।
बारह मध्य अलक उर अंतर, आदि अंत लौं कारे॥
मधि मूरति सूरति जिय भावत, बिरचे लै दुख भारे।
'सूरदास' प्रभु विरह कपट हथ, अंत ह्वै गए न्यारे॥ १७९॥

राग आसावरी

ऊधौ हरि जू हित जमाइ, चित चुराइ लीयौ।
चपल नयन उन चलाइ, अग राग दीयौ॥
परम साधु सखा सुजन, जदुकुल के मान।
कहौ बात प्रात एक, साँची जिय जान॥
सरद सुभग वारिज दृग, भौंहैं ज्यौं कमान।
क्यौं जीवहि वेधे उर, लगे विषम बान॥
मोहन मधुपुरी वसे, पठयौ व्रज सँदेस।
क्यौं न काँपी मेदिनी, जुवतिनि उपदेस॥
तुम सयाने स्याम के देखौं जिय विचारि।
प्रीतम पति नृपति भए, जोग गहै नारि॥
कोमल कर मधुर मुरलि, अधर धरे तान।
परस सुधा पूरि रहीं, कह सुनैऽब कान॥
मृगीऽरु मृग विलोचनी, उभय एक प्रकार।
नाद बैन बिषम तैं न जान्यौ मारनहार॥
गोधन तजि गमन कियौ, लियौ बिरद गुपाल।
नीकैं करि कहिवी यह, भली निगम चाल॥
'सूर' सुमति सुंदरी, कुम्हिलाने मुख सरोज।
सहि न सके स्याम जु उर चाँपि लई उरोज॥ १८०॥

राग सारंग स्यामरंग पर तर्क

मधुकर सुनौ ज्ञान कौ ज्ञान।
जौ पै है घट ही घट व्यापक, पाछै कहा बिनान॥
बसत सदा तुव घट हिरदै मैं, प्रगट संग जिहि खायौ।
सोइ सगुन सुख छाँड़ि तुमहिं भ्रम अंध कूप दिखरायौ॥
तिनहिं तत्व मिलि कारन विनु ही, बदत जोग वहु मूढ़।
हरिपद परसि समर चितवत है, कोपि मरै आरूढ़॥
पूरक रेचक कुंभक कारन, करत महा दुख भारी।
इड़ा पिंगला गंगा जमुना, सुषमन निरपद नारी॥

हृदय कमल परगास गुप्त सो, सुख सु कमल परगासी।
सो सर 'सूर' बतावत औरै कैसे धौ तम नासी ॥ १८१ ॥

सबहीं विधि सब बात अटपटी कहत सयाने की सी।
अंग अग प्रति स्याम विराजत ज्यौं जल नाई सीसी ॥
तुमहूँ कहत हमारे हित की, वैद रोग जो पावै।
बिनु जाने उपचार करै तो अधिकौ बिथा जनावै।
अपनी पीर समुझि तुम देखौ, तजै पुरुष रस बेलि।
'सूर' कहाँ सुख क्यौ बिसरत है करी सरस रस केलि ॥ १८२ ॥

कान्ह कही सो तौ नहिं ह्वै है॥
किधौ नई सिखई सीखे हरि, निजअनुराग बिछै है॥
संचित करै पेट मैं राखै, वे बातै बिकचोहै।
स्याम सु गाहक पाइ सयाने, छोरि दिखाये सोहै॥
सोभा निधि सागर नागर मन जग जुवती हठि मोहै॥
लिये रूप गुन ज्ञान गठरिया, पहिलै ठग्यौ ठग ओहै।
ये निरगुन सर मारि कमल घर, चाहै करै अर्यो है॥
'सूरदास' नागर नारि निकट, जिन्हैं आज सब मोहै॥ १८३ ॥

मधुकर कहा बोलत साखि।
जोग बैन निवारि अलि अति सरस हरि रस भाषि॥
उभय तन कालिमा, तू सब अटपटी धरि राखि।
कहे सब्द सु बाम कहा नहिं अतहि अमत चाखि॥
सोभि है का कुंभ खंडित, दियौ कानौं लाखि।
सिधि करौ तुम 'सूर' प्रभु भृत इन सँदेसनि काखि॥ १८४ ॥

मधुकर भए देवैया जी के।
पूछति पा लागौ सब बिरहिनि, नंदकुँवर अति नीके॥
कहि धौं संकर्षन की बातैं, बोलौ बचन अमी के।
कहु कैसे बसुदेव देवकी, बरत दीवला घी के॥
कंस मारि मथि मल्ल कौन विधि, दाता उपकारी के।
उग्रसेन कौ नगर आनि कै, राज काज करि टीके॥
कोटि बरष सुख राज करै वै, ब्रज जन दिन दिन फीके।
हाँसी नही 'सूर' साँची कहि, समाचार कुबरी के॥ १८५ ॥

स्याम हौं निजु कै बिसारी।
मारग चितवत सगुन मनावत, काग उड़ावत हारी॥
ना जानौ सखि कौन हेत तैं, व्याप्यौ यह दुख भारी।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस बिनु, काम बिसम सर मारी॥ १८६ ॥

ऊधौ कपट रूप के मूल।
हमकौ आए जोग सिखावन, कहा जोग कौ सूल॥
स्याम बिसारी कै सँग तुमहूँ ह्वै गई भूल।
हम तौ डारी बिरह जूर, अब धौं कहाँ लगावै धूल॥

जोग जाइ तिनहीं किन सिखवहु, रहत स्याम कैं कूल ।
निसि दिन करत विलास मधुप सँग, ज्यौं वेली तरु फूल ।।
जाइ कही उन कुँवर लाड़िलै प्रेमकथा निसि तूल ।
'सूरदास' हरि विनु को काढ़ै, अंतरगति की सूल ।। १८७ ।।

वै हरि कठिन कठिन हैं ऊधौ, तुम्हैं कह्यौ नहिं चहियै ।
जिनसौं भेंट करी रस रासनि, तिनकौं जोग पढ़ैयै ।।
जिनसौं वचन रसिक रस बोलत, तिनसौं कटुक वखानत ।
तुम नीकैं कै वेई ऊधौ, और न काऊ जानत ।।
जिन कानन कंचन के भूषन, जरि जराय पहिरावत ।
अब तिन कानन मुद्रा मोहन, तुम्हरैं हाथ पठावत ।।
जिन अंगनि चंदन लपटैयत, करियत अंग सुहाए ।
तिनकौं छार मधुप सुनि गोविंद, तुम्हरे हाथ पठाए ।।
जिहिं सिर डारि फुलेल चंप जल, मलि मलि आप न्हवावैं ।
तिहिं सिर कौं तुम सौं कहि पठयौ, मधुकर जटा वनावैं ।।
सोभित चीर दच्छिनी जिहि अँग, भगुए तिन्हैं रँगावैं ।
तुम मधुकर जानत सुखकारी, जे पाटंबर लावैं ।।
कहा जु रारि जोग की तुमसौं विगत विगत पुनि कहिऐ ।
'सूरदास' कुविजा सौं रचि पचि, मधुकर मधुवन रहिऐ ।। १८८ ।।

उधौ देखौ यह गति मोर ।
सुधि वुधि चिंता सवै हिरानी, निरखि स्याम की ओर ।।
नैन प्रान मेरे हरि सौं लागे, ज्यौं निसि चंद चकोर ।
विनु दरसन अब कल न परति है, मारत मदन मरोर ।।
प्रीति के वान लगैं मन मोहन, निकसि गए हिय फोर ।
औषधि करत घाव नहिं पूजत, विनु वा नंदकिसोर ।।
गरजत गगन चहूँ दिसि धावत, स्याम घटा घन घोर ।
ता ऊपर विरहिनि मारन कौं, कुहुक उठत है मोर ।।
कुहुकि कुहुकि कोकिल अब जारति अरु दादुर दल सोर ।
क्यौं जीवैं विरहिनि व्रज वनिता, विरह विथा अति जोर ।।
जैसैं मीन परत वस वंसी, मदन करत झकझोर ।
भई अधीन छीन तन व्याकुल, तलफति व्रज की खोर ।।
आवन अवधि आस जो दै गए, मग जोवति उठि भोर ।
'सूरदास' अवला विनवति है, ल्यावहु स्याम निहोर ।। १८९ ।।

राग ईमन कल्यान

छार भूमि जोगी तन, निरगुन तहँ वीजै ।
वहुत जतन पायौ तुम, व्रज वेऐँ नहि छीजै ।।
आल वाल वाघांवर, नैन मूँदि सींचै ।
मुरली वस मानस ह्याँ, को मृग नैन मींचै ।।
रूखी चट लकुट टेकि, मौन वंध दीजै ।
सगवगे सनेह इहाँ, उन विनु नहिं जीजै ।।

उपजी जब दंपति, वासना धाम बाँचै।
इहाँ रास स्याम संग, अंग अग नाचै॥
मौन फूल तारे फल देह किए पावै:
'सूर' स्याम चुटकिनि फल धाइ कंठ लावै॥ १९० ॥

राग गौरी

सखा तिहारे हितू हमारे।
तब गोरस माखन मुख देते, सुख कारन हे प्यारे॥
वपु पोष्यौ वल जानि धर्यौ गिरि, वहुत भए जिय तारे।
अब नृप जीति असुर मधुवन सुनि, आइ वचन किलकारे॥
तेरैं हाथ कहा कहि पठई, मिलि दासौ भए कारे।
'सूर' विधाता जानि किए इक, वै दासी वै कारे॥ १९१ ॥

राग बिलावल

हरि कित भए ब्रज के चोर।
तुम्हरे मधुप वियोग उनके मदन की झकझोर॥
इक कमल पर धरे गजरिपु, एक ससिरिपु जोर।
दोउ कमल इक कमल ऊपर, जगौ इक टक भोर॥
एक सखि मिलि हँसति पूछति, खैंचि कर की कोर।
तजि सुभाइ सुभखत नाही निरखि उनकी ओर॥
विरस रासिनि सुरति करि करि, नैन वहु जल तोर।
तीन त्रिवली मनौ सरिता, मिली सागर छोर॥
षट् कंध अधरनि माल ऊपर, अजारिपु की घोर।
'सूर' अवलनि मरत ज्यावौ, मिलौ नंदकिसोर॥ १९२ ॥

जौ पै मोहि कान्ह जिय भावै।
तौ सुनि मधुप जसोदानंदन काहे कौ गोकुल आवै॥
किन प्रभु गोपवेष ब्रज धरिकै, कव वन रास बनावै।
जौ पूरबिलौ प्रेम निरंतर, अतर कौन बढ़ावै॥
यह कछु और कह्यौ चाहत ते, और कछू वनि आवै।
सूर कौन यह प्रकट करै अव, भले जु उनकौ भावै॥ १९३ ॥

जौ पै कान्ह और गति जानी।
तौ कत सुनै वात अलि तेरी, हिऐ नही ठहरानी॥
सुरति होत मोहन मूरति की, हुते घोप इक चंद।
अब कुविजा वदरी तर काँपै, मिति न विरह नँदनंद॥
विनु दरसन कुमुदिनि विरहिनि अव क्यौ जीहै रस रीति।
काहू जुग नहिं सुनी उभय मन, एक 'सूर' रस रीति॥ १९४ ॥

राग गौरी

सागर के धोखै हरि नागर, उर वेकाज मथ्यौ।
इतनैहू पर कहा न चितवत, क्यौ दुख जात सह्यौ॥
मंदर मैन प्रेम अहि जल मनु, अमर असुर अहि गात।
विभ्रम भए मथन हिय लागे, नाही ऊधौ वात॥

मुख छवि ससि अरु चंचलता हय दृग, वचन सुधा गज गौन।
बैद मिलन, जोवन मद सुरभी, सील मोद तरु जौन॥
लछमी गुन, रंभा दुति, भ्रू धनु, मनि भूषन है आनी।
ग्रीम संख, बँसुरी मुख रूठी, भई सबै विष सानी॥
जतन जतन करि हरि जु मथे सब, रहे नही कछु तन मैं।
मथौ नही किहि काज 'सूर' प्रभु कहा बसी अब मन मैं॥ १९५॥

राग सोरठ

सुनि मधुप कौन कौ काज कौन पायौ।
राज रिपु चमू घसि पैठि जन पद लियौ, जीति बिनु कपट दुंदुभि बजायौ॥
सुभट के सुभट रन जीत रन बिबस भए, फिरे नृप दसहुँ दिसि दव लगायौ।
ऐसी करुना किये लेत बिच राखि कै, सप्त मुख सेन सजि सचिव धायौ॥
बली बल साजि बाजित्र बहु बाजहिं, कहा करै ईस पगु न ठहरायौ।
नवल वय बेष सम सील गुन रूप सम, गवन कौ हेत कछु मन सुनायौ॥
इतै जैसौ कपट तितहुँ तैसौ कपट, सो कहत नाथ सौ क्यौ बसायौ।
'सूर' सयोग रसधर्म के हेत जौ, प्रीति के हेत तिन तन बनायौ॥
॥ १९६॥

तुम बिनु हम अनाथ ब्रजबासी।
इतौ सँदेसौ कहियौ ऊधौ, कमल नयन बिनु त्रासी॥
जा दिन तैं तुम हमसौं बिछुरे, भूख नींद सब नासी।
बिहबल बिकल कलहुँ न परत तन, ज्यौ जल मीन निकासी॥
गोपी ग्वाल बाल वृंदावन, खग मृग फिरत उदासी।
सबही प्रान तज्यौ चाहत है, का करवत को कासी॥
अंचल छोरि करति मिलिबे की बिनती ये सब दासी।
हमरौ प्रानघात ह्वै निबरै, तुम्हरे जानै हाँसी॥
मधुकर कुसुम न तजत सखी री, छाँड़ि सकल अविनासी।
'सूर' स्याम बिनु यह तन सूनौ, ससि बिनु रैनि उदासी॥ १९७॥

राधा भई सयानी माधौ।
अब फिरि कृपा करहु गोकुल पर, मिटी मान की साधौ॥
चातक, काक कुरंग, भृंग, पिक, तब देखे अनखाती।
अब तिन हँसि हँसि पूछति है बलि, चरन कमल कुसलाती॥
ललिता आदिक आवत देखतिहीं दौरि अटा चढि जाती।
अब तिनसौ मिलि सखी सखी कहि, रोइ कठ लपटाती॥
बाला बिरह जानि नँदनंदन सुमिरि सुमिरि पछिताती।
'सूरदास' सरबस हरि लीन्हौ, टूटि बेलि जनु पाती॥ १९८॥

राग केदारौ

ऊधौ एक मेरी बात।
बूझियौ हरवाइ हरि सौ, प्रथम कहि कुसलात॥
तुम जु यह उपदेस पठयौ, आनि जो मन ज्ञान।
सत्यहू सब वचन झूठौ, मानियै मन न्यान॥

श्रौर ब्रज कहि दूसरी हू, सुन्यौ कहँ वलवीर।
जाहि वरजन ह्यॉ पठायौ, करि हमारी पीर।।
आपु जव तैं गए मथुरा, कहत तुमसौं लोग।
सहज ही ता दिवस तैं, हम भूलियौं भव भोग।।
प्रगट पति पितु मातु प्रिय जन, प्रान तुव आधीन।
ज्यौं चकोरहिं सँग चकोरी, चित्त चंदहिं लीन।।
रूप रस न सुगंध परसन, रुचि न इंद्रिनि आन।
होत हौस न ताहि विप की, कियौ जिन मधु पान।।
ह्वै गयौ मन आपुहीं वस, गनत गुन गन ईस।।
ज्ञान है कि अज्ञान अलि, तृन तोरि दीजै सीस।।
वहुत कहिये कहा केसौ राय, परम प्रवीन।
'सूर' सुमत न छाडिहै जहँ, जियत जल विनु मीन।। १९९।।

ऊधौ वहुरौ ह्वैहै रास।
नंदनँदन सौ ऐसी कहियौ, तुम जु रहत उन पास।।
सरद रास जव वेनु वजायौ, थकित चंद्र आयास।
एते दिवस जात किन जाने, वीतन लागे मास।।
'सूरदास' प्रभु अवधि वदि गए, वह दरसन की आस।
मोहन विन इहिं धिक जीवन की अजौं रहत घट स्वास।।
लाल कल्यान वेगि ब्रज आवहु, सावन भादौ ए दोऊ मास।
वहुरौ तौ मधुवनहिं जाइऐ जव कुआँर फूलहिंगे कास।।
कृपा करहु तौ सरदहुँ रहिऐ, जल उज्ज्वल औ अमल अकास।
'सूरदास' प्रभु यहै चाँदनी, वेनु वजाइ खेलिवौ रास।। २००।।

यशोदाजी का ''देस

मोहन अपनी घेरि लै गइयाँ।
विडरी जाति फिरति नहिं फेरी, डोलति हैं वन महियाँ।।
ग्वाल वाल जितनक फिरि फेरत, नहि पत्याति वे सइयाँ।
तनिक मुरलि की टेर सुनावहु, सवै परति है पइयाँ।।
वूडति विरह सिधु सव अवला, औधि आस पर थहियाँ।
'सूर' स्याम सौ जाइ कहौ कोउ, लै निकासि गहि वहियाँ।। २०१।।

राग सारंग उद्धव प्रत्यागमन

विरहीं कैसै जिएँ विचारे।
ज्यौ घायल गहि फिरि फिर वूझत, काम वान के मारे।।
नाहिन नींद परति निसिवासर, नैन नीद भरि ढारे।
मानहि नहीं मनेयै कैसै, वहुत मनावत हारे।।
ज्वाल सकल अगनि तै नखसिख, जैसै दावा जारे।
कंठ कपोल अधर कुम्हिलाने, भए भँवर तैं कारे।।
जोग जज्ञ तीरथ व्रत तुमही, लोक वेद तैं न्यारे।
सव सौ तोरि तुमहिं चित वाँध्यौ, अव ह्वै रहे तुम्हारे।।
डगमगात तन धरत न धीरज, डोलत दुखित दुखारे।
'सूरजदास' कहत कर जोरे, दरसन देहु पियारे।।

राग सारंग

तुम्हारोइ चित्त बनाउ कियौ।
तव कौ इंदु सम्हारि तुरत हीं, मनसिज साज लयौ ॥
व्रत गहि जुग अँगुरी के बीचहि, उन भरि पानि पियौ ।
पुर प्रति करति लेख कौ प्रारंभ, तबहिं प्रहार कियौ ॥
ह्वै पथ विकल चकित अति आतुर, भरमति है जु हियौ ।
भृत्ति विलंबि पृष्ठ दै स्यामा, स्यामैं स्याम बियौ ॥
या गति पाइ रही राधा अब, चाहति अमृत पियौ ।
'सूरदास' प्रभु प्रीति उलटि परी, कैसैं जात जियौ ॥ २०३ ॥

——.००::——

परिशिष्ट (२)

॥ २०४ ॥

मोहन जागि हौ बलि गई।
ग्वालबालक द्वार ठाढ़े, बेर बन की भई ॥
पीत पट करि दूरि मुख तैं, छाँड़ि दै अरसई।
अति आनदित होति जसुमति, देखि कै दुति नई ॥
जागे जंगम जीव पसु खग, और व्रज सबई।
'सूर' के प्रभु दरस दीजै, अरुन किरन छई ॥ १ ॥

राग कान्हरौ ॥ २०५ ॥

अंतरजामी श्री रघुबीर।
करुनासिधु अकाम कल्पतरु, जानत जन की पीर ॥
बालि त्रास कपि बसत विषम बन, व्याकुल सकल सरीर।
सो सुग्रीव कियौ कपिपति प्रभु, मेटि महा रिपु भीर ॥
दसमुख दुसह क्रोध दावानल, पुजउपाधि समीर।
तिहिं जर जरत विभीषन राख्यौ, सींचि कृपा वर नीर ॥
कहि कहि कथा प्रेम पूरन जस, जुग जुग जग सब तीर।
भूरि नाम कल कियौ 'सूर' प्रभु, रामचंद्र रनधीर ॥ २ ॥

॥ २०६ ॥

मुरली बहुतै ढीठ भई।
ऐसी निठुर भई देखतहिं उपजी व्याधि नई ॥
यह रस भरी बदति नहिं काहूँ अति उर रोष तई।
'सूरदास' ऐसी कुनारि किन्हि बचननि मोल लई ॥ ३ ॥

॥ २०७ ॥

बेष बन्यौ नँदनंदन प्यारे। सुदर नैना फिरत तुम्हारे ॥
सुनत बेनु पसु पच्छी मोहे जमुना थाकी कथा बिचारे।
देखत गति सुर सुरपति मोहे जतन चंद चलिबे तै हारे ॥
बिरहताप तन अधिक तपत है अब बिसरे दुख सबै हमारे।
'सूरदास' प्रभु अधिक चतुर जय जय श्री नंद दुलारे ॥ ४ ॥

॥ २०८ ॥

मुरली यातैं हरिहिं पियारी।
अधर धरत सरजीव होति है मृतक होति कियै न्यारी ॥
जैसी प्रीति मीन जल पकज तरनि बिना मुरझाई।
:o: :o: :o: :o: ॥
अरु ज्यौं जगै अगिनि चकमक की पाथर सहै झरारी।
तौ लौ 'सूर' कहाँ पिय पैयत गोकुल चंद बिहारी ॥ ५ ॥

॥ २०९ ॥

मुरली तेरांई बड भाग।
धन्य सुवंस कंज की लहनौं जिहि उपजी बन बाग॥
प्रथम सह्यौ छत कर कुठार कौ दूजैं सब तन दाग।
उतनौ दुख इतनौ सुख पायौ पीवति कमलपराग॥
जाकौ जस गुन गंध्रप गावत सुर नर मुनि जन नाग।
'सूरदास' प्रभु बस्य किये हरि बंसी करि अनुराग॥ ६।

॥ २१० ॥

स्याम सुंदर मदन मोहन बाँसुरी बजाई री।
दोऊ कर जोरि बहुरि अधरनि पर आनि धरी थकित भई ग्वारिनि सुधि नहीं रहीं काई री।
बाजैं सु अनेक राग बानी सिव सेस नाग धुनि सुनि सब सीस धुनैं धरनि परीं आई री।
बाजैं बर कौन सुनैं यातैं मगन भए सुर नर मुनि रुद्र जू कौ ध्यान छुट्यौ परवती उर लाई री।
'सूर' गावत हरि छंद गोपिन मैं भयौ अनंद सबनि राधा प्यारी प्रीति कै बुलाई री।
॥ ७ ॥

॥ २११ ॥

आजु कहूँ मुरली स्याम बजाई।
तब तैं तरवर मोर सबैं पुर रहीं बदरिया छाई॥
गौवनि अधर दसन तृन रहि गयौ बछरा पियत न धाई॥
सिध साधक ब्रह्मादिक येऊ रहे सबैं लौ लाई।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस कौ धुनि सुनि सुनि उठि धाई॥ ८॥

॥ २१२ ॥

सुनौ हो या मोहन की बैन।
स्रवन सुनत सुधि बुधि सब बिसरीं बिरह बिथा भई ऐन॥
गृह अँगना न सुहाइ मेरी सजनी नहीं परत चित चैन।
जब मुख देखौ स्याम सुंदर कौ तब सचुपावैं नैन॥
रास रच्यौ बृंदावन महियाँ सब गोपिनि सुख दैन।
अपने अपने बानक बनि आई तट जमुना जल फैन॥
देवलोक सुग्लोक बिसारी चंदा बिसरयौ रैन।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस कौ चली मदन गढ़ लैन॥ ९॥

॥ २१३ ॥

मुरली मोहन अधरनि बासा।
सिव समाधि छूटी धुनि सुनि कै सरिता कियौ निवासा॥
मीन कुरंग सेष ससि मोहे सब थकि रहे निवासा।
कमल नैन कहि कहि अति जोधा जपत रहे 'सूरदासा'॥ १०॥

राग काफी ॥ २१४ ॥

मोहन मन मोहि लियौ ललित बेनु बजाई री।
मुरलीधुनि स्रवन सुनत बिवस भई माई री॥
लोकलाज कुल की मरजादा बिसराई री।
घर घर उपहास सुनत नैकु ना लजाई री॥

जप तप वेदऽरु पुरातन कछू ना सुहाई री।
'सूरदास' प्रभु की लीला निगम नेति गाई री ॥ ११ ॥

राग काफी ॥ २१५ ॥

सुनि आधी सी राति मोहन मुरलि बजावै।
नींद उचटि गई मन मुरझानी प्राननि और न भावै ॥
मन हरि लियौ देहगति भूली गृह अँगना न सुहावै।
'सूरदास' प्रभु मुरलीताननि देहदसा बिसरावै ॥ १२ ॥

॥ २१६ ॥

स्याम तेरी मुरली मधुर धुनि बाजै।
मुरली तेरी सुर नर मोहे तीनि लोक पर गाजै ॥
लीन्हे बाल गुपाल लाल सँग आवत गैयनि पाछै।
मोरमुकुट कुंडल की सोभा पीत काछनी काछै ॥
काँध कमरिया हाथ लकुटिया माथै तिलक बिराजै।
'सूरदास' के प्रभु की सोभा कोटिक काम पराजै ॥ १३ ॥

॥ २१७ ॥

माई मुरली बजाई किन री।
नंद महर कौ कुँअर कन्हैया रैनि न जानै दिन री।
मोहे खग मृग अरु पसुपालक मोहे बन उपबन री।
चलत न नीर थकित भई जमुना गऊ न चारैं तृन री ॥
मुरली बजाई सब मन लाई स्रवन सुन्यौ जिन जिन री।
'सूरजदास' सकल जन मोहे मुरली की धुनि सुनि री ॥ १४ ॥

॥ २१८ ॥

जब कर बेनु सची बलबीर।
स्रवन सुनत सुर नर जु थकित भए सरिता थकित बहत नहि नीर ॥
सागर थकित कमठ पुनि बिथक्यौ सेस सहस मुख धरत न धीर।
सिव थकि ध्यान ज्ञान ब्रह्मा थके गोसुत थकित पिवत नहि छीर ॥
पवन थकित अरु थकि बनबेली बनिता थकित बिसारे चीर।
'सूरदास' प्रभु थकित जसोदा उड़गन थकित रहे इहि तीर ॥ १५ ॥

राग मलार ॥ २१९ ॥

मुरली कौन गुमान भरी।
जानति हैं उतपात आपने उतपति क्यौं बिसरी ॥
हृदय आपनै बेध बनाए बहु बिधि जरनि जरी।
तातैं श्री करुनापति लीन्ही अधरनि आनि धरी ॥
अब धौं कहा कियौ चाहति हैं सरबस लै निवरी।
'सूरदास' ब्रज हा हा करि कै गोपी कहति खरी ॥ १६ ॥

राग धनाश्री ॥ २२० ॥

बाजी हो वृंदावन रानी।
धन्य बंस-दुख-भंजनि गिरिधर कर धरि मोहिनि मानी ॥
तरल रसाल अधरछवि कर लै मुरली सकल कहानी।
कुंज खोह करु करत तपी तप तिन तन तपति सिरानी ॥

अंवर घेरि घटा घन आए रहीं धार धरि पानी।
बूझत वाल गुपाल सखा सौं कृत्रिम कहँ तैं आनी।
मुख जनराज श्री सुंदर हरि मुख 'सूर' सवै जग जानी ॥ १७ ॥

राग नट ॥ २२१ ॥

हम न भईं वड़भागिनि वँसुरी।
कर अंबुज मैं वास सदाई जोकौ छन छन पियति अधर मधुरसु री ॥
मुरली मनोहर नाम कहावत तीनों लोक विदित जग जसु री।
'सूरदास' प्रभु अधिक निठुर भए मुरली कौ दियौ हमारौ सरवसु री ॥ १८ ॥

राग गौरी ॥ २२२ ॥

मुरली कुंजनि कुंजनि वाजति।
सुनि री सखी स्रवन दै अव तू जिहि विधि हरि मुख राजति ॥
कर पल्लव जव धरत साँवरे सप्त सुरनि कल साजति।
'सूरदास' यह सौति साल भई सवहिनि कै सिर गाजति ॥ १९ ॥

राग काफी ॥ २२३ ॥

वजाई वाँसुरी व्रजराज (मोहे व्रजराज)।
सुनि स्रवननि भवननि रहि सकी न नहि सुहात गृहकाज ॥
मातु पिता पति पूत वंधु की तजी इन नैननि लाज।
हरे भरे द्रुम भरे झरे भए वृंदावन विप राज ॥
गैया गोप गोठ गृह अँटके हंससुता भई थीर।
गन गँधर्व सव थकित भए है चलत न त्रिविध समीर ॥
सुनि सुनि सकल व्रज वधू धाई विकल वावरी वेस।
रहीं न सम्हार हार उर अचल छुटे कंचुकी केस ॥
सिव विरंचि ससि सेस सारदा मघवा मगन भए।
रवि रथ रोकि रहे सुरपुर मै वाजि वाग जुगए ॥
'सुर' नर मुनि थावर जंगम जड भए सवहि मन पग।
तजि धन धाम वाम गृह अँटकी 'सूर' स्याम कै संग ॥ २० ॥

मुरली तनक मुनै जो है।
जल थल जीव जंतु कौ स्वामी सोऊ वा सुर मोहै ॥
जा तीरथ व्रत कियौ तरुन सव स्रम करि पीठि न दीन्हीं।
ता तीरथ के व्रत के फल सौ स्याम सुहागिनि कीन्हीं ॥
हमै छुडाइ अधर रस पीवै करति न रंचक कानि।
'सूरदास' प्रभु निकसि कुंज तै जुरी सौति वनि आनि ॥ २१ ॥

राग विलावल ॥ २२५ ॥

कहियौ अति अवला दुख पावै।
हिरन पटनपति प्रविसत ज्यौ है वार वार समुझावै ॥
सारँगरिपु ता पतिरिपु वा रिपु ता रिपु तनहि जरावै।
हरि-वाहन-वाहन-पति-धाइक ता सुत आनि वचावै ॥
सुर-रिपु-गुरु-वाहन ता रिपुपति ता चढि भेप दिखावै।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे मिलन कौ विरहिनि तपति वुझावै ॥ २२ ॥

राग नट ॥ २२७ ॥

नैननि ऐसीयै कछु वानि।
मोहन मुख देखतही देखत छिनुक होति हित हानि ॥
परवस लै दीन्ही हौं इनही मिटी लाज कुलकानि।
लव निमेष न्यारे नहि सजनी मिलि रहे ज्यौ पय पानि ॥
जा दिन तैं देखे आनँदनिधि वोलत मृदु मुसुक्यानि।
तव तैं 'सूर' कवहुँ या कुल सौ कवहुँ नही पहिचानि ॥ २३ ॥

॥ २२८ ॥

को समुझावै मेरे नैननि हौं समूझाइ रही।
लाज न धरत फिरत पंछी ज्यौ करत न सीख कही ॥
विनु आदर विनु भाव विना फिरि जात तही।
वै वेधत सर ये सुख मानत वातै अधिक दही ॥
इनके लियै जगत उपहाँसी करि जिय कठिन सही।
भौंन गौन जल आनन कारन. आनहि वदत नही ॥
लालच लागे रहत स्वान ज्यौ चितवत स्याम जहीं।
सुनहु 'सूर' सवहिनि की यह गति नैननि गुसा गही ॥ २४ ॥

॥ २२९ ॥

नैना ऐसे हठी हमारे।
परवस भए रूप-रस-लोभी निरखि निमेष विसारे ॥
राखे रोकि सखी घूँघट-पट टरत नही ये टारे।
नैंकु विलोकत परी ठगौरी भए. लाज तजि न्यारे ॥
अपनौं दाम होइ जौ खोटौं दोष न परखत हारे।
जौ पै सरवस दयौ 'सूर' प्रभु अव नहि वनत पुकारै ॥ २५ ॥

॥ २३० ॥

सखी मेरे लोचन लोभ भरे।
जिहिं टक परे स्याम सुदर सौ तिहिं टक सौ न टरे ॥
निद्रा तजी निमेष निवारी सदा रहत उघरे।
सूल सलाक सहत निसि-वासर विरह वयारि भरे ॥
लोक-वेद-कुल-लाज राज भय ये एकौ न डरे।
नैन 'सूर' नाही वस मेरै कितै उपाइ करे ॥ २६ ॥

॥ २३१ ॥

नैना नही सखी वै मेरे।
वरजत ही वै गए सखी री भए स्याम के चेरे ॥
जद्यपि जतन किये जुगवति ही स्यामल सोभा घेरे।
तउ मिलि गए दूध पानी ज्यौ निवरत नही निवेरे ॥
कुल-अंकुस आरज-पथ तजि कै लाज सकुच दई डेरे।
'सूर' स्याम कै रूप लुभाने कैसेहुँ फिरत न फेरे ॥ २७ ॥

॥ २३२ ॥

(मेरे) नैननि कौ रस नंदलला।
कहाँ करौं सिर परी ठगोरी विनु देखै नहि रहत पला ॥

कुंडल मकर पीत उपरैना राजति है उर वनजु मला।
सुदरता की सींव छवीली कंद्रप कोटिक धरत कला॥
जव तै चरन स्याम के देखे मनु अपंगु चित कहुँ न चला।
'सूरदास' प्रभु भई एक मन अंग-अंग प्रति भेद भला॥ २८॥

॥ २३२ ॥

कमलनैन वस कीन्हे मुरली वोलि मधुर मृदु वैन।
सव विकथित कीन्हे एकहि धुनि मुनिजन खग मृग धेनु॥
मुरली मनहर साँवरै करपल्लव निज वास।
अधर लागि सरवस लई अंमृत रस की रास॥
व्रज नरनारि दसौ दिसि जमुना पसु पच्छी द्रुम वेलि।
तव धुनि सुनि मुनि-जन-मन मोहे त्रिभुवन सुख रत केलि॥
अव तौ हेत हमसौं नही जेतौ तुमसौ हेत।
हम चितवति ठाढी सवै तुमहिं अधर-रस देत॥
जानि वूझि कै वै करहिं एक जाति द्वै भाँति।
पगतिभेद भलौ नही वुरौ सु यह उतपात॥
जातिपाँति मदगरव तै रही सकल जग जीति।
'सूर' सुमृति स्रुति मेटिकै चली आपनो रीति॥ २९॥

॥ २३३ ॥

हरि मुरली कै प्रेम भरे।
और कछू भावत नहिं उनकौ निसि-दिन रहत खरे॥
या विनु और कछू नहिं चाहत रहत सदा उमहे।
'सूरदासरु प्रभु ऐसी कीन्ही हमतन फिरि न चहे॥ ३०॥

॥ २३४ ॥

कान्ह तिहारी सौ आऊँगी।
खरिक वछरुवा सौपि सँझौखैं स्याम समय जौ पाऊँगी॥
जुरी भवन मैं भीर न ह्वै है तौ यौ तुम्है वुलाऊँगी।
वालक पारि पालनै कै मिस ऊँचे स्वर लै गाऊँगी॥
होत घैर घर दूर कुवेरिया ऊतरु कहा वताऊँगी।
'सूरदास' प्रभु तुमसौ छल करि कवलौ आपु छुडाऊँगी॥ ३१॥

॥ २३५ ॥

हौ हरि यहै सिखाव सिखाऊँ।
जौ तुम नंदनँदन दधि चाहौ तौ मै तुम्है खवाऊँ॥
हाँ जु दूध वाखरी धेनु कौ तुम हित औटि जमाऊँ।
वछरुनि कै सँग टेरत डोलत तहाँ तुम्है कहँ पाऊँ॥
जा भाजन दधि औटि जमाऊँ सो दधि तुम्है वताऊँ।
मेरी परोसिनि आप काज कौ जव उठि जाइ वहाऊँ॥
छीके पर है कनक कमोरी जौ हौ नैन नचाऊँ।
मेरे नैन दरस के प्यासे वहुरौ दरसन पाऊँ॥
'सूरदास' प्रभु छल करि आवहु इहि मिस देखि अघाऊँ॥ ३२॥

॥ २३६ ॥

मेरी दधि लीजै कुंज दानि।
नैंकु तिहारी वुहनी सचु पाऊँ लै आई यह जानि॥
आछौ नीकौ अछूतौ गाढ़ौ सो प्रतीति तू मानि।
छुवत हौ हाथ स्याम के जो कछु मिलयौ ह्वै है पानि॥
झगरत सुख सरिता अति बाढ़ी अनमिल कछू रही नहिं कानि।
'सूर' श्रीगुपाल मुख निरखत गोरस बेचत हित न बिकानि॥ ३३ ॥

॥ २३७ ॥

देखौ माई आवत है घनस्याम।
दामिनि ज्यौं पीतांबर सोहत मोहत कोटिक काम॥
घूँघरवारी अलक मनोहर मंडित गोपदधूरि।
तिनकैं निकट प्रकट कुडल दुति मनु नव घन मैं सूर॥
बनमाला जो हिय कंजनि को इंद्र धनुष की भाँति।
मुक्ता माल अनूपम राजति ज्यौं जलधर बग पाँति॥
माथैं मुकुट मोर ज्यौं निर्त्तत मुरली सब्द रसाल।
'सूरदास' प्रभु मेघ स्याम घन चातक सब ब्रजबाल॥ ३४ ॥

॥ २३८ ॥

हरि चितवनि चित तैं नहिं टरै।
कमलनैन सौं अरुझि रह्यौ मन कहा करौं क्यौं हूँ न निवरै॥
जद्यपि मात पिता मोहि त्रासत भई भवन मैं तृन तैं हरै।
तद्यपि यह मन रहै न हटक्यौ बिनु देखैं अंतर उर जरै॥
जाकौ बिगरि परयौ मन चचल भलौं बुरौ सिर ऊपर धरै।
'सूरदास' स्वामी सौं मिलि अब को जानै मीठी अरु करै॥ ३५ ॥

॥ २३९ ॥

यह पट पीत कहाँ तैं पायौ।
इतनक बोल गुपुत माधौ कौ राधे तैं तिहुँ लोक जनायौ॥
एक समय अंतर बन खेलत बहुत जतन करि मही उठायौ।
नाही याकौ मोल न गाहक घर उपज्यौ नहिं मोल मँगायौ॥
सुमिरत ध्यान सबैं उर अतर त्रिभुवन रूप भलौ बर पायौ।
ये सब भेद चतुर सोइ जानैं 'सूरदास' प्रभु कहि समुझायौ॥ ३६ ॥

॥ २४० ॥

आजु बन लीला ललित सँवारी।
ग्वाल बाल सखियाँ सँग लीन्हे राधे रूप मुरारी॥
मृगमद तैं लेपन कियौ पुनि तापर चंदन खौर।
बनमाला मुक्तावली सिर मुकुट चंद्रिका मोर॥
घेरि गूजरिनि सौ कह्यौ तुम देहु दही कौ दान।
कौडी एक न छाँडिहौ मैं वै न कनौड़े कान्ह॥
एक सखी गोकुल गई तिनि कह्यौ स्याम सौं टेरि।
दानी एक नयौ भयौ तिनि दयौ अमल तुव फेरि॥

सुनि मोहन कोहन भयौ उठि गोहन दौरे धाइ।
रूप अनूप विलोकि कै कछु भ्रम तै भापि न जाइ॥
निरखहि लोचन मिले वै मंद मंद मुमुकाइ।
राम राम हो राम जै दोउ विहँसि मिले उर लाइ॥
रस कै वस ह्वै प्रेम तै मिलि लपटि रहे भुज चारि।
'सूर' स्याम वस राधिका उत राधे हरि अनुहारि॥ ३७॥

॥ २४१॥

तुम्हें कोउ हेरत हैं हो कान्ह।
गोरी सी भोरी थोरे दिननि की थोरी वैस उठान॥
पहिरे नीलावर अति सोहै मुखदुति चंदसमान।
वंसीवट की ओर गई है लाल मनोहर जान॥
जानति है मन वच क्रम मोहन तुम मै वाँकै प्रान।
'सूरदास' प्रभु अवही चलियै नई करौ पहिचान॥ ३८॥

राग गूजरी ॥ २४२॥

वनी राधे काजर की रेख।
चारु चिबुक मुदरी पिउ मोहन लै दरपन मुख देख॥
मुकुना पति कपोत कोक कर इंदुक वदन विसेप।
हिरदय तै न टरै कुंज विहारी चारु गवने निसेस॥
आरत भए अनत रोइ कै थर थर काँप्यौ सेप।
'सूरदास' लीला सागर विसरत नाहिं निमेप॥ ३९॥

राग कान्हरा ॥ २४३॥

वरनौ राधिका लाल।
रूप गुन उपमा न पावत नाग सुर नर व्याल॥
वारि जलसुत करन भूपन कुटिल हारक साल।
मनौ थल नव कमल अंकुर विकस है भरमाल॥
सीस फूल दुकूल जल मै जोति जगमग जाल।
मनौ रवि पर प्रगट विहरत छीन घन की माल॥
कवहुँ खिलठत पीठि दीठत कर कजल की व्याल।
मनौ फूटे कनक कुंभहिं देखत दोऊ भाल॥
किच व्कक हेम मंडित सकस नवल प्रवाल।
मनौ भरि भरि अंक भेटत उमँगि पिय उठि लाल॥
सुभग नासा रदन की छवि परम सुरँग रसाल।
यौ मरकत सैल......................॥
जुगल जंघ जराइ जेहरि चलत मंद रसाल।
रूप गुन के 'मूर' वलि वलि मिलहु दीनदयाल॥ ४०॥

राग नट ॥ २४४॥

जाकै हरि जू की वरु ताकै धौ कौन कौ डरु।
काहे जिय सोच कीजै को है हो ऐसौ अवरु॥

सवहिनि के है नाथ जीवन वाही कै हाथ वैई अजर अमर अजित अकाथ।
सोई वसै साथ सदा सरन अनाथ वेद वदत विदुप देखौ धौ गावत गाथ॥
सुनि धौ जिनकी भीति सकल चलत नीति अपनी प्रतीति चित थकित रहत।
रवि न तपत अति वायु न तजत गति डालत न सेप सिर सिंधु न वहत॥
काल के मारनहार प्रगट धरनि वसि अनाथ अभय करि हिय हुलसत।
प्रगट 'सूर' के स्वामी अखिल अतरजामी असुर अवोध दुप्ट अजहूँ ग्रसत॥४१॥

॥ २४५॥

जागौ मोहन भोर भयौ।
फूले कमल कुमुद मुद्रित भए तमचुर कौ सुर हारि गयौ॥
टेरत ग्वाल वाल सव ठाढे पूरव सौ पतंग उदयौ।
सुनत वचन जागे नँदनंदन 'सूर' जननि तव उछँग लयौ॥४२॥

राग रामकली॥ २४६॥

वे सइयाँ मेरी रैनि विदा होन लागी।
घटि गई ज्योति मंद भए तार फूल वासना दिसि पागी॥
सोरह सिंगार वतीस आभरन अपने प्रीतम सँग जागी।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे मिलन कौ कृप्न हमारे अनुरागी॥४३॥

राग रामकली॥ २४७॥

वढ़ि वढि वात लागी करन।
स्यामसुदर मदनमोहन आए तेरे घरन॥
उदित उर पर चिकुर छूटे चिकुर उर पर ढरन।
काम कौ दल साजि आई आड़ दै दै लरन॥
विरह कौ सग्राम जीत्यौ वाधि अपनौ परन।
'सूर' के प्रभु तरन तारन राखि अपनी सरन॥४४॥

राग रामकली॥ २४८॥

निपट छोटे कान्ह सुनि जननी कही वात।
होत जव-समुदाइ करत तव सिनु भाइ एकातहि पाइ कै नैन भरि मुसुकात॥
देखि रसरीति की प्रीति विपरीत गति मति मानि छाँड़ि सँग लगी रहौ निसि प्रात।
जात नहि विसरि देखे वहुत जतन धरि समुभि कहूँ चद देखै कमल विगसात॥
दुरत घूँघर जवै वाल जसुमति हृदै उझकि धँसि धरनि धरि पाँव मुख किलकात।
मनहुँ आपाढ़ घन वादरी 'सूर' तजि होत आनंद सव फूल अति जलजात
॥४५॥

राग सारंग॥ २४९॥

श्री जमुना निज दरसन दीजै।
आस करौ गिरिधरन लाल की इतनी कृपा करीजै॥
हौ चेरी महरानी तेरी चरनकमल रखि लीजै।
विलँव करौ जिनि वोलि लेहु मोहि दरस परस नित कीजै॥
करौ निवास उर अंतर मेरै स्रवन सुजस सुनि लीजै।
प्रानप्रिया की खरी पियारी पानि पकरि अव लीजै॥
हौ न अरुभ मूढ मति मेरी अनत नही चित्त भीजै।
'सूरदास' मोहि यह आसा है निरखि निरखि मुख जीजै॥४६॥

॥ २५० ॥

कहँ लौं कहौं सखि सुंदरताई।
मोर पच्छ माथे पर राजत फेरत कमल अग सुखदाई॥
पहिरे पीतावर है ठाढ़े वहु विधि (सुदर) ठाट वनाई।
मुरली अधर मधुर धुनि वाजति नए मेघ मानौं घहराई॥
सिर पर लाल पागरी वाँधे उर मुक्तनि की माल रुराई।
जुगल प्रवाह सुरसरी धारा निरखत कलिमल गए हिराई॥
वैजती लटकति चरननि लौं हस कीर रहे वैठि लजाई।
सोभा सिंधुपार नहिं जाको सिव विरचि सोचत अधिकाई॥
वड़े भाग प्रगटे जसुदा कै घर वैठे ही नव निधि आई।
'सूरदास' प्रभु नद अनदित तिहूँ लोक छिति छवि न समाई॥ ४७॥

॥ २५१ ॥

निरखत रूप नैन मेरे अटके।
रहत न घरी प्रवल वल उमँगे मधु माखी ज्यौं दोऊ लटके॥
कल नहिं परत धरत नहि धीरज विन रसना निसि वासर रट के।
छाँड़ी लाज काज गृह विसरयौ वोल कुवोल हियै नहि खटके॥
लै घट गई सुभाइ आपनै भरयौ जाइ जमुनाजल टटके।
दई उठाइ सीस पर गागरि मो तन चितै कोर दृग मटके॥
चचल भौह तवै पहिचानी चलनहार वे औघट घट के।
मै हूँ सोच करयौ जिय अपनै भूलत नही पीत पट कट के॥
मत्र सुमत्र करौ कछु सजनी तृपित होत जैसे अमृत घट के।
'सूरदास' प्रभु व्रजसुखदायक श्री स्यामा वर नागर नट के॥ ४८॥

॥ २५२ ॥

निरखि रूप अटकी मेरी अँखिया।
अति रसलुब्ध प्रेमवस सजनी विंधी सहत कौ ज्यौं हठि मखियाँ॥
तोरि कपाट आड़ अचल की गई धाइ काहू नहि लखियाँ।
अव ये अधिक पिराति रैनि दिन करहु जतन सुदर सव सखियाँ॥
राखति हुती वहुत जतननि सौ गुरुजन-लाज-कोट-गढ़ नखियाँ।
'सूरदास' प्रभु मोहन नागर कल कहँ परति रूप जिन चखियाँ॥ ४९॥

राग विलावल ॥ २५३ ॥

देखि सखि तीस भानु इक ठौर।
ता ऊपर चालीस विराजत रुचि न रही कुछ और॥
धर तै गगन गगन तै धरती ता विच रहे विस्तार।
गुन निर्गुन सागर की सोभा विनु रवि भयौ भिनुसार॥
कोटिनि कोटि तरगै उपजति जोग जुगति चित ल्याउ।
'सूरदास' प्रभु अकथ कथा कौ पडित भेद वताउ॥ ५०॥

राग विलावल ॥ २५४ ॥

(अहो) दधि-तनया-सुत, रिपु-गति गमनी मुनि वृपभानुदुलारी।
दादुर-रिपु-रिपु-पतिहिं पठाई सो चित नृप विचारी॥

अलि-वाहन-रिपु-वाहन-रिपु की तपनि भई अति भारी।
सोच सम्हारि प्रभु खेदित है, हौं बलि जाउँ निहारी॥
मारुतसुत-पति-रिपु-पति-पत्नी ता गुन-नारि विसारी।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे मिलन कौं, ज्यौं हठ होत हत्यारी॥५१॥

राग बिलावल ॥ २५५ ॥

सारँग-सुत-पति-तनया कै तट ठाढे नंदकुमार।
बहुत तपत जु रागि मैं सविता ता तनया-सँग करत विहार॥
गुडाकेस-जननी-पति-वाहन ता सुत के अँग सजे सिंगार।
चंद चौहत्तर आठ हस द्वै व्याल कमल बत्तीस बिचार॥
एक अचंभौ और बताऊँ पानि चंद धरे कमल मँझार।
'सूरदास' इहि जुगल रूप की सोभनि राखि सदा उर धारि॥५२॥

राग कान्हरा ॥ २५६ ॥

रास रच्यौ वृंदावन मोहन चलु प्यारी देखन गिरिधर।
कालिंदी-तट सघन कुंज अति मन्द-रैनि सोभित हिमकर॥
पास भामिनी बीच स्याम घन नव कर जोरि करत अवसर।
बाजत ताल मृदंग झाँझ डफ रबाब नागरी नवै सुघर॥
संग सखा सब लिये बिराजत विभिकारी नाचे भर भर।
उड़त गुलाल अबीर अरगजा चंदन चोवा कुमकुमा भर॥
सब सिंगार नीके सोभित है मिलन सुन्दर भाँतिनि के नर।
'सूरदास' प्रभु की छवि निरखत थकित भए सुरपति ऊरध पर॥५३॥

राग विहागरा ॥ २५७ ॥

सुभग सेज मैं पौढे कुँवर रसिक बर स्यामहि संग नंदजानन्द जागे है।
सिथिल बसन बीच भूपन अलक छवि मोह मग सुख सों लपटि उर लागे है॥
झुकि झुकि आवैं नैन आलस झलक ज्यौं लटपटी बानि कर अति अनुरागे है।
'सूरदास' नंद जू के सुवन तिहारौ जस जानौं प्रान प्रिय तुमहीं मैं रस पागे है॥५४॥

राग विहागरा ॥ २५८ ॥

पौढे लाल राधिका उर लाइ।
नव कुसुम अरु नवल सेज्या नव चतुर दोउ राइ॥
गान सहचरि करति द्वारै सरस राग जगाइ।
'सूर' प्रभु गिरिधरन सँगसुख रही उर लपटाइ॥५५॥

राग कान्हरा ॥ २५९ ॥

घूँघट के बगरोट ओट रहि चोट सरासन भौंह नायक दृग।
बेध्यौ विदित चपल पलकनि अनकनि फस निसंग चली हिग॥
ते करि सायल नायक की मनि सुनि सुंदरि सरि को जग।
बचन प्रसंसि अंस भुज धरि हरि धरि करि करुना तुव भूपन को नग॥
चित चितयो फिरि दिसा अनौपी पोखि अधर मधु सुधि भई जो लग।
'सूरदास' संयोगहि यह गति रति बिछुरे की अकथ कथा खग॥५६॥

॥ २६० ॥

एक समय मंदिर मैं देखे राधा जू अरु नंदकिसोर।
दच्छिन कर मुक्ता स्यामा के तजत हंस चुप जुगत चकोर॥

तामैं एक अधिक छवि उपजी ऊपर मधुप करत घन घोर।
'सूरदास' प्रभु इंद्र-सकान्यौ रवि अरु ससि वैठे इक ठौर॥ ५७॥

राग आसावरी ॥ २६१ ॥

गुरुजन मैं डटि वैठी स्यामा स्याम मनावन जाहीं।
सनमुख ह्वै कै चरन छुवाई मोर-मुकुट-परछाहीं॥
तव दरपन लै निरखन लागी कहि तिय नाहीं नाहीं।
'सूरदास' मोहन पाछै ह्वै छवि निरखत सुख माहीं॥ ५८॥

॥ २६२ ॥

अरी तू को है हौ हरि दूती।
कहा कहति तजि मान मनोहर सुनि सखि समुझि कहा है सूती॥
ताहि मनाउ जगाइ जु तिनकौ अधर सुधा मधु मय संजूती।
'सूरदास' प्रभु रसिक सिरोमनि छल वल करि जु राधिका धूर्ती॥ ५९॥

॥ २६३ ॥

मोसी हितू न तेरै ह्वैहै।
ये दिन चारि गए सुनि नागरि नैननि नीद न ऐहै॥
कठिन काठ तै ग्वारि हठीली उठि चलि वेगि निसा घटि जैहै।
जोवन वादर छाहँ 'सूर' प्रभु ऐसी जोति न रैहै॥ ६०॥

॥ २६४ ॥

आपुनही चलियै जू मोहन मन कीजियै न लाज।
मोसी जौ तुम कोटिक पठवौ प्रिया न मानति आज॥
हौ जु तिहारी आज्ञाकारिनि कहा कहत व्रजराज।
'सूरदास' प्रभु वड़े कहि गए आपु काज महा काज॥ ६१॥

राग सारंग ॥ २६५ ॥

मनावति हारि रही हौ माई।
तू चित तै पट होति न राधे हौ तोहि लेन पठाई।
राजकुमारि होइ तौ जानै घर की होइ वढ़ाई।
कमलनैन कौ जानि महातम अपनी राखि वड़ाई॥
टेढ़ी भौह चली करि दूती तिरछै हाथ नचाई।
'सूरदास' प्रभु जौ करौ दुलहिनि तौ वावा की जाई॥ ६२॥

॥ २६६ ॥

राधे कत तू खरिक गई री।
अव चलि देखि प्रानपति की गति तव तै कहा भई री॥
जा छन तै तै दई दिखाई कर दोहनी लई री।
ता छन तै मन परी चटपटी गाइ न दुहन दई री॥
अव ताकौ उपचार करै किन प्रीति की वेलि वई री।
अनँगराज सीचत कुभी लै लागी प्रेमजई री॥
चलि वलि फिरि चित वन दै मन दै मन उर की गई री।
'सूरदास' प्रभु स्यामसुँदर मन मथियत कामरई री॥ ६३॥

राग काफी ॥ २६७ ॥

विलोकौं राधा नागरि प्यारी हो छवि गुन रूप निधन।
सारी नील मोल मँहगे की गौर गात छवि होति।
मनहुँ नीलमनि-मंडप-मध्ये वरति निरंजन जोति॥
चोटी चारु तीन सरि मानों कहा केतु अरु राहु।
चढ़ि हिलि मिलि एकै सँग हिम गिरि ससि मुख कीन्हौ ग्राहु॥
मंजुल माँग मोति लर लटकति झटकत उपमा देत।
जनु उडुगन सब सिमिट सिमिट एक बीच करत विधुहेत॥
सुंदर भाल वाल ससि मानौं रचित लाल रजविंदु।
मनहुँ सुमन बंधूक आनि इक मनसिज पूज्यौ इंदु॥
जुवा आड़ ताटक चक्र जुग भ्रू सुसक मृग नैन।
मानहुँ तिलक वाग गहि बैठ्यौ ससिरथ सारथि मैन॥
नासा की वेसरि मैं मोती वरनत होत सँकोच।
मनहुँ कीर दाडिम फल फोर्‍यौ बीज लागि रह्यौ चोंच॥
रच्यौ अधर विधि सानि सुधारस इहि उपमा कौ अंत।
मानहु मुकुलित सीप रूपनिधि मोतिदमक दुतिदंत॥
पुष्प कपोल चारु अति चिक्कन उपमा देत सकात।
जनु जुग सख करत ससि सौं मत मानि अनुज कौ नात॥
ठोढ़ी ठकुराइनि की नीकी नीलो बिंदु मँझार।
सालिग्राम मनु कनकसँपुट मैं रहि गयौ तनक उघार॥
कंठसिरी विच पदिक विराजत अरु राजत उर हार।
मनहुँ महेस परसि मंदाकिनि धरहि धँसी जुग धार॥
कंबु कंठ राजति कटली अरु सृग अभरन काँति।
मनहुँ कनक मूरति गंगा तट निकट दिपति दिप-पाँति॥
चौकी चारु लाल नग उद्दित यह उपमा दियौ हेरि।
मानौं कंज अवनि तैं उपज्यौ इंद्र वधुनि लियौ घेरि॥
पहुँची पानि बाहँ बाजूबँद फवत फूँदन रूर।
मनहुँ काम-वट-वरुह रहे गहि झूलत वाल मयूर॥
चोली चारु छींट की छाजति उपमा देत अटोट।
मनहुँ महेस मानि मनसिज भय बैठ्यौ वगछल ओट॥
सुंदर उदर रोम की राजी नाभि बसत रति रौन।
मानहुँ माँगि सुधि करि बैठ्यौ द्वै महँ मारहुं कौन॥
नीवी वनी वोरि केसरी सौं कसी विनोदे वाम।
मनहुँ सीस सदवर्ग बाँधि कै बैठ्यौ सदन चढ़ि काम॥
छीन लंक नीवी किंकिनि धुनि राजति अतिहिं प्रवीन।
जुग नितंब मनु तुंब परस्पर समर ठटत रनवीन॥
जंघ कदलि विपरीत रची मनु लहँगा ललित सुहाइ।
मनहुँ मदन गडदार पेलि कै उमड़ि चल्यौ गजराइ॥
अंवुज चरन पावटौ फुंदौ इहिं उपमा कौ ठौर।
मधुर नाद गुंजार करत मनु उड़ि उड़ि वैठत भौर॥

कहै सहचरी बड़ दुख ल्याई प्रभु तुम्हरै हित लागि।
अब रस परसि विलसि वृंदावन दंभ सकुच डर त्यागि॥
जोरी वनी सुदेस 'सूर' प्रभु वढ्यौ रीति रस रंग।
ठकुराइनि मेरी श्रीराधा ठाकुर नवल त्रिभंग॥६४॥

॥२६८॥

तबही मेरौ मन चोरयौ री जब कर मुरलि लई।
बाजत राग रागिनी उपजत तान तरंग नई॥
देह दसा बिनु सुधि भई सजनी अँग अँग प्रीति रई।
तन मन प्रान ज्ञान गुन मेरौ स्यामहिं अरपि दई॥
हरि-मुख-बचन-सुधा-रस लोचन इकटक चितहि दई।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरी दासी करि बिनु मोल लई॥६५॥

राग केदार॥२६९॥

मुरली सबनि कौ मन हरयौ।
प्रथमहिं व्रजनारि सुनि कै आनि गिरिधर बरयौ॥
तब नही रहि गयौ हम पै सब्द स्रवननि परयौ।
पिता सुत पति बिसरी अंबर चली तजि गृह भरयौ॥
सिद्ध चारन गुनी गंध्रव सुनत सब बिसरयौ।
मगन मन मारुत न डोलै सिथिल ससि न टरयौ॥
मोर मधुप चकोर सारस सबनि यह मत करयौ।
आपनौ व्रत छाँडि बानी जोग-जड-व्रत धरयौ॥
निकसि सर्प न दुरत बाँबी कछु जु बसी करयौ।
तोरि तृन मृग सुरभि दसननि दाबि नाहिन चरयौ॥
चतुर कोकिल रही चित दै कीर नैकु न मुरयौ।
ध्यान सौं धरि रहे द्रुम सब मान उर मैं अरयौ॥
थके थिर चर सुर असुर नर लए धरनी धरयौ।
'सूर' प्रभु मुरली अधर धरी काम नाचत खरयौ॥६६॥

राग धमार॥२७०॥

सुंदरि एक दह्यौ लिये ठाढ़ी देखी नंद दुवारि।
बढ़ी प्रीति ललना गिरिधर सौ गुरुजन सबहि बिसारि॥
मोतियनि माँग भरी सखियनि सँग बेंदी दिपति लिलार।
करनफूल खुटिला अति राजत मदन जोवन कै भार॥
नैननि कज्जल नासिका बेसरि मुख तमोर अति राज।
हार सुढार बन्यौ जाकौ मोती रहत अधर मुख छाज॥
कटि लहँगा पहुँची बँद अँगिया फुँदना बहु बिधि सोहै।
रतन जराव जरी जाकी जेहरि हंस चाल गति मोहै॥
कंचन कलस भराइ जमुन जल मोतियनि चौक पुराए।
मनु द्वै छौना हंसनि के से चुगन सरोवर आए॥
तौ कहावत हौ नँदनंदन सारँग बुधि है थोरी।
'सूरदास' प्रभु नंदलला की बनी है छबीली जोरी॥

——::००::——

प्रतीकानुक्रमणिका

सूचना—इस अनुक्रमणिका मे दिए हुए अंक पदो के क्रमांक है जो ग्रथ में प्रत्येक पद के अंत मे दिए हुए है। कही कही राग की मात्रापूर्ति के निमित्त रखे हुए कुछ शब्द कोष्ठ मे दिए हुए है, किंतु अनुक्रम निर्धारण मे उनका विचार नही रखा गया है। परिशिष्टवाले पदो के क्रमाक 'प'-पूर्वक व्यक्त किए गए है।

आ

इ

उ

ऊ

ओ

औ

क

ख

घ

च

छ

ज

झ

ट

ठ

ड

ढ

त

थ

द

ध

न

प

भ

ल

ह